महाभारत

महाभारत

(द्वितीय खंड)

(जिसमें तेरह पर्व हैं)

हिन्दी पुस्तक एजेन्सी
१२६, हरिसन रोड, कलकत्ता

रेशमी जिल्द सहित दोनों खंड...

...भी राजा

ॐ

महाभारत

भीष्मपर्व

पहिला अध्याय

—:o:—

कौरवों और पाण्डवों का कुरुक्षेत्र में डेरे लगाना और युद्ध के नियम बांधना ॥

वैशंपायन जी कहते हैं कि वह महा बली युद्ध में प्रशंसनीय विजय के इच्छुक वेद पाठी श्री पाण्डव सोमकों सहित कुरुक्षेत्र में उतर कर [illegible]य कौरवों के सन्मुख हुए और यु[illegible] स्यमन्त पचंक से बाहर अपनी [illegible] सार हजारों डेरे, [illegible]व जी राजा

दिये, इन में पृथ्वी के सकल युवक मनुष्य हाथी घोड़े इत्यादि इकत्र हो गये, जम्बूद्वीप में जहां तक सूर्य का प्रकाश होता है वहां तक के सब राजा लोग अपनी २ सेना सहित वहां आगये, युधिष्ठर ने उन श्रेष्ठ क्षत्रिय राजाओं से लेकर म्लेछ राजाओं तक का पूरा आदर सन्मान कर के उन के लिये बहुत उत्तम २ भोजन शय्या आदि का प्रबंध कर दिया, इस के पीछे युद्ध में अपनी ओर के मनुष्यों की पहचान के लिये चिन्ह नियत किये गये और वह चिन्ह मनुष्य, हाथी, घोड़े, रथ इत्यादि पर लगा दिये गये ॥

इस समय महा साहसी दुर्योधन ने अर्जुन की ध्वजा पताका को देख कर अपनी ओर के सब राजाओं को अपनी २ सेना समेत लड़ने के लिये युद्ध में सन्नद्ध किये और स्वयं भी अपने श्वेत छत्र को धारण कर के अपने सब भाईयों सहित हज़ारों हाथी घोड़े लेकर उपस्थित हुआ ॥

दुर्योधन की इस धूम धाम की त्यारी को देख कर युद्धाभिलाषी प्रसन्न चित्त विजय के चाहने वाले पांचाल बड़े शब्दायमान शंख और मधुर बाणी वाली दुन्दुभी बजा पाण्डव और श्रीकृष्ण जी अपनी सेना को प्रसन्न चित्त दे[illegible] [illegible]र बड़े आनन्दित हुये, श्रीकृष्ण और अर्जुन ने रथ [illegible] [illegible]वार होकर अपने दिव्य शंखों की ध्वनी की, जिस [illegible]सुनते ही कौरवी सेना के वीरों के इस प्रकार से मूत्र निक[illegible]

गये जिस प्रकार सिंह के गर्जने से वन के बाकी मृगों के निकल जाया करते हैं ॥

पुनः इन में नियम हुआ कि नियत किये हुये युद्ध के समाप्त होने पर सब में परस्पर प्रीति हो, किसी प्रकार का भिन्न भाव न होने पावे, सेना से बाहर होने वाला कदापी न मारा जावे, बचन रूप शस्त्रों से सन्मुख होने से बचनों ही से लड़ा जावे, रथी रथी से, हाथी का स्वार हाथी के स्वार से, घोड़े का स्वार घोड़े के स्वार से, पैदल पैदल से युद्ध करे, शस्त्र का प्रहार मुख से बोल कर किया जावे, विश्वासित और व्याकुल मनुष्य पर शस्त्र न चलाया जावे, शर्ण में आये हुये, टूटे हुये शस्त्र वाले और जिन पर बखतर न हो उन को न मारा जावे, सोते हुओं, शस्त्र के लाने और बनाने वालों पर शस्त्र न चलाया जावे, भेरी, शंख नगारे. आदि बजाने वालों पर किसी दिशा में भी शस्त्र प्रहार न किया जावे ॥

दूसरा अध्याय

—:o:—

व्यास जी का धृतराष्ट्र के पास आना और उस को युद्ध का समाचार देने के लिये संजय को नियत करना ॥

जब यह नियम होचुका तो श्री व्यास देव जी राजा

धृतराष्ट्र के पास आय और उस को चिन्ता में पड़ा देख कर कहने लगे, हे पुत्र! यह युद्ध होनहार है, यदि तू इस को अपनी आंखों द्वारा देखना चाहता है तो मैं तेरी आंखें खोल देता हुं तुम इस को देखो ॥

धृतराष्ट्र ने कहा हे ब्रह्मर्षियों में श्रेष्ठ! मैं अपने ज्ञाति बंधु और अपने पुत्र पोत्रों का मरना नहीं देखना चाहता, केवल यही चाहता हूं कि इस युद्ध का पूरा २ हाल मुझे साथ २ मालूम होता जावे ॥

व्यास जी ने संजय को वर दिया और राजा से कहा कि हे राजा! यह संजय लड़ाई का सम्पूर्ण वृत्तान्त आप को सुनावेगा, दिन में या रात्रि में गुप्त या प्रकट कैसा ही वृत्तान्त होगः सब तुम से कहेगा, दूसरा जो कोई बात अपने मन में सोचेगा यह वह भी जान लेगा, कोई शस्त्र इस को घात नहीं कर सकेगा, यह संजय परिश्रम से कभी खेदित भी न होगा। हे राजन्! यह होनहार है, रोकने में नहीं आ सकती, जिधर धर्म है उधर ही विजय है, हे राजन्! देख और सुन इस होन हार को जताते हुये कैसे २ अपशकुन हो रहे हैं, वाज, गिध, कौव और कंकनाम पत्ती बगलों समेत वृत्तों की डालियों पर एक साथ ही गिरते हैं और इकट्ठे हो जाते हैं, यह सब पत्ती युद्ध के होने को बड़ी प्रसन्नता से ताक रहे हैं, यह हाथी, घोड़ों के मांस को खायेंगे, कंक पत्ती निर्दयता के शब्द करते हुये मध्य में दक्षिण दिशा

की ओर चले जाते हैं, हे राजन! मैं इस समय कई भयंकर उत्पात सूचक लक्षण देख रहा हुं ॥

—०—

तीसरा अध्याय

—:०:—

श्री व्यास जी का राजा धृतराष्ट्र को उल्कापात के चिन्ह बतलाना और कौरव पाण्डवों के मध्य में युद्ध न करने की सम्मति देना ॥

श्री व्यास जी ने कहा कि हे राजन्! समय ऐसा विपरीत हो गया है कि गधे गौओं के साथ और पुत्र अपनी माताओं के साथ भोग करते हैं, वन के अनेक वृक्ष बिना ऋतु के फल फूल देते हैं, गर्भवति स्त्रियां भयानक बालकों को जनती हैं, चौपाये पशु कच्चे मांस अहार करने वाले पक्षियों के साथ मिल कर परस्पर भोजन करते हैं, मांस खाने वाले पशु और दूसरे सब अपनी सन्तान भ्यानक उत्पन्न करने लगे हैं, एक से अधिक आंखों वाले, तीन सींग, दो पूछ वाले, अशुभ दुर्मुख मांस खाने वाले, पांच पैर वाले भ्रमण करने लगे हैं और बड़े ज्ञानवान पुरुषों की स्त्रियां भी विभचारी होने लगी हैं ॥

हे राजन्! तेरा राज्य में अब बहुत सी विलक्षण बातें दिखाई देती हैं, गरुड़ पक्षी मोरों को उत्पन्न करते हैं, घोड़ी गौ के बच्चे को और कुतिय बिड़ के बच्चे को मोह करने लगी हैं और तोते खोटी बा... बोलने वाले कुक्कट उत्पन्न करते हैं, कोई २ स्त्रियां चा २ पांच २ कन्या बच्चे एक ही समय जनने लगी हैं और वह उत्पन्न होती ही नाचती हैं और कटाक्ष करती हैं, हंसती हैं और नीच लोग, काने, कुबड़े, लूले, लंगड़े, पापी और उन के संबंधी, भले मनुष्यों को हास्य करते हैं और भय दिखलाते हैं, नाचते हैं और गाते हैं, शस्त्रधारी मूर्तियां काल क प्रतिकूल होने से गिरती हैं और बालक लोग हाथों में दंड लेकर परस्पर एक दूसरे के लड़ने को दौड़ती हैं और क्रोध वश होकर अपने बनाये हुये नगरों को परस्पर नष्ट करते हैं और स्थानों को गिराते हैं, पद्म, उत्पल, कुमुद और कई एक फूल सूर्य के उदय समय खिलने वाले कमल वृक्षों पर पैदा होते हैं और भूमंडल में भयानक वायु चल कर धूल उड़ाती हु२ .. २ वृक्षों को उड़ाले जाती है, धूलों का उड़ना शांत नहीं होता, पृथ्वी अत्यंत प्रज्वलित होगई है और सूर्य को राहु अच्छादित करता है और इसी प्रकार केतु भी चित्रा नक्षत्र को घेरे हूये नियत है, यह सब चिन्ह कौरवों के नाश होने के दिखाई दते हैं, और भयानक घोर धूम्रकेतु पुष्प नक्षत्र को दबाए हुये उदय हुआ है यह महा उग्र दोनों सेनाओं को घोर नाश करने वाले हैं ॥

मंगल मघा नक्षत्र में वक्रा है, बृहस्पति श्रवण नक्षत्र में है और सूर्य के पुत्र शनि पुर्वा फालगुनी व उत्तरा फालगुनी को दवा कर दुखित किये जाते हैं और दैत्य राज शुक्र पुरवा भाद्रपद नक्षत्र में पड़ कर उस को दवाये हुये प्रकाश करता है और परिघ नाम उपग्रह के साथ होकर उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र की ओर देखता है और केतुग्रह सधूप अग्नि के तुल्य प्रज्वालित है और महा प्रज्वालित भय के देने वाला राहू इन्द्र से संबंध रखने वाले तेजस्वी ज्येष्ठा नक्षत्र को घेर कर वर्तमान है, वह उग्र ग्रह चित्रा और स्वाती के मध्य में वर्तमान रोहणी और सूर्य चंद्रमा दोनों को क्लेश देता है और अग्नि जैसे प्रज्वालत मंगल वक्री हो हो कर बृहस्पति जी से दवाये हुये श्रवण नक्षत्र को पूर्ण दृष्टि से वेधे हुये वर्तमान हैं और खेती से शोभा पाने वाली पृथ्वी सब प्रकार के खेतों से आच्छादित होकर पांच शिर वाले जौ और सौ शिर वाले धानों को उत्पन्न करती हैं और बहु गौयें जो जगत की पूज्य और जिन पर इस जगत की सारी गति चल रही है अपने बच्छड़ों के निकट रुधिर को बहाती हैं इन सब अशुभ लक्षणों का यह फल होगा कि धनुषों से अग्नि निकले और खड्ग बहुत अग्नि रूप हों और शस्त्र मतक्ष होकर रण भूमी को प्रकट देखें और शस्त्रों की चमक अग्नि के समान हो, इन सब अशुभ लक्षणों से प्रतीत होता है कि कवच और ध्वजाओं का नाश होगा, हे राजा धृतराष्ट्र ! इस पाडवों और कौरवों के संग्राम में रुधिर की नदियां बहेंगी और ध्वजा नौका

की समान बहती हुई व्याकुलता को प्राप्त होगी और पशु पत्ती चौं ओर अशुभ भयकारी बोलियां बोल कर भयभीत करते हैं और रात्री के समय एक आंख एक पत्त और एक चर्ण वाला पत्ती अत्यन्त क्रोधी आकाश मार्गी रुधिर उगलता हुआ भयानक शब्द बोलता है, राजेन्द्र शस्त्रों की चमक दमक से बड़े तेजवाले सप्त ऋषियों के प्रकाश भी मांद पड़ गये हैं॥

बृहस्पति और शनि जी दोनों ग्रह वार्षिक गति में नियत होकर विशाखा नक्षत्र के सन्मुख स्थित देखे जाते हैं और एक दिन तेरस तिथि के सूर्य और चद्रमा ग्रसे गए और विना पर्व के राहू ग्रह से मिले हुये प्रजा के विध्वांस को चाहते हैं और चारों ओर धूली होने से सब दिशाओं की शोभा जाती रही है और रात्री के समय महा घोर उत्पात होते हैं, मेघ रुधिर बरसाते हैं और राहु कृतिका को पीड़ा देता हुआ अपने कठिन कर्मों से भरा हुआ दिखाई देता है, धूम केतु उत्पात में नियत होकर वायु चलाते हैं और महा संग्राम करने वाली शत्रुता को उत्पन्न करते हैं, हे राजन्! सब नक्षत्रों में रक्षा करने वाला पापी ग्रह बड़े भय को उत्पन्न करता हुआ तीनों छत्रों में सब शिरों के छत्रों कलशों पर ग्रह पत्ती होकर पड़ता है और एक मास की तेरस तिथि विना पर्व के सूर्य और चन्द्रमा दोनों को राहु ग्रह ग्रस गए हैं, दोनों प्रजा का विश्वास करने वाले चिन्ह हैं और चौदश पूर्णमासी व्यतिपात प्रतिपदा इन को जानता हूं, परन्तु

अमावास्या और तेरस के समूह को नहीं जान सकता, हे राजन्! रुधिर से लिपत मुख वाले दैत्य अधिक तृष्णा से जीवों का लहू पीते हैं और बड़ी २ नदियों के प्रवाह विरुद्ध चलने लगे हैं और छोटी २ नदियां रुधिर से भर गई हैं, कूप झाग से भर गए हैं और बैल क्रीड़ा करने लगे हैं और बिजली की कड़क के समान महा भयानक शब्द चारों ओर से भयभीत कर रहे हैं और महा घोर उल्कापात हो रहे हैं ॥

हे राजन्! कल ही आप इस घोर अन्याय के फल को देखेंगे, क्योंकि सब महर्षि इन महा घोर विलक्षणों को देख कर अपनी कुटियों से बाहर निकल २ कर एकत्र हुये हैं और सब की यही वाणी है कि उन घोर लक्षणों से प्रतीत होता है कि अब संसार में बड़ा दुःख और क्लेश होगा, दोनों सेनाओं के योधा गर्जेंगे और एक दूसरे के प्राणों का नाश करेंगे और इस में कौरवों का नाश होगा और पाण्डवों की जय होगी ॥

यह सब बातें श्री व्यास जी से सुन कर राजा धृतराष्ट्र बड़े श्वास भरने लगा और श्री व्यास जी के आगे हाथ जोड़ कर कहने लगा कि हे तात्! आप दोनों सेनाओं के पितामह हो, आप ने संग्राम में हार जाने के सब चिन्ह कहे, कृपा करके विजय होने के लक्षण भी कहिये ॥

तब श्री व्यास जी कहने लगे हे राजेन्द्र! आकाश का निर्मल होना, वायु का शीतल सुगंधित चलाना, पक्षियों का मीठा २

और शुभ काक बोलना और यज्ञ की अग्नी का रूप सुंद्र प्रज्वलित ऊंची ज्वाला वाला और निर्धूम होना और जिस में से सुगंधित पवित्र अहुतियों की सुगंधी आना और बाजों की गम्भीर मीठी २ स्वर का सुनाई देना और सूर्य, चन्द्रमा की निर्मल किरणों का पड़ना यह लक्षण संग्राम में जीत होने के हैं॥

संग्राम भूमी में राज हंस, मोर, चकोर, तोते, शुभ बोलियां बोलते हुये दहनी ओर होने से विजय होने के चिन्ह पण्डित जन कहते हैं॥

जिन योधाओं की सेना अपने शस्त्र वस्त्र से युक्त प्रसन्न चित्त हो कर संग्राम में सुंदर घोड़ों पर आरूढ़ हो कर ऊंची ध्वजा और सुखदायक शब्दों से चली जाये और कठिनता को न देख वह विजय को प्राप्त होते हैं।

हे राजन! जिन योधाओं के वचन प्रसन्नता और पराक्रम से भरे हुये हों और जिन केपुष्पमाला मलीन ही होती हों, वह जय को प्राप्त होते हैं और जिन के रूप, रस, शब्द, स्पर्श और गंध सावधानी से रहें और जो प्रसन्नता और दृढ़ता से रण में संमुख हो कर जाते हैं वह इस संसार में जय को पाते हैं और यदि वह रण में मर भी जाय तो स्वर्ग को पाते हैं और जो रण के बीच से भाग जाते हैं, वह दूसरों को भगा देते हैं।

बड़े २ शूर वीर योधा भागती हुई सेना को देख कर विसमय होजाते हैं और उन को इकठा करने को इधर उधर

भागते हैं, इसी तरह हलचल मच जाती है और फिर उनका इकट्ठा होना असम्भव होकर हार होजाती है, विजयी सेना आकर दबा लेती है और जो कुछ धन पदार्थ पाती हैं सब लेजाती हैं ॥

हे राजन्! इस लिये राजाओं को उचित है कि वह अपनी २ सेनाओं को अच्छी तरह शस्त्रों वस्त्रों से सुशोभित रखें और वह सेना के योधा प्रसन्न चित होकर रण में जावें और यदि शत्रु को धन देने से विजय प्राप्त हो तो वह उत्तम विजय है और धोखे से जो विजय प्राप्त होती है, वह मध्यम कहलाती है और जो लड़ाई करके विजय है, वह अधम होजाती है. क्योंकि संग्राम में कई पाप और कईयों के नाश होते हैं ॥

हे राजन्! दस बीस योधा प्रसन्नता से दृढ़ चित और इकट्ठे होकर और अपने संसारी मोह को त्याग कर रण में जावें तो वह सहस्त्रों को मार कर नाश कर देते हैं और जो आगे हो २ कर लड़ते हैं वह यदि थोड़ी संख्या भी रखते हों तो भी पूरी २ विजय हासिल करते हैं ॥

हे राजन्! भागती हुई सेना को देख कर श्री गरुड़ जी उस समूह को अच्छा नहीं जानते, हे राजन्! सेना के अधिक होने से यह निश्चय नहीं होता कि विजय होगी, विजय सदैव नहीं, इस में प्रारब्ध भी विशेष है और बहुधा सदैव प्रारब्ध वाले ही विजय पाते हैं और अपने मनो वांछित फल पाते हैं ॥

चौथा अध्याय

—:०:—

राजा धृतराष्ट्र के प्रति संजय का सृष्टी कर्म वर्णन करना ॥

श्री वैशम्पायन जी ने राजा जनमेजय से कहा कि हे राजन्! श्री व्यास जी ने इस प्रकार की कई बातें राजा धृतराष्ट्र से वर्णन कीं और चले गये ॥

राजा धृतराष्ट्र उन के कथन को श्रवण कर के बहुत चिन्ता वान हुआ और कुछ समय तक विसमय हो गया और ठंडे श्वास भरने लगा और अपने मन्त्री संजय से यूं कहने लगा ॥

हे धीर बुद्धिमान! मैं जानता हूं, इस युद्ध में जो बड़े २ योधा एक दूसर से लड़ने के वास्ते इकट्ठे हुये हैं, वह अपने प्राणों को त्यागने से नहीं भय खाते, पृथ्वी के कारण एक दूसरे को नाश करते हैं और संतोष नहीं करते और धर्मराज की पुरी को जो बसाते हैं, इस संसार के भोगों को भोगते हैं और एक दूसरे से प्रीति भाव नहीं रखते ॥

मैं अच्छी तरह से जानता हूं कि इस संसार में कई गुण और सुख हैं ॥

हे संजय! अब इस कुरू जंगल देश में दूर २ के जो प्रसिद्ध शूरवीर क्षत्री अपने ग्राम नगर छोड़ कर आये हैं

में उन का और उन की राजधानियों का विस्तार से वृत्तान्त सुनना चाहता हूं ॥

हे संजय ! श्री महा तेज वाले ब्रह्म ऋषि व्यास जी की कृपा से आप की बुद्धि निर्मल और ज्ञान से देवताओं के समान है ॥

तब संजय ने कहा हे राजन् ! मैं अपनी बुद्धि के अनुसार गुणों का वर्णन करूंगा, आप कृपा करके अपने शास्त्र रूपी नेत्रों से संयुक्त हो कर सुनें, और विचार करें। हे राजन् ! मैं आपको पहिले प्रणाम करता हूं, संसार में दो प्रकार के जीव हैं, एक स्थावर में चलने वाले दुसरे जंगम में चलने वाले। हे राजन ! सृष्टी तीन प्रकार की है अर्थात् अंडज, स्वेदज और जरायुज, जंगम में जरायुज उत्तम हैं, जरायुज दो प्रकार के हैं, एक मनुष्य, दुसरे पशु हैं, यह दोनों अत्यन्त उत्तम हैं और कई प्रकार के रूप धारण करते हैं, और उन के भेद जो वेद में वर्णन हैं, वह चौदह हैं और उन में यज्ञों के धर्म नियत हैं और ग्राम और नगर के रहने वालों में मनुष्य उत्तम हैं और बन के रहने वाले में शेर श्रेष्ठ हैं, और जीव एक दुसरे पर निर्वाह करते हैं, स्थावर पृथ्वी में से भागते हैं और वह वृक्षादिक और सर्व बनस्पाति हैं और वह पंच प्रकार के हैं, जैसे वृक्ष गुल्म, लता, वल्ली, त्वचासार और तृणादिक पंच महां भूतों में, उन के उन्नीस भेद हैं, अर्थात स्थावर जीव ५ प्रकार के और जंगम चौदह प्रकार के हैं और जगद में गायत्री भी चौबीस अक्षरों में उपदेश की जाती है, सो हे राजन् ! जो मनुष्य इस

पर्म पवित्र गायत्री को अच्छी तरह से जानते हैं और इस का जप करते हैं उन का नाश नहीं होता, वह पृथ्वी पर उत्पन्न होते हैं और वहीं उनका नाश होता है, पृथ्वी सब जीवों के रहने की जगह है और चिरकाल से ऐसा ही है॥

जीवों में सात प्रकार के जीव नगरों में रहते हैं और सात प्रकार के बनों में रहते है॥

सिंह, व्याघ्र, वराह, भैंसा, हाथी, रीछ, बानर, यह सात पूकार के बनवासी हैं और मनुष्य, गौ, बकरी, भेड़, घोड़ा, खच्चर, गधा, यह सात ग्राम वासी कहे जाते हैं और यही बन वासी और ग्राम वासी पशु चौदह पूकार के हैं॥

मनुष्य भी इन में ही गिना जाता है और मनुष्य ही सारी पृथ्वी का मालिक है और स्थावर जंगम जगह भी इसी के वास्ते हैं॥

यही मनुष्य राजा होकर और लोभी होकर दूसरे को मारता है॥

पाचवां अध्याय

—:०:—

जम्बू द्वीप का वर्णन

श्री राजा धृतराष्ट्र जी कहने लगे हे संजय इस पृथ्वी पर जो पहाड़, नदियां, वन, नग्र, देश, ग्राम, समुद्र और बहुत से

द्वीप बसते हैं आप कृपा कर के उनके नाम और वर्णन विस्तार से कहें और पृथ्वी का प्रमाण जैसा कि है वह भी बतायें ॥

तब श्री व्यास जी ने कहा हे राजन् ! जैसा प्राचीन पंडितो ने और ऋषियों ने जाना, वह सब पंच महा भूतो के संयोग से, यह ब्रह्माण्ड और ब्रह्म रूप वर्णन किया है ॥

यह पांच तत्व आकाश, वायु, अग्नी, जल और पृथ्वी का नाम है और यह पांच तत्व क्रम से एक से दूसरा एक २ गुण विशेष रखने वाला है, जेसे आकाश में शब्द का गुण है, तो वायु में शब्द और सपर्श का गुण है, अग्नी में शब्द, सपर्श और रूप तीन गुण हैं, जल म शब्द, सपर्श, रूप और रस चार गुण हैं, पृथ्वी में शब्द, सपर्श, रूप, रस और गंध पांच गुण वर्तमान हैं और संसार में इन ही पांच भूतों का विस्तार है और यही गुण सब में वर्तमान हैं और जीव जंतु उन ही गुणों में नियत हैं ॥

जब प्रलय सखुप्ती, समाधि, मोक्ष इन चारों में ब्रह्म भाव होता है तब वह कर्त्ता और कर्म परस्पर सन्मुख नहीं होते और जब वह ब्रह्म भाव से गिर कर परस्पर वियोग को प्राप्त होकर भिन्न २ रूप धारण करते हैं तब अवश्य ही जीव जीवों पर गिरते ह, क्रम से उपजते हैं और क्रम से ही नाश हो जाते हैं और वह सब अगिनत हैं, इस वास्ते इन सब का ब्रह्म रूप है और फिर प्रलय हो जाने के पीछे पांच भूत सम्बन्धी भूगोल आदि धातु जहां दिखाई देते हैं उनके

पूपार्थों को मनुष्य बुद्धि द्वारा और योग बल से सिद्ध लोग ब्रह्माण्ड को जान जाते हैं और वहां भी वासना रूपी धातु और पांच तत्व पृथक् रूप धातु दृष्टि पड़ते हैं, इस वास्ते वह असंख्य हैं और ब्रह्म जो तीन गुण और पांच भूतों से पृथक् है बहुत कारणों से कैसे जाना जाता है ॥

हे राजा धृतराष्ट्र! अब मैं आप को जम्बु द्वीप का वर्णन कहता हूं, जिस का दूसरा नाम सुदर्शन है और जो चारों ओर से देश रूपी अथवा चक्र के समान नियत है और इस द्वीप में कई सुंदर, नदियां, पर्वत बन, नग्र और कई प्रकार के मनोहर पुर बसते हैं और असंख्य फल फूलों के वृक्ष वर्तमान हैं और धाय धन्य आदि से संयुक्त है इस के गिर्द खारी समुद्र है ॥

हे राजन्! जैसे कि मनुष्य दर्पण में अपने मुख को देखता है इसी प्रकार जम्बुद्वीप ब्रह्माण्ड स्वरूप चंद्र मंडल रूपी मन में दिखाई देता है और उस मन रूपी चन्द्र मण्डल के एक सूक्ष्म वृची नाम भाग में जीव और आत्मा नामी दो रूप धारण करने वाला परमात्मा ब्रह्म है ॥

सथूल, सूक्षम, संसार रूपी पीपल के वृक्ष और जीव ईश्वर यह चारों ब्रह्म के बीच कहना केवल अपने मन का संकल्प है ॥

हे राजन्! वह जम्बु द्वीप सब प्रकार की औषधियों से भरपूर है और चारों ओर से समुद्र और अन्य २ देशों से घिरा

हुआ है और सुन्द्र बादलों से अच्छादित रहता है और जल आदि तत्व अर्थात सकल संसार से अधिक है॥

हे राजन्! सब संसार की प्रलय हो जाने के पीछे तो ईश्वर के नाम के बिना कोई स्थिर नहीं रहता इस वास्ते ईश्वर ही सृष्टी का मूल कारण कहा जाता है क्योंकि प्रलय के पाछे सब कुच्छ ईश्वर ही में लयहो जाता है। इसी वास्ते ईश्वर को सिद्धान्त कहा जाता है यह प्रमात्मा ईश्वर से भी भिन्न शुद्ध ब्रह्म कहा जाता है इस को संक्षेप से वर्णन किया है॥

हे राजन्! यह जम्बु द्वीप ही स्थल भूगोल है, सब से पाहिले इन्द्रादि देवताओं ने यहां ही तप और यज्ञादि करके अपने स्थूल शरीर को त्याग कर सूक्ष्म शारीर धारण करके अपने तप के फल से स्वर्गादिक के राज्यों को पाया है, इसी प्रकार इस जम्बु द्वीप में शुभ कर्म करके बाकी के छः द्वीप मे इस जगत में प्रकट हुये हैं और यह जम्बु द्वीप सब से श्रेष्ट और सब से क्षेत्र भूमि है, इस में पदार्थ को उत्पन्न करके द्वीपों और स्वर्गादि बाकी के छः में भोग भोगते हैं॥

छटा अध्याय

संजय का राजा धृतराष्ट्र को ईश्वर का स्थूल

और सूक्ष्म सरूप वर्णन करना ॥

राजा धृतराष्ट्र ने अपने ज्ञानवान मंत्री संजय के प्रति कहा, हे संजय ! आप ने अपनी बुद्धि द्वारा जम्बु द्वीप का थोड़ा सा वृत्तान्त वर्णन किया है आप इस से भी वशेष जानने वाले हो आप कृपा करके आदि से अन्त तक क्रम से कथन करो निर्मल ब्रह्म को वर्णन करन वाली प्रपंच कल्पित माया द्वारा व्यवहार में शुद्ध जो वलवान ब्रह्म उस के अन्दर पृथ्वी धरातल सी दृष्ट पड़ती है, उस का प्रमाण मुझ को समझाओ उस के पीछे भगवद् का स्थूल रूप वर्णन करो और जगद् रूपी पीपल के वृक्ष का वृत्तान्त भी कहो ॥

तब संजय ने कहा हे राजन् ! जम्बु द्वीप का विस्तार से वर्णन करता हूं आप सुनो ॥

हे राजन् ! पूर्व पश्चिम के समुद्रों को मिलने वाले खंडों के पहाड़ हैं जो दोनों ओर से पूर्वी और पश्चिमी समुद्र से मिले हुये हैं वह पहाड़ हिमवान, हेमकूट, निषद वैडूर्य नील शशि शुभ श्वेत सर्वधातु मय युगवान पर्व्वत नाम वाले इन छओं पर्वतों पर सिद्ध मुनि जन वसते हैं और इन पर्वतों के बीच की पृथ्वी सहस्रों योजन विस्तार रखती है आर उस में बड़े २ सुन्दर पवित्र देश हैं और उन का नाम खंड है और उन खंडों में अनेक प्रकार की जाती वाले मनुष्य रहते हैं हे राजन् ! यह हमारी पृथ्वी भार्त खंड है इस से दूसरे हेमवंत नाम खंड हैं और हेमकूट पहाड़ से परे हरवर्ष खंड और नील

पर्वत के दक्षिण की ओर निषद के उत्तर की ओर से पूर्व और पश्चिम समुद्र को मिलने वाला माल्यवान पर्वत है उस माल्यवान से आगे गन्धमादन पर्वत है और उन दोनों के बीच में सुवर्ण के समान और चारों ओर से घिरे हुये मेरु नाम पर्वत हैं वह प्रातःकाल के सूर्य के समान प्रकाशमान और निर्धूम अग्नी की तरह चमकता है और चौसठ हज़ार योजन ऊंचा और पृथ्वी के भीतर भी उतना ही है वह ऊंचा नीचा तिर्छा लोकों को व्याप्त करके विराजमान है ॥

हे राजन् ! उस मेरु के मध्य में चार द्वीप बसते हैं जिन में जम्बु द्वीप श्रेष्ठ और मुख्य है बाकी के छोटे हैं. भद्राश्व केतुमाल और कौरव नाम प्रसिद्ध हैं और माहात्मऋषियों के रचे हुये स्थान हैं और वहां कई प्रकार के सुंदर पत्ती और सोने के रंग के कौवे देखे गए हैं, हे राजन् ! इस पर्वत की महिमा को विस्तार के भय से छोड़ता हूं और हे राजन् ! सूर्य भगवान सदैव इस की परिक्रमा करते हैं और चंद्रमा नक्षत्रों सहित और वायु भी उस की परिक्रमा करते हैं और इस पर दिव्य फल फूल औषादियां उपजती हैं और स्वर्णमय स्थानों से सुशोभित हैं जिन में देवताओं के समूह और गंधर्व, असुर, राक्षस और अप्सरा आपस में क्रीड़ा करते हैं और ब्रह्म रुद्रादि देवता उस पर यज्ञादिक करते हैं और तम्बरु नाम विश्वावसु, हाहा, हूहू नाम गंधर्व देवताओं के सामने जाकर उनको कई प्रकार के शुभ स्तोत्रादिक से प्रसन्न करते हैं और हे राजन् ! उस पर्वत पर

महात्मा सप्त ऋषि, काश्यप, प्रजापति सदैव जाते हैं और शुक्र जी भी अपने राक्षसों के साथ इसी पर विहार करते हैं, शुक्र जी के यही रत्न हैं, उन्हीं रत्नों के पर्वत भी अनेक हैं, कुवेर जी उन के चौथे भाग को भोगते हैं, और उस धन के सोलहवें भाग को मनुष्यों के लिये देते हैं ॥

उस मेरु पर्वत के उत्तर की ओर कर्णिकार राजवृक्षों का वन है जो बहुत सुन्दर और चारों ओर से प्रफुल्लित मन को हरने वाला है, शिला जालों से बहुत ऊंचा है उस मेरु के ऊपर सृष्टी को रचने वाले कर्णि कार फूलों की लंबी माला धारण किये हुये सूर्य्य के समान तेज वाले तीन नेत्र वाले साक्षात शिवजी महाराज अपनी गिरजा देवी के साथ देवताओं के मध्य में व्याप्त रहते हैं जिन मनुष्यों ने घोर तप किये हैं और जिनों ने बड़े २ व्रत धारण किये हैं और जो सदैव सत्य भाषन करते हैं वह उन के दर्शन को पाते हैं और पापी जीव उन के दर्शन नहीं कर सकते ॥

हे राजन्! उस मेरु पर्वत के ऊपर से दूध के समान अति पवित्र निर्मल शीतल ब्रह्मरूप शुद्ध गंभीर अखण्ड शब्द वाली पत्थरों से टकराती हुई श्री गंगा जी की धारा सब मनुष्यों से सेवित प्रकट हुई और पवित्र भागीरथी गंगा बड़े वेग से और शीघ्रता से चंद्रमा के शुभ हृदय में विलास करती हुई उत्पन्न हुई और उसी ने समुद्र के समान बल और तीव्रता

को उत्पन्न किया है, जो पर्वतों से भी धारण नहीं की जाती थी, ऐसी श्री गंगा जी को शिवजी महाराज ने एक लाख वर्ष तक अपनी जटाओं में धारण किया ॥

हे राजन् ! मेरु पर्वत के पश्चम भाग में जम्बूद्वीप के मध्य केतुमाल नाम खंड वर्तमान है उस में बड़ा देश है, वहां के मनुष्यों की आयु सतयुग में दश सहस्र वर्ष पर्यन्त रही है और वहां मनुष्यों का वर्ण सुवर्ण के समान और स्त्रियों को अप्सराओं के समान होता है, वहां के मनुष्य निरोगी, हितकारी और प्रसन्न चित्त, रूपवान, तेजवान उत्पन्न होते हैं और गुह्य यक्षों के राजा कुवेर जी अपने राक्षसों के और अप्स-राओं के साथ गंध मादन के झूमते हुए शिखरों पर विहार करते हैं, गंध मादन के दूसरे भाग के निकट अपर गंडिका नाम के छोटे २ पर्वत हैं वहां के मनुष्यों की आयु ग्यारा हज़ार वर्ष तक की होती है और वह मनुष्य तेजस्वी और बलवान होते हैं और उन की स्त्रीयां उत्पल नामी कमल के समान सुन्दर और देखने योग्य हैं ॥

नील पर्वत के आगे श्वेत पर्वत है और श्वेत से आगे रमणक नाम का खंड है और शृङ्गवान खंड के परे अनेक देशों से व्याप्त एरावत खण्ड है और दक्षिणोत्तर में भार्त खण्ड है और एरावत खण्ड यह दोनों धनुष समान अर्थात त्रिकोन रूप हैं और बीच में इलावातादिक पांच खण्ड बसते हैं उन से आगे के खण्डों के जीव गुणों में अधिक हैं और आयु, बल,

पराक्रम में एक दूसरे से विशेष हैं और वह धर्म, कर्म, अर्थ से संयुक्त हैं, हे राजन् ! इस प्रकार यह पृथ्वी पहाड़ों से व्याप्त है और सब से बड़ा पर्वत कैलाश है जिस पर कुबेर जी अपने गुह्य यक्षों के साथ क्रीड़ा करते हैं और कैलाश पर्वत के उत्तर की ओर मैनाक पर्वत है जो तेजस्वी मुनि लोगों से भरा हुआ है और वहां हिरण्यशृंगनामी एक बड़ा पहाड़ है ॥

उस के निकट स्वर्ण रजवाला बड़ा सुन्दर विचित्र एक तड़ाग विन्दु सार नाम का है जिस पर राजा भागीरथ श्री गंगा जी का दर्शन करके बहुत वर्षों तक रहे थे, यहां कई एक मणि मुक्ताओं से जड़ित यज्ञ स्तंभ और स्वर्ण के वृक्ष हैं जो यज्ञ की सीमा है उसी स्थान पर महा प्रभा वाले इन्द्र जी ने यज्ञ किया था जिस के प्रताप से वह महा सिद्धि को प्राप्त हो स्वर्ग का राज्य भोग रहे हैं और वहां ही जगद पितामह तेजवाले श्री महादेव शिवजी चारों ओर से शुद्ध पवित्र जीवों से पूजन किये जाते हैं और नर नारायण ब्रह्मा मनु और स्थानु रुद्र जी भी वहीं निवास करते हैं और वहीं पहिले तीन लोक तारनी तेजोमय श्री गंगा जी नियत होकर ब्रह्म लोक से सप्त धारा होकर चली और सात नाम वस्वोक, सार, नलीनी, पावनी, सरस्वति, जम्बु नदी, शीता नदी धारण करके संसार में प्रसिद्ध हुई, सातवीं सिन्धु नाम गंगा है जो कथन में नहीं आसकती और जो दिव्य रूप है। हे राजन् ! ईश्वर की बड़ी महिमा है कि जिस २ स्थान पर इन्द्र आदि देवताओं ने यज्ञ किये हैं वहीं श्री सरस्वति जी गुप्त और प्रकट होती हैं और

यह सातों धारा दिव्य रूप से तीन लोकों में बहती हैं और हे राजन्! हिमालय पर्वत में राक्षस लोक, हेमकूट में गुह्यक, निषद में सर्प, गौकर्ण में तपस्विर और मुनीश्वर वसते हैं, श्वेत पर्वत में देवता और असुर लोग रहते हैं, निषद में गंधर्व और नील पर्वत पर ब्रह्म ऋषि निवास करते हैं और हेमराज, शृंगवान पर भी देवता ही आनन्द करते हैं और यह सातों खन्ड आपस में पृथक२ हैं इन सब में जड़ चेतन्य जीव वसते हैं और उन के पास बहुत सा धन देवता और मनुष्यों का सा है ॥

हे राजन्! जिस विराट स्वरूप भगवन की महिमा मुझ से पूछते हो वह मैं वर्णन करने को असमर्थ हूं, भगवत कथा का सुनना ही अच्छा है और श्रद्धावान पुरुष ही अदृष्ट पदार्थों की प्राप्ती के वासते कठिन तप करते हैं जिन मनुष्यों को श्रद्धा नहीं है वह उस को नहीं प्राप्त हो सकते हैं ॥

हे राजन्! विराट ब्रह्म के दाहने ओर दो खंड वर्तमान हैं दाहिनी ओर भारत खंड है और वाम भाग में एरावत खंड अर्थात् भोग भूमि है और दोनों कानों की ओर नाग द्वीप है जिस को सत्य लोक भी कहते हैं और काश्यप द्वीप में यज्ञ में अमृत पीने वाले योगी जनों का स्वर्ग विश्राम का स्थान है ॥

हे राजन्! परमात्मा के दो दिव्य रूप हैं एक सूक्ष्म दूसरा स्थूल जिस का वर्णन मैंने आप को अपनी बुद्धि के अनुसार कहा है, आगे चल कर परमेश्वर का सूक्ष्म रूप

वर्णन करते हैं जो इस मन रूपी बगीचे में सुन्दरता और कीर्ति से भर भूर रक्त वर्ण अहार और पोषण के वास्ते जिस के फल फूल और पत्ते हैं उस में कई प्रकार के दिव्य स्थानों युक्त यह जम्बूद्वीप परमेश्वर का स्थूल शरीर में वासना रूपी दृष्ट पड़ता है ॥

सातवां अध्याय

—:o:—

जम्बू राज बृक्ष का वर्णन ॥

राजा धृतराष्ट्र ने कहा हे संजय ! आप बड़े बुद्धिमान हो कृपा कर के प्रथम मेरु पर्वत के उत्तर की ओर जो मालवंत पर्वत है विस्तार से उसका वृत्तान्त वर्णन करो ॥

तब संजय ने कहा हे राजन् ! नील पर्वत के दक्षिण और मेरु के उत्तर की ओर कुरु देश वर्तमान है जो पवित्र और सिद्धियों से युक्त है वहां के वृक्ष सदैव मनोहर फल फूलों से झुके रहते हैं और फल बहुत मधुर और पुष्प अत्यन्त सुगन्धि वाले होते हैं ॥

हे राजन् ! वहां ऐसे वृक्ष भी हैं जो सब मनोरथों को पूर्ण करते हैं और कई प्रकार के वृक्ष अमृत के तुल्य स्वाद युक्त दूध के समान रसवाले हैं और छे प्रकार के रस और फूलों में वस्त्र भर्यों को देने वाले वह केवल ऋषि जनों को

ही दिखाई देते हैं, संसारी मनुष्य नहीं देख सकते, हे राजन्! सारी पृथ्वी मणियों की बनी हुई है और वहां की बालु स्वर्ण की सी चमकती है और वर्षा ऋतु में भी वहां पृथ्वी पर कीच नहीं होती वह पूरब्ध हीनों को वैसी नहीं दिखाई देती॥

हे राजन्! स्वर्ग से जो लोग पतित होते हैं, वह वहां आकर जन्म लेते हैं और वह बड़े सुंदर रूप वाले और परमात्मा के भक्त होते हैं और वहां की स्त्रियां अप्सरा के समान रूप वाली होती हैं, वह सुंदर जोड़े उत्पन्न करती हैं जो दूध वाले वृक्षों का रस पीकर बढ़ते हैं और सदैव स्वस्थि रह कर रूप, गुण संयुक्त, दिव्य वस्त्र धारण करते हैं और सदैव एक रूप अवस्था में प्रसन्न चित रहते हैं, उन की आयु ग्यारह हज़ार वर्ष की होती है और समान अवस्था होनेके कारण कोई किसी को नहीं मारता परंतु एक ही समय देह त्यागते हैं यह बात प्राचीन समय की है॥

हे राजन्! यहां एक प्रकार के भारंड नाम के पक्षी बड़े पराक्रमी भयानक तेज पंजों वाले होते हैं, जो मनुष्यों को उठा कर लेजाते हैं और पहाड़ों की गुफाओं में डाल देते हैं॥

हे राजन्! मैंने यह संक्षेप वृत्तान्त कौरव देश के उत्तर भाग का वर्णन किया है, अब मैं मेरु के पूर्व भाग का वर्णन विस्तार से कहता हुं॥

हे राजन्! वहां भद्रा श्वखंड में मूर्द्धाभिषेक नाम महा राज्य में भद्र शल नाम एक वन है, उस वन में एक वृक्ष

है जिस का नाम काल ग्राम है, यह वृक्ष सुंदर फल फूलों से शोभित है और सिद्ध चारणों से सेवत एक योजन ऊंचा है, वहां के पुरुष तेजस्वी महा पराक्रमी गोरे वर्ण के होते हैं और स्त्रियां कमल के समान रूपवान और पूर्ण चन्द्रमा के तुल्य प्रभाव और शीतल देह वाली और सदैव नृत गायन में निपुण वतमान हैं और उन की आयु दश हजार वर्ष की होती है और वह काल ग्राम वृक्ष का रस पी कर सदैव युवा अवस्था में रहते हैं और नील पर्वत के दक्षिण और निषद के उत्तर की ओर सुदर्शन नाम का बड़ा जम्बु का वृक्ष सनातन से है ॥

वह सब मनों वांछित फलों को देने वाला है, सिद्ध चारणों से सेवत है, मनुष्य उस को नहीं प्राप्त हो सकते क्योंकि वह भी दिव्य है और उसी के नाम से यह जम्बु द्वीप विख्यात है, हे राजन्! उस वृक्ष राज जम्बु वृक्ष की ऊंचाई आकाश से मिलने वाली ग्यारह सौ योजन है और उस वृक्ष के पके हुये फल का प्रमाण ढाई हजार अरत्नी है और जब पृथ्वी पर गिरते हैं तब बड़ा भारी शब्द होता है और फल के फटने से श्वेत दूध के रस की नदी हो कर मरु को प्रदक्षिण करके कुरु देश के उत्तर की ओर आती है ॥

हे राजन्! वहां तृषा के कारण उनके चित को शान्ति नहीं होती और उस रस को पीने से उनकी जरावस्था दुःखदाई नहीं होती ॥

हे राजन् ! उसी स्थान पर जाम्बूनद नाम कनक देवताओं का भूषण वी।ब धूर्जेत्र के समान लाल वर्ण का उदय होता है, वह बड़ा तेजस्वी है और वहां के मनुष्य तरुण और रक्त वर्ण जन्मते हैं और इसी समान माल्यवान पर्वत की चाटा पर संवर्तक नाम अग्नी सदैव प्रकाश रहती है ॥

हे राजन् ! इस अग्नी का नाम संवर्तक है और माल्यवान के शिखर पर चारों तरफ चार और छोटे २ पर्वत हैं और माल्यवान ग्यारां हज़ार योजन ऊंचा है वह लोग जो ब्रह्म लोक से मव्रत्त होते हैं वहां आकर गिरते हैं और चांदी के समान रंग वाले श्वेत वर्ण सब साधू भाव वाले उत्पन्न होते हैं और वह मनुष्य बड़े घोर तपों को करने वाले ब्रह्मचारी होते हैं और अपन कठन तपस्याओं के फल से सूर्य लोक में प्रवेश करते हैं और वहां सूर्य के रथ के समीप पदवी पाते हैं और छ्यासठ हजार बर्ष तक भोगते हैं, फिर चन्द्र मंडल में रहत हैं और परम पद को पाते हैं ॥

आठवां अध्याय

—:o:—

जम्बु द्वीप के खण्डों, पर्वतों और वासियों का वर्णन

राजा धृतराष्ट्र ने कहा हे बुद्धिमान संजय ! आपने खण्डों

और पहाड़ा का वृत्तान्त तो कहा अब उन पर्वतों में जो जीव बसते हैं उन का विस्तार से वर्णन करो, तब संजय ने कहा हे राजा! श्वेत पर्वत के दक्षिण और निषद के उत्तर में एक खंड बसता है जिस का नाम रमणीक है, वहां के मनुष्य ईश्वर भक्तों के साथ प्रेम रखते हैं और बहुत सुंदर रूप वाले हैं वह आपस में एक दूसरे से विरोध नहीं रखते, नील पर्वत के दक्षिण और निषद के उत्तर की ओर हिरण्य नाम खंड है, वहां एक नदी है जिस का नाम हिरण्य वति है और उसी स्थान पर पक्षी राज गरुड़ जी भी वास करते हैं और वहां के मनुष्य सुंदर स्वरूप, धन, धान्य संयुक्त यक्षों की सेवा करते हैं और सदैव प्रसन्न चित और बलवान होते हैं और सदैव निरोग रह कर साढ़े ग्यारह हज़ार वर्ष तक आयु भोगते हैं और कोई २ उन में से इस से भी अधिक अवस्था वाले हो जाते हैं, हे राजन्! इस पर्वत की तीन बड़ी चोटीयां हैं जो बहुत मनोहर हैं ॥

एक उन में से मणियों का शिखर है, दुसरा बहुत ही सुंदर स्वर्ण का अद्भुत शिखर है और तीसरा शिखर सब प्रकार के रत्नों से मिला हुआ अनेक स्थानों से शोभायमान दिखाई देता है उस शिखर पर श्रीखांडली दुर्गा निवास करती हैं ॥

हे राजन्! शिखर के उत्तर की ओर समुद्र के समीप एरावत नाम खंड है, इसी कारण यह शृंगवान पर्वत से घिरा हुआ उत्तम खंड कहा जाता है, वहां सूर्य की गरमी किसी को नहीं दुःख देती और मनुष्य वृद्धावस्था को नहीं प्राप्त होते

और चन्द्रमा नक्षत्रों सहित ज्योती रूप के तुल्य प्रकाश मान रहता है, वहां के मनुष्य फूलों के समान कोमल और सुंदर नेत्रों वाले और सुगंध युक्त उत्पन्न होते हैं ॥

हे राजन् ! वह सब देवलोक से प्रतीत हो कर जन्म लेते हैं और देवताओं के तुल्य गंधारी, निराहारी और जितेंद्री और रजोगुण से रहित हैं और उन की आयु तेरह हज़ार वर्ष की होती है ॥

हे राजन् ! खीर समुद्र के उत्तर दिशा में सब पदार्थों के स्वामी तेजोमय श्री हरि नारायण जी स्वर्ण के रथ पर सवारी करते हैं, उस रथ के आठ पहिये हैं जिस में एक पहिया तो पंच कर्म इन्द्रय, दूसरा पंच जितेन्द्र समूह, तीसरा मन बुद्धि चित्त आहंकार का समूह, चौथ पंच माया, पांचवा पांचो सूक्ष्म तत्व, छठा अविद्या, सातवां काम, आठवां कर्म धारी शुद्ध ब्रह्म युक्त मन के समान बहुत वेग से चलने वाल अग्नी के समान तेजस्वी जाम्बु नद नाम स्वर्ण से शोभित है ॥

हे राजन् ! यह सब जगत का स्वामी, व्यापक, सब को लय और उत्पन्न करने वाला जीव रूप से कर्ता और ईश्वर रूप से कर्म करने वाला है, हे राजन् ! वहां पंच तत्व सब का कारण रूप हैं ॥

वैशपायन जी ने राजा जनमेजय को यह कहा कि संजय का यह सब वर्त्ते श्री राजा धृतराष्ट्र सुन कर बहुत चिन्ता करने लगा और बाला कि हे संजय ! निस्संदेह काल जगत को

खाजाता है और फिर सब को उत्पन्न करता है, कोई चीज नाश वान नहीं, जीव ईश्वर भी दोनों रूपों में अवनाशी नहीं अर्थात दोनों एक रूप होकर स्वयम ही सर्वज्ञ और सब का पालन करने वाला ईश्वर है, उसी को सब देवता और मनुष्यों ने सर्व व्यापी वर्णन किया है ॥

नवां अध्याय

—०—

भारत खंड की महिमा का वर्णन ॥

राजा धृतराष्ट्र ने कहा हे बुद्धि मान संजय ! यह भारत खंड जिस में यह सब सेना लड़ने को इकत्र है और मेरा पुत्र दुर्योधन बहुत लालची हो रहा है और पांडव भी लोभी हो रहे हैं और मेरा मन भी अत्यन्त विपरीत होरहा है, इस बात का असली कारण क्या है ॥

तब संजय ने कहा हे राजन् ! मेरे बचनों को अच्छी प्रकार सुनें, पाण्डव लोभी नहीं हैं परन्तु आप का पुत्र दुर्योधन और सौबल का बेटा शकुनि लोभी हो रहे हैं और इन के सहायक कई और देशों के स्वामी योधा क्षत्री लोग लोभी होकर परस्पर में इर्षा करते हैं ॥

हे राजन् ! अब मैं आप को इस भारत खंड का वर्णन करता हुं जो इन्द्र देवता और सूर्य के पुत्र वैवस्वत का अभिष्ट

है, हे राजन्! इन के अभिषिक्त यह भारत खंड का राजा पृथु, वैन्य, इक्ष्वाकु, ययाति अंबरीष, शिव, ऋषभ, रोल, नृग, कुशिक, महात्मा गाधि, सोमक और दिलीपादि बहुत से महा पराक्रमी राजाओं का प्रेय स्थान है और बड़े तेज वाला खण्ड है ॥

हे शत्रुओं को जीतने वाले राजन्! यह भारत खंड कर्म भूमि होने के कारण सब का ही रोचक है, मैं इस का वर्णन कहता हूं, महेन्द्र, मलय, सह्य, शक्तिवान, पारियात्र, ऋक्षवान, विन्ध्याचल इन सात पर्वतों के निकट कई एक और पर्वत हैं जो अनेक प्रकार के फल फूलों और उत्तम २ पदार्थों से संयुक्त दूर तक फैले हैं और उन में बहुत स्थान गुप्त और वहां के जीवों के निवास की जगह हैं ॥

हे राजन्! इन के बिना और भी बहुत सी छोटी २ पहाड़ीयां हैं जिन में म्लेच्छादि लोग बसते हैं और आर्य मनुष्य वर्णाश्रम धर्म वाले सदैव वेद को मानने वाले, गंगा; सिंधु सरस्वति इत्यादि बड़ी २ नदियों का जल पीते हैं और गोदावरी, नर्मदा और बहुदा नाम महानदी, शतद्रु, चन्द्रभागा, महानदी, यमुना, दृषद्वती, विपाषा, स्थूल बालुका, वेत्रावती, कृष्णावेनी जो नीचे को चलती हैं एरावती, वितस्ता पयोष्णी, देविका, वेदस्मृता, वेदवती, त्रिदिवा, इक्षला, कृमी करिषाणी चित्रवाहा नीचे चलने वाली, चित्रसेना गोमती, धूतपापा, महानदी, गंडकी, कोशकी लिदिवा कृत्या, निचता, लाहतारणी, रहस्या, शतकुम्भ, सरयू, चर्मरावति,

वेत्रवती, हस्तिसोमा, दिशनदी, शरावती, पोषनी, वेना, भीमरथी, कावेरी, चुलुका, वाणी, शतवली, नीवारा, माहिमा, सुप्रयोगा, अजना, पवित्रा, कुंडली, सिंधु राजनी, पुरमालिनी, पूर्वाभिरामा, अमाघवती, भीमा, पालाशनी, पापहरा, महेन्द्रा, पाटलावती, करीषिणी, असंकुली, कुशचीरा, मकरी, प्रवरा, मेना, हेमा, घृतवती, पुरावती अनष्णा, शन्या, कायी, सदाचारा, अध्वंय, कुशधारा सदाकांता, शिवा, वीरवती वस्त्रा, सुवस्त्रा, गौरी कंपना, वगा, वीरकान्ता हिरण्य पंचमी, रथचित्रा, ज्योतिरथा, विश्वामित्र, कपिजला, उपेन्द्रा, वहूला, अम्बुवाहिनी, कुवीरा, विंदा, पिंजला, वेना, महानदी, तुंगवणा, विदिश, कृष्णवेना, ताम्रा, कपिला, खलु, सुवामा, वेदाश्वा, हरिश्रवा, महोपमा, शीघ्रा, पिच्छला, भारद्वाजी, निम्नगा, निम्नगाकौशकी, शोभावहुदा, चंद्रमा, दुर्गा, मंत्राशिला, ब्रह्मबोध्या, बृहद्वती, यवक्षा, अथरोही, जांबुनदी, सुनसा, तमसा, दासी, वसा, वरुणा, अपसी नीला, घृतमति, महानदी, पर्णाश, मानवी, वृषभा, ब्रह्ममेध्या इत्यादि सब नदियों का जल पान करते हैं ॥

हे राजन्! इन के विना और वहुत सी नदीयां वहती हैं, जैसे कि मन्दगा, मन्दवानी, सदानीरा, कृष्णा, ब्रह्मनी, महागौरी, दुर्गा, चित्रोपाला, चित्ररथा, मुंजला, वाहिनी, मन्दाकिनी, वैसरनी, कोणा, मुक्ति, मति, अनिगा, पुष्पवेनी, उत्पलावति, लोहत्या, करतोया वृषका, कुमारी, ऋषिकुल्या, मरिष सरस्वति, सवी गंगा, यह सब नदीयां संसार की माता

और महा पुन्य की देने वाली हैं, इसी प्रकार सहस्त्रों नदियां और भी हैं जो गुप्त रूप से वर्तमान हैं जो मैंने अपनी बुद्धि द्वारा वर्णन करी है ॥

हे राजन्! अब मैं आप से देशों का वर्णन करता हूं, जैसे कुरुदेश, पंचाल देश, शाल्व, माद्रेय जांगल, शूरसेन, पुलिंद, घोधा, माला, मात्स्यदेश, कुंशादिदेश, सौशल्य कुंती देश, कांतिकोशलदेश, चेदी, मत्स्य करूप, भोजसिंधु, पुलिन्दक, उत्तम दशार्णदेश मेकल, उत्कल, पांचाल, कोशल, नकपृष्ठ, धुरधंर, वोधा, मन्द्र कालिंद, काशाय, परकाशयु, जठरा, कुकरा, दर्शना, उत्तर देशयुक्त, कुन्त्य, अपरकुत्य, गोमन्त्य, मन्तक, मन्दक खंड, विदर्भ, रूपवाहिक, अश्वक, उत्तर गौपराष्ट्रकरीत, आधिराज्य, कुशाद्य, मल्लराष्ट्र, केवल, वाखास्य, अपवाह, वकवक्रात, शक, विदेह, मगध, सूक्ष्य, मलयविजय, अंग, वंग, कलिंग, यकूलोम, मल्ल, सूदेष्णा मलहाद, माहिक, शशिक, वहुलीक, वाटधान आभीर, वालतोयक, परांत, अपरान्त, पांचाल चर्ममंडल, अटवी, शिखर, मेरुभूत, सौराष्ट्र, केकय, कुट्ट, पराच, माहेयकक्ष्य सामद्रपिकूट हैं ॥

हे राजा धृतराष्ट्र! इन के बिना और पर्वत, देश, पहाड़ीयां हैं, जैसे अंग, मलज, मगध, मानवर्जक महातर, प्रसुविषय, मार्गव, पौरखड लार्ग किरात, सुदेष्ट, यामुन, शक, निषाद, निषद, आनर्त, नैऋतु, दुर्गाल, प्रति मत्स्य, कुंतल, कुशल, तीरग्रह, शूरसेन, ईजक, कन्याकागण तिलभार, समीर मधुमता, सुकन्दक, काशमीर सिन्धु,सौवीर, कंधार, दर्शक

अभिसार, अलूत शैवल, वाह्लीक, दर्वी, नवादर्वी वातज, मथौंग, वाहावाद्य, कौरव्य, सुदामान, समुल्लिक, वध्रा, करुष्यिक, कुलिन्द, उपत्यक, वानायु, दर्शन, रूप, कुशन्द, कञ्ज, गोपाल कच्छ, जांगल, कुरुवर्णक, किरात, बरबर, सिद्धा दिह, ताम्रलिप्तक, औड़, पौड़, सैसिकृत, पार्वतीय, मारिष और इन के विशेष दक्षिण की ओर देश जैसे द्रविण, केरल प्राच्य भूशिक, वनवासिक कर्नाटक, माहिषक, अरिकल्य, मूषिक जिलक, कुंतल सौहृद, नभकानन, कौकुटक, चोल, मालवानक कौकर्ण, कुरर कार्क, सुमंग मारिष, अंगार, ध्वज, न्युतसवकतु, शाल्वसेन त्रिगत, कोकवक, कोकपोष्ठ, समवेगवंश, विंध्य चुलक, कलकल सहित पुलिंद मालव, मल्लव परवल्लभ, कुलिंद कालव कुंडल करल मूषक तनवाल, सनीय, घटसूजय अलिदाप शिवाट, तनय, सुनय, ऋषक, विदतीकाक, तगण अपरतंगमा । हे राजन इन के परे उत्तर की ओर और देश है जहां के लोग बहुत कठोर मलेछ जाती के रहते हैं और यवन जिन में मुसल-मान चीनी कांबोज, संकटग्रह, कुल्य, आहून और पारसी लोग हैं ॥

यह सब दया रहित हिंसक भयकारी हैं और रमणी, चीनी, दशमालक जो कि क्षत्री वंश से उत्पन्न वैश्य और शूद्रों के कुल में बसते हैं और अभीर, दर्दर पशूवत हैं, वह काश्मीर खाशीर अर्थात खुरासान, अन्तचार और पह्लव जिन की भाषा पहलवी मशहूर है और गिरिगव्हर, अत्रेय भरद्वाज, भेषिक, स्तनपोषक, कालिंग, किराटों को जाते और

रोम, हंस मार्ग कर ंजक यह और इन के पूर्व उत्तर के देश हैं ॥

हे राजन्! यह सब देश मैंने आप के प्रति संक्षेप से वर्णन किये हैं ॥

हे राजन्! यह पृथ्वी मनोर्थों के पूर्ण करने वाली काम धेनु गौ है जो धर्म, अर्थ, काम और हिरण्य गर्भ रूपी फल को देने वाली है और राजा लोग इस को लेने के लिये अनेक प्रकार की बुद्धी वीरता और लालसा कर के परस्पर में लड़ते और अपने प्राण तक दे देते हैं ॥

हे राजन्! यह पृथ्वी माता के समान देवता और मनुष्यों की रक्षा करती है और भार्त वंशी क्षत्री लोग इस पर अनेक प्रकार के सुख की इच्छा करने के लिये एक दूसरे को मारते हैं, जैसे कि कुत्ते मांस के टुकड़े पर एक दूसर से लड़ते हैं और उन की तृष्णा कम नहीं होती इसी भांत कौरव और पांड़व भी आपस में कई प्रकार की अस्त्र विद्या और शम, दम, दंड, और भेद इन चारों युक्तीयों के द्वारा इस पृथ्वी को अपने वश में करने के निमित्त कई प्रकार के उद्योग करते हैं, हे राजा धृतराष्ट्र! जिस की प्रारब्ध अच्छी होती है और जिस पर भगवान की कृपा होती है, उसी के यह पृथ्वी आकाश और सकल संबधी मित्र होते हैं ॥

दशवां अध्याय

—-:०:-—

चार युगों का वर्णन ॥

श्री राजा धृतराष्ट्र जी ने कहा हे विशाल बुद्धि वाले संजय ! इस भारतखंड और हेमवंतखंड के मनुष्यों की आयु की संख्या और तीनों काल भूत, भविष्य, वर्तमान की भली बुरी विवस्था विस्तार से कहें और इसी प्रकार दूसरे खण्डों का वर्णन भी करें। तब संजय ने कहा हे कौरव कुल के शुभ चिंतक राजन ! भारत खण्ड में चार युग हैं, प्रथम सतयुग, फिर त्रेतायुग, फिर द्वापरयुग और कलयुग है, हे धर्मात्मा राजेन्द्र ! सतयुग में चार हज़ार वर्ष की आयु होती है, त्रेतायुग में तीन हज़ार, द्वापर में दो हज़ार की और कलयुग के मनुष्यों की आयु का कोई नियम नहीं, इस कलयुग में बालक उत्पन्न होने से पहिले ही गर्भ में मर जाता है, सतयुग के मनुष्य बलवान पराक्रमी, धर्मात्मा, शुद्ध बुद्ध, रूप गुण संयुक्त सहस्रों उत्पन्न हो कर शुभ प्रेय दर्शक सन्तानों को उत्पन्न करते थे और धरी तपोनिधी मुनी सत्यवादी हो कर रहते थे और वीरता में बड़े योधा धनुषधारी वर के योग्य श्रेष्ठ क्षत्री उत्पन्न होते थे, त्रेतायुग में सब राजा चक्रवर्ती होते हैं और बड़ी आयु वाले, वीरता निपुण, में धनुष धारियों में मुख्य राजा आज्ञापालन करने वाले उत्पन्न होते हैं और द्वापुर युग में सब वर्ण सदैव प्रसन्न चित पराक्रमी

विजय अभिलाषी उत्पन्न होते हैं और कलयुग में कामी क्रोधी, लोभी, अहंकारी, इर्षा, छल, निंदा करने वाले विषयों में आसक्त उत्पन्न होते हैं ॥

हे राजन् ! इस कलयुग में गौओं की बहुत कमी है परन्तु हेमवन्त खण्ड और हरि खण्ड गौओं के लिये सब से उत्तम स्थान हैं ॥

ग्यारवां अध्याय

—:०:—

अन्य द्वीपो का वर्णन ॥

श्री राजा धृतराष्ट्र ने कहा हे बुद्धिवान संजय ! आपने जम्बु द्वीप का वर्णन विस्तार से किया, अब कृपा कर के इस का केन्द्र और वृत्ति अर्थात् इस का घेर, लम्बाई, चौड़ाई का वर्णन भी यथार्थ से करें और समुद्र का विस्तार भी कहें और शाक द्वीप, दत्त द्वीप, शालमली द्वीप, क्रौंच द्वीप और इन के सूर्य चंद्रमा और राहु आदि का वृत्तांत भी कहें ॥

तब संजय ने कहा हे राजन् ! बहुत से ऐसे द्वीप भी हैं जिन में यह युग बड़ा विस्तार युक्त होता है. राजन् ! अब मैं सातों द्वीपों का वर्णन उन के ग्रह, काल, ऋतुओं सहित वर्णन करता हुं ॥

हे राजन ! जम्बु द्वीप का केन्द्र और वृत्ति फल अठारह हजार छे सौ योजन हैं अर्थात व्यास पांचे हज़ार नौ सौ

अठारह योजन है और बारह हजार छे सौ बियासी परिघ हैं और वन पर्व में श्री हनुमान जी के कहे हुये के अनुकूल पृथ्वी पर वन, पर्वत और समुद्र इन के प्रमाण और जीवों की संख्या युगों क अनुसार होती है क्योंकि शास्त्र के अनुसार हर एक युग में प्रत्येक वस्तु का चोथा हिस्सा क्रम से घट जाता है अर्थात सतयुग में पृथ्वी मंडल की संख्या ऊपर की लिखित के अनुसार थी ॥

त्रेता में नौ हजार पाचसौं ग्यारह, द्विती यांश डेढ़ योजन हुआ और द्वापुर में छे हजार तीनसौ इकतसि रहा और कलियुग में तीन हजार एकसो सत्तर द्वीती यांश अर्थात् आध योजन रहा और योजन का प्रमाण चार कोस होने से उस के चार से गुणने से बारह हजारे छे सो ब्यासी कोस हुआ, इस के मील पच्चीस हजार तीनसौं चौंसठ हुये ॥

विलायत वाले भी अपने हसाब में इस भूगोल को पचीस हजार का मील बताते हैं और खारी समुद्र का प्रमाण इस से दो गुण है जिस में कई मनोहर टापु, पर्वत और देश बसते हैं, जो मोतियों और धातुओं के मुख्य २ स्थान हैं ॥

वहां के मनुष्य सदाचारी शोभायमान, प्रसन्न बदन और हितकारी होते हैं ॥

हे राजन् ! अब शाक द्वीप का वृत्तान्त श्रवण करें, इस द्वीप का विस्तार जंबु द्वीप से दुगना है और उस के चारों ओर चीरोद नामी समुद्र है जिस में और भी छोटे २ सुंदर

मनोहर फल फूलों से भरपूर देश विसतार से फैले हुये हैं, वहां के मनुष्य वहूत प्रसन्न, क्षमावान और तेजसवी हैं और बहुत आयू वाले होते हैं, उन के देश में दुरभक्ष कभी नहीं होता ॥

हे राजन् ! यह शाक द्वीप का संक्षप मे वर्णन किया है अब और आप क्या सुनना चाहते हैं ॥

तब राजा धृतराष्ट्र बोले हे शुद्ध बुद्धिमान संजय ! आपने शाक द्वीप का संक्षप से वृत्तान्त तो कहा पर विस्तार से आद अंत तक न कहा ॥

तब संजय ने कहा हे राजाधिराज ! इसी प्रकार के सात पर्वत और भी मणियों से शोभित विराज मान हैं और वहां की नदियों से कई पूकार के रत्न निकलते हैं, वहां के मनुष्य साफ और सब गुणों में संपन्न हैं, उन पर्वतों पर देवता, ऋषि और गंधर्व निवास करते हैं ॥

हे राजन् ! वहां प्रथम पर्वत को मेरु बोलते हैं, दूसरा पुर्व और पाश्चिम को मिलाने वाला मलय नामी है, उस पर्वत से मेघ उठते हैं और वर्षा करते हैं, जहां पर चन्द्र देव जी पवित्र दिव्य जल को पान करते हैं और उसी जल से वर्षा ऋतु में पृथ्वी पर जल वर्षता है और उस से भी एक बड़ा विशाल पर्वत है जिस का नाम रैवतक है, जहां पर रेवती नक्षत्र सदैव विराजमान रहता है, यह मर्यादा श्री ब्रह्मा जी से चली आती है ॥

हे राजन्! उत्तर की तरफ एक और पहाड़ है जो उठती हुई घटा के समान ऊंचा शोभायमान सुंदर स्वरूप है, हे राजन्! श्याम वर्ण वहीं से उत्पन्न हुआ है, धृतराष्ट्र जी बोले हे संजय! इस कथन से मुझे बहुत संदेह हुआ है कि किस तरह श्याम वर्ण उत्पन्न हुआ है॥

तब संजय ने कहा हे राजन्! सब द्वीपों में गोर नर रूप जीव और काला नारायण रूप ईश्वर दो पक्षी हैं, उन दोनों वर्णो में जिस हेतु से नारायण का काला रूप श्याम वर्ण उत्पन्न हुआ उसी से उस का नाम श्याम गिरी विख्यात हुआ, उस में निवास करने से और शाक भोजन करने से मनुष्यों का श्याम वर्ण हुआ॥

हे राजन्! इस से आगे चल कर महोदय, दुर्ग, शैल केशरी और केशर युक्त पर्वत हैं उन्हीं से वायू की उत्पत्ति होती है, उन दोनों का विस्तार का प्रमाण क्रम से एक से दो गुणा है॥

हे राजन्! वहां के निवासियों ने यह सात खण्ड निर्माण किये हैं जैसे महा मेरु, महाकाश, जलद, कुमद, उतर, जलधार, सुकुमार सात नाम हैं, रैवत पर्वत का खण्ड मोदाकी है और श्याम गिरी का मणिकाचन है और केदार पर्वत का कोमार है उस से परे महा पुमान है जो छोटे बड़ों को चारों ओर से घेरे हूये है॥

उसी द्वीप में एक शाक का बड़ा भारी वृक्ष जंबू वृक्ष के समान प्रसिद्ध है और जंबू द्वीप के मनुष्य स्थूल शरीर को

त्याग कर अपने कर्म फल को भोगने के वास्ते सूक्ष्म शरीर के द्वारा शाक द्वीप में जा कर उस वृक्ष को पुजते हैं जिस से वह विख्यात है और सब प्रजा उस की सेवा में रहती है ॥

हे राजन् ! उसी द्वीप में सूक्ष्म शरीर पाने के कारण सब वर्ण अपने २ धर्मों में स्थित रखने के कारण बड़ी आयू वाले जन्म मरन से रहित हैं अर्थात जब सब कर्मों का फल समाप्त हो जाता है, वह मृत हो कर जंबू द्वीप में जन्म लेते हैं, वही उन की मृत्यु है, वहां चोर नहीं दिखाइ देते और जीवों की ऐसी बृद्धि है जैसे वर्षा ऋतु में नदियों की. वहां नदियां निर्मल जल वाली हैं और दिव्य रुप वाली गंगा भी बहती है ॥

इन के बिना और नदीयां जैसे सुकुमारी, कुमारी. शीतामा, वेणाका, महानदी, मणीजला, चत्तु, वर्द्धनका, आदि अगिनत नदीयां शुद्ध जल वाली हैं, जहां से इन्द्र जी जल ले कर वर्षा करते हैं ॥

उन के नाम विसतार के भय से वर्णन करने के योग्य नहीं पर वह श्रेष्ठ नदीयां पावण और कीर्ती के बढ़ाने वाली हैं और वहां सब लोकों में चार देश बड़े प्रसिद्ध और पवित्र वर्तमान हैं जिन के नाम यह हैं:— मृग, मशक, मानस और मंदक मृग देश में ब्राह्मण वर्ण के ऐसे मनुष्य हैं जो अपने कर्मों में सदैव प्रवृत्त हैं और मशक देश में बीर क्षत्री लोग धर्म कर्म में प्रवीन महा

दानी हैं और मानस देश के मनुष्य वैश्य धर्म कर्म में लीन रह कर निर्वाह करते हैं और मंदक देश के निवासी शूद्र लोग अपने धर्म में सदैव मग्न रहते हैं ॥

हे राजन्! इन खण्डों में न कोई राजा है और न कोई दंड है, न कोई दंड योग्य ही है, वहां की प्रजा के लोग बड़े धर्म वाले अपने २ कर्मों में लगे रहते हैं और परस्पर में प्रीति पूर्वक एक दूसरे की रक्षा करते हैं ॥

हे राजा धृतराष्ट्र! इस शाक द्वीप का इतना ही वृत्तांत वर्णन करने और सुनने के योग्य है जो मैंने आप के आगे अर्पण कर दिया है ॥

बारहवां अध्याय

—:०:—

संजय का धृतराष्ट्र को कई द्वीपों का हाल वर्णन करना ॥

संजय ने कहा हे राजन्! पहिले वर्णन किये हुये उत्तर द्वीपों में जिस प्रकार का वृत्तांत मैंने जाना है, वह आप सवाधानी से श्रवण करें कि वहां एक तो घृत का समुद्र है, दूसरा दधि का, तीसरा मदिरा के समान जल वाला और चौथा मीठे जल का समुद्र है ॥

हे राजन् ! सब द्वीप और पर्वत परस्पर में दो गुणे विस्तार के समुद्रों से घिरे हुये हैं और मध्य में वर्तमान जो द्वीप हैं उस में श्वेत पत्थर का बड़ा भारी पहाड़ है और पिछले में कृष्ण वर्ण का पहाड़ है, जो भगवान का स्वरूप है, वहां आप केशव मूर्ति रत्नों के दिव्य सिंहासन पर विराजमान हैं और प्रसन्नता से जगत का पालन करते हैं और कुश द्वीप में एक प्रसिद्ध कुश स्तम्भ है और चारों ओर कई मनोहर देश बसते हैं ॥

शाल्म मली द्वीप में शाल्म मली वृक्ष की सेवा की जाती है और क्रौंच द्वीप में क्रौंच नाम महा पर्वत रत्न और मणियों की विधि रूप है जिस का सब जाति के मनुष्य पूजन करते हैं ॥

हे राजन् ! उस द्वीप में एक और पर्वत है जिस का नाम गोमत है, जो कई प्रकार की धातुओं का महा भंडार है, उस के ऊपर श्री कमल लोचन देवता स्वयं विराजमान हैं और भक्तों पर सदैव कृपा करते हैं और कुश द्वीप में एक पर्वत है, जिस पर दिव्य रूप औषधियां और वृक्ष आच्छादित रहते हैं और वह पवित्र दर्शनीय वृक्ष अपने नाम से प्रसिद्ध हैं ॥

दूसरा हेमवत पर्वत है, तीसरा द्युतिमान, कुमुद और गिरि है चौथे का नाम पुष्पवान है, पांचवें का नाम कुशेश है छठे का नाम हरि गिरि है। छओं पर्वत बड़े श्रेष्ठ हैं, इनके

अन्दर की पृथ्वी का विस्तार उपरोक्त विभाग के हिसाब से प्रथम खंड है और बहुत सुंदर है, दूसरा वेणु के आकार का है, तीसरा रथ के समान है, चौथा कंबलवत है, पांचवा धृति मत खंड है, छटे का नाम प्रभा कर है, सातवां कापिल खगड है, इ सातों पर्वत खंडों को जुदा २ करते हैं ॥

इन खंडों में देवता, गंधर्व, मनुष्य और पशु आदि कई प्र ार के जीव रहते हैं और विहार पूर्व रमण करते हैं, उन खंडों में मनुष्य नाश नहीं होते और वहां म्लेच्छादि अधम जाती के लोग नहीं होते, सब प्रजा के लोग गौर वर्ण के कमल वत सुन्दर होते हैं ॥

हे राजन्! इन के बिना बाकी के द्वीपों का वर्णन भी कहता हूं, आप अच्छी तरह से श्रवण करें, क्रौंचद्वीप में क्रौंच नाम का बड़ा भारी पर्वत है और उससे परे वामन है, वामन से पड़े अन्धकारक है उस पर मेनाक है और गोविन्द है, इस पर निविड है यह सब पर्वत बड़े श्रेष्ठ और उत्तम हैं और विस्तार में दुगणे २ हैं ॥

हे राजन्! इन पर्वतों के देशों का भी हाल सुन, किं- भो द्वीप का देश कुशल है, वामन का देश मनोनग है, उस से परे गरम देश है और उस मे परे प्रावरक है उस से आगे अन्धकारक है, आगे मुनि देश है और मुनि देश के आगे दुं भी कहा जाता है ॥

हे राजन्! इन देशों के लोग गोरे वर्ण के होते हैं और सिद्ध जन महात्मा लोग सदैव वास करते हैं, पुष्कर द्वीप में

पुष्कर नाम पर्वत वड़ा सुन्दर मणि रत्नों से भरपूर वर्तमान है, उस पर श्री चतुर मुख ब्रह्माजी निवास करते हैं, जिस को सकल देवता और महर्षि सेवन करते हैं और सब मनुष्यादि उपासना करते हैं ॥

हे राजन् ! इन द्वीपों में अनेक प्रकार के रत्न जम्बू द्वीप से वर्तमान होते हैं अर्थात् जम्बू द्वीप के मनुष्य जो २ शुभ कर्म करते हैं उन के फल से वह रत्न उन के भोग के वास्ते उत्पन्न होते हैं और मनुष्य अपनी आयू पूर्ण हो जाने पर देह के त्याग देने के पीछे फिर उन द्वीपों में जन्म लेकर अपने कर्मों का फल भोगते हैं ॥

वहां के जीव, ब्रह्मचर्य, सत्यता, शांत चित, अरोगता पूर्वक एक से दूसरे द्वीप की मर्यादा अधिक से अधिक है, इन सब द्वीपों में एक ही देश है, जिस में सब देश वर्तमान हैं, वह धर्म रूप देश प्रसिद्ध है अर्थात् शुभ फल भोगने के लिये छत्रों द्वीप हैं और जम्बू द्वीप कर्म भूमी और योग भूमी है ॥

हे राजन् ! आप प्रजा पालक परमात्मा दंड पकर कर इन द्वीपों की सहायता के वास्ते नियत रहता है। वही राजा धिराज परमात्मा शिव रूप पितामह आदि है। वही सब जीव धारियों और जड़ पदार्थों की रक्षा करता है। यहां के वासी स्वतःसिद्ध मिले हुवे भोजन खाते हैं। इन के परे सामान प्रजा की निवास भूमी दिखाई पड़ती है ॥

हे राजन् ! वह चतुर कोन कमलमत है और उस का मंडल तेतीस हज़ार योजन है, वहां चार कोनों के प्रधान

दिगराज वर्तमान ऐरावत नाम आदि से चार हाथी नियत हैं। तीसरा प्रतीक है। चौथे का नाम प्रभिन्न करट है। जिस का प्रमाण मैं नहीं कह सकता वह गज समूह सदैव ऊंच नीच होता रहता है, इस लिये प्रमाण में नहीं आसकता, वहां पर सर्व दिशाओं की वायू चलती है और हाथी अपनी सूंड उठा २ कर श्वास लेते हैं और छोड़ते हैं वह छोड़ी हूई वायु यहां आती है और जीवन का कारण होती है ॥

तब राजा धृतराष्ट्र कहने लगा हे संजय! आपने यह बहुत विस्तार वर्णन किया और द्वीपों का भी वृत्तान्त कहा, अब मैं उन भागों का विशेष वर्णन सुनना चाहता हूं और ग्रहों का विशेष वर्णन भी सुनना चाहता हूं ॥

तब संजय बोला हे राजन्! राहूग्रह गोलाकार है और उस का व्यास बारह हजार और मंडल छत्तीस हजार योजन है, बुद्धिमान पंडितों ने इस की मुटाई का प्रमाण छे हजार योजन से भी अधिक कहा है और चन्द्रमा का व्यास ग्यारह हजार और मंडल इस का तेतीस हजार योजन है और मुटाई त्रेसठ योजन से अधिक कही है ॥

हे राजन्! सूर्य का व्यास दश हजार योजन है और मुटाई तेरह सौ योजन हैं और मंडल इकतीस हजार तीनसौ योजन है, श्री सूर्य जी बड़े उदार और शीघ्र गामी हैं। हे राजन्! यह सूर्य का प्रमाण है, राहू अपने बड़े विस्तार से समय पाकर सूर्य और चन्द्रमा दोनों को छालेता है ॥

हे राजन् ! यह संक्षेप से वर्णन किया है, यह सब वृत्तान्त शास्त्र रूपी दृष्टि से कहा गया है। हे राजन् ! यह जगद जैसे मैंने अपने गुरु मुख से श्रवण किया है वैसा ही आप के प्रति कहा है, आशा है कि आप इस वृत्तान्त के सुनने से शांति को प्राप्त होंगे ॥

हे भारत वंशी चित्तरोचक भूमी पर्व को जो सुनता है वह धनवान पृथ्वी को पाता है और उस की अवस्था, बल, बुद्धि, कीर्ती, तेज बढ़ती हैं, जो राजा इसे श्रद्धा पूर्वक नियम से सुनेगा उस के पितृ गण तृप्त होते हैं, यह सब भारत खण्ड जिस में हम सब रहते हैं। यह पूर्वजों से बड़ पुन्य को बढ़ाने वाला माना गया है, इस लिये सब को श्रवण करना योग्य है ॥

तेरहवां अध्याय

—:-*-:—

भीष्म जी की शिखण्डी के हाथों से मृत्यु का वर्णन ॥

श्री वैशंपायन जी ने राजा जनमेजय से कहा हे राजन् ! तीन काल अर्थात भूत, भविष्यत, वर्तमान के जानने वाले बुद्धिमान संजय अकस्मात युद्ध भूमी से आये और राजा धृतराष्ट्र के निकट बैठ कर पहिले राजा को नमस्कार की और अत्यन्त देखी हुई बात राजा को सुनाने लगे ॥

हे राजन् ! आज कौरवों के पितामह रण भूमी में घायल पड़े हैं जिन्हों ने आज तक आप के पुत्र दुर्योधन की रक्षा की जिन के पराक्रम पर दुर्योधन ने पाण्डवों से धोखे का जुआ खेला वह भीष्म जी आज शिखंडी से विदीर्ण घायल हो कर बाणों की शय्या पर विश्राम कर रहे हैं ॥

जिस महारथी ने काशी पुर में एक रथ से महा घोर युद्ध में अनेक योधाओं के समूह को जीत लिया था और फिर जमदग्नी के पुत्र महा तजस्वी श्री परशुराम जी से लड़ते रहे और उनके हाथों बच निकले थे आज वही भीष्म जी शिखण्डी के हाथ से मरे परे हैं, जो बीरता में इन्द्र के समान और दृढ़ता म हिमालय पर्वत के तुल्य और गंभीरता में समुद्र के समान और क्षमा में धरती के सदृश थे; इस समय वही महा योद्धा शर शय्या पर धनुष रूपी सरहाना लेकर पांचाल देशी शिखण्डी के हाथों से मरे पड़े हैं ॥

जिस को पांडवी सना युद्ध में शस्त्र लिये देख कर थर २ कांपती थी, जैसे वन में सिंह को देख कर गाओं का समूह भय से व्याकुल कांपता है, वही योधा जो आप के पुत्र की दश दिन परयन्त रक्षा करता रहा, वह वीर जो एक क्षण मात्र में बाणों की वर्षा कर देता था और जिसने दश दिन के अन्दर रण भूमी में एक अब संख्या योधा मार डाले थे; आज वही महा योधा आप की खोटी सलाह से आंधी से गिरे हुये बड़े भारी वृक्ष के समान पृथ्वी पर ऐसा अचेत पड़ा है जैसे फिर कभी नहीं उठेगा ॥

चौदहवां अध्याय

—:०:—

राजा धृतराष्ट्र का संजय से भीष्म की मृत्यु का हाल पूछना ॥

राजा धृतराष्ट्र बोले हे संजय ! मेरा पिता भीष्म शिखंडी के हाथ से कैसे घायल हुआ और किस तरह रथ से गिरा, वह तो अपने पिता शांतनु के समान ब्रह्मचारी, देवता रूप, पराक्रमी था और मेरे पुत्रों की उन के बिना क्या दशा हुई, हे संजय ! ऐसे योद्धा, धनुष धारी, ज्ञान युक्त, शस्त्र वेत्ता, सर्वोत्तम भीष्म के मारे जाने से आप के चित्त पर क्या प्रभाव पड़ा, हे संजय ! मेरा चित्त तो ऐसे निर्भय वीर पुरुष भीष्म की मृत्यु सुन कर अति पीड़ा और व्याकुलता को प्राप्त होता है ॥

हे संजय ! आप यह बतलायें कि इस महा तेजस्वी के आगे कौन २ वीर क्षत्री योधा चलते थे, कौन २ पीछे थे रथ वान कौन था, कौन २ योधा दृढ़ता से सन्मुख हो कर लड़े, कौन २ से पीछे वापस आगये और कौन २ से क्षत्री उस महा पराक्रमी, महा रथी, युद्ध में सहस्त्रों शत्रुओं का हनन करने वाले के पीछे २ चले ॥

ऐसे बड़े तेज धारी बलवान सेना के स्वामी सूर्य के समान प्रकाश वान के सन्मुख कौन २ ऐसा योधा था जिस

को भीष्म जी को सामने लड़ने का साहस हुआ और भीष्म जी को घायल किया। हे संजय ! पाण्डवों ने संग्राम में किस तरह उस पुरुषोत्तम, अजित, जितेन्द्री भीष्म जी को जिन के सर्प मुखी बान शीघ्रता से चलने वाले थे रोका और अर्जुन ने किस तरह गिराया ॥

जिस महा योधा भीष्म जी को इन्द्र देवता और परशु राम भी न जीत सके वह वीर शिखंडी के हाथ से कैसे मारा गया ॥

हे संजय ! द्रोणाचार्य, कृपाचार्य जैसे विद्वान योधाओं के होते हुये और मेरे पुत्र दुर्योधन, दुश्शासन और बहुत से क्षत्रियों के मध्य में किसी ने भी उन शत्रुओं को न रोका और पांचाल देशी पाण्डवों के सहायक शिखंडी ने सूर्य के समान प्रकाश वाले भीष्म जी को मार गिराया ॥

बड़े शोक की बात है कि मेरे पुत्र दुर्योधन ने युद्ध में अपनी विजय के लिये ऐसे महारथी को मरवा डाला और पाण्डवों ने भी राज्य के लोभ में आकर अपने पितामह भीष्म को मार डाला ॥

हे संजय ! ऐसी बात सुन कर मेरा कठोर वज्र के समान हृदय फट गया है, कौरव लोग जिस के भरोसे पाण्डवों से युद्ध करते हैं, वह तो अब सूर्य के समान डूब गया अब निश्चय करके दुर्योधन की हार होगी ॥

पन्द्रहवां अध्याय

—:०:—

शोक सागर में डूबे हुये राजा धृतराष्ट्र को संजय का समझाना और दुर्योधन का दुश्शासन को नियम बतलाना ॥

संजय ने कहा हे राजन् ! यह सब बातें जो आप ने पूछी हैं सब सत्य हैं परन्तु इस में किसी का भी दोष नहीं, मनुष्य अपने कर्म का फल भोगता है, दूसरे पर दोश लगाना मिथ्या है, जो मनुष्य निंदक कर्म करता है उस की सारे संसार में निंदा होती है और वह मनुष्य मारने के योग्य होता है ॥

हे राजन् ! आप को अच्छी प्रकार स्मर्ण है कि दुर्योधन ने छल से पांडवों का मान भंग हुआ और पांडव अत्यंत दुःखी हो कर चिर काल तक वन में ऐसे निरादर का सहन करते रहे और कई मंत्रियों द्वारा आप के न्याय कारी होने की आशा करते रहे ॥

हे राजन् ! आप शोक संताप को छोड़ दीजिये, जो होना था सो हो गया, भावी बलवान है और सदैव काल से चली आती है, इस को कोई नहीं रोक सकता, हे राजन् ! मैंने श्रीव्यास जी के वरदान से दिव्य दृष्टि प्राप्त की है इस से भूत, भविष्यत और वर्तमान कालों की बात को जान गया हूं,

आकाश पाताल, और सारी पृथ्वी का ज्ञान मेरे हृदय में प्रकाशमान है और मुझ पर शस्त्र घात नहीं कर सकता ॥

हे राजन्! अब मैं नेत्रों से देखी हुई बात वर्णन करता हुं आप चित से शोक को हटा कर श्रवण करें।

हे राजन्! जब दोनों ओर की सेना युद्ध के वास्ते त्यार हुई तो कौरवों की सेना कुरुवंद के नियमों के अनुसार आगे पीछे सन्नद्ध हो कर खड़ी हुई, दुर्योधन ने दुशासन से कहा देखो पितामह भीष्प जी आज अकेले ही युद्ध के लिये तत्पर हैं। इन की रक्षा के लिये अच्छे २ योधा इन के आगे पछि दाहिने और बाहें नियत करदें और अच्छे २ रथ भी साथ भेजें, सारी सेना को सिक्षा सुना दो कि आज कौरवों और पाण्डवों का बड़ा घोर युद्ध होना है, जो चिरकाल से मन ही मन में हो रहा था, आज वह युद्ध प्रत्यक्ष में दिखाई देगा, आप सब सेना के योद्धा भीष्म जी की रक्षा के वास्ते सन्नद्ध रहें क्योंकि इन की रक्षा करने से यह अकेले ही पाण्डवा की और पांचाल निवासियों की सारी सेना को मार डालेंगे ॥

दुर्योधन ने कहा हे दुशासन! श्री पितामहा जी ने प्रण किया है कि वह शिखंडी पर शस्त्र नहीं चलायेंगे, इस का कारण यह है कि शिखंडी पिछले जन्म में स्त्री था, इस कारण युद्ध में उस पर बान चलाना क्षत्री का धर्म नहीं ॥

इस गुप्त भेद से श्री पितामह जी की विशेष कर के रक्षा करनी योग्य है, हमारी सेना शिखंडी को मारने के लिये अच्छी

तरह से तत्पर रहें, ऐसा न हो कि शिखंडी के हाथ से भीष्म जी ऐसे मारे जायें, जैसे वन में रक्षा के बिना सिंह शृगाल के हाथ से मारा जाता है ॥

इस लिये हम को योग्य है कि हम उनकी अच्छी प्रकार से रक्षा करें और उन पर किसी शत्रु का शस्त्र न लगने दें। देखिये उधर पाण्डवों की ओर अर्जुन के रथ के बांये तरफ युधामन्यु रक्षक है और दांये तरफ उत्तमौजस यह दोनों अर्जुन के रक्षक हैं और अर्जुन शिखंडी का रक्षक है, शिखंडी अर्जुन की सहायता पाकर श्री पितामह भीष्म जी पर आक्रमण करना चाहता है, हे दुशासन ! कोई ऐसी युक्ती करें जिससे शिखंडी का शस्त्र भीष्म जी पर न चल सके ॥

सोलहवां अध्याय

—:०:—

कौरवी और पांडवी सेना का तयार होकर संग्राम भूमि में आना ॥

संजय ने कहा हे राजन् ! जब थोड़ी रात्री बाकी रह गई तो चारों ओर से योधा लोग उठ २ कर तयार होने लगे और सब दिशाओं से महा शब्द होने लगे, शंख भेरी, तुरी और नाना प्रकार के बाजों की आवाज़ से आकाश गूंज उठा, घोड़ों की हिनहिनाहट और हाथियों की चिंघाड़ों से बड़ा भयानक शब्द हुआ ॥

हे राजन्! सूर्य उदय होने से पाहिले ही दोनों ओर के योधा लोग तयार हो कर इकट्ठे होने लगे और कौरवों की महा भारी सेना आकरखड़ी हो गई, दुसरी ओर पाण्डवों की सेना जिस में बड़े २ महात्मा, योधा लोग कवच और बिजली के समान चमकने वाले शस्त्र धारण किये हुये बड़े वेग से चलने वाले रथों पर स्वार होकर रणभूमी में आकर उपस्थित होगये॥

हे राजन्! इन दोनों सेना के मध्य में आप के पितामह भीष्म जी चंद्रमा के समान प्रकाशमान रथ में स्वार महा दिव्य रूप वाले थे और उन के चारों ओर सेना के संपूर्ण योधा लोग नाना प्रकार के शस्त्र धारण किये नियत हुये, हाथी, घोड़े, रथ, सहस्रों दिखाई देने लगे, सहस्रों ध्वजा रंग २ की दिखाई देने लगीं, योधा लोग परस्पर में युद्ध करने के लिये एक दूसरे को परखने लगे बड़े २ सेनापति अपनी २ सेना के आगे आकर खड़े हो गये और महाबली शकुनी, शल्य, अवंत का राजा, जयद्रथ, विंद, अनुविंद, केकय देश का राजा, कांबोज, सुदक्षण, श्रुतायुद्ध, राजा जयत्सेन महायोधा विशाल भुजधारी बड़े २ यज्ञ करने वाले और अनेक अक्षौहिणी के स्वामी राजे और राजकुमार दुर्योधन के वासते अपने प्राणों को त्याग करने के लिये अपनी २ सेना समेत सावधान दश संख्या प्रमाण लेकर नियत हुये॥

कौरवों की अपनी महाभारी दुर्योधनी नाम की सेना जिस के स्वामी श्री पितामह भीष्म जी थे उन के साथ मिल गई

भीष्म जी सेना के आगे श्वेत पगड़ी और श्वेत छत्र धारण किये महा तेजस्वी असंख्य सेना में सूर्य वत प्रकाशमान दिखाई देते थे ॥

हे राजन् ! भीष्म जी को महान सिंह रूपी बलवान देख कर पांचाल वासी सेना और उस के अधिपति धृष्टद्युम्न गीदड़ों की तरह भयभीत होगये ॥

हे राजन् ! आप के पुत्रों की सेना ग्यारह अक्षौहिणी और पांडवों की सात अक्षौहिणी महा पुरुष से रक्षित तयार हुई, हे राजन् ! इस समय दोनों सेना ऐसी दिखाई देती थीं, मानो प्रलय के समुद्र उमड़े हुये में महा भय कारी मगर मच्छ व्याकुल हुये हैं। हे राजन् ! ऐसा युद्ध मैंने न कभी देखा और न सुना है ॥

सत्रहवां अध्याय

--:०:--

कौरवों की सेना के दृश्य का वर्णन ॥

संजय ने कहा हे राजन् ! सब राजा लोग संग्राम भूमी में आ उपस्थित हुये, श्री कृष्ण जी और व्यास जी के कथनानुसार उस दिन चंद्रमा मघा नक्षत्र में था, एक राशी में था, एक राशी में सात महा ग्रह, आदि महा तेजस्वी इकट्ठे हुते, सूर्य भगवान् उदय होने के समय कई रङ्ग धारण

करके अग्नी के समान तप्त प्रकाश मान हुये, मांस आहारी गीदड़ और लोथों के खाने वाले पत्ती चारों ओर भय कारी शब्द करने लगे ॥

हे राजन्! शत्रुओं के दल को जीतने वाले सेना के स्वामी पितामह भीष्म जी और द्रोणाचार्य जी के मुख से यह शब्द निकले, कि कुंती के पुत्र पांडवों की जीत होगी परन्तु हे दुर्योधन! हम तुम्हारे वास्ते युद्ध करेंगे हमने यह नियम किया ॥

फिर भीष्म जी ने सब राजा लोगों को और अन्य सेना पतियों को बुला कर कहा। हे क्षत्री लोगो! तुम्हारे स्वर्ग जाने के लिये युद्ध का द्वार खुल गया है, क्षत्रियों का धर्म सन्मुख होकर लड़ने का है, हे मनुष्यो! मृत्यु सदैव आने की है, घर में किसी दुःख से मर जाने से युद्ध में मर कर स्वर्ग में जाना बहुत श्रेष्ठ है। इस लिये आप सब सन्नद्ध हो जाओ, आपको निश्चय ब्रह्म लोक, इन्द्र लोक मिलेगा, जैसे राजा नाभाग, ययाति मानधाता और बहुत से महात्मा युद्ध में प्राण देकर देवता रूप होकर स्वर्ग आदि में जा बसे हैं ॥

हे राजन्! श्री भीष्म जी के उपदेश से सब राजा अपनी २ सेना लेकर और मनोहर रथों में बैठ कर कवच पहने हुये और चमकते हुये शस्त्र धारण करके युद्ध में उपस्थित हुये। कर्ण भीष्म जी के निकट अपने मंत्री और साथियों समेत होकर चला ॥

हे राजन् ! दुर्योधन व अन्य राजा अपनी २ सेना लेकर बड़ा श्वेत छत्र, ध्वजा, पताका हाथी, घोड़े, रथ, पैदल सहित भेरी, पणव, दुंदभी आदि बाजे बजाते और सिंहनाद करते चारों दिशा में चले ॥

इस समय रथों की दौड़ और हाथी घोड़ो के शब्दों से बहुत भय उत्पन्न हुआ, तदनंतर गोवशन, शैव्य, हाथी चित्रधारी ध्वजाओं से सजे हुए चले और राजा कमल वर्ण सब सेना के आगे चला। अश्वत्थामा सिंह लांगूल वाली ध्वजा लेकर बहुत सावधानी से चला। इस के पीछे श्रुतायुध, चित्रसेन, पुरुमित्र, विविंशता, शल्य, भूरिश्रवा और विकर्ण यह सातों महारथी धनुष विद्या में निपुण सुंदर कवच धारण किये हुए क्रम से चले ॥

दुर्योधन की भारी ध्वजा पर नाग का चिन्ह था और अनेक प्रकार के रत्नों से जड़ित शोभायमान थी। उस के आगे पौरव, कलिंग, कांबोज, सुदक्षिण, क्षेम, धन्वी, शल्य यह सब महारथी नियत हुए। मगध का राजा व कृपाचार्यजी बहुत उत्तम रथों पर आरूढ़ हुवे। उन की ध्वजा पर बैल का निशान था, वह बड़ी भारी सेना को लेकर चले ॥

पूर्व दिशा के राजों की सेना योधा अगजी, वीर कृपचार्य के पीछे २ घोर घटा के समान चली। इस के पीछे महा तेजस्वी राजा जयद्रथ आठ हजार हाथी, छे हजार रथ और लाखों पैदलों को लेकर चला, उस, के साथ वाराह के चिन्ह वाली ध्वजा थी ॥

कलिंग देश के राजा के साथ साठ हज़ार रथ और दश हज़ार हाथी थे, उस के रथ बड़े ऊंचे शोभायमान थे और उस के साथ अनेक प्रकार के बाजे थे और विचित्र ध्वजायें शोभायुक्त थीं। राजा कलिंग श्वेत छत्र, चमर माला धारण किये ध्वजा पर अग्नी का चिन्ह लगाकर चले॥

हे राजन्! फिर राजा केतु मान बड़े उत्तम हाथी पर जिस का नाम अंशुरू वान था स्वार होकर इन्द्र के समान निकले। राजा विन्द अनुविन्द और अवंति के राजा लोग इन के पीछे २ हाथियों पर स्वार होकर चले॥

इस सारी सेना का प्रबन्ध करने वाले द्रोणाचार्य, पितामह भीष्म, अश्वत्थामा, वाहुलीक और कृपाचार्य थे॥

अठारहवां अध्याय

—०—

कौरवों की सेना की कुवाएद बंदी का वर्णन॥

हे राजन्! इस के पीछे युद्ध की इच्छा करने वाले वीरों के कठोर भय कारी शब्दों से हृदय कांपने लगे, शंख भेरी दुन्दभियों की आवाज से, हाथियों की चिंघाड़ और घोड़ों की हिन हिनाहट से, रथों के पाहियों के शब्दों से पृथ्वी थर २ कांपने लगी। पृथ्वी आकाश शब्दों से भर

गया, दोनो सेना के योधा परस्पर में एक दूसरे के सामने हो कर कांपने लगे ॥

जाम्बूनद बड़ा हाथी भूषनों से सजा हुआ और सवर्ण के कलशों वाले रथ ऐसे दृष्टि आने लगे जैसे घोर बादलों की काली घटाओं में विजली चमकती है। आप के पुत्र के भूषन जो उस ने पहरे हुये थ और स्वर्ण युक्त ध्वजाओं की चमक से ज्वाला अग्नी की तरह प्रकाश मान दिखाई देते थे ॥

इस प्रकार बाकी योधाओं की ध्वजा, शस्त्र ऐसे चमकते थे जैसे इन्द्र भवन के कलश प्रकाशमान होते हैं, बड़े २ योधा छत्र, ध्वजा पताका सहित, कुशल, सन्नद्ध अपनी २ सेना के आगे आकर खड़े हो गये, आप के पुत्र, भीष्म जी की रक्षा के लिये पीछे की ओर दुशासन, दुर्विषह, दुर्मुख, दुसह ः विविंशती, चित्र सेन, महा रथी विकर्ण, सत्य व्रत, पुरुमित्र, जय, भूरीश्रवा, शल्य और बीस हजार रथ इन के पीछे चलने वाले थे और अभिषह, शूरसन, शिवाय, वतसाय; शाल्व, मत्स्य, अंबष्ठ, त्रैगर्त, केकय, सौवीर, कैतव इन के विना चारों दिशाओं के राजाओं के समूह जो बड़े २ शूर वीर थे मरने के वास्ते भीष्म जी के साथ २ चले और बहुत तेज चलने वाले एक लाख हाथी, हजारों रथों को साथ लेकर मगध का राजा चला। इन की रक्षा के लिये असंख्य पैदल साथ २ चले ॥

हे राजन्! इस प्रकार कौरवों की ग्यारह अक्षौहिणी सेना ऐसी दिखाई दी जैसे गंगा में यमुना मिल कर चलती है॥

उन्नीसवां अध्याय

—०:—

पांडवों की सेना का वर्णन॥

राजा धृतराष्ट्र ने कहा हे संजय! युधिष्ठर ने कौरवों की ग्यारह अक्षौहिणी सेना की कुवाएद और किला वंदी देख कर अपनी थोड़ी सेना को किस कुवाएद पर दृढ़ किया, तब संजय ने कहा हे राजन्! युधिष्ठर मनुष्य, देवता, गंधर्व, और असुरों की सेनाओं के कुवायद के ढंग जानने वाला है, वह दुर्योधन की किलावंदी देख कर अर्जुन से कहने लगा॥

हे भ्रात! श्रीवृहस्पति के कथन अनुसार थोड़ी सी सेना को युद्ध करने को आगे करें और बाकी को फैला देवें, तब अर्जुन ने कहा हे राजेन्द्र! मैं इस थोड़ी सी सेना की किलावंदी महाराज इन्द्र की नियत की हुई जिस का नाम वज्र अचल है रचता हूं महा योधा शत्रुओं से घोर लड़ाई करने वाला भीमसेन संपूर्ण सेना के मध्य को चीर जाने वाला हमारे आगे २ चलेगा और कौरवों की सेना जिस का अग्रवर्ती दुर्योधन है वह भीमसेन को सिंहवत देख कर गीदड़ों के समूह की तरह

भय भीत हो कर भाग जायगा, फिर हम सब निडर हो कर भीमसेन की ऐसी रक्षा करेंगे जैसे देवता लोग इन्द्र की करते हैं जगत में ऐसा कौन जीव है जो भीमसेन के क्रोध रूप भय को देख सके ॥

इतना कह कर अर्जुन ने उसी प्रकार किया और क्षण भर में सारी रचना रच कर अर्जुन चला गया, तदनंतर गंगा जी के समान दृढ़ अचल के समान पांडवों की सेना कौरवों को देख कर चली, जिस के अग्रेपाती भीमसेन, धृष्टद्युम्न, नकुल, सहदेव और राजा धृष्टकेतु थे, उस के पीछे राजा विराट अपने पुत्र और मित्रों सहित एक अक्षौहणी सेना ले कर भीमसेन की रक्षा के लिये पीछे २ चले ॥

भीमसेन के रथ की रक्षा के निमित नकुल और सहदेव दोनों भाई सावधानी से चले और उन के पीछे द्रौपदी का पुत्र अभिमन्यु रक्षा करने को नियत हुआ । पांचाल देश के महारथी धृष्टद्युम्न पैदलों का और प्रभद्रक रथों का रक्षक नियत हुआ ॥

हे राजा धृतराष्ट्र! इन सब के पीछे अर्जुन से रक्षक श्री भीष्मजी के मारने वाला शिखंडी चला । अर्जुन के पीछे महाबली युयधान चला और रथ के पहियों की रक्षा करने वाले पांचाल देशी युधामन्यु और उत्तमौजा नियत हुए । इन के साथ धृष्टकेतु और चेकितान भी साथ २ चले ॥

भीमसेन भारी गदा को लेकर बड़ी तेजी से चलता हुआ समुद्र को भी सुखा जाने वाला था, भीमसेन को अर्जुन ने

कहा है भाई! देखो दुर्योधन अपने मंत्रियों के साथ तुम्हारे देखने के लिये खड़ा है आप को चाहिये कि आप अपना अतुल बल और पराक्रम दिखलावें ॥

अर्जुन को युद्ध भूमी में देख कर सब सेना अपने मीठे २ बचनों से उस की स्तुति करने लगी। राजा युधिष्ठर सेना के बीच चलायमान पर्वत के समान मस्त हाथियों के साथ था, इन सब के पीछे पांचाल देश का राजा महा पराक्रमी यतसेन एक अक्षौहिणी सेना के साथ राजा विराट के पीछे चला जिस के रथों पर सूर्य्य चन्द्रमा के समान प्रकाशवान स्वर्ण के भूषण और कई प्रकार की चिन्ह वाली ध्वजा वर्तमान थीं, फिर धृष्टद्युम्न साथियों सहित राजा युधिष्ठर के पीछे पीछे चलने लगा ॥

हे राजन्! आप के पुत्र और कौरवों की समस्त सेना की ध्वजायें महा योधा अर्जुन की ध्वजा से जिस पर महावीर हनुमान जी की मूर्ती थी मात पड़ गई भीमसेन के आगे लाखों पैदल अनेक प्रकार के शस्त्र लेकर चलने लगे, दस हजार मस्त उन के पीछे थे, भीमसेन वज्र के समान गदा हाथ में लेकर कौरवी सेना के सन्मुख खड़ा हो गया जिस के भयानक रूप को देख कर सब कांपने लगे और पांडवों की सेना चारों ओर को मुख किये भयङ्कर वज्र नाम के कवायद से उपस्थित हुई ॥

अर्जुन अपना प्रसिद्ध गांडीव धनुष लिये महा दुर्धर्ष दिखाई दिये, जब सब सेना दोनों ओर को उपस्थित हुई तो अकस्मात बिना बादल के आकाश से वर्षा होने लगी, बड़ी भयंकर आंधी चली, चारों ओर धूल से अंधकार हो गया, उस समय बड़ा भारी शब्द हो कर उलकापात हुवा और सूर्य को उदय होते ही आछादित कर लिया अर्थात ग्रस लिया ॥

हे राजन्! ऐसे अंधकार में भयानक शब्दों से पृथ्वी में भूकंप हुये, कई स्थानों पर पृथ्वी फट भी गई, सब दिशाओं में आंधी के झोकों से महा शब्द उत्पन्न हुआ, सहस्त्रों ध्वजाओं के फर फराने से ऐसा शब्द हुवा जैसे ताल वृक्षों के बन में होता है ॥

इस प्रकार भीमसेन भारी गदा हाथ में लिये हुये ऐसा भयकारी दृश्य पड़ा जिस से यह मालूम पड़ता था कि कौरवों कि सारी सेना को अकेला ही मार डालेगा ॥

बीसवां अध्याय

—:o:—

कौरवों की सेना का विशेष वर्णन ॥

राजा धृतराष्ट्र ने कहा हे संजय! जब प्रातः काल हुवा तो भीष्म और सब कौरव पांडवों के साथ युद्ध करने के लिये

चले तो कौन २ उन में से प्रसन्न चित था और कौन २ पीछे रहा, चलते समय क्या सूर्य चंद्रमा और वायू उन के अनुकूल हुई? या उन के पीछे कुत्ते भौंके और अवश्य गृध्र हुये, यह सब वृत्तांन्त मुझ से वर्णन करो ॥

तब संजय ने कहा हे राजन्! दोनों सेना के योधा कुवाएद में अति निपुण और प्रसन्न वदन दया रहित मरने मारने को चले। उस समय कौरव जो पश्चिम को मुख किये हुये थे और पाण्डवों का मुख पूर्व की ओर था, कौरवों की सेना जो दैत्यों के और पाण्डवों की देवताओं के समान दिखाई देती थी। उस समय पाण्डवों के अनुकूल वायू थी, कौरवों के पीछे कुत्ते भौंकते थे, कौरवों के हाथी घबरा गये। दुर्योधन का हाथी जिस का नाम स्तुति मान था उस का रंग कमल के समान था। उस पर सोने की अम्बारीयों पर राजा दुर्योधन विराजमान था। जिस के सिर पर चन्द्रमा के समान चमकित छत्र और स्वर्ण की माला झलकती थी ॥

कंधार का राजा अपनी पहाड़ी सेना से चारों ओर उस को घेरे हुये था और पितामह भीष्मजी श्वेत पगड़ी धारण किये हूये श्वेत छत्र के नीचे श्वेत घोड़ों के रथ पर पांडु रंग की ध्वजा युक्त सेना के आगे २ जाते थे उन के पीछे आप के पुत्र शल, अम्बष्ट सिन्ध के राजा लोग सो वीर और पंच नन्द के सब योधा थे। उन के पीछे सब राजाओं के गुरू द्रोणाचार्य जी लाल पगड़ी बांधे लाल घोड़ों के रथ पर पर्वत के समान

प्रभाव वाले चले जाते थे, सब सेना के बीच २ भूरिश्रवा पुरुमित्र, जय, शल्य, मस्तय और केकय देश के सब वासी और सेना युथियों समेत चली ॥

हे राजन् ! उन के पीछे महात्मा धनुर्धारी गौतम कृपाचार्य, शकजाति किरात और युनान देश के राजे सेना के उत्तर भाग को दृढ़ किये जाते थे, संसप्तक नाम के दश हजार हाथी जो अर्जुन के साथ लड़ने के लिये नियत थे बड़े सन्नद्ध होकर अर्जुन की ओर चले ॥

कौरवों के साथ एक लाख हाथी थे, हर हाथी के साथ एक सौ रथ. एक २ रथ के साथ सौ २ घोड़े और प्रत्येक घोड़े के पीछे सौ २ धनुषधारी और उन के साथ दश दश पैदल थे, इस प्रकार भीष्म जी ने सेना को तयार किया, भीष्म जी ने अपनी विशाल बुद्धि के अनुसार कौरवों की सेना का व्यूह, मनुष्य, देव, गंधर्व, आसुर चार प्रकार से रचा जो समुद्र के समान महान् शब्द से पूर्व की ओर रचा, हे राजन् ! आप की सेना बहुत प्रकार से ध्वजा सहित इतनी थी कि मैं उस का वृत्तान्त पाण्डवों की सेना से जिस के श्री केशव जी और अर्जुन जी सहायक थे कठिनता से कर सकता हूं ॥

———

इक्कीसवां अध्याय

—:-※-:—

कौरवों की भारी सेना का प्रबंध श्री भीष्म जी के आधीन देख कर युधिष्ठर का घबराना और अर्जुन का साहस देना ॥

संजय ने कहा हे राजन्! जिस समय राजा युधिष्ठर ने दुर्योधन की बड़ी सेना को बहुत सन्नद्ध देखा तो चित्त में बहुत घबराया, भीष्म जी की रची हुई किलाबंदी और कुवाएद जो बहुत दृढ़ थी देख कर अपने भाई अर्जुन को कहने लगा, हे महाबाहु! कौरवों के साथ हम कैसे लड़ सकेंगे जिन के सहायक भीष्म पितामह जी हैं। जिन्हों ने शास्त्र की विधि से और बड़ी सावधानी से इस कुवाएद और किलाबंदी को रचा है, जो कभी नहीं टूट सकती, हमें बहुत व्याकुलता है कि इस व्यूह से कैसे जीत होगी ॥

हे राजन्! कौरवों की सेना को देख कर घबराये हुये राजा युधिष्ठर के कथन सुन कर अर्जुन बोला हे राजेन्द्र! थोड़े से शूर वीर और ज्ञानवान मनुष्य बहुत भारी सेना को जीत सकते हैं क्योंकि परमात्मा सब को जानता है। महर्षि नारद जी, इन्द्रादि देवता और दैत्यों के युद्ध में श्री ब्रह्मा जी ने यह माना है कि सदैव सत्य की जय होती है, असत्य की नहीं होती। इस लिये जो महा पुरुष विजयाभिलाषी हैं उन

को चाहिये कि वह धर्म करे, दया रखे, अहंकार को त्याग दे, धर्म युक्त हो कर युद्ध को करे। यही भावना रखे कि उन की निश्चय विजय होगी। नारद जी ने भी कहा है कि जहां धर्म है वहीं विजय होगी अर्थात जहां कृष्ण जी हैं उधर ही विजय होगी क्योंकि विजय दासी रूप धारण करके कृष्ण जी की स्तुति करती है॥

हे राजन्! श्रीकृष्ण जी में जैसे विजय के गुण हैं वैसे ही नम्रता के भी गुण हैं और वह बहुत तेजस्वी शत्रुओं के समूहों से निडर जगत में व्यापक सच्चिदानंद रूप है इस लिये हे राजन्! जिधर कृष्ण है उधर ही विजय है॥

बाईसवां अध्याय

—:o:—

पांडवों की सेना की शोभा का वर्णन॥

संजय ने कहा हे राजन्! इस के पीछे पितामह भीष्म जी के सामने युधिष्ठिर जी ने अपनी सेना को खड़ा किया उस के बीच में शिखण्डी को जिस के रक्षक अर्जुन जी थे नियत किया, उस के आगे धृष्टद्युम्न, भीमसेन से पीछे युयुधान, दक्षिण की ओर की सेना की रक्षा में उपस्थित हुआ, राजा युधिष्ठिर हाथियों के समूह में इन्द्र के समान सब प्रकार से सम्पन्न श्वेत छत्र जो बहुत ऊंचा और अत्यंत सुंदर था सुशोभित था ब्राह्मण और

महर्षि लोग उस के दक्षिण की ओर स्वस्ति वाचन करते जाते थे और उस की विजय के लिये मंत्र जपते थे, राजा युधिष्ठिर उन पुरोहितों को वस्त्र, गौ, फल, फूल और स्वर्ण मुद्रका दक्षिणा देकर इन्द्र के समान शोभायमान चला ॥

हे राजन्! अर्जुन का रथ रत्नों से जड़ित था और उस के ऊपर स्वर्ण के कलश सूर्य के तुल्य जगमगाते थे, रथ के साथ सैकड़ों घंटियां लटकती थीं और ऊंची ध्वजा जिस पर श्री हनुमान जी की मूर्ती लहराती हुई सहस्रों ध्वजाओं को मात करती थी, कृष्ण जी स्वयम रथी बने थे, अर्जुन गांडीव धनुप और बाण हाथ में लिये सिंह के समान रखवाले केशव जी का हाथ पकड़े विराजमान थे ॥

हे राजन्! वह महा योधा कौरवों की सेना को दलन करता हुवा बड़ क्रूर रुप को धारण करता है, जो बिना शस्त्र के भी अपने भुजबल से ही मनुष्य और हाथियों को मर्दन करता है, वह भीमसेन अपने दोनों भाईयों नकुल और सहदेव को लेकर अर्जुन के रथ की रक्षा करता है, भीमसेन को देख कर कौरवी सेना के लोग ऐसे कंपायमान हुये, जैसे दल २ में फसा हुवा हाथी भय भीत होता है ॥

तब श्री कृष्ण जी ने अर्जुन से कहा, हे अर्जुन! जिन भीष्म जी ने अपने क्रोध से सब सेना को उद्यत किया है वा बल बुद्धी में अति पराक्रमी भीष्म जी कौरव कुल के शिखर हैं, उन्हों ने तीन सौ अश्व मेध यज्ञ किये हैं, इस सब सेना

ने हम को इस प्रकार घेरा है जैसे सहस्त्र किरण वाले सूर्य को बादल छिपा लेते हैं, हे पुरुषोत्तम अर्जुन! तुम इन सेनाओं को मार कर फिर भीष्म जी के साथ युद्ध करने की इच्छा करो ॥

तेईसवां अध्याय

—:०:—

कृष्ण जी के कहने से अर्जुन का दुर्गा जी के स्तोत्र का पाठ करना ॥

संजय ने कहा हे राजन्! लड़ाई करने के लिये कौरवों की सेना को उपस्थित देख कर श्रीकृष्ण जी अर्जुन से कहने लगे हे अर्जुन! आप युद्ध के सन्मुख सन्नद्ध हो कर बड़ी पवित्रता से श्रीदुर्गा जी के स्तोत्र का पाठ करें ' श्रीकृष्ण जी का वचन सुन कर अर्जुन ने रथ से उतर कर हाथ जोड़ कर दुर्गा जी के स्तोत्र का पाठ किया ॥

संजय ने कहा हे राजन्! मैंने श्रीव्यास जी की कृपा से यह जाना है कि लोग अपने मोह के वश हो कर नर और नारायण को नहीं पहिचानते, हे राजन्! आप के पुत्र अभिमानी हैं और वह मोह के फन्दे में फंसे हुये हैं, व्यासादि ऋषियों ने भी आप के पुत्रों को अच्छा नहीं कहा परन्तु दुर्योधन ने इस बात को नहीं माना, हे राजन्! जहां धर्म है वहां तेज

प्रकाश वान है और जहां पुरुषार्थ है वहां लक्ष्मी विराज मान है, जिस तरफ ऋषि लोग और श्रीकृष्ण जी हैं वहीं जय है ॥

चौबीसवां अध्याय

राजा धृतराष्ट्र का संजय से दोनों सेनाओं का हाल पूछना ॥

राजा धृतराष्ट्र ने कहा हे संजय ! संग्राम भूमि में किस सेना के योधा बहुत प्रसन्न हैं और लड़ने में स्थिर चित्त हैं, कौन से दुःखि हुए पड़ते हैं, युद्ध करने में कौरवों अथवा पांडवों में से किस ने पहिले हृदय कंपाने वाला प्रहार किया, हे संजय ? मैं यह सब कुच्छ सुनना चाहता हूं और यह कि किस सेनाकी ओर सुगंधि फूलों की सी आती है और किस की ओर से दुर्गंधि युक्त वायू शूरवीरों के भयानक शब्दों से भरी आती है ॥

संजय ने कहा हे राजन् ! दोनों सेनाओं के शूर वीर प्रसन्न चित्त हैं, सभी सुगंध युक्त फूलों की माला पहिने हैं और दोनों सेना एक दूसरे के सन्मुख सुंदर कुवाएद किले बांधे मिल २ कर उपस्थित बहुत ही रंगा रंग की दिखाई देती है । शंख, भेरी और नाना प्रकार के बाजों की आवाज़ से और परस्पर वीरों के गर्जने से आकाश गूंज उठा है ॥

पच्चीसवां अध्याय

श्रीमद्भगवद्गीता का प्रथम अध्याय ॥

अर्जुन का खेद ॥

धृतराष्ट्र ने संजय से पूछा कि धर्मक्षेत्र अर्थात् धर्म के उत्पत्तिस्थान कुरुक्षेत्र में हमारे और पाण्डवों के योद्धा युद्ध की इच्छा से मिले हुये क्या करते हैं ॥

संजय ने उत्तर दिया कि दुर्योधन ने पाण्डव की सेना व्यूह रचना से स्थित हुई २ देख कर द्रोणाचार्य के निकट जाकर कहा कि हे गुरूजी पाण्डु के पुत्रों की बड़ी सेना देखिये कि राजा द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न और आप के बुद्धिमान् शिष्यने व्यूढ़ अर्थात् व्यूह रचना घेरी है और उस सेना में बड़े २ धनुर्द्धारी शूर युद्ध में भीम और अर्जुन के समान युयुधान और राजा विराट और राजा द्रुपद महारथ हैं, धृष्टकेतु और चेकितान नाम राजा और काशी का पराक्रमी राजा और पुरुजित् और कुन्ति भोज और शैव्य राजा नरों में श्रेष्ठ है और युद्ध में प्रवृत्त राजा उतमौजा, पराक्रमी राजा युधामन्यु, राजा सौभद्र अर्थात् अभिमन्यु अर्जुन का पुत्र और द्रौपदी के पांचो पुत्र ये सब महारथी हैं, हे राजन्! अपनी सेना के सेना पतियों के नाम आप के जानने के हेतु कहता हूं :

भीष्म जी, कर्ण, कृपाचार्य युद्ध के जीतने वाले अश्वत्थामा, विकर्ण और वैसे ही सोमदत्त, भूरिश्रवा नामक यह

सब हैं और भी बहुत से शूर तेरे हेतु जीवत्यागन करने वाले और सब युद्ध में समर्थ हैं भीष्म से रक्षित हमारी सेना अपर्याप्त अर्थात् असमर्थ है और भीम से रक्षित इनकी सेना पर्याप्त अर्थात् ठनी देख पड़ती है तात्पर्य्य यह है कि भीष्म दोनों के पितामह होने से किसी के पक्ष में नहीं हैं और भीम सेन तो अपने ही दल का पक्ष पाती है ॥

सब व्यूह के प्रवेशमार्ग में यथाभाग खड़े हो कर आप लोग भीष्म ही की रक्षा कीजिये ॥

गुरुओं के पितामह प्रतापी भीष्म जी ने राजा दुर्योधन के सन्तोष के हेतु ऊँचे स्वर से सिंह की नाईं गर्ज कर शङ्ख बजाया, तिस के पीछे शंख, भेरी, पणव, आनक और गोमुख इत्यादि बाजे उस समय सेना के लोगों ने ऐसे बजाये कि उनका बड़ा शब्द सब दिशाओं में व्याप्त हुआ, इस के अनन्तर श्वेत घोड़े के भारी रथपर पाञ्च जन्य नामक शंख श्रीकृष्ण चन्द्र जी देवदत्त नामक शंख अर्जुन, पौण्ड्र नामक महाशंख घोर कर्म करने वाले भीम, अनन्त विजय नामक शंख राजा युधिष्ठिर, सुघोष नामक शंख नकुल और मणिपुष्पक नाम शंख सहदेव ने बजाया ॥

श्रेष्ठ धनुष का धारण करने वाला काशीराज, महारथ शिखंडी, धृष्टद्युम्न, राजा विराट, पराजय न होने वाला सात्यकी, राजा द्रुपद, द्रौपदी के पांच पुत्र और महाबाहु अभिमन्यु यह सब हे पृथ्वी पति धृतराष्ट्र! अपना २ शंख

पृथक् २ बजाने लगे इन शंखों के शब्द कौरवों के हृदय फाड़ कर आकाश और पृथ्वी में प्राप्त हो प्रति ध्वनि करते भये ॥

इस के पीछे युद्ध सन्निधि धार्तराष्ट्र अर्थात् कुरुसेना नायकों को अर्जुन ने शस्त्रपात में प्रवृत देख अपना धनुष चढ़ा कर श्रीकृष्ण से यह वचन कहा कि हे अच्युत ! दोनों सेना के बीच में हमारा रथ खड़ा रक्खो कि जो युद्ध करने की इच्छा से खड़े हैं उन्हें मैं देखूं कि संग्राम में हम को किन किन के साथ युद्ध करना पड़ेगा, जो लोग यहां युद्ध की इच्छा से आये हैं उन्हें देखें कि वे धृतराष्ट्र के कुबुद्धि पुत्र दुर्योधन के प्रिय की इच्छा करने वाले हैं ॥

संजय धृतराष्ट्र से कहते हैं कि हे भारत धृतराष्ट्र ! अर्जुन ने श्रीकृष्ण से जब यों कहा तब दोनों सेना के बीच में रथ खड़ा कर के भीष्म, द्रोणाचार्य और सब राजों के सन्मुख श्रीकृष्ण ने कहा कि हे पार्थ ये जो कुरुसेना के नायक खड़े हैं उन्हें देखो, अर्जुन ने देखा कि चचेरे भाई, द्रोण, भीष्म-पितामह, गुरु, मामा, भाई, बन्धु, पुत्र, पौत्र और मित्र इत्यादि वहां उपस्थित थे ऐसे ही श्वशुर और सनेही और सम्पूर्ण बन्धु इत्यादि । दोनों सेना के लोगों को अर्जुन ने खड़े हुये देख कर बड़े मोह से आविष्ट और व्याकुल हो कर कहा कि हे कृष्ण ! इन स्वजनों को युद्ध की इच्छा से खड़े हुये देख कर मेरे सब अंग गलते जाते हैं, मुख सूखता है, शरीर कम्पायमान होता है, रोमाञ्च खड़े होते हैं, गाण्डीव धनुष

मेरे हाथ से गिरा जाता है, देह तप्त होता है मैं खड़ा नहीं रह सक्ता और मेरा मन भ्रमता है हे केशव! निमित्त भी विपरीत देखता हूं कि संग्राम में स्वजनों को मार कर क्या शुभ देखूंगा॥

हे कृष्ण महाराज! युद्ध में विजय की भी कांक्षा नहीं और न राज्य सुख की कि राज्य और भोग लें हमको क्या करना और बिना स्वजन मारा रख के भी क्या करना है, जिन के अर्थ राज्य भोग और सुख की हम कांक्षा करते हैं वेही लोग युद्ध में मारा और धन त्याग कर खड़े हैं, ये सब आचार्य और चचेरे भाई, पुत्र, पितामह, मामा श्वशुर, पौत्र, साला और सम्बन्धी लोग हैं, ये लोग यदि हमको मारेंगे तो भी हम इनको मारने की इच्छा नहीं करते त्रैलोक्य के राज्य के हेतु भी ऐसा नहीं करना चाहते फिर केवल पृथ्वी के लिये क्यों ऐसा करें, धृतराष्ट्र के पुत्रादिकों को मारने से हमको क्या लाभ होगा, इन अधर्मियों को मार कर केवल पाप ही के आश्रय होवेंगे, इस हेतु से अपने स्वबन्धु धृतराष्ट्र के पुत्रादिकों को मारने को हम लोग योग्य नहीं हैं, हे माधव श्रीकृष्ण! अपने जनों को मार कर कैसे हम लोग सुखी रहेंगे, राज्य के लोभ से इनकी मति मारी गई इससे ये लोग कुल का क्षय और मित्र द्रोह का पातक नहीं देखते॥

हे जनार्दन? हमलोग विचारवान् हैं इसलिये कुलका क्षय होने के दोष होने से निवृत्ति उपाय क्यों न देखें, कुल के नाश

होने से सब सनातन कुल धर्म नष्ट होते हैं और धर्म नष्ट होने पर सम्पूर्ण अधर्म व्याप्त होता है अधर्म व्याप्त होने में कुलकी स्त्रीयां निन्दित होती हैं और उन के निंदित होने से वर्ण संकर जन्मता है और वर्ण संकर कुल नाशक और कुल के नरक होने का कारण होता है और उन के पितर भी लुप्तापिण्डोदकक्रिया हो कर पतित होते हैं, वर्ण संकर कारक दोषों से कुलनाशकों के जाति धर्म और वर्णाश्रम धर्म भी लोप होता है, हे जनार्दन ? लुप्त कुल धर्म वाले मनुष्यों को ऐसा मानते हैं कि नियत करके नरक में वास होता है, हम लोग राज्य और सुख के लाभ से अपने बन्धुवर्गों के नाश करने के हेतु उद्यक्त होते हैं सो यह महा पाप में प्रवृत्त होना है, यदि हम उन्हें नहीं रोकते और शस्त्र नहीं रखते, वे शस्त्र धारी लोग धृतराष्ट्र के पुत्र युद्ध होने में हमें मारेंगे तो हमारा बड़ा कल्याण है, संजय धृतराष्ट्र से कहते हैं कि अर्जुन इस प्रकार के वचन संग्राम में कह कर रथ के ऊपर धनुष बाण त्याग कर शोक से सन्तप्त मन हो स्थिर हो बैठ गया ॥

छब्बीसवां अध्याय

—:-०-:—

श्री मद्भगवद्गीता का दूसरा अध्याय ॥

॥ सांख्ययोगनिरूपण ॥

संजय ने धृतराष्ट्र से कहा कि अर्जुन को अपने बंधुवर्गों को

देख कर मोह से व्याप्त आखों में आंसू भरे खेद से पूर्ण देख कर श्रीकृष्णचन्द्र ने कहा हे अर्जुन ! ऐसे विषम दिन में तुम को यह मोह कहां से प्राप्त हुआ मोह जो पण्डित लोगों ने नहीं अङ्गीकार किया क्योंकि यह स्वर्ग और कीर्ति का नाशक है॥

हे पार्थ अर्जुन ! भय को मत प्राप्त हो यह तुम्हारे योग्य नहीं क्योंकि तुम शत्रु को सन्ताप देने वाले हो यह तुच्छ दुर्बलता हृदय की छोड़ कर उठो ॥

अर्जुन ने कहा हे मधुसूदन ! संग्राम में भीष्माचार्य और द्रोणाचार्य को जो पूजा करने के योग्य हैं उन्हें हम कैसे बाणों से पीड़ा दें, महा तेजस्वी गुरूओं के मारने से यह अच्छा है कि इस लोक में भिक्षा से उदर पोषण करें और जो गुरु के अर्थ की कामना से व्याप्त हैं उन के मारने से भी जो भोग यहां प्राप्त होगा सो रुधिर से लिप्त अर्थात् निन्दित कहलावेगा, यह हम नहीं जानते कि क्या हमारे करने के योग्य है यदि हम लोग उनसे जीतेंगे या वो लोग हम को पराजय करेंगे पर जिन के मारने से हमारा जीना नहीं होगा वह धृतराष्ट्र के बेटे हमारे सामने खड़े हैं, कादरतारूप दोष से मेरा स्वभाव आच्छादित हुआ है और धर्म की वासना से मेरा चित्त रहित है इस लिये मैं आपसे पूछता हूं कि जो निःसन्देह मंगल हो वह मुझ को उपदेश कीजिये क्योंकि हम आपके शिष्य और शरणागत हैं, यह हम नहीं देखते जो हमारे इन्द्रियों के सुखाने वाले शोक को दूरकरे क्योंकि इस लोक में शत्रु रहित सम्पूर्ण राज्य और देवताओं का आधिपत्य भी प्राप्त होने से वह शोक निवृत्त

नहीं हो सकता ॥

अर्जुन श्रीकृष्ण से यह कहकर कि हे गोविन्द ! हम युद्ध नहीं करेंगे चुप हो रहा ॥

श्रीकृष्ण ने जो दो सेनाओं के बीच खेदित हो खड़ा रहा था अर्जुन से हंस कर यह कहा, जो शोक करने के योग्य नहीं उन का तुम शोक करते हो और फिर विवेकियों कीसी वार्ता करते हो, बुद्धि मान् लोग जो इष्टमित्र मरगये या मरेंगे उन का शोक नहीं करते ॥

ऐसा नहीं कि हम और ये सब राजा कभी हैं और कभी नहीं, मरने के अनन्तर हम सब न होंगे ऐसा भी नहीं क्योंकि जैसे इस देह में बाल्य, यौवन और वृद्धता तीनों अवस्था प्राणी को क्रम से होती हैं वैसे ही देहान्तर की भी प्राप्ति होती है इस लिये बुद्धि मान् लोग देह छूटने से समाप्ति न समझ मोह को प्राप्त नहीं होते ॥

हे कुन्ती के पुत्र अर्जुन ! इन्द्रियों की वृत्ति को जब विषयों से सम्बन्ध होता है तब देही को शीत, उष्ण, सुख और दुःख इत्यादि की प्रतीति होती है और यह सम्बन्ध आगमापायी अर्थात् उत्पत्ति नाशशील और अनित्य है, इस लिये इन को सहन करना उचित है, जिस पुरुष को इन्द्रियों की वृत्तियां विषय सम्बन्ध से पीड़ा नहीं देतीं और जिस को सुख और दुःख का अनुभव तुल्य है वही धीर प्राणी मोक्ष प्राप्ति के योग्य है, असत्, शीत, उष्ण आदि का आत्मा में भाव नहीं है और

सद्वस्तु आत्मा का कभी अभाव नहीं होता है इन दोनों का निर्णय यथार्थ जानने वाले विशेषियों ने देखा है, जिस से यह सम्पूर्ण जगत व्याप्त है उसे अविनाशी जानो क्योंकि कोई पुरुष इस नाश रहित आत्मा का विनाश नहीं कर सकता ॥

हे भारत अर्जुन! आत्मा नित्य सर्व्वदा एक रूप और अविनाशी है और प्रमाण विषय नहीं है उस के ये देहादि सम्बन्ध विनाशी कहेगये हैं, इसी लिये मोह छोड़ कर युद्ध में प्रवृत्त हो, जो पुरुष इस आत्मा को मारने वाला और मार खाने वाला जानता है वह दोनों इस के जानने के योग्य नहीं हैं क्योंकि यह आत्मा न किसी को मारता है न किसी से मारा जाता है यह आत्मा न कभी उत्पन्न होकर वृद्धि को प्राप्त होता है और न स्वभाव से वृद्धि को प्राप्त होता है इस लिये अज और नित्य जिस को उत्पत्ति नहीं और सर्व्वदा एक रूप और सनातन है इस में शरीर नष्ट होने से भी आप नष्ट नहीं होता उसे षड्भाव विकार से रहित जानो ॥

हे अर्जुन! इस आत्मा को जो पुरुष नाश और उत्पत्ति रहित और नित्य और अव्यय जानता है वह पुरुष कैसे दूसरे से घात करावेगा, आप करेगा, जैसे लोक में मनुष्य पुराने वस्त्र को त्याग कर नवीन वस्त्र पहिरते हैं वैसे ही देही अर्थात् आत्मा जीर्णशरीर त्याग कर नवीन शरीर में प्राप्त होता है, इस लिये जीर्ण देहादि के त्याग से शोक करना उचित नहीं। ऐसे आत्मा को शस्त्रादि घात नहीं कर सक्ते

अग्नि जला नहीं सक्ती जल गला नहीं सक्ता वायु सुखा नहीं सक्ती है ॥

यह आत्मा निरवयव होने से छेदन होने, गलने और सूखने के योग्य नहीं और नित्य अर्थात् त्रिकाल वाह्य सर्व जगत् में व्याप्त, स्थिर, अचल और सनातन है, यह आत्मा अव्यक्त अर्थात् चक्षुरादि ज्ञानेन्द्रियों से अग्राह्य और चिंता के योग्य नहीं और कर्मेन्द्रियों के अगोचर है ऐसा तत्ववादी महाऋषी लोग कहते हैं इस लिये इस आत्मा का एसा जान कर तुम को शोक करना उचित नहीं । हे महा बाहो अर्जुन ! यद्यपि तुम ऐसा मानो कि यह आत्मा सर्वदा देह उत्पन्न होने से उतपन्न होता है और देह नाश होने से नष्ट भी होता है तौभी तुम्हें शोक करना उचित नहीं क्योंकि जो उतपन्न हुआ वह निश्चय कर के नाश होता है और जो नष्ट हुआ उस का जन्म निश्चित है, यह निवारण के योग्य नहीं इस कारण से भी तुम्हे शोक करना उचित नहीं । हे अर्जुन ! प्रकृति जिन भौतिक देहों की आदि है और नष्ट है कि वह स्थित उन की मध्यम और प्रधान ही में वह लय भी होते हैं तो इस का खेद क्या, कोई पुरुष इस आत्मा को शास्त्र और गुरु उपदेश से आश्चर्यवत् देखता है, कोई इस को आश्चर्यवत् कहता है, कोई इस को विस्मित की नाईं सुनता है और कोई सुन कर भी इस को नहीं जानता ॥

हे भारत अर्जुन ! यह आत्मा सम्पूर्ण प्राणियों कर देह में सदा अवध्य (अविनाशी) है, इस कारण से सम्पूर्ण भूतों

के हेतु तुम्हें शोक करना उचित नहीं तुम अपना धर्म देख कर भी कांपने के योग्य नहीं हो क्योंकि क्षत्रिय को धर्म युद्ध से दूसरा कुछ मङ्गल कल्याण कारक नहीं, हे अर्जुन ! अकस्मात् प्राप्त हुआ खुला हुआ स्वर्ग का द्वाररूप ऐसे युद्ध को भाग्यवान् क्षत्रिय प्राप्त होते हैं, यदि अब तुम अपना विहित धर्म संग्राम न करोगे तो अपने धर्म और कीर्त्ति को त्याग कर पाप को प्राप्त होगे । लोग तुम्हारी नाश रहित अकीर्ति कहेंगे । प्रतिष्ठित लोगों को अकीर्ति मरण से भी अधिक होती है ॥

महारथी लोग जानेंगे कि तुम ने भय से संग्राम को त्याग दिया है और जिनमें तुम बहुमानी हुये हो उन के निकट लघुता को प्राप्त होगे, तुम्हारे शत्रु लोग बहुत से दुर्वचन तुम्हारी सामर्थ्य की निन्दा करते हुये कहेंगे, इस से अधिकतर दुःख क्या होगा ?

हे कुन्ती के पुत्र अर्जुन ! यदि तुम मारे जावोगे तो स्वर्ग को प्राप्त होगे और जीतोगे तो राज्य भोग करोगे इस कारण से दृढ़ निश्चय कर के युद्ध के लिये खड़े होजाओ दुःख,सुख और लाभालाभ और उन के कारणभूत जय अजय दोनों को समकर तिन के अनन्तर युद्ध के हेतु युक्त होजाओ क्योंकि इस प्रकार से तुम पाप को प्राप्त न होगे, उपदेश किये हुये ज्ञान योग को समाप्त कर कर्म योग बताते हैं यह सांख्य उक्त बुद्धि तुम से कह चुके अब योग की रीति से

कहते हैं सो हे पार्थ अर्जुन ! सुनो कि जिस बुद्धि के युक्त होने से तुम कर्मबन्ध को त्यागोगे इस निष्काम योग में आरम्भ निष्फल नहीं और मन्त्रादि के भूल चूक से दोष नहीं इस धर्म्म का थोड़ा अशंभी बहुतरे भय से रक्षा करता है ॥

हे अर्जुन ! इस कर्म योग में अर्थात् परमेश्वर आराधन में निश्चयात्मक बुद्धि एक ही होती है अव्यवसायी अर्थात् रागादि से लिप्त चित्त वालों की बुद्धि अनारूप और बहुशाखावती होती है ॥

हे पार्थ अर्जुन ! मूर्ख लोग वेद के अर्थवाद वाक्य ही में प्रीति रखते हुये और काम अर्थ से अतिरिक्त दूसरे परमार्थ फल वेद वाक्य में नहीं ऐसे कहते हुये कामासक्त स्वर्ग ही को परम पुरुषार्थ जानने वाले जन्म कर्म फलदायक भोग ऐश्वर्य प्राप्ति कि जिस में अनेक प्रकार की क्रिया हैं उस के प्रति नाना मकार के अर्थवादों से विस्तृत वाणी को कहते हैं, भोग ऐश्वर्य की माप्ती से जिन का चित्त अपहृत है उन्हें निश्चयात्मक बुद्धि ईश्वर प्राप्ति को नहीं उत्पन्न होती क्योंकि उनका चित्त भोगादि में सर्वदा रमता रहता है ॥

हे अर्जुन ! वेद त्रिगुणात्मक अर्थात् सकाम हैं तुम इस के कामादि के फलों की इच्छा छोड़ निष्काम हो निर्द्वन्द्व अर्थात् शीतादि के दुःख सुख को समान जान कर धैर्य्य का आश्रय पकड़ योग क्षेम से रहित होकर और बुद्धिमान हो, जो अर्थ कूप बावली इत्यादि से निकलता है वही महानदादि से निकलता

है इस लिये विवेकी ब्राह्मण को सम्पूर्ण वेद से जो कर्म फल प्रयोजन अर्थ निकलता है वही उस के एक देश निष्काम वाक्य से भी निकल सक्ता है, तुम तत्त्वज्ञान के इच्छुक हो तुम्हें कर्म ही में अधिकार है भोग प्राप्ति आदिक के फल में प्रवृत्ति नहीं और कर्म फल तुम्हारा प्रवर्तक न हो और कर्म त्याग में तुम्हारा सङ्ग न हो ॥

हे धनंजय अर्जुन ! योग अर्थात् परमेश्वर आराधन में एकाग्रचित्त हो और कर्तृत्वाभिमान त्याग कर सिद्धि असिद्धि को समान जानकर कर्मकरो, सिद्धि असिद्धि में समता ही योग कहलाता है ॥

हे धनंजय अर्जुन ! बुद्धि योग अर्थात् व्यवसायात्मक बुद्धि से दूसरा काम्य कर्म बहुत दूर है इसलिये बुद्धि में शरण अन्वेषण करो क्योंकि फल के सब कारण कृपण हैं, इस योग में व्यवसायात्मक बुद्धि कर के जो ईश्वराराधन करेगा वह सुकृत अर्थात स्वर्गादि भोग और दुष्कृत अर्थात् नरक भोग दोनों को त्याग करेगा इस लिये योग के हेतु उद्यम करना और कर्मों में जो कुशलता है वही योग कहलाता है, व्यवसायात्मक बुद्धि युक्त मनुष्य कर्म जन्य स्वर्गादि रूप फल त्याग कर ज्ञानी और जन्म मरणादि से रहित हो परमेश्वर के सर्व उपद्रव रहित स्थान को प्राप्त होते हैं, जिस काल में देह आदि के कर्तृत्वाभिमान रूप से तुम्हारी व्यवसायात्मक बुद्धि पार होगी उस काल में तुम सुनने के योग्य और सुने हुये अर्थ से वैराग को प्राप्त होगे ॥

नाना लौकिक अर्थ बोधक वेदवाक्य। से जब बुद्धि फिर कर अचल हो कर समाधि में स्थिर होगी तब योग को तू प्राप्त होगा ॥

अर्जुन ने प्रश्न किया हे केशव! निश्चल बुद्धि वाले जो समाधि योग में स्थित हुये हैं उन का क्या लक्षण है और वे क्या कहते हैं और उस का आसन और चाल चलन कैसा है ॥

श्रीकृष्ण ने कहा हे अर्जुन! जब पुरुष मनोगत सम्पूर्ण कामों को त्याग कर अपने आत्मा ही में मन से सन्तुष्ट होगा तब वह स्थितप्रज्ञ कहलावेगा, दुःख प्राप्त होने से जिस का मन खेद में नहीं और जो सुखादि में इच्छा रहित हो कर राग, भय और क्रोध का त्याग करता है वह स्थितप्रज्ञ मुनि कहलाता है, जो पुरुष सर्वत्र अर्थात् पुत्रादि से स्नेह नहीं रखता और शुभ अथवा अशुभ विषय को प्राप्त होकर राग द्वेष नहीं करता उस पुरुष की प्रज्ञा समाधि में स्थिर है, जब योगी पुरुष इन्द्रियार्थ अर्थात् शब्दादि से इन्द्रियों को सर्व्वत्र से खैंच लेता है जैसे कछुवा अपने अंगों को समेट लेता है उसकी प्रज्ञा समाधि में प्रतिष्ठित होती है, जो पुरुष निराहार रहता है उसकी इन्द्रियां विषयों से निवृत्त होती हैं परन्तु उस का रागादि की निवृत्ति नहीं होती और समाधिस्थ पुरुष के रागादि परमात्मा के दर्शन से निवृत्त हो जाते हैं ॥

हे अर्जुन! विवेकी और प्रयत्न करने वाले के भी मन को

बलात्कार अर्थात् बल से इन्द्रियां खींच लेती हैं क्योंकि इन्द्रिय ग्राम बलवान् है, इस से सब इन्द्रियों को स्वाधीन करके योगी को चाहिये कि मुझ से मन लगाये रहे क्योंकि जिस पुरुष की सम्पूर्ण इन्द्रियां वश में हैं उस की प्रज्ञा प्रतिष्ठित होती है, जो पुरुष विषय सुखादि के ध्यान में रहता है उसे उस विषय सुख आदि की अधिकता उत्पन्न होती है और उस अभिलाषा से काम और काम से क्रोध उत्पन्न होता है क्रोध से युक्तायुक्त में अविवेकता, अविवेकता से स्मृतिभ्रम अर्थात् शास्त्र और गुरु वाक्य में भूल, स्मृतिभ्रम से बुद्धि नष्ट होती है और नष्टबुद्धि से वह आप नष्ट होजाता है ॥

जो पुरुष राग द्वेष रहित हो कर अपने आधीन इन्द्रियों से विषय को अनुभव करता है और मन जिसका अपने वश में है वह पुरुष शान्ति को प्राप्त होता है, प्रसाद हुये पीछे उस पुरुष के सम्पूर्ण दुःखों की हानि होती है क्योंकि जिस का चित्त प्रसन्न हुआ शीघ्र उसकी बुद्धि प्रतिष्ठित होती है, जिस पुरुष की इन्द्रियां वश में नहीं उस को शास्त्र और गुरु उपदेश की बुद्धि अर्थात् आत्म विषयक ज्ञान नहीं और उस निक्लेश इन्द्रिय से ध्यान भी नहीं हो सक्ता और जो पुरुष ध्यान नहीं कर सक्ता उसे चित्त की शान्ति नहीं और जिस का चित्त शान्त नहीं उस सुख अर्थात् मोक्ष आनन्द भी नहीं क्योंकि विषयासक्त इन्द्रियों के साथ जो मन भी जाता है सोई पुरुष की प्रज्ञा हरण कर लेता है जैसे जल में वायु नाव को खैंच लेजाती है ॥

हे महाबाहो अर्जुन ! तिस से जिस पुरुष की इन्द्रियां अपने २ विषयों से आकर्षित होती हैं उस पुरुष की प्रज्ञा प्रतिष्ठित कहलाती है, अज्ञानरूप अन्धकार से जिन की बुद्धि आच्छादित है उनकी रात्रि में जितेन्द्रिय योगी जागते हैं और जिस विषयादि रूप निशा में सम्पूर्ण भूत जागते हैं वह आत्मतत्त्वदर्शी मुनियों की रात्रि है ॥

जैसे सब ओर से भरे हुये समुद्र में जल आकर प्रवेश करते हैं पर वह अपनी प्रतिष्ठा से नहीं चलायमान होता वैसे ही जिस पुरुष में सम्पूर्ण विषय प्रविष्ट होते हैं और जिस के मन में कोई विकार नहीं होता वह पुरुष मोक्ष को प्राप्त होगा, विषयों की इच्छा वाला पुरुष मोक्ष को नहीं पासकता ॥

जो पुरुष सम्पूर्ण कामों को त्याग कर निःस्पृह हो व्यवहार करता है और ममता और अहंकार से रहित है वह पुरुष शान्ति को प्राप्त होता है ॥

हे पार्थ अर्जुन ! यह ब्रह्मज्ञान की निष्ठा है इस निष्ठा को जो मरण काल में भी प्राप्त होगा उस को संसारी मोह न होगा और जो पुरुष पहिले से मरण समय तक इस का अभ्यास करेगा वह मोक्ष पद को प्राप्त होगा यह क्या कहना है ॥

सताईसवां अध्याय

—:०:—

श्री मद्भगवद्गीता का तीसरा अध्याय ॥
कर्म योग प्रतिपादक ॥

अर्जुन ने पूछा कि हे श्रीकृष्ण ! यदि कर्म से बुद्धि श्रेष्ठ है तो मुझ को क्यों घोर कर्म में प्रवृत्त करते हो, कर्म और बुद्धि मिश्रित वाक्य से भारी बुद्धि को मोहते हो :स लिये दोनों में से एक को निश्चय करके कहो कि जिस से मैं कल्याण को प्राप्त हूं ॥

भगवान् ने उत्तर दिया हे अर्जुन ! इन अधिकारी जनों के हेतु पूर्व अध्याय में मैंने दो प्रकार की निष्ठा कही, है सांख्यवाले को ज्ञानयोग और योगमतवाले का कर्मयोग वर्णन किया है जैसे बिना कर्म के आरम्भ के पुरुष ज्ञान को प्राप्त नहीं होता वैसे ही बिना कर्म संन्यास ग्रहण किये मोक्ष को भी प्राप्त नहीं होता ॥

कोई पुरुष किसी अवस्था में बिना कर्म किये क्षण भर भी नहीं ठहर सकता क्योंकि सम्पूर्ण जन प्रकृतिजन्य स्वभाविक रागादि गुणों से परवश होकर कर्म में प्रवृत्त हो जाते हैं, जो पुरुष कर्मेंद्रियों को रोक कर मन से विषयों का स्मरण करता रहता है वह मूढ़ात्मा और कपटी चार कहलाता है ॥

हे अर्जुन ! जो पुरुष ज्ञानेन्द्रियों को मन के साथ रोक

कर और कर्मेन्द्रियों से कर्मफल की आशा छोड़ कर कर्म योग आरंभ करता है वह ज्ञानवान है, तुम नित्य वर्णाश्रम कर्म करो क्योंकि अकर्म से कर्म श्रेष्ठ है, यदि तुम कर्म करोगे तो शरीरान्त में गति भी सिद्ध न होगी, ईश्वर निमित्त कर्म से अतिरिक्त कर्म इस लोक के लिये बन्धन है इस लिये हे अर्जुन ! मुक्तसंग हो अर्थात् विषय इच्छा रहित होकर कर्म करो ॥

स्वर्ग आदि में प्रजापति ब्रह्मा ने यज्ञ करने वाले ब्राह्मणादि प्रजा को उत्पन्न करके कहा कि इस यज्ञ से तुम लोग उत्पत्ति करो यही यज्ञ तुम लोगों को सम्पूर्ण इष्ट का देने वाला है ॥

इस यज्ञ कर के देवताओं की हवि भोगादि से पूजा करो और देवता लोग वृष्टि आदि से तुम्हारी पालना करेंगे इस परस्पर भावन से तुम लोग उत्तम मंगल को प्राप्त होगे, यज्ञ कर के पूजित देवता लोग तुम लोगों को सम्पूर्ण भोगादि देंगे उन देवताओं से जो अन्न मिला है उस को पञ्चयज्ञादि से दूसरे को न देकर जो भोजन करेगा वह चोर है, वैश्यदेवादि यज्ञ से बचा हुआ शेष जो लोग भोजन करते हैं वे सम्पूर्ण पाप से मुक्त होते हैं और जो दुराचारी अपने पेट के हेतु पाप करते हैं वे पाप ही भोग करेंगे ॥

अन्न से संपूर्ण भूत उत्पन्न होते हैं और अन्न वृष्टि से और वृष्टि यज्ञ से होती है और यज्ञ कर्म से होता है, कर्म

वेद से उत्पन्न हुआ और वेद अक्षररूप पर ब्रह्म से इस लिये उस सर्वगत ब्रह्म को सर्वदा यज्ञ प्रतिष्ठित जानो ॥

हे पार्थ अर्जुन ! पूर्वोक्त चक्र इस प्रकार से मैंने प्रवृत्त किया है जो पुरुष इस लोक में उस के अनुसार नहीं चलता वह पाप जीवी और विषयासक्त है और उस का जीवन व्यर्थ है, जो पुरुष आत्मा ही से प्रीति रखता है आत्मा ही में अर्थात ब्रह्मानन्द से तृप्त भी रहता है और आत्मा ही में भोग आदि से अपेक्षा रहित हो कर सन्तुष्ट होता है उस पुरुष के लिये कुछ कार्य्य अवशेष नहीं, ऐसे पुरुष को न कुछ पुण्य करने से अर्थ है न पाप से और उस को सम्पूर्ण भूतों से किसी अर्थ का वियोग भी नहीं इस लिये फल की इच्छा से रहित हो कर तुम सर्वदा योग कर्म के प्रवृत्त हो क्योंकि भोगादि से इच्छा रहित हो कर जो पुरुष कर्म करता है वह मोक्ष को प्राप्त होता है ॥

जनकादिक ज्ञानी लोग कर्म ही करने से मोक्ष को प्राप्त हुये और तुम अच्छी भांति से देख कर लोक संग्रह के हेतु भी कर्म करने के योग्य हो क्योंकि उत्तम लोग जो जो कर्माचरण करते हैं इतर लोग भी उसी का आचरण करते हैं और उत्तम लोग जिस का प्रमाण मानते हैं संसारी लोग भी उसी के अनुसार चलते हैं ॥

हे पार्थ अर्जुन ! हम को तीनों लोक में किंचित् कुछ कर्त्तव्य नहीं है और न कोई अप्राप्त वस्तु कर्म से प्राप्त करने

के योग्य है तिसपर भी हम कर्म में ही प्रवृत्त हैं, यदि हम कदाचित् आलस्यरहित होकर कर्म में प्रवृत्त न हों तो हे पार्थ अर्जुन ! सम्पूर्ण मनुष्य हमारे ही मार्ग के अनुसार हो कर कर्म त्याग करेंगे, यह लोग कर्म लोप होने से नष्ट होजायेंगे यदि हम कर्म न करें और वर्णसंकर के कर्त्ता हों तो इस से इन प्रजाओं को नष्ट करेंगे। हे पार्थ अर्जुन ! जैसे मूर्ख लोग कर्म करने की इच्छा से प्रवृत्त होकर कर्म करते हैं वैसे ही पण्डित लोग उसे असक्त होकर लोकसंग्रह के हेतु कर्म करें। कर्मासक्त मूर्खों को बुद्धि का भेद न जानना चाहिये विवेकी लोगों को उचित है कि आप कर्म करके उनसे सम्पूर्ण कर्म करावें। प्रकृति के गुण इन्द्रियादि करके सम्पूर्ण क्रियमाण कर्मों को मूढ़ लोग जिन की बुद्धि अहंकार से मोहित है जानते हैं कि हम करने वाले हैं॥

हे महाबाहो अर्जुन ! विवेकी पुरुष अपने को इन्द्रियादि और कर्मों से अलग जान कर अपने में अहंकार आरोप नहीं करते क्योंकि वह जानते हैं कि इन्द्रियां अपने २ विषय में आप ही सर्वदा प्रवृत्त हैं, प्रकृति के सत्वादि तीनों गुणों से मूर्ख लोग मोहित हो इन्द्रिय और देहेन्द्रिय के व्यापार में अभिमान में प्रवृत्त हैं, इस लिये विवेकियों को उचित है कि बुद्धि भेद में उन्हें प्रवृत्त न करें, सम्पूर्ण कर्मों का मुझी में ईश्वराधीन बुद्धि से समर्पण करके कर्म फल से आशा और ममता रहित हो शोक को छोड़ युद्ध करो, जो मनुष्य मेरे इस

मत के अनुसार श्रद्धा पूर्वक और निन्दा रहित हो कर चलते हैं वे लोग ज्ञानी की नाईं कर्म बन्ध से मुक्त होते हैं, जो लोग इस मेरे मत की निन्दा करते हैं और इस के अनुसार नहीं चलते उन्हें जानों कि वह संपूर्ण ज्ञान से रहित और मृतक के तुल्य और विवेक रहित हैं. ज्ञानी लोग भी अपने पुरातन कर्माधीन स्वभाव ही के अनुसार चले जाते हैं और सब प्राणी भी उसी स्वभाव के अनुसार चले जाते हैं क्योंकि प्रकृति सब से बलवती है वहां इन्द्रिय रोकने से क्या होगा। प्रति इन्द्रियों में उन के विषय अनुकूलता से राग और प्रतिकूलता से द्वेष दोनों अवश्य रहते हैं इस लिये इन दोनों के वश में न होना चाहिये क्योंकि ये निश्चित पुरुष के शत्रु हैं. अपना धर्म यद्यपि न्यून भी हो तो परधर्म से शुभ है कि जिस का अच्छी भांति से आचरण किया गया है क्योंकि भयानक परधर्म से अपने धर्म से मरना भला है॥

अर्जुन ने प्रश्न किया हे वार्ष्णेय यदुपति! जो पुरुष कामादि से अनिच्छित है उसे किस ने नियुक्त पुरुष की नाईं पाप में प्रवृत्त किया है॥

श्रीकृष्ण चन्द्र ने उत्तर दिया कि जिस को तुम पूछते हो वह काम और क्रोध है और रजसगुण करके उत्पन्न होते महाभक्षक और पापी हैं इस मोक्षमार्ग में इन्हें शत्रु कर जानों जैसे धुएं से आग और मल से दर्पण और उल्व अर्थात्

गर्भवेष्टन चर्म्म से गर्भ घेरा रहता है, काम और क्रोध से सम्पूर्ण जगत घेरा हुआ है ॥

हे अर्जुन ! इस नित्य वैरी काम ने ज्ञानियों का ज्ञान घेर रक्खा है और यह आग की नाईं सर्व्वदा अतृप्त है, सम्पूर्ण इन्द्रियां मन बुद्धि आदि इस काम के स्थान कहलाते हैं यह इन इन्द्रियों से ज्ञान को घेर कर देही अर्थात् आत्मा को मोह लेता है

हे अर्जुन ! इस लिये तुम मोह प्राप्त होने से पहिले सम्पूर्ण इन्द्रियों को रोक कर इस पापी काम को जीतो क्योंकि यह शास्त्र और गुरूपदेश ज्ञान और विज्ञान अर्थात् तत्त्वज्ञान इन दोनों का नाशक है । कहते हैं कि दोनों इन्द्रियां देहादि से श्रेष्ठ और इन्द्रियों से श्रेष्ठ मन और मन से श्रेष्ठ निश्चयात्मक बुद्धि है और जो बुद्धि से भी परे है वही परमेश्वर है ॥

हे महाबाहो अर्जुन ! बुद्धि का साक्षी ईश्वर को जान कर संशयात्मक मन को निश्चयात्मक बुद्धि से रोक कर अजित काम रूपी शत्रु को पराजय करो ॥

अठाईसवां अध्याय

—:०:—

श्री मद्भगवद्गीता का चतुर्थ अध्याय ॥
कर्म सन्यास योग निरूपण

श्रीकृष्ण जी ने कहा कि यह अविनाशी योग पहिले हमने

सूर्य से कहा और सूर्य ने मनु से फिर मनु ने अपने पुत्र इक्ष्वाकुराज से निरूपण किया ॥

हे परन्तप अर्जुन! इसी प्रकार से यह परम्परायोग चला आता है राज ऋषि और राजा लोग इसे जानते रहे वह योग बहुत काल से मृतप्राय हो रहा है ॥

जो हम ने तुम से कहा वह वही पुरातन योग है अतिगोपनीय और उत्तम है तुम मेरे भक्त और सखा भी हो इस लिये तुम से निरूपण किया ॥

अर्जुन ने पूछा हे महाराज! तुम्हारा जन्म पीछे है और सूर्य्य का जन्म तुम से पहिले है तुम ने पहिले सूर्य्य से यह योग क्योंकर कहा यह मुझे बतावो ॥

श्रीभगवान् ने कहा कि हे अर्जुन! मेरे और तुम्हारे बहुत से जन्म व्यतीत हो चुके हैं मैं उनको जानता हूं तुम नहीं जानते, हम उत्पत्तिरहित अविनाशी और सम्पूर्ण भूतों के ईश्वर हैं तथापि हम अपनी शुद्ध सात्त्विक प्रकृति को स्वीकार कर के अपनी माया से उत्पन्न होते हैं, हे अर्जुन! जब २ धर्म की हानी और अधर्म की वृद्धि होती है तब तब मैं अवतार लेता हूं ॥

सम्पूर्ण साधुओं के रक्षण करने, दुष्टों के नाश करने और धर्म स्थापन करने के लिये सब युगों में मैं जन्म लेता हूं ॥

हे अर्जुन! इस प्रकार जो मेरा उत्कृष्ट जन्म और कर्म यथार्थ कर के जानता है वह देह त्याग कर जन्म नहीं पाता और मुझ में प्राप्त होता है, बहुत से लोग राग, भय और क्रोध से रहित होकर मुझ में चित लगा कर, मेरे शरण

आकर और ज्ञानरूप तप कर के पवित्र हो मेरे ही भाव को प्राप्त हुए हैं ॥

हे अर्जुन! जो लोग जैसे अर्थात् सकाम या निष्काम मेरे शरणागत होते हैं उनको उसी के अनुसार फल देकर मैं उनकी रक्षा करता हूं, क्योंकि सब मनुष्य मेरे ही मार्ग के अनुसार चलते हैं, जो इस लोक में फल की इच्छा से देवताओं की आराधना करते हैं उन्हें कर्म फल की सिद्धि मर्त्यलोक में शीघ्र होती है, चारों वर्णों की सृष्टि उन के सात्त्विकादि गुण और कर्म भेद से मैंने की है इस हेतु से सृष्टि का मैं कर्त्ता हूं और मैं आविनाशी फल की अपेक्षा से रहित हूं इस से मुझे अकर्त्ता भी जानो, सम्पूर्ण कर्म मुझ को आसक्त नहीं कर सक्के क्योंकि मुझे कर्म फल की इच्छा नहीं जो पुरुष मुझको ऐसा जानता है वह कर्मों कर के बद्ध नहीं, होता, पुरातन जनकादि मुमुक्षु अर्थात् मोक्ष की इच्छा वाले पुरुषों ने ऐसा जान कर सत्वशुद्धि के हेतु कर्म किया है और युगान्तर में भी प्राचीन लोगों ने कर्म किये हैं इस लिये तुम भी कर्म में प्रवृत्त हो, कौन कर्म करने के योग्य है और कौन नहीं इस में विवेकी लोग भी मोह को प्राप्त होते हैं वह मैं तुम से कहता हूं जिस के जानने से अशुभ अर्थात् संसार से मुक्त हो जावोगे ॥

शास्त्रविहित कर्म और निषिद्ध कर्म और त्याग योग्य कर्मों को भी जानना चाहिये क्योंकि कर्म गति कष्ट से भी जानने के

योग्य नहीं, जो पुरुष विहित कर्मों में से जानता है कि यह कर्म करने के योग्य नहीं और अन्य कर्मों में से जानता है कि यह करने के योग्य है क्योंकि उसे लौकिक रागादि फल की अपेक्षा नहीं वह पुरुष सम्पूर्ण कर्म करने वाले मनुष्यों में से पण्डित है इस लिये कि सब कर्म कर्त्ता है ॥

जिस पुरुष के सम्पूर्ण कर्म काम और संकल्प से रहित हैं और जिस ने ज्ञानरूपी अग्नि में सब कर्मों को दग्ध कर दिये हैं उसे विवेकी लोग पण्डित कहते हैं ॥

जो पुरुष कर्म फल की इच्छा छोड़ नित्यानंद से तृप्त और निराश्रय रहता है यद्यपि कर्मों में प्रवृत्त हो तथापि कुछ भी नहीं करता ॥

जो पुरुष कामनाआदि से रहित हो चित्त और शरीर को स्वाधीन कर सब परिग्रह को त्याग करता है वह केवल शरीर रक्षा हेतु कर्म करने से क्लेश को नहीं प्राप्त होता ॥

जो पुरुष बिना जांचे हुये लाभ से सन्तुष्ट रहता और शीतोष्णादि दुःखों को समान जानता और सम्पूर्ण भूतों से निर्वैर रहता और हर्ष विषाद को सम देखता है वह कर्म से बन्ध को नहीं प्राप्त होता ॥

जो पुरुष संग अर्थात् रागादि से रहित और मुक्त है और ज्ञान में उसका चित्त स्थिर रहता है और ईश्वराराधन के हेतु कर्म करता है वह वासना सहित सम्पूर्ण कर्मों से मुक्त हो जाता है ॥

जो पुरुष होम के पात्र और द्रव्य घृतादि अग्नि हवन कर्त्ता और क्रया सम्पूर्ण वस्तु को ब्रह्म ही जानता है उस को ब्रह्म से अतिरिक्त अन्य वस्तु प्राप्त करने के योग्य नहीं। कर्म योग करने वाले देवतादिक के हेतु हवनादि उपासना करते हैं और ज्ञान योग करने वाले ज्ञान की अग्नि में हवनादि कर्म ब्रह्मार्पण बुद्धि से लय करते हैं और नैष्ठिक ब्रह्मचारी पुरुष श्रोत्रादि ज्ञान इन्द्रियों को संयम रूपी अग्नि में लय करते हैं और गृहस्थाश्रमी शब्दादि विषयों को इन्द्रियादि अग्नि में लय करते हैं, ध्यानावस्थित लोग सम्पूर्ण इन्द्रियों के व्यवहार को अपने २ ग्राहक इन्द्रियों में अर्पण करके मन संयम अर्थात् मन की एकाग्रता रूपी अग्नि में जो ज्ञान से प्रकाशित है उस में लय करते हैं, कोई तो द्रव्य से यज्ञ करता है, कोई तप से, कोई योगाभ्यास से यज्ञ अर्थात् आराधन करता है कोई वेदाध्ययन और मन रूपी यज्ञ से और कोई ज्ञानयज्ञ से परन्तु यती लोग अपने स्वभाव से निश्चित हो उपासना करते हैं ॥

कोई अपान में प्राणपूरक मार्ग से लय करता है कोई प्राण के अपान को रेचक मार्ग से यों ही, कोई प्राण और अपान की गति कुम्भक से रोक कर प्राणायाम शील होते हैं, कोई आहार घटाने से इन्द्रियों के व्यापार को उन की इन्द्रियों में होम करता है, ऐसे यह सब यज्ञ जानने वाले यज्ञ कर क्लेश रहित होते हैं ॥

हे अर्जुन ! यज्ञ समाप्त करके अवशिष्ट काल में जो

अमृतसंज्ञित अन्न को भक्षण करता है वह सनातन ब्रह्म को प्राप्त होता है और जो यज्ञ नहीं करता उसे मर्त्य लोक ही प्राप्त नहीं होता तो परलोक कब मिलेगा ? वेद में विस्तार से अनेक प्रकार के यज्ञ इस प्रकार से कहे हैं वे सम्पूर्ण यज्ञ मन, वाचा और कर्म से जनित जानो क्योंकि परमेश्वर केवल ज्ञान-मात्र गोचर हैं और यज्ञाचरण शुद्धि द्वारा ज्ञान उपयोगी यज्ञ जान कर संसार से मुक्त हो ॥

हे अर्जुन ! द्रव्यमय यज्ञ से ज्ञान यज्ञ श्रेष्ठ है क्योंकि सम्पूर्ण कर्म फल सहित ज्ञान ही में समाप्त होते हैं, दण्डवत् प्रश्न और सेवा करके उस ज्ञान को प्राप्त हो तो वे ज्ञानी लोग तुम को उपदेश करेंगे क्योंकि वे सर्वदा तत्त्व ही के विचार में रहते हैं ॥

हे पाण्डव अर्जुन ! जिस ज्ञान को यों जान कर बन्धनिमित्त मोह को फिर न प्राप्त होगे और इस ज्ञान से सम्पूर्ण भूतों को मुझ परमात्मा में देखोगे, यदि तुम सब पापों से अधिक पाप करने वाले हो तो भी सम्पूर्ण पाप रूपी समुद्र को ज्ञानरूपी नौका से तर जावोगे ॥

हे अर्जुन ! जैसे जलती हुई अग्नि लकड़ियों को भस्म कर डालती है वैसे ही ज्ञानरूपी अग्नि सम्पूर्ण बन्धहेतु कर्मों को भस्म कर देता है । ज्ञानके सदृश दूसरी वस्तु इस लोक में तप योगादि नहीं क्योंकि किसी काल में योगाभ्यास में आत्मा में अनायास करके आपही प्राप्त होंगे ॥

गुरु उपदिष्ट वाक्य में श्रद्धावान् विचारशील और इंद्रियवश पुरुष ज्ञानको प्राप्त होता है और ज्ञान प्राप्त होने से परम मोक्ष को प्राप्त होता है ॥

जो पुरुष गुरुवाक्य को नहीं जानता और अश्रद्धावान् और संशयात्मक बुद्धि वाला है वह नाश को प्राप्त होता है और उसे इस लोक और परलोक में सुख भी नहीं मिलता ॥

हे अर्जुन ! जो पुरुष योगाभ्यास से सम्पूर्ण कर्मों को ईश्वर ही में अर्पण करता है और ज्ञान से जिसने संशय का नाश किया है वह विवेकी पुरुष अपने कर्म फलों से बन्धन में नहीं पड़ सकता ॥

हे अर्जुन ! इस लिये अपने आत्मा के संशय को जो अज्ञान से उत्पन्न हुआ है और हृदय में स्थित है, उसे ज्ञान रूपी तलवार से छेदन कर योग को प्राप्त हो कर युद्ध के लिये उठो ॥

उनतीसवां अध्याय

श्री मद्भगवद्गीता का पांचवां अध्याय ॥

कर्म सन्यासयोगनिरूपण ॥

अर्जुन ने पुछा हे कृष्ण ! कर्म सन्यास और कर्म योग

अर्थात् कर्म के त्याग और ग्रहण दोनों की प्रशंसा करते हो इन दोनों में से जो मंगल और योग्य हो वह मुझ से कहो ॥

श्रीभगवान् जी ने कहा कर्म सन्यास और कर्म योग दोनों मोक्ष देने के योग्य हैं परन्तु इन दोनों में कर्म सन्यास से कर्म योग श्रेष्ठ है ॥

हे महाबाहो अर्जुन ! जो पुरुष राग और द्वेष दोनों को समान जान कर रहता है उस नित्य सन्यासी जानो क्योंकि निर्द्वन्द्व हो कर संसार रूप बन्धन से पूर्वक मुक्त होता है, कर्म सन्यास और कर्म योग में मूर्ख लोग भेद कहते हैं पर इन दोनों में से एक का भी जो अनुष्ठान करेगा वह दोनों का फल अच्छी भांति से पावेगा। कैवल्यरूप स्थान जो कर्म संन्यासी लोग पाते हैं, वही कर्म योग वाले भी पाते हैं और कर्म सन्यास और कर्म योग को जो एक सम देखता है उसी का देखना ठीक है ॥

हे अर्जुन ! बिना कर्मयोग के सन्यास दुःख प्राप्ति के हेतु है जो योगयुक्त मौनी होकर सन्यास आश्रयण करेगा वह अल्पकाल में ब्रह्म को प्राप्त होगा, जो पुरुष योगाभ्यास युक्त होकर शुद्ध बुद्धि और मन से इंद्रियों को वश करके ईश्वर को सर्व भूत व्यापी जानकर कर्म करता है वह कर्म फल से बद्ध नहीं होता। योग युक्त विवेकी पुरुष यद्यपि इन्द्रियों को व्यापार करता है तथापि अपने को कर्त्ता नहीं जानता क्योंकि देखने, सुनने, छूने, सूंघने, चखने, चलने और श्वास लेने से अपने में कर्तृत्वाभिनिवेश नहीं मानता।

उच्चार, त्याग, ग्रहण और कर्मार्थ प्राणवायु का संकोच विकास आदि सम्पूर्ण इन्द्रियां अपना अपना व्यापार करती हैं।

सम्पूर्ण कर्मों को परमेश्वर ही में अर्पण कर के कर्मफल की आशा से रहित हो जो पुरुष कर्म करता है वह पाप से लिप्त नहीं होता जैसे जल में कमल का पत्ता रहता है तौभी उस से लिप्त नहीं होता, शरीर, मन, बुद्धि और इन्द्रियादि से तत्तत्कर्म फल की अपेक्षा छोड़ कर योगी लोग चित्तशुद्धि के हेतु कर्म करते हैं। परमेश्वर आराधन में तत्पर हो कर कर्म फल की अपेक्षा छोड़कर कर्म करके कर्म करने से युक्त पुरुष शान्ति को प्राप्त होते हैं और अयुक्त पुरुष काम से फलासक्त होकर बद्ध रहते हैं, सब कर्म मन से त्याग कर जितचित्त पुरुष सुख से रहता है और नेत्र आदि नवद्वारपुर में देही न आप कुछ करता और न कराता है, सर्वव्यापी ईश्वर जगत् का कर्तृत्व और कर्म आप नहीं सृष्टि करता परन्तु अनादि अविद्या से कामवश हो स्वाभाविक प्रवृत्त होता है और ईश्वर नहीं नियोग करता॥

परमेश्वर न किसी को पाप देता है न पुण्य परन्तु अज्ञान से ज्ञान घेरा है इस लिये जीव आप ही मोह को प्राप्त होता है, जिसका अज्ञान ज्ञान के प्रकाश से नष्ट हो गया उस का ज्ञान परमेश्वर को प्रकाशक है जैसे सूर्य अन्धकार दूर कर के सब पदार्थों का प्रकाश करता है, जिस की बुद्धि, मन और तात्पर्य परमेश्वर ही में है उस का स्थान परमेश्वर ही है और

वह ज्ञान से निर्मल हो पुनरावृत्ति से रहित होकर ब्रह्म को प्राप्त होता है ॥

परमेश्वर को सर्वव्यापी जानने वाला विवेकी विद्या और विनय से युक्त ब्राह्मण चमार और कुत्ता, गौ और हाथी में भेद नहीं जानता सब को एक समान देखता है, वह लोग जिनका मन स्वाधीन है इसी लोक में संसार जीत लेते हैं क्योंकि जिन की दृष्टि में ब्रह्म निर्दोष और समान है वह अवश्य ब्रह्मभाव को प्राप्त हैं ॥

जो पुरुष प्रिय वस्तु के प्राप्त होने से हर्ष और अप्रिय के प्राप्त होने से विषाद नहीं करता उस की बुद्धि निश्चल और मोह रहित है इस लिये वह ब्रह्मभाव को प्राप्त है, बाह्य विषयादि में अशक्तचित्तवाला पुरुष जो सुख अपने में अनुभव करता है उस अक्षय सुख को समाधिस्थ पुरुष प्राप्त होते हैं ॥

हे अर्जुन ! जो भोग इन्द्रियों की वृत्ति से उत्पन्न होते हैं वह दुःख के कारण और उत्पत्ति और विनाशवान् हैं इस लिये विवेकी पुरुष उन में नहीं रमता, जो मनुष्य शरीर पतन से पहिले इस लोक में काम क्रोध से उत्पन्न हुए मन के वेग को सहन कर सकता है वह योग युक्त और सुखी है, जो पुरुष अन्तःकरण में सर्वदा सुखी रहता और अन्तर में क्रीड़ा करता है और ऐसे ही अपने मन में सदा प्रकाशित रहता है वह समाधियुक्त पुरुष ब्रह्म भाव को प्राप्त होकर मोक्ष पाता है ॥

जो ऋषि निर्वाण ब्रह्म को प्राप्त हुये हैं उनका कल्मष और भेद बुद्धि दूर हुई है और मन वश में है और सम्पूर्ण प्राणी के हित का आचरण करते हैं काम क्रोध से रहित नियमित चित्तवाले जो परमेश्वर को यथार्थ रूप से जानते हैं वह सन्यासी सर्वत्र निर्वाण हो कर ब्रह्म को प्राप्त होते हैं ॥

वाह्य स्पर्शों को वाहर कर दृष्टि को भ्रूलता के बीच रख प्राण अपान दोनों को कुम्भक से नासा के अन्तर करके नियमित मन बुद्धि और इन्द्रिय वाले पुरुष मौनी होकर इच्छा, भय और क्रोध से रहित हैं उन्हें सदा मुक्त जानो। यज्ञ और तप के अनुभव करने वाला और सम्पूर्ण लोक का ईश्वर और सब का हितकारी जो मुझ को जानता है वह शान्ति को प्राप्त होता है ॥

तीसवां अध्याय

श्रीमद्भगवद्गीता का छठा अध्याय ॥

॥ आत्म संयम योग ॥

श्री भगवान् ने कहा जो पुरुष कर्म फल की अपेक्षा त्याग कर विहित कर्म का आचरण करता है वह सन्यासी और योगी है यदि इष्टापूर्त्तादि कर्म अर्थात् अग्निसाध्य और अनग्निसाध्य कर्मों का त्यागी हो ॥

हे पांडव अर्जुन ! जिसको विवेकी लोग सन्यास कहते हैं उसी को योग जानो क्योंकि बिना मनके संकल्प त्यागे कोई योगी नहीं होता। ज्ञान योग में आरूढ़ होने वाले पुरुष का अन्तःकरण शुद्धि द्वारा कर्म कारण कहलाता है और समाधिस्थ पुरुष को इन्द्रिय का निग्रह कारण होता है, जब भोग और भोग साधन कर्म में पुरुष को प्रीति नहीं होती तब योगारूढ़ सब संकल्प सन्यासी कहलाता है, विवेक ज्ञान से अपने आत्मा को आप ही संसार से उद्धार करे और आत्मा को अधोगति में न डाले क्योंकि आत्मा ही अपना उपकार बन्धु और शत्रु है, जिस ने विवेक ज्ञान से मन को वश किया उस का उपकारक बन्धु आत्मा ही है अविवेकी का अपकारक शत्रु भी आत्मा ही है स्वाधीन मन और प्रशान्त बुद्धिवाला अर्थात् राग द्वेष रहित पुरुष जो शितोष्ण और मान अपमान को समान जानता है परमात्मा उसके साथ ही है ॥

ज्ञान और विज्ञान से जिस का मन निराकांक्षित विकार से रहित और जितेन्द्रिय है वह योगी यदि लोहा, पत्थर और सोने को समान जाने तो युक्त कहलाता है ॥

जो पुरुष इष्ट मित्र और शत्रु से उदासीनद्वेषी और बन्धु का मध्यस्थ है साधु और पापी को समान देखता है वह समबुद्धि कहलाता है ॥

योगारूढ़ पुरुष आकांक्षा और प्रतिग्रह छोड़ शरीर और चित्त दोनों को स्वाधीन कर एकान्त में अकेला हो सदा मन

को नियुक्त करे, योगारूढ़ पुरुष पवित्र भूमि पर अचल ना बहुत ऊंचे और न बहुत नीचे तिस पर कुश उस पर व्याघ्रचर्म उस पर वस्त्र का आसन बिछावे, ऐसे आसन पर बैठ मन एकाग्र करके चित्त और इन्द्रियों का व्यापार शान्त करें मनकी स्थिरता के हेतु योगाभ्यास करे, शरीर मस्तक और कण्ठ को समान और अचल धारण करके अपने नासिकाग्र को देखा करे और दिशा अवलोकन से रहित हो कर आसन पर बैठ कर प्रशान्त आत्मा और भय रहित हो कर ब्रह्मचर्य व्रत में स्थिर हो मेरी ओर चित्त लगा मुझी को पुरुषार्थ समझ मन को योग में नियुक्त करता है, योगरूढ़ पुरुष सर्वदा इसी प्रकार से मन को नियुक्त करता हुआ शान्त मन हो कर मेरे स्वरूप मोक्ष रूप शान्ति को प्राप्त होता है ॥

हे अर्जुन! अतिभक्षण और न भोजन करने वाला, बहुत सोने और जागने वाला पुरुष योग के हेतु योग्य नहीं, जो पुरुष आहार, विहार और कर्म में प्रयत्न और निद्रा जागरण समान करता है वह संसाररूप दुःख दूर करने वाले योग को प्राप्त होता है ॥

जब योगी अपने में चित्त नियत हो कर सम्पूर्ण कामों से निःस्पृह रहेगा तब युक्त कहलावेगा, जैसे निवात देश में दीप चंचल नहीं होता वैसे ही जब पुरुष युक्त चित्त हो कर उत्तम योगाभ्यास करता रहेगा तब यह दृष्टान्त उस युक्त योगी के विषय में ठीक होगा ॥

जिस योग अवस्था में योगाभ्यास से चित्त निरोध हो कर रमता है और मनसे अपने आत्मा को अपने में देख कर सन्तुष्ट होता है ॥

जब आरूढ़ अवस्था में आत्मतत्त्व से निश्चल और स्थिर होता है तब योगी को बहुत सुख मिलता है जो निरतिशय है और इन्द्रियों से ग्रहण करने के योग्य नहीं केवल ज्ञान ग्राह्य है, जिस निरतिशय सुख के प्राप्त होने से दूसरा कोई अधिक लाभ नहीं मानता और उसके अनुभव से बहुत दुःख करके भी नहीं चलित होता, जिसके जानने से दुःख का वियोग होता है वह योग निश्चल चित्त से निश्चय करके अभ्यास करने के योग्य है ॥

सङ्कल्प उत्पन्न सब कामों को निश्शेष करके त्याग करे और चारों ओर से इन्द्रियग्राम को मन से रोक कर अपने योगाभ्यास में चित्त लगावे, धीरे धीरे शान्त हो धारणा वशीकृत बुद्धि से आत्मा में मन को स्थिर कर बाह्य विषयों से विमुक्त हो योगाभ्यास करे, जिस २ विषय से अनुरक्त हो मन चलता है, उसे उसे रोक कर अपने आत्मा ही के वश करे क्योंकि मन चंचल है स्थिर नहीं ॥

शांत मन वाले और ब्रह्मस्वरूप में प्राप्त हुये योगी को उत्तम सुख प्राप्त होता है यदि वह रजोगुण और कल्मष से रहित हो। ऐसा कल्मष रहित योगी सर्वदा मन को योग करता हुआ ब्रह्म सम्बन्ध से अनायास जीवमुक्तता को प्राप्त होता है

है, योग से नियुक्त मन कर और सर्वत्र समदर्शी योगी आत्मा को सब भूतों में और सब भूतों को आत्मा में स्थित देखता है ॥

जो पुरुष मुझ को सर्वत्र और मुझ में सम्पूर्ण जगत देखता है उस से मैं और वह मुझ से दूर नहीं। जो पुरुष सर्वव्यापी और एक ही जानता हुआ सर्व भूतों में मुझ को स्थित जानता है वह किसी प्रकार से रहे परन्तु ज्ञानी होकर मुझ में प्राप्त होता है ॥

हे अर्जुन! जो पुरुष अपनी आत्मा के समान सब प्राणियों के दुःख सुख को समझता है वह योगियों में परम उत्तम है ॥

अर्जुन ने पूछा कि हे मधुसूदन! यह योग जो तुमने मन की स्थिरता के हेतु कहा है मैं उस का बहुत काल तक स्थिति नहीं देखता हूं क्योंकि मन चञ्चल और स्थिर स्वभाव है ॥

हे कृष्ण! मन चञ्चल है और देह इन्द्रियों को पीड़ा कर के विचार से जीतने के योग्य नहीं और विषय वासना के अनुराग से दुर्भेद इस लिये इस का निग्रह अति कठिन जान पड़ता है जैसे आकाश में वायु सर्वत्र व्याप्त है परन्तु कोई उसे रोक नहीं सकता ॥

हे महाबाहो अर्जुन! यह तुम्हारा कहना सच है कि मन चञ्चल और निग्रह के योग्य नहीं परन्तु परमेश्वराकार

अन्तःकरण की वृत्ति और विषयों के वैराग्य से निग्रह होता है। स्थिर मनवाला पुरुष योग प्राप्त होने के योग्य नहीं यह मुझ को निश्चय होता है जिस का मन वश है और जो प्रयत्न भी करता है वह उपाय द्वारा योग प्राप्त करने के योग्य है॥

अर्जुन ने पूछा हे कृष्ण ! जो पुरुष श्रद्धावान् होकर योग में प्रवृत्त है परन्तु प्रयत्न न करने से योग से मन चलित होकर योगसिद्धि को न प्राप्त हुआ तो उस की क्या गति होगी॥

हे महाबाहो कृष्ण ! कर्म और मोक्ष रहित पुरुष निराश्रय होकर ब्रह्मप्राप्ति मार्ग के उपाय में मोहाक्रान्त होने से वायुच्छिन्न की नाईं क्या नष्ट होगा॥

हे कृष्ण ! मेरे इस संशय को तुम्हीं दूर करने के योग्य हो तुम से अतिरिक्त इस सम्पूर्ण संशय का निवर्त्तक कोई नहीं॥

हे तात् अर्जुन ! नष्ट पुरुष को इस कर्म भूमि में पातक नहीं और परलोक में भी नरक प्राप्ति नहीं क्योंकि कोई शुभ कर्म वाले पुरुष दुर्गति को नहीं जाते।

अल्प काल वाले योग भ्रष्ट पुरुष जिस लोक में अश्वमेधादि यज्ञ करने वाले प्राप्त होते हैं वहां बहुत कालतक निवास करने के सदाचार शील धनियों के घर उत्पन्न होते हैं, चिरकाल अभ्यासी योग भ्रष्ट पुरुष केवल ज्ञानियों के कुल में उत्पन्न होते हैं और इस लोक में इस प्रकार से सत्कुल में जन्म पाना दुर्लभ है॥

हे कुरुनन्दन ! उसी कुल में बुद्धि करके फिर उसी योग को प्राप्त होते हैं और पूर्व देह सम्बन्ध योग को प्राप्त होने से फिर अधिक फल प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं, उस पूर्व अभ्यास से किसी प्रतिबन्धक योग से इच्छा रहित होवे तो भी विषयों से मन हटाकर योग में स्थिर करते हैं और योग इच्छित पुरुष वेद युक्त कर्म फल से अधिक मोक्ष पद को प्राप्त हो कर युक्त होता है, योगी पुरुष कल्मष से शुद्ध हो कर अधिक यत्न करता हुआ अनेक जन्म के योगाभ्यास से सिद्ध और ज्ञानी हो कर उत्तम मोक्ष गति को प्राप्त होता है ॥

चान्द्रायणादि करने वाल तपस्वियों से, शास्त्र जानने वालों से और इष्टापूर्त्तादि कर्म करने वालों से योगी अधिक है इस लिये तुम भी योगी हो ॥

जो पुरुष मेरी ओर चित्त लगा कर श्रद्धावान् हे मुझ को भजता है वह मेरी बुद्धि में योगियों से श्रेष्ठ है ॥

इकतीसवां अध्याय

—०—

श्री मद्भगवद्गीता का सातवां अध्याय ॥

॥ ज्ञानविज्ञानयोगनिरूपण ॥

श्री भगवान् ने कहा हे पार्थ ! जिस का मन मुझ में

लगा है और जो मुझी को आश्रय समझता है वह पुरुष योगाभ्यास करता हुआ निस्सन्देह सम्पूर्ण ऐश्वर्य सहित जैसा मुझे जानेगा वह सुनो ॥

विज्ञान कहे अनुभव सहित यह सम्पूर्ण शास्त्र ज्ञान हम तुम से कहेंगे जिस के जानने के अनन्तर इस शुभ मार्ग में फिर कुछ जानने के योग्य बाकी नहीं रहता । सहस्र मनुष्यों में से एक अपने पुण्य की अधिकता से उत्तम ज्ञान के हेतु यत्न करता है और सैकड़ों यत्न करने वालों में से कोई मुझ को यथार्थ करके जानता है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश मन, बुद्धि और अहङ्कार इन आठ भेदों में प्रकृति भिन्न है ॥

हे महाबाहो ! इस के परे अपराप्रकृति से जानो जो चेतन जीव स्वरूप है कि जिस से सम्पूर्ण जगत् धारण होता है, स्थावर जङ्गमरूप सम्पूर्ण भूत इन दो जड़ और चेतन प्रकृतियों से उत्पन्न जानो और यह प्रकृतियों हमीं से उत्पन्न हुई हैं इस लिये सम्पूर्ण जगत की सृष्टि और प्रलय के कारण हमीं हैं ॥

हे धनञ्जय अर्जुन ! मुझ से और कोई श्रेष्ठ नहीं जैसे सूत्र में सब मणियां पिरोई जाती हैं वैसे ही सम्पूर्ण जगत मुझ में पिरोया हुआ है ॥

हे अर्जुन ! जल का रस सूर्य चन्द्रों की प्रभा वेदों का प्रणव और मनुष्यों का पुरुषार्थ मैं ही हुं और पृथ्वी का सुगन्ध, अग्नि का तेज, सब भूतों का जीवन और तपस्वियों का तप भी मैं ही हुं ॥

हे पार्थ ! चराचरात्मक भूतों की आदिकारण मुझी को जानो और विवेकियों की बुद्धि और तेजस्वियों का तेज भी मैं ही हुं ॥

हे अर्जुन ! बलवानों का बल काम रागादि से रहित मैं ही हूं और भूतों में धर्म से अविरुद्ध काम भी मैं ही हूं, सात्विक शम, दम आदि और राजस हर्ष विषादादि और तामस शोक मोहादि सब भाव मुझी से उत्पन्न जानो और मैं उन में नहीं परन्तु वह मुझ में हैं इन तीनों गुण स्वरूप भावों से यह सब जगत् मोह को प्राप्त हुआ है इस लिये लोग मुझ को इस से पर नहीं जानते परन्तु मैं सर्व विकार से रहित हुं यह मेरी त्रिगुणात्मक माया अति अद्भुत और दुस्तर है जो लोग मेरे शरणागत होते हैं वही इस से तर जाते हैं, पापशील, मोहाक्रांत, अधम नर मुझे नहीं भजते क्योंकि माया से उन का ज्ञान भ्रष्ट हो जाता है और इस से वह असुरभाव को प्राप्त होते हैं ॥

हे अर्जुन ! चार प्रकार के मनुष्य पूर्व पुण्य से मुझ को भजते हैं १ जो रागादि से रहित हैं, २ जो परमेश्वर को जानने की इच्छा रखते हैं, ३ जो धनार्थी हैं और ४ जो तत्त्व जानने वाले हैं, इन चार मनुष्यों में से ज्ञानी एक भक्ति करके सर्वदा मुझ में चित्त लगाने से श्रेष्ठ है ज्ञानी को मैं अत्यन्त प्रिय हूं और ज्ञानी मुझ को प्रिय है और सब भी श्रेष्ठ हैं परन्तु ज्ञानी मेरा आत्मा ही है यह निश्चित है क्योंकि वह मुझी में चित्त लगा कर मुझी को उत्तम गति जान कर आश्रयण करता है ॥

बहुत जन्म के पीछे ज्ञानी यह जानता है कि सम्पूर्ण जगत् वासुदेव ही का स्वरूप है, इस लिये ऐसा महात्मा होना दुर्लभ है, जिनका ज्ञान कामादि से हरा हो गया हो वे किसी न किसी नियम के आश्रय हो अपने पूर्व जन्म की वासना के आधीन हो उन देवताओं को भजते हैं, जो२ भक्त जिस २ मूर्ति की पूजा को श्रद्धा से इच्छा करते हैं उन २ भक्तों को वैसे ही दृढ़ श्रद्धा मैं उत्पन्न करता हूं वह भक्त उसी श्रद्धा से युक्त हो उन देवताओं की मूर्तियों की पूजा की इच्छा करते हैं, फिर इस के पीछे मेरे कहे हुये कामों को प्राप्त होते हैं क्योंकि सब देवताओं का स्वरूप मैं ही हूं इस लिये वे सब मेरे आधीन हैं ॥

जिनकी बुद्धि अल्प है उनका फल भी विनाशी है और देव आराधन करने वाले विनाशी होकर उन देवताओं को प्राप्त होते हैं परंतु जो मुझे यथार्थ करके पूजता है वह नाश रहित परमानंदरूप मुझ को प्राप्त होता है, अविवेकी पुरुष मुझ अव्यक्त को देहधारी मानते हैं क्योंकि वह मेरा स्वरूप जो प्रपञ्च से अतिरिक्त श्रेष्ठ और अविनाशी है उसे नहीं जानते, मैं योग माया से घेरा हूं इसलिये सम्पुर्ण जीवों पर प्रकट नहीं हूं तिसी से लोग मोह को प्राप्त होकर आद्यन्त रहित मुझ को नहीं जानते ॥

हे अर्जुन ! मैं भूत, भविष्य और वर्त्तमान तीनों काल के भूतों को जानता हूं परन्तु मुझ को कोई नहीं जानता ॥

हे भारत अर्जुन ! रागद्वेष से उत्पन्न सुख दुःख भेद मूलक मोह से सम्पूर्ण भूत उत्पत्ति में मोह को प्राप्त होते हैं, जिन जीवों का पुण्य कर्म के आचरण से पाप नष्ट हुआ वे सुख दुःख भेद मूलक मोह से छूट कर दृढ़ व्रत हो मेरा भजन करते हैं, जो लोग जरामरण दूर होने के हेतु आश्रय होकर प्रयत्न करते हैं वे सम्पूर्ण शुद्धात्मा स्वरूप ब्रह्म और उसके साधन निमित्त कर्म को भी जानते हैं, जो लोग अधिभूत अधिदैवत अधियज्ञ सहित मुझ को जानते हैं वे मरणकाल में भी विवेकयुक्त होकर मेरे स्वरूप को जानते हैं ॥

बत्तीसवां अध्याय

—:-०-:—

श्री मद्भगवद्गीता का आठवां अध्याय ॥

॥ पुराण पुरुष उत्तम योग निरूपण ॥

अर्जुन ने पूछा हे पुरुषोत्तम ! ब्रह्म क्या है और अध्यात्म अधिभूत अधिदैवत कर्म क्या कहलाता है हे मधुसूधन ! इस देह में यज्ञ फलदायक और यज्ञप्रयोजक कौन है और कैसे रहता है और अन्तकाल में नियत चित्त वाले पुरुष तुम को कैसा जानते हैं ॥

भगवान ने कहा ब्रह्म अचल और उत्कृष्ट है और आप ही अपने अंश से जीव रूप होना उस का स्वभाव है और उस स्वभाव का भोक्तृत्व हो कर देह में रहना अध्यात्म कहलाता है और

जरायुज आदि भूतों की उत्पत्ति और उद्भवका करने वाला है विसर्ग अर्थात देवताओं के निमित्त द्रव्य त्याग यज्ञ वही कर्म कहा जाता है ॥

हे मनुष्यों में श्रेष्ठ अर्जुन! विनाशी देहादि का अधिकारी अधिभूत है अपना अंश भूत सम्पूर्ण देवताओं का अधिपति पुरुष अधिदैव कहलाता है इस देह में मैं ही अन्तःस्थित अधि यज्ञ हूं, मरण अवस्था में जो पुरुष मेरा स्मरण करता हुआ देह त्याग करता है वह मेरे स्वरूप को प्राप्त होता है इस में कुछ सन्देह नहीं ॥

हे अर्जुन! अन्त काल जिस २ देवता की भावनासे पुरुष स्मरण करता हुआ देह त्याग करता है सर्वदा उसी भावना से युक्त हो कर उन्हीं देहों में प्राप्त होता है, इस लिये सर्वदा मेरा स्मरण करते हुये युद्ध करो और मुझ में मन और बुद्धि को अर्पण करो तो मुझी में प्राप्त होगे इस में कुछ संशय नहीं

हे पार्थ! अभ्यासयोग युक्त पुरुष एकाग्रचित्त से स्मरण हुये उसी प्रकाशात्मक परम पुरुष को प्राप्त होते हैं जो पुरुष परब्रह्म को सर्वज्ञ, अनादि, जगत् का नियम करने वाला, परमाणु से भी सूक्ष्म, सम्पूर्ण जगत् का पालन करने वाला, अचिन्त्य रूप, सूर्य्य की नाईं प्रकाशक और प्रकृति से पर जान कर अन्त काल में स्थिर मन और योगाभ्यास से भक्ति युक्त भ्रूके मध्य प्राण का अच्छी भांति से निवेश करके

उस प्रकाशात्मक परम पुरुष का स्मरण करता है वह उसी दिव्य पुरुष में प्राप्त होता है, जिस को वेदान्ती लोग अविनाशी परब्रह्म कहते हैं और राग दि से रहित यती लोग जिस में प्रविष्ट होते हैं और तपस्वी लोग जिस के जानने की इच्छा से ब्रह्मचर्य व्रत आचरण करते हैं उस मोक्ष रूप स्थान को हम संक्षेप में तुम से अब कहते हैं.

सम्पूर्ण द्वारों को रोक अपने मन को हृदय मे स्थिर कर भ्रूमध्य में प्राण को रख योग धारण से युक्त हो कर रहे, इस के पीछे एक अक्षर रूपी पर ब्रह्म प्रणव को उच्चारण करता हुआ जो मुझ को स्मरण करता है वह शरीर त्यागने पर उत्तम गति को प्राप्त होता है ॥

हे पार्थ ! जो पुरुष निरन्तर अनन्यचित्त होकर प्रतिदिन मेरा स्मरण करता है ऐसे एकाग्र चित्त वाले योगी के मैं निकट हूं क्योंकि परमपुरुषार्थ को प्राप्त होकर फिर दुःख के कारण अनित्य जन्म को नहीं पाते। हे अर्जुन ! यहां से ब्रह्मलोक तक जाकर फिर मृत्युलोक में आते हैं क्योंकि ब्रह्मलोक भी विनाशी है परन्तु मुझ में प्राप्त होने वाले पुरुष फिर नहीं फिरते हैं, जो लोग योगबल से कार्य्य ब्रह्म के दिन और रात्रि को सहस्र चारोंयुग के तुल्य जानते हैं वे लोग अहोरात्र के जानने वाले कहलाते हैं, अव्यक्तरूप कारण से सम्पूर्ण भूत दिन के आरम्भ में उत्पन्न होते हैं ऐसे ही रात्रि के आगम में उसी कारण में लय होते हैं ॥

हे अर्जुन। सम्पूर्ण भूत बारंबार जन्मते हुये रात्रि के आगम में लय होते हैं। फिर कर्मादि के आधीन होकर वही दिन के आरम्भ में उत्पन्न होते हैं, अव्यक्तभाव जो चराचर कारण से पर और अनादि है सो सम्पूर्ण भूतों के नष्ट होने से भी आप नहीं नष्ट होता, वह अव्यक्त अविनाशी कहलाता है उसी को विवेकी लोग उत्कृष्ट गति कहते हैं कि जिस को प्राप्त होकर फिर नहीं फिरते वह स्थान मेरा है ॥

हे पार्थ! जिस कारण भूत में सम्पूर्ण भूत स्थित हैं और जिस से सम्पूर्ण यह चराचरात्मक जगत् व्याप्त है वह पर पुरुष केवल एकाग्र भक्ति से प्राप्त होने के योग्य है दूसरे उपाय से नहीं ॥

हे अर्जुन! जिस काल में योगी लोग जाकर फिरते और नहीं फिरते हैं उस की अवस्था कहता हूं, अर्चिरभिमानी और दिवसाभिमानी और शुक्लपक्ष अभिमानी छः महीने उत्तरायण के स्वरूप हैं इस उत्तरायण मार्ग के जाने वाले ब्रह्मज्ञानी लोग सूर्यज्योति द्वारा ब्रह्म को प्राप्त होते हैं, धूमाभिमानी और रात्रिअभिमानी और कृष्ण पक्ष अभिमानी तीनों देवता दक्षिणायन के स्वरूप हैं इस मार्ग के जाने वाले कर्म योगी चन्द्रज्योति द्वारा स्वर्ग को प्राप्त हो वहां इष्टापूर्त्तादि कर्म फल का अनुभव कर के फिर फिरते हैं, शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष पूर्वोक्त दोनों गति जगत् के हेतु नित्य और इष्ट है इन दोनों में शुक्ल पक्ष गति वाले नहीं फिरते और कृष्ण पक्ष गति वाले फिरते हैं ॥

हे पार्थ अर्जुन ! यह दोनों मार्ग जानने वाला योगी कभी मोह को नहीं प्राप्त होता, इस लिये सर्वदा तुम योगाभ्यास करो ॥

चारों वेद जानने से यज्ञ, तप और दान करने से जो फल प्राप्त हैं इन से बढ़ कर पूर्वोक्त तत्त्व के जानने से उत्तम जगत् का कारण भूत मोक्ष रूप स्थान को प्राप्त होता है ॥

तेतीसवां अध्याय

श्रीमद्भगवद्गीता का नवां अध्याय ॥

॥ राज विद्या राज गुह्य योग निरूपण ॥

श्री भगवान् ने कहा यह उपासना सहित गोपनीय ज्ञान तुम से हम कहेंगे क्योंकि तुम निर्दोष हो। जिस के जानने से इस अशुभ संसार से मुक्त होगे, यह उत्तम विद्या गोपनीय पवित्र और अत्यन्त श्रेष्ठ इष्ट फल और धर्म सहित है इस लिये यह सुख से तुम्हारे करने के योग्य है क्योंकि इस का फल अक्षय है ॥

हे अर्जुन ! इस मोक्ष के देने वाले धर्म श्रद्धारहित हो पुरुष मुझ को नहीं प्राप्त होता फिर इस मृत्युरूप संसार में आता है, यह सम्पूर्ण जगत् मुझ से व्याप्त है और मैं अव्यक्त मूर्ति हूं और चराचर आदि सम्पूर्ण भूत मुझी में स्थित हैं मैं

उन में नहीं, सम्पूर्ण भूत मुझ से स्थित नहीं यह मेरा ऐश्वर्ययोग देखो और भूतों का धारण करने वाला मैं ही हूं परन्तु उन में स्थित नहीं मेरा स्वरूप ही उन को पालन करने वाला हूं, जैसे सर्वदा महान् वायु चारों ओर व्याप्त होकर आकाश में स्थित है परन्तु असङ्ग वैसे ही जरायुजादि चारों प्रकार के भूत मुझ में स्थित जानो ॥

हे अर्जुन ! सम्पूर्ण भूत प्रलय काल में मेरी त्रिगुणात्मक माया में लीन होते हैं फिर उन्हें कल्प के आदि में मैं उत्पन्न करता हूं, मैं अपनी त्रिगुणात्मक माया को स्वीकार करके बारंबार प्रलय में लीन हुये हुये फिर सम्पूर्ण भूतों को उनके कर्मानुसार उत्पन्न करता हूं ॥

हे अर्जुन ! पूर्वोक्त कर्म मुझ को बन्ध के कारण नहीं हो सके क्योंकि उन कर्मों से मैं इच्छा रहित और उदासीन की नाईं स्थित हूं ॥

हे अर्जुन ! मुझ साक्षी भूत के निमित्त से त्रिगुणात्मक प्रकृति चराचर जगत् को उत्पन्न करती है और इसी हेतु से सम्पूर्ण जगत् मेरे निमित्त मात्र से बारंबार उत्पन्न और नष्ट हो जाता है ॥

अविवेकी लोग मुझ को मनुष्य देह के सम्बन्ध से मनुष्य ही जान कर अनादर करते हैं परन्तु सब भूतों के कारण ईश्वर स्वरूप परमभाव मेरा नहीं जानते उन्हें आसुरी प्रकृति में स्थित जानो जिनकी आशा कर्म और ज्ञान निष्फल

है और उनका चित्त विक्षिप्त और सिद्धा अनुमानादि कर्म स्वभाव से युक्त है उनकी बुद्धि भी मोहाक्रान्त है ॥

हे अर्जुन ! जो विवेकी लोग सात्विक धर्म के आश्रयण हो अनन्य चित्त हो मुझ को नाश रहित जगत् का कारण जान कर भजते हैं उन्हें दैवी प्रकृति स्थित जानो, ऐसे लोग सर्वदा मेरे भजन और दृढ़ नेम से मेरे जानने के हेतु उद्योग करते रहते हैं और भक्ति से युक्त हो नमस्कार करते हुये स्थिर चित्त से मेरी उपासना करते हैं, कोई लोग ज्ञान योग से पूजा करते हुये मेरी उपासना करते हैं और अद्वैत उपास्य और उपासक भाव से बहुधा विश्वरूप मुझ को जानते हैं। वेद विदित अग्निष्टोमादि यें धर्मशास्त्र उक्त पांचों यज्ञ पितरहेतु श्राद्धादि औषधी होमका मन्त्र सामग्री और अग्नि होमादि सब मैं ही हूं ॥

इस जगत् का पिता, माता, धाता और पितामह मैं ही हूं, ज्ञेय पवित्र ओंकार और ऋग्यजु सामवेद भी मैं ही हूं, कर्म फल, जगत् का पोषण कर्त्ता और नियन्ता, साक्षी, भोग स्थान, रक्षक, हितकर्त्ता, सृष्टिकर्त्ता, संहार कर्त्ता, स्थित धर्म का आधार, आलयका स्थान और अविनाशी कारण मैं ही हूं, सन्ताप करने वाला, सूर्य का तेज, जल आकर्षण करने वाला और विसर्जन करने वाला, जीवन मृत्यु और सत् असत्। हे अर्जुन ! मैं ही हूं ॥

तीनों वेद के उपासना करने वाला, यज्ञशेष सोमलता भन्न के अनन्तर कल्मषरहित हो अग्निष्टोमादि योगसमाप्त

कर के स्वर्ग लोक को पूार्थना करते हुये वे लोग अपने पुण्य के अनुसार इन्द्र लोक को दिव्य देव भुवन का अनुभव करते हैं ॥

वह लोग विशाल स्वर्ग लोक का अनुभव करके पुण्य रहित होने से फिर मृत्युलोक में आते हैं इसी प्रकार से त्रैवेद के अनुसार चलने वाले कामादि भोगों की इच्छा से गमनागमन को प्राप्त होते हैं, जो लोग केवल मेरे आश्रय होकर अन्य को त्याग कर उपासना करते हैं उन्हें मैं ही नित्य कुशल युक्त करता हूं जो लोग अन्य देवता की भक्ति करके श्रद्धायुक्त पूजा करते हैं वह भी अविधि पूर्वक मेरी ही पूजा करते हैं ॥

सम्पूर्ण यज्ञों का भोक्ता और स्वामी मैं ही हुं इस निश्चय से जो लोग मुझे नहीं जानते वही संसार में गिरते हैं। इन्द्रादि देवताओं के व्रत वाले, पितरों के उपासक, विनायकादि भूतों के उपासना करने वाले अपने उपास्य में प्राप्त होते हैं और मेरे उपासक मुझ में लय होते हैं जो भक्ति करके पत्र, पुष्प, फल और जल मुझे अर्पण करता है उस निश्चय चित्त वाले का फल और पुष्पादि सब मैं लेता हूं ॥

हे अर्जुन ! जो तुम करते, खाते, होम करते या दान और तप करते हो सो वह सब मुझे अर्पण करो। इस प्रकार के शुभाशुभ कर्म अर्पण करने से कर्म बन्धन से मुक्त होगे क्योंकि संन्यास योग युक्त चित्त वाले मुक्त होकर मुझी में प्राप्त होते हैं। मैं सम्पूर्ण भूतों में सम हूं और मेरा न कोई शत्रु है

न प्रिय जो भक्ति से मेरा भजन करते हैं वह मुझ में हैं और मैं उन में हुं । जो पुरुष दुराचारी भी हो परन्तु अनन्य भक्त होकर मुझ को भजता है वह साधु मानने के ही योग्य और शुभकारी है ॥

हे अर्जुन ! जिसकी बुद्धि धर्म में शीघ्र होती है वह पुरुष बारम्बार शान्ति को प्राप्त होता है यह बात तुम निश्चय करके जानो कि मेरा भक्त नाश को कभी प्राप्त नहीं होता ॥

हे अर्जुन ! नीच लोग, स्त्री, वैश्य और शूद्रादि भी मेरी शरणागत होने से उत्कृष्ट गति को प्राप्त होते हैं, सुकृती ब्राह्मण और भजन शील राज ऋषि लोगों के लिये संगति प्राप्त होने में क्या सन्देह है, इस लिये तुम इस अविनाशी लोक में शरीर पाकर मेरा भजन करो ॥

केवल मेरी ओर चित्त लगा कर मेरी भक्ति में दृढ़ हो कर मेरी पूजा और मुझे नमस्कार करते हुये मुझी को उत्तम गति समझ मुझ में चित्त एकाग्र करने से मुझ को प्राप्त होगे ॥

चौतीसवां अध्याय

—:-o-:—

श्रीमद्भगवद्गीता का दसवां अध्याय ॥

॥ विभूत योग निरूपण ॥

भगवान् ने कहा हे महाबाहो अर्जुन ! और एक उत्तम

बात सुनने के योग्य है वह सुनो कि जिस कों मैं प्रेम से तुम्हारे हित के हेतु कहता हूं, इन्द्रादि देवगण और वशिष्ठादि महा ऋषि लोग मेरी उत्पत्ति नहीं जानते मैं सम्पूर्ण देवताओं और ऋषियों का आदिकारण हूं, जो पुरुष मुझ को उत्पत्ति रहित सनातन और सम्पूर्ण लोकों का ईश्वर जानता है वह पुरुष मनुष्यों में मोह रहित हो कर सम्पूर्ण पापों से मुक्त होता है ॥

बुद्धि अर्थात् सारासार विवेकी उत्तम ज्ञान, विषय निर्मोह सहना, सत्य और आन्तरीय इन्द्रियों का निग्रह, सुख, दुःख उत्पत्ति प्रलय, भय, निर्भय, अहिंसा, समता, तुष्टि, तप, दान, यश और अयश प्राणियों के यह सब नाना प्रकार के भाव मुझी से उत्पन्न होते हैं ॥

भृगु आदि सात महाऋषि, स्वायम्भवादि मनु और सनकादि चारों ज्ञानी योंही मेरे संकल्प से हुये जिनकी यह सब ब्राह्मणादि प्रजा लोक में वर्त्तमान है, जो पुरुष मेरी विभूति और ऐश्वर्य लक्षण योग को यथार्थ रूप से जानता है वह निश्चयल चित्त से एकाग्र समाधि में युक्त होता है इस में कुछ सन्देह नहीं क्योंकि इस सम्पूर्ण जगत् का भृगु आदि रूप से उत्पत्ति का रूप मैं हीं हूं और मुझीं से बुद्धि ज्ञान इत्यादि सम्पूर्ण भाव प्रवृत्त होते हैं ऐसा जान कर विवेकी लोग प्रीति युक्त होकर मेरा भजन करते हैं, मुझ में चित्त लगा और चक्षु आदि बाह्य इन्द्रियों को निरोधकर एक दूसरे

का प्रमाण पूर्वक बोध करते हुये सर्वदा मुझ को अनादि कहते हुये सन्तोष और कैवल्य को प्राप्त होते हैं ॥

वह जो सर्वदा प्रीति से भजन करते और चित्त युक्त रहते हैं उनको मैं ऐसा विवेक ज्ञान देता हूं कि जिस से वे मुझको प्राप्त होते हैं, उनके अनुग्रह के हेतु मैं उनकी बुद्धि प्रवृत्ति में स्थित हो प्रकाशमान, ज्ञानरूप, दीपरूप से ज्ञान जनित संसार रूपी अन्धकार को नाश करता हूं ॥

अर्जुन ने पूछा हे कृष्ण ! तुम्हीं परब्रह्म, चराचर के आश्रम, परमपवित्र, सनातन, नित्य पुरुष, शब्दवाचक प्रकाश स्वरूप, सम्पूर्ण देवताओं के आदि उत्पत्ति रहित और व्यापक हो, भृगुआदि महाऋषि और नारद जो देवऋषि आसित और देवल और व्यास इत्यादि सब तुम्हारा स्वरूप कहते हैं और तुम भी मुझ से कहते हो ॥

हे केशव ! जो तुम मुझ से कहते हो वह मैं सब यथार्थ जानता हूं क्योंकि तुम्हारा स्वरूप देवता और दानव लोग भी नहीं जानते ॥

हे पुरुषोत्तम ! तुम आपही अपने स्वभाव से आप को जानते हो और तुम भूतों को उत्पन्न करने वाले और उन के नियमन करने वाले हो और तुम देवताओं के देवता और जगत् के प्रभु हो ॥

हे कृष्ण ! जिन विभूतियों से तुम इन सम्पूर्ण लोकों में व्याप्त होकर रहते हो तिन के कहने के योग्य तुम्हीं हो क्यों कि वह विभूतियां अति अद्भुत हैं ॥

हे योगि पुरुष भगवन् ! मैं तुम्हें सर्वदा चिन्तन करते हुये कौन सी विभूति से जानूं और तुम किन २ पदार्थों में स्मरण करने के योग्य हो ॥

हे जनार्दन ! फिर तुम विस्तार करके अपना योग ऐश्वर्य और विभूति कहो क्योंकि इस अमृत वाक्य के सुनने से मैं तृप्त नहीं होता ॥

श्री कृष्ण ने कहा हे कुरुश्रेष्ठ अर्जुन ! फिर मैं तुम से अपनी दिव्य आत्म विभूतियों में से जो प्रधान हैं तिन्हें निरूपण करता हूं क्योंकि मेरी विभूतियों के विस्तार का अन्त नहीं है ॥

हे गुडाकेश अर्जुन ! मैं सब भूतों के आनित्य गुणाश्रचि में सर्वज्ञत्व गुणों से नियंता हो कर स्थित हूं और सब भूतों का आदि, मध्य, अन्त भी मैं ही हूं, बारह सूर्यों में वामन, प्रकाशित विषयों में कान्तयुक्त सूर्य व यू में मरीचि और नक्षत्रों में चन्द्र भी मैं ही हूं, चार वेदों में सामवेद, देवताओं में इन्द्र, ज्ञान इन्द्रियों में मन और भूतों में ज्ञानशक्ति भी मैं ही हूं, रुद्रों में शङ्कर यक्ष, राक्षसों में कुबेर, आठ वसुओं में अग्नि और शिखरवाले पर्वतों में मेरु मैं ही हूं ॥

हे पार्थ ! पुरोहितों में मुख्य बृहस्पति, सेनापतियों में कार्तिकेय और तड़ागों में सागर मैं ही हूं, महाऋषियों में भृगु और वाणियों में प्रणव, यज्ञों में जपयज्ञ और स्थावरों में हिमाचल मैं ही हूं, सम्पूर्ण वृक्षों में पीपल, देवऋषियों में नारद,

गन्धर्वों में चित्ररथ, और सिद्धों में कपिलमुनि मैं ही हूं, घोड़ों में उच्चैःश्रवा नामक जो क्षीर सागर में उत्पन्न हुआ २ अश्व है, गजों में ऐरावत और मनुष्यों में राजा मैंही हूं, शस्त्रों में वज्र, गौवों में कामधेनु, प्रजा उत्पत्ति करने वालों में कामदेव और सर्पों में वासुकि मैं ही हूं निर्विषसर्पों में अनन्त अर्थात् आदि शेष, जलवासियों में वरुण, पितृगणों में अर्यमा, दण्ड करनेवालों में यमराज, दैत्यों में प्रह्लाद, नाश करने वालों में काल, मृगों में राजसिंह, पक्षियों में गरुड़, पवित्र करनेवालों में वायु. शस्त्रधारियों में राम, जलचर मच्छादिकों में मगर और नदियों में गंगा मैं ही हूं ॥

उत्पन्न वस्तुओं में आदि अन्त में और मध्य में, विद्याओं में वेदान्त विद्या, वादियों में वाद वर्णों में अकार, समासों में समूहार्थक द्वन्द्व समास, क्षणादि कालों में अक्षयकाल, पालन करनेवालों में सब कर्मफल विधाता धाता, हरणहारों में मृत्यु, भविष्यकल्पों मे अभ्युदय अर्थात् इष्ट अर्थ और लाभ मैंही हूं और स्त्री शब्दवाच्य में कान्ति, वाणी, सम्पत्ति, स्मृति बुद्धि, धारणाशक्ति और क्षमा मैं ही हूं ॥

साम ऋचाओं में इन्द्रस्तुति की बृहत्साम ऋचा, छन्दों में गायत्री छन्द, महीनों में अगहन मास, ऋतुओं में वसन्त ऋतु, छलियों में जुआ. तेजस्वियों में तेज, जयशीलों में जय, उद्योगियों में व्यवसाय और सत्त्ववालों में सत्त्व रूप मैं ही हूं ॥

वृष्णियों में वासुदेव मैं जो तुझे उपदेश कर रहा हूं, पाण्डवों में तु भी मेरी विभूति है, मुनि अर्थात् वेदार्थ वन शीलों में वेदव्यास और कवियों में शुक्राचार्य मैं ही हूं ॥

शिक्षा करने वालों में दण्ड, जय इच्छा करने वालों में नीति, गोपनीयों में मौन और ज्ञानियों में ज्ञान मैं ही हूं ॥

हे अर्जुन ! सम्पूर्ण भूतों का जो कारण है सो मैं ही हूं क्योंकि विना कारण कुछ नहीं हो सकता इस लिये चराचर का कारण मैं ही हूं ॥

हे परंतप अर्जुन ! मेरी दिव्य विभूतियों का अन्त नहीं संक्षेप से इन सब विभूतियों का विस्तार मैंने कहा, जो जो विभूति तेज सम्पति युक्त वस्तु विस्तार से हैं सो २ मेरे अंश से उत्पन्न जानो ॥

हे अर्जुन ! इस अनेक प्रकार के भेद ज्ञान से क्या होगा क्योंकि यह सम्पूर्ण वस्तु विस्तार में हैं सो मेरे अंश से उत्पन्न जानो ॥

चौतीसवां अध्याय

—०—

श्री मद्भगवद्गीता का दसवां अध्याय ॥

॥ विश्व रुप दर्शन ॥

अर्जुन ने कहा हे श्रीकृष्ण ! मेरे शोक निवृत्ति के हेतु गोप

नीय परमार्थतत्व अध्यात्मविषयक जो वाक्य आपने कहा उस से मेरा मोह नाश हुआ मैंने भूतों की उत्पत्ति और नाश वारंवार तुम से सुना और तुम्हारा सृष्टि कर्तृत्वादि महात्म्य जो अक्षय है वह भी सुना। हे परमेश्वर! जिस प्रकार से तुम ने अपना स्वरूप वर्णन किया है वह तुम्हारा ईश्वर सम्बन्धी विश्वरूप मैं देखने की इच्छा करता हूं, हे प्रभु योगियों के ईश्वर! यदि मैं तुम्हारे विश्वरूप दर्शन के योग्य हूं तो तुम सनातन ईश्वर रूप को मुझे दिखाओ॥

भगवान् ने कहा हे पार्थ अर्जुन! मेरे लाखों प्रकार के रूप जो नानाविधि के और दिव्य अनेक वर्ण आकृतियों से युक्त हैं तिन्हे देखो, हे पार्थ अर्जुन! बारह सूर्य, आठ वसु, ग्यारह रुद्र, दो अश्विनी देवता, उंचास वायु और बहुत से आश्चर्य कि जो पहिले कभी न देखे तिन्हें देखो॥

हे गुडाकेश अर्जुन! मेरे शरीर में एकत्र स्थित चराचर सहित सम्पूर्ण जगत् देखो इस के अनन्तर और भी जो वस्तु देखने की इच्छा करो वह सब देख लो, तुम मुझ को इन आखों से न देख सकोगे इस लिये मैं तुम्हें दिव्यदृष्टि देता हूं उस दृष्टि से तुम मेरे विश्वरूप योग को देखो॥

योगियों के ईश्वर श्रीकृष्णचन्द्र ने अर्जुन को इस कहने के अनन्तर अपने उत्कृष्ट विश्वरूप का दर्शन कराया॥

अनेक मुख, अनेक नेत्र, अनेक प्रकार के विचित्र दर्शन, अनेक प्रकाशमान भूषणों से युक्त और अनेक शस्त्र धारण

किये दिव्यमाला और वस्त्रा से अलंकृत और दिव्य गन्धों से लिप्त और सम्पूर्ण आश्चर्यों से युक्त स्वतः प्रकाशमान, सर्वत्र मुखवाला; अनन्तरूप दिखाया, यदि आकाश में सहस्रों सूर्यों की प्रभा एकही समय उदय हो तो भी उस परमेश्वर की प्रभा के सदृश किंचित् हो ॥

उस समय अर्जुन देवों के देव श्रीकृष्ण के शरीर में सम्पूर्ण जगत् एकत्र स्थित यद्यपि रहा तथापि अनेक प्रकार के विभाग से देखतारहा ॥

इस के पीछे अर्जुन ने आश्चर्ययुक्त हो कर रोमांचसहित श्रीकृष्णचन्द्र को दण्डवत कर हाथ बांध कर निवेदन किया ॥

हे कृष्णदेव ! तुम्हारे शरीर में सम्पूर्ण देवताओं को जरायुजाण्डजादि प्राणी समूह, कमलासन पर बैठ हुये ब्रह्मा देव, महादेव और सम्पूर्ण ऋषियों और दिव्य वासुकि आदि नागों को मैं देखता हूं ॥

हे विश्वेश्वर श्रीकृष्ण ! तुम्हारे अनके बाहु, उदर और मुख अनन्तरूप देखता हूं परन्तु तुम्हारे विश्वरूप का आदि, अन्त और मध्य तीनों नहीं पाता ॥

हे श्रीकृष्ण ! तुम्हें किरीट गदा चक्र धारन किये तेजकी खानि और सब प्रकाशमान देखता हूं और तुम प्राणी से जानने के योग्य नहीं अग्नि और सूर्य की प्रकाशित प्रभा की नाई दीप्त हो इस लिये तुम कठिन से दिखलाई देते हो ॥

हे श्री कृष्ण ! तुम अक्षय परम उत्कृष्ट और ज्ञानियों के जानने के योग्य हो और तुम्हीं इस जगत् के परमाश्रय और

तीनों काल में अव्यय और मनु आदि धर्म के पालन करने वाले हो इस लिये तुम मुझे अनादि पुरुष जान पड़ते हो ॥

हे श्रीकृष्ण ! तुम आदि मध्य और अन्त रहित हो, तुम्हारे पराक्रम का अन्त नहीं, तुम अनन्त बाहु हो, चन्द्र सूर्य्य तुम्हारे नेत्र हैं, दीप्त अग्नि की नाईं तुम्हारा मुख है और अपने तेजसे इस जगत् को संताप करते हो ॥

हे श्रीकृष्ण परमात्मा ! केवल तुम्हीं आकाश, पृथ्वी और उनके मध्य और आठों दिशाओं में व्याप्त हो और तुम्हारा ऐसा उग्ररूप देख कर तीनों लोक कम्पायमान हैं ॥

हे श्रीकृष्ण ! सम्पूर्ण देवता तुम्हारे शरणागत होते हैं और कोई भय से हाथ बांध अपनी रक्षा के हेतु तुम्हारा जय जय कार करते हैं और सब महाऋषि सिद्ध लोग स्वस्ति पढ़ कर अनेक प्रकार की स्तुति से तुम्हारा स्तोत्र करते हैं, एकादश रुद्र, द्वादश आदित्य, आठों वसु, दोनों अश्विनी कुमार, उञ्चासवायु पितृगण, गन्धर्व, असुर, यक्ष और सिद्धादि आश्चर्य्य युक्त हो तुम को देखते हैं ॥

हे महाबाहो श्रीकृष्ण ! तुम्हारा विशाल रूप बहुत से मुख, नेत्र, बाहु, पेट, जंघा, पाद और अनेक बड़े बड़े दांतों से कराल है जिसे लोग देख कर भय को प्राप्त हुए और वैसा ही मैं भी भय से कम्पायमान हूं ॥

हे विष्णु ! तुम्हारा स्वरूप आकाश से छुये हुये प्रकाशवान् और अनेक वर्णों से युक्त है और खुला मुख बड़े बड़े

नेत्रों से प्रकाशित है वह उग्र देख कर मेरा मन संताप को प्राप्त हुआ और मुझ में धैर्य्य और शमही न रहा ॥

हे जगन्निवासी श्री कृष्ण ! तुम्हारे बड़े २ दांतों से भयानक मुख प्रलयकाल को अग्नि के समान देख कर दिशा-भ्रम हुआ और सुख विस्मरण हुआ इस लिये हे देवेश ! मैं तुम्हारे शरणागत हुं मुझ पर अनुग्रह करो ॥

हे श्री कृष्ण ! यह धृतराष्ट्र के पुत्र राजमण्डली सहित भीष्म, द्रोण और कर्ण हमारे योद्धाओं के साथ तुम्हारे भयानक अति उग्र मुख में शीघ्रता करते हुए चले जाते हैं, उन में से कोई तुम्हारे दांतों में लटके हुए और कोई फटे मस्तक से देख पड़ते हैं । जैसे नदियों के जल का वेग सीधे समुद्र में शीघ्रता से जाता है वैसे ही यह भीष्म, द्रोण आदि राजा लोग तुम्हारे प्रकाशित मुख में चले जाते हैं, जैसे जलती हुई अग्नि में पतङ्ग बड़े वेग से नाश होने के लिये तुम्हारे मुख में वेग से जाते हैं ॥

हे विष्णु ! तुम अपने प्रज्वलित मुख में चारों ओर से सम्पूर्ण लोगों को निगलते हुए खाते जाते हो और तुम्हारा प्रकाश अपने पराक्रम से जगत् को घेर कर सन्ताप करता है ।

हे देवताओं में श्रेष्ठ श्री कृष्ण चन्द्र जी ! अब आप प्रसन्न होकर मुझ से यह कहिये कि आप भयानक रूप कौन हैं आप को नमस्कार है यह मैं आदि पुरुष जो आप हैं तिन से जानना चाहता हूं क्योंकि आप की प्रवृत्ति को नहीं जानता हुं ॥

तब भगवान् श्री कृष्ण चन्द्र जी बोले कि हे अर्जुन ! मैं संसार का नाश करने वाला बढ़ाहुआ काल रूप हुं, मनुष्यों के नाश करने के लिये यहां प्रवृत्त हुआ हूं, पांचों पांडवों को छोड़ कर और जितने शत्रु के व तुम्हारे योद्धा हैं कोई शेष न रहेंगे, अर्थात् यहीं पर सब का नाश हो जायगा तिस से हे अर्जुन ! तुम उठो यश को प्राप्त होवो और शत्रुओं को जीत कर ऐश्वर्य सहित राज को भोग करो, शत्रु जन पहिले ही से हम से नाश किये हुए मानो। तुम केवल निमित्त मात्र ही होगे और संहार तो सब को मैं ही करूंगा। द्रोणाचार्य, भीष्म, जयद्रथ, कर्ण तथा और जो शत्रुओं में श्रेष्ठ २ योद्धा हैं वह मुझ से नाश किये हुए समझिये अर्थात् मैं अपनी काल दृष्टि से सब की आयू क्षीण कर दूंगा और तुम तो संग्राम में वैरियों के जीतने वाले हो, शोच छोड़ कर शत्रुओं से युद्ध करो॥

तब किरीटी अर्जुन ने कृष्ण के वाक्य सुन कर हाथ जोड़ कर कम्पायमान हो भय से नम्र हो गद्गदवाणी से नमस्कार किया और पूछा हे श्री कृष्ण ! तुम्हारे महात्म्य के सङ्कीर्तन से जगत् सन्तोष और अनुराग को प्राप्त होता है, राक्षसगण भय से चारों ओर भागे जाते हैं और सिद्धों का समूह तुम को नमस्कार करता है सो यह युक्त ही है॥

हे कृष्ण ! महात्मा सिद्धगण क्यों न तुम को नमस्कार करेंगे क्योंकि तुम ब्रह्मा के गुरू और जनक भी हो और

तुम अनन्त और देवताओं के ईश और जगत् के निवासस्थान और अविनाशी हो और व्यक्त अव्यक्त से पर भी तुम्हीं हो । हे अनन्तरूप श्रीकृष्ण ! तुम्हीं देवताओं के आदि और पुराण पुरुष और जगत् के आदि कारण और जाननेवाले और जाननेयोग्य वस्तु और मोक्षस्थान भी तुम्हीं सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त हो ॥

हे श्रीकृष्ण ! तुम्हीं वायु, यम, अग्नि, वरुण, चन्द्र, प्रजापति, ब्रह्मा और ब्रह्मा के भी जनक हो मैं सहस्रवार आप को नमस्कार कर और फिर बारंबार नमस्कार करता हूं ॥

हे अमितपराक्रमी ! तुम को आगे पीछे और सर्वत्र नमस्कार करता हूं क्योंकि सर्वत्र सर्वरूप तुम्हीं हो और तुम्हारी गति का अन्त नहीं, सर्व में व्याप्त और सर्व से पर भी तुम्हीं हो । तुम को मित्र जानकर हे श्रीकृष्ण ! हे यादव ! सखा करके अमर्य्यादा वचन जो मैंने आप की महिमा न जानकर कहा है सो अविवेकता या प्रीति से कहा है उसे क्षमा करना चाहिये ॥

हे श्रीकृष्ण ! जो कुछ उठते, विहार शयन, आसन अथवा भोजन के समय एकान्त में या जनों के सामने आप का असत्कार मुझ से हुआ है उसके क्षमा के लिये मैं आप से हे अच्युत ! प्रार्थना करता हूं । इस चराचर लोक के आदि कारण और पूज्य गुरू और श्रेष्ठ भी तुम्हीं हो क्योंकि तुम्हारे प्रभाव के सामने कोई नहीं है, इसलिये स्वर्ग, मर्त्य,

पाताल तीनों लोक में तुम्हारे समान और तुम से अधिक कोई नहीं, आप को नमस्कार कर के प्रार्थना करता हूं क्योंकि आप स्तुति के योग्य और ईश्वर हो। जैसे पिता पुत्र का, सखा अपने मित्र का और अपने प्रिय का सहन करता है वैसे ही आप हमारे अपराध को क्षमा कीजिये ॥

हे जगन्निवास ! पहिले जो विश्वरूप तुम्हारा कभी नहीं देखा वह देख कर हर्ष को प्राप्त हुआ अब मेरा मन व्याकुल है इसलिये पहिला रूप दिखावो और हे देवेश ! मुझ पर अनुग्रह करो, किरीट गदा धारण किये और चक्र हाथ में लिये हुये आप को देखा चाहता हूं। वैसे ही चतुर्भुज रूप से युक्त हो क्योंकि आप सहस्र बाहु और विश्व मूर्त्ति हो ॥

श्रीकृष्ण ने कहा हे अर्जुन ! हमारी प्रसन्नता और आत्म योग से इस परम उत्कृष्टरूप का तुम को दर्शन हुआ और यह रूप मेरा तेजोमय विश्व स्वरूप कि जिसका आदि अन्त नहीं तुम्हारे व्यतिरिक्त दूसर ने कभी नहीं देखा ॥

हे कुरु श्रेष्ठ अर्जुन ! इस मनुष्य लोक में वेद, यज्ञ, अध्ययन, दान क्रिया और उग्रतपस्या आदि से यह मेरा स्वरुप तुम्हारे व्यतिरिक्त दूसरे के देखने के योग्य नहीं ॥

हे अर्जुन ! इस प्रकार का मेरा घोर स्वरुप देख कर व्यथा और मोहको मत प्राप्त हो और भय को त्याग कर स्वस्थ चित्त होकर फिर तुम मेरा पूर्व रूप अब देखो ॥

श्री कृष्ण वासुदेव ने इस प्रकार कह कर अर्जुन को अपना पूर्वरूप दिखाया और भगवान् अर्जुन को श्री कृष्ण महात्मा ने शान्त रूप धारण करके प्रेम पूर्वक समझाया ॥

अर्जुन ने कहा हे जनार्दन ! मैं तुम्हारा यह सुन्दर भव्यरूप देख कर अब भय से निवृत्त हो स्वस्थचित्त से अपने स्वभाव को प्राप्त हुआ हूं ॥

श्री भगवान् ने कहा कि हे अर्जुन ! मेरा यह स्वरूप कष्ट से भी देखने के योग्य नहीं सो तुम ने देखा और इस रूप को इन्द्रादि देवता लोग भी सर्वदा देखने की इच्छा करते हैं, मैं चारों वेद, तपस्या, दान और यज्ञादि से इस प्रकार से देखने के योग्य नहीं हूं कि जैसा तुम ने मुझे देखा है ॥

हे परन्तप अर्जुन ! यह मेरा स्वरूप केवल एकाग्र भक्ति ही यथार्थ जानने, देखने और अभेद ज्ञान से युक्त होने के योग्य है और अन्य उपाय से नहीं ॥

हे पाण्डव अर्जुन ! जो मेरे हेतु कर्म करता है, मुझे परम उत्कृष्ट जानता है, रागादि से रहित होकर मेरी भक्ति करता है और सम्पूर्ण भूतों से निर्वैर रहता है वही मुझ को प्राप्त होता है ॥

———

छत्तीसवां अध्याय

—:-०-:—

श्री मद्भगवद्गीता का बारवां अध्याय ॥

॥ भक्ति योग निरूपण ॥

अर्जुन ने पूछा हे श्री कृष्ण ! जो लोग सर्वदा भक्ति मार्ग के अनुसार तुम्हारी उपासना करते हैं और जो अविनाशी निर्गुण परब्रह्म का ज्ञान मार्ग से उपासना करते हैं इन दोनों में से श्रेष्ठ कौन है ॥

भगवान् ने कहा जो लोग मुझ में मन स्थिर करके उत्तम श्रद्धा से युक्त हो सर्वदा एकाग्रचित्त रह मेरी उपासना करते हैं वह मेरे मत के अनुसार अति उत्तम हैं। जो लोग अविनाशी और लक्षण प्रमाण से जानने के योग्य और इन्द्रियों से अविषय और अचिन्त्य और मायारूप प्रपंच में अधिष्ठान रूप से स्थित और स्थिर ऐसे ब्रह्म की उपासना करते हैं। इन्द्रिय ग्राम को रोक कर सर्वत्र समबुद्धि रख कर सर्वत्र भूतों का हित आचरण करते हैं, वे मुझ में प्राप्त होते हैं परन्तु ज्ञान मार्ग वालों को अव्यक्त रूप परब्रह्म में चित्त लगाने से क्लेश होता है क्योंकि देहधारियों को निराकार का जानना ही दुःख है ॥

जो लोग मेरे हेतु संपूर्ण कर्मों को त्याग मुझी को परम पुरुषार्थ जान अद्वैत योग से मुझे ध्यान करते हुये उपासना करते हैं मैं उन को मृत्यु रूपी संसार से बहुत शीघ्र पार

करता हूं यदि वे लोग मुझी में चित्त को एकाग्रता से स्थिर करें ॥

हे अर्जुन ! सङ्कल्प विकल्प के आत्मक मन और व्यवसायात्मक बुद्धि को मुझ में स्थिर करो तो मुझ में प्राप्त होगे इस में कुछ संशय नहीं ॥

हे धनंजय ! यदि मुझ में स्थिर चित्त निवेश न कर सको तो अभ्यास योग से मुझ में प्राप्त होने के लिये प्रयत्न करो, यदि अभ्यास न कर सको तो व्रत आदि को मेरी प्रीति के हेतु आचरण करो क्योंकि मेरी प्रीति के लिये कर्म के आचरण से मोक्ष को प्राप्त होगे यदि मेरी अनुग्रह के हेतु कर्म भी न कर सको तो सम्पूर्ण कर्म ईश्वर अर्पण करके फल त्याग करो और नियमित चित्त हो मेरी ही शरण आवो तो सिद्ध को प्राप्त होगे, अभ्यास योग से ज्ञान मंगल दायक है और ज्ञान से ध्यान श्रेष्ठ और कर्मफल त्याग करना अति उत्तम इस के अनन्तर संसार से शान्ति को प्राप्त होता है। संपूर्ण भूतों से द्वेष रहित हो मित्रता रखे और दीनों पर दया और ममता और अहंकार से रहित हो सुख दुख को समान जाने और क्षमा शील हो ॥

सर्वदा सन्तोषयुक्त और योग युक्त रहे और चित्त एकाग्र दृढ़ निश्चय वाला हो बुद्धि और मन मुझ में अर्पण करे ऐसा मेरा भक्त मुझ को प्रिय है, जिस से जन लोग भय को नहीं प्राप्त होते और न जनों से वह भय को प्राप्त होता है, हर्ष, असहन, भय

और चित्त की व्याकुलता से जो परे है वही मेरा भक्त है अपेक्षारहित, पवित्र, समर्थ, उदासीन और पीड़ा रहित हो संपूर्ण प्रयत्न को त्याग करे वह मेरा अत्यन्त प्रिय है ॥

जो जन हर्ष को न रखता हुआ, न किसी से द्वेष रखता हुआ, न कुछ शोच करता हुआ, न किसी की आशा रखता हुआ अशुभ शुभ फल को त्याग करता हुआ मेरी भक्ति करता है वह मेरा प्रिय है ॥

शत्रु, मित्र और मान अपमान को समान जान और शीत उष्ण और सुख दुःख में समता रख असंग रहे। निंदा और स्तुति को समान जान प्रयोजन के अनुसार वर्ताव करे और जो प्राप्त हो उस से संतुष्ट हो एकत्र निवासी न रहे और बुद्धि स्थिर रखे ऐसा भक्तिमान् पुरुष मुझे बहुत प्रिय है ॥

हे अर्जुन! यह धर्मरूप मोक्ष साधन उपाय जो अमृत तुल्य है जैसा मैंने कहा उसी प्रकार से श्रद्धा पूर्वक मुझ को परम पुरुषार्थ जान कर जो भक्ति से उपासना करते हैं वह मुझे अत्यंत प्रिय हैं ॥

सैंतीसवां अध्याय

—:-६-:—

श्रीमद्भगवद्गीता का तेरहवां अध्याय ॥

क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ स्वरूप निरूपण ॥

अर्जुन ने पूछा कि हे केशव ! प्रकृति पुरुष, क्षेत्र क्षेत्रज्ञ, ज्ञान और ज्ञेय इन्हें मैं जानना चाहता हूं सो कृपा करके कहो ॥

भगवान् ने कहा हे अर्जुन ! इस भोग स्थान शरीर को क्षेत्र कहते हैं इस को जो यथार्थ करके जानता है उस को विवेक ज्ञान वाले पुरुष क्षेत्रज्ञ कहते हैं ॥

हे भारत ! संपूर्ण क्षेत्रों में अनुगत क्षेत्रज्ञ मुझी को जानो क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ का ज्ञान मेरा ही ज्ञान है जो मोक्ष को हेतु है, वह जो स्वरूप से जड़ और इच्छादि जिस का धर्म है और विकाररूप से इंद्रियों से युक्त और प्रकृति और पुरुष के संयोग से होता है वह क्षेत्र है और जो अचिन्त्य ऐश्वर्य आदि प्रभावों से परिपूर्ण है वह क्षेत्रज्ञ है यह संक्षेप में मुझ से सुनो ॥

वशिष्ठादि महाऋषियों ने योग शास्त्रों में और ध्यान धारणा विषयरूप वैराग्यादि रूप में कहा है और अनेक प्रकार के नित्य नैमित्तिक कामविषयक वेद वाक्यों में यजनीय नाना देवतादि रूप से प्रति पादन किया है और ब्रह्म सूत्र अद्वैत प्रति पादक वेदान्त वाक्यों से भी निरूपण किया है जो वाक्य युक्त और पूर्वपक्ष सिद्धान्तों से निर्द्धारण किया गया है ॥

पृथ्वी आदि पंचमहाभूत अहंकार बुद्धि और प्रकृति मिल कर आठ और उस में ज्ञान इन्द्रिय और कर्म इन्द्रिय और मन मिल कर ग्यारह और पंच ज्ञान इन्द्रियों के विषय आदि सब मिल कर चौबीस तत्व हैं ॥

इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख, शरीर, ज्ञानात्मिका, मनो वृत्ति, धैर्य इन शक्ति के समूहों को विकार सहित संक्षेप से क्षेत्र कहा है ॥

अपना गुण बखान न करे, कपट त्याग करे, दूसरे को पीड़ा न दे, क्षमा करे, सीधे मार्ग से चले, गुरु की सेवा किया करे, बाह्य शौच और रागादि से रहित हो आन्तरिक शौच से पवित्र रहे और स्थिर हो मन को रोके रहे, इन्द्रियों के विषय रागादि से विरक्त हो अहंकार त्याग दे, जन्म, मरण, बुढ़ापा, व्याधि और रागादि में दुःख और दोष देखता रहे, पुत्र दारा गृहादि में प्रीति त्याग करना, उन के दुःख से अपने में दुःख न आरोप करना और इष्ट और अनिष्ट वस्तु की प्राप्ति से सर्वदा समान रहे, एकाग्र चित्त से एकान्त में मेरी भक्ति करे, जिस देश में चित्त प्रसन्न हो उस का आश्रयण करे और मूर्खों की सभा में प्रीति न करे, अध्यात्म अर्थात् ईश्वर विषयक ज्ञान को नित्य सेवना करे, तत्त्वज्ञान अर्थात् जीव ईश्वर का अभेद ज्ञान और उस के प्रयोजन मोक्ष के हेतु सर्वदा यत्न करता रहे, अमानित्वादि से ले कर ये सब प्रकार के ज्ञान साधन जो कहे हैं वही ज्ञान कहलाता है इस में व्यतिरेक जो है वह अज्ञान है ॥

ज्ञेय उस वस्तु को कहते हैं जिस के जानने से पुरुष मोक्ष को प्राप्त होता है और वह उत्पत्ति और नाश से रहित और निरतिशय पर ब्रह्म है और वह प्रमाणों से निषेध और विधि

का विषय नहीं, वह पर ब्रह्म हाथ, पांव, नत्र और मुख से सर्वत्र व्याप्त है और श्रोत्र इन्द्रियों से सर्वत्र युक्त हो कर जगत् को घेरे हुए स्थित है, संपूर्ण चक्षु आदि इन्द्रिया से रूपादि गुणों का प्रकाशक है और आप सब इन्द्रियों से राहित असंग और संपूर्ण जगत् का अधार है और सत्वादि गुणों से रहित और उनका भोक्ता और पालक है ॥

बाह्य और अन्तर में सब भूतों के वह परब्रह्म व्याप्त है और स्थावर और जंगम रूप वही है सूक्ष्म होने से वह विवेकियों के निकट है, सम्पूर्ण भूतों में कारण रूप से आप अभिन्न और कार्य्य रूप से भिन्न की नाईं स्थित है और चराचर भूतों का पालक और प्रलय काल में नाशक और सृष्टि काल में उत्पत्ति कर्त्ता भी आप ही है ॥

वह परब्रह्म प्रकाशकों काभी प्रकाशक है और अज्ञानरूपी अंधकार से परे ज्ञान और ज्ञेय और ज्ञान से प्राप्त करने के योग्य और सम्पूर्ण प्राणियों के हृदय में नियन्ता हो कर स्थित भी वही है,इस प्रकार से संक्षेप से क्षेत्रज्ञान और ज्ञेय तत्त्व का लक्षण निरूपण किया मेरा भक्त इस के जानने से ब्रह्मभाव को प्राप्त होने के योग्य होता है ॥

प्रकृति और पुरुष दोनों को अनादि जानो और प्रकृति विकार देह इन्द्रियादि और सुख दुःख आदि गुण को प्रकृति जन्य जानो देहादि कार्य्य और सुख दुःखादि साधन इन्द्रियों को तदाकार परिणाम होने में प्रकृति कारण कहलाती है वैसे ही पुरुष सुख दुःख अनुभव करने में हेतु होता है ॥

पुरुष प्रकृति के कार्य देहादि से युक्त हो कर प्रकृति जन्य सुख दुःख आदि गुणों का अनुभव करता है इस लिये पुरुष के उत्तम और अधमयोनि में जन्म लेने का कारण शुभ अशुभ रागि इन्द्रियों का संग है, पुरुष प्रकृति के निकट होकर साक्षी की नांई देखता और ग्रहण करता है और ईश्वररूप से भर्त्ता और भोक्ता भी है वही पुरुष इस देह में परमात्मा भी कहलाता है ॥

जो पुरुष इस प्रकार से पुरुष को और सुख दुःख आदि गुण सहित प्रकृति को जानता है वह यदि विधिनिषेद की मर्यादा त्यागकर भी चले तोभी जन्मादि से रहित हो कर मुक्त होता है, कोई तो ध्यान युक्त हो अपने शरीर में परमेश्वर को मन से देखते हैं सांख्य योग वाले प्रकृति और पुरुष के भेद से जानते हैं और कर्म फल वाले अष्टांग योग आदि से ईश्वर का देखते हैं, और मन्द बुद्धि वाले पुरुष जो पूर्वोक्त प्रकारों से नहीं जानसकते वह गुरु से ईश्वर का स्वरूप सुन कर उस पर निश्चय करने से संसार रूप मृत्यु से तर जाते हैं ॥

हे अर्जुन ! जो कुच्छ चराचरआत्मक सत्व उत्पन्न होता है वह सब प्रकृति और पुरुष के संयोग आरोप करने से होता है सो जानो, जो पुरुष चराचरआत्मक भूतों में परमेश्वर को समान व्याप्त जानता है और भूतों के नाश होने से ईश्वर को नाश रहित जानता है वह प्राप्ति योग्य वस्तु को भलि भान्ति से जानता है, जो पुरुष ईश्वर को सर्वत्र समान रूप से स्थित देखता हुआ अपने देहादि के साथ उसे नष्ट

नहीं देखता वह उस के अनन्तर मोक्षगति को प्राप्त होता है, जो पुरुष सब प्रकार से शुभ अशुभ कर्मों की कर्त्री प्रकृति को और अकर्त्ता आत्मा को मानता है वही परम गति को जानता है ॥

जब संपूर्ण भूतों में पृथग्भेद देखते हुये प्रलय के समय एक प्रकृति में सब को स्थित देखता है तिस के अनन्तर सृष्टि समय में संपूर्ण भूतों का उसी से विस्तार देखता है तब वह ब्रह्मस्वरूप होजाता है ॥

हे अर्जुन! परमेश्वर अनादि और निर्गुण होने से नाश रहित है यद्यपि संपूर्ण शरीरों में स्थित है तथापि आप कुच्छ नहीं करता और न कर्म फल से लिप्त होता है जैसे आकाश सर्वत्र व्याप्त है परन्तु असंग होने से किसी से लिप्त नहीं वैसे ही यह आत्मा भी संपूर्ण शरीर में व्याप्त है परन्तु किसी से लिप्त नहीं ॥

हे अर्जुन! जैसे सूर्य एक है और संपूर्ण लोक को प्रकाश करता है वैसे ही संपूर्ण क्षेत्र को क्षेत्री अर्थात् आत्मा प्रकाश करता है, इस प्रकार से क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ के भेद को ज्ञान दृष्टि से जो देखता है और भूतों की प्रकृति और मोक्ष का उपाय ध्यानादिक जो जानता है वह माया मुक्त होकर परमपद को प्राप्त होता है ॥

अड़तीसवां अध्याय

—:०:—

श्री मद्भगवद्गीता का चौदवां अध्याय ॥

॥ प्रकृति गुणादि भेद निरूपण ॥

भगवान् ने कहा हे अर्जुन ! फिर मैं तुम से कहता हूं कि तप कर्मादि से ज्ञान उत्तम है और संपूर्ण ऋषि लोग जिस को कर२ परममोक्ष सिद्धि को प्राप्त हुये हैं, इस ज्ञान को प्राप्त जानने से इस संसार में मुक्त होकर मेरे स्वरूप में लय हो जाते हैं इसलिये फिर न सृष्टि में उत्पन्न होते हैं और न प्रलय में नाश को प्राप्त होते हैं, यह कार्य ब्रह्म मयी प्रकृति है सोई योनि है इस में मैं उत्पादक शक्ति को धारण करता हूं उस से संपूर्ण भूतों की उत्पत्ति होती है ॥

हे महाबाहो ! संपूर्ण योनियों में जो मूर्त्तियें उत्पन्न होती हैं ब्रह्म उनकी महद्योनि है और मैं बीज देने वाला पिता हूं ॥

हे महाबाहो ! सत्व, रज और तम तीनोंगुण प्रकृति से उत्पन्न होते हैं और देह में इस अविनाशी ही को बन्धन करते हैं ॥

हे अनघ अर्जुन ! इन तीनों गुणों में से सत्व गुण निर्मल होने से प्रकाशक और निरुपद्रव है इस लिये अपने

कार्य सुख और ज्ञान दोनों के संग से बन्धन करता है अर्थात् क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ का संयोग प्रकाश करता है ॥

हे अर्जुन ! रजोगुण को रागात्मक जानो वह तृष्णा और संग से उत्पन्न है और इष्ट अनिष्ट कर्मों में आशा होने से क्षेत्र का बन्धन करता है ॥

हे अर्जुन ? तम अज्ञान से उत्पन्न है और सम्पूर्ण प्राणियों को भ्रान्ति ज्ञान उत्पन्न करता है प्रमाद आलस्य और निद्रा से क्षेत्रज्ञ को बांधता है, सत्त्वगुण देही को सुख प्राप्त करता है, रजोगुण कर्म में प्रवृत्त करता है और तमोगुण ज्ञान को घेर कर प्रमादादि से युक्त करता है ॥

हे भारत ! रज तम दोनों तिरस्कार करके सत्व गुण देही को सुखादि से युक्त करता है और रजोगुण सत्व और तम इन दोनों को दबा कर देही को रागादि में युक्त करता है वैसे ही तम सत्व और रज दोनों को दूर कर के प्राणियों को प्रमादादि में प्रवृत्त करता है, श्रोत्रादि सब द्वारों में जब शब्दादि का ज्ञान प्रकाश होता है तब उस में सत्व की वृद्धि और सुख आदि का अनुभव जानो, लोभ प्रवृत्ति नाना कर्मों के आरम्भ, अनेक संकल्प विकल्प का होना और इच्छादि रजोगुण की वृद्धि से उत्पन्न होते हैं ॥

हे अर्जुन ! विवेकनाश और अनुद्योग कर्त्तव्य अर्थ का त्याग और मोहादि ये तमोगुण की वृद्धि से उत्पन्न होते हैं जब सत्त्वगुण अधिक होता है तब देही प्रलय अर्थात् मृत्यु

होने पर उत्तम ज्ञानियों के निर्मल लोक में प्राप्त होता है रजोगुण की अधिकता में मृत मनुष्ययोनि में प्राप्त होता है वैसे ही तमोगुण की वृद्धि में मृत मूढ़ अर्थात् पशुयोनि को प्राप्त होता है, पुण्यकर्म्म का सत्त्वप्रधान निर्मलज्ञान फल और रजोगुण का फल दुःख और तमोगुण का फल अज्ञान है, सत्त्वगुण से ज्ञान उत्पन्न होता है, रजोगुण से लोभ और तम से प्रमाद मोह और अज्ञान तीनों उत्पन्न होते हैं, सात्त्विकगुणवाले हिरण्यगर्भलोक को प्राप्त होते हैं और रजोगुणवाले दुःख भोगते हुये मृत्यु लोक में रहते हैं और तमो गुण वाले निकृष्ट योनि में प्राप्त हो कर नरक में जाते हैं ॥

जब विवेकी पुरुष सत्त्वादि गुणों से कर्ता को अतिरिक्त नहीं देखता तो गुण ही का कर्ता जानकर उन से पर साक्षी को जानता है तब वह मेरे स्वरूप को प्राप्त होता है, देही इन देह उत्पन्न सत्त्वादि तीनों गुणों का अतिक्रमण करके जन्म, मरन और वृद्ध अवस्थादि दुःखों से मुक्त हो परमानन्द को प्राप्त होता है ॥

अर्जुन ने पूछा हे प्रभो श्रीकृष्ण ! किन किन चिन्हों से देही इन तीनों गुणों से अतिक्रमण हुआ मालूम होता है और किस प्रचार से युक्त हो कर इन गुणों के पर हो रहता है ॥

भगवान ने कहा हे पाण्डव ! सत्वगुण का कार्य प्रकाश और रजका कार्य प्रवृत्ति और तमका कार्य मोह तीनों स्वभाव

से प्रवृत्त हैं उन में जो दुःख बुद्धि से द्वेष न रक्खे और निवृत्त में इच्छा करे वह गुणातीत है, जो पुरुष उदासीन की नाईं गुणों से अकम्पायमान हो कर स्थिर रहता है और उन को स्वभाव से वर्तमान जान कर स्थिर होता है वह गुणातीत कहलाता है जो पुरुष सुख और दुःख को समान जानता है, स्वस्थमन रहता है, ढेला, पत्थर और सोने को समान देखता है, प्रिय और अप्रिय दोनों उस के निकट समान हैं और निन्दा और स्तुति को (तुल्य गिनता है वह गुणातीत है, मान अपमान जिस के समान तुल्य) हैं जो मित्र और शत्रु दोनों पक्ष को समान जानता है और सम्पूर्ण उद्योग को त्याग करता है वह भी गुणातीत कहलाता है, जो पुरुष मुझ को एकाग्र भक्तियों से सेवन करता है वह इन गुणों से पार होकर मोक्ष के प्राप्त होने के योग्य होता है मैं मोक्ष रूप अविनाशी सनातन अनादि धर्म रूप और निरतिशय सुख स्वरूप परब्रह्म की प्रतिमा हुं जैसे प्रकाश का पुञ्ज सूर्य है ॥

उनतालीसवां अध्याय

—:-०-:—

श्रीमद्भगवद्गीता का पंद्रहवां अध्याय ॥

॥ पुराण पुरुषोत्तम निरूपण ॥

भगवान् ने कहा यह संसार रूपी पीपल का वृक्ष जिस

की जड़ ऊर्ध्व कहे उत्पत्ति और नाश रहित ऐसा पुरुषोत्तम है और अधः हिरण्यगर्भादि जिस की शाखा हैं प्रवाह रूप कर के अनादि है और उस के पत्ते वेद प्रतिपाद्य कर्म फल आदि हैं, इस प्रकार से जो इस संसार रूपी पीपल को जानता है वह वेदार्थ जानने वाला है, दुष्कृति लोग पशु आदि योनि में प्राप्त होकर शाखादि रुप से नीचे व्याप्त हैं और सुकृति लोग देवादि योनि में प्राप्त होकर शाखादि रुप से ऊपर फले हैं और वह शाखा सत्त्वादि गुणों से वृद्धि को प्राप्त हुई हैं उसके अंकुर रुपादि विषय हैं इस मनुष्य लोक में कर्म अनुसार इस की जड़ नीचे ऊपर व्याप्त है॥

इस जगत् में संसार रुपी पीपल का ऊपर मूल नीचे शाखादि रुप नहीं देख पड़ता वैसे ही अन्त आदि और स्थिति भी नहीं जान पड़ती इस प्रबल मूल पीपल को असंग रुप शस्त्र से छेद करे तिस के अनन्तर उस अनादि पुरुष के मैं शरणागत हूं इस विधि उस प्राप्य परम वस्तु की प्राप्ति के लिये उद्योग करे और वह ऐसी वस्तु ऊपर है जिस में लय होकर फिर जन्म को नहीं प्राप्त होता क्योंकि इस अनादि संसार की प्रवृत्ति अनेक प्रकार से फैली है॥

अभिमान और मोह से रहित रागादि दोष के जीतनेवाले सर्वदा आत्मज्ञान में तत्पर कामादि से निवृत्त सुख दुःख शीतोष्ण दोनों को समान जाननेवाले विवेकी पुरुष अविनाशी मोक्षपद को प्राप्त होते हैं, सूर्य, चन्द्र और अग्नि जिसको प्रकाश नहीं कर सक्ते जिसको योगी लोग प्राप्त होकर फिर

नहीं फिरते वह उत्कृष्टधाम मेरा है, यह अनादिजीव स्वरूप में स्थित मेराही अंश है तथापि संसार में भोग के हेतु मन आदि छः इन्द्रियां प्रकृति में स्थित रह कर जीव को अपने २ विषय की ओर आकर्षण करती हैं। देही एक देह को त्यागकर जब दूसरे में प्रवेश होता है तो इन्द्रियों को अपने साथ लेजाता है जैसे वायु फूल से गंध दूसरी जगह लेजाता है, कान, आंख, त्वक्, जिह्वा नाक और मन छओं इन्द्रियों को आश्रयण करके यह जीवरूपादि विषयों का अनुभव करता है, मूर्ख लोग जीवको एक शरीर के त्याग और दूसरे के आश्रयकरने के विषयों को अनुभव करने और इन्द्रियों के साथ रहने को नहीं देखसकते परन्तु विवेकी लोग उसे ज्ञानचक्षु से देखते हैं, योगीलोग योग अभ्यास से प्रयत्न करते हुये देह में स्थित आत्मा को देखते हैं और अविवेकी लोग प्रयत्न करते हूये भी आत्मा को नहीं देख सकते क्योंकि वे विवेक ज्ञान से रहित हैं जो तेज सूर्य चन्द्र अग्नि में स्थित होकर सम्पूर्ण जगत का प्रकाश करता है वह तेज मेरा जानो ॥

मैं पृथ्वी में स्थित होकर अपने पराक्रम से चराचर आत्मक भूतों को धारण करता हूं और रस स्वरुप चन्द्र हो कर सम्पूर्ण ओषधिलताओं को पोषण करता हूं, मैं जठराग्नि होकर प्राणियों के देह में स्थित हो प्राण अपान दोनों वायुओं से मिल कर भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चोष्य चारों प्रकार के अन्नों को पाचन करता हूं ॥

सम्पूर्ण प्राणियों के हृदय में अन्तर्यामी रूप से स्थित होकर व्यतीत वस्तुको स्मरण और पदार्थ ज्ञान और उनका विस्मरण मैं ही करता हूं और चारों वेदों से उनके देवता रूप में उपास्य हूं और वेदान्त सम्प्रदाय का चलाने वाला और वेद जानने वाला भी मैं ही हूं ॥

इस जगत् में यह दो पुरुष क्षर और अक्षर कहलाते हैं उन दोनों में से सम्पूर्ण भूत क्षर हैं और माया के आश्रित परमेश्वर अक्षर हैं, इन दोनों में से भिन्न पुरुषोत्तम परमात्मा कहलाता है जो तीनों लोक में व्याप्त होकर अविनाशी ईश्वर रूप से पालन करता है। जिस कारण से नाश रहित और अक्षर से श्रेष्ठ है उसी कारण से लोक और वेद में भी पुरुषोत्तम कहलाता है, जो मोह रहित होकर मुझ को इस प्रकार से पुरुषोत्तम जानता है वह सर्वज्ञ है वही अनन्य हो मुझको भजन करता है ॥

हे अर्जुन! अतिगोपनीय शास्त्र जो मैंने निरूपण किया उसे इस प्रकार जान कर विवेकी पुरुष कृतकृत्य होते हैं ॥

चालीसवां अध्याय

—:०:—

श्रीमद्भगवद्गीता का सोलहवां अध्याय॥

देवासुर संपत्ति निरूपण ॥

भगवान् ने कहा सम्पूर्ण प्राणियों से निर्भय और सतो गुण प्रधान होकर ज्ञान अभ्यास में रत रहे यथा शक्ति ज्ञान इंद्रियनिग्रह यज्ञ वेद ध्ययन तप और निष्कपट व्यवहार करे, हिंसा रहित सत्यवादि औ क्रोध रहित हो रागादि को त्याग करे पर निंदा न करे और भूतों पर दया रक्खे किसी के नाश करने में प्रवृत्त न हो कोमल स्वभाव रहे निंदित कर्म करने से लज्जित हो और स्थिरस्वभाव रक्खे ।

हे भारत अर्जुन ! तेज, क्षमा, धर्य, पवित्रता, निद्रोह और निरभिमानादि गुण दैवी सम्पत्ति में जो उत्पन्न पुरुष तिस में होते हैं ॥

हे पार्थ अर्जुन ! दम्भ, दर्प, अभिमान, क्रोध कठोरभाषण और अज्ञानादि आसुरी सम्पति से जो उत्पन्न पुरुष तिस में होते हैं ॥

हे पाण्डव ! दैवी सम्पद मुक्ति के हेतु है और आसुरी सम्पद बन्धन का कारण, परन्तु तुम दैवी सम्पद से उत्पन्न हुये हो इस लिये शोक न करो ॥

हे अर्जुन ! इस लोक में भूतों की उत्पत्ति दैवी और आसुरी भेद से दो प्रकार की कही है और मैं दैव उत्पत्ति का निरूपण बहुत प्रकार से करचुका हूं अब आसुरी का निरूपण करता हूं ह सुनो। आसुर अंशवाले मनुष्य धर्म में प्रवृत्ति और अधर्म से निवृत्ति नहीं जानते इस लिये उन में शौच, आचार और सत्य भी नहीं, आसुरी अंशवाले जगत् को असत्य निराश्रय

और निरीश्वर कहते हैं और इस की उत्पत्ति केवल स्त्री पुरुष संयोग ही से जानते हैं इस से अतिरिक्त उत्पादक हेतु किसी को नहीं समझते ॥

वे लोग इस नास्तिकदृष्टि का आश्रयण करके अपने निषिद्ध कर्माचरण से जगत् के नाश के हेतु आसक्त होते हैं क्योंकि वे अल्प बुद्धि वाले और अविवेकी हैं वे अतृप्त काम को आश्रयण करके दम्भ, अभिमान और मद से युक्त हो कर अपनी अविवेकता से निन्दित कर्म का आचरण करके अप वित्र वृत्ति में प्रवृत्त होते हैं, निरवधि चिन्ता कि जिस की समाप्ति प्रलय ही है उस के आश्रयण होकर केवल काम भोग ही को परम पुरुषार्थ जान उस पर निश्चय करते हैं, अनेक प्रकार की आशा की रस्सी में बद्ध और सर्वदा काम क्रोध में अनुरक्त हैं और काम भोग के अर्थ अन्याय से द्रव्य संचय की इच्छा करते हैं ॥

वे लोग यह निश्चय करते हैं कि आज मैंने यह धन पाया और मैं इस मनोरथ को पाऊंगा और यह वस्तु मेरी ही है और आगे बहुत सा धन मुझ को प्राप्त होगा वह मेरा शत्रु आज मैंने मारा और शेष को मारूंगा और ईश्वर मैं ही हूं और भोगी सिद्ध बलवान और सुखी भी मैं ही हूं ॥

वे लोग धन और कुल में अभिमानी हो कर इस जगत् में जानते हैं कि हमारी समान कोई नहीं और यज्ञ दान करके

प्रतिष्ठित हो हमीं हर्ष का प्राप्त होंगे इस विधि अज्ञान से मोह को प्राप्त होते हैं, अनेक प्रकार की चित्त की भ्रांति से मोह रूपी जल में घिर के केवल काम भोग ही को पुरुषार्थ जानते हुये रौरव आदि महा अपवित्र नरक में पड़ते हैं ॥

अपने मन से अपने को श्रेष्ठ जान कर अनम्र हो धन की अधिकता से मद और अभिमान से युक्त हो केवल प्रतिष्ठा के हेतु वेदोक्त विधि त्याग कर कपट से यज्ञ करते हैं, अहंकार बल, दर्प, काम और क्रोध से युक्त होकर मुझ को सर्व व्यापी न जान कर द्वेष करते हैं और विवेकियों की निंदा करते हुये दम्भ से यज्ञ करते हैं, अधम क्रूरस्वभाव द्वेष युक्त और अशुभ कर्म्म कारी नरों को मैं सर्वदा कृमि कीटादि योनि में जन्म प्राप्त के लिये संसार में नियोग करता हूं ॥

हे अर्जुन! वे मूढ़ लोग कृमकीटादि योनि को प्राप्त हो जन्म २ मुझ को प्राप्त न होकर फिर अधम गति को प्राप्त होते हैं, ये तीनों अर्थात् काम, क्रोध और लोभ विवेक ज्ञान नाश करने वाले नरक के द्वार हैं इस लिये इन तीनों का त्याग करना उचित है ॥

हे अर्जुन! जो पुरुष इन तीनों नरक प्रापक द्वारों से मुक्त होकर अपना शुभाचरण करता है वह तदनंतर मोक्ष गति को प्राप्त होता है ॥

जो पुरुष शास्त्र विहित विधि को त्याग करके कामासक्त रहता है वह सिद्धि को न प्राप्त होकर सुख और मोक्ष को नहीं प्राप्त होता ॥

हे अर्जुन ! इस हेतु कर्म्माचरण और त्याग की अवस्था में शास्त्र ही प्रमाण है इस लिये शास्त्र विहित कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य कर्म्म का ज्ञान कर कर्म अधिकार को आचरण करने के योग्य है ॥

इक्यालीसवां अध्याय

—:-०-:—

श्री मद्भगवद्गीता का सतारहवां अध्याय ॥
गुणत्रयविभागनिरूपण ॥

अर्जुन ने पूछा हे कृष्ण ! जो लोग शास्त्र विधि को त्याग कर श्रद्धा युक्त हो यज्ञ करते हैं उन की क्या निष्ठा है । सत्त्व, रज या तम अर्थात इन तीनों गुणों में उन की पूजा किस गुण वाली गिनी जाती है ॥

भगवान ने कहा प्राणियों को तीन प्रकार की श्रद्धा स्वभाव से होती है अर्थात सात्त्विकी, राजसी और तामसी उसे निरूपण करता हूं सो सुनो ॥

सब मनुष्यों की श्रद्धा सत्त्व के अनुसार होती है इस लिये वे मनुष्य श्रद्धावान कहलाते हैं और जैसी जिस की श्रद्धा राजसी या तामसी होती है वैसे ही वह पुरुष कहलाते हैं, सात्त्विक श्रद्धा वाले देवताओं की आराधना करते हैं राजसी लोग यक्ष और राक्षसों की उपासना करते हैं और तमो गुण वाले अपने गुण के अनुसार भूत प्रेत गणों की पूजा करते हैं ॥

जो लोग शास्त्र विरुद्ध घोर कर्माचरण करते हैं और दम्भ, अहंकार, काम, राग और दुराग्रह से युक्त हैं और लोग उपवास आदि नियम से शरीर स्थित पृथ्वी आदि पंच भूत समुदाय और मुझ को शरीर में व्याप्त न जान कर सुखाते हैं उन्हें तमो गुण प्रधान जाने क्योंकि वह विवेक ज्ञान से रहित हैं॥

सात्विक आदि तीन प्रकार के मनुष्यों के आहार भी तीन प्रकार के प्रिय हैं और वैसे ही यज्ञ, तप और दान भी उन के तीन प्रकार के हैं॥

अब मैं उन का निरूपण करता हूं॥

आयुष्य, उत्साहशक्ति, आरोग्यता और प्रीति के बढ़ाने वाले रस और स्नेह से युक्त चिरकाल रस रूप से शरीर में स्थित दर्शन ही से चित को संतोष करने वाले आहार सात्विक गुण वाले को प्रिय हैं, कडुआ, खट्टा, खारा गर्म, तीखा, रूखा और दाह युक्त ये आहार रजो गुण वाले को प्रिय हैं जोकि दुःख, शोक और रोग के उत्पादक हैं। ठण्डा, निरस दुर्गंधित, बासी, बचा हुआ और जूठा अपवित्र भोजन तामसियों को प्रिय हैं॥

फलाकांक्षा रहित पुरुष को शास्त्र के अनुसार यज्ञ करना उचित जान कर मन के निश्चय से यज्ञ अनुष्ठान करते हैं वह सात्विक यज्ञ कहलाता है॥

हे अर्जुन! लोग फल की इच्छा से कपट आचरण से जो यज्ञ करते हैं वह राजस यज्ञ कहलाता है, शास्त्रोक्त विधि

से रहित अयेग्य सामग्रि कुमंत्र और बिना दक्षिणा और बिना श्रद्धा के जो यज्ञ आचरण किया जाता है वह तामस कहलाता है ॥

देवता, ब्राह्मण, गुरू और पूज्य लोगों की पूजा और अपनी पवित्रता और सुमार्ग से चलना ब्रह्मचर्य और अहिंसा से रहिना यह शरीर तप कहलाता है, किसी को वार्ता मे दुःख न देना, सत्य बोलना, प्रिय और हित की बात कहना और वेदा भ्यास करना यह वाणी तप कहलाता है, इच्छा मन से सुमार्ग अनुसारी होकर मौन अर्थात व्यर्थ भाषण छोड़ विषयों से इन्द्रियों को रोक स्वभाव से शुद्ध रह कर जो तप आचरण करते हैं वह मानसपत कहलाता है उतम श्रद्धा से फलाकांक्ष रहित एकाग्र चित्त वाले नरों ने जो तप आचरण किया वह सात्विक कहलाता है ॥

जो तप कपट से सत्कार मान और प्रतिष्ठा के हेतु आचरण किया जाता है वह इस कर्म लोक में राजस तप क्षणिक और अनित्य कहलाता है, अविवेकता से युक्त अयुक्त विचार न करके मन के खेद से या दूसरे के नाश के हेतु जो तप आचरण किया जाता है वह तामस कहलाता है, दातव्य बुद्धि से पुण्यदेश पुण्य काल में जो दान दे और उस पुरुष से अपना उपकार न करावे वह सात्विक कहलाता है ॥

जो दान उपकार की बुद्धि या स्वर्गादि फल के उद्देश और खेदित चित से दिया जाता है वह राजस कहलाता है,

जो दान अपवित्र देश और कुसमय में अयोग्य को असत्कार से निन्दा पूर्वक देते हैं वह तामस कहलाता है ॥

पूर्वकाल में ॐतत्सत् के उच्चारण से ब्रह्म के तीन प्रकार के स्मरण हैं उस से ब्राह्मण वेद और यज्ञ ये तीनों निर्माण किये गये हैं इस लिये वेद जानने वाले पुरुष को यज्ञ, दान और तप में सर्वदा शास्त्रोक्त प्रकार से ॐकार पूर्वक प्रवृत होना उचित है ॥

मुमुक्षुपुरुष यह निश्चय न करके कि इस का यह फल हम को मिले अनेक प्रकार के दान, यज्ञ और तप करते हैं इसी से चित शुद्धि के द्वारा मोक्ष उपयोगी होते हैं सद्भाव और साधु भाव योग्य कर्म में भी हे अर्जुन ! सत् शब्द का प्रयोग होता है ॥

यज्ञ, दान और तप तीनों में जो स्थिरता से हो सत्शब्द का प्रयोग होता है और इन के सम्बन्धी कर्म में भी सत शब्द का प्रयोग होता है ॥

हे पार्थ ! अश्रद्धा से जो होम, दान, तप और कृच्छ कर्म किया जाता है वह असत् कहलाता है इस लिये वह इस लोक और परलोक में उपकारी नहीं होता ॥

बयालीसवां अध्याय

—:-०-:—

श्रीमद्भगवद्गीता का अठारहवां अध्याय ॥

श्री मोक्ष योग निरूपण ॥

अर्जुन ने पूछा हे महात्र हे श्रीकृष्ण ! सन्यास और त्याग दोनों के पृथक् पृथक् स्वरूप जानने की इच्छा करता हूं क्योंकि तुम सम्पूर्ण इन्द्रियों के ईश्वर और केशी नामक पराक्रमी दैत्य क नाशक हो ॥

भगवान् ने कहा सम्पूर्ण काम्य कर्मों के त्याग ही को पण्डित लोग सन्यास जानते हैं और विचा वान् पुरुष सम्पूर्ण कर्मों के फल त्याग ही को त्याग हते हैं र्म-त्याग करना आवश्यक नहीं, विवेकी लोग सम्पूर्ण कर्मों में दोष देख कर त्याग करना उस का उचित कहते हैं क्योंकि सम्पूर्ण कर्म अर्थमूलक है और मीमांसक लोग यज्ञ, दान और तप आदि कर्मों को कहते हैं कि त्याग करना उचित नहीं, हे अर्जुन ! त्याग के विषय में हमारा निश्चय यह है सुनों कि जिन कारणों से तत्व दर्शी लोग त्याग के भेद को तीन प्रकार कहते हैं, यज्ञ, दान और तप तीनों करने के योग्य हैं कदापि इन का त्याग उचित नहीं क्योंकि यज्ञ आदि रूप बुद्धि मान लोगों के चित्त शुद्धि का हेतु है ॥

हे पार्थ ! जिस प्रकार से मैंने कर्म कर ने को कहा है उस प्रकार से करे फिर कर्म फल और अभिमान त्याग करके यह मेरा निश्चय और उत्तम मत है, नित्य विहित कर्मों का त्याग नहीं सम्भव होता यदि अपनी आव कता से उन का त्याग किया जाय तो तमाम त्याग कहलाता है जो पुरुष कर्म को दुःख जान कर शरीर की पीड़ा के भय से

त्याग करेगा वह राजस त्यागी है इस लिये कर्म त्याग का फल उसे नहीं मिलेगा ॥

हे अर्जुन ! जो कर्म नित्य करने के योग्य हैं उसे जान कर फल और अभिमान त्याग कर आचरण करे वह सात्विक त्याग है और हमारी जान में उत्तम है ॥

जो पुरुष दुःखदायक कर्मों मे द्वेष न करे और सुख दायी कर्मों में सुख आचरण न करे तो वह सत्विक त्यागी बल और बुद्धि को प्राप्त होता है और संशय से भी निवृत्त होता है ॥

यह देह धारी मनुष्य सम्पूर्ण कर्मों का त्याग नहीं करसकता है इस से जो कर्म फल की इच्छा छोड़ कर कर्म त्याग करेगा वह त्यागी कहलावेगा ॥

मैं फल तीन प्रकार के इष्ट उग्र, और इष्ट मिश्रित सो सकाम पुरुषों को ये तीनों का फल शरीर त्यागने पर मिलता है और सन्यासी अर्थात् कर्म फल त्यागी इन तीनों प्रकार के फल को प्राप्त नहीं होते ॥

हे महाबाहो, अर्जुन ! सम्पूर्ण कर्मों के सिद्धि के हेतु सांख्य और वेदान्त में पांचों कारण निरूपण किये हैं सो तुम्हारे हेतु कहता हूं सुनो ॥

पहिला अधिष्ठान अर्थात् शरीर और दूसरा कर्त्ता अर्थात् अहंकार तीसरा पृथक् पृथक् इन्द्रियां चौथी नानाप्रकार की चेष्टा और पांचवां दैव का कारण जानो ॥

शरीर, वाणी और मन के भेद से कर्म तीन प्रकार के हैं उन्हें न्याय अथवा अन्याय से जो मनुष्य प्रारम्भ करता है उस के वही पांचो कारण हैं, सम्पूर्ण कर्मों में पूर्वोक्त पांचों कारण होते हैं तिन्हे न जान कर जो पुरुष केवल आत्मा को कर्ता जानता है वह शास्त्र और गुरु उपदेश ज्ञान से रहित हो दृश्य वस्तु को अविवेकता से देख नहीं सक्ता, जिस पुरुष में अहंकार नहीं वह सर्वदर्शी पुरुष सम्पूर्ण प्राणियों को लोक दृष्टि से पृथक् और विवेक दृष्टि से भिन्न नहीं देखता सो सब को हनन भी करे तो नहीं किया जानो और न किसी कर्म फल से बद्ध होता है क्योंकि उस की पाप शंका दूर हो गई है ॥

कर्म की प्रेरणा, ज्ञान, ज्ञेय और ज्ञाता के भेद से तीन प्रकार की है और उन के गुण, कर्म और कर्ता इन तीनों भेदों से कर्म संग्रह करने वाले कारक भी तीन प्रकार के हैं, ज्ञान, कर्म और कर्ता ये तीनों प्रत्येक सत्वादि गुणों के भेद से सांख्य शास्त्र में जैसा कहा है सो वह निरूपण करता हूं सुनो ॥

जो पुरुष सम्पूर्ण स्थावरादि भूतों में निर्विकार परमात्मा तत्व एक रूप से भिन्न भिन्न में अभेद देखता है और उस का ज्ञान सात्त्विक है, जो ज्ञान सम्पूर्ण भूतों में सुख दुःख आदि नानाप्रकार के स्वभाव से भिन्न भिन्न देखाई पड़ता है वह राजस है, जो ज्ञान एक ही देहादि कार्य में सम्पूर्णता से

ईश्वर के परिच्छिन्न रूप से बिना प्रमाण और अपारमार्थिक है वह तामस और तुच्छ है ॥

जो कर्म नित्य विधि विहित और कर्तृत्वाभिमान रहित और बिना राग, द्वेष और फल प्राप्ति की इच्छा बिना से किया जाता है वह सात्त्विक कर्म कहलाता है, जो कर्म मन की कामना की सिद्धि के हेतु या अहंकार से बहुत क्लेश के साथ किया जाता है वह राजस कहलाता है, जो कर्म फल द्रव्य नाश पर पीड़ा और अपनी सामर्थ्य के बिना विचार केवल अविवेकता से आरम्भ किया जाता है वह तामस कहलाता है ॥

जो पुरुष कर्तृत्वाभिमान त्याग और अपना पुरुषार्थ न प्रकट करके धैर्य और सन्तोषयुक्त हो उसकी सिद्धि और असिद्धि का हर्ष विषाद छोड़ कर कर्म में प्रवृत्त होता है वह सात्त्विक कर्त्ता कहलाता है, जो पुरुष रागयुक्त हो कर्म फल की इच्छा लोभ और हिंसा से युक्त अपवित्र रहकर उसकी प्राप्ति में सन्तोष और अप्राप्ति में दुःखी हो कर कर्म करता है वह राजस कर्त्ता कहलाता है ॥

जो पुरुष विहित मार्ग त्याग कर विवेक शून्य और अनम्र हो छल से दूसरे के तिरस्कार में प्रवृत्त हो कर आलस्य सहित दुःखित और दीर्घ विचार से कर्म करता है वह तामस कहलाता है ॥

हे अर्जुन ! बुद्धि और धैर्य दोनों सत्वादि गुण के भेद से तीन प्रकार के हैं उनका भेद पृथक् पृथक् आगे निरूपण करेंगे ॥

हे अर्जुन ! जो बुद्धि धर्म प्रवृत्त और अधर्म में निवृत्ति विहित कार्य में अभय और निन्दित कर्म में भय करे और बन्ध मोक्ष का कारण जानने वाली हो वह सात्विकी है ॥

हे अर्जुन ! पुरुष जिस बुद्धि से धर्म, अधर्म्म कर्तृत्व, और अकर्तृत्व को सन्देह से देखता है वह राजसी बुद्धि कहलाती है ॥

हे अर्जुन ! जिस बुद्धि से धर्म का अधर्म और सम्पूर्ण पदार्थों को अन्यथाभाव से देखता है वह आज्ञानाच्छादित होने से तामसी बुद्धि कहलाती है ॥

हे पार्थ ! जिस धारणाशक्ति से पुरुष मन, प्राण और इन्द्रिय की क्रियाओं को धारण करता है वह एकाग्र युक्त होने से धारणाशक्ति सात्विकी कहलाती है ॥

हे अर्जुन ! जिस धारणाशक्ति से धर्म कामादि के सम्बन्ध में फल की इच्छा करता है वह राजसी धारणाशक्ति कहलाती है ॥

हे अर्जुन ! जिस धारणा शक्ति से पुरुष स्वप्न, भय, शोक, विषाद और उन्मत्तता को नहीं त्याग करता वह घृति तामसी कहलाती है ॥

हे अर्जुन ! अब सुख को सत्वादि गुण से तीन प्रकार में निरूपण करता हूं वह सुनो जिस सुख में अभ्यास से चित्त रमता है और दुःख से निवारि भी होता है, जो पहिले विषवत् देख पड़ता और परिणाम उसका अमृत तुल्य होता

है वह सुख मन और बुद्धि को स्वेच्छकारी होने से सा-
त्विक कहलाता है ॥

हे अर्जुन ! विषय और इन्द्रिय के संयोग से सुख उत्पन्न
होता है उस में जो पहिले अमृत तुल्य देखाई दे कर अन्त
में विष की नाईं दुःखदायी होता है वह राजस सुख
कहलाता है जो सुख पहिले और अनुभव के पीछे मन मोहक
है और निद्रा, आलस्य और अविवेकता से उत्पन्न होता है
वह तामस सुख कहलाता है, प्रकृति जन्य सत्वादि तीनों गुणों
से छुटी हुई वस्तु या प्राणी पृथ्वी स्वर्ग या देव लोक में हैं
नहीं ॥

हे अर्जुन ! ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चारों वर्णों के
सत्वादि स्वभाव जन्य गुणों के यथा योग्य उन के पृथक् २
विभाग किये गये हैं, चित्त शान्ति, बाह्य इन्द्रिय का निग्र, तप,
बाह्यान्तर शौच, क्षमा, निश्चलता, शास्त्रजन्य ज्ञान, अनुभव
जन्य विज्ञान और परलोक विषयक नित्यत्व बुद्धि ये ब्राह्मण के
स्वभाव सिद्ध कर्म हैं ॥

शौर्य, तेज, धैर्य चातुर्य्य, युद्ध से न भागना, उदारता
और प्रजा पालन शक्ति ये सब क्षत्रिय के स्वभाव सिद्ध
कर्म हैं ॥

खेती बारी करना, गौ चरावना, वाणिज्य करना ये वैश्य
के स्वभाव सिद्ध कर्म हैं और शूद्र का ब्राह्मण आदि तीनों
वर्णों की सेवा करना स्वभाव सिद्ध कर्म है ॥

अपने अपने कर्म में मनुष्य आसक्त हो कर उस की सिद्धि को प्राप्त होता है अब स्वकर्म युक्त पुरुष जैसे परम ज्ञान को प्राप्त होता है वह कहता हूं सुनो ॥

जिस परमेश्वर से सम्पूर्ण प्राणियों की प्रवृत्ति होती है और जिस में सम्पूर्ण जगत् व्याप्त है उस परमेश्वर को अपने विहित कर्म से आराधना कर के मनुष्य सिद्धि को प्राप्त होता है, यथायोग्य अनुष्ठान किये हुये परम धर्म से अपना धर्म न्यून आचरण भी श्रेष्ठ है क्योंकि अपने अपने स्वभाव सिद्ध कर्म को आप से आचरण करते हुये मनुष्य दुःख को नहीं प्राप्त होता ॥

हे अर्जुन ! अपना स्वभाव विहित कर्म यदि दोष युक्त भी हो तो उस का त्याग करना उचित नहीं क्योंकि सम्पूर्ण कर्मों का आरम्भ दोष से युक्त ही है जैसे धूम्र से अग्नि आवृत है, जो पुरुष असंग, बुद्धि और अहंकार जित आत्मा किसी विषय की इच्छा न कर के व्यवहार करता है वह सन्यास से श्रेष्ठ संपूर्ण कर्म त्याग कर ब्रह्मात्म भ वरूप सिद्धि को प्राप्त होता है ॥

हे अर्जुन ! जिस प्रकार से पुरुष निष्कर्म सिद्धि को प्राप्त होकर ब्रह्म को प्राप्त होता है वह प्रकार संक्षेप से कहता हुं सुनो कियोंकि निष्कर्म सिद्धि ज्ञान का हेतु है ॥

सात्विक बुद्धि से युक्त होकर धारणा शक्ति से उस को निश्चल कर शब्दादिक विषय और राग को त्याग करे,

एकान्त देश में निवास करके युक्ताहार हो, वाणी, शरीर और मन नियत होकर वैराग्य से युक्त हो ध्यान योग में तत्पर हो, अहंकार, बल, दर्प, काम, क्रोध और परिग्रह को त्याग; निर्ममता हो शान्त रहे वह ब्रह्मभाव को प्राप्त होने के योग्य होता है ॥

ब्रह्मभाव को प्राप्त हुआ २ पुरुष मन संतुष्ट होकर न तो शोक करता और न किसी वस्तु की इच्छा और सम्पूर्ण भूतों को समान देखते हुये मेरी उत्तम भक्ति को प्राप्त होता है, अचल भक्ति द्वारा जो मुझ को यथार्थ रूप से सच्चिदानन्द और सर्व व्यापी जानता है इस जानने के पीछे ऐसे तत्व ज्ञान से परमानन्द रूप होता है ॥

नित्यनैमित्तिकसेवी कर्मों को सदा करते हुये केवल मुझी को आश्रय जानने वाला पुरुष मेरे अनुग्रह से अनादि शाश्वत परमपद को प्राप्त होता है, मुझी को परम पुरुषार्थ समझ कर सम्पूर्ण को मन से मुझ में अर्पण कर एकाग्र बुद्धि से युक्त हो सर्वदा मेरे ध्यान में तत्पर रहो ॥

तुम मेरे ध्यान में युक्त हो तो मेरे अनुग्रह से संसार सम्बन्धी दुःखों से तर जाओगे यदि अहंकार से मेरी बात न सुनोगे तो अपने पुरुषार्थ से भ्रष्ट होजाओगे, मेरा कहना न मान कर के अपने अहंकार के वश हो युद्ध करोगे तो तुम्हारा यह युद्ध का प्रयत्न व्यर्थ होगा तथापि रजो गुण के वश हो स्वभाव तुम्हारा तुम्हें प्रवृत्त करे ही गा ॥

हे अर्जुन ! स्वभाव सिद्ध अपने शौर्यादिक कर्म से निबद्ध होकर जिस मोह से करने की इच्छा से नहीं करते तिस पर वश होकर अवश्य करोगे ॥

हे अर्जुन ! परमेश्वर अपनी माया से संपूर्ण शरीर धारी भूतों को भ्रमाता हुआ उन के हृदय में निवास करता है ॥

हे भारत, अर्जुन ! सब प्रकार से उसी परमेश्वर के शरणागत हो उसी के अनुग्रह से उत्कृष्ट शांति और अविनाशी मोक्ष पद को प्राप्त होगे ,इसी प्रकार से गोपनीय ज्ञान मैंने तुम से कहा उस सम्पूर्ण पूर्वोक्त ज्ञान को विचार करके जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसा करो ॥

सम्पूर्ण गोपनीय से गोपनीय मेरा उत्कृष्ट वचन फिर सुनो क्योंकि तुम मेरे अत्यन्त इष्ट हो इस लिये तुम पर विश्वास करके हित उपदेश करता हूं ॥

मुझ में मन लगा कर मेरी भक्ति मेरा यज्ञ और नमस्कार आदि मुझी को करो क्योंकि मुझी में प्राप्त होगे यह मैं प्रतिज्ञा करता हुं, नाना प्रकार के कार्यों के त्याग कर केवल मेरे शरणागत हो मैं सम्पूर्ण पापों से छोड़ाऊंगा इस लिये कर्म त्याग जनित दोष से शोक न करो ॥

यह गीता शास्त्र तुम उस मनुष्य को न देना जो अपने धर्म का अनुष्ठान और मेरी भक्ति और गुरु की सेवा नहीं करता और मुझ को मनुष्य जान कर निन्दा करता है, जो

पुरुष यह रहस्य गीता शास्त्र मेरे भक्तों को उपदेश करता है वह मेरी उत्कृष्ट भक्ति करते हुये संशय मुक्त हो मुझ में प्राप्त होता है ॥

इस मृत्यु लोक में मनुष्यों के बीच उससे अत्यन्त प्रिय कोई भी मुझ को न है न हुआ है न होगा। जो पुरुष यह हमारा तुम्हारा धर्म युक्त संवाद पढ़ेगा वह ज्ञान यज्ञ से अराधन करके मुझ को सन्तुष्ट करेगा यह मुझ को निश्चय है॥

जो पुरुष श्रद्धायुक्त और पर निन्दा रहित हो कर इस गीता तत्त्व को श्रवण करता है वह भी संसार में मुक्त हो कर उस शुभ लोक में प्राप्त होगा जिस में पुण्य कर्म करने वाले जाते हैं ॥

हे अर्जुन ! यह जो गीता सार तुमने एकाग्र चित्त से श्रवण किया इस से कुछ फल मिला या नहीं और अज्ञान से उत्पन्न हुआ हुआ मोह तुम्हारा नष्ट हुआ या नहीं ॥

अर्जुन ने कहा हे अच्युत, श्रीकृष्ण ! तुम्हारे अनुग्रह से मेरा मोह नष्ट हो गया है और मुझ को स्वरूप की स्मृति लाभ हुई और सन्देह से निवृत्त हो कर स्थिर हुआ अब जो कहो वह करूंगा ॥

संजय धृतराष्ट्र से कहते हैं श्रीकृष्ण और अर्जुन दोनों का अति अद्भुत और रोम हर्षण यह संवाद मैंने सुना ॥

व्यास जी के प्रसाद से मैंने इस परम गोपनीय गीता योग को जो श्रीकृष्ण योगेश्वर ने अपने मुख से कहा वह सुना ॥

हे धृतराष्ट्र ! कृष्ण और अर्जुन का यह सांख्य योग, कर्म योग, कर्मसंन्यासयोग, संन्यासयोग, आत्मसंयमयोग, ज्ञानविज्ञान योग, महापुरुषयोग, राजविद्या, राजगुह्ययोग, विभूतयोग, विश्वरूपदर्शनभक्तियोग, क्षेत्रक्षेत्रज्ञनिर्देश प्रकृतिगुणत्रयविभाग योग, पुरुषोत्तमप्राप्तियोग, देवासुरसम्पतियोग, त्रिगुणविभाग योग, मोक्षसंन्यासयोगरूप संवाद अति अद्भुत और पुण्यदायक जब जब स्मरण होता है तब तब अति सन्तोष को प्राप्त होता हूं ॥

हे धृतराष्ट्र ! श्रीकृष्ण परमात्मा के उस पूर्वोक्तविश्वरूप को जिस के अनेक बाहु, अनेक उदर, अनेक मुख, अनेक नेत्र हैं और जो अनन्तरूप है और जिस का आदि मध्य अंत नहीं है और जो सर्व स्वरूप है और जो किरीट कुण्डल गदा चक्र धारण किये है और जो तेजोरूप हो कर सब दिशाओं में इस प्रकार प्रकाशमान है कि कोई उसे देख नहीं सकता और जो सब ओर अपरिमित अग्नि सूर्य की कान्ति वाला है जो नाशरहित तथा सब कार्य कारण से परे है, जो इस संसार की उत्पत्ति रक्षा प्रलय का हेतु है और सनातन धर्म का रक्षक है ऐसे जब २ स्मरण करता हूं तब २ मैं अति आश्चर्य को प्राप्त होकर बारंबार हर्षित होता हूं ॥

हे धृतराष्ट्र ! जिधर श्रीकृष्ण योगेश्वर और गांण्डीव धनुर्धारी अर्जुन हैं उधर ही राज्यलक्ष्मी, जय, वृद्धि और ध्रुव है यह मेरा मत है ॥

तिरतालीसवां अध्याय

—०:—

महाराजा युधिष्ठर का कौरवों की सेना में जाकर भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य और शल्य से युद्ध के लिये आज्ञापाना और युयुत्सु का पांडवों की ओर होना ॥

संजय ने कहा हे धृतराष्ट्र ! इस के पीछे महारथी लोग धनुषधारी अर्जुन को बाणों सहित गांडीव लिये हुये देख कर महा शब्द करने लगे, पांडवों के पीछे चलने वाले वीरों ने भी प्रसन्न चित्त होकर उत्तम २ शंखों की ध्वनि की, तात्पर्य यह कि सब बाजे गाजे बजने लग गय और महातुमुल शब्द हुआ , देवता, पित्र, सिद्ध, चारण आदि युद्ध को देखने की इच्छा से वहां आ पहुंचे । महा भाग ऋषि भी इन्द्र को आगे कर के इस भारी नाश को देखने के लिये वर्त्तमान हुये ॥

इस समय धर्मराज युधिष्ठर ने युद्ध के लिये अच्छे प्रकार सन्नद्ध होकर सागर के तुल्य बार बार चलायमान दोनों

सेनाओं को देख कर कवच का उतारा और धनुष को त्याग दिया और रथ से उतर कर पैदल ही दोनों कर बांधे हुये पितामहा की ओर देखते हुये मौन साधे हुये पूर्वाभिमुख हो कर शत्रु की सेना में घुसा हुआ चला ॥

अर्जुन भी अपने बड़े भाई को इस दशा में देख कर रथ से उतर पड़ा और बाकी भाईयों को साथ लेकर युधिष्ठर के पीछे हो लिया बाकी सब राजा लोग भी उन के पीछे चल पड़े ॥

अर्जुन ने कहा हे युधिष्ठर ! आप जो हम लोगों को छोड़ कर शत्रुओं की सेना में घुसे जाते हो इस से आप का क्या अभिप्राय है ? भीमसेन, नकुल और सहदेव ने भी युधिष्ठर से इसी प्रकार के प्रश्न कीये, भाइयों के इन प्रश्नों पर भी युधिष्ठर उसी प्रकार चलता गया। इतने में वासुदेव जी ने बड़े प्रसन्न हो कर कहा मैं ने युधिष्ठर के चित्त की बात को जान लिया है यह युधिष्ठर भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य और शल्य आदि सब बड़ों की परिक्रमा करके उन से आज्ञा लेकर शत्रुओं से युद्ध करेंगे क्योंकि प्राचीन शास्त्रों में लिखा है कि ऐसा करने से निश्चय विजय होती है ॥

दुर्योधन की सेना के लोगों ने युधिष्ठर को इस दशा में अपनी ओर आते देख कर विचारा कि यह कुल कलंक हम से डर कर भाईयों सहित भीष्म आदि की शर्ण लेने के लिये आया है, इस विचार को लेकर वह बड़े प्रसन्न हुये और

पांडवों की निन्दा और कौरवों की प्रशंसा करने लगे और अपने जय कारे बुलाने लगे ॥

इधर पाण्डवों की सेना में भी शंका उत्पन्न हुई और उन की सेना के लोग विचारने लगे कि युधिष्ठर को क्या हो गया है कि शस्त्रादि उतार निर्भय होकर शत्रु की सेना में घुसा जारहा है ॥

युधिष्ठर ने भीष्म जी के पास पहुंचते ही उन के चरणों को हाथों से दबा कर कहा । हे दुर्जय पितामह ! हम आप से इस युद्ध में लड़ने की आज्ञा मांगने आये हैं आप हमें आज्ञा और आशीर्वाद भी दीजिये ॥

भीष्म ने कहा हे युधिष्ठर ! तुम मेरे पास इस रीति से न आते तो मैं तुमको पराजय करने का शाप देता, हे पुत्र ! अब मैं प्रसन्न हूं युद्ध करके तुम जय को पाओगे और तुम्हारी दूसरी इच्छा भी पूरी होगी, हे युधिष्ठर ! मांग मुझ से क्या चाहता है । पुरुष धन रूपादि अर्थों का दास है परन्तु अर्थ किसी का दास नहीं, कौरवों ने धन द्वारा मेरा पोषण किया है, मैं उस धन के लिये अब युद्ध तो अवश्य करूंगा, इस के अतिरिक्त जो कुच्छ तु चाहता है मांग ॥

युधिष्ठर ने कहा हे महा ज्ञानी ! आप दुर्योधन आदि कौरवों के निमित्त अवश्य युद्ध करें पर मेरे अन्त का विचार भी अपने चित्त में रखें ॥

भीष्म जी ने कहा हे पाराडव पुत्र ! इस समय इस स्थान पर मैं तेरी क्या सहायता करूं क्योंकि मैंने दूसरे के लिये अपनी इच्छा से लड़ना है, तेरी जो इच्छा हो तू भी कह दें ॥

युधिष्ठर ने कहा हे तात् ! मैं आप से यह पुछता हूं कि मैं इस युद्ध में आप को किस प्रकार जीत सकता हूं ? इस विषय में आप मुझ को शिक्षा दें ॥

भीष्म ने कहा हे कुंति नन्दन ! मैं कोई भी पुरुष अथवा देवता ऐसा नहीं देखता जो मुझ को इस युद्ध में जीत सके ॥

युधिष्ठर ने कहा हे तात् ! इसी कारण से तो मैं आप के जीते जाने के विषय में आप से ही पुछता हूं आप स्वयं ही अपने जीते जाने का उपाय मुझे बतलाईये ॥

भीष्म ने कहा हे पुत्र ! जब तक मेरी मृत्यु का समय न होय तब तक युद्ध में मुझे जीतने वाला कोई नहीं दीखता ॥

तब युधिष्ठर भीष्म जी को नमस्कार करके अपने भाईयों सहित द्रोणाचार्य जी के रथ के पास गया और उन की परिक्रमा करके बोला हे भगवन् गुरूदेव ! मैं आप का पूजन करता हुं और पुछता हुं कि मैं पाप से या पाप रहित युद्ध करूंगा हे विप्रेन्द्र ! मैं किस प्रकार से सब शत्रुओं को जीतूंगा ॥

द्रोणाचार्य जी ने कहा हे निष्पाप युधिष्ठर ! यदि तु मुझे इस प्रकार न मिलता तो मैं तेरे सब प्रकार से पराजय होने के लिये तुझे शाप देता, मैं अब तुझ से पूजित होकर बड़ा प्रसन्न

हूं और आज्ञा देता हूं कि युद्ध करो और विजय पाओ, हे महाराज! आप इस समय युद्ध से भिन्न भी जो बात चहते हो कहो, मैं कौरवों की ओर से अर्थ के आधीन हूं इस कारण असमर्थों के समान मैं तुझ से कहता हूं कि युद्ध में तो हम कौरवों की ओर ही होंगे, परंतु तुम्हारी विजय का आशीर्वाद देते हैं हे महाराज! आप का ओर धर्म है जिधर धर्म है उधर हरि है और जिधर हरि हैं उधर जय भी है इस कारण हे युधिष्ठर! तेरी जय होगी जो कुछ और पूछना है पूछ ॥

युधिष्ठर ने कहा ब्राह्मणवर्य! मैं युद्ध में आप को किस प्रकार जीतुंगा?

द्रोणाचार्य ने कहा हे राजन्! जब तक मैं युद्ध भूमि में लडूंगा तब तक तेरी विजय नहीं होगी, हां मेरे मरने के पीछे तुम जीत जाओगे॥

युधिष्ठर ने कहा हे महाबाहु! शोक मुझे आप से यह प्रार्थना करनी पड़ती है कि आप मुझ को अपने मरने का उपाय बतलाइये॥

हे राजन्! मुझे इस सकल संसार में ऐसा कोई नहीं दीखता जो युद्ध में मुझ क्रोधाग्नि में भर हुये बाणों की वर्षा करते हुये को मारे, मैं युद्ध में विश्वासित पुरुष से बहुत बड़े अप्रिय और असत्य बचन को सुन कर शस्त्रों को छोड़ दूंगा इस मेरी बात को तुम सत्य करके जानो॥

युधिष्ठिर ने गुरू जी के इन वचनों को सुन कर कर बान्ध कर उन को नमस्कार की और कृपाचार्य के पास पहुंचा और उन की प्रदिक्षणा और उन को प्रणाम करके बोला, हे गुरू जी ! आप मुझ को आशीर्वाद दीजिये कि मैं शत्रुओं को विजय करूं ॥

कृपाचार्य जी ने कहा हे महाराज । यदि तु मुझ को इस प्रकार न मिलता तो तेरी पराजय के लिये मैं कठिन शाप देता, मैं अर्थ द्वारा कौरवों के आधीन हूं उन के लिये लड़ना मेरा धर्म है और अवश्य उन की ओर से लड़ूंगा, इस बात के भिन्न जो कुच्छ तू मुझ से चाहता है वह मांग ले ॥

युधिष्ठर ने कहा हे आचार्य जी । मैं युद्ध के हेतु तो आप के पास आया हूं यह कह कर कष्ट से पीड़ावान और व्याकुल चित्त होकर कुच्छ न बोल सका ॥

आचार्य जी ने उस के अभिप्राय को जान लिया और कहा हे महाराज ! मैं तो अवध्य ही हूं मैं नित्य प्रातःकाल उठ कर तेरी विजय के लिये आशीर्वाद दूंगा, जाओ युद्ध करो और विजय पाओ ॥

युधिष्ठर ने उन की प्रदक्षिणा की और उन को नमस्कार कर के वहां पहुंचा जहां मद्र देश का राजा शल्य बिराजमान था और उस की परिक्रमा करके नमस्कार की और कहा, हे कठिनता से विजय होने वाले राजा शल्य । मैं आप की प्रतिष्ठा करता हुआ प्रणाम करके पूछता हूं कि मैं निष्पाप होकर युद्ध करूंगा आप आज्ञा दें कि मैं शत्रुओं को विजय करूं ॥

शल्य ने कहा हे महाराज युधिष्ठर ! यदि आप युद्ध के निश्चय के लिये मेरे पास न आते तो मैं आप के पराजय के लिये महा शाप देता, अब मैं तुम से पूजित होकर बड़ा प्रसन्न हुआ हूं अब जो तुम्हारी इच्छा हो वह मुझ से मांगो मैं तुम को आज्ञा देता हूं कि तुम युद्ध करो तुम्हारी विजय होगी, इस के भिन्न और जो कुछ तुम्हारी इच्छा हो वह कहो, मैं कौरवों के निमित्त लडूंगा क्योंकि मैं अन्न के कारण उन के आधीन हूं।

युधिष्ठर ने कहा हे महाराज ! आप कौरवों के निमित्त अवश्य युद्ध करें परन्तु मेरे सुखदाई अभिष्ट के विषय में सम्मति दें, मैं यही वर आप से मांगता हूं ॥

शल्य ने कहा हे राजेन्द्र ! मैं यहां तेरी कौनसी सहायता करूं मैं तेरे प्रतिपक्षी कौरवों की ओर से युद्ध के लिये वचन बद्ध हो गया हूं, इस कारण उन के निमित्त ही युद्ध करूंगा ॥

युधिष्ठर ने कहा हे शल्य ! आपने मुझ से युद्ध में कर्ण के तेज को नाश करने का प्रण किया हुआ है आप उस की ओर ध्यान दें ॥

शल्य ने कहा हे युधिष्ठर ! तुम्हारा यह मनोरथ सिद्ध होगा, तुम इच्छा पूर्वक युद्ध करो, तुम्हारी विजय होगी ॥

युधिष्ठर इन सब महावीरों से वरदान लेकर भाइयों सहित कौरवों की सेना से बाहिर निकल आये ॥

इस के पीछे मद के बड़े भाई वासुदेव जो युद्ध भूमि में कर्ण के पास गये और उस से बोले कि हे कर्ण ! मैंने

सुना है कि तुम ने प्रण किया हुआ है कि तुम भीष्म जी के जीते जी युद्ध नहीं करोगे मुझे पूर्ण आशा है कि तुम अपने इस प्रण पर रहोगे ॥

कर्ण ने कहा हे केशवदेव ! मैं दुर्योधन के लिये अपने प्राणों तक देने को तत्पर हूं मैं उस का कभी भी अनिष्ट नहीं करूंगा वरन सदैव उस का अभिष्ट ही करूंगा ॥

श्रीकृष्ण जी कर्ण के इन वचनों को सुन कर वहां से लौट आये । इस के पीछे धिष्ठर ने अपनी सेना में आकर बड़े उच्च स्वर से कहा कि जो हम को वरता है मैं सहायता के कारण उसे वरता हूं ॥

इस पर धृतराष्ट्र के पुत्र युयुत्सु ने पाण्डवों के धर्म भाव से प्रसन्न चित्त होकर कहा, हे युधिष्ठर ! मैं भी युद्ध में आप की ओर से धृतराष्ट्र के पुत्रों के साथ युद्ध करूंगा । जो आज्ञा आप की इस विषय में मेरे लिये होगी मैं उस को मानूंगा ॥

युधिष्ठर ने कहा हे महाबाहु ! मैं तुझ को वरता हूं तु मेरे कारण युद्ध कर, धृतराष्ट्र के पुत्रों में से तूही एक जीता रहेगा बाकी सब काल वश होंगे ॥

युयुत्सु इस वचन को सुन कर नगारा बजाता हुआ पाण्डवों की सेना में चला आया ॥

इस के पीछे युधिष्ठर ने अपना स्वर्णमय कवच धारण किया उस के महावीर साथी अपने २ रथों पर सवार हो उस के पीछे हो लिये, दुन्दुभी और पुरष्क नाम अनेक प्रकार

के बाजे बजने लगे और नाना प्रकार के सिंह नाद भी होने लगे, मानो यह समय युद्ध का बड़ा शोभायमान हो गया ॥

चौतालीसवां अध्याय

—:-०-:—

सेनाओं का युद्ध के लिये आगे बढ़ना और दोनों ओर के राजाओं का एक दूसरे के सन्मुख होकर युद्ध करना

धृतराष्ट्र ने पूछा हे संजय! सेना के इस प्रकार तयार होने पर इन दोनों पक्षों में से पहिले किस पक्ष ने प्रहार किया ॥

संजय ने कहा हे राजन्! आप का पुत्र दुशासन भाई के कहने पर भीष्म को साथ ले कर आगे बढ़ा। उधर से भीमसेन आदि भी प्रसन्न चित्त हो कर भीष्म जी से युद्ध करने को आगे बढ़े। मृदंग, भेरी, शंख आदि अनेक प्रकार के बाजों के शब्द होने लगे; दोनों सेनाओं के महा वीर एक दूसरे पर प्रहार करने के लिये दौड़े जिस से वहां महा शब्द होगया भीम सेन की अत्यंत गर्ज से सब शब्दों का तिरस्कार होगया इस से घोड़ों के हिनहिनाने की आवाज दब गई, कौरवों की सेना के मनुष्य भयभीत होगये जिस से उन के मूल निकल गये, भीमसेन को इस भयानक दशा में अपनी सेना में आते हुये देख

कर दुर्योधन आदि तेरे पुत्र अपने धनुषों को चढ़ाये नाराच नाम बाणों को हाथों में लिये हुये सन्मुख आये।

इस के पीछे द्रौपदी के पुत्र और अभिमन्यु, नकुल, सहदेव और धृष्टद्युम्न बड़े तीक्ष्ण शरों से पीड़ित करते हुये शत्रुओं के सामने ऐसे गये जैसे बड़े वेगवान वज्रों से शिखरों को पीड़ित करते हुये इन्द्र पर्वतों के सन्मुख जाय। इस युद्ध में दोनों पक्षों में से किसी ने भी मूंह न मोड़ा।

हे राजन्! द्रोणाचार्य के शिष्यों की हस्तलाघवता इस समय देखने के योग्य थी, धनुषों के शब्द बन्द नहीं होते थे और प्रकाशित बाण इस प्रकार से चलते थे जैसे आकाश से लगातार नक्षत्र गिरते हैं, राजा लोग इन जाती भाईयों को इस दशा में देख कर चकित हो रहे थे, दुर्योधन आदि तेरे पुत्रों की आज्ञा से सारी सेना चारों ओर से आटूटी घोड़ों और हाथियों का महा शब्द व्याकुल किये देता था, सार यह कि इस समय युद्ध का पूरा ज़ोर होगया।

शस्त्रों, बाणों और बाजे गाजे आदि की आवाजों से पृथ्वी और आकाश शब्दायमान हो गये। रथों के शब्द ऐसे होते थे जैसे बादल गर्जते हैं, घोड़ों के पाओं की आहटें गिरे हुये अंकुशों और अस्त्रों के शब्दों से, हाथियों के दौड़ कर आपस में लड़ने से, घंटों के शब्द से शरीर के रोम खड़े करने वाले शब्द होते थे, भीष्म पितामह जी काल दंड के समान भ्यानक रूप धारण किये अपूर्व भयकारी धनुष को हाथ में लेकर अर्जुन

के सन्मुख दौड़ उधर से अर्जुन भी अपने गाण्डीव धनुष को ले कर उन के सन्मुख आया और दोनों एक दूसरे को मारने की इच्छा में प्रवृत्त हुये ॥

धनुष धारी सात्वकी कृतवर्मा के सन्मुख हुआ जिन में बड़ा भारी युद्ध हुआ, सात्वकी ने कृतवर्मा को और कृतवर्मा ने सात्वकी को घायल किया, इस समय महा योधा अभिमन्यु बृहद्बल से युद्ध करने लगा, जिस के रथ की ध्वजा को राजा कौशल ने गिरा कर उस के सारथी को मार डाला, इस से अभिमन्यु का क्रोध अग्नि के समान होगया और उस ने बृहद्बल को नौ बाण मारे इस के एक बाण से ध्वजा और दूसरे से पीछे का रक्षक और सारथी गिरा ॥

इधर दुर्योधन का युद्ध भीमसेन से आरम्भ हुआ इन दोनों ने अपने २ बाणों से एक दूसरे को ढक दिया, दुसाशन ने नकुल पर बाणों की बर्षा की जिन से वह घायल होगया नकुल ने इस दशा में भी हंसते २ दुशासन पर क्षुद्रक नाम पच्चीस बाण बर्षाये और उस की ध्वजा को गिराया और धनुष बाणों को काट डाला, फिर दुशासन ने नकुल के घोड़ों को मार कर उस की ध्वजा को गिरा दिया ॥

दुर्मुख ने महाबली सहदेव के सन्मुख होकर उस को अपने बाणों से पीड़ित किया सहदेव ने अपने तीक्ष्ण तीरों से दुर्मुख के सारथी को गिरा दिया ॥

महाराज युधिष्ठिर स्वयं मद्र देश के राजा के सम्मुख गये जिस ने इन के धनुष को काट डाला, इस कटे हुये धनुष को

फेंका उन्हों ने दूसरा धनुष लिया और क्रोध युक्त हो कर तीक्ष्ण तने हुये बाणों से उस राजा को आछादित कर दिया ॥

धृष्टद्युम्न द्रोणाचार्य के सन्मुख हुये जिन्हों ने महाक्रोध से उस के धनुष को काट डाला और महा भयानक काल दंड के समान अपने बाण को फेंका जो उसके शरीर में घुस गया। धृष्टद्युम्न ने दूसरे धनुष में शायक नाम चौदह बाणों को धारण कर के युद्ध में द्रोणाचार्य को घायल किया, शंख का सोमदत्त से सामना हुआ जिस ने शंख के दक्षिण भुजा को घायल करके उसको बहुत व्याकुल कर दिया, इन दोनों का आपस में बड़ा भारी युद्ध हुआ ॥

इस के पीछे महारथी धृष्टकेतु बाह्लीक के सन्मुख हुआ जिस को बाह्लीक ने बाणों से आछादित कर महा सिंहनाद किया धृष्टकेतु ने भी क्रोध में आकर बाहुलीक को नौ बाण मारकर उसे घायल किया यह दोनों वीर आपस में ऐसे लड़ते थे जैसे मस्त हाथी आपस में लड़ते हैं ॥

घटोत्कच का सामना अलंबुषनाम राक्षस से हुआ दोनों ने अपने २ बाणों से एक दूसरे को खूब घायल किया, शिखंडी युद्ध में अश्वत्थामा के सन्मुख हुआ अश्वत्थामा ने नाराच नाम बाणों से शिखंडी को घायल करके कम्पा दिया उधर से शिखंडी ने भी बड़े पुंख वाले पीत रंग के शायकों से अश्वत्थामा को घायल कर दिया, इन का युद्ध भी बड़ा शोभायमान था ॥

राजा विराट राजा भगदत्त के सन्मुख हुये युद्ध क आरंभ होत ही विराट ने भगदत्त पर बाणों की ऐसी वर्षा की जैसे बादल अपने जल से पर्वत पर वर्षा करता है, भगदत्त ने भी विराट को इस प्रकार आच्छादित कर दिया जैसे बादल सूर्य को ढक देते हैं ॥

केकय देशीय शारदत्त और कृपाचार्य जी बृहच्छत्र के सन्मुख हुये, कृपाचार्य जी ने बाणों की वृष्टि से उस को ढक दिया और उस ने क्रोधित हो कर कृपाचार्य जी को बाणों से आच्छादित कर दिया, इस के पीछे इन दोनों ने एक दूसरे के धनुषों को काट कर घोड़ों को मार डाला और दोनों रथों से नीचे उतर क्रोध से भर खड्ग युद्ध करने लगे इस भयानक युद्ध से देखने वाले भी भयभीत हो गये ॥

राजा द्रुपद का सिंध के राजा जयद्रथ से सामना हुआ जयद्रथ ने द्रुपद को तीन विशिखों से घायल किया, द्रुपद ने भी उस को घायल किया और इन में बड़ा युद्ध हुआ ॥

विकर्ण अपने तीक्ष्ण गामी घोड़ों वाले रथ को लेकर भीमसेन के पुत्र सोमदत्त के सन्मुख आया और इन में बड़ा युद्ध हुआ परन्तु इन दोनों में से कोई भी घायल न हुआ ॥

महारथी नरोत्तम चकितान सुशर्मा का सामना हुआ दोनों ने एक दूसरे को खूब बाण मारे ॥

पराक्रमी शकुनि महाबली प्रति विन्ध्य के सन्मुख इस शीघ्रता से गया जैसे सिंह मतवाले हाथी के सामने जाता है। प्रतिविन्ध्य

ने क्रोध से ऐसे बाण मारे कि शकुनि उन से घायल हो गया परन्तु शकुनि ने भी उस पर बहुत से तीक्ष्ण तीर चलाये ॥

इसी प्रकार अन्य राजाओं का सामना हुआ और युद्ध होता रहा परन्तु क्रम से रथीयों के साथ रथी, अश्वारूढ़ों के साथ अश्वारूढ़, गजारूढों के साथ गजारूढ़ और पैदलों के साथ पैदल लड़ते रहे। यह नियम थोड़ा काल ही रहा इस के पीछे गड़ बड़ मच गई और नियम टूट गया घुड़ चढ़े पैदलों से और रथारूढ़ घुड़ चढ़ों आदि से युद्ध करने लग गये ॥

पैंतालीसवां अध्याय

सात्यकी और कृतवर्मा का घायल होना, अभिमन्यु भीमसेन आदि का भीष्मजी के साथ युद्ध ॥

—:०:—

युद्ध के नियम टूट जाने से ऐसी गड़ बड मच गई कि पिता को पुत्र, भाई को भाई, मामे को भानजा और भानजे को मामा मारने लगा किसी को कोई जान नहीं पड़ता था, कई रथ अन्य रथों से टक्कर खाकर चलने से रह गए और कई रथ हाथीयों से टकराकर चकना चूर हो गए हाथी हाथीयों से, ऐसे भिड़ते थे जैसे पर्वत भूंचाल में टकराते हैं, कई लोग हाथियों के दांतों से घायल हुए, कई रथों के नीचे आकर चकना चूर हो गए सार यह कि इस दिन भीष्म जी स्वर्ण मय रथ में

बहुत शाभायमान दिखाई दिये मध्यान्ह समय दुर्मुख, कृतवर्मा, कृपाचार्य. शल्य और विविंशति ने भीष्म के पास जाकर उन की पुष्टी की, इन की पुष्टी पाकर भीष्म जी ने पुनः पांडवों की सेना में प्रवेश किया और उन्हों ने अपने भल्ल नाम बाणों से शिर और ध्वजा युक्त रथों को काट डाला इस समय कितने ही हाथी ज़खमों से पीड़ित हो चिंगारने लगे. अभिमन्यु क्रोध से भरा अपने रथ में बैठ कर भीष्म जी के सन्मुख आया और भीष्म जी की ताल ध्वजा को तीक्ष्ण बाणों से छेद कर उन के पीछे चलने वाले पाचों रथियों से युद्ध करने लगा इस ने एक बाण से कृतवर्मा को, पांच बाणों से शल्य को और नौ बाणों से भीष्म जी को घायल किया और उन की ध्वजा को भी काट डाला ॥

भीष्म जी ने शीघ्रता से आगे बढ़ कर अपने नौ बाणों से तत्काल ही अभिमन्यु को घायल कर डाला उस की ध्वजा को अपने तीन भल्लों से काटा और उस के सारथी को अपने तीन बाणों से मारा कृतवर्मा कृपाचार्य और शल्य ने भी अभिमन्यु को घायल करके कम्पाय मान किया ॥

अभिमन्यु ने इन महा रथियों से घिरे हुये होने पर भी उन के अस्त्रों को अपने बाणों से काटा और भीष्म पर बाण छोड़ता हुआ गर्जने लगा ॥

इधर से भीष्म जी ने भी उस महा पराक्रमी अभिमन्यु पर बाण छोड़े जिन को उस ने काट डाला, और नौ बाण

मार कर भीष्म की ध्वजा काट डाली। भीष्म जी ने सहस्रों बाण छोड़ कर उस को ढक दिया उसकी इस दशा को देख कर विराट, धृष्टद्युम्न, भीमसेन, केकय, और सात्यकी, पाण्डव अभिमन्यु की सहायता को दौड़े, भीष्म जी ने इन दौड़ कर आने वालों में से धृष्टद्युम्न को तीन बाणों से और सात्यकी को नौ बाणों से घायल कर दिया और एक बाण से भीमसेन की सिंह के चित्र की स्वर्णमयी ध्वजा को काटा ॥

भीमसेन ने भीष्म जी को बाणों से घायल करके एक बाण से कृपाचार्य को और अठारह बाणों से कृतवर्मा को घायल किय ॥

विराट का पुत्र हाथी पर आरूढ़ हो राजा शल्य के सन्मुख दौड़ा जिस ने आगे से उस के वार को रोका, परन्तु विराट पुत्र ने क्रोध मे आकर शल्य के घोड़ों को मार डाला, शल्य ने आगे से लोहे की बरछी फैंकी जिस से विराट पुत्र बेसुध होकर हाथी के ऊपर से गिड़ पड़ा, गिड़ते ही उस के हाथ से अंकुश और तोमर छूट गये, शल्य ने झट रथ से उतर कर उत्तर के गज की सूंड को काट डाला जिस से वह हाथी बड़े दुख से धरती पर गिर कर मर गया, यह काम करके शल्य कृतवर्मा के रथ पर चढ़ गया ॥

विराट के दूसरे पुत्र श्वेत ने अपने भाई को मरा हुआ देख कर बड़ा क्रोध किया और गुप्त ग्रंथी वाले बाण ले उन के अस्त्रों को काट डाला उन कटे हुये अस्त्रों वाले महारथियों ने

दिव्य बरछों को हाथ में लेकर भय कारी शब्द करने लगे और सातों बरछों को उन्हों ने श्वेत के रथ पर छोड़ा जिन को उस ने अपने सात भल्लों से रासता में ही काट डाला ॥

इसके पीछे श्वेत ने शरीर के छेदने वाले बाण को रुक्म के रथ पर छोड़ा जो उस के शरीर में प्रवेश कर गया और वह बेसुध हो गया, उस का सावधान सारथी शीघ्र ही सब के देखते २ उस को दूर लेगया। फिर श्वेत ने उन छओं की ध्वजाओं की नोकों को गिरा दिया ॥

फिर श्वेत ने बाकी बचे हुये घोड़ो को बाणों से आच्छादित कर के शल्य के रथ पर चढ़ गया जिस से कौरवों की सेना में बड़ा हलचल पड़ गया धृतराष्ट्र का पुत्र भीष्म को आगे करके सेना के मनुष्यों सहित शल्य के रथ पर गया और उस को मृत्यु के मुख से छुड़ाया। तब दोनों पक्षों में बड़ा भारी युद्ध हुआ, भीष्म जी ने इस समय अभिमन्यु, भीमसेन, सत्याकी, केकय, विराट, धृष्टद्युम्न और पर्वत के पुत्र पर बहुत से बाण चलाये ॥

छियालीसवां अध्याय

—:०:—

भीष्म के हाथों विराट राज पुत्र श्वेत का मारा जाना ॥

इस के पीछे लाखों उत्तम शूर वीर और महारथी क्षत्री

उस सेना पति श्वेत को आगे करके आप के पुत्र राजा दुर्योधन को अपना पराक्रम दिखलाते हुये शखंडी को आगे करके रक्षा करने की इच्छा करके युद्ध कर्ताओं में उत्तम भीष्म जी को मारने की अभिलाषा करते हुये उन के रथ के समीप उन के सामने आखड़े हुये इस समय बड़ा भारी युद्ध हुआ ॥

भीष्म जी ने इस युद्ध में अपने बाणों से अनेक शूरों के शिरों को काट कर धरती पर गिराया, रथी रथी के ऊपर, अश्व पति अश्व पति के ऊपर पड़े, कई रथ अपने मरे हुये वीरों सहित घोड़ों से इधर उधर खिचते हुये इस समय दृष्ट पड़े, कई वीर शस्त्र बांधे निर्जीव होकर पृथ्वी पर गिड़े दिखाई दिये कई बाण लगने से गिरते और पुनः उठ खड़े होते। जिन हाथियों और घोड़ों के स्वार मारे गये वह इधर उधर भागते और कई प्यादों को अपने पाओं के तले रोंदते, इन सब से रण भूमि में इतना धूल उड़ा कि अंधकार होगया, जिस से एक दूसरा दिखाई न पड़ता, केवल शरीर के छूने से शत्रु जान पड़ता था, विजय करने वाली सेना बाणों से लड़ने वालों को उल्लंघन कर गई और वीर के उच्चार किये हुये शब्द किसी को सुनाई न दिये ॥

इस युद्ध में भीष्म जी और श्वेत ने अपना पूर्ण बल दिखाया और दोनों ने सहस्रों को घायल किया, श्वेत के भय से कई जन भागे, परन्तु भीष्म जी ने पर्वत के समान वहां स्वयं ठहर कर सब के भय को दूर किया और पाण्डवों की सेना के बहुत से मनुष्यों को मार कर गर्द मर्द किया, इस

समय श्वेत ने महाजालों से भीष्म जी को ढक दिया, उधर से भीष्म जी ने भी बाणों के समूह छोड़ कर श्वेत को आच्छादित कर दिया पुनः वह दोनों मतवाले हाथियों के समान एक दूसरे को आघात करने लगे, इस के पीछे वह एक दूसरे को मारने की इच्छा से क्रोध से भरे हुये अस्त्रों पर उतर आये ॥

श्वेत यदि इस समय न रक्षा करता तो पांडव भीष्म जी से नाश को प्राप्त हो जाते, तब पितामह ने श्वेत से मुख फेरा तो पांडवों को बड़ा हर्ष हुआ और दुर्योधन उदास हुआ और क्रोध से भर कर अपने साथी राजाओं की सेना सहित साथ ले रण भूमि में आकर पांडवों से लड़ने लगा श्वेत भीष्म जी को छोड़ कर शीघ्र ही से दुर्योधन की सेना की ओर आया और उस का ऐसा नाश किया जैसे वायू वृक्षों का नाश करती है, इस के पीछे श्वेत फिर वहीं पहुंचा जहां भीष्म जी नियत थे, अब इन दोनों का वृत्तासुर और इन्द्र के समान युद्ध होने लगा, वह एक दूसरे को मारने की इच्छा करते थे, श्वेत ने सात बाणों से भीष्म जी को विदीर्ण किया उधर से भीष्म जी ने बल करके श्वेत को पीछे हटा दिया, फिर श्वेत ने अपने धनुष से भीष्म जी को घायल किया, इसी प्रकार भीष्म जी ने भी श्वेत को दश बाणों से विध्वल किया, श्वेत घायल आ हुआ भी नहीं डरा ॥

इस के पीछे श्वेत ने गुप्त ग्रंथ वाले पचीस बाणों से भीष्म को घायल किया और उस के धनुष के दस टुकड़े कर

दिये, फिर उस की ताल ध्वजा के शिर को मथन किया, धृतराष्ट्र के पुत्रों ने भीष्म की ध्वजा को गिरा हुआ देख कर उस को श्वेत के अधीन वर्त्तमान मृतक रूप माना॥

यह दशा देख कर पाण्डवों ने बहुत प्रसन्न होकर चारों ओर से शंखों की ध्वनी की, इस समय दुर्योधन ने अपनी सेना को जताया कि यदि तुम लोगों ने भीष्म की रक्षा न की तो तुम भी मारे जाओगे और भीष्म भी मारा जावेगा जाओ इस की रक्षा करो॥

दुर्योधन के इन वचनों को सुन कर कौरवी सेना के महारथियों ने भीष्म की रक्षा की और भीष्म को मध्य में करके उन्हों ने श्वेत पर अस्त्रों की वर्षा की परन्तु श्वेत ने अपने तीक्ष्ण बाणों से उन सब को रोका और भीष्म पर बाणों की वर्षा करके उस के धनुष को काट डाला॥

भीष्म जी ने उसी समय दूसरे धनुष को लिया और तीक्ष्ण बाणों से श्वेत को घायल किया इस के पीछे श्वेत ने बड़े क्रोध में आकर सब के देखते २ भीष्म जी को लोहे के बड़े २ बाणों से विदीर्ण किया, भीष्म जी की इस दशा को देख कर दुर्योधन को बड़ा दुख हुआ भीष्म जी भी इस समय क्रोध में आगये और उन्हों ने श्वेत पर अनेक बाण फेंके परन्तु वीर श्वेत ने उन बाणों को भी रोका और पुनः भीष्म जी का धनुष काट डाला॥

भीष्म जी ने उस धनुष को डाल कर दूसरा धनुष लिया और चार बाणों से श्वेत के चारों घोड़ों को मारा और दो

बाणों से उस की ध्वजा काट डाली और एक बाण से उस के सारथी के शिर को काट डाला, श्वेत घोड़ों आदि के मरने से रथ से उतर पड़ा, भीष्म जी ने उस को रथ विहीन देख कर बड़े तीक्ष्ण बाणों से उस को चारों ओर से घेर लिया, श्वेत ने धनुष को अपने रथ में छोड़ कर बरछी को धारण किया और भीष्म भीष्म ! कह कर सांप के समान उस बरछी को फैंका इस से कौरवों ने बड़ा हाहाकार किया उस आकाश से गिरती हुई बरछी को भीष्म जी ने काट कर नौ टुकड़े कर दिया ॥

फिर श्वेत ने भीष्म जी को मारने के लिये गदा हाथ में ली और लाल नेत्र करके उन पर इस प्रकार दौड़ा जैसे बादल पर्वत पर दौड़ता है, भीष्म जी श्वेत के वेग को न रोकने के योग्य मान कर अपने बचाव के लिये शीघ्र ही पृथ्वी पर उतर पड़े। श्वेत ने क्रोध में आकर अपनी गदा को घुमा कर भीष्म जी की रथ पर इस प्रकार फैंका जैसे कि धनेश कुबेर अपनी गदा को फैंकता है इस से भीष्म जी का रथ घोड़ों, ध्वजा और सारथी सहित भस्म हो गये। भीष्म जी को रथ से विहीन देख कर शल्य आदिक महारथी एक साथ दौड़े भीष्म जी झट दूसरे रथ पर चढ़ धनुष को टङ्कार देते हुए धीरे से श्वेत के निकट आए ॥

तब सात्यिकि, भीमसेन, धृष्टद्युम्न, धृष्टकेतु और अभिमन्यु श्वेत को रथ विहीन देख कर एक साथ ही चारों ओर को

देखते हुए लौट इन को इस प्रकार आते देख कर भीष्म जी ने द्रोणाचार्य, शल्य और कृपाचार्य को साथ लेकर उन को रोक दिया सब के रुक जाने पर श्वेत ने खड्ग को खेंच कर भीष्म जी का धनुष को काट डाला उन्हों ने उस टूटे हुये धनुष झट फेंक दूसरा ले लिया, भीमसेन ने भीष्म जी पर साठ बाण मार कर उनको घायल किया तिस पर उन्हों ने क्रोध में आकर अभिमन्यु आदि महा रथियों को अपने घोर बाणों से घायल किया, फिर गुप्तग्रंथी वाले तीन बाण मार कर श्वेत को घायल किया और एक सौ तीन बाणों से सात्विकी को बीस बाणों से धृष्टद्युम्न को, पांच बाणो से शल्य को और बहुत से बाण समूहों से शेष सब राजाओं को घायल करके रोक दिया ॥

इस प्रकार जब सब रुक गए तो भीष्म जी श्वेत के सन्मुख दौड़ और कठिनता से आश्चर्य होने वाले बाण का तर्कस से खैंच कर चढ़ाया यह अग्नि के समान बाण श्वेत के कवच को काट कर उस की नाभि में जा घुसा और श्वेत के जीवन को ले गया इस समय युद्ध बंद हुआ और सारी सेना अपने २ डेरों में चली गई ॥

सैंतालीसवां अध्याय

—०:—

विराट के पुत्र शंख का युद्ध ॥

श्वेत को मरा हुआ देख कर उस को छोटे भाई शंख को क्रोध बहुत बढ़ गया और वह बड़े २ महारथियों से रक्षित होकर धनुष को टंकारता हुआ मद्र देश के राजा को मारने की इच्छा से चारों ओर को दौड़ा और बड़े बाणों की वर्षा करता हुआ शल्य के समीप पहुंचा इस को इस प्रकार आते हुए देख कर कौशल, वृहद्बल जयसेन, मागध, रुक्म, रथ विन्द आवन्तिका के राजा लोग, सूर्यद्युम्न, काम्बोज, और जयद्रथ ने रोका और इस पर बहुत से बाण बरसाये, शंख ने उन सब के धनुषों को काट कर बड़ी गर्जना की; तब भीष्मजी भी शंख की ओर दौड़े, अर्जुन उस शंख के बचाव के लिये उस के आगे हो गया, शल्य ने रथ से उतर कर शंख के चारों घोड़ों को मार डाला शंख उ॰ रथ से उतर और हाथ में गदा ले दौड़ा और अर्जुन के रथ को पाकर शान्ति हो गया फिर भीष्मजी ने ऐसे बाण बर्षाये कि उन से पंचाल मत्स्य, केरल और प्रभद्रक नाम अनेक वीर गिर पड़े भीष्मजी युद्ध में अर्जुन को छोड़ कर बहुत बाणों को फेंकते हुए अपने प्यार समधी पांचाल द्रुपद के सन्मुख ऐसे दौड़े जैसे कि चैत्र वैशाख के महीनों में वन के जलाने वाली अग्नि दौड़ती है द्रुपद को सेना बाणों से भस्म हुई दीख पड़ी और भीष्मजी अग्नि के समान दिखाई दिये, इस समय पाण्डवों की सेना निराश हो रही थी इस को भीष्म के बाणों से बहुत पीड़ा हुई जिस से बड़ा हाहाकार मचा, कि भीष्मजी न विष में बुझे हुए सर्प

के समान तीक्ष्ण बाण छोड़ कर सब ओर की सफाई की, पाण्डवों ने यह दशा देख कर और सूर्य को अस्त जान कर सेना का विश्राम किया ॥

अड़तालीसवां अध्याय

—:०:—

युधिष्ठिर का घबरा कर श्री कृष्ण से भीष्म जी को युद्ध में शांत करने का उपाय पूछना और धृष्टद्युम्न का सेना पति नियत होना ॥

रात्रि के समय धर्म राज युधिष्ठर सब भाईयों और राजाओं को साथ ले कर श्रीकृष्णजी के पास गये और कर बांध कर कहा कि हे भगवन्! इस बड़े धनुषधारी भयानक पराक्रमी भीष्मजी को देखिये कि इस ने मेरी सेना को इस प्रकार अपने बाणों से भून दिया है जैसे उष्ण ऋतु में अग्नि बन और बन की सूखी घास को भून डालती है, इस महाबली को देख कर हमारी सब सेना इधर उधर को भाग गई, युद्ध में भीष्म जी को विजय करना कुच्छ असंम्भव सा जान पड़ता है। इस लिये मैं उन के सन्मुख छोड़ कर बन को चाला जाना चाहता हूं। हे कृष्ण जी मुझे भय है कि भीष्मजी मेरी सेना का नाश कर डालेंगे मैं जीवन को बहुत मानता हूं परन्तु अब मेरा जीवन कठिन जान पड़ता है। मैं अब बाकी जीवन में तपस्या

करूंगा, हे केशव जी मैं नहीं चाहता कि इस युद्ध में मेरे यह मित्र मारे जायें। भीष्म जी अपने दिव्य अस्त्रों से मेरे सहस्त्रों रथियों को वरावर मार रहे हैं, हे माधव जी! आप कृपा कर के बतलाईये कि मेरा कल्याण किस प्रकार से हो! अर्जुन भी इस युद्ध में उदासीन ही दीख रहा है। इस समय केवल भीमसेन ही प्रसन्न चित्त होकर लड़ रहा है परन्तु यह बीर शत्रु की इतनी सेना को वर्षों में भी समाप्त नहीं कर सकता हे योगीश्वर! आप कोई ऐसा पराक्रमी बताईये जो इन महा प्रतापी भीष्म जी का युद्ध में शांत करे॥

युधिष्ठर इत्यादि को इस शोक से पीड़ित और उदास देख कर श्रीकृष्ण जी बोले, हे युधिष्ठर! शोच मत कर, तुझे शोच करने की आवश्यक्ता नहीं क्योंकि तेरे भाई महा शूर बीर और पराक्रमी हैं और वह सारे संसार में विख्यात हैं, दूसरे महा रथी सात्यकी, विराट, द्रुपद और धृष्टद्युम्न और मैं आप का मनोर्थ पुरा करने वाले हैं, हे धर्म पुत्र! आप निश्चय करो यह शिखंडी अवश्य भीष्म का नाश करेगा॥

श्रीकृष्ण जी के यह वचन सुन कर युधिष्ठर उसी सभा में वसुदेव जी के आगे धृष्टद्युम्न से बोले कि हे धृष्टद्युम्न मैं जो कुच्छ आप स कहता हूं उस को अच्छी रीति से समझो मेरा यह वचन उल्लंघन करने के योग्य नहीं, आप मेरी सेना के सेना पति पद को स्वीकार करो और अपने पराक्रम से कौरवों का नाश करो, मैं, भीमसेन और श्रीकृष्ण जी तेरे पीछे होंगे

नकुल, सहदेव, द्रौपदी के शस्त्रधारी पुत्र और अन्य राजा भी आप के पीछे चलेंगे ॥

धृष्टद्युम्न ने प्रसन्न हो कर कहा हे राजन्! पहिले समय से है मैं शिवजी की ओर से द्रोणाचार्य के नाश करने के लिये नियत हुआ हूं, अब मैं इस युद्ध में भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, शल्य और जयद्रथ आदि सब अहङ्कारियों से अवश्य लड़ूंगा ॥

इस पीछे धृष्टद्युम्न के अच्छी रीति से त्यार हो कर युद्ध में आने पर पाण्डवों ने उच्चस्वर से शब्द किया ॥

फिर युधिष्ठर ने कहा हे सेना पति! आप शत्रुओं का नाश करने वाला क्रौंचारुण नाम व्यूह जो देव दानवों के युद्ध में बृहस्पति जी ने देवेन्द्र से कहा था इस समय रचो ताकि कौरव लोग राजाओं समेत उस को देखें, प्रातः काल होते ही सब सेना के आगे अर्जुन हुआ, राजा द्रुपद शिर हुआ, कुंतिभोज और चंदेल राजा आंखें हुई, युमद्रक, शार्नेक, आगरक नाम समूहों के साथ अनुपक किरात ग्रीवा में वर्तमान हुआ और राजा युधिष्ठर पटश्चर पोंडर नाम कौरवों के निषादों के साथ पीछे हुआ, भीमसेन पर्वत का पौत्र धृष्टद्युम्न, द्रौपदी के पुत्र और अभिमन्यु और महारथी सात्वकी पक्ष बने और कुंडा तथा ऋषि समेत पिशाच दारद, पौंडू, यवन, धेनक, तंगण, परतंगण, वाह्लक, तिजर, चोल, पांगड्य, इन देशों के निवासी दक्षिण पक्ष में नियत हुये ॥

अग्नि वेश्य, गजगुराड, मलद, अश्कारव, शबर कुम्भस मालको समेत वत्स, नकुल और सहदेव यह सब वायें पक्ष में नियत हूये, रथों का एक अर्पूव पक्ष हुआ और इसी प्रकार रथों का एक नियुत शिर हूआ और एक अर्बुद और बीस हज़ार की पुष्ट हूई और नियुत सत्तर हज़ार ग्रीवा में हूये, इन सब पक्षों की रक्षा के लिये हाथी साथ २ चले, राजा विराट ने केकय लोगों के साथ और काशीराज शैवी ने तीन अयुत रथों के साथ जंघन स्थान की रक्षा की॥

यह सब काम सूर्य उदय के पाहिले २ होगया॥

उनचासवां अध्याय

—:०:—

दुर्योधन का पाराडवों का व्यूह देखकर अपनी सेना के योधाओं से व्यूह रचना कराना॥

इधर दुर्योधन ने जब पाराडवों के रचे हुये घोर और अमोघ महा व्यूह को देखा तो द्रोणाचार्य के पास गिया और कृपाचार्य राजा शल्य, सोमदत्त, विकर्ण, अश्वत्थामा, दुशासन, आदि सब भाईयों और युद्ध के लिये सब समीप वर्ती राजाओं को बोला आप सब नानाप्रकार के शस्त्रधारी और अस्त्रों के अर्थ में पंड़ित हो, और पाराडवों को मारने में पूरी समर्थ रखते हो, हमारी सब सेना भीष्म आदि की रक्षा से अजेय

है और पांडवों की सेना भीम आदि के आधीन होने से पराजय के योग्य है ॥

संस्थान, विकर्ण, शूरसेन, कक्कुट, रोचक, त्रिगर्त, मद्रक, यवन, शत्रुंजय, दुशासन, बड़े वीर विकर्ण, नन्द, उपनन्द, माणिभद्रकों समेत चित्रसेन सेनों के मनुष्यों समेत उनके सन्मुख हो कर भीष्म की रक्षा करो ॥

तब कौरवों ने पांडवों को रोकने के लिये एक बड़ा भारी व्यूह रचा, भीष्म जी तो चारों ओर को सेना से रक्षित बड़ी सेना समेत चले और द्रोणाचार्य जी कुन्तल मागध और दशार्ण के साथ भीष्म जी के साथ चले विदर्भ, मेकल, कर्ण, भावरण भी सब सेना समेत भीष्म जी के सङ्ग चले ॥

गांधार, सिन्धू, सौवीर, शैब्य, विशातय और शकुनि ने सेना समेत द्रोणाचार्य जी को रक्षित किया राजा दुर्योधन और उस के सब सगे भाई दक्षिण की ओर नियत हुए ॥

अश्वत्थामा, कृपाचार्य, कृतवर्मा और यादव बड़ी सेना समेत पीछे की ओर को नियत किये गये, उस के पीछे से रक्षक अनेक देशों के राजा, केतुमान, वसुदान और काशी के राजा के पुत्र इत्यादि हुये, यह सब कुछ हो चुकने पर कौरवों ने प्रसन्न चित्त होकर शंख नाद बजाये ॥

पाण्डवों की ओर से भी शंख, भेरी आदि अनेक बाजों के शब्द सुनाई दिये और बड़ा महान शब्द हुआ, श्री कृष्ण जी ने अपने पांच जन्य नाम शंख का और अर्जुन ने अपने देव

दत्त नाम शंख को बजाया और भीमसेन ने पाडू नाम भयकारी शंख की ध्वनी की धर्मराज युधिष्ठर ने अगस्त शंख को बजाया बाकी पाण्डवों ने भी सिंहनाद करके अपने २ शंख बजाये इन सब शब्दों से आकाश गूंज उठा ॥

पचासवां अध्याय

—:o:—

अर्जुन का भीष्म जी से और राजा विराट का द्रोणाचार्य जी से युद्ध ॥

युद्ध आरम्भ हुआ, रथी लोगों के हाथों से छुटे हुये बाण हाथियों और घोड़ों पर गिरे, भीष्म जी धनुष उठाये हुये सन्मुख आये और अभिमन्यु, भीमसेन, अर्जुन, केकय, विराट, धृष्टद्युम्न, चेदि, मत्स्य और विभु इन नौ वीरों पर बाण बरसाये, इस से सेना कम्पायमान हुई और उस को बड़ा खेद हुआ, जिस स्वारों की सेना उन से हट गई वह वहीं मारे गये। भीष्म को इस दशा में देख कर अर्जुन ने श्री कृष्ण जी से कहा कि वहां चलो जहां पितामह हैं, पितामह दुर्योधन का पक्ष लेकर मेरी सेना को मारेंगे द्रोणाचार्य आदि से रक्षित होकर दुर्योधन पांचाल देशियों को मारेंगे, हे जनार्धन! जो मैं भीष्म जी को सेना समेत मारूंगा ॥

श्रीकृष्ण जी ने कहा हे अर्जुन! सावधान हो जाओ मैं

अभी तुम को भीष्मजी के पास ले चलता हूं और उन्हों ने उस को शीघ्र ही वहां पहुंचा दिया, अर्जुन ने अपने बाणों से कई शूरों को गिराया और कई उस को आते देख कम्पायमान हो भाग गये ॥

अर्जुन को इस प्रकार आते देख कर केकय, जयद्रथ और सिंधु आदि देशों के राजाओं से रक्षित भीष्मजी एका एकी उस के सन्मुख वर्त्तमान हुए, भीष्मजी ने सत्तर बाणों से अर्जुन को बड़ा पीड़ित किया, द्रोणाचार्य और कृपाचार्य ने पच्चीस २ बाणों से, दुर्योधन ने चौसठ बाणों से, शल्य ने नौ बाणों से अश्वत्थामा ने साठ बाणों से विकर्ण ने तीन बाणों से और आचार्यनि ने तीन भल्ल बाणों से अर्जुन को खूब घायल किया, यद्यपि अर्जुन बड़ा साहसी और मुकुट धारी था तौ भी सात्वकि, विराट, धृष्टद्युम्न, द्रौपदी के पांचों पुत्रों और अभिमन्यु ने आकर चारों ओर से उस की रक्षा की ॥

राजा द्रुपद भीष्म के अनभीष्ट में प्रवृत्त द्रोणाचार्य के सन्मुख हुआ फिर भीष्मजी ने अर्जुन को असमी तीक्ष्ण बाणों से घायल किया यह देख कर दुर्योधन और उस के भाई बड़े प्रसन्न हुए और गर्जने लगे इस गर्जन को सुन कर अर्जुन कौरवों की सेना में घुस गया और धनुष लिये इधर उधर घूमने लगा जब दुर्योधन ने अपनी सेना को हाथों पीड़ित होते हुये देखा तो वह भीष्म जी से कहने लगा ॥

हे तात् अर्जुन हमारे बड़े २ रथियों और सेना का नाश

कर रहा है कर्ण आप के कारण युद्ध नहीं करता इस कारण आप कोई ऐसा उपाय करो जिस से अर्जुन का नाश हो ॥

भीष्म जी दुर्योधन के इन शब्दों को सुन कर क्षात्रि धर्म को धिक्कार कह कर अर्जुन के सामने गये, राजाओं ने इन दोनों महा वीरों को इस प्रकार एक दूसरे के सन्मुख हुये २ देखकर अत्यंत सिंहनाद किया दुर्योधन, अश्वत्थामा, विकर्ण यह तीनों युद्ध में भीष्म जी को रक्षित करके नमित्त नियुक्त हुये, उधर से सब पाण्डव लोग अर्जुन को चारों ओर से घेर कर युद्ध के लिये नियुक्त हुये ॥

इस के पीछे युद्ध आरम्भ हुआ भीष्म जी ने नौ बाणों से अर्जुन को घायल किया, अर्जुन ने मर्म भेदी दश बाणों से उन को घायल किया पुनः अर्जुन ने हजारों बाणों से भीष्म जी की दशाओं को रोका, भीष्म जी ने अपने बाणों से अर्जुन के उन बाणों के जालों को रोका, दोनों का खूब युद्ध हुआ एक के छोड़े हुये बाण दूसरे के छोड़े हुये बाणों से कटे हुये पृथ्वी पर गिर पड़े, फिर अर्जुन ने पचीस तीक्ष्ण शरों से भीष्म जी को व्यथित किया, भीष्म जी ने भी नव बाणों से अर्जुन को घायल किया, भीष्म जी ने अर्जुन के सारथी श्री-कृष्ण जी को भी तीन बाणों से घायल किया, उन को बाण लगे हुये देखकर अर्जुन ने क्रोध में आकर भीष्म जी के सारथी को तीन बाणों से घायल किया, यह दोनों बाण चलाते हुये अवकाश पाकर शंख भी बजाते और धनुषों के शब्द भी करते और बार बार विचित्र मंडल दिखलाते, यह दोनों इस प्रकार

से लड़ते हुये पहचाने न जासकते थे कौरवों ने चिन्हों से भीष्म जी को और पाण्डवों ने चिन्हों ही से अर्जुन को जाना और उन के पास गये इन के युद्ध को देख कर सब लोग आश्चर्य मे रह गये यह दोनों कभी बाण जालों में गुप्त हो जाते और कभी प्रकट होजाते ॥

दूसरी ओर कौरवों और पाण्डवों के अन्य महारथियों का युद्ध हुआ और एक ने दूसरे पर बहुत से प्रहार किये और द्रोणाचार्य और द्रुपद की बड़ी भारी लड़ाई हुई ॥

इक्यावनवां अध्याय

—:o:—

धृष्टद्युम्न और द्रोणाचार्य का महा घोर युद्ध ॥

धृतराष्ट्र ने कहा मैं उद्योग से प्रारब्ध को बड़ा मानता हूं क्योंकि भीष्म इतना उद्योगी होने पर भी युद्ध में पाण्डवों को नहीं मार सका ॥

संजय ने उत्तर में कहा कि पाण्डव इन्द्रादि देवताओं से भी विजय नहीं हो सकते क्योंकि वह बड़े पराक्रमी हैं ॥

द्रोणाचार्य ने नाना प्रकार के बाणों से धृष्टद्युम्न को घायल किया और भल्लों से उस के सारथी को रथ के नीड़ से नीचे गिरा के महा क्रोध में होकर धृष्टद्युम्न के घोड़ों को चार शय्याओं से महा पीड़ित किया, इस पर भी बड़े वीर

धृष्टद्युम्न ने द्रोणाचार्य को नब्बे तीक्ष्ण शरों से घायल किया॥

इस के पीछे द्रोणाचार्य ने धृष्टद्युम्न को इतने बाण मारे कि वह ढका गया और फिर मृत्यु दंड के समान घोर बाण को हाथ में लिया, उन के हाथ में इस बाण को देखकर सारी सेना में हाहा कार मच गया धृष्टद्युम्न अकेला ही पर्वत के समान अचल होकर खड़ा रहा और द्रोणाचार्य के उस मृत्यु रूप आये हुए बाण को अपने बाणों से काट डाला और द्रोणाचार्य के ऊपर बाण बरसाये॥

धृष्टद्युम्न के इस कार्य को देखकर पाण्डव और उनके सहायक बड़े प्रसन्न हुए और उच्च शब्द से पुकारे॥

इस के पीछे उस बीर ने द्रोणाचार्य पर महा घोर बरछी फेंकी इस बरछी को आचार्य जी ने अनेक बाणों से काट कर गिरा दिया फिर धृष्टद्युम्न ने आचार्य जी पर अनेक बाण बरसाये आचार्य जी ने उस बाण बरषा को रोक कर उस के धनुष को मध्य में से काट डाला इस पर धृष्टद्युम्न ने लोहे की एक भारी गदा लेकर द्रोणाचार्य जी पर फेंकी उन्हों ने उस के टुकड़े २ कर दिये और उस पर अति तीक्ष्ण बाण बरसाए जिन्हों ने उस के कवच को काट कर उस के रुधिर को पिया॥

इस के पीछे धृष्टद्युम्न ने दूसरा धनुष लिया और पांच बाणों से द्रोणाचार्य को घायल किया इस समय यह दोनों महा बीर रुधिर से भरे हुए थे॥

इस के पीछे द्रोणाचार्य ने बड़े पराक्रम से धृष्टद्युम्न के धनुष को काट डाला और उस को बाण मार २ कर ऐसा ढक दिया जैसे बादल पर्वत को ढक देते हैं फिर उस के सारथी को भल्लों से रथ से नीचे गिरा दिया और चारों घोड़ों को भी चार तीक्ष्ण बाणों से भूमि पर गिरा दिया और सिंह नाद करके उस के दूसरे धनुष को भी काट डाला। इस पर धृष्टद्युम्न गदा हाथ में लेकर अपनी वीरता प्रकट करता हुआ रथ से उतरा अभी वह रथ से उतरने न पाया था कि आचार्य जी ने बड़ी शीघ्रता से एक विशिख बाण से उस की गदा को गिरा दिया॥

इस के पीछे धृष्टद्युम्न ने ढाल और तलवार हाथ में ली और आचार्य जी पर वार करने लगा परन्तु आचार्य जी ने अपनी हस्त लाघवता दिखला कर बाणों से उस को रोक दिया इस महा युद्ध में कोई महा बली न जा सका और धृष्टद्युम्न ने बाणों को खूब रोका। इस समय महा बाहु भीमसेन धृष्टद्युम्न की सहायता के लिये आ कूदा, उस ने आते ही सात बाणों से द्रोणाचार्य को घायल किया और शीघ्र ही धृष्टद्युम्न को दूसरे रथ पर स्वार किया॥

तब दुर्योधन ने राजा कलिंग को आचार्य जी की रक्षा के लिये भेजा कलिंग अपनी बड़ी भारी सेना सहित भीमसेन के सन्मुख आया द्रोणाचार्य जी धृष्टद्युम्न को छोड़ कर विराट और द्रुपद से युद्ध करने लगे, धृष्टद्युम्न युद्ध में धर्म राज युधिष्ठिर

जी के पास गया और भीमसेन और कलिंग देशीयों का महा घोरं युद्ध होने लगा ॥

बावनवां अध्याय

—:-०-:—

भीमसेन के हाथ से कलिंगदेश के राजकुमार का मारा जाना और कलिंगदेश का क्रोध करना ॥

जब कलिंग देश का राजा भीमसेन के रथ के पास आया तो उस ने कनुधारी निषादों के राजा को घायल किय,राजा केतुमान ने कई हजार रथ और दश हजार हाथी साथ ले कर भीमसेन को घेर लिया; भीमसेन के आगे चलने वाले चेदि मत्सय और क्रोप देशों के वासी वीर राजाओं सहित निषादों के सन्मुख आकर वर्तमान हुये तब बड़ा घोर युद्ध हुआ लड़ने वाले योधा लड़ते समय बड़े गर्जते थे, पृथ्वी इन योधाओं के रुधिर और मांस से भर गई, प्रहार करते समय अपने और पराये की पहचान न हो सकती थी, कईयों ने अपनी ही सेना के मनुष्यों पर शस्त्र चलाये' चेदि देश वाले शूरों का युद्ध कलिंग और निषादों के साथ हुआ, चेदि देशी अपनी सामर्थ के अनुसार अपनी वीरता दिखला कर भीमसेन को त्याग कर पृथिक हो गये, परन्तु उन के अलग होने पर

भीमसेन बराबर डटा रहा और उस ने कलिंग देशियों को भी अपने बाणों से ढक दिया ॥

इस समय धनुषधारी कलिंग के राजा और उस के महारथी पुत्र शुक्रदेव ने बाणों से भीमसेन को घायल किया और भीमसेन के चारों घोड़ों को मारा और वह उसे विरथ देख कर अपने तीक्ष्ण बाणों से ढकता हुआ भीमसेन के सन्मुख दौड़ा, भीमसेन ने अपने लोहे की भारी गदा को शुक्र देव के ऊपर फेंका जिस से वह मर कर ध्वजा और सारथी समेत पृथ्वी पर गिरा ॥

कलिंगपति ने अपने पुत्र को मरा हुआ देख कर हज़ारों रथों समेत भीम सेन की दशाओं को रोका इस के पीछे महाबली भीमसेन ने गदा को छोड़ कर अनुपम ढाल तलवार को हाथ में लिया, उधर क्रोध से भरे हुये कलिंग पति ने धनुष की ज्या को चढ़ा कर सर्प के विष के समान एक महा घोर बाण को लेकर भीमसेन को मारने की इच्छा कर उस के ऊपर फेंका, उस बाण को गिरते समय भीमसेन ने काट कर दो टुकड़े कर डाला और प्रसन्न चित्त होता और कारवी सेना को भयभीत करता हुआ महा शब्द करने लगा ॥

कलिंगपति ने चौदह तीक्ष्ण बाण भीमसेन के ऊपर फेंके उन सब तीरों को भीमसेन ने अपनी खड्ग से मार्ग में ही काट डाला और समीप आये हुये भानुमन्त के सन्मुख

दौड़ा, तब भानुमन्त तीरों की वर्षा से भीमसेन को ढक कर महा शब्द करने लगा, भीमसेन भी उधर से बड़े उच्च स्वर से गर्जा, भीमसेन की इस गर्ज से कालिंग देश की सेना भयभीत होगई ॥

तब भीमसेन हाथी के दांतों के द्वारा चढ़ कर शीघ्र ही हाथी की पीठ पर होगया और भानमंत की कमर को काट कर बड़े भारी खड़ग को हाथी के कंधे पर गिराया इस खड़ग के प्रहार से वह हाथी पृथ्वी पर गिर पड़ा, भीमसेन भी झट हाथी पर से अलग होगया और निर्भय होकर शत्रु के हाथियों को गिराता हुआ बहुत से रास्तों में घूमा, भीमसेन सब को मारता और घूमता ही दृष्ट पड़ता था उस ने कई हाथियों के स्वारों को काटा, भीमसेन को इस प्रकार सब को मारते और इस वेग से घूमते देख कर शत्रु भयभीत हो कर भागे, इस के पीछे भीमसेन ने कई रथियों के रथ जूए आदि को काट कर रथियों को भी मारा और इधर उधर घूमता हुआ दिखाई दिया, उस ने इस समय कई प्रकार के शस्त्र चलाये जिन से कितने ही शूर वीर कट गये और टुटे कवच वाले गर्ज २ कर मर गये, घायल हाथियों ने अपनी ही सेना के कई आदमियों का नाश कर डाला और स्वयं बड़े २ शब्द करते हुये पृथ्वी पर गिर पड़े, उस भूमि में बड़ी २ सुन्दर झूलें, कई अस्त्र, विचित्र धनुष और युद्ध के अन्य सामान जहां तहां गिरे हुये दीख पड़े हाथियों पर कर गिरने से कई स्थानों पर भूमि रुक गई,

सार यह कि इस नरोत्तम भीमसेन ने बहुत सा नाश किया और दोनों पक्षों में बड़ा घोर युद्ध हुआ ॥

भीमसेन ने कितनों को चरणों से मारा, कितनों को खैंच कर मार डाला, कितने ही उस की खड़ग से मारे गये और कितने उस के शब्द से भयभीत हो कर पृथ्वी पर गिर पड़े । इस की ऐसी बातों को देख कर बहुत से लोग भयातुर होकर भाग गये ॥

कलिंग देश की सेना भीष्म जी को बीच में कर के भीमसेन के सन्मुख दौड़ी, इस सेना के आगे श्रुतायुष को देख कर भीमसेन उस के सन्मुख गया उस ने भीमसेन को आता हुआ देख कर नौ तीरों से उस को हृदय में घायल किया, भीमसेन घायल हुआ हुआ क्रोध से अग्नि रूप हो गया इस दशा में अशोक ने झट भीमसेन को रथ पर स्वार कर लिया । भीमसेन रथ पर स्वार होकर श्रुतायुष के सन्मुख दौड़ा और तिष्ठ तिष्ठ शब्द कहा, श्रुतायुष ने बड़े तीक्ष्ण नौ बाण भीमसेन के ऊपर फेंके जिन से भीमसेन को बड़ा क्रोध हुआ, भीमसेन ने श्रुतायुष को सात बाण मारे इन बाणों से उस के महाबली पालकों के रक्षक सत्यदेव और सत्य मर गये ॥

इस के पीछे भीमसेन ने तीव्र नाराचों से केतुमन्त को यमपुरी में पहुंचाया । इस पर कालिंग देशीय क्षत्रियों ने बहुत क्रोध में आकर हजारों सेनाओं से भीमसेन को लड़ाया और बरछी, गदा, खड़ग, तोमर, दुधारा खंग और परशों से भीमसेन को रोका, इस समय भीमसेन ने गदा हाथ में लेकर

सात सौ वीरों को मार डाला फिर उस ने कलिंग देशी दो हज़ार वीरों को यमपुरी में पहुंचाया, बाक़ी कलिंग देशी दिल छोड़ कर भाग गये। स्वार हाथियों से रहित कीये गये, वह हाथी अपनी ही सेना को मारते, खूंदते और गर्जते हुए सेना के बीच में से भाग गये ॥

तब भीमसेन ने खड़्ग हाथ में ली और बड़े शंख को बजा कर कलिंग देश की बाक़ी सेना को कम्पायमान किया भीमसेन के इन कर्मों से कलिंग देशी सेना भय खा गई कलिंगयों के लौटने और भाग जाने पर पांडवी सेनापति ने आज्ञा दी कि तुम भी लड़ो ॥

यह सुन सेना भीमसेन के पास पहुंच गई, युधिष्ठर ने हाथीयों की बड़ी सेना लेकर पीछे की ओर से उन की रक्षा की इस रीति से धृष्टद्युम्न सेनापति ने अपनी सब सेना को चला कर अच्छे पुरुषों समेत भीमसेन के पृष्ठ भाग को रक्षित किया, भीमसेन को इस प्रकार घूमते देख धृष्टद्युम्न बहुत प्रसन्न हुआ, भीमसेन धृष्टद्युम्न की रक्षा के लिये युद्ध में घुस गिया, इन दोनों महा वीरों को देख कर कलिंगी सेना डर गई, सात्यकी ने वहां पहुंच कर इन दोनों की पृष्ठ को रक्षित किया और इस ने शत्रुओं की बहुत सी सेना मारी, भीमसेन ने कलिंगयों के रुधिर से नदी बहादी, कलिंगयों ने महा शब्द किया कि भीमसेन काल रूप हो कर लड़ता है इस शब्द को सुन कर भीष्म जी सेना को चारों ओर से त्यार करके बड़ी शीघ्रता

से सेना के सन्मुख आये उन को आते देख कर सात्यकी भीमसेन और धृष्टद्युम्न उन के रथ के सन्मुख दौड़े और उन को चारों ओर से घेर लिया और शीघ्र गामी बाणों से उन को घायल किया, आगे से भीष्म जी ने भी तीन २ सीधे चलने वाले बाणों से उन को घायल किया फिर भीमसेन के घोड़ों को मारा ॥

इस के पीछे भीमसेन ने बड़ी तीव्रता से भीष्म जी के रथ पर उग्र बरछी को फैंका, परन्तु उन्हों ने उस बरछी को रास्ते में ही दो खंड कर पृथ्वी पर गेर दिया, तब भीमसेन बड़ी शीघ्रता से लोहे की बड़ी गदा को लेकर रथ से कूदा और महारथी धृष्टद्युम्न उस को अपने रथ पर बिठा कर सब के देखते २ दूर लेगया ॥

इस के पीछे सात्यकी ने भी भीमसेन के अभिष्ट के लिये शीघ्र ही शायकों से भीष्म जी के सारथी को गिराया, सारथी के गिरने पर भीष्म जी युद्ध भूमि से बाहर दूर चले गये, इस समय भीमसेन को बड़ा महा कोप हुआ, उस ने सब कलिंगी सेना को मारा, कौरवी सेना का कोई बीर इस के सन्मुख न हो सका । तब सात्यकी पाण्डवों से जा मिला और उसने कौरवी सेना को मार कर पाण्डवी सेना की रक्षा की ॥

तिरपनवां अध्याय

—०:—

लक्ष्मण और अभिमन्यु का युद्ध, अर्जुन का अभिमन्यु की सहायता करना और दुर्योधन का लक्ष्मण को हटा लेजाना ॥

दोपहर के व्यतीत होने पर धृष्टद्युम्न अकेला ही अश्वत्थामा, शल्य और कृपाचार्य के सन्मुख हुआ और बड़े तीक्ष्ण बाणों से अश्वत्थामा के घोड़ों को मारा, वह शल्य के रथ पर चढ़ गया और उसी रीत से धृष्टद्युम्न के सन्मुख हुआ इस को इस दशा में देख कर अभिमन्यु तीक्ष्ण बाणों की वर्षा करता हुआ दौड़ा, और युद्ध भूमि में पहुंच कर उस ने अश्वत्थामा पर चार बाण, कृपाचार्य पर नौ बाण और शल्य को पचीस बाण मार कर घायल किया ॥

इधर से अश्वत्थामा ने एक बाण से शल्य ने बारह बाणों से और कृपाचार्य ने तीन तीक्ष्ण बाणों से अभिमन्यु को घायल किया पुनः लक्ष्मण बड़े कोप से अभिमन्यु के सन्मुख आया इन दोनों का खूब युद्ध हुआ फिर दुर्योधन के पुत्र ने अपने तीक्ष्ण बाणों से अभिमन्यु को घायल किया, अभिमन्यु ने पांच तीक्ष्ण बाणों से लक्ष्मण को घायल किया, लक्ष्मण ने एक तीर से उस के धनुष को मुष्ट देश से काट डाला इस पर वहां बड़ा शब्द हुआ, अभिमन्यु ने झट उस धनुष को फेंक कर दूसरा नया जड़ाऊ धनुष लिया एक ने दूसरे को घायल किया

लक्ष्मण को पीड़ामान देख कर दुर्योधन वहां आया और लक्ष्मण को अलग किया ॥

इस के पीछे सब राजा लोगों ने रथों के समूहों समेत अभिमन्यु को रोका परन्तु वह वीर इन से घिरा हुआ भी व्याकुल न हुआ, अर्जुन अपने पुत्र को इस दशा में देख कर उस की रक्षा के लिये आया वह राजा लोग जिन में भीष्म और द्रोणाचार्य भी थे अर्जुन के सन्मुख आये इस समय वहां बड़ी धूल उड़ी अर्जुन के बाणों से सब हाथी घोड़े सेना आदि वहां से छूट गये, रथी रथों को छोड़ कर इधर उधर भागने लगे, घोड़ों के सवार घोड़ों को और हाथीयों के सवार हाथीयों को छोड़ कर भाग गये और कई अर्जुन के बाणों से रथों और हाथीयों से गिर पड़े सार यह कि अर्जुन के कराल बाणो से सब के धनुष, अस्त्र, शस्त्र आदि टूट गये और कईयों के बाजू कट गये इस समय रणभूमि में हजारों कवच, खड्ग, तोमर बाण आदि गिरे हुये दीख पड़े और ध्वजा, ढालें, पंखे, छत्रादि वस्तुओं के ढेरों के ढेर लग गये कौरवी सेना के वीर प्रथम तो अर्जुन के सन्मुख ही न हुए और जे हुए भी तो उस पराक्रमी ने उन को अपने बाणों से यम लोक में पहुंचाया इस दशा को देख कर अर्जुन और वासुदेव ने शङ्ख बजाए ॥

शंखों के इन शब्दों से युधिष्ठर जान गया कि हमारी जय हुई है तब पाण्डवी सेना के लोग बड़े प्रसन्न हुये ॥

चव्वनवां अध्याय

—:०:—

भीष्म जी ने अपनी सेना को आज्ञा दी कि प्रातःकाल ही चढ़ाई की जावे और उन्हों ने स्वयं गरुड़ नाम व्यूह रचा, भीष्म जी स्वयं उस व्यूह की चोंच पर हुए, द्रोणाचार्य और कृतवर्मा दोनों नेत्रों के स्थान में हुये, अश्वत्थामा और कृपाचार्य शिर के स्थान में हुये, त्रिगर्त, मत्स्य, केकय, भूरिश्रवा, शल्य, भगदत्त, मद्रक, सिंधु, सौवीर और पंचनद वासी लोग जयद्रथ के साथ ग्रीवा में नियत हुये, दुर्योधन अपने सगे भाईयों समेत अपने पीछे चलने वाले शूर वीरों से युक्त पीछे की ओर नियत हुये विन्द, अनुविंद और अवंति के राजा लोग, काम्बोज शकलोग, शूरसेन देशीय गरुड़ की पूंछ की ओर नियत हुये मगध देशी, कलिंगदेशी और असुरों के समूह दक्षिण पक्ष पर नियत हुये और कारूप, विकुंज, मुंड, कौंडी, वृप, बृहद्बल के साथ बायें पक्ष पर उपस्थित हुये ॥

कौरवी सेना को इस प्रकार से व्यूहित देख कर अर्जुन ने धृष्टद्युम्न की सम्मति से अपनी सेना को उसी प्रकार का अर्द्ध चंद्रनाम व्यूह रच कर अपनी भयानक सेना को सुशोभित किया, नाना प्रकार के शस्त्रों के समूह और अनेक देशी राजा लोगों को साथ लेकर भीमसेन इस व्यूह के दाहिने शृंग पर नियत हुआ, उस के पीछे राजा नील, उस के पीछे चंदेरी, काशी, करूपदेशी और पौरवदेशी को साथ लिये

हुये राजा धृष्टकेतु हुआ, धृष्टद्युम्न, शिखंडी, पंचालदेशी और प्रभद्रक अनन्त सेना सहित बीच में नियत हुये उसी स्थान में हाथियों की सेना समेत धर्मराज युधिष्ठिर भी वर्तमान हुये इन के पीछे सात्यकी और द्रौपदी के पांच पुत्र थे फिर अभिमन्यु फिर इरावान इस के पीछे घटोत्कच और महारथी केकय देशी हुये इन सब के पीछे स्वयं अर्जुन हुआ ॥

इन दोनों व्यूहों के बन जाने पर युद्ध आरम्भ हुआ, इस समय जहां तहां हाथी और रथों के समूह एक दूसरे को मारते और गिराते दृष्ट पड़ते थे और इन के लड़ने के शब्द आकाश तक सुनाई देते थे ॥

पचपनवां अध्याय

--:o:--

अर्जुन का रथयूथों को मारना और दोनों ओर के महावीरों का एक दूसरे के सामने होना ॥

इस समय अर्जुन ने रथ के यूथों को इस रीति से मारा जिस रीति से युग के अंत में काल सब का नाश करता है। कौरवों ने भी युद्ध में अपने खूब हाथ दिखाये और पाण्डवी सेना को छिन्न भिन्न करके आप भी छिन्न भिन्न हो गये, इस छिन्न भिन्न होने में इतनी धूल उठी कि वहां कुछ न दीखता था दिशा विदिशा का कोई पता न लगता था, परन्तु इस छिन्न

भिन्न में दोनों व्यूहों की बरवार रक्षा रही कौरवी सेना का व्यूह द्रोणाचार्य से रक्षित रहा और पाण्डवी का भीमसेन से और इन्ही दोनों वीरों के रक्षण के कारण किसी की पराजय न हुई ॥

इस के पीछे रथ हाथियों से संयुक्त दोनों सेनाओं के मनुष्य सेना के आगे से निकल कर युद्ध करने लगे, घोड़ों के स्वारों ने दुधारे खड़गों और परशों से घोड़ों के स्वारों को गिराया, रथी ने रथी के सामने होकर उस को गिराया, हाथियों के स्वार हाथियों के स्वारों से गिराये गये, पति सिंह नाम सेना के भाग ने भिरिपाल और परशों से पतियों को गिराया ॥

इस के पीछे वह नियम टूट गया और स्वार पैदलों और पैदल स्वारों पर वार करते हुए और गिरते गिराते हुए टूट पड़े सार यह कि अंधा धुन्ध मच गई, जिधर दृष्टी पड़ती रुधिर और मांस दिखाई देता, कई स्थान रुधिर और मांस से ऐसे भर गये कि रास्ता रुक गया, रुधिर से धूल शांत हो गई, कहीं रुंड दीख पड़ते और कहीं कटे हुए अंग ॥

भीष्म, द्रोणाचार्य, जयद्रथ, राजा सिंधु, पुरुमित्र, विकर्ण, शकुनि, सौबल सिंह के समान पाण्डवों की सेना के मारने को उपस्थित हुए ॥

दूसरी ओर से भीमसेन, घटोत्कच, सात्यकी, चेकितान, और द्रोपदी के पांच पुत्र यह सब अपने साथी राजाओं को

साथ लेकर युद्ध भूमि में आये। इन्हों ने आते ही कौरवों को इस प्रकार छिन्न भिन्न कर दिया जैसे देवता लोग दानवों को कर देते हैं॥

इस के पीछे दुर्योधन हजार रथ लेकर घटोत्कच के सन्मुख आया, सब पांडव अपनी सेना सहित भीष्म और द्रोणा चार्य के सन्मुख हुये, अर्जुन सब ओर के राजाओं के सन्मुख गया अभिमन्यु और सात्यकी का शकुनी से सामना हुआ॥

छप्पनवां अध्याय

—:o:—

सब राजाओं ने रथों समेत अर्जुन को घेर लिया और चारों ओर से उस पर बाण चलाने लगे। फिर उन्हों ने स्वच्छ बरछी, तीक्ष्ण गदा, पराश, परश्वध, मुद्गर और शूलों को परिघों समेत अर्जुन के रथ पर छोड़ा॥

उधर से अर्जुन ने भी अपने सुनहरी बाणों से उन सब राजाओं के शस्त्र और बाणों की वर्षा को रोका इस समय अर्जुन की हस्तलाघवता देखने के योग्य थी। जिसने इस को देखा उस की प्रशंसा की अभिमन्यु और सात्यकी ने शकुनि और उस की सेना को रोका॥

इस के पीछे सौवल के पुत्रों ने क्रोध में आकर अपने नाना प्रकार के शस्त्रों से सात्यकी के रथ को टुकड़े टुकड़े कर डाला॥

सात्यकी ने उसी समय उस रथ को त्याग दिया और अभिमन्यु के रथ पर चढ़ गिया, एक ही रथ पर से उन दोनों ने गुप्त ग्रन्थी वाले बाणों से शकुनि की सेना को मारा ॥

इधर द्रोणाचार्य और भीष्म ने कंक पत्र वाले तीक्ष्ण बाणों से युधिष्ठर की सेना का विध्वंस किया, आगे से धर्म राज युधिष्ठर, नकुल और सहदेव आदि पांडव सब कौरवी सेना को देखते २ द्रोणाचार्य की सेना के सन्मुख दौड़े इस से वहां बड़ा भारि तुमुल युद्ध हुआ, फिर भीमसेन और घटोत्कच ने बड़ा काम किया तब दुर्योधन ने उन दोनों के सन्मुख आकर उन को रोका, इस समय घटोत्कच का पराक्रम अपने पिता भीमसेन से भी अधिक था, इस के पीछे भीमसेन ने बड़े क्रोध में आकर हंसते हुये अपने प्रशतनाम बाण से दुर्योधन के हृदय में प्रहार किया, वह झट रथ के बैठने के स्थान में बैठ गया, दुर्योधन का सारथी उस को अचेत जान कर बड़ी शीघ्रता से रथ को युद्ध भूमी से बाहर ले गया, तब सेना इधर उधर बिखर गई ॥

इस समय भीमसेन उस भागनेवाली कौरवी सेना को तीक्ष्ण बाणों से मारता हुआ पीछे की ओर से चला, धृष्टद्युम्न और युधिष्ठर ने द्रोणाचार्य और भीष्म जी के देखते हुये शत्रु हनने वाले विशखों से उस सब सेना को मारा इस समय कौरवी सेना भयभीत होकर ऐसी भागी कि द्रोणाचार्य और भीष्म जी भी उस को न रोक सके, अभिमन्यु और

सात्यकी ने शकुनि की सेना का नाश कर दिया, तब अर्जुन ने कौरवी सेना पर बाणों की ऐसी वर्षा की जैसे कि धारों से बादल जल को बरसाता है, इस बाण वर्षा से सेना घायल और कम्पायमान होकर भाग निकली, द्रोणाचार्य और भीष्म जी ने इस भागती हुई सेना को बड़ी कठिनता से रोका, बाकी भागती हुई सेना को दुर्योधन ने विश्वास दिलाकर युद्ध भूमि को लौटाया, जब सेना पुनः इकत्र होगई तो दुर्योधन भीष्म जी के पास जाकर बोला ॥

हे तात ! मेरी समझ में नहीं आता कि आप जैसे शस्त्रज्ञ द्रोणाचार्य, कृपाचार्य और अश्वत्थामा जैसे शस्त्र विद्या में निपुणों के होते हुये हमारी सेना क्यों भागती है ? क्योंकि मैं किसी को भी इन के समाने पराक्रमी नहीं देखता, हे पिता ! जान पड़ता है कि आप पाण्डवों पर दया रखते हैं यदि ऐसा ही करना था तो पहिले ही कह देना था कि हम शिखंडी और धृष्टद्युम्न से नहीं लड़ेंगे । इस दशा में मैं कर्ण से सब काम करवा लेता, इस समय आप का मुझ को त्यागना ठीक नहीं, आप दोनों पुरुषोत्तम अपने योग्य पराक्रम से युद्ध करो ॥

दुर्योधन की इन बातों को सुन कर भीष्म जी क्रोध से भरे हुए हंस कर बोले हे राजन् ! मैं ने बहुत बार तुम से तुम्हारा हितकारी बचन कहा है कि पांडव लोग युद्ध में इन्द्र आदि देवताओं से भी नहीं जीते जा सकते, हे राजन् ! जो

कुच्छ मुझ से हो सकता है मैं तुम्हारे लिये करता हूं और करूंगा देख मैं अभी पांडवों को सेना समेत पीछे हटाऊंगा। इस पर दुर्योधन ने शंख और भेरी को बजाया उधर से इन शब्दों को सुन कर पांडवों ने भी शंख आदि बजाये ॥

सतावनवां अध्याय

—:o:—

उस दिन के मध्यान्ह के बीतने पर और पांडवों के विजय पा कर प्रसन्न होने पर भीष्म जी सब रीति से कौरवों से रक्षित होकर बड़े शीघ्र गामी घोड़ों के द्वारा पांडवों की सेना के सामने गये, इस समय रोम हर्षण करने वाला महा युद्ध हुआ, जिस ओर ध्यान दो, तिष्ठ तिष्ठ, खड़ा हूं खड़ा हूं, देखो २, लौटो २, नियत हो नियत हो, प्रहार करो प्रहार करो इत्यादि अनेक प्रकार के शब्द सुनाई दिये, भूषणों से अलंकृत हज़ारों भुजा पृथ्वी पर दृष्ट पड़ीं, रुधिर की नदी बह रही थी, जहां तहां अस्त्र पड़े हुये दीख रहे थे, सार यह कि जैसा यह युद्ध हुआ इस से पहिले न हीं कभी देखा और न सुना गया। भीष्म जी ने इस समय वह हाथ दिखाये कि उस का वर्णन नहीं किया जा सकता ॥

उन की हस्तलाघवता इस समय देखने के योग्य थी

वह अभी पूर्व में देखे गये अभी पश्चिम में दृष्ट पड़े क्षण में उत्तर दशा में दीख पड़ें और क्षण में दक्षिण में, इस समय पाण्डवों का कोई वीर उन के युद्ध को देखने के सामर्थ नहीं हुआ, जिधर देखो इन के धनुष से गिरे हुये बाण ही दीख पड़ते थे, लोग हाहाकार कर रहे थे, इन बाणों से कई राजा लोग कालवश हूये, भीष्म जी का कोई बाण निष्फल नहीं जाता था, घोड़े, हाथी आदि किसी न किसी के शरीर में घुस कर उस का अवश्य नाश करता था इन के नाराच नाम बाणों से दो या तीन हाथियों के स्वार भी मारे गये, जो कोई इन के सन्मुख आता था वह एक महूर्त में पृथ्वी पर गिरा हुआ दृष्ट पड़ता था सार यह कि पाण्डवी सेना के हज़ारों वीर भीष्म जी के हथो नष्ट हुये ॥

यह दशा देख कर श्री कृष्ण जी अर्जुन से बोले, हे अर्जुन अब वह समय आगया है तू ने जो प्रतिज्ञा की थी कि मै भीष्म, द्रोणाचार्य आदि को यदि वह मुझ से युद्ध करेंगे उन को मारूंगा, सो अब उन को मार कर अपनी प्रतिज्ञा का पालन करो, अपनी छिन्न भिन्न हुई २ सेना को इकत्र करो और इन भागते हुये अपने सहायक राजाओं को धैर्य देकर नाश से बचाओ ॥

यह सुन कर अर्जुन ने कहा महाराज! आप घोड़ों को उधर चलाओ जिधर भीष्म जी हैं मैं अभी इस सेनारूपी समुद्र को उतर कर भीष्म जी को मारूंगा कृष्ण जी उस समय घोड़ों

को भीष्म जी की ओर लेगये, अर्जुन को युद्ध में इस प्रकार प्रवृत्त देख कर भागती हुई पाण्डवी सेना को धैर्य आया और वह लौट आई ॥

इस के पीछे भीष्म जी ने बाणों से अर्जुन और उस के रथ को सर्वथा ढक दिया परन्तु वासुदेव जी ने धैर्य धरते हुये भीष्म ही के शायकों से उन के धनुष को काट कर पृथ्वी पर गिरा दिया ॥

भीष्म जी ने शीघ्र ही दूसरा धनुष ले लिया और दोनों हाथों से उस को खैंचने ही लगे थे कि अर्जुन ने क्रोध में आकर उस को भी काट डाला, अर्जुन की इस हस्तलाघवता को देख कर भीष्म जी बड़े प्रसन्न होकर कहने लगे, हे अर्जुन! तू धन्य है हे पुत्र! मैं तेरे इस कर्म से अत्यंत प्रसन्न हूं तू मेरे साथ युद्ध कर यह कहते हुये भीष्मजी ने और धनुष लिया और अर्जुन के रथ पर बाण वर्षा की ॥

श्रीकृष्ण जी ने भीष्म के बाणों को निष्फल करके तेज मंडलों में घूमते हुय घोड़ों के चलान में बड़ा पराक्रम दिखाय। उधर से भीष्मजी ने अपने तीक्ष्ण बाणों से अर्जुन और वासुदेव जी दोनों को घायल किया इस से यह दोनों बड़े पीड़ामान हुय। भीष्म जी को इस प्रकार पाण्डवी सेना का नाश करते और अर्जुन इत्यादि पर प्रबल होते देख कर श्रीकृष्णजी ने चिन्ता की कि युधिष्ठर की सेना नहीं रहेगी क्योंकि जब भीष्मजी एक ही बाण से युद्ध के बीच दैत्य

दानवों के नाश करने वाले हैं तो पाण्डवों और उन की सेना का मारना उन के लिये क्या है। पाण्डवी सेना भागी जा रही है और कौरवी उन को भागते देख कर प्रसन्न हो रही है। अब उचित है कि इन पाण्डवों के हित के लिये मैं शस्त्र धारण करके भीष्मजी को मारूं॥

श्री कृष्ण अभी यह विचार ही रहे थे कि भीष्म जी ने क्रोध में आकर अर्जुन के रथ पर बाण फैंके वह बाण इतने अधिक थे कि उन से सब दिशा ढक गई और आकाश और दिशा कुछ भी दीख न पड़ती था यहां तक कि सूर्य के किर्ण भी दृष्ट न पड़ते थे वायु थम गई सारे अन्धकार हो गया और द्रोणाचार्य, विकर्ण, जयद्रथ, भूरिश्रवा, कृतवर्मा, कृपाचार्य, श्रुतायु, अवष्टपति, विन्द, अनुविन्द, सुदक्षिण, पुराशजा, सौवेरों के गण, सर्व विशात गण, क्षुद्रक, मालव, शीघ्र ही भीष्म जी के आज्ञा वर्ती होकर अर्जुन की ओर दौड़े और उस के रथ को घेर लिया॥

सात्यकी ने यह दशा देख कर अर्जुन की सहायता की और गिरी हुई पाडवों सेना को यूं बोला हे क्षत्रियो! कहां जाते हो शास्त्रों ने श्रेष्ठों का यह धर्म नहीं कहा है हे वीरो! अपने प्राणों को मत त्यागो अपने धर्म पर दृढ़ रहो॥

यह सुन कर श्री कृष्ण जी बोले हे महावीर! जो जाते हैं उन को जाने दो अब युद्ध में भीष्म को मुझ से गिरे हुए देखना हे सात्यकी! कौरवी सेना में कोई ऐसा वीर नहीं जो

मुझ से युद्ध कर सके अब मैं रथ के महाचक्र को लेकर इस महाव्रत भीष्म के प्राणों को हरूंगा, भीष्म और द्रोणाचार्य को मार कर पाचों पाडवों को प्रसन्न करूंगा अब मैं धृतराष्ट्र के सब पुत्रों और उन के सहायक राजाओं को यम लोक में पहुंचा कर युधिष्ठर को राज्य से युक्त करूंगा ऐसे कह कर श्री कृष्ण जी रथ से उतर अपने चक्र को ले भीष्म जी की ओर चल दिये उन के आते हुए देख कर भीष्म जी बोले हे देवेश्वर! मैं तुम को नमस्कार करता हुं। हे लोक नाथ आप युद्ध में हठ करके मुझ को रथ से गिराओ, हे श्री कृष्ण जी! अब तुम्हारे हाथ से मेरा मारा जाना लोक और परलोक में कल्याण है॥

श्रीकृष्ण ने कहा तुम ही इस संसार के नाश मूल हो अब तुम दुर्योधन का नाश करो क्योंकि द्यूत का खेलने वाला राजा धर्म मार्ग में नियत मंत्री से निवारण करने के योग्य है अथवा जो काल से विपरीत बुद्धि होकर धर्म को उल्लघन करके चले वह कुल का कलंकी है उस का त्यागना ही उचित है॥

भीष्म जी ने उत्तर में कहा यादवों ने अपना प्रयोजन सिद्ध करने के लिये कंस को मारा वह राजा भी समझाने से नहीं समझा प्रारब्ध से जिस की बुद्धि विपरीत हो गई हो उस का अभीष्ट सुनने वाला कोई नहीं॥

इस समय अर्जुन ने झट रथ से कूद कर श्री कृष्ण जी को दोनों भुजाओं से पकड़ लिया, वह अर्जुन को लेकर ऐसी

शीघ्रता से चले जैसे कि बड़ा वायु अकेले वृक्ष को लेकर चलता है। फिर अर्जुन ने श्रीकृष्ण जी को भीष्म जी की ओर दौड़ते हुये को दशवें पाद चिन्ह पर बड़ी सुगमता से बल से पकड़ लिया और उन को दंडवत करके बोला, हे भगवन्! आप क्रोध को दूर करीये, आप ही पांडवों की गति हो, आप अपने प्रण के अनुसार कर्म को मत छोड़ो। हे केशव! जो मैं पुत्र और भाईयों की शपथ खाता हुं मैं अवश्य आप के साथ मिल कर कौरवों का नाश करुंगा॥

अर्जुन के प्रण को सुन कर कृष्ण देव महा प्रसन्न हो कर उस के अभीष्ट सिद्ध करन में प्रवृत्त हुये और चक्र समेत रथ पर स्वार होगये इस के पीछे श्रीकृष्ण जी न अपने पांचजन्य शंख को बजा कर ऐसी ध्वजा की कि सारा आकाश गूंज उठा, उधर से कौरवी सेना मे भी मृदंग, भेरी आदि के भयाकर शब्द होने लगे और अर्जुन के गांडीव धनुष का शब्द बादल की गर्जना के समान आकाश और दिशाओं में व्याप्त हुआ। इस गांडीव धनुष से निकले हुये बाण सब दिशाओं में फैल गये॥

इस समय दुर्योधन जिस ने बाण हाथ में उंचे रखा हुआ था भीष्म, भूरिश्रवा और अपनी सेना को साथ ले कर अर्जुन के सन्मुख गया, भूरिश्रवा ने सात भल्ल, दुर्योधन ने भयकारी तोमर, शल्य ने गदा और भीष्म ने बरछी अर्जुन पर फेंकी, अर्जुन ने अपने सात बाणों से भूरिश्रवा के बाणों को रस्ते में काटा क्षुरप्र नाम बाण से दुर्योधन के तोमर का नाश किया

फिर भीष्म जी की बरछी और शल्य की गदा को तोड़ कर अपने गांडीव धनुष को दोनों हाथों से खैंच कर महेन्द्र अस्त्र को अंतरिक्ष में प्रकट किया, इस धनुष के बाणों से सब सेना पीछे हट गई और बहुत से हाथी घोड़ों ध्वजाओं के शिर और भुजायें भी कट गईं बहुत से उस धनुष के टंकार को सुन कर ही भयभीत हो गये, गांडीव के शब्द से दुंदभी आदि बाजों के सब शब्द दब गये, राजा विराट और पांचाल गांडीव का टंकार सुन कर उस स्थान पर पहुंच गये, कौरवी सेना भी वहां आई सब ने अपने को न्यून ही समझा कोई प्रति पत्ती उस के सन्मुख नहीं गया, इस महा युद्ध में बड़े २ शूर बीर मारे गये अर्जुन के नाराच बाणों से सुनहरी जड़ाऊ झूलों से अलंकृत हाथी झुलस कर धरती पर गिर पड़े, कई हजार पदाति इस में मरे और हजारों अंगहीन हो कर भाग गये, इस समय रण भूमि में अस्त्रों, कुंडलों, रथों, कवचों, शरीर के अंगों के ढेर दृष्ट पड़ते थे शरीरों से निकले हुये रुधिर की नदी बह रही थी, शृगाल, कंक, गिद्ध, और कच्चे मांस खाने वाले राक्षस, पिशाच, पक्षी आदि के समूह वहां दीख पड़ते थे, इस दशा को देख कर अर्जुन और श्रीकृष्ण जी प्रसन्न चित्त हो कर गर्जे, इतने में सूर्यास्त का समय हो गया कौरवों ने युद्ध को बंद कर दिया, अर्जुन भी अपने भाईयों को साथ लेकर विश्राम अस्थान को लौटे ॥

रात्रि के होने पर कौरवों के बड़े घोड़ शब्द हुये अर्जुन ने दश हजार रथियों को मार कर सात सौ हाथी मार डाले

और सारे पूर्वदेशी शूर वीर सौ वीर गणों समेत क्षुद्रक मालवों को भी मार डाला, इस युद्ध में अर्जुन ने श्रतायु अंबष्टपति, दुर्मषर्ण, चित्रसेन, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, सैंधव, वाह्लीक, भुरिश्रवा, शल और भीष्म जी आदि सहस्रों योधाओं को जीता, यह सब शूर वीर मसालें बलवाकर कौरवी सेना को गये ॥

अठावनवां अध्याय

—:०:—

चौथे दिन के युद्ध का प्रारम्भ ॥

चौथे दिन प्रातःकाल होते ही भीष्म जी बड़े क्रोध में भरे हुये सेना को साथ लेकर भरत वंशियों की सेना के आगे गये, द्रोणाचार्य, दुर्योधन, वाह्लीक, दुर्मर्षण, चित्रसेन, जयद्रथ और अन्य राजा लोग सेनाओं के समूहों समेत चारों ओर से भीष्म जी के पास आये और वह भी साथ हो लिये, यह सब बड़े सज धज से जा रहे थे कि अर्जुन ने दूर ही से उस व्यूह को देखा और स्वयं श्वेत घोड़े और ध्वजा धारी रथ की स्वारी में सुशोभित होकर सब शत्रुओं की सेना की ओर चला ॥

कौरव लोग अर्जुन को इस प्रकार आते हुए देख कर महा व्याकुल हुए इस समय पाण्डवों ने वह व्यूह रचा था

जो कौरवों ने पहिले दिन रचा था हज़ारों तुरया और शंखों के शब्द इस समय आकाश में गूंज रहे थे इस के पीछे वीरों के छोड़े हुए बाणों के शब्दों से संयुक्त शंखों के बड़े शब्दों ने क्षण मात्र में ही भेरी और ढालों के शब्दों को गुप्त कर दिया धूल के उड़ने से अन्धकार सा हो गया इस समय रथी रथी से, घोड़ों के सवार घोड़ों के सवारों से और हाथियों के सवार हाथियों के सवारों से लड़े पदातियों को पदातियों ने मारा तलवारें खडग आदि अस्त्र गिरते हुए प्रकाशमान होते थे सार यह कि इस समय सेना का बहुत सा भाग नष्ट हो गया। भीष्म जी की दृष्टि अर्जुन पर पड़ी तो वह झट उस की ओर दौड़े, कृपाचार्य, शल्य, विवंशति, दुर्योधन, सोमदत्त यह सब द्रोणाचार्य जी को आगे करके अर्जुन के सन्मुख गए तब अभिमन्यु रथ के सेनामुख से निकल कर बड़े वेग से उन सब के सन्मुख चला और उन सब बलवानों के अस्त्रों को काट डाला ॥

इस के पीछे भीष्मजी अर्जुन और अभिमन्यु को भी उघंल्लन कर गये। उधर से अर्जुन ने गांडीव धनुष के शब्द से महा शब्दायमान विपाठ नाम बाणों के जाल से प्रबल शत्रुओं के जालों का नाश किया, और बड़े तीव्र धार वाले स्वच्छ भल्ल भीष्मजी पर बरसाये जिन का उन्हों ने इस प्रकार नाश किया जिस प्रकार सूर्यदेव उदय होते ही अंधकार का नाश कर देते हैं ॥

उनसठवां अध्याय

—:०:—

इस के पीछे अश्वत्थामा, भूरिश्रवा, शल्य, चित्रसेन और सायमन के पुत्र ने अभिमन्यु से युद्ध किया, यह अभिमन्यु इन पांचों से इस प्रकार से लड़ा जिस प्रकार एक सिंह का बच्चा वन में पांच हाथियों से लड़ता है। बड़ी लक्ष भेदन पूर्वक शूरता और अस्त्रों के कारण पराक्रम और हस्तलाघवता में उस बालक के समान कोई भी न हुआ। अभिमन्यु को इस प्रकार लड़ते हुये देख कर अर्जुन ने बड़े वेग से सिंह नाद किया॥

दुर्योधन आदि कौरवों ने जब अभिमन्यु के हाथों अपने पक्षियों की यह दशा देखी तो झट उन्हों ने उस को चारों ओर से रोक लिया। अर्जुन ने अपने एक बाण से अश्वत्थामा को और पांच बाणों से शल्य को घायल किया और आठ बाणों से सायमन के पुत्र की ध्वजा को गिराया और सोमदत्त की फेंकी हुई सुनहरी दंड वाली सर्पाकृति शक्ति को तीव्र बाणों से काटा, तब अभिमन्यु ने शल्य के सैंकड़ों बाणों को रोक कर उस के चारों घोड़ों को मार डाला इस समय वह पांचों वीर भाग गये॥

तब दुर्योधन के कहने से पच्चीस हजार त्रिगत देशी और मद्र देशियों ने केकय देशियों को साथ लेकर अर्जुन और अभिमन्यु के मारने की इच्छा करके उ. को चारों ओर से घेर

लिया धृष्टद्युम्न ने यह दशा देख कर बड़े क्रोध के साथ हज़ारों घोड़ों और हाथियों के पंतियों को साथ लेकर उन सब का सामना किया और तीन बाणों से अर्जुन के सन्मुख जाने वाले कृपाचार्य को घायल फिर दश तीव्र बाणों से कृपाचार्य के राथियों को मार डाला फिर उस ने बड़े तीक्ष्ण नाराचों से पांर के पुत्र दमन को मारा ॥

इस के पीछे चित्रसेन दुर्मद धृष्टद्युम्न और उस के सारथी को दश २ बाणों से घायल किया आगे से धृष्टद्युम्न ने क्रोध में आकर होठों को चबाते हुये बड़े तीक्ष्ण भल से इस के धनुष को काटा, और पच्चीस बाण मार कर उस के घोड़ों को दोनों सारथीयों समेत मार डाला ॥

तब चित्र सेन क्रोध में आकर शीघ्रही रथ से नीचे उतर आया और हाथ में महा घोर खडग लेकर रथ पर बैठे हुये धृष्टद्युम्न की ओर चला, धृष्टद्युम्न ने उस को आते देख कर अपनी गदा से उस के शिर को तोड़ा, शिर के टूटते ही वह वीर चित्रसेन मर कर अपने खडग और ढाल समेत पृथ्वी पर गिर पड़ा, इस पर कौरवी सेना में बड़ा हाहाकार मच गिया ॥

सायमनी ने जब अपने पुत्र को इस प्रकार मरते देखा तो वह बड़े वेग से धृष्टद्युम्न के सन्मुख दौड़ा और इन का आपस में घोर युद्ध होने लगा सायमनी ने क्रोध में आकर तीन बाणों से धृष्टद्युम्न को घायल किया, शल्य ने भी उस को छाती में घायल किया ॥

साठवां अध्याय

—:०:—

धृतराष्ट्र ने संजय से कहा मैं उपाय से प्रारब्ध को बड़ा मानता हूं क्योंकि कौरवों की सेना अधिक होने से उन का उपाय पाण्डवों से अधिक है परन्तु जीत पाण्डवों की हो रही है ॥

संजय ने फिर अपना कथन प्रारम्भ किया और कहा कि इस के पीछे शल्य के नौ बाणों से पीड़ित अत्यंत क्रोध युक्त धृष्टद्युम्न ने लोहे के तीर से मद्रदेश के राजा को पीड़ामान किया जिस से शल्य शीघ्र ही पीछे रह गिया, एक महुर्त तक इन दोनों का खूब युद्ध हुआ ॥

इस के पीछे शल्य ने पीले तीव्रधार वाले भल्ल से धृष्टद्युम्न के धनुष को काट कर उस को बाणों की वर्षा से ऐसा ढका जैसे कि वर्षा ऋतु में जल भरे हुये बादल पर्वत को ढक देते हैं। इस से धृष्टद्युम्न को पीड़ा मान होता हुआ देख कर अभिमन्यु बड़ा क्रोध से भरा हुआ बड़े वेग से राजा मद्र के रथ की ओर दौड़ा और तीन पैने बाणों से आर्त्तायनि को घायल किया ॥

इस पर दुर्योधन, विकर्ण, दुशासन, विविंशति, दुर्मर्षण दुस्सह, चित्र सेन, सुदुर्मुख, सत्यव्रत, पुरोमित्र और महारथी विकर्ण राजा मद्र की रक्षा पर नियत हुये, इन को देख कर

भीम सेन, धृष्टद्युम्न, द्रौपदी के पांचों पुत्र, अभिमन्यु, नकुल और सहदेव उनको रोकने के लिये वर्तमान हुये, फिर इन दोनों में युद्ध होने लगा और दोनों ओर से शस्त्र फेंके जाने लगे, एक के सन्मुख होकर एक युद्ध करता ॥

दुर्योधन ने अत्यंत क्रोध युक्त होकर चार बाणों से धृष्टद्युम्न का घायल किया, दुर्मर्षण ने बीस बाणों से, चित्र सेन ने पांच बाणों से, दुर्मुख ने नौ बाणों से, दुस्सह ने सात बाणों से, विविंशति ने पांच बाणों से और दुशासन ने तीन बाणों से उस को घायल किया, परंतु वीर अभिमन्यु ने उन सब को पच्चीस २ बाणों से घायल किया फिर अभिमन्यु ने सत्यव्रत और पुरो मित्र को दश २ बाणों से घायल किया ॥

इस के पीछे नकुल और सहदेव ने अपने मामा शल्य को तीव्र बाणों से ढक दिया उधर से शल्य ने भी अपने भानजों पर बाण बरसाए इन दोनों में से कोई भी इन बाणों से व्याकुल न हुआ, तब दुर्योधन को देख कर भीमसेन ने अपनी गदा को उठाया उस को गदा उठाते देख कर दुर्योधन और उस के भाई भागे दुर्योधन ने दस हजार हाथियों की सेना ली और राजा मगध को आगे करके भीम सेन के सन्मुख गया, भीम सेन झट गदा को हाथ में ले कर रथ से उतरा और हाथियों पर प्रहार करने लगा इस से वह सब हाथी चलाय मान होगये तब द्रौपदी के पांचो पुत्र अभिमन्यु, नकुल, सहदेव और धृष्टद्युम्न भीमसेन के पृष्ठ भाग की रक्षा करते हुये

बाण बरसाते हुये हाथियों के सन्मुख गये पांडवों ने उन हाथियों के सवारों और हाथी वाणों के शिरों को अपने भल्लों से काट डाला इस समय सब से अधिक हाथी धृष्टद्युम्न ने मारे ॥

इस के पीछे मगध के राजा ने ऐरावत के समान हाथी को अभिमन्यु के रथ पर भेजा उस को आते हुये देख कर अभिमन्यु ने उसे मारकर अपने भल्ल से उस हाथी के न रोकने वाले राजा के सिर को भी काट डाला फिर भीमसेन हाथीयों की उस सेना को मथन करता हुआ घूमा, भीमसेन के प्रहारों से हाथी इस प्रकार झुलस गये जिस प्रकार बिजली के गिरने से पर्वत झुलस जाते हैं उन हाथीयों के दान्त, कान, आँख, नाक जांघ, पीठ और कमर टूट गये और उन में से कई झाग डाल कर प्राण त्याग गये, युद्ध भूमि में इस समय रुधिर, मज्जा और टूटे हुए अङ्ग ही अङ्ग दृष्ट पड़ते थे भीमसेन रुधिर से भरी हुई गदा को लिये हुए भयानक रूप से सेना को भयभीत कर रहा था कई हाथी डर कर कौरवी सेना को दबाते हुए भागे इस युद्ध में अभिमन्यु ने भीमसेन की चारों ओर से रक्षा की इस समय भीमसेन रुद्र रूप दृष्ट पड़ता था और शङ्कर के समान सब दिशाओं में नाचता था भीमसेन ने अपनी गदा से हाथीयों को इस प्रकार हटाया जिस प्रकार ग्वाला गौओं को हटाता है ॥

इकासठवां अध्याय

—:o:—

जब दुर्योधन ने हाथीयों की यह दशा देखी तो क्रोध से भर कर सेना से बोला, भीमसेन को पकड़ो, इस को मारो वह सेना महा भयकारी शब्द करती हुई भीमसेन के सन्मुख दौड़ी भीमसेन ने उस सब सेना को रोक दिया, इस घोर युद्ध में धृष्टद्युम्न, द्रौपदी के पांचों पुत्र, अभिमन्यु और शिखंडी बराबर भीमसेन की रक्षा पर नियुक्त रहे अर्थात् उन्हों ने उस को तनक काल भी न त्यागा, इस के पीछे भीमसेन अपनी गदा को लेकर कौरवी सेना के वीरों पर दौड़ा और रथ घोड़े आदि को मारता हुआ सेना में इस प्रकार घुस गया जैसे प्रलय काल में अग्नि देवता दौड़ता है, इस समय भीमसेन कौरवी सेना को इस प्रकार गिराता था जिस प्रकार वायु अपने वेग से वृक्षों को गिराता है ॥

भीमसेन को इस प्रकार मारते हुए आते देख कर कौरवी सेना के छक्के छूट गए भीमसेन को गदा लिये हुए जिस ओर की सेना ने देखा वह डर कर छिन्न भिन्न हो गई यह दशा देख कर भीष्म जी भीमसेन के सन्मुख आए और यह दोनों एक दूसरे के सन्मुख हुए उस समय सात्यिकी बड़े दृढ़ धनुष से शत्रुओं को मारता हुआ और कौरवी सेना को कम्पायमान करता हुआ भीष्म जी के सन्मुख हुआ, कौरवी सेना में से

सात्यकी को कोई भी न रोक सका, तब अलंबुप नाम राक्षस नें मपक्क नाम बाणों से उस को घायल किया और उस के सन्मुख दौड़ा इस को आता हुआ देख कर कौरवी सेना के वीरों ने उस पर बाणों की ऐसी वर्षा की जैसे कि जल के भरे हूय बादल वेग से पर्वत पर बरसते हैं, भीष्म जी भी इस समय सात्वकि को न रोक सके, इस पर सोमदत्त के पुत्र भूरीश्रवा ने धनुष को हाथ में लिया और सात्वकि के सन्मुख गया ॥

बासठवां अध्याय

—:o:—

भूरीश्रवा ने सात्वाकि के सन्मुख जाकर उस को नौ बाणों से घायल किया उधर से सात्वकी ने सब के देखते हुये गुप्तग्रंथी वाले बाणों से भूरीश्रवा को रोका, दुर्योधन ने अपने भाईयों को साथ लेकर चारों ओर से भूरीश्रवा की रक्षा की, उधर से सब पाण्डवों ने सात्वकी की रक्षा की, भीमसेन को गदा उठाय कोप में देख कर दुर्योधन और उस के सब भाईयों ने असंख्य रथियों को साथ लेकर उस को चारों ओर से रोका फिर नंदन ने महाबली भीमसेन को तीव्र और तेज नोक वाले बाणों से घायल किया इस के पीछे महाबली भीमसेन बड़े उत्तम रथ पर सवार होकर विशोक से बोला कि धृतराष्ट्र के यह बड़े शूर और महाबली पुत्र अत्यंत क्रोध में होकर मेरे मारने को त्यार

हुये हैं मैं इन को निस्संदेह तेरे देखते ही मार डालूंगा इस कारण हे सारथी ! तू इस युद्ध में मेरे घोड़ों को बड़ी सावधानी से सम्भाल, यह कह कर भीमसेन ने बड़े तीक्षण दश बाणों से दुर्योधन को अत्यंत घायल किया और नन्दन को तीन बाणों से स्तनों के मध्य में विदीर्ण किया ॥

तब दुर्योधन ने सात बाणों से महाबली भीमसेन को और तीन अत्यंत तीक्ष्ण बाणों से विशोक सारथी को घायल किया और हंसते हुये तीन महा पैने बाणों से भीमसेन के धनुष को मूठ के स्थान पर से काट डाला ॥

भीमसेन ने तीरों से अपने सारथी को पीड़ामान देख कर बड़े क्रोध में आकर दुर्योधन के मारने के लिये दिव्य धनुष को धारण किया और क्रोधित होकर बाणों के काटने वाले क्षुरप्र बाण को धनुष में चढ़ा कर उस से दुर्योधन के उत्तम धनुष को पीछे की ओर से काटा ॥

दुर्योधन ने क्रोध में आकर उस कटे हुए धनुष को फेंक कर शीघ्र ही दूसरे धनुए को लिया और काल मृत्यु के समान प्रकाशित बड़े भयानक विशिख बाण को उस पर चढ़ा कर कोप से भीमसेन के स्तनों के मध्य स्थान को घायल किया जिस से भीमसेन रथ के बैठने के स्थान में बैठ कर महा अचेत होगया यह देख कर पाण्डवों के उन महा रथियों ने जिन का अग्रगामी अभिमन्यु था महा क्रोधित होकर दुर्योधन के मस्तक पर महा उग्र तीक्ष्ण बाणों की

तुमुल वर्षा की। इतने में भीमसेन भी सचेत हो गया उस ने तीन बाणों से दुर्योधन को घायल करके पांच बाणों से उसको व्यथित किया और पच्चीस बाणों से शल्य को घायल किया, शल्य इन से घायल होकर युद्ध से हट गया॥

इस के पीछे सेनापति सुषेण, जलसंध, सुलोचन, उग्र, भीमरथ, भीम, बीरबाहु, अलोलुप, दुर्मुख, दुष्मधर्ष, विवित्स विकट और सम यह दुर्योधन के चौदह भाई क्रोध में आकर सब एक साथ भीमसेन के सन्मुख गये और बाण बरसा कर उस को अत्यंत घायल किया॥

तब भीमसेन ने इन सब को अच्छी रीति से देख कर होठों को चाट कर गरुड़ के समान वेग से दौड़ कर अपने क्षुरप्र बाण से सेनापति के शिर को काट डाला तब उस ने बड़े प्रसन्न होकर तीन बाणों से जलसन्ध को विदीर्ण करके यम लोक में पहुंचाया। फिर सुषेण को मार डाला, फिर एक भल्ल से उग्र के शिर को मुकुट समेत पृथ्वी पर गिराया फिर सत्तर बाणों से घोड़े, ध्वजा और सारथी समेत बीरबाहू को मारा इस के पीछे उस महावीर ने हंसते हुए युद्ध भूमि में भीम और रथ दोनों को मार कर यमपुरी में पहुंचाया तब सब सेना के देखते २ अपने क्षुरप्रबाण से सुलोचन को मारा उन चौदह में से जो बाकी रहे वह प्राण बचा कर भाग गए॥

तब भीष्म जी सब महारथियों से बोले हे वीरो! धृतराष्ट्र के

पुत्रों के मारने वाले इस वीर को पकड़ो, यह आज्ञा पाकर कौरवी सेना के सब लोग क्रोध में आकर भीमसेन को पकड़ने के लिये दौड़े, राजा भगदत्त मतवाले हाथी की सवारी पर अकस्मात् वहां आ टूटा जहां भीमसेन नियत था उस ने अपने बाणों से भीमसेन को ढक दिया, अभिमन्यु ने भीमसेन की यह दशा देख कर चारों ओर इतने बाण बरसाए कि वह रुक गया और उस का हाथी घायल हो गया वह अत्यन्त तीव्र होकर पृथ्वी को अपने चरणों से कंपाता हुआ उन सब वीरों के सन्मुख दौड़ा जिस से वह सब भयभीत होगए ॥

इस के पीछे राजा भगदत्त ने महा क्रोधित हो कर गुप्त ग्रंथी वाले बाणों से भीमसेन के वक्ष स्थल को व्यथित किया इस से भीमसेन ने मूर्छित हो कर ध्वजा की यष्टी का सहारा लिया, भीमसेन को मूर्छित देख कर भगदत्त बड़ा प्रसन्न हो कर ऊंचे स्वर से गर्जा, घटोत्कच अपने पिता की यह दशा देख कर क्रोध से अग्नी रूप हो कर उसी स्थान में गुप्त होगया और घोर रुप महा भयकारी माया को रच कर और अपने रचे हुये माया रूपी एरावत पर चढ़ कर आधे ही निमेष में दृष्टि गोचर हुआ और महा सुन्दर प्रभावी अंजन वामन महा पद्म नाम दूसरे दिग्गज उस के पीछे चलने वाले हुये तब घटोत्कच ने अपने हाथी को युद्ध में भेजा जो भगदत्त के मारने को उपस्थित हुआ, दूसरे हाथी भी राक्षसों से भरे हुये वहां पहूंचे और उन्हों ने भगदत्त के हाथी को अपने

दांतों से महापीड़ा वान किया इस से व्याकुल होकर उस हाथी ने महा घोर शब्द किया, इस शब्द को सुन कर भीष्म जी द्रोणाचार्य और दुर्योधन से बोले, हे महावीरो! घटोत्कच और भगदत्त का युद्ध होरहा है, घटोत्कच राक्षस बड़े शरीर वाला है भगदत्त के हाथी के व्याकुलता के बहुत से शब्द सुनने में आते हैं, शीघ्रता करो और राजा की सहायता को पहुंचो, देखो, पाण्डवों की प्रसन्नता के शब्द सुनने में आरहे हैं ॥

भीष्म जी के इन वचनों को सुन कर सब राजा लोग द्रोणाचार्य को आगे करके बड़ी तीव्रता से भगदत्त के समीप पहुंचे, इन जाते हुये शत्रुओं को देख कर पांडवों समेत पांचाल देशी धर्मराज युधिष्ठर को अपने आगे करके पीछे की ओर से चले ॥

घटोत्कच इन सेनाओं को देख कर आकाश को शब्दाय-मान करता हुआ बड़े शब्द से गरजा उस के शब्द को सुन कर और हाथीयों को आपस में लड़ते देख कर भीष्म जी द्रोणाचार्य से बोले मुझ को इस महा साहसी राक्षस के साथ युद्ध करना अच्छा नहीं जान पड़ता क्योंकि वह इस समय बल प्राक्रम से भरा हुआ महामद वाला है, यह लक्ष भेदी बड़ा प्रहार करने वाला है और हम यत्न की सवारी वाले हैं, पांचाल और पांडवों से सब दल घायल हुये, इसी हेतु से विजय से शोभा पाने वाले पांडवों के साथ युद्ध करना अच्छा नहीं प्रतीत होता है, अब विश्राम करो, प्रातःकाल युद्ध

करेंगे, उन शूर वीरों ने पितामह जी के वचन को स्वीकार करके वैसा ही किया और घटोत्कच के भय से डर युक्ती से युद्ध से हट गये ॥

कौरवों के इस प्रकार हट जाने पर पांडवों ने प्रसन्न हो कर शंख और बांशियों के शब्दों से सिंह नाद किये ॥

कौरव उदास हुये २ अपने डेरों को गये और पांडव घटोत्कच और भीमसेन को आगे करके प्रसन्न होते हुये अपने डेरे को पधारे ॥

डेरे में पहुंच कर दुर्योधन अपने भाईयों सहित चिंता में पड़ गया ॥

तिरसठवां अध्याय

—:०:—

रात्रि के समय जब कौरव अपने डेरों में विश्राम करने लगे तो दुर्योधन ने पितामह भीष्म जी से पूछा हे पिता जी ! द्रोणाचार्य, शल्य, कृपाचार्य, अश्वत्थामा, कृतवर्मा, सुदक्षिण, काम्बोज, सुदक्षिणा, भूरिश्रवा, विकर्ण, भगदत्त और आप जैसे महारथियों के जो तीनों लोकों में सामर्थवान प्रसिद्ध हैं और प्राणों को सदैव तुच्छ जानते हैं होते हुए पाण्डव लोग हम को पद पद पर जीत रहे हैं इस का कारण मुझे कुच्छ प्रतीत नहीं होता आप कृपा करके मुझे इस से ज्ञात करें ॥

भीष्म जी ने कहा हे कौरवों के राजा ! मैंने तुम को बहुत बार समझाया परन्तु तैने न माना अब भी मैं वही कहता हूं कि तुम पाण्डवों से सन्धि करलो इस में तुम्हारी और सकल संसार की कुशल है, पांडव तेरे भाई हैं, तेरी कुल के भूषण हैं और वह सत्य पर हैं, वसुदेव भगवान् अवतार धारण किये उन के संग हैं धर्म भी उन्हीं की ओर है भला जिस ओर भगवान् और धर्म हो उस ओर विजय क्यों न हो दुर्योधन भीष्म जी की इन बातों को सुन २ सो गया ॥

चौसठवां अध्याय

—:०:—

सूर्य के उदय होने पर दोनों सेना एक दूसरे के सन्मुख हुईं, दोनों ओर से व्यूह रचे गये और दोनों ओर के योधा प्रसन्न और अलंकृत होकर एक दूसरे के ऊपर प्रहार करने लगे, भीष्मजी ने अपने मकर नाम व्यूह की चारों ओर से रक्षा की, इसी प्रकार पाण्डवों ने भी अपने अजयराज श्येन व्यूह की रक्षा की, पाण्डवों के व्यूह के मुख पर महाबली भीमसेन शोभायमान हुआ, नेत्रों पर दुर्जेय शिखंडी और धृष्टद्युम्न, शिर पर सात्विकी, ग्रीवा पर अपने गांडीव धनुष को लेकर अर्जुन, द्रुपद अपने पुत्रों और एक अक्षौहिणी सेना समेत बायें पक्ष पर, केकय एक अक्षौहिणी सेना लेकर दाहिने पक्ष पर द्रौपदी के पांच पुत्र और अभिमन्यु पीछे की ओर, धर्मराज

युधिष्ठिर अपने नकुल और सहदेव भाईयों को लेकर पृष्ठ की ओर शोभित हुये ॥

भीमसेन ने मुख के मार्ग कौरवों के उस मकर नाम व्यूह में प्रवेश कर के भीष्मजी को शायकों से ढक दिया, भीष्मजी ने भी बड़े अस्त्र फैंके और बड़ा युद्ध कर के पाण्डवों के व्यूह को मोहित कर दिया, अर्जुन झट आगे बढ़ा और उसने भीष्मजी को हज़ार बाणों से घायल किया ॥

इस समय दुर्योधन पुर्व दिन में मरे हुये अपने भाईयों को याद करके द्रोणाचार्य जी से बोला कि हे पापों से रहित आचार्य जी ! आप सदैव मेरा हित चाहने वाले हो, हम सब आप की और भीष्म जी की रक्षा में होकर युद्ध में देवताओं को भी जीत सकते हैं, यह पांडव किस गिनती में हैं, जो पराक्रम रहित हैं। आप का कल्याण हो, आप अब ऐसा यत्न करो जिस से पांडव मारे जायें ॥

दुर्योधन के यह वचन सुनते ही द्रोणाचार्य जी ने सात्विकी के देखते २ पांडवों की सेना को बाणों से वेधा तब सात्विकी ने द्रोणाचार्य को रोका, इस समय महा घोर युद्ध होने लगा। द्रोणाचार्य ने बड़े क्रोध में आकर सात्विकी को दश बाणों से शत्रु स्थान में घायल किया इस समय क्रोध रूप भीमसेन ने द्रोणाचार्य को बाणों से वेधा, फिर द्रोणाचार्य, भीष्म और शल्य ने बड़े बाणों से भीमसेन को ढक दिया, इस के पीछे क्रोध युक्त अभिमन्यु और द्रुपद के पुत्रों ने सब कौरवी

शस्त्र धारीयों को बड़े तीक्ष्ण बाणों से बेध डाला, फिर शिखंडी भीष्म और द्रोणाचार्य के सन्मुख गया और तीव्र बाणों की वर्षा करने लगा ॥

भीष्म जी ने शिखंडी को अपने सन्मुख देख कर और उस के स्त्री भाव को स्मरण करके उस से युद्ध करना त्याग दिया, यह देख कर दुर्योधन के कहने के अनुकूल द्रोणाचार्य उस की रक्षा के लिये उस के सन्मुख गये, शिखंडी ने उस को रोका, तब दुर्योधन ने बहुत सी सेना भेज कर भीष्म जी की रक्षा की तब पाण्डव अर्जुन को आगे करके और विजय में दृढ़ बुद्धि होकर भीष्म जी के सन्मुख हुये इस समय बड़ा युद्ध हुआ ॥

पैंसठवां अध्याय

—:o:—

इस दिन कौरवों के रक्षक भीष्म जी ने मड़ा युद्ध किया इस में हाथियों की चिंगाड़ों और घोड़ों की हिन हिनाटों से बड़ा भारी शब्द हुआ, दोनों सेनाओं के योधा विजय को चाहते हुये आपस में ऐसे गरजे जैसे कि गौओं की शालाओं में बली वर्द गर्जना करते हैं, इस युद्ध में तीक्ष्ण बाणों से कटे हुये शिरों की ऐसी वर्षा हुई जैसी कि आकाश से पाषाणों की वर्षा होती है और बड़े सुन्दर सुनहरी कुंडल और मंढीलें पहरे हुये शिर पृथ्वी पर गिरे हुये दृष्टि गोचर हुये, विशिखों से विंधे हुये अंग

और कुंडल धारी शिर और अनेक हाथों के भूषणों से पृथ्वी व्याप्त होकर गुप्त होगई. अंगों में कवच विभूषित भुजा चंद्रमा के समान मुख और लाल २ नेत्रों से और हाथी घोड़े और मनुष्यों के सब अंगो से सारी युद्ध भूमि एक क्षण में भर गई, धूल में शस्त्र चमकते दीखते थे और एक दुसरे से टकराने से बादलों की गर्ज होती थी इन शस्त्रों के प्रहार से रुधिर की नदी बह निकली, दुर्मद क्षत्रियों ने बाणों के जालों की वर्षा की, बाणों की इस वर्षा से हाथी पुकार उठे और पांडवों के शूर वीर अस्त्रों से शोभित हुये २ चारों ओर से दौड़े, धनुषों के टंकारों का शब्द इतना था कि उस समय और कुच्छ सुनाई न देता था दूसरे राजा लोग भी शत्रुओं के मारने को चारों ओर दौड़े, बड़े तेजस्वी परिघ के समान भुजाधारी वीरों ने युद्ध में बाण, बरछी, गदा और खडगों से परस्पर में एक ने एक को मारा और बाणों से घायल हाथी अंकुश के बिना ही इधर उधर घूमने लगे, बहु घोड़े जिन के स्वार मारे गये थें दशों दशाओं में दौड़ते फिरते थे कई शूर बीर बाणों से पीड़ित होकर उठ २ कर गिरतें थे जिधर दृष्टी जाती यही दशा दृष्ट पड़ती ॥

इस युद्ध में कौरवों ने पाण्डवों के साथ मुष्टिका, जानुतल और कीलों से भी परस्पर में घात किया और जहां तहां गिरे और गिराये हुये पृथ्वी पर चेष्टा करने वाले शूर वीरों से युद्ध भूमि महा भयकारी दीखने लगी, रथी रथ से पृथक् अथवा

उत्तम खड्ग के धारण करने वाले परस्पर घात आकांक्षी एक एक के सन्मुख दौड़े, इस के पीछे बहुत से कलिंग देशियों से युक्त दुर्योधन भीष्म जी को आगे करके पाण्डवों के सन्मुख हुआ उधर से सब पाण्डव भीमसेन को आगे कर भीष्म जी के सन्मुख हुये ॥

छियासठवां अध्याय

--:०:--

भाईयों और अन्य बांधवों से भीष्म जी को युक्त हुआ देख अर्जुन उन के सन्मुख दौड़ा पांच जन्य शंख और गांडीव धनुष का शब्द सुन कर और अर्जुन की ध्वजा को देख कर सब लोग डर गए अर्जुन ने बाण बरसा कर चारों दिशाओं को चलायमान कर दिया कौरवी सेना को इस समय केवल भीष्म जी का ही आश्रय था और भीष्म जी ही उन सब की रक्षा करते थे, डरे हुए रथी अपने रथों से सवार घोड़ों की पाठ से और पदाती पृथ्वी से अत्यन्त उछलते थे गांडीव धनुष के वज्र के समान शब्दों को सुन कर कौरवी सेना के सब मनुष्य भय के मारे भागे ॥

इस के पीछे राजा कलिंग बड़े शीघ्रगामी कांबोजदेशी उत्तम घोड़ों के द्वारा गोपों की गोपायन नाम असंख्य सेना युक्त मद्र, सौवीर, गान्धार, त्रिगर्त देशी और कलिंगों की

उत्तम सेना के शूरवीरों समेत, नाना प्रकार की सेनाओं के समूहों को साथ लिये जिन में मुख्य दुशासन था और सब राजाओं समेत राजा जयद्रथ और दुर्योधन आदि के भेजे हुये चौदह हज़ार उत्तम घुड़ चढ़े इन सबों ने सौबल के पुत्र शकुनी को मध्य में कर लिया ॥

तब पांडवों ने जिन के रथ और सवारियां बुद्धि के अनुसार विभाग युक्त थीं एक साथ ही आकर कौरवी शूरवीरों को मारा । रथी, हाथी, घोड़े और पदातियों से अच्छे प्रकार से चलायमान युद्ध भूमि बड़े बादलों के समान धूलि से महा भयकारी विदित हुई ॥

भीष्म जी तोमर, प्रास, नाराच और हाथी, घोड़े, रथों से युद्ध करने वाले शूरवीरों की सेना समेत अर्जुन से खूब लड़े, राजा अवंती काशी के राजा के साथ और भीमसेन राजा जयद्रथ के साथ और राजा युधिष्ठर अपने पुत्रों और प्रधानों समेत मद्र देश के राजा शल्य के साथ बड़ी शूरता से लड़े ॥

विकर्ण सहदेव से और चित्रसेन शिखण्डी से लड़ने लगा, मत्स्य देशी शूरवीर दुर्योधन और शकुनि के साथ हो गए महारथी द्रुपद चेतिकान और सात्यकी महात्मा द्रोणाचार्य और उस के पुत्र से युद्ध करने वाले हुये, कृपाचार्य और कृतवर्मा दोनों धृष्टद्युम्न के सन्मुख दौड़े ॥

इसी प्रकार चारों ओर से स्थान २ पर ऐसे यु होने

लगे कि युद्ध करताओं के घोड़े और हाथी रथ भूमि में युक्त हो गये, सब ओर धूल से अंधकार सा हो गया, बाणों और अन्य अस्त्रों के महाघोर शब्द हुये, आकाश अस्त्रों से प्रकाशमान हो गया और सुन्दरी ढालें जहां तहां गिरी हुई दृष्ट पड़ीं। जिस ओर दृष्टि की जाती कटे हुये शिर और अन्य अंग दीख पड़ते, ऐसे रथ जिन के पहिये अक्ष और नीड़ टूट गये थे और बड़ी २ ध्वजायें गिर पड़ी थीं अथवा घोड़े मर गये थे स्थान २ पर गिरे पड़े थे और कितने ही शस्त्रों से घायल हुये हुये घोड़े पृथ्वी पर चारों ओर घूमते थे, इस युद्ध में एक ही बाण से कई सारथी और घोड़े मारे हुये दृष्ट पड़े और कई हाथी बाणों से विधे हुये इधर उधर भागते और पदातियों को खताड़ते हुये देखे गये ॥

सतासठवां अध्याय

—:०:—

इस समय शिखंडी ने मद्र के राजा विराट कोसाथ ले कर बड़ी शीघ्रता से महा रथी भीष्म जी का सामना किया और अर्जुन ने द्रोणाचार्य, कृपाचार्य और कई अन्य बड़े २ कौरवी धनुष धारी और महाबली शूरवीरों को घायल किया भीमसेन के सन्मुख दुर्योधन, राजा संध और कई अन्य शूरवीर राजा लोग हुये। सहदेव के सन्मुख शकुनि और उलूक हुये नकुल

के सन्मुख त्रिगर्त देशी हुये, सात्यकी, चेकितान और अभिमन्यु का युद्ध शाल्व और कैकय लोगों से होने लगा, धृष्टकेतु और घटोत्कच कौरवों की रथ वाली सेना के सन्मुख हुये महारथी धृष्टद्युम्न द्रोणाचार्य से जा भिड़ा, इस प्रकार एक दूसरे के सन्मुख हो कर उन्हों ने शस्त्रों का प्रहार आरम्भ कर दिया, सुन्दर २ ध्वजायें इधर उधर घूमने लगीं और व्याघ्र चर्म से मढ़े हुये रथ पताकाओं सहित शोभा देने लगे, इन की लड़ाई के शब्द होने लगे, पांडवों ने कौरवों पर बड़े घोर प्रहार किये, बाणों की इतनी वर्षा हुई कि उस समय किसी दिशा का ज्ञान न होता था, तीक्ष्ण धार बरछी और छोड़े हुये तोमर और विषयुक्त खड्गों, जड़ाऊ कवचों और अभूषणों के प्रकाश ने आकाश को प्रकाश कर दिया ॥

तब भीष्म ने सब सेना के देखते २ भीमसेन को रोका और अपने तीक्ष्ण बाणों से उस को घायल किया, उधर से भीमसेन ने अपनी तीक्ष्ण बरछी को भीष्म जी के ऊपर फेंका इस बरछी को भीष्म जी ने रासते में ही अपने गुप्त ग्रंथी वाले बाणों से काट डाला और अपने पीतरंग वाले भल्ल से उस के धनुष को काटा ॥

इस के पीछे सात्यकी ने भीष्म जी के समुख आकर बड़े वेग से कानों तक खैंचे हुये तीक्ष्ण बाणों से उन को मोहित कर दिया ॥

फिर भीष्म जी ने बड़े भयानक तीक्ष्ण बाण को चढ़ाकर

सात्यकी के सारथी को रथ से गिरा दिया, सारथी के मरने पर उस के घोड़े इधर उधर दौड़ने लगे, इस पर पांडवी सेना में हा हा कार मच गया, पकड़ो, थामो ! यह शब्द केवल सात्यकी के घोड़ों के लिये थे ॥

इस के पीछे भीष्म जी ने पांड़वों की सेना को ऐसा मारा जैसे असुरों की सेना को इन्द्र मारता है, एक ओर से कौरव पांडवों के सन्मुख और पांडव कौरवों के सन्मुख दौड़े और महा घोर युद्ध होने लगा ॥

अठासठवां अधयाय

—:०:—

इस के पीछे राजा विराट ने भीष्म जी को तीन बाणों से घायल किया, भीष्म जी ने अपने दश बाणों से विराट को और तीन बाणों से उस के घोड़ों को घायल किया, अश्वत्थामा ने छः बाणों से अर्जुन की छाती को घायल किया अर्जुन ने उस के धनुष को काट कर बड़े तीव्र बाणों से उस को घायल किया, अश्वत्थामा ने उसी समय दूसरा धनुष लिया और नौ तीक्षण बाणों से उस को घायल किया और सत्तर तीक्ष्ण बाणों से श्री कृष्ण जी को घायल किया। इस पर अर्जुन को बड़ा क्रोध आया और उस ने बायें हाथ से गांडीव धनुष को बहुत से बाकराद गुप्त ग्रंथी युक्त जीवन के

नाश करने वाले भयानक बाणों को धनुष पर चढ़ाया और बड़ी शीघ्रता से उन से अश्वत्थामा को घायल किया उन बाणों ने कवच को काट कर उस का रुधिर पिया ॥

अश्वत्थामा बाण खाता हुआ युद्ध में बराबर भीष्म जी की रक्षा करता रहा उस के इस महाकर्म को देख कर कौरवों ने उस की बड़ी प्रशंसा की, अर्जुन ने यह विचार कर कि अश्वत्थामा मेरे गुरू का प्रिय पुत्र है और ब्राह्मण है उस का पीछा छोड़ दिया और उसे न मारा इस को छोड़ कर अर्जुन अन्य कौरवी शूरों को मारता हुआ युद्ध मे प्रवृत्त हुआ ॥

इस के पीछे दुर्योधन ने गृधपक्ष युक्त तीक्ष्ण बाणों से भीमसेन को घायल किया इस समय भीमसेन ने अपने दृढ़ धनुष को हाथ में लेकर और दश तीक्ष्ण बाणों को चढ़ा कर दुर्योधन को छाती में घायल किया इस प्रकार से घायल हुये २ दुर्योधन ने बड़े क्रोध में आकर - सुनहरी पंख के पैने किये हुये बाणों से भीमसेन को घायल किया इस समय दोनों का महा घोर युद्ध हुआ और एक ने दूसरे को खूब घायल किया ॥

इस के पीछे अभिमन्यु ने सात तीक्ष्ण बाणों से चित्रसेन और पुरुमित्र को घायल किया, फिर उस ने इन्द्र के समान नाचते हुये सत्तर बाणों से भीष्म जी को घायल किया जिस से कौरव बड़े दुःखी हुये, तब चित्रसेन ने शिली मुख नाम दश बाणों से और सत्यव्रत ने नौ बाणों से, पुरु मित्र ने सात बाणों से उस को घायल किया, अभिमन्यु ने चित्रसेन के धनुष को काट डाला और बाण ही से उस के कवच को काट कर छाती में घायल

किया, इस के पीछे कौरवी सेना के राज कुमारों और महा रथियों ने भी अपने तीक्ष्ण बाणों से उस को घायल किया, आगे से उस ने भी अपने तीक्ष्ण बाणों से सब को घायल किया अभिमन्यु के इस महा काम को देख कर धृतराष्ट्र के पुत्रों ने उस को चारों ओर से घेर लिया, लक्ष्मण शीघ्र ही उस के सन्मुख दौड़ा और उस से भिड़ पड़ा, अभिमन्यु ने लक्ष्मण को छे विशिखों से और उस के सारथी को तीन बाणों से पीड़ा मान किया, लक्ष्मण ने भी अपने बाणों से उस को ऐसा घायल किया कि उस को देख कर आश्चर्य होता था ॥

इस के पीछे अभिमन्यु ने लक्ष्मण के चारों घोड़ों को मार डाला और फिर उस के सन्मुख दौड़ा, इस पर लक्ष्मण ने उस के रथ पर अपनी बरछी फैंकी जिस को अभिमन्यु ने अपने बाणों से रास्ता ही में काट डाला, कृपाचार्य जी लक्ष्मण को अपने रथ पर बिठा कर दूर लेगये, इस के पीछे बड़ा भारी तुमुल युद्ध हुआ जिस में एक पक्ष के वीरों ने दूसरे पक्ष के वीरों पर बड़े घोर अस्त्रों का प्रहार किया, इस समय हाथी और घोड़ों के स्वारों और पदातियों के मर कर गिरने से युद्ध भूमि भरी हुई दृष्ट पड़ती थी ॥

उनहत्तरवां अध्याय

—:०:—

इस के पीछे महाबाहु सात्यकी ने अपने उग्र धनुष को

खैंच कर बड़े तीक्ष्ण बाणों कोछोड़ा, इन से कई शत्रु मारे गये दुर्योधन ने यह देख कर दश हज़ार हाथीयां को भेजा सात्यकी ने अपने दिव्यास्त्रों से बड़े २ धनुष धारीयों को मार डाला, भूरी शूवा यह दशा देख कर सात्यकी के सन्मुख आया और उस ने अपनी हस्तलाघवता को दिखा कर बड़े क्रोध से भरे हुये इन्द्र वज्र के समान धनुष को टंकार कर सर्पों के समान सहस्त्रों बाण छोड़ ॥

सात्यकी के साथी इस बाण वर्षा को न सह कर उस को अकेले छोड़ कर भाग गये, सात्यकी के दश पुत्रों ने यह दशा देखकर भूरी शूवा से कहा हे कौरवों के प्यारे पुत्र! आओ, हम सब से अथवा एक २ से युद्ध करो, या तुम हम को संग्राम में जीत कर कीर्ति पाओगे या हम तुम पर विजय पाकर अपने पिता को आनन्द देंगे ॥

भूरीशूवा ने आगेसे कहा हे वीर लोगो! यदि तुम्हारी यही इच्छा है तो आओ सब इकठे होकर लड़ो, मैं तुम सब को मारूंगा, दोनों ओर से ऐसे बाण वर्षे कि आकाश बाणों से भर गया तीसरे पहर तक उस एक वीरका बहुतों से युद्ध हुआ इन सबों ने उस अकेले को बाणो से ढक कर ऐसा सींचा जैसे कि वर्षा ऋतु में सेमरु को बादल सींचते हैं परंतु उस महावीर ने उन सब के बाण समूहों को रास्ते ही में काटा फिर उन दशो ने बाणों को छोड कर उस अकेले को मारने का विचार किया, भूरीशूवा ने अत्यंत कोप युक्त होकर एक निमिष ही में दश बाणों से उन के दशों धनुषों को

काटा और उन के धनुष टूटने पर उस ने उन दशों के सिरों को काट डाला ॥

सात्यकी अपने दशों पुत्रों को मरा हुआ देख कर बड़े क्रोध में भरा हुआ भूरीश्रवा के सन्मुख आया, दोनों ने रथ से रथ की टक्कर लगा कर घोड़ों को मार डाला और दोनों रथ से उतर कर और एक दूसरे के सन्मुख होकर गर्जते हुये द्वन्द युद्ध करने लगे, इस के पीछे बड़े २ खडग और ढालें धारण करके युद्ध में प्रवृत हुये ॥

तब भीमसेन ने सात्यकी के पास जाकर उस को रथ पर स्वार किया, उधर से दुर्योधन ने सब के देखते २ भूरीश्रवा को रथ पर चढ़ाया, तब पाण्डव और भीष्म जी भी युद्ध में प्रवृत हुये, सूर्य के आरूण होने पर अर्जुन ने पच्चीस हजार महा राथियों को मारा, दुर्योधन की आज्ञा से कौरवी सेना के बहुत वीर उस को मारने की इच्छा से उद्यत हुये परंतु उस को न पाकर आप ही नष्ट होगये, इस के पीछे मत्स्य और केकयों ने आकर पुत्र समेत अर्जुन की चारों ओर से रक्षा की, इस समय वहां इतनी धूल उड़ी कि सूर्य अस्त सा दीखने लगा जिस से सेना में बड़ा मोह उत्पन्न हुआ, भीष्म जी के घोड़े थक गये थे उन्हों ने सेना को विश्राम दिया, पाण्डवी सेना भी अपने डेरों को गई ॥

सत्तरवां अध्याय

—:०:—

प्रातःकाल होते ही दोनों पक्षों के योधा लोग युद्ध करने को चल पड़े, सब ओर से घोड़ों के चलने और शंखों और दुन्दुभियों के शब्द सुनाई देने लगे। तब धर्मराज युधिष्ठर ने धृष्टद्युम्न से कहा, हे महाबाहु! तुम मकर व्यूह को तैयार करो क्योंकि वह शत्रुओं का संतप्त करने वाला है, इस आज्ञा को पाते ही महारथी धृष्टद्युम्न ने रथी शूर वीरों को युधिष्ठर के अभिप्राय से विदित किया व्यूह तैयार होने लगा। राजा द्रुपद और अर्जुन उस के शिर हुये, नकुल और सहदेव नेत्र मुख, भीमसेन, अभिमन्यु, द्रौपदी के पाचों पुत्र घटोत्कच सात्यकी और धर्मराज ग्रीवा हूये, पीठ पर बड़ी सेना युक्त धृष्टद्युम्न और विराट उपस्थित हुये, वाम भाग में पांचों भाई केकय वर्तमान हुये धृष्टकेतु और पराक्रमी चेतिकान व्यूह के दक्षिण ओर नियत हुये, सतानीक और कुंति भोज व्यूह के चरणों पर स्थित हुये, धनुष धारी शिखंडी सोमको समेत और राजा इरावान पूछ पर नियत हुये, यह सकल व्यूह पाण्डवों ने सूर्योदय से पहिले ही रच लिया और युद्ध के लिये तैयार होकर ध्वजाओं को लहराते हुये कौरवों के सन्मुख गये॥

भीष्म जी ने पाण्डवों के उस व्यूह को देख कर अपना क्रोंच नाम व्यूह रचा और उस व्यूह के सब अंगों पर बड़े २ योधाओं और महारथियों को नियत किया, इन व्यूहों के तयार

होजाने पर दोनों पक्षों का युद्ध होना आरम्भ हुआ, हाथी रथियों के सन्मुख गये और रथी हाथियों के सन्मुख हुये, घुड़ चढ़ घुड़ चढ़ों के सन्मुख गये, रथी और घुड़ पदातियों से युद्ध करने लगे ॥

भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेव यह सब अन्य महा रथियों से रक्षित हुये और कौरवी सेना के रक्षक भीष्म जी, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य, शल्य और दुर्योधन हुये भीमसेन द्रोणाचार्य को देख कर उस के सन्मुख गया, द्रोणाचार्य ने उस के मर्म स्थलों को तारकर लोहे के नौ बाणों से उस को घायल किया, भीमसेन ने उन के सारथी को मार डाला। द्रोणाचार्य ने घोड़ों की बागों को आप पकड़ कर पाण्डवी सेना का ऐसा विध्वंस किया जैसाकि अग्नि रूई को भस्म करती है, इस से घायल होकर वह संजय केकयों समेत भाग गये। इधर भीमसेन और अर्जुन से भयभीत कौरवी घायल सेना भी भाग गई। इस समय दोनों ओर के व्यूह टूट गये और पाण्डवों और कौरवों दोनों को महा दुःख हुआ ॥

इकहत्तरवां अध्याय

—:०:—

इस के पीछे वीर भीमसेन ने तीक्ष्ण बाणों से कौरवी सेना को चलायमान करके दुर्योधन के सब भाइयों को सन्मुख पाया,

इस समय भीमसेन क्रोध से भरा हुआ कौरवी सेना में घुस गया, इस को इस प्रकार घुसा हुआ देख कर वह सब बोल उठे कि हम इस को जीता ही पकड़ें गे, परन्तु भीमसेन शत्रुओं की सेना में जाकर भी वैसा ही निर्भय रहा, वहां इसे एक लाख शस्त्र धारियों ने घेर लिया, उस ने इस दशा में भी बड़े २ जंगी हाथीयों, घोड़ों और स्वारों को मारा, फिर रथ से उतर कर और गदा हाथ में लेकर उस ने दुर्योधन के भाईयों और सेना के महा समूह को मारा। भीमसेन को इस प्रकार शत्रुओं की सेना में घुस्ता हुआ देख कर धृष्टद्युम्न द्रोणाचार्य को छोड़ कर उस के पास गया, शकुनी भी वहां था, धृष्टद्युम्न ने भीमसेन को रथ में न पाकर उस के सारथी से पुछा कि मेरा प्राणों से भी प्यारा भीमसेन कहां है ॥

सारथी ने कहा भीमसेन जी मुझ को यहां ठहरा कर आप शत्रुओं की सेना में घुसे हैं और मुझ से कह गये हैं कि घोड़ों को थाम कर उन की बाट देखूं और यह भी कह गये हैं कि हम धृतराष्ट्र के उन पुत्रों को जो हम को मारने का विचार रखते हैं मार कर अभी आते हैं ॥

धृष्टद्युम्न ने कहा हे सूत ! मैं भी वहीं जाऊंगा जहां महा बली भीमसेन गये हैं। मैं अकेला पाण्डवों के पास नहीं जा सकता और न ही भीमसेन के विना जीने का मुझे प्रयोजन है क्योंकि मेरे और भीमसेन के एक कम पर नियत होने पर हम को इन्द्र जैसा देवता भी जीत नहीं सकता, देख मैं

किस प्रकार इन शत्रुओं का नाश करता हूं यह कहते हुए धृष्टद्युम्न भी कौरवी सेना में घुस गया और वहां पहुंचा जहां भीमसेन शत्रुओं का भस्म कर रहा था ॥

इस समय कौरवी सेना में बड़ा हाहाकार मच गया और यह शब्द सुनाई दिये, सावधान हो जाओ, भीमसेन मारी सेना का नाश किये जाता है। तब कौरवी सेना के वीरों ने भीमसेन को चारों ओर से घेर कर उस के ऊपर बाणों की वर्षा की ॥

धृष्टद्युम्न भीमसेन को सेना से इस प्रकार घिरा हुआ देख कर उस के पास गया जिस से भीमसेन को धैर्य हुआ और वह धृष्टद्युम्न के रथ पर सवार हुआ ॥

दुर्योधन ने कूट भाइयों से मिल कर सलाह की कि धृष्टद्युम्न को पहिले मारना चाहिये ताकि ऐसा न हो कि हमारी सेना को अपनी ओर करले, दुर्योधन के भाइ इस सम्मति को पाकर धृष्टद्युम्न पर टूट पड़े और उन्हों ने उस पर बहुत से बाण बरसाये ॥

धृष्टद्युम्न ने भी तीक्ष्ण बाणों की वर्षा उन पर की-और उन के बाणों का असर उस पर कुछ न हुआ, फिर उस ने प्रमोहन नाम बड़े भयानक अस्त्र का प्रयोग किया, इस समय दुर्योधन के भाई अस्त्रों से घायल होकर पड़ अचेत होगये इन को इस दशा में देखकर सब कौरव घोड़ों और रथों के साथ घोर शब्द करते हुये चारों ओर से भागे, द्रोणाचार्य ने कूट तीन

उग्र बाण मार कर धृष्टद्युम्न को पीड़ित किया इस पर धृष्ट-द्युम्न को पिछली शत्रुता याद आगई और वह पीछे हट गया इस पर द्रोणाचार्य ने जय का शंख बजाया ॥

तब द्रोणाचार्य यह सुन कर कि दुर्योधन के भाई धृष्टद्युम्न के सम्मोहन अस्त्र से अचेत हुये हुय हैं उन के पास गया वहां उस ने उन को अचेत पाया और धृष्टद्युम्न और भीष्म जी को युद्ध करते देखा। फिर उन्हों ने प्रज्ञा अस्त्र से धृष्टद्युम्न के सम्मोहन अस्त्र को काटा जिस से दुर्योधन के भाईयों के प्राण पुनः लौट आये, इस के पीछे द्रोणाचार्य, भीमसेन और धृष्ट-द्युम्न से लड़ने के लिये फिर युद्ध भूमि में गये ॥

तब धर्मराज युधिष्ठिर ने अपनी सेना से कहा कि तुम अपनी सामर्थ से भीमसेन और धृष्टद्युम्न के मार्ग में जाओ, अभिमन्यु आठ अन्य मुख्य वीरों को अपने साथ लेकर मध्याह्न के समय युद्ध की ओर गया। पांचों केकय और पांचों द्रौपदी के पुत्र, धृष्टकेतु यह सब अपनी भारी सेना समेत अभिमन्यु के आगे होगये। अभिमन्यु ने इस समय वहां युद्ध में सूचीमुख व्यूह रच कर कौरवी रथ वाली सेना को छिन्न भिन्न कर दिय, उस सेना को सामना करने का साहस न हुआ ॥

इस के पीछे भीमसेन को केकय के रथ पर सवार करके अत्यंत क्रोध में भरे हुये धृष्टद्युम्न बाण और अस्त्र लेकर द्रोणाचार्य के सन्मुख दौड़े और उस पर बाण बरसाये। द्रोणाचार्य ने क्रोध में आकर उस के धनुष को काट डाला

और सैकड़ों बाण बरसा कर उस को घायल किया ॥

धृष्टद्युम्न ने उसी समय दूसरा धनुष हाथ में लेकर तीक्ष्ण बाणों से द्रोणाचार्य को घायल किया, परन्तु द्रोण ने उस के दूसरे धनुष को भी काट डाला और बड़े तीव्र चार शायकों से धृष्टद्युम्न के चारों घोड़ों को यमलोक में पहुंचाया और एक भल्ल से उस के सारथी को भी मार डाला, धृष्टद्युम्न झट अपने रथ से उतर कर अभिमन्यु के रथ में सवार हो गया ॥

बहत्तरवां अध्याय

—:o:—

तब दुर्योधन ने व्यूह से पृथक् हो कर अपने बाणों से भीमसेन को रोका। इस समय उस के भाई भी उस से आमिले और वह सब मिल कर भीमसेन से लड़ने लगे, भीमसेन ने जीव निकालने वाले दृढ़ जड़ाऊ धनुष को चढ़ा कर धृतराष्ट्र के पुत्रों को बाणों से पीड़ित किया, तब दुर्योधन ने भी तीक्ष्ण नाराचों से भीमसेन के मर्म स्थलों में घायल किया, भीमसेन ने क्रोध में आकर उत्तम प्रबल धनुष को खैंच कर अपने तीन बाणों से दुर्योधन की भुजा और छाती को घायल किया ॥

दुर्योधन के भाईयों ने फिर भीमसेन के पकड़ने की सलाह की इस के पीछे भीमसेन ने अपने नाराच नामी बाण से चित्र

सेन को घायल किया और दुर्योधन के दूसरे भाईयों को भी अन्य प्रकार के बाणों से घायल किया, इतने में अभिमन्यु और अन्य महारथी जिन को धर्म राज युधिष्ठिर ने भीमसेन की सहायता के लिये भेजा था सेना समेत वहां पहुंच गये, इन सब तेज धारियों को आते देख कर दुर्योधन के भाईयों ने भीमसेन का पीछा छोड़ दिया और चले गये परंतु भीमसेन को उन के इस प्रकार चले जाने का बड़ा शोक हुआ ॥

तिहत्तरवां अध्याय

—:-०-:—

इस के पीछे भीमसेन और अभिमन्यु ने धृतराष्ट्र के सब पुत्रों का पीछा किया, इन की यह दशा देख कर दुर्योधन आदिक वहां पहुंचे और दोनों पक्षों का महा युद्ध हुआ, अभिमन्यु ने विकर्ण के घोड़ों को मार कर पच्चीस क्षुरक बाणों से उस को आच्छादित कर दिया, वह उस रथ से उतर कर झट चित्र सेन के रथ पर जा बैठा अभिमन्यु ने दोनों भाईयों को बाणा से ढक दिया, तब दुर्जय और विकर्ण ने पांच लोहे के बाणों से अभिमन्यु को पीड़ित किया, परंतु अभिमन्यु इन से नहीं घबराया और न ही अचेत हुआ, तब दुशासन ने पांचों केकयों को लड़ाया और द्रौपदी के पुत्रों ने दुर्योधन को रोका और प्रत्येक ने इस को तीन २ बाणों से पीड़ा मान किया, दुर्योधन ने भी दुर्जय और द्रौपदी के पांचों

पुत्रों को घायल किया, इस समय भीष्म जी ने भी खूब हाथ दिखाये ॥

इस के पीछे सेना के दक्षिण ओर अर्जुन के गांडीव धनुष का शब्द सुनाई दिया वहां हाथ, पांव और अन्य अंग टूटे हुये सहस्रों पुरुष धरती पर पड़े इस समय वहां कोई भी ऐसा पुरुष न था जो युद्ध न करना चाहता हो, दोनों पक्षों के योधाओं ने खूब युद्ध किया ॥

चौहत्तरवां अध्याय

—:०:—

सूर्य के अरुण होने पर दुर्योधन भीमसेन को मारने की इच्छा करके दौड़ा, भीमसेन ने उस को अपने सन्मुख आते देख कर कहा, बहुत वर्षों के पीछे वह समय आया है- यदि तू युद्ध से न भाग जावेगा तो मैं अवश्यमेव तुझ को मार डालूंगा क्योंकि तैंने पाडवों, द्रौपदी और श्रीकृष्ण जी का अपमान किया हुआ है, यह कह कर भीमसेन ने क्रोध में आकर अपने घोर धनुष को खैंच कर बारंवार ऊंचा घुमाकर घोर महा वज्र के समान सीधे चलने वाले पचीस बाणों को बड़े वेग से दुर्योधन पर फैंका, दो बाणों से उस के धनुष को काटा और दो ही से उस के सूत को घायल करके चार तीक्ष्ण बाणों से उस के घोड़ों को मार डाला और फिर दो बाण और छोड़कर उस के छत्र को भी काट कर गिरा

दिया, तीन बाण और छोड़े जिस से उस की ध्वजा भी धरती पर गिर पड़ी और फिर वह दुर्योधन के देखते ही महा शब्द से गरजा, इस पर भी भीमसेन ने दश बाण और छोड़ कर उस को घायल किया, इस के पीछे सिंध देशीयों के राजा ने हाथ में पाशे लेकर दुर्योधन की पीठ को पकड़ा ॥

कृपाचार्य जी झट आये और उन्हों ने दुर्योधन को रथ पर बिठलाया तब जयद्रथ ने अन्य महारथियों को साथ ले कर भीमसेन को चारों ओर से घेर लिया, इस के पीछे धृष्टकेतु । अभिमन्यु पांचों केकयों और द्रौपदी के पांचों पुत्रों का युद्ध धृतराष्ट्र के पुत्रों से हुआ ॥

तब चित्रसेन, सुचित्र, चित्रांग, चित्रदर्शन, सुचारु, चारू, चित्र, नन्द और उपनन्द ने अभिमन्यु के रथ को चारों ओर से आघेरा अभिमन्यु ने शीघ्र ही गुप्त ग्रंथी वाले पांच २ बाणों से प्रत्येक को घायल किया, आगे से उन्हों ने भी उस पर बाण बरसाये अभिमन्यु ने चौदह विष से भरे हुये भल्ले विकर्ण पर फेंके, फिर अभिमन्यु ने बाणों से विकर्ण की ध्वजा, घोड़े, रथ, सूत और धनुष को भी गिराया इन बाणों से विकर्ण घायल हो गिया, इस को घायल देख कर उस के भाई उस की सहायता को आये और उन्हों ने अभिमन्यु को घायल किया, अभिमन्यु ने भी उन को घायल किया ॥

इस के पीछे दुर्मुख ने सात बाणों से श्रुतकर्म को घायल करके एक बाण से उस की ध्वजा को काटा और सात बाणों से उस के सारथी को घायल किया, फिर सुनहरी जाल से

ढके हुये उस के घोड़ों को छः बाणों से मार कर उस के सारथी को भी गिराया ॥

श्रुत कर्मा ने क्रोध युक्त हो कर अपनी बरछी को उस पर फेंका, वह बरछी दुर्मुख के कवच को काट कर उस को फाड़ कर धरती में घुस गई. वहां महा बली सूत सोम ने उसे विरथ देख कर उस को अपने रथ में सवार किया, इस से पीछे महा बली श्रुत कीर्ति जयसेन को मारने की इच्छा से उस के सन्मुख गया परंतु जयसेन ने उस के धनुष को काट डाला, तब स्तानीक अपने भाई के धनुष को टूटा हुआ देख कर सिंह के समान गर्जता हुआ उस के सन्मुख आया और बाणों से जयसेन को घायल किया, तब दुष्कर्ण ने स्तानीक के बाण समेत धनुष को काटा, स्तानीक ने दूसरा धनुष लिया और भाई के सन्मुख हो कर दुष्कर्ण से तिष्ठ तिष्ठ शब्द कह कर उस के ऊपर बड़े तीक्षण बाणों को छोड़ कर एक बाण से उस के धनुष को, दो बाणों से उस के सारथी को काट मार कर सात बाणों से उस को घायल किया ॥

इस के पीछे सात्यकी ने बड़ी शीघ्रता से बारह तीक्ष्ण बाणों से उस के सब घोड़ों को मार डाला और भल्ल नाम के बाण मार कर दुष्कर्ण को व्यथित किया, इस आघत से वह पृथ्वी पर गिर पड़ा, इस को मरा हुआ जान कर पांच हाथियों ने स्तानीक को चारों से घेर लिया ॥

शतानीक को बाणों से ढके हुए देख कर पांचों केकय उन के सन्मुख दौड़े, इन को आते देख कर धृतराष्ट्र के पुत्र

उन के सन्मुख हुए । इन का आपस में बड़ा घोर युद्ध होने लगा, सूर्य अस्त होने वाला था । तब भीष्म जी ने गुप्त ग्रन्थी वाले बाणों से उन की सेना का नष्ट कर दिया, और पांचालों की बहुत सी सेना को भी यमलोक में पहुंचाया, इस के पीछे वह अपने डेरों को गये, इधर से धर्मराज युधिष्ठर भी अभिमन्यु और भीमसेन के मस्तक को सूंघ कर अपने डेरों को पधारे ॥

पचहत्तरवां अध्याय

—:०:—

डेरे में पहुंच कर दुर्योधन ने भीष्मजी से कहा कि मैं भीम को देख कर मुर्छा वान हूं मुझे अब तक शान्ति नहीं आती, मैं आप ही की कृपा से पाण्डवों पर विजय पाना चाहता हूं ॥

भीष्म जी ने हंस कर उत्तर दिया हे राज पुत्र ! मैं बड़ा यत्न करता हूं कि तेरी जय हो परन्तु पाण्डवी सेना में बहुत से ऐसे योधा हैं जो मुझ से पाजय होने के योग्य नहीं, मैं इस जीवन को त्याग कर उन के साथ भली प्रकार लडूंगा ॥

यह सुन कर दुर्योधन ने बहुत प्रसन्न होकर अपने सहायक राजाओं से सेना समेत कहा चलो चलो । यह आज्ञा पाते ही रथ, घोड़े, हाथी आदि सब सेना शीघ्र ही चलदी

और संग्राम भूमि में पहूंची रथ, घोड़े, पदाति आदि अपने २ स्थान पर नियत होगये, तब भीष्म जी ने दुर्योधन से कहा हे राज पुत्र! द्रोणाचार्य, कृतवर्मा शल्य इत्यादि वड़े २ वीर तेरे लिये प्राण देने को तत्पर हैं परन्तु मैं तुझ से एक बात कहता हूं। सुनो पाण्डवों का जीतना बड़ा कठिन है क्योंकि श्री कृष्ण जी उन के सहायक हैं॥

प्रातःकाल होते ही भीष्म जी ने अपनी सेना का मंडल रूप व्यूह ऐसा रचा कि वह आप सेना से रक्षित हुये और सेना उन से रक्षित हुई दुर्योधन स्वयं भी रथारूढ़ होकर साथ हुआ॥

इस व्यूह को देख कर युधिष्ठर ने भी अपनी सेना का वज्र नाम व्यूह अपने हाथों से रचा. इन दोनों व्यूहों के तैयार होने पर सब शूर सिंहनाद करने लगे, दोनों ओर के योधाओं ने एक दूसरे के व्यूह को तोड़ने का यत्न किया, द्रोणाचार्य जी राजा मत्स्य के सन्मुख हुये, अश्वत्थामा का सामना शिखंडी से हुआ, राजा दुर्योधन स्वयं धृष्टद्युम्न के सन्मुख हुआ और इसी प्रकार से दोनों पक्षों के अन्य योधा एक दूसरे के सन्मुख हुये, परंतु अर्जुन से लड़ने के लिये बहुत से राजा लोग उस के सन्मुख हुये, अभिमन्यु चित्रसेन, विकर्ण और दुर्मर्षण से लड़ने लगा, धर्म पुत्र युधिष्ठर ने राजा श्रुतायुष से युद्ध करना प्रारम्भ किया सार यह कि दोनों पक्ष युद्ध में लग गये॥

अर्जुन ने अपने सन्मुख बहुत से राजा लोगों को देख कर श्रीकृष्ण जी से कहा हे माधव जी! भीष्म जी से व्यूहित

हुई २ कौरवी सेना की ओर देखो इन के शूरों के वचन इत्यादि पर भी दृष्टि दो, देखा आप के देखते ही मैं इन सब को मारूंगा, यह कह कर उस ने अपने धनुष की प्रत्यंचा को ठीक करके उन सब अपने सन्मुख आये हुओं पर बाणों की वर्षा की, आगे से उन्हों ने भी उस पर बहुत से बाण बरसाये और अर्जुन और श्रीकृष्ण को ढक दिया, इन दोनों को इस प्रकार बाणों से ढका हुआ देख कर कौरवी सेना के योधा बड़े प्रसन्न हुये और पंडवी सेना के लोग अश्चर्य करने लगे ॥

इस समय अर्जुन ने अपने इन्द्रास्त्र को प्रकट किया जिस से शत्रुओं के सब छोड़े हुये अस्त्र रुक गये और कई हज़ार मनुष्य भी उस से घायल हो गये, यह दशा देख कर भीष्म जी कौरवी सेना की रक्षा के लिये वहां आये परन्तु उन के आने पर भी सेना को ढारस न आया और वह तितर बितर हो गई ॥

छिहत्तरवां अध्याय

—:०:—

दुर्योधन ने अपनी सेना की यह दशा देख कर सब राजा लोगों से कहा हे वीरो ! भीष्म जी माया त्याग कर शत्रुओं से लड़ना चाहते हैं इस कारण तुम सब उन का साथ

दो और उन की रक्षा करो, राजा लोग दुर्योधन के वचन को अंगीकार करके सेना सहित भीष्म जी के पीछे हो लिये, तब भीष्म जी अर्जुन की ओर चले ॥

इस के पीछे द्रोणाचार्य ने युद्ध में बाणों से राजा मत्स्य को पीड़ित किया और एक २ बाण से उस की ध्वजा और उस के धनुष को काटा, विराट ने झट ही उस टूटे हुये धनुष को फैंक कर भार सहने वाला दूसरा धनुष हाथ में ले लिया और पन्नग नाम तीन बाणों से द्रोणाचार्य को और चार बाणों से उन के घोड़ों को घायल किया, एक से ध्वजा को काटा और पांच से उन के सारथी को व्यथित कर के एक बाण से उन के धनुष को काट डाला ॥

द्रोणाचार्य ने बड़े क्रोध में होकर गुप्त ग्रंथी वाले आठ बाणों से विराट के घोड़ों को और एक बाण से उस के सारथी को मारा, विराट झट ही उस रथ से उतर कर पुत्र के रथ में सवार हो गया, इन दोनों पिता पुत्रों ने मिल कर द्रोणाचार्य के मारे हुये बाणों को रोका, इस के पीछे द्रोणाचार्य ने एक बाण विराट के पुत्र को मारकर उस को घायल किया जिन से वह शूर पिता के देखते २ धनुष बाण को त्याग कर पृथ्वी पर गिर पड़ा ॥

विराट ने जब देखा कि उस का पुत्र मर गया है और द्रोण मुझ को भी मार डालेगा तब वह भाग गया, तब द्रोणाचार्य ने पांडवी सेना के सहस्रों मनुष्यों को पीछे हटाया ॥

शिखंडी ने अश्वत्थामा को अपने सन्मुख पाकर तीव्र गती तीन नाराचों से उस के दोनों भृकुटी के मध्य भाग मस्तक को घायल किया, अश्वत्थामा ने क्रोध में आकर आधे ही निमेष में शिखंडी के सारथी, रथ, घोड़े शस्त्र और ध्वजा को अनेक बाणों से काट कर गिराया ॥

शिखंडी ने जब अपने घोड़े आदि की यह दशा देखी तो वह झट रथ से कूद पड़ा और अपने तीक्ष्ण खडग और ढाल को लेकर बड़ा क्रोध में भरा हुआ शत्रुओं की सेना में घुस गया और सहस्त्रों को काट डाला। इस समय अश्वत्थामा ने उस पर सहस्त्रों बाण फेंके परन्तु उसने सब को अपने खडग से काट डाला ॥

तब अश्वत्थामा ने शिखंडी की ढाल को काट कर उस की खडग के भी टुकड़े २ कर डाले और बहुत से बाणों से उस को घायल किया, शिखंडी ने अपनी चमकती हुई खडग को अश्वत्थामा पर फेंका परंतु उस ने उस को झट काट डाला और लोहे के बहुत से बाणों से शिखंडी को घायल किया, शिखंडी घायल हुआ २ झट सात्यकी के रथ पर स्वार होगया ॥

तब सात्यकी ने अलम्बुष राक्षस को घायल किया, उस राक्षस ने अपने अर्द्ध चंद्रनाम बाणों से उस के धनुष को काट कर बहुत से शायकों से उस को घायल किया और राक्षसी माया करके उस को बाणों से ढक दिया परंतु सात्यकी अचेत न हुआ, सात्यकी ने इंद्र अस्त्र का प्रयोग करके सब

राक्षसी माया को नष्ट किया और अपने घोर बाणों से अलम्बुष को इस रीति से ढक दिया जैसे वर्षा ऋतु में बलाहक नाम बादल अपने जलों से पर्वत को ढकते हैं, जिस से वह राक्षस दिल छोड़ कर भाग गया, इस पर सात्यकी प्रसन्न होकर सिंह के समान गरजा ॥

इस के पीछे सात्यकी ने धृतराष्ट्र के पुत्रों को भी बड़े तीक्ष्ण बाण मार कर भगा दिया, तब धृष्टद्युम्न ने गुप्त ग्रंथी वाले बाणों से दुर्योधन को आच्छादित कर दिया परंतु दुर्योधन इस प्रकार ढक जाने पर भी सावधान रहा और उसी दशा में अपने बाणों से धृष्टद्युम्न को घायल किया ॥

तब धृष्टद्युम्न ने राजा को विजय करके उस की सेना को बहुत मारा इधर से कृतवर्मा ने भीमसेन को बाणों से ढक दिया इस पर भीमसेन ने कृतवर्मा के ऊपर शायकों की वर्षा की, फिर कृतवर्मा ने भीमसेन को अपने बाणों से घायल किया, तब भीमसेन ने कृतवर्मा के चारों घोड़ों को मार कर उस के रथ को सारथी और ध्वजा युक्त गिराया और उस को बाणों से ढक दिया जिन से उस के अंग शिथल होगये वह इस दशा में दुर्योधन के मामू वृषक के रथ में जा स्वार हुआ, इस के पीछे भीमसेन ने क्रोध में आकर कौरवी सेना के कई आदमी मार डाले ॥

सतहत्तरवां अध्याय

—:o:—

इस के पीछे प्रातःकाल ही मनुष्यों का नाश होना प्रारम्भ हुआ, अवंति देश के राजा लोग इरावान को सन्मुख देख कर युद्ध करने लगे, इरावान ने अपने गुप्त ग्रंथी वाले बाणों से उन दोनों राजाओं को घायल कर डाला उन दोनों ने भी उस को घायल किया ॥

फिर इरावान ने अपने चार शायकों मे अनुविन्द के चारों घोरों को मार कर बहुत तीक्ष्ण भल्लों से उस के धनुष और ध्वजा को काट डाला, अनुविंद ने झट दूसरा धनुष ले लिया और अपने रथ को त्याग कर विंद के रथ पर चढ़ गया, तब इन दोनों ने एक रथ पर बैठ कर इरावान पर बहुत से बाण बरसाये जिन से उस का रथी गिर पड़ा इस के गिरने पर घोड़े इधर उधर को भागे, फिर उस ने बहुत सी कौरवी सेना को भस्म कर डाला ॥

तब घटोत्कच का सामना भगदत्त से हुआ, इस समय पांडव भयभीत होकर भागे और कोई रक्षक न पा सके केवल घटोत्कच ही वहां खड़ा रहा, पांडवी सेना फिर लौट कर आई, घटोत्कच ने भगदत्त को बाणों से ढक दिया, भगदत्त ने घटोत्कच के बाणों को काट कर अपने तीक्ष्ण बाणों से उस के मर्म स्थलों को घायल किया, इस के पीछे भगदत्त ने चौदह

तोमर घटोत्कच के ऊपर फेंके परन्तु घटोत्कच ने उन सब को काट डाला और कङ्क पत्र वाले सत्रह बाणों से उस को घायल किया ॥

इस के पीछे भगदत्त ने शायकों से उस के चारों घोड़ों को मार डाला घटोत्कच ने भगदत्त के हाथ पर बरछी छोड़ी परन्तु भगदत्त ने रास्ता में ही उस के तीन टुकड़े कर डाले। बरछी को टूटा देख कर घटोत्कच भाग गया, फिर भगदत्त ने बहुत सी पाण्डवी सेना को मर्दन किया, इस समय मद्र देश के राजा शल्य ने अपने दोनों भानजों नकुल और सहदेव को बाणों से आच्छादित कर दिया, सहदेव ने भी अपने मामा पर बहुत से बाण बरसाये, फिर शल्य ने चार शायकों से नकुल के घोड़ों को मार डाला, नकुल झट उस रथ से उतर कर सहदेव के रथ पर जा सवार हुआ, तब इन दोनों ने एक रथ पर बैठे हुये अपने मामा पर इतने बाण बरसाये कि उस का सारा रथ बाणों से ढक गया फिर शल्य ने उन बाणों को हटाया ॥

इस के पीछे सहदेव ने क्रोध से बाण को खैंच कर अपने मामा पर फेंका जिस से वह घायल हो कर अचेत हो गया, उस का सारथी उस को अचेत हुआ देख कर रथ को संग्राम भूमि से दूर ले गया, इस पर धृतराष्ट्र के पुत्रों को बड़ी चिंता हुई। नकुल और सहदेव ने अपने मामा को जीत, शंखों को बजा कर बड़े सिंह नाद किये और प्रसन्न हो कर कौरवी

सेना पर टूट पड़े ॥

इस समय सूर्य आकाश के मध्य में था, युधिष्ठर ने श्रुतायुष को अपने सन्मुख देख कर गुप्त ग्रंथी वाले नौ शायकों से श्रुतायुष को घायल किया, पलटे में उस ने युधिष्ठर पर सात बाण मारे जिन्हों ने उस के कवच को काट कर उस को घायल किया, युधिष्ठर ने भी कर्णी नाम बारह बाणों से श्रुतायुष के हृदय को घायल किया, फिर युधिष्ठर ने दूसरा भल्ल लेकर उस की ध्वजा को काटकर रथ से गिरा दिया। तब श्रुतायुष ने सात विशिखों से युधिष्ठर को घायल किया इस पर युधिष्ठर ने अत्यंत क्रोध युक्त हो कर श्रुतायुष के बड़े धनुष को मूठ पर से काटा और उस के घोड़ों को मार डाला, इस पर वह धर्मराज से भयभीत होकर युद्ध भूमि से भाग गया, इस को भागते हुये देख कर सब कौरवी सेना ने मुख मोड़ लिया, इस के पीछे युधिष्ठर ने कौरवी सेना का खूब नाश किया ॥

इस के पीछे चेकितान ने सेना के देखते हुये कृपाचार्य को शायकों से ढक दिया परंतु कृपाचार्य ने उन सब बाणों को रोक कर चोकितान को घायल किया और उस के धनुप को काट कर उस के सारथी को भी गिरा दिया, चेकितान ने इस समय झट रथ से उतर कर गदा हाथ में ली और कृपाचार्य के घोड़ों और सारथी को मार डाला तब कृपाचार्य ने सोलह बाण उस पर फेंके, आगे से चोकितान ने उस पर गदा फेंकी परंतु आचार्य जी ने अपने बाणों से उस को रोक दिया

त. चेकितान म्यान से खड्ग निकाल कर आचार्य के समीप गिया आचार्य भी धनुष को छोड़ कर बड़ी शीघ्रता से उस के पास पुहुंचा, इन दोनों का तलवारों से युद्ध हुआ और एक ने दूसरे को घायल किया दोनों अचेत हो कर पृथ्वी पर गिर पड़े, करिकष चेकितान को उस दशा में पाकर उस को अपने रथ पर सवार करके ले गिया उधर से शकुनी भागा आया और कृपाचार्य को अपने रथ पर बिठला कर लेगिया, तब धृष्टद्युम्न ने अच्छे तीक्ष्ण बाणों से भूरिश्रवा को घायल किया, इस के पीछे भूरिश्रवा ने अपने शायकों से धृष्टकेतु के सारथी और घोड़ों को मार कर उस को विरथ करके बाणों से ढक दिया, वह उस रथ को त्याग कर शतानीक के रथ पर जा कर सवार होगया ॥

तब चित्रसेन, विकर्ण और दुर्मर्षण अभिमन्यु के सन्मुख दौड़े इन का आपस में महा घोर युद्ध हुआ, अभिमन्यु को इस समय भीमसेन का बचन याद आगया, इस कारण उस ने इन को न मारा, भीष्म जी इन की यह दशा देख कर उन की सहायता को आये, अर्जुन ने भी इस दशा को देख कर श्रीकृष्ण जी से कहा हृषीकेश ! घोड़ों को तेज़ करिये और मेरे रथ को अभिमन्यु के पास ले चलिये, श्रीकृष्ण जी ने झट रथ को वहां पहुंचा दिया, अर्जुन ने वहां पहुंच कर राजा सुशर्मा से कहा मैं तुझ को शत्रुओं में श्रेष्ठ और पहिला शत्रु जानता हूं, देख अब मैं तुझ को तेरे पुर्वजों से मिलता

हुं परंतु उस राजा ने अर्जुन को कोई अच्छा बुरा शब्द न कहा, तब कौरवी पक्ष के राजाओं ने अर्जुन को चारों ओर से घेर कर उस पर बहुत से बाण बरसाये, इस समय इन का ऐसा युद्ध हुआ कि रुधिर की नदी बहने लग गई ॥

अठहत्तरवां अध्याय

—:०:—

इस के पीछे अर्जुन ने अपने बाणों से क्षण भर में सब महारथियों के बाणों और धनुषों को काट कर उन सब को अपने बाणों से घायल किया जिस से बहुत से राजा लोग मर कर संग्राम भूमि में गिरे, इन को मरा हुआ देख कर राजा त्रिगर्त रथ की सवारी में चला, इन ति के पति भी उस के साथ हो लिये और यह सब वहां पहुंचे जहां अर्जुन था, इन्हों ने अर्जुन को चारों ओर से घेर कर उस पर बहुत बाण बरसाये परंतु अर्जुन ने उन सब को भी बाण मार कर मार डाला और फिर वह भीष्म जी के मारने को दौड़ा। त्रिगर्त का राजा अर्जुन के हाथ से अपने बांधवों को मरा हुआ देख कर उस के मारने के लिये आगे बढ़ा परंतु शिखंडी आदि महारथियों ने उस को ऐसा करने से रोक दिया, अर्जुन ने त्रिगर्त के साथ आते हुये उन वीरों को देखकर गांडीव धनुष से तीक्षण पुषत्रा बाणों से

मार डाला और दुर्योधन और जयद्रथ आदि राजाओं को और भीष्म जी को आते देखा वह स्वयं ही बाकी सब को छोड़ कर भीष्म जी की ओर गया, युधिष्ठर भी भीमसेन, नकुल औ. सहदेव आदि को अपने साथ लेकर भीष्मजी के सन्मुख गया और उन का भेड़ हुआ ॥

इस के पीछे राजा जयद्रथ ने अपने धनुष से उन महा रथियों के धनुषों को काट डाला, दुर्योधन ने क्रोध में आकर अपने तीक्ष्ण बाणों से युधिष्ठर, भीमसेन, नकुल, सहदेव, श्रीकृष्ण और अर्जुन को घायल किया, इस समय कौरवों का पक्ष विजय पर रहा ॥

युधिष्ठर ने शिखंडी को टूटा हुआ अस्त्र हाथ में लिये हुये देख कर कहा कि तुम ने अपने पिता के सन्मुख प्रतिज्ञा की थी कि मैं निर्मल सूर्य रूपी बाणों से भीष्म को मारूंगा, तुम अब अपनी उस प्रतिज्ञा को क्यों पूरा नहीं करते, शिखंडी भीष्म को मारने के लिये चला, परन्तु शल्य ने उस को रोक दिया, फिर शिखंडी ने दूसरा वर्षास्त्र लिया, उस का यह अस्त्र रोका गया, इस के पीछे भीष्म ने युधिष्ठर के धनुष को ध्वजा सहित काट कर बड़ा शब्द किया, उस समय भीमसेन युधिष्ठर को भयभीत देख कर गदा हाथ में लेकर जयद्रथ के सन्मुख हुआ, जयद्रथ ने उस आते हुये को अपने नौ बाणों से घायल किया, आगे से भीमसेन ने जयद्रथ के घोड़े मार डाले ॥

इस के पीछे चित्रसेन बड़ी शीघ्रता से भीमसेन को मारने के लिये उस के सन्मुख गया, युद्ध होने को था कि कौरव पीछे हट गये, चित्रसेन गदा को आते देख कर हाथ में खड्ग और ढाल ले रथ से नीचे कूद पड़ा, तब विकर्ण ने उस को अपने रथ पर बिठा लिया, भीष्म जी युधिष्ठिर के सन्मुख हुये, युधिष्ठिर ने भी नकुल और सहदेव समेत उन का सामना किया, दोनों ओर से खूब बाण चले, भीष्म जी ने युधिष्ठिर आदि के बाणों को बीच ही में काट डाला और युधिष्ठिर के घोड़े भी मार डाले, वह नकुल के रथ पर जा सवार हुआ, भीष्म जी के बाणों से पीड़ित हो कर युधिष्ठिर ने अपने सहायक राजाओं को आज्ञा दी कि भीष्म जी को मारो, इस पर उन राजाओं ने भीष्म जी को चारों ओर से घेर लिया परन्तु उन्हों ने सब को बाणों से गिराया, इस से पाण्डवी सेना भयभीत होगई। इस समय भीष्म जी ने बहुत से वीरों के शिर काट कर पृथ्वी पर गिराये ॥

इस के पीछे शिखंडी तिष्ठ २ शब्द कहता हुआ पितामह के पीछे दौड़ा, वह इस के स्त्रीपन को विचार इस को तिरस्कार करके संजयों के सन्मुख गये और वहां बड़ा युद्ध हुआ। तब धृष्टद्युम्न और सात्यकी ने अनेक प्रकार के बाणों से कौरवी सेना के शूरवीरों को घायल किया, परन्तु यह वीर बराबर लड़ते रहे और पीछे न हटे, इतने में विन्द, अनुविन्द और अवन्ति देश के राजा लोग मिल कर उन की सहायता के लिये धृष्टद्युम्न के सन्मुख हुये और इन्हों ने उस पर बहुत

से बाण बरसाये और उस के घोड़े मार डाले, तिस पर वह झट अपने रथ से कूद कर सात्यकी के रथ पर चढ़ गया ॥

यह दशा देख कर युधिष्ठर अवंति देश के राजाओं के सन्मुख दौड़ा, उधर से दुर्योधन भी आगया और अर्जुन भी वर्त्तमान हुआ इस समय बड़ा भारी युद्ध हुआ द्रोणाचार्य पांचालीयों से और दुर्योधन आदि पाण्डवों से, इस दिन पांडवों का पलड़ा भारी रहा, सूर्य अस्त होने पर दोनों पक्षों की सेना अपने २ डेरों में गई ॥

उनासीवां अध्याय

—:-o-:—

प्रातःकाल होते ही दोनों ओर के योधा संग्राम भूमि में पहुंचे और दोनों ने ही अपने २ व्यूह रचे। शंख, भेरी और अन्य बाजे बजने लगे, योधा लोग एक दूसरे के सन्मुख हुए और युद्ध आरम्भ हुआ दोनों ओर से बाणों की वर्षा आरम्भ हुई, बरछीयां गिरने लगीं, ढालें और तलवारें चमकने लगीं, भीष्मजी पाण्डवों के सन्मुख हुए, उधर से धृष्टद्युम्न उन के सन्मुख किया गया, दोनों ओर की सेना का खूब युद्ध हुआ ॥

युधिष्ठर की आज्ञा से सब पाण्डवी सेना भीष्मजी के सन्मुख दौड़ी, आग से उन्हों ने सोमकों और पांचाल देशीयों

को शायकों से आच्छादित किया, वह निडर होकर पिता-
मह जी के सन्मुख पहुंचे, भीष्म जी ने उन की भुजाओं
को अस्त्रों समेत काट कर उन को रथों से विरथ कर दिया
और खड्गों से सवारों के शिर काट डाले, इस समय वहां
सिवाय भीमसेन के कोई भी मनुष्य नियत नहीं रहा, उस
ने पितामह को रोक दिया, फिर इन दोनों पक्षों
का महा घोर युद्ध हुआ, पाण्डवों ने प्रसन्न चित्त हो कर
बड़ा सिंह नाद किया ॥

दुर्योधन ने अपने भाईयों को साथ लेकर भीष्म जी की
रक्षा की, इस के पीछे भीमसेन ने भीष्म जी के सारथी को
मार कर अपने क्षुरप्र नाम बाण से सनाम के शिर को काट
डाला, इस के मरने पर आदित्यकेतु, बह्वाशी, कुंडधार, मनोहर,
अपराजित, पंडितक, विशलाक्ष और दुर्जय नाम इस के सब
भाई भीमसेन के सन्मुख आये और मनोहर ने नौ बाणों से
उस को घायल किया, इस के पीछे दूसरे भाईयों ने भी बहुत
से बाण मार कर भीमसेन को व्याकुल कर दिया ॥

इस के पीछे इस प्रकार घायल हुये हुये भीमसेन ने अपने
बायें हाथ से धनुष को खैंच कर गुप्त ग्रंथी वाले बाणों से
अपराजित के शिर को काट डाला, फिर उस ने सब के
देखते २ एक भल्ल से कुंडधार को काल वश किया, तब शिली
मुख बाण को चढ़ा कर पंडितक को यम लोक में पहुंचाया
इस के पीछे भीमसेन ने अपने पिछले दुःखों को याद करके
तीन बाणों से विशलाक्ष को मार कर पृथ्वी पर गिराया,

तब नराच से महोदर की छाती को छेदा जिस से उस ने भी माया त्याग दिये ॥

तदनन्तर भीमसेन ने एक बाण से आदित्यकेतु के छत्र को काट कर दूसरे से उस के शिर को काट डाला और फिर गुप्त ग्रंथी वाले बाणों से वहकाशी को भी यमपुरी मे पहुंचाया यह दशा देख कर दुर्योधन के बाकी भाई भयभीत होकर भाग गये ॥

इस के पीछे दुर्योधन ने अपने बाकी भाईयों को बुला कर कहा हे भाईयो ! देखो भीमसेन ने तुम्हारे अमुक २ भाईयों को मार डाला है, तुम इस को मारो, परंतु इन भाइयों को विदुर जी के वह वचन जो उन्हों ने द्यूत के खेले जाने के समय कहे थे याद आगये ॥

तब दुर्योधन भीष्म जी के पास जा कर महा रुदन करके बोला कि मेरे शूर बीर भाई युद्ध में भीमसेन के हाथ से मारे गये हैं और मेरी सेना के अन्य मनुष्य भी मारे जा रहे हैं मैं इस से बड़ा उदास हुं ॥

भीष्म जी ने कहा हे तात ! मैंने द्रोणाचार्य, विदुर और गंधारी आदि ने तुम को पहिले ही समझाया था परंतु तुम ने हमारी न सुनी, हम ने और आचार्य जी ने जो तेरे साथ प्रण किया है हम उस को बराबर पुरा करेंगे अब उदास होने से कुच्छ न बनेगा, इस कारण तुम स्वर्ग को अपना स्थान समझ कर मन को स्थिर करके पांडवों से युद्ध किये जाओ ॥

अस्सीवां अध्याय

—:o:—

इस के पीछे मध्यह्न समय बड़ा भारी युद्ध आरम्भ हुआ, सारी पांडवी सेना महा क्रोध युक्त हो कर भीष्म जी को मारने के लिये दौड़ी और युद्ध होने पर दोनों पक्ष के बहुत से मनुष्य मारे गये, द्रोणाचार्य ने संजियों और सोमकों को मारा, इधर भीमसेन ने बहुत सी कौरवी सेना का नाश किया॥ इस समय वहां रुधिर की नदी बहने लगी तब भीमसेन ने हाथियों की सेना को मार कर यमलोक में भेजा, नकुल और सहदेव ने घोड़ों की सेना का नाश कर डाला, अर्जुन ने कई राजाओं को मार कर उस युद्ध भूमि में गिराया, इस समय संग्राम भूमि टूटे हुये अंगों, रथों, शिरों, वस्त्रों, अभरणों, छत्रों और ध्वजाओं से भर गई॥

इस के पीछे शकुनि और कृतवर्मा पाण्डवी सेना के सन्मुख गये इधर से नाग कन्या से अर्जुन का पुत्र इरावान अपने घोड़े लेकर उन के सन्मुख हुआ अब घोड़ों से घोड़ों का युद्ध होने लगा, एक सवार ने दूसरे का नाश किया, बहुत से मारे गये और थोड़े शेष रह गये इस समय शकुनि का छोटा भाई और बहुत शीघ्रगामी घोड़े पर गंधार के तरुणों को आरूढ़ करके लाया, इस के साथ गज, गवाक्ष, वृषभ, चर्मवान आर्जव, और शुक गांधार के यह छः महा योधा भी थे॥

इरावान ने इन राज कुमारों को इस दशा में आया हुआ देख कर अपने वीरों से कहा हे वीरो! ऐसी युक्ति करो जिस से यह सब गांधारी मारे जावें इस पर उन शूरों ने उन को मारा, अपने वीरों को इस प्रकार से मरते हुये देख कर शकुनि के भाईयों ने इरावान को चारों ओर से घेर लिया और बड़े परशों और परिघों से उस पर प्रहार करने लगे, वह अकेला उन सब से हाथ, छाती, पीठ और कान्धे पर घायल होने पर भी उन के साथ बराबर लड़ता रहा॥

इस के पीछे इरावान ने भी उन सब को अपने तीक्ष्ण बाणों से घायल किया और शकुनि के भाईयों को उन्ही के परशों से घायल किया, तब वह अपनी ढाल तलवार लेकर उन के पीछे पड़ा। उन सब ने मिल कर उस को पकड़ने की सलाह की परंतु उस ने उन सब के अंगों को काट डाला जिस से वह सब मर कर भूमि पर गिर पड़े। इन सब में से केवल एक वृषभ ही बचरहा और वह भी बड़ी कठिनता से॥

इन को इस प्रकार मरे हुये देख कर दुर्योधन को बड़ा क्रोध हुआ और वह आर्ष्यश्रृंग राक्षस से जो बकासुर के वध से भीमसेन का शत्रु था बोला हे वीर! जैसे माया से इस इरावान ने मेरी सेना का नाश किया है तुम भी वैसी ही माया से पाण्डवी सेना का नाश करो॥

यह आज्ञा पाते ही वह राक्षस झट अपने दो सहस्र घोड़े साथ लेकर इरावान को मारने के लिये उस के पास गया

परन्तु इरावान ने उस को वहीं रोक दिया, तब उस राक्षस ने अपनी माया प्रकट की अर्थात् उस ने उतने ही माया रूपी घोड़े जिन पर शूल परिश धारण किये हुये घोर राक्षस सवार थे प्रकट किये, यह दो हजार सन्मुख होकर एक दूसरे से युद्ध करके प्रेत लोक में गया, तब उस राक्षस और इरावान का महा घोर युद्ध हुआ, इरावान ने उस के धनुष को अपने खगड से काट कर पांच प्रकार के बाणों से उस को व्याकुल किया, वह अपने धनुष को टूटा जान कर बड़े क्रोध से इरावान को अपनी माया से मोहित करके बड़ी तीव्रता से आकाश में पहुंचा, इरावान ने भी अपनी माया से अन्तरिक्ष में जाकर उस के अंगों को काटा, उस के जो अंग कटते वह माया से फिर ठीक होजाते ॥

फिर उस राक्षस ने सब के देखते हुये इरावान को पकड़ना चाहा, इस की इस माया और इच्छा को देख कर इरावान ने भी क्रोध में आकर अपनी माया रची अर्थात उस ने अपने नाना के वंशरूप सर्पों को उत्पन्न किया और वह आप शेषनाग रूप होगया, इन सब नागों ने उस राक्षस को घेरा, परन्तु उस राक्षस ने गरुड़ रूप धारण करके उन सब सर्पों का नाश किया, तब उस राक्षस ने इरावान को मार डाला, इस पर कौरवी सेना बड़ी प्रसन्न हुई ॥

इस के पीछे फिर सब का युद्ध आरम्भ हुआ और दोनों पक्षों के रथी, घुड़चढ़े, हाथियों के सवार, और पदाति एक दूसरे से लड़े, बहुत से नाश हुये और बहुत बच रहे,

इरावान को मरा हुआ जान कर अर्जुन ने भीष्म जी के रक्षक राजाओं में से बहुतों को मारडाला, इस युद्ध में भीष्म जी के हाथों से पांडवों के बहुत से रथी, हाथी और घोड़ों के सवार और पदाती मारे गये, इस समय भीमसेन, धृष्टद्युम्न और सात्यकि ने भी अपूर्व हाथ दिखलाये ॥

इक्यासीवां अध्याय

—:०:—

इरावान को मरा हुआ देख कर घटोत्कच को बड़ा क्रोध आया, उस ने अपने शूल को हाथ में ले कर अपने भाई बहुत से राक्षसों को अपने साथ लिया और कौरवी सेना की ओर चला, इस प्रकार से अपनी सेना की ओर आते हुये घटोत्कच को देख कर दुर्योधन एक बड़ा भारी धनुष ले कर सिंह के समान गर्जता हुआ उस के सन्मुख हुआ बंगदेश का राजा भी अपनी दश हज़ार हाथियों की सेना ले कर दुयोधन के साथ हो लिया ॥

इस समय राक्षसों और कौरवी सेना का युद्ध आरम्भ हुआ, इन राक्षसों ने बाण, बरछी, दोधारा, खड्ग, नराच, भिन्दिपाल, शूल, मुद्गर और परशों इत्यादि शस्त्रों से हाथीयों के सवारों को मार डाला, इस पर दुर्योधन बड़ा कोप में भरा हुआ अपने भायों की आशा छोड़ कर उन

राक्षसों के सन्मुख हुआ और वहां पहुंच कर उस ने अपने बाणों से बड़े २ राक्षसों को यमलोक में पहुंचाया और चार बाणों से घटोत्कच को भी घायल किया, इस पर घटोत्कच अपने धनुष को खैंच कर दुर्योधन के सन्मुख गया और उस को कहने लगा ॥

हे पापात्मा ! मैं अब तुम को मार कर पिता से अनृणा हो जाऊंगा तूने द्यूत में छल से पाण्डवों को वनवास दिया और रजस्वला कृष्णा को एक वस्त्र ओढ़ने की दशा में सभा में बुला कर उसका निरादर किया मैं इस सब का फल अब तुझ को देता हूं । यह कह कर घटोत्कच ने दुर्योधन पर बहुत से बाण बरसाये ॥

उधर से दुर्योधन ने घटोत्कच पर पचीस नाराच छोड़े जिन से घायल रुधिर गिरते हुये घटोत्कच ने दुर्योधन को मारने के लिये एक बड़ी तीक्ष्ण बरछी को उठाया । बंग देश के राजा ने घटोत्कच को इस प्रकार बरछी उठाय देख कर दुर्योधन के आगे अपने हाथी को कर दिया तब घटोत्कच ने उस उठाई हुई बरछी को हाथी पर फैंक दिया, जिस से वह हाथी मर कर पृथ्वी पर गिर पड़ा बंग देशी राजा झट उस हाथी से नीचे उतर आया ॥

दुर्योधन हाथी को मरा हुआ और सेना को पीछे हटा हुआ देख कर बड़ा खेदित हुआ परन्तु वहां से एक पाओं पीछे न हटा, तब दुर्योधन ने एक बड़ा तीक्ष्ण बाण घटोत्कच पर

फैंका जिस को इस राक्षस ने रास्ते में ही निष्फल कर दिया और महा क्रोध में आकर बड़े उच्च स्वर से गर्जी ॥

घटोत्कच की इस गर्ज को सुन भीष्म जी ने द्रोणाचार्य से कहा इस महा शब्द से जान पड़ता है कि घटोत्कच दुर्योधन से लड़ रहा है, यह राक्षस युद्ध में अजय है इस लिये आप वहां जाकर दुर्योधन की हर प्रकार से रक्षा करें ॥

भीष्म जी के इस वचन को सुन कर द्रोणाचार्य, सोमदत्त, बाह्लीक, जयद्रथ, कृप चार्य, भूरिश्रवा, शल्य, बृहद्बल, अश्वत्थामा विकर्ण, चित्रसेन, विविंशति और हजारों इन के पीछे चलने वाले रथ सब मिल कर दुर्योधन की रक्षा के लिये वहां गये ॥

घटोत्कच इन सब को आते हुये देख कर अपने राक्षसों सहित वहां खड़ा रहा, तब घटोत्कच और दुर्योधन की सेना का महा घोर युद्ध हुआ, धनुषों की टंकारों ने आकाश को गुंजा दिया, अस्त्र शस्त्रों के शब्दों ने युद्ध भूमि को ऐसा बना दिया जैसे फटते हुये पर्वतों का स्थान होता है ॥

तब घटोत्कच ने बहुत बड़े धनुष को लेकर अर्द्ध चंद्र नाम बाण से द्रोणाचार्य के धनुष को काटा और भल्ल से सोमदत्त की ध्वजा को तोड़ता हुआ बाह्लीक की छाती को तीन बाणों से घायल किया, तब एक बाण से कृपाचार्य को, तीन बाणों से चित्रसेन को और एक बाण से विकर्ण को घायल किया, फिर उस ने पंद्रह नाराच भूरिश्रवा पर फैंके जिन से उस का कवच कट गया, फिर विविंशति और अश्वत्थामा के सारथियों को घायल किया, वह घोड़े की बागों को छोड़ कर पृथ्वी पर

गिर पड़े, इस के पीछे उस ने अर्द्धचंद्र नाम बाण से सिन्धु के सुनहरी बाराह को और दूसरे बाण से उस के धनुष को काट डाला, तब रक्त नेत्र करके राजा अवंती के चारों घोड़ों को मारा, फिर तीक्ष्ण बाणों से राजा वृहद्बल को घायल किया, सब के पीछे राजा शल्य पर सर्पाकृति बाण बरसा कर उस को व्यथित किया ॥

घटोत्कच इन सब को भगा कर दुर्योधन को मारने की इच्छा से उस के सन्मुख दौड़ा, कौरवी सेना के वीर भी उस के सन्मुख दौड़े इन सबों ने अपने बाणों से चारों ओर से उस को ढक दिया, वह इस समय आकाश को उछला और महा शब्द करने लगा उस के इस शब्द को सुन कर युधिष्ठर ने भीमसेन से कहा कि इस शब्द से जान पड़ता है कि घटोत्कच कौरवी योधाओं से पीड़ा पारहा है तुम जाकर उस की रक्षा करो। यह सुनते ही भीमसेन झट वहां पहुंचा तब सुचित्त शूणीमाण, वसुदान काशीराज का पुत्र, द्रौपदी के पांचों पुत्र, क्षत्रदेव, वक्रान्त, क्षत्रधर्मा राजानील यह सब घटोत्कच के पास पहुंच गये, इन को आते हुए देख कर कौरवी सना भयभीत हो गई, इस समय दोनों पक्षों का बड़ा घोर युद्ध हुआ धूल उड़ने से अपने पराये एक दूसरे को न पहचान सके और अंधा धुंद शस्त्रों का प्रहार करते चले गये, रुधिर की नदी बहने लगी, जिधर देखो रुन्ड टूटे हुए अंग और मरे हुए हाथी, घोड़े ही दृष्ट पड़ते थे, कईयों ने इस दिन छाती से छाती मिला कर प्राण लिये और दिये अंत

इस का यह हुआ कि कौरवी सेना दिल छोड़ कर भाग निकली ॥

बयासीवां अध्याय

—:०:—

दुर्योधन अपनी सेना का इस प्रकार से नाश हुआ २ देख कर भीमसेन के सन्मुख गया और बाण मार कर उस को ढक दिया, एक बाण से भीमसेन का धनुष कट गया, फिर दुर्योधन ने अपने तीक्ष्ण बाण से भीमसेन की छाती को घायल किया, जिस पर भीमसेन ने अपनी सुनहरी ध्वजा को पकड़ लिया, यह दशा देख कर घटोत्कच और अभिमन्यु, भीमसेन की सहायता को दौड़े इन को आते हुए देख कर द्रोणाचार्य जी कौरवी सेना के महारथियों से बोले हे वीरो! देखो तुम्हारे राजा पर घटोत्कच और अभिमन्यु टूटे हैं शीघ्र जाओ और चारों ओर से उन की रक्षा करो। द्रोणाचार्य के इस वचन को सुन कर वह वीर सोमदत्त को आगे कर के राजा दुर्योधन की रक्षा के लिये गये दोनों ओर से बाणों की वर्षा होने लगी ॥

द्रोणाचार्य ने छब्बीस बाणों से भीमसेन को पीड़ित कर के बहुत से अन्य बाणों से उस को ढक दिया, आगे से भीमसेन ने शील मुख नाम दश बाणों से आचार्य को घायल

किया इस से वृद्ध आचार्य जी पीड़ामान होकर रथ में बैठ गये। इन को इस दशा में देख कर दुर्योधन और अश्वत्थामा क्रोध से युक्त होकर भीमसेन के सन्मुख गये, भीमसेन उन को आते देख कर रथ से कूद हाथ में अपनी भारी गदा ले खड़ा हो गया दोनों ओर से अस्त्रों का प्रहार होने लगा दुर्योधन और अश्वत्थामा के अस्त्रों से भीमसेन की छाती घायल हो गई और बहुत से कौरव योधा उस के चारों ओर हो गये॥

भीमसेन की यह दशा देख कर बीर अभिमन्यु और अन्य पांडवी योधा उस की सहायता को आये, नील राजा अश्वत्थामा के सन्मुख हुआ और उस पर बहुत से बाण बरसा कर उस को घायल किया, अश्वत्थामा ने रुधिर चलते हुये ही अपने धनुष को चढ़ाया और बड़े तीक्ष्ण भल्लों से राजा नील के चारों घोड़ों को मार कर और उस की ध्वजा को गिरा कर एक भल्ल से उस की छाती को घायल किया, जिस से वह अचेत हो कर रथ में बैठ गया, इस को इस दशा में देख कर घटोत्कच बड़े वेग से अश्वत्थामा के सन्मुख हुआ उस के साथी राक्षस भी उस के साथ गये, अश्वत्थामा ने उन को आते देख बाण बरसाये जिन से आगे चलने वाले राक्षस भाग गये, इस पर घटोत्कच ने अश्वत्थामा को अचेत करके अपनी माया को रचा, इस माया से उस ने सब कौरवी योधाओं को घोड़े आदि सहित धरती पर गिरा दिया॥

इस समय कौरवी सेना डेरों को भागी भीष्म जी ने उन

भागते हुओं को बहुतरा समझाया कि मत भागो ठहरो यह घटोत्कच की रची हुई केवल माया ही है परन्तु भीष्म जी की बात पर किसी ने ध्यान न दिया, इस पर पाण्डवों ने बड़े उच्च स्वर से सिंह नाद किय इतने में सूर्य अस्त हो गया और इस दिन भी पाण्डवों की ही जीत रही ॥

तिरासीवां अध्याय

—:o:—

डेरे में पुहुंच कर दुर्योधन ने भीष्म जी से कहा हे पिता जी! घटोत्कच जेसे तुच्छ राक्षस से आप जैसे वीरों के होते मेरी हार हुई इस से मेरा जी जल रहा है, मैं उस राक्षस को अपने हाथों से मारना चाहता हूं आप मेरे मनोरथ को पुरा करो इस पर भीष्म जी ने कहा हे कौरवनन्दन! तुम को केवल युधिष्ठर ही से युद्ध करना उचित है, मैं द्रोणाचार्य आदि को साथ लेकर उस राक्षस से लड़ूंगा, भीष्म जी ने पहिले भगदत्त को उस के साथ लड़ने के लिये भेजा, भगदत्त उस के सन्मुख गया ॥

उधर से भीमसेन, अभिमन्यु, घटोत्कच इत्यादि आये और इन का खूब युद्ध हुआ, बड़े २ तीक्ष्ण बाण और अस्त्र चले जिन से मनुष्य घोड़े, हाथी आदि मर कर धरती पर गिरे, राजा भगदत्त ने अपने हाथी पर से भीमसेन को बाणों से खूब घायल किया जिस से भीमसेन ने क्रोध में आकर हज़ारों

पाद रक्षकों को मारा, भगदत्त ने क्रोध में आकर अपने गजेंद्र को भीमसेन पर पेला, उस आते हुये हाथी को अभिमन्यु आदि भीमसेन के अग्रगामीयों ने चारों ओर से घेरा और उस पर बाण बरसाये जिस से उस गजेंद्र से रुधिर चलने लगा, तब राजा दुश्शार्णा भगदत्त के हाथी पर दौड़ा, परंतु उस हाथियों के राजा सुप्रतीक ने उस आते हुये हाथी को रोक दिया, इस के पीछे बड़े क्रोध युक्त राजा प्राग्ज्योतिष ने चौदह तोमर उस हाथी के ऊपर फेंके जिन से उस का कवच टुट गया और वह रुधिर बहाता हुआ पहिले तो सन्मुख हुआ फिर अपनी सेना को कुचलता हुआ भाग गया, इस पर पांडवों के रथियों ने बड़े उच्च स्वर से सिंह नाद किये और युद्ध करने के लिये तत्पर हुये और भीमसेन को आगे कर नाना प्रकार के अस्त्र शस्त्र फेंकते भगदत्त के सन्मुख गये, उन पर भगदत्त ने अपने हाथी को चलायमान किया जो सब को कुचलता हुआ इधर उधर दौड़ा। यह दशा देख कर घटोत्कच भगदत्त के सन्मुख आकर और शूल को लेकर उस हाथी के ऊपर फेंका जिस को भगदत्त ने अपने अर्द्ध चन्द्र नाम बाण से काट डाला, तब भगदत्त ने उस राक्षस पर अपनी बरछी फेंकी और तिष्ठ २ शब्द कहे, घटोत्कच ने उछल कर बरछी को पकड़ कर तोड़ डाला, इस पर पांडव बड़े प्रसन्न होकर उच्च स्वर से सिंहनाद करने लगे, भगदत्त पांडवों के इन शब्दों को सह न सका और अपना बड़ा धनुष चढ़ा कर पांडवों को घुड़कने लगा ॥

इस के पीछे भगदत्त ने एक बाण से भीमसेन को, नौ बाणों से घटोत्कच को, तीन बाणों से अभिमन्यु को और पांच बाणों से केकय लोगों को व्याकुल किया, फिर एक अति तीक्ष्ण बाण से क्षत्रदेव की दाक्षिण भुजा को उस के शरीर से पृथक करके धनुष समेत पृथ्वी पर गिरा दिया, इस के पीछे पांच बाणों से द्रौपदी के पांचों पुत्रों को घायल करके क्रोध से भीमसेन के घोड़ों को मारा, फिर विशिख नाम तीन बाणों से उस की ध्वजा को काट कर तीन बाणों से उस के सारथी को घायल किया जो रथ के भीतर जा बैठा, भीमसेन झट उस रथ से नीचे उतर गया और हाथ में गदा लेली इस गदा से कौरवी सेना को बड़ा भय हुआ इतने में अर्जुन चारों ओर से शत्रुओं का नाश करता हुआ वहां आ पहुंचा और बहुत से बाण बरसाने लगा ॥

तब दुर्योधन ने वहां बहुत सी सेना भेजी । इस सेना का सामना अर्जुन ने किया, राजा भगदत्त अपने हाथी द्वारा पांडवी सेना को दलन करता हुआ युधिष्ठर के सन्मुख हुआ, तब भगदत्त और पांडवों का बड़ा भारी युद्ध हुआ, इस समय भीमसेन ने अर्जुन और श्री कृष्ण जी को इरावान के मारे जाने का सारा वृतान्त कह सुनाया ॥

चौरासीवां अध्याय

—:०:—

अर्जुन इरावान के मारे जाने का वृत्तांत सुन कर बड़ा खेदित हुआ और श्रीकृष्ण जी से बोला, हे माधव जी! विदुर जी ने सत्य कहा था कि इस युद्ध से कौरवों का महा नाश होगा, यह सब नाश धन के लिये होगा, धिक्कार है ऐसे धन को जिस से जाति वालों का नाश हो। यह सकल नाश शकुनि के कारण से ही होगा, युधिष्ठ ने इस नाश को ही दृष्टिगोचर करके आधे राज्य अथवा केवल पांच ग्रामों पर ही अपने मन को धैर्य दे लिया था, परंतु दुर्योधन निर्बुद्धि ने न माना, हाय! मैं इस समय इस युद्ध में भूमि में बड़े २ वीरों को सदा के लिये सोते देखता हूं, क्या करूं यदि मैं अब युद्ध को छोड़ दूं तो लोग कहेंगे कि डर गया है, अब आप घोड़ों को शीघ्र ही दुर्योधन की सेना में ले चलो ताकि मैं वहां जा कर अपना बल पराक्रम दिखलाऊं॥

श्री कृष्ण जी रथ को वहां लेगये और युद्ध आरम्भ हुआ कौरव द्रोणाचार्य को रक्षित कर के भीमसेन के संमुख गये फिर भीष्म जी कृपाचार्य भगदत्त और सुशर्मा अर्जुन के सन्मुख गये, कृतवर्मा और बाह्लीक सात्यकी के सन्मुख हुये और राजा अवंष्टक अभिमन्यु के सन्मुख हुआ और बाकी बचे हुये शूर उनके वीरों के सन्मुख हुये युद्ध आरम्भ हुआ तब धृतराष्ट्र के पुत्रों ने भीमसेन को बाणों से ढक दिया॥

भीमसेन ने अपने क्षुरप्र नाम बाण से व्यूढोरस्क को ऐसा गिराया कि वह मर गया, फिर दूसरे पैने तीक्ष्ण भल्ल से कुंडली को भी गिरा दिया, इस के पीछे भीमसेन ने और बाण चलाये जिन से दुर्योधन के भाई अनाधृष्ण, कुण्डभेद, दीर्घलोचन, दीर्घबाहु, सुबाहु और कनकध्वज पृथ्वी पर गिर पड़े ॥

यह देख कर दुर्योधन के बाकी बचे हुये भाई वहां से भाग गये ॥

तब दुर्योधन ने भीमसेन को बाणों की वर्षा से ढक दिया जिन को भीमसेन ने धैर्य से सहा ॥

अर्जुन ने बहुत से बाण फेंके जिन को भीष्म, भगदत्त और कृपाचार्य ने सहा । अभिमन्यु ने राजा अम्बष्ठ को शायकों से विरथ कर दिया, इस राजा ने रथ से कूद कर अभिमन्यु के ऊपर अपने खड्ग को फेंका और बड़ी शीघ्रता से कृतवर्मा के रथ पर सवार हो गया, अभिमन्यु ने इस खड्ग को झट निष्फल कर दिया, कई वीरों ने नख, दांत, मुष्टिका और जंघों से भी युद्ध किया और अवकाश पाकर तमाचों तलवारों और अच्छे नियत भुजों से बहुतों ने बहुतों को यमलोक में भेजा, इस युद्ध में पुत्र ने पिता को भी मारा ॥

इस समय युद्ध भूमि में तलवारों, ढालों, परशों, दुधारों, कवच, झूलों आदि के ढेर लगे हुए दृष्ट पड़े, शवों और टूटे

हुये अंगों का वहां कोई अंत न था। हाथी, घोड़ों आदि के मर कर गिरने से कई रास्ते रुक गये, सेना थक गई और सूर्य अस्त हो गया और दोनों सेनायें अपने २ डेरों को विश्राम के लिये गईं॥

पचासीवां अध्याय

—:०:—

सातवें दिन दुर्योधन, शकुनी, दुशासन और कर्ण ने मिल कर सलाह की कि पाण्डवों को सेना समेत किस प्रकार जीता जावे। दुर्योधन ने कहा कि भीष्मजी, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, शल्य और भूरिश्रवा पाण्डवों से मिले हुए होने के कारण युद्ध में उन को पीड़ा नहीं देते, इस कारण पाण्डव घायल न होकर मेरी सारी अजेय सेना का नाश कर रहे हैं, मेरा इस से बड़ा निरादर हो रह है, अब मैं विचार में हूं कि मैं कैसे जीतूंगा॥

कर्ण ने कहा हे भरतर्षभ! चिंता मत करो, मैं तुम्हारे हित को करूंगा, भीष्मजी को युद्ध से हट जाने दो मैं सोमकों समेत पाण्डवों को भीष्मजी के देखते २ मारूंगा, मैं तुम से यह सत्य प्रतिज्ञा करता हूं और शपथ से कहता हूं कि भीष्म निश्चय करके पाण्डवों पर दया करता है। अब तुम भीष्म के डेरे में जाकर उसको युद्ध त्याग के लिये कहो॥

कर्ण के यह वचन सुन कर दुर्योधन अपने भाईयों को साथ लेकर भीष्मजी के डेरे में पहुंचा और उन को नमस्कार करके एक उत्तम आसन पर बैठ गया, तब दोनों कर बांध कर उन से बोला हे पितःजी! आप इतने सामर्थ्य वान हैं कि देवताओं को भी जीत सकते हैं पाण्डव आप के सन्मुख क्या हैं आप पाण्डवों को मारिये, मैं सोमकों, करुषों, पाञ्चालों और केकयों को यमलोक में पहुंचाऊंगा। यदि आप को पितामह होने के कारण उन पर दया आती है तो कर्ण को आज्ञा दो, वह वीर युद्ध में उन को सहायकों सहित मारेगा॥

भीष्म जी दुर्योधन के इन वचनों को सुन कर कुच्छ काल तक शोच में पड़ कर क्रोध में भरे हुये लाल नेत्र कर के बड़ी मीठी वाणी से बोले, हे दुर्योधन! तू मुझ को इस प्रकार तेरे हित प्राणों तक देने के हेतु युद्ध करते हुये को वाण रूपी भालों से क्यों घायल करता है?

क्या तू नहीं जानता कि पांडवों ने खांडव वन के जलाते समय इन्द्र को भी जीत लिया था और जब तुम और कर्ण इत्यादि गंधर्वों से पकड़े गये थे तो उन्हों ही ने तुम को छुड़ाया था, यह बात तुम को सोचनी चाहिये, क्या तुम को यह बात भूल गई है कि विराट नगर में अकेले अर्जुन ने हम सब को पछाड़ दिया था इसी प्रकार की अन्य शूरता की बातें जो पांडवों की हैं तुम उन को याद करो, ऐसा कौन पुरुष है जो ऐसे वीर के सन्मुख हो कर उन को जान सके, मैं शिखण्डी से कदापि नहीं लडूंगा क्योंकि वह स्त्री रूप उत्पन्न हुआ है

बाकी सब से युद्ध करके उन को मारूंगा या आप मारा दुंगा, हे गंधारी नंदन! तुम इस समय जाओ और आनन्द से शयन करो प्रातः काल होते ही मैं महा भारी युद्ध करूंगा ॥

दुर्योधन भीष्म जी से यह बचन सुन कर वहां से चल कर अपने डेरे में पहुंचा और रात्री भर सोया, प्रातः काल होते ही उस ने राजाओं को आज्ञा दी कि अपनी २ सेना को त्यार करो भीष्म जी आज सोमकों का नाश करेंगे, इन की पूरी २ रक्षा हम सब की रक्षा होगी, दुर्योधन के इन बचनों को सुन कर सब ओर से उन की रक्षा का प्रबंध किया गया ॥

फिर दुर्योधन ने अपने भाईयों से कहा कि अर्जुन के वाम ओर का रक्षक युधामन्यु और दक्षिण भाग का उत्तमौजा हुये हैं और अर्जुन शिखंडी का रक्षक हुआ है, दुश्शासन तुम इस बात का ध्यान रखो कि वह शिखंडी पितामह पर प्रथम तो वार करने ही न पावे और यदि करे भी तो उस वार को रोका जावे, भीष्म जी इस प्रकार से रक्षित हो कर युद्ध भूमी को चले, अर्जुन ने इन को इस प्रकार रक्षित देख कर धृष्टद्युम्न से कहा कि शिखंडी को भीष्म जी के सन्मुख खड़ा करो मैं उस का रक्षक हुं ॥

———

छयासीवां अध्याय

—:o:—

भीष्म जी ने इस दिन सर्वतो भद्र नाम व्यूह रचा और उस व्यूह के सब अंगों पर अपने पक्ष के सब राजाओं और वीरों को नियत किया, उधर से पाण्डवों ने भी अपना व्यूह रच कर अपने पक्ष के योधाओं को स्थान २ पर नियत किया, कौरवों की ओर से भीष्म जी और पाण्डवों की ओर से भीमसेन अग्रगामी हुये, दोनों ओर से शस्त्रों का प्रहार होने लगा, तेजस्वी अभिमन्यु बड़े तीक्ष्ण बाणों की वर्षा करता हुआ कौरवी सेना के सम्मुख गया, उस को कोई कौरव वीर न रोक सका, उस ने युद्ध में अपने बाणों से अनेक क्षत्रियों को मार कर यमलोक में भेजा औरकई रथीयों, घुडचढ़ों, हाथी के सवारों और पदातियों को चूर्ण कर डाला, इस पर सब राजाओं ने उस की बड़ी प्रशंसा की, इस पर सब कौरवी सेना भाग गई, इस सेना को इस समय कोई कौरवी योधा भागने से न रोक सका, इस समय अभिमन्यु ने ऐसी हस्त-लाघवता दिखाई कि बाणों के निकालने और छोड़ने का अंतर न जान पड़ता था, इन बाणों से कृपाचार्य, द्रोणाचार्य अस्वत्थामा, बृहद्बल और जयद्रथ आदि मोहित हो गये अभिमन्यु इस समय दूसरा अर्जुन जान पड़ता था, अभिमन्यु के भय से सारी कौरवी सेना भाग कर तितर बितर हो गई

और डांवा डोल हो कर इधर उधर घूमने लगी और पीड़ा से भयानक शब्द करने लगी। इन शब्दों को सुन कर दुर्योधन ने आर्यभंग नाम राक्षस से कहा हे महाबाहो! यह अभिमन्यु मेरी सेना को भगा रहा है सिवाय तेरे मुझे कोई ऐसा नहीं दीखता जो इस को मार सके, तू शीघ्र जाकर इस को मार, हम सब भीष्म और द्रोणाचार्य को आगे करके अर्जुन को मारेंगे॥

आर्यभङ्ग राक्षस इस आज्ञा को पाकर झट पांडवी सेना में घुस गया, और इस प्रकार से गर्जा कि वह सेना चलायमान होगई, उन में से कई मनुष्य उस के भय मात्र ही से डर गये, परन्तु अभिमन्यु पहिले के समान निर्भयता से बाणों सहित धनुष को हाथों में लिये हुये उस के सन्मुख हुआ, उस राक्षस ने अभिमन्यु की समीपी सेना को घायल किया, जिस से वह सेना भाग निकली, वह राक्षस सेना को मर्दन करता हुआ द्रौपदी के पुत्रों के सन्मुख हुआ, परन्तु उन पांचों ने इस को खूब घायल किया, तब महाबली श्रुत बंध ने बड़े तीक्ष्ण लोहे के बाणों से उस राक्षस को अत्यन्त घायल किया, फिर उन पांचों भाईयों ने उसे तीक्ष्ण बाणों से और घायल किया॥

इस समय वह राक्षस कुच्छ काल के लिये अचेत हो गया इस के पीछे उसने उन के धनुष और ध्वजाओं को काटा, इस के पीछे महारथी अलम्बुष ने प्रत्येक को पांच २ बाणों से घायल करके उन के सारथियों को मार डाला और कई बाण मार कर उन के पास गया, अपने भाईयों की यह दशा

देख कर अभिमन्यु झट वहां पहुंचा और इन दोनों का महा घोर युद्ध हुआ ॥

सतासीवां अध्याय

—:o:—

अभिमन्यु और अलम्बुष राक्षस दोनों दिव्य अस्त्रों के जानने वाले थे, अभिमन्यु ने तीन तीक्ष्ण बाणों से अलम्बुष को घायल किया, उधर से अलम्बुष ने भी नौ बाणों से अभिमन्यु के हृदय को घायल किया, फिर दोनों ओर से और बाण चले और वह दोनों घायल हुये, इस के पीछे राक्षस ने अपनी राक्षसी माया से अंधकार कर दिया, जिस से वह सब गुप्त होगये और अभिमन्यु किसी को न देख सका, इस पर अभिमन्यु ने सौर नाम अस्त्र को प्रकट किया तब सब कुछ दीखने लगा, प्रकाश के होते ही अभिमन्यु ने गुप्त ग्रंथी वाले बाणों से उस राक्षस को ढक दिया ॥

इस के पीछे उस राक्षस ने और कई प्रकार की माया रची परंतु अभिमन्यु ने उस सब का अस्त्रों से नाश कर डाला, माया के नाश होने पर वह राक्षस सोमकों से घायल होकर उस स्थान को त्याग कर भाग गया, तब अभिमन्यु ने कौरवी सेना में घुस कर उस को खूब विध्वंस किया ॥

भीष्म जी ने अपनी सेना को भागते हुये देख कर बाणों की तीक्ष्ण वर्षा से अभिमन्यु को ढक दिया, धृतराष्ट्र के पुत्रों

ने उस वीर को चारों ओर से घेर कर अकेले को बहुत से बाणों से घायल किया, अर्जुन ने जब अभिमन्यु को इस प्रकार घिरे हुये देखा तो वह भीष्म जी के सन्मुख हुआ, कौरवी सेना के वीरों ने भीष्म जी को चारों ओर से रक्षित किया, उधर अर्जुन की रक्षा पाण्डवों ने की और वह युद्ध में प्रवृत हुये ॥

कृपाचार्य ने अर्जुन को भीष्म जी के सन्मुख पाकर उस को पच्चास बाणों से ढक दिया उधर से सात्वकी ने बहुत से तीक्ष्ण बाणों से घायल किया, कृपाचार्य ने कंक पत्त युक्त के बाणों से सात्वकी के हृदय को घायल किया, इस पर सात्वकी ने क्रोध में आकर कृपाचार्य के नाश करने के लिये शिली मुख नाम बाण को धनुष से छोड़ा ही था कि अश्वत्थामा ने उस को दो स्थानों से काट डाला, तब सात्वकी कृपाचार्य को छोड़ कर अश्वत्थामा के सन्मुख हुआ, अश्वत्थामा ने उस के धनुष को दो खंड करके उस को बाणों से आच्छादित कर दिया, तब सात्वकी ने दूसरे धनुष को खैच कर साठ बाणों से अश्वत्थामा की छाती और दोनों भुजाओं को घायल किया इस समय अश्वत्थामा अचेत हो कर कुच्छ काल तक ध्वजा के आश्रय से रथ में बैठ गिया, अचेत होने पर उस ने अपने नाराच बाण से सात्वकी को घायल किया, फिर अश्वत्थामा ने दूसरे भल्ल से सात्वकी की ध्वजा को काट कर उस को बाणों से ढक दिया सात्वकी ने बड़ी शीघ्रता से बाणों के उस जाल को काट कर अपने बाण समूहों से अश्वत्थामा को आच्छादित कर दिया ॥

द्रोणाचार्य जी अपने पुत्र अश्वत्थामा को इस दशा में देख कर सात्वकी के सन्मुख आये और पृषत्क बाण से उस को घायल किया, सात्वकी ने अश्वत्थामा को छोड़ कर द्रोणाचार्य जी पर लोह मयी बाण बरसा कर उन को व्याकुल कर दिया, तब अर्जुन द्रोणाचार्य के सन्मुख गया और इन का आपस में युद्ध हुआ ॥

अठासीवां अध्याय

—:-०-:—

अर्जुन ने द्रोणाचार्य पर बाणों वर्षा की आगे से द्रोणाचार्य ने गुप्त ग्रंथी वाले बाणों से अर्जुन को ढक दिया, दुर्योधन ने राजा सुशर्म्मा को आचार्य जी की सहायता के लिये भेजा इस राजा ने भी अर्जुन पर बहुत से बाण बरसाये, फिर अर्जुन ने ऐसी बाण वर्षा की कि राजा सुशर्म्मा पुत्र सहित उन से घायल हुआ, उन्हों ने भी आगे से अर्जुन के रथ पर बाण बरसाये, अर्जुन ने अपने बाणों से उन के बाण जालों को रोक दिया, इस समय की अर्जुन की हस्तलाघवता देखने के योग्य थी कि उस ने उस से सब के छोड़े हुये बाणों और शस्त्रों को रोक दिया ॥

इस के पीछे अर्जुन ने त्रिगर्त देशीयों के ऊपर वायव्य अस्त्र को छोड़ा उस में से वायू प्रकट हुई द्रोणाचार्य जी ने इस अस्त्र को देख कर शैल्य नाम घोर अस्त्र को छोड़ा, इस अस्त्र

से सब वायू शांत होगई, तब बीर अर्जुन ने त्रिगंत राजा के रथों के समूहों को भगा दिया, तब दुर्योधन, कृपाचार्य, अश्वत्थामा, शल्य, काम्बोज, सुदक्षिणा, विंद अनुविंद आदि ने रथ समूहों से अर्जुन की दिशा को रोक दिया, इसी प्रकार भगदत्त और श्रुतायुष ने हाथियों की सेना लेकर भीमसेन की दिशाओं को रोका, भुरीश्रवा, शल्य और शकुनी ने तीव्र बाणों से नकुल और सहदेव को घेर लिया भीष्म जी ने धृतराष्ट्र के पुत्रों और सेना ने युधिष्ठर को सब ओर से घेर लिया ॥

भीमसेन ने झट रथ से कूद कर कौरवी सेना को भयभीत किया, तब भीमसेन को हाथियों के सवारों ने चारों ओर से घेर लिया परन्तु उस ने अपनी गदा से उन सब को छिन्न भिन्न कर दिया, हाथियों ने भीमसेन को दांत मार २ कर पीड़ित किया परन्तु उसने उन के दांत उखाड़ डाले और उन्हीं दांतों से उन के मुख को घायल करके रण भूमि में गिराया, भीमसेन की गदा से बहुत से हाथी मर गये और बचे हुए अपनी सेना को मर्दन करते हुए भाग गये, इन के भागने से सब कौरवी सेना युद्ध से मुख फेर गई ॥

उनान्वेका अध्याय

—:o:—

फिर मध्याह्न समय सोमकों का युद्ध भीमसेन से हुआ,

भीष्म जी ने अपने तीक्ष्ण बाणों से पाण्डवों की सेना को तितर बितर कर दिया उधर से धृष्टद्युम्न, शिखंडी, विराट और द्रुपद ने महारथी भीष्म को बाणों से घायल किया, भीष्म ने धृष्टद्युम्न को घायल करके तीन बाणों से विराट को व्यथित किया और फिर द्रुपद के ऊपर नाराचों की वर्षा की, इस के पीछे शिखंडी ने भीष्म जी को घायल किया परन्तु भीष्म जी ने उस को स्त्रीरूप जान कर इस पर प्रहार नहीं किया ॥

तदनंतर धृष्टद्युम्न ने अपने तीन बाणों से भीष्म जी की छाती और भुजाओं को घायल किया, द्रुपद ने पच्चीस बाणों से, विराट ने दश बाणों से और शिखंडी ने पच्चीस शायकों से भीष्म जी को घायल किया, उधर से उन्हों ने सीधे चलने वाले तीन २ बाणों से उन सब को घायल किया और भल्ल से द्रुपद के धनुष को काटा, द्रुपद ने दूसरा धनुष लेकर पांच बाणों से उस के सिर को घायल किया और अत्यंत तीक्ष्ण तीन बाणों से उस के सारथी को व्यथित किया, भीमसेन, द्रौपदी के पांचो पुत्र, केकय, सात्यकी, युधिष्ठिर और धृष्टद्युम्न भीष्म जी के सन्मुख दौड़े, कौरवों के सब योधा भी अपनी सेना सहित पाण्डवों के सन्मुख हुये, दोनों के सन्मुख होने पर बड़ा युद्ध हुआ, इस युद्ध में सेना का बहुत सा भाग यम लोक को पहुंचा, बहुत से घोड़े अपने सवारों के मर जाने से इधर उधर फिरते और मनुष्यों को रौंदते थे, हाथी अपने सवारों से हीन अपनी ही सेना को मर्दन करते हुये चलते थे, रुधिर की नदी बहरही थी, नाना प्रकार के अस्त्र, मनुष्यों और हाथियों

घोड़ों के कटे हुये अंग और वस्त्र इत्यादि धरती पर पड़े हुये दीख रहे थे, इस समय वहां यह शब्द सुनाई दे रहे थे कि दुर्योधन के अपराध से क्षत्रि लोगों का नाश हो रहा है, युधिष्ठर आदि पाण्डवों की प्रशंसा हो रही थी, अपनी निन्दा और पाण्डवों की उपमा सुन कर दुर्योधन ने भीष्म, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य और शल्य आदि महात्माओं से कहा हे वीरो! विलम्ब मत करो अहंकार को त्यागो और युद्ध करो, इस पर दोनों ओर के योधा क्रोध में आकर युद्ध में लग गये ॥

नब्बेवां अध्याय

—:०:—

अर्जुन ने शुशर्मा के पीछे चलने वाले राजाओं को अपने तीक्ष्ण बाणों से यम लोक में पहुंचाया, शुशर्मा ने अर्जुन को बाणों से घायल करके वासुदेव जी को सत्तर बाणों से घायल किया, अर्जुन से डर कर शुशर्मा के शूर वीरों में से कई तो घोड़ों को त्याग कर कई रथों और कई हाथियों को छोड़ कर दशों दिशाओं को भागे और कई घोड़े, हाथी और रथ को साथ लेकर चल दिये, पदाति भी जिधर को रास्ता मिला उधर भाग गये, दुर्योधन इन सब को भागते हुये देख कर भीष्म जी को आगे करके शुशर्मा के बचाओ के लिये अर्जुन के सन्मुख आया और सब पाण्डव भी वहां पहुंचे ॥

भीष्म जी ने गुप्त ग्रंथीं वाले बाणों से पांडवी सेना को ढक दिया, इस समय सूर्य आकाश के मध्य में था, दोनों पक्षों में युद्ध होने लगा, सात्वकी पांच बाणों से कृतवर्मा को घायल करके हज़ारों बाण छोड़ता हुआ युद्ध में नियत हुआ, राजा द्रुपद ने द्रोणाचार्य जी को तीक्ष्ण बाणों से घायल करके पांच बाणों से उन के सारथी को व्यथित किया भीम सेन ने भीष्म जी और बाह्लीक को घायल किया, अभिमन्यु ने चित्रसेन को तीन बाणों से घायल किया और नौ बाणों से उस के घोड़ों और रथी को मार डाला, चित्रसेन उस रथ से उतर कर झट दुर्मुख के रथ पर सवार होगया ॥

द्रोणाचार्य ने गुप्त ग्रंथी वाले बाणों से द्रुपद और उस के सारथी को घायल किया जिस से वह राजा पीछे हट गया। तब भीमसेन ने क्षण भर में सब सेना के देखते हुए राजा बाह्लीक को घोड़ो, रथ और सारथी से रहित कर दिया, वह राजा रथ से उतर कर व्याकुल होकर शीघ्र ही लक्ष्मण के रथ पर सवार हो गया, सात्वकी ने कृतवर्मा को आगे से हटा कर भीष्म जी को साठ बाणों से घायल किया। भीष्मजी ने उस पर बड़ी भारी शक्ती फेंकी जिस को सात्वकी ने निष्फल कर दिया, तब सात्वकी ने अपनी शक्ती भीष्म पर फेंकी भीष्मजी ने उस शक्ती को अपने क्षुरप्र नाम बाणों से दो खंड कर डाला और नौ बाणों से सात्वकी को छाती पर घायल किया ॥

इस समय पाण्डवों ने रथ हाथी, घोड़ों सहित सात्वकी की रक्षा के लिये भीष्म जी को घेर लिया तब दोनों पक्षों का बड़ा भारी युद्ध हुआ ॥

इक्यानवेवां अध्याय

—:०:—

भीष्मजी को इस प्रकार घिरा हुआ देख कर दुर्योधन दुशासन से बोला हे भाई! भीष्मजी हमारे रक्षक हैं, इस समय वह पाण्डवों से चारों ओर से घिरे हुए हैं, तुम सेना को लेकर उन की रक्षा करो, दुश्शासन ने इस आज्ञा को पाकर झट सेना को लिया और भीष्मजी के पास जाकर उन को मध्य में लेकर उन की रक्षा की। तब शकुनि ने अपनी सेना के वीरों को लेकर नकुल, सहदेव और युधिष्ठर को चारों ओर से घेर कर रोक लिया, दुर्योधन ने दश सहस्र घुड़ चढ़े पांडवों के सन्मुख भेजे। इन से पांडवी सेना भय भीत हुई। नकुल और सहदेव ने अपने वेग से सवारों के बड़े भारी वेगों को रोक दिया और अपने गुप्त ग्रंथी वाले बाणों से उन को मार डाला, उन के घोड़े भी नाश को प्राप्त हुए। बाकी जो बचे वह भाग गये इस पर पांडवों ने विजय पाकर सिंहनाद किये और शंख और भेरी आदि को बजाया॥

दुर्योधन अपनी सेना को हारा हुआ देख कर बड़ा दुःखी

हुआ और राजा मद्रदेश से कहने लगा कि हे महाबाहो ! युधिष्ठर नकुल और सहदेव को लेकर हमारी सेना का नाश करके अब भागता है इस को पकड़ो और मारो, यह बचन सुन कर शल्य युधिष्ठर के समीप गया परंतु वहां पहुंचते ही उस की सेना गिर पड़ी, युधिष्ठर ने शल्य को सात तीक्ष्ण बाणों से घायल किया और नकुल और सहदेव ने भी उस पर सात सात बाण मारे ॥

फिर शल्य ने भी उन सब को तीन २ बाणों से घायल करके बड़े तीक्ष्ण साठ बाणों से युधिष्ठर को घायल किया यह दशा देख कर भीमसेन झट युधिष्ठर के पास जा पहुंचा और उनका बड़ा भारी युद्ध हुआ ॥

बावनवां अध्याय

—:०:—

इस के पीछे भीष्म जी ने भीमसेन को बारह बाणों से, सात्वकी को नौ बाणों से, नकुल को तीन बाणों से और युधिष्ठर को बारह बाणों से घायल किया और धृष्टद्युम्न को भी व्यथित किया, तब नकुल ने बारह बाणों से, सात्वकी ने तीन बाणों से, धृष्टद्युम्न ने सत्तर बाणों से, भीमसेन ने सात बाणों से और युधिष्ठर ने बारह बाणों से पितामह को घायल किया, तब द्रोणाचार्य ने भीमसेन और सात्वकी को पांच २ बाणों से

व्यथित किया इन दोनों ने तीन २ बाणों से आचार्य जी को घायल किया, तब दूसरे देशों से आये हुये राजा लोग पांडवों के सन्मुख हुए ॥

भीष्म जी ने इस समय अपने बाण बरसाकर बड़े २ शूर वीर क्षत्रियों को भस्म कर डाला और अपने नाराच बाणों से सेना को भी ढक दिया, इस समय इन का एक बाण भी निष्फल नहीं गिरता था और इन बाणों से जीवमात्र कम्पायमान होते थे, यह दशा देख कर श्रीकृष्ण जी रथ को रोक कर अर्जुन से बोले हे अर्जुन ! अब वह समय आगया है कि तू अपने उस वचन को जो विराट नगर में तुमने किया था कि भीष्म जी और द्रोणाचार्य के तुम्हारे सन्मुख आने पर तुम उन को मारोगे पूरा करो ॥

अर्जुन श्रीकृष्ण जी के इन वचनों को सुन कर बड़े नम्र और मीठे शब्दों से बोला, हे भगवन् ! चाहे इस कर्म से मुझ को नर्क प्राप्त हो, चाहे कुछ और हो मैं इस को अवश्य करूंगा आप मेरे रथ को वहां ले चलो जहां भीष्म इत्यादि हैं, श्रीकृष्ण जी इस वचन को सुनते ही अर्जुन को वहां लेगये जहां भीष्म जी थे, पांडवी सेना भी उस के पीछे उसी स्थान पर पहुंची । भीष्म जी ने अर्जुन को अपने बाणों से ढक दिया जिस से उस का रथ सारथी सहित अदृष्ट हो गया, कृष्ण चन्द्र ने अपने घोड़ों को तीव्र किया और अर्जुन ने अपने तीक्ष्ण बाणों से भीष्म जी के धनुष को काट कर पृथ्वी पर गिरा दिया ॥

भीष्म जी ने क्षण मात्र में ही उस टूटे हुये धनुष को त्याग कर दूसरे धनुष को त्यार किया और अपनी दोनों भुजाओं से खेंचा, फिर अर्जुन ने उन के इस धनुष को भी काट डाला। इस पर भीष्म जी ने अर्जुन की बड़ी प्रशंसा की और झट तीसरा धनुष लेकर अर्जुन के रथ पर बाण बरसाये परन्तु वासुदेव जी ने इस समय घोड़ों को बड़े वेग से चला कर अपना बल दिखलाया ॥

इस के पीछे श्री कृष्ण जी भीष्म जी को युधिष्ठर की सेना को नाश करते हुये देख कर हाथ में चाबक ले रथ से उतर कर भीष्म जी के सन्मुख गये, माधव जी को इस प्रकार आते देख कर सेना के लोग मन में विचारने लगे कि अब भीष्म मारा जायगा, झट श्री कृष्ण जी भीष्म जी के सन्मुख गये उन को आते देख कर भीष्म जी ने सावधान चित्त होकर बड़े धनुष को बड़ी स्थिर चित्तता से हाथ जोड़ कर कहा हे देव! आप आईये आप को नमस्कार है हे माधव! अब आप मुझ को इस महा युद्ध में गिराइए क्योंकि आप के हाथ से मरने से मेरा कल्याण होगा, मैं युद्ध में प्रतिष्ठा पाचुका हुं आप का दास हुं, अपनी इच्छा के अनुकूल मुझ पर प्रहार कीजिये, अर्जुन ने श्री कृष्ण जी को अपनी दोनों भुजाओं से पकड़ कर दाब लिया, वह इस प्रकार से पकड़े हुये अर्जुन को लेकर बड़ी शीघ्रता से चले परन्तु अर्जुन ने दशवें ही चरण पर बड़ बल से उन के दोनों चरणों को पकड़ लिया और यह वचन बोला, हे माधव जी! आप लौटिये और अपने उस वचन और सत्य को न

छोड़ीये जो आपने किया था कि हम युद्ध नहीं करेंगे, यदि आप ऐसा करेंगे तो संसार आप को मिथ्यावादी कहेगा, यह काम मेरा है मैं ही इस को करूंगा; हे केशव जी ! मैं शस्त्र, सत्यता अपने उत्तम कर्म की शपथ खाता हुं कि मैं शत्रुओं को मार कर जीतूंगा आप अभी इस भीष्म को गिरा हुआ देखोगे यह सुन कर क्रोध भरे माधव जी कुछ न बोले और रथ पर सवार होगये ॥

इस के पीछे भीष्म जी ने उन दोनों पर बहुत से बाण बरसाये और पाण्डवी सेना को अस्त व्यस्त कर दिया और उस सेना के हजारों मनुष्य भीष्म जी से घायल होगये इस समय पाण्डवी सेना को कोई रक्षक न मिला इतने में सूर्य अस्त होगया, इस दिन जीत कौरवों की रही और दोनों पक्षों की सेना अपने २ डेरों को गई ॥

तिरानवेंवां अध्याय

—:०:—

डेरों में जाकर भीष्म जी कौरवों से पूजित और स्तूयमान हुए और युधिष्ठर शोकातुर होकर श्रीकृष्ण जी से बोले कि हे माधव ! भीष्मजी अजेय हैं, इन्होंने आज हमारी सेना का नाश कर दिया है, मैं इस युद्ध को त्याग कर वन में चला जाऊंगा क्योंकि मेरे लिये वन ही उत्तम है और उसी में मेरा कल्याण है। मेरे भाई मेरे कारण राज्य से भ्रष्ट होकर

अत्यंत पीड़ामान हो रहे हैं और एसे ही द्रौपदी ने भी महा दुःख सहे, मैं जीवन को बहुत मानता हूं और बाकी रही हुई अवस्था उत्तम धर्म में लगाऊंगा॥ हे केशव जी ! मेरा हित करो॥

श्रीकृष्णजी ने युधिष्ठर को विश्वासित करके कहा, हे धर्म पुत्र ! तुम शोक को त्याग दो तुम्हारे शूरवीर दुर्जय भाई शत्रुओं के मारने वाले हैं, अर्जुन और भीमसेन वायु और अग्नि के समान तेजस्वी हैं और मैं भी तुम्हारी आज्ञा में हुं और आज्ञा पाने पर भीष्म को मारुंगा, हे धर्म पुत्र यदि तू भीष्म के मरने पर ही अपनी जीत जानता है तो मैं एक ही रथ द्वारा उन को मार डालूंगा, जो पाण्डवों का शत्रु है वह मेरा शत्रु है जो धन आदि तुम्हारा है वह मेरा है जो मेरा है वह तुम्हारा है, अर्जुन मेरा मित्र होकर शिष्य भी है, मैं उस के निमित्त अपने मांस को भी काट कर देसकता हुं और अर्जुन भी मेरे निमित्त प्राण तक देने को तत्पर है, यह बात भी निश्चित हैं कि अर्जुन युद्ध में अवश्य भीष्म को मारेगा असम्भव कठिन कर्मों को भी करेगा, यह अर्जुन तो देवताओं को भी जीत सकता है फिर भीष्म का जीतना इस के लिये क्या कठिन है ॥

युधिष्ठर ने कहा हे महाबाहो आपका कथन सब यथार्थ है निश्चय करके आपका वेग किसी के सहने के योग्य नहीं, मैं इस को अवश्य प्राप्त करुंगा, जब आप जेसे कृपानिधि हमारे पक्ष पर हैं तो हम युद्ध में इन्द्र को भी जीत सकते हैं, हे माधव!

जी ! मैं आप से युद्ध करवा कर आप को मिथ्यावादी करना उचित नहीं समझता, आप वचन द्वारा ही हमारी सहायता करें, हे केशव जी ! भीष्म ने मेरे साथ प्रण किया था कि मैं दुर्योधन की ओर से तुम्हारे साथ लडूंगा परन्तु तुम्हारे हित को भी सदैव दृष्टि में रखूंगा, सो उचित है कि हम उन के पास चल कर उन्हीं से उन की मृत्यु का उपाय पूछें वह अवश्यमेव हम को बतलादेंगे, जैसा वह कहेंगे फिर हम वैसा ही युद्ध में करेंगे, श्री कृष्ण जी की सम्मति से वीर पांडव उस को साथ लेकर भीष्म जी के डेरे में गये और नम्रता पूर्वक प्रणाम किया ॥

भीष्म जी ने श्रीकृष्ण से कहा हे कृष्ण जी ! आप का आना शुभदायक हो, हे अर्जुन ! तेरा आना भी सुफल हो, युधिष्ठिर, भीमसेन, नकुल और सहदेव का आना भी मंगलकारी हो आप मुझे बतायें कि मैं आप का कैसा शिष्टाचार करूं, दुःख होने पर भी तुम्हारे हित करने को तत्पर हूं, पितामह जी के इन प्रीति युक्त वचनों को सुन कर युधिष्ठिर ने बड़ी प्रीति के शब्दों से कहा हे सर्वज्ञ ! हम कैसे सब विजय पावें और आप अपने मरने का उपाय भी हम से कहिये, हे पितामह जी ! हम युद्ध में आप के प्रभाव को सह नहीं सकते आपने अपने बाणों से मेरी सेना का नाश कर दिया है, आप ऐसा उपाय बतलायें जिस से मेरी सेना बचे ॥

भीष्म जी ने उत्तर में कहा हे युधिष्ठिर ! मेरे जीते जी

तुम कौरवों का कदापी जीत नहीं सकते, यदि तुम युद्ध में विजय चाहते हो तो मुझ पर प्रहार करो, हे कुन्ती के पुत्रो ! मैं तुम को आज्ञा देता हुं कि तुम युद्ध में मुझ पर प्रहार करो मैं इस कर्म को बहुत उत्तम कर्म मानता हूं. मेरे मरने पर तुम्हारे शत्रुओं की सब सेना अल्प काल में नाश हो जावेगी इस कारण तुम मुझ को मारो ॥

युधिष्ठर ने कहा हे पिता जी ! आप हम को वह उपाय बतलाईये जिस से हम आप को मार सकें ॥

भीष्मजी ने कहा हे कुन्ती नंदन ! मैं भागे हुए, भयभीत, एक पुत्र के रखने वाले, शरण में आये हुए, व्याकुल अथवा स्त्री नाम रखने वाले पर प्रहार नहीं किया करता और न ही मैं, अमंगल रूप ध्वजा को देख कर कभी लड़ता हूं। हे राजा ! तेरी सेना में द्रुपद का बेटा शिखंडी है वह पहिल स्त्री होकर पीछे पुरुष हुआ है सो अर्जुन को चाहिये कि उस को आगे करके मेरे सन्मुख आकर मुझ पर विशिख नाम बाण चलावे। मैं उस शिखंडी पर प्रहार नहीं करूंगा। इस रीति से तेरी विजय होगी ॥

यह सुन कर सब पाण्डव अपने डेरों को गये और वहां पहुंच कर श्री कृष्णजी से अर्जुन बोला कि हे केशव जी ! जिन पितामह जी ने बाल्यावस्था में मुझ को पितावत गोदि में खिलाया है मैं उन को किस प्रकार मार सकता हूं, मुझ से ऐसा अप्रिय काम होना कठिन है। हे वासुदेव जी ! युद्ध में

चाहे हमारी हार हो या जीत मैं भीष्मजी को नहीं मारूंगा ॥

श्रीकृष्णजी ने कहा हे अर्जुन ! प्रण करके उसको पूरा नां करना क्षत्रि धर्म के विरुद्ध है तुम अपने प्रण को जो तुम ने भीष्मजी को मारने के लिये किया हुआ है स्मरण करो। हे अर्जुन ! तुम बिना भीष्मजी के मारे युद्ध में विजय नहीं पा सकते और बिना विजय पाये संसार में कीर्ति को नहीं पाओगे। तेरे सिवाय ऐसा कोई भी नहीं जो इस भीष्म को मार सके, इस कारण तु स्थिर हो और भीष्म जी को मार, उस के मरने में ना अपने को मारे चाहे वह गुणों से भरा हुआ कुल का वृद्ध भी हो कोई दोष नहीं, हे अर्जुन ! युद्ध करना, रक्षा करना, दूसरे के गुणों में दोष लगाने वाले का पूजन करना यह क्षत्रियों का सनातन धर्म चला आया है ॥

अर्जुन ने कहा हे श्री कृष्ण जी। शिखंडी अवश्य भीष्म जी का काल होगा क्योंकि जब वह इस को युद्ध में देखते हैं लौट जाते हैं, इस से इस प्रकार हम उन के सन्मुख शिखंडी को करके मार डालेंगे ॥

चौरानवेंवां अध्याय

—:०:—

प्रातः काल होने पर भेरी, मृदंग, ढोल आदि बाजों के बजने और चारों ओर से शंखों के शब्द होने पर सब पांडव व्यूह को रच और शिखंडी को आगे करके युद्ध भूमी में

गये उधर स कौरवों ने अपना व्यूह रचा और भीष्म जी को आगे कर वह भी रण भूमी को आये, जब दोनों पक्षों की सेना वहां पहुच गई तो महा घोर युद्ध होने लगा, अर्जुन आदि पांडव शिखण्डी को आगे करके नाना प्रकार के बाण बरसाते हुए भीष्म जी के सन्मुख गए, भीमसेन ने कई कौरवी शुरवीरों को अपने बाणों से घायल कर के यमलोक में पहुंचाया, सात्यकी, नकुल और सहदेव ने भी बहुत सी कौरवी सेना को पीड़ित किया जिस से कौरवी सेना व्याकुल हो कर चारों ओर को भाग निकली इस समय इस सेना को सिवाय भीष्म जी के कोई रक्षक न मिला ॥

भीष्म जी अपने जीवन का त्याग कर वत्सदन्त अंजीलक सतनाम बाणों से पांडवों के ऊपर वर्षा करते रहे, उन्हों ने पांडवों के बहुत से महा रथियों को अपने शायकों से रोका और असंख्य हाथी, घोड़े और रथ से रथियों को भी गिराया ॥

इसके पीछे भीष्म जी का पांडवों से सामना हुआ, भीष्म जी ने वज्र के समान बहुत से बाण उन पर फैंके, इस पर धृतराष्ट्र के पुत्रों ने उन की बड़ी प्रशंसा की और पांडव इस से उदास हुए, इस दशवें दिन शिखंडी ने अपने तीक्ष्ण बाणों से सेना को भस्म करके तीन बाणों से भीष्म जी की छाती को घायल किया, भीष्म जी अपने प्रण पर दृढ़ रह कर हंसते हुये बोले तू लड़ चाहे न लड़ मैं किसी प्रकार से भी तुझ से नहीं

लड़ूंगा क्योंकि तू वही ईश्वर से उत्पन्न हुई शिखण्डनी रूप स्त्री है ॥

सत्यव्रत भीष्मजी के इन वचनों को सुन कर शिखंडी क्रोध से भरा हुआ होठों को चबाता हुआ बोला हे महा बाहो कौरव, मैं तेरे क्षत्रियत्व को जानता हुं मैंने तेरा परशुराम के साथ युद्ध भी सुन रक्खा है तेरा अन्य प्रभाव भी मुझ को मालूम है, इन सब बातों को जानता हुआ भी मैं अब पाण्डवों के हित और अपने प्रयोजन के लिये तुझ से लड़ूंगा और युद्ध में अवश्य तुझ को मारुंगा, अब तेरी इच्छा है चाहे युद्ध कर चाहे न कर तू मेरे हाथ से जीता नहीं छूटेगा, शिखंडी ने ऐसे वचन कहते हुये झुकी हुई गांठ वाले पांच बाणों से भीष्म को घायल किया, तब अर्जुन ने विचारा कि अब समय है झट उस ने शिखंडी को प्रेरणा की और कहा कि मैं शत्रुओं को बाणों से हटाता हुआ तेरे पीछे लड़ूंगा तू अपने पूर्ण बल से इस अजेय भीष्म के सन्मुख जा, यह भीष्म जी बल से नहीं मारे जा सकते इस कारण युक्ति ही से इन के प्राण लेने चाहिये, हे शिखंडी ! यदि तू इस समय भीष्म को मारे बिना इस युद्ध से लौटेगा तो तेरी और मेरी दोनों की इस लोक में हंसी होगी, तू युद्ध में जाकर भीष्म जी से अवश्य लड़ मैं सब कौरवी सेना के शूर वीरों को रोकूंगा ॥

पचानवेंवां अध्याय

—:o—

तब भीष्म जी ने बहुत सी पाण्डवी सेना का नाश किया, उधर से पाण्डवों का वीर अर्जुन अपने धनुष को चढ़ कर प्रत्यंचा को खेंचता हुआ भीष्म जी के सन्मुख हुआ, इस को देखते ही कौरवी सेना के कई मनुष्य भयभीत होकर भाग गये। यह दशा देख कर दुर्योधन भीष्म जी से बोला, हे तात! देखो अर्जुन मेरी सेना का नाश कर रहा है, आप के सिवाये इस समय मैं अपनी सेना में कोई वीर नहीं देखता जो मेरी सेना की रक्षा करके पाण्डवी सेना का नाश करे, आप शीघ्र ही इस महान कार्य को कीजिये ॥

यह सुन कर भीष्म जी महूर्त भर विचार में पड़ कर फिर दुर्योधन से बोले, हे पुत्र! तुम स्थिर बुद्धि से समझो, मैंने तुम से प्रण किया था कि मैं दश हजार क्षत्रियों को मार कर युद्ध से पृथक हूंगा, सो मैंने अपने वचन को पुरा कर दिया है। अब भी मैं महान कर्म करूंगा पाण्डवों को मारूंगा अथवा आप मर कर शयन करूंगा, हे राजा! अब मैं स्वामी के ऋण से निवृत होकर सेना के मुख पर नियत होकर तेरे ऋण को चुकाऊंगा यह कहते हुये और बाण छोड़ते हुये भीष्म जी पाण्डवों के सन्मुख आये ॥

आगे से पांडवों ने उन को रोका इस दशवें दिन उस वीर ने अपनी सामर्थ दिखाते हुए लाखों को मार डाल

पांचाल देशी सब राज कुमारों के पुत्रों को ऐंच डाला। दश हजार हाथियों और इतने ही सवारों सहित घोड़ों को मार डाला, एक लाख पदातियों को यम लोक में पहुंचाया, इस दशा में पांडवों के शूर वीरों में से कोई भी उन के सन्मुख न हुआ॥

युद्ध में भीष्म जी के इस पराक्रम को देख कर अर्जुन शिखंडी से बोला कि तुम पितामह जी के सन्मुख हो जाओ इन से किसी प्रकार का भय मत करो। मैं अपने उत्तम बाणों से इन को रथ से गिराऊंगा, शिखंडी झट भीष्म जी के सन्मुख हो गया, धृष्टद्युम्न और अभिमन्यु भी उन के सन्मुख गये पांडवी सेना के बाकी शूर वीरों और सेना ने भी उन का सामना किया, कौरवी सेना और उस के शूर वीर भी वहां पांडवी सेना के सन्मुख होगए पांडवी योधाओं को भीष्म जी पर प्रहार करने से रोका तब दुशासन ने शिंखडी नाम तीन बाणों से अर्जुन को और बीस बाणों से वासुदेव जी को घायल किया॥

इस के पीछे अर्जुन ने श्री कृष्ण जी को पीड़ा मान देख कर एक सौ नाराच बाणों से दुशासन को घायल किया, फिर क्रोधी दुशासन ने आठ बाणों से अर्जुन को ललाट पर घायल किया तब अर्जुन ने क्रोधी दुशासन को बहुत पीड़ा वान किया, उस ने पीड़ित हो कर कंकपत्र वाले तीक्ष्ण बाणों से अर्जुन को फिर पीड़ावान किया, तब तो अर्जुन ने उस के

धनुष को काट कर तीन बाणों से उस के रथ को खंडित और फिर उस के शरीर को घायल किया ॥

तब दुशासन ने भीष्म जी के आगे नियत होकर और दूसरे नये धनुष को लेकर अपने पच्चीस बाणों से अर्जुन को भुजा और छाती पर घायल किया, अर्जुन ने उस पर विशिख नाम के बहुत से बाण बरसाये परन्तु दुशासन ने उन बाणों को बीच में ही काट डाला, तब दुर्योधन ने तीक्ष्ण धार वाले बाणों से अर्जुन को व्यथित किया, अर्जुन ने भी सुनहरी पुंख वाले बाणों को धनुष पर चढ़ा कर फैंका जो दुर्योधन के शिर में लगे दुर्योधन अर्जुन को छोड़ कर शीघ्र ही भीष्म जी के पास गया और धैर्य को प्राप्त हुआ तब फिर दुर्योधन ने चैतन्य होकर महा तीव्र बाणों से अर्जुन को ढक दिया परन्तु वह इन से पीड़ायान न हुआ ॥

छयानवेंवां अध्याय

—:o:—

तब सात्यकी को भीष्म जी के सन्मुख जाते हुये आर्यसृंग ने रोका परंतु वह राक्षस सात्यकी से नौ बाण खाकर घायल होगया, राक्षस ने भी सात्यकी को पीड़ित किया यह दोनों बहुत काल तक एक दूसरे के ऊपर हंस २ कर और गर्ज २ कर प्रहार करते रहे, इस के पीछे भगदत्त ने अपने तीक्ष्ण

बाणों से सात्यकी को बहुत घायल किया, सात्यकी ने भी राक्षस को छोड़ कर भगदत्त को घायल किया परन्तु भगदत्त ने उस के धनुष को काट डाला, उस ने उसी समय दूसरे धनुष लेकर बड़े तीक्ष्ण बाणों से भगदत्त को घायल किया, तब भगदत्त ने अपनी दृढ़ शक्ती को उस पर फेंका उस शक्ती को सात्यकी ने दो खंड करके धरती पर गिरा दिया, दुर्योधन इस शक्ती को न टूटते देख कर सात्यकी को चारों ओर से घेर कर अपने भाईयों से यूं बोला हे कौरवो ! ऐसा यत्न करो कि यह सात्यकी अब जीता न लोटने पावे ! इस सात्यकी के मरने पर मैं पाण्डवों की बड़ी सेना को भी मरा हुआ ही मानता हूं उस के भाईयों ने कहा ऐसा ही होगा, उन्हों ने यह कह कर भीष्म के ही आगे सात्यकी से युद्ध किया और राजा काम्बोज ने भीष्म की ओर जाते हुए युद्ध में प्रवृत्त अभिमन्यु को रोका, अभिमन्यु ने गुप्त ग्रंथी वाले बाणों से उस राजा को घायल करके चौसठ बाणों से व्यथित किया तब राजा सुदक्षिण ने उस को पांच बाणों से और उस के सारथी को नौ बाणों से घायल किया, इन दोनों का आपस में बड़ा भारी युद्ध हुआ ॥

अब शिखंडी भीष्म जी की ओर दौड़ा विराट और द्रुपद भी पितामह जी की ओर दौड़े; अश्वत्थामा उन के सन्मुख हुआ और इन का बड़ा युद्ध हुआ, राजा विराट ने दश भल्लों से और द्रुपद ने तीन बाणों से अश्वत्थामा को

घायल किया और उस पर और प्रहार करने लगा। अश्व-त्थामा ने युद्ध में भीष्म जी के ऊपर प्रवृत्त वैराठ और द्रुपद को अनेक बाणों से घायल किया परन्तु उन दोनों वृद्धों ने उस के बाणों को रोक दिया॥

इधर कृपाचार्य जी सहदेव के सन्मुख हुए और उन्हों ने सत्तर बाणों से उस को घायल किया; परन्तु सहदेव ने उन के धनुष के खंड २ कर के नौ बाणों उन का घायल किया फिर कृपाचार्य ने सहदेव की छाती पर दश तीव्र बाण मारे, सहदेव ने भी आचार्य जी की छाती को घायल किया तब इन दोनों का महा घोर और भयानक युद्ध हुआ। तब विकर्ण ने नकुल को सात बाणों से घायल किया नकुल ने भी सतहत्तर शिलि मुख बाणों से विकर्ण को घायल किया इस के पीछे इन दोनों का आपस में इस प्रकार से युद्ध हुआ जिस प्रकार दो सांडों का होता है॥

इस के पीछे दुर्मुख घटोत्कच के सन्मुख हुआ परंतु घटोत्कच ने गुप्त ग्रंथी वाले बाणों से उस की छाती को घायल किया आगे से दुर्मुख ने भी साठ बाणों से घटोत्कच को घायल किया, कृतवर्मा ने धृष्टद्युम्न को रोक कर छह के बाणों से उस को घायल किया, धृष्टद्युम्न ने भी अपने नौ बाणों से उस को घायल किया फिर इन दोनों का आपस में घोर युद्ध हुआ, इसी प्रकार पाण्डवों और कौरव के अन्य शूर वीरों का आपस में घोर युद्ध हुआ। अन्त में कौरवी सेना भाग गई और जीत पाण्डवों की रही॥

सतानववां अध्याय

—:०:—

इस के पीछे द्रोणाचार्य जी धनुष से पांडवी सेना को कम्पायमान करते हुये अपने पुत्र अश्वत्थामा से बोले हे पुत्र! आज चिन्ह ऐसे दीख रहे हैं कि अर्जुन भीष्म जी को मारने के लिये बड़े २ उपाय करेगा वह अर्जुन बड़ा लक्ष भेदी है वह शिखंडी को आगे कर पितामह पर वाण फेंकेगा हे पुत्र! शीघ्र जाओ और उस महा बली को ऐसा कार्य करने से रोको देखो अर्जुन अपने वाणों से कौरवी सेना का नाश किये जारहा है और कौरवी सेना व्याकुल हो कर हाय! हाय! कर रही है, हे पुत्र! देखो वह दु [illegible] का पुत्र धृष्टद्युम्न है उस के सन्मुख जाओ मैं युधिष्ठर के सन्मुख जाऊंगा, युधिष्ठर के बड़े व्यूह का मध्य सब ओर को नियत अति रथियों से समुद्र की कुक्षि के समान कठिनता से पार उतरने के योग्य है, सात्यकी, अभिमन्यु, धृष्टद्युम्न, भीमसेन, नकुल और सहदेव इन सब ने राजा युधिष्ठर को चारों ओर से रक्षित किया हुआ है, हे पुत्र! तुम धृष्टद्युम्न के सन्मुख जा कर भीमसेन से युद्ध करो॥

द्रोणाचार्य जी के इन वचनों को सुन कर राजा भगदत्त कृपाचार्य, शल्य, कृतवर्मा, विन्द, अनुविन्द, जयद्रथ, चित्रसेन, विकर्ण और दुर्मर्षण आदि ने भीमसेन से युद्ध किया इन सब ने अपने २ वाणों से भीमसेन को घायल किया उधर से उस

अकेले बीर ने उन सब को अपने तीक्ष्ण बाणों से घायल किया और कृपाचार्य के धनुष को काट डाला, उसने दूसरा धनुष लेकर बारह बाणों से भीमसेन को घायल किया, भीम सेन ने भी उस पर अनेक बाण बरसाये, उस ने तीन बाणों से जयद्रथ के घोड़े और सारथी को यमलोक में भेजा, जयद्रथ ने झट उस रथ से कूद कर भीमसेन के ऊपर बड़े तीक्ष्ण धार वाले बाण फेंके, तब भीमसेन ने अपने दो तीक्ष्ण भल्लों से उस राजा के धनुष को काट डाला ॥

राजा जयद्रथ दुसरा धनुष लेकर झट चित्रसेन के रथ पर सवार हो गया भीम सेन ने सब के देखते ही जयद्रथ को विरथ कर दिया, इस पर शल्य ने बड़े तीक्ष्ण बाणों को धनुष पर चढ़ा कर भीम सेन को घायल किया और तिष्ठ २ वचन का उच्चारण किया, तब कृपाचार्य, कृतवर्मा, भगदत्त आदि ने भी भीम सेन को घायल किया आगे से अकेले भीमसेन ने उन सब को पांच २ बाणों से घायल किया और शल्य को सत्तर बाणों और दश भल्लों से घायल किया फिर शल्य ने उस को नौ बाणों से घायल करके पांच बाणों से व्यथित कर दिया और एक बाण से उस के सारथी को मर्म स्थल में घायल किया भीम सेन ने अपने सारथी को घायल हुआ हुआ देख कर अपने तीन तीक्ष्ण बाणों से शल्य की भुजा और छाती को घायल किया फिर वह अन्य कौरवी योधाओं को तीन २ बाणों से व्यथित करता हुआ सिंह के समान गर्जा इसी प्रकार दोनों ओर से परस्पर में बाण चलते रहे।

वह सब एक ओर से उस पर बाण बरसाते रहे और वह सब पर अकेला ही बाण वर्षा करता रहा॥

फिर भगदत्त ने भीमसेन के ऊपर अपनी चमकती हुई शक्ती फेंकी, जयद्रथ ने तोमर, महाभुज ने पट्टिश, कृपाचार्य ने शतघ्नी और शल्य नौ बाण फेंका और अन्य कौरवी वीरों ने भी भीमसेन को निशाना बना कर पांच २ शिली मुख बाण फेंके, इन सब को भीमसेन ने अपने बाणों से खंड २ कर डाला और उन सब को अपने गुप्त ग्रंथी वाले बाणों से घायल किया, यह दशा देख कर अर्जुन झट वहां आया और फिर युद्ध होने लगा, धृतराष्ट्र के पुत्र इन दोनों वीरों को युद्ध में इस प्रकार प्रवृत्त देख कर निराश होगये॥

तब दुर्योधन ने राजा सुशर्मा को इन दोनों वीरों के मारने की आज्ञा दी, यह आज्ञा पाकर राजा सुशर्मा भीमसेन और अर्जुन से लड़ने लगा इस राजा ने अपनी सेना से उन दोनो को चारों ओर से घेर लिया॥

अठावनवां अध्याय

—:०:—

इस के पीछे अर्जुन ने शल्य को गुप्त ग्रंथी वाले बाणों से ढक कर सुशर्मा, कृपाचार्य राजा प्राग्ज्योतिष और जयद्रथ को तीन २ बाणों से घायल किया और चित्रसेन, विकर्ण

कृतवर्मा और विन्द और अनुविन्द को तीन २ बाणों से घायल किया, आगे से जयद्रथ ने अर्जुन को शायकों से घायल करके और चित्रसेन के रथ पर बैठ कर भीमसेन को घायल किया फिर शल्य और कृपाचार्य ने मर्म भेदी बाणों से अर्जुन को घायल किया और चित्रसेन आदि कौरवों ने भी पाच २ बाण मार कर अर्जुन और भीमसेन दोनों को घायल किया ॥

इस के पीछे अर्जुन और भीमसेन ने त्रिगर्त देशियों की बड़ी सेना को पीड़ामान किया फिर सुशर्मा भी अपने नौ बाणों से अर्जुन को घायल करके गर्ज कर सेना को भयभीत करने लगा, अन्य कौरवों ने भी इन दोनों भाईयों पर अनेक प्रकार के बाण बरसाये ॥

इस के पीछे इन दोनों कुंतिनन्दनों ने युद्ध में शूरो के बहुत से धनुषों को काट कर सैकड़ों मनुष्यों के शिरों को गिराया इस समय इन के प्रहारों से सैकड़ों रथ टूटे सैकड़ों घोड़े मर गये और सैकड़ों हाथी अपने सवारों सहित धरती पर गिरे। टूटे हुए अस्त्रों, छात्रों, वस्त्रों, चमरों रथों इत्यादि के ढेर रण-भूमि में लग गए ॥

अर्जुन और भीमसेन से इस प्रकार अपनी सेना को नाश होते हुए देख कर दुर्योधन भीष्म जी के रथ के पास गया, जयद्रथ आदि राजे इस समय बराबर युद्ध में लगे रहे, अर्जुन और भीमसेन फिर कौरवी सेना पर टूटे, इस समय कौरवी

सेना के राजा लोगों ने इन दोनों पर असंख्यों बाण फेंके। उधर से अर्जुन बराबर अपने बाण बरसाता जाता था उस के इन बाणों से बहुत से लोग यमलोक को पधारे ॥

इस के पीछे शल्य ने गुप्त ग्रंथी वाले भल्लों से अर्जुन को छाती पर घायल किया इस पर अर्जुन ने उस के धनुष को तोड़ पांच बाणों से उस के हस्तवाण को काट कर तीक्ष्ण शायकों से उस के मर्म स्थलों को अत्यंत घायल किया, शल्य ने भी दूसरे धनुष का लेकर अर्जुन का व्यथित किया फिर मद्र देश के राजा शल्य ने तीन बाणों से अर्जुन को, पांच बाणों से वासुदेव जी को और नौ बाणों से भीमसेन को भुजा और छाती पर घायल किया, इतने में दुर्योधन के भेजे हुये द्रोणाचार्य जी और राजा मगध भी वहां आपहुंचे, फिर जयसेन ने तीव्र आठ बाणों से भीमसेन को घायल किया भीमसेन ने भी उस को पंद्रह बाणों से घायल करके एक भल्ल से उस के सारथी को रथ के बैठने के स्थान से गिरा दिया, तब वह राजा मगध युद्ध से दूर चला गया इस समय द्रोणाचार्य ने शिली मुख वाले साठ बाणों से भीमसेन को घायल कर दिया पलटे में भीमसेन ने गुरु को पैंसठ बाणों से घायल किया ॥

इस के पीछे अर्जुन ने लोहे के बहुत से बाणों से सुशर्मा को घायल करके उस की भुजा को पृथक कर दिया, तब भीष्म जी, राजा शल्य और धृष्टद्युम्न बड़े क्रोध में भरे हुये अर्जुन और भीमसेन के सन्मुख गये, धृष्टद्युम्न भीष्म के सामने

गया, शिखंडी भी पितामह जी के सन्मुख हुआ, युधिष्ठिर सब संगियों समेत शिखंडी को आगे करके भीष्म जी से युद्ध करने लगे, धृष्टद्युम्न ने सब सेना को आज्ञा दी कि निर्भय हो कर भीष्म जी के सन्मुख चलो और मन में किसी प्रकार का भी संदेह मत करो, तब वह पाण्डवी सेना अपने सेनापति की आज्ञा पाकर भीष्म जी के सन्मुख गई परंतु उस सेना को पितामह जी ने इस प्रकार रोका जिस प्रकार समुद्र को उछल कप आने से उस का किनारा रोक देता है ॥

निनावेंका अध्याय

—:-०-:—

दशवें दिन भीष्म जी ने पांडवी सेना के बड़े २ योधाओं को मारा और फिर पांडवों के सन्मुख होकर कहा, हे बड़े ज्ञानी सर्व शास्त्रज्ञ पुत्र युधिष्ठिर स्वर्ग के देने वाले मेरे इन वचनों को सुन, मैंने युद्ध में बहुत से जीव धारियों का नाश किया है अब मैं इस शरीर से अत्यंत प्रीति रहित हूं, इस कारण यदि तूं मेरा हित चाहता है तो अर्जुन पांचाल देशीयों और संजियों को आगे करके मेरे मारने का उपाय कर। युधिष्ठिर भीष्म जी के अभिप्राय को जान कर और संजियों को संग लेकर भीष्म जी के सन्मुख गया, धृष्टद्युम्न ने आज्ञा दी कि चल कर युद्ध करो,

और भीष्म जी को जीतो। हे सृंजियो अब भीष्म जी से किसी प्रकार का भय मत करो॥

सृंजी शिखंडी और अर्जुन को आगे करके भीष्म के गिराने के लिये चले, उधर से दुर्योधन की आज्ञा से नाना देशों के राजा, द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा और दुश्शासन अपनी सेना सहित अपने मित्रों और बिरादरी वालों को साथ लेकर भीष्म जी की रक्षा को चले और इन्हों ने वहां पहुंच कर उस सत्य व्रत पितामह की चारों ओर से रक्षा की॥

अब युद्ध होना आरम्भ हुआ एक पक्ष के योधा दूसरे पक्ष के योधाओं के सन्मुख हुये और दोनों सेनाओं का महाघोर युद्ध हुआ, शंखों, भेरियों, दुंदुभीओं के शब्दों, घोड़ों के हिनहिनाहटों और हाथीओं की चंगारों से आकाश गूंज उठा, धूल से रण भूमि में अंधेरा सा होगया, इस युद्ध में पदाती को पदाती ने नाश किया, रथी ने रथी को गिराया, घोड़ों के सवारों ने घोड़ों के सवारों को मारा और हाथियों के सवारों ने हाथियों के सवारों को पछाड़ा॥

एकसौका अध्याय

—:o:—

भीष्म के कारण अभिमन्यु ने बड़ी सेना लेकर दुर्योधन से युद्ध किया, दुर्योधन ने इस वीर को झुकी गांठ वाले नौ

बाणों से व्यथित करके तीन बाणों से फिर उस को घायल किया अभिमन्यु ने क्रोध में भर कर भयकारी शक्ती को दुर्योधन के रथ पर चलाया दुर्योधन ने उस शक्ति को अपने तरथ बाणों से दो खंड कर डाला, तब अभिमन्यु ने तीन बाणों से उस की भुजा और छाती को घायल किया, दुर्योधन अर्जुन को जीतने और अभिमन्यु भीष्म जी को मारने की इच्छा से युद्ध करने लगा तब अश्वत्थामा ने नाराच बाणों से सात्यकी को छाती पर घायल किया, और तीस बाण उस की भुजाओं पर चलाये, सात्यकी ने भी अश्वत्थामा को तीन बाणों से घायल किया इसी प्रकार दोनों सेनाओं के अन्य वीरों ने भी एक दूसरे के ऊपर अपने बाणों और अन्य अस्त्रों का प्रहार करके उन को पीड़ित किया ॥

अभिमन्यु का कई राजाओं से युद्ध हुआ और उस ने उन राजाओं से आप घायल होते हुए उन को भी घायल किया भीमसेन रथों की सेना से लड़ता रहा उसने बहुत से हाथियों को घायल किया, युधिष्ठर ने बड़ी सेना से रक्षित होकर राजा शल्य को पीड़ामान किया इसी प्रकार अन्य योधा भी अपने २ अस्त्रों से एक दूसरे से लड़े ॥

द्रोणाचार्य और धृष्टद्युम्न का महा भयानक रूप युद्ध हुआ भीष्मजी भी पाण्डवी सेना को दलन करते हुए निकले, राजा भगदत्त भी मतवाले हाथी की सवारी पर मैदान में आये, इस समय अर्जुन भगदत्त के सन्मुख हुआ परन्तु भगदत्त

न उसको बाणों से ढक दिया, अर्जुन ने भी लोहे के बाणों से उस आते हुए हाथी को बेधा, तब अर्जुन ने शिखंडी को भीष्म की ओर प्रेरित किया और कहा कि जाओ इन को मारो। राजा भगदत्त अर्जुन को छोड़ कर द्रुपद के रथ के समीप गया। तब अर्जुन शिखंडी को आगे करके भीष्म के सन्मुख गया और युद्ध आरम्भ हुआ ॥

इस समय धृतराष्ट्र के पुत्र सेना को साथ लेकर अर्जुन के सन्मुख दौड़े परन्तु अर्जुन ने उन सब को बाण मार २ कर इस प्रकार से छिन्न भिन्न कर दिया। जिस प्रकार वायू अपने वेग से बादलों को छिन्न भिन्न कर देता है, इस के पीछे शिखंडी ने भीष्म जी पर अनेक बाण बरसा कर उन को ढक दिया, भीष्म जी ने इस समय रण भूमि में चारों ओर अग्नि बरसा कर त्तालियों को भस्म कर डाला, उन्हों ने अर्जुन के पीछे चलने वाले सोमकों को मार कर सारी सेना को भी रोका, भीष्म जी के गुप्त ग्रंथी वाले और पुंख वाले बाणों से रथि, घोड़ों और सवारों को गिराते हुए भीष्म जी ने रथ के समूहों को मुंड ताल वनों के समान कर दिया, इस वीर ने युद्ध में रथ, हाथी और घोड़ों को सवारो से रहित कर दिया, उस के धनुष प्रत्यंचा के शब्द को सुन कर सब सेना कम्पायमान होगई, उस के बाण शरीरों में लग लग कर पार ही हुये जिन से सोमक इत्यादि यम पुरी को पहुंचे, केवल अर्जुन और पांचाली ही उन का सामना करते रहे ॥

एकसौएकका अध्याय

—:-०-:—

शिखंडी ने भीष्म जी को तीक्ष्ण धार वाले दश वाणों से छाती पर घायल किया, भीष्म जी तिरछी दृष्टि से उस की ओर देखते रहे और उन्हों ने उस के स्त्रीभाव को ध्यान में लाकर उस पर किसी प्रकार का प्रहार न किया तब अर्जुन ने शिखंडी को कहा कि शीघ्र ही चल कर भीष्म जी को मारो, हे वीर मैंने उन को मारने ही की इच्छा से तुम को आगे किया है, मैं तेरे सिवाय युधिष्ठर की सेना में और किसी को नहीं देखता जो भीष्म को मार सके, यह सुन कर शिखंडी ने भीष्म जी को नाना प्रकार के वाणों से ढक दिया, इन वाणों को तुच्छ जान कर भीष्म जीने अर्जुन को शायकों से रोका तब अर्जुन ने अपने वाणों से बहुत सी सेना को यमलोक में भेजा और बड़ी सेना से भीष्म को चारों ओर से घेर लिया, दुशासन ने इस समय पितामह जी को खूब रक्षित किया, इस पर दुशासन की बड़ी उपमा हुई और लोगों का विश्वास हुआ कि इस अकेले ने ही सकल पाण्डवों से युद्ध किया है और पाडव उस को नहीं हटा सके, इस युद्ध में दुशासन के हाथ से रथी विरथ हुए बड़े धनुषधारी सवार और महा बली हाथी तीक्ष्ण वाणों से घायल होकर पृथ्वी पर गिरे, हाथी इस के वाणों से पीड़ित होकर चारों दिशाओं को भागे, सिवाय अर्जुन के पाण्डवी सेना के किसी शूर वीर को भी न ही इस कौरव पुत्र

के सन्मुख जाने और न ही उस को रोकने का साहस हुआ ॥

इस के पीछे अर्जुन उस को जीत कर भीष्म जी के सन्मुख गया, दुशासन भीष्म जी का आश्रय लेकर फिर युद्ध करने लगा, तब शिखंडी ने विष से भरे हुये बाणों से पितामही को घायल किया परन्तु इन बाणों से उन जी को कुछ भी पीड़ा न हुई, इस समय उन का रूप महा भयंकर होरहा था ॥

तब दुर्योधन ने सेना को आज्ञा दी कि चारों ओर से भीष्म जी की रक्षा करो और अर्जुन का सामना करो, भीष्म जी युद्ध में तुम्हारी रक्षा करेंगे, इन भीष्म जी के सन्मुख खड़े होने को बड़े २ देवता भी सामर्थ नहीं तो पाण्डव विचारे किस प्रकार खड़े होसकते हैं, मैं आप युधिष्ठर से लड़ूंगा, यह वचन सुन कर कालिंग दासेरक गया, निपाद, सौवीर, वाहलीक, दरद और मालव राजा इत्यादि अर्जुन के सन्मुख दौड़े ॥

अर्जुन ने दिव्य अस्त्रों के प्रयोग से उन सब को भगा दिया, कई इन में से भस्म भी होगये, गांडीव धनुष से राजाओं की बड़ी २ ध्वजायें टूट गईं, अर्जुन ने सेना को भगा कर दुशासन पर बाणों की वर्षा की, फिर उस ने दुशासन के घोड़ों को मार कर उस के सारथी को गिराया और बीस बाणों से विविंशती को रथ से विरथ कर दिया, फिर उस ने कृपाचार्य कर्ण, और शल्य को बहुत से बाणों से वेद कर उन को विरथ कर दिया, दुशासन, विकर्ण और विविंशति मुख मोड़ गये इस समय सूर्य आकाश के मध्य में था और वहां रुधिर की

नहीं चल रही थीं, मरे हुये हाथी, घोड़ों और टूटे हुये रथों से जगा २ रण भूमि रुक गई थे वीरों के टूटे हुय अंग जिन में नाना प्रकार के सुंदर और जड़ाऊ भूषण थे हर ओर टूट पड़ रहे थे, कुत्ते शृगाल, गिद्ध और कौवे इत्यादि कच्चा मांस खाने वाले पशू पक्षी वहां पुकार रहे थे ॥

तब भीष्म जी ने दिव्य अस्त्रों को प्रकट किया और सब धनुषधारियों के देखते २ अर्जुन के सन्मुख गए इस समय अस्त्रों से अलंकृत शिखंडी उन के सन्मुख पहुंचा उस को देखते ही भीष्म जी ने उस अस्त्र को खैंच लिया, अर्जुन ने झट पितामह को मोहित करके कौरवी सेना को मारा ॥

एकसौदो का अध्याय

—:०:—

तब शल्य, कृपाचार्य, चित्रसेन, दुश्शासन और विकर्ण ने प्रकाशित रथों पर सवार होकर पांडवी सेना को बहुत कम्पायमान किया, भीष्म जीने भी बहुत सी सेना का नाश किया। अर्जुन के हाथ से कौरवी सेना के बहुत से हाथी मारे गए। इसी वीर ने अपने नाराच बाणों से कौरवी सेना के प्रधान लोगों का मर्दन किया। पांडवों को युद्ध भूमि में जूं जूं दुर्योधन आदि कौरवों के दीये हूए कष्ट याद आते, वह तूं तूं बड़े वेग से युद्ध करते और कौरव लोग भी स्वर्ग को उत्तम स्थान मान कर युद्ध में मरण को चाहते हूए पांडवों के सन्मुख होते ॥

तब पाण्डवी सेना के सेनापति ने कहा कि सब सोमक और संजी शीघ्र ही भीष्म जी के सन्मुख चलो। वह सब यह आज्ञा पाकर घायल हुए २ पितामह जी के सन्मुख हुए और इन से युद्ध हुआ। इस दशवें दिन अकेले भीष्म जी ने मत्स्य और पांचालीयों के दश हज़ार हाथियों के यूथ मार कर पांच हज़ार रथियों को भूमि पर गिराया, सात महारथी भी भीष्म जी के हाथ से इसी दिन मारे गए। इन के अतिरिक्त चौदह हज़ार मनुष्य इसी दिन पितामह जी के हाथों नाश को प्राप्त हुए। विराट का भाई शतानीक और बहुत से अन्य पाण्डवों के सहायक राजा इसी दशवें दिन भीष्म जी के हाथों मर कर परलोक को सिधारे॥

भीष्म जी के इस पराक्रम को देख कर श्रीकृष्ण जी अर्जुन से बोले, हे अर्जुन! अब समय है अपना हाथ दिखाओ और दोनों सेनाओं के मध्य में नियत हुए २ भीष्मजी को मारो, तेरी विजय होगी। अर्जुन ने झट बाण वर्षा की और क्षण भर में भीष्मजी को उन से ढक दिया। परन्तु उस वीर पितामह ने अपने बाणों से अर्जुन के सब बाणों को छिन्न भिन्न कर दिया और राजा द्रुपद धृष्टकेतु, भीमसेन, धृष्टद्युम्न, नकुल, सहदेव, चेकितान इत्यादि वीरों को शायकों से पीड़ामान किया॥

तब शिखंडी उत्तम धनुष लेकर अर्जुन से रक्षा किया हुआ भीष्म जी के सन्मुख चले, सात्यकी, चेकितान, धृष्टद्युम्न आदि

भी शिखंडी के साथ हो लिये इन सब ने मिल कर पितामह को बाणों से घायल किया परंतु भीष्म जी ने उन सब बाणों को काट कर पाण्डवी सेना को भगाया; पितामह जी ने राजाओं पर बाण बरसाये उस समय शिखंडी के स्त्रीपन को याद रख कर उस के ऊपर एक बाण तक नहीं फेंका तब भीष्म जी ने द्रुपद की सेना के साथ रथियों को मारा इस के पीछे मत्स्य पांचाल और चंदेरी देश के क्षत्री उस अकेले पितामह जी के पीछे दौड़ते दीख पड़े इन्हों ने भीष्म जी को बाणों से ढक दिया और अर्जुन ने शिखंडी को आगे करके भीष्म को मोहित कर दिया ॥

एकसौतीन का अध्याय

—:०:—

भीष्म जी ने पाण्डवी राजाओं के मध्य में वर्तमान होकर सात्यकी, भीमसेन, अर्जुन, द्रुपद, विराट और धृष्टद्युम्न को अपने तीक्ष्ण बाणों से घायल किया, उन छओं महावीरों ने उन के बाणों को दूर करके बड़े वेग से दश२ बाणों से भीष्म जी को पीड़ामान किया और शिखंडी ने पितामह जी पर बहुत से तीक्ष्ण बाण फेंके, यह बाण शीघ्र ही भीष्म जी के शरीर में प्रवेश कर गये फिर अर्जुन ने शिखंडी को आगे कर के भीष्म जी के सन्मुख दौड़ कर उन के धनुष को काट डाला ॥

तब द्रोणाचार्य, कृतवर्मा, जयद्रथ, भूरीश्रवा, शल्य और

भगदत्त, भीष्म जी को साथ मिला कर अर्जुन के सन्मुख गये इन्हों ने वहां दिव्य अस्त्र दिखा कर पाण्डवों को शस्त्रों से ढक दिया, उधर से सात्यकी, भीमसेन, धृष्टद्युम्न, विराट द्रुपद, नकुल सहदेव, घटोत्कच और अभिमन्यु इन के सन्मुख हुये, इस समय उस रण भूमि में इन का महा घोर युद्ध हुआ ॥

तब शिखंडी ने भीष्म जी को दश बाणों से वेधा, दश ही बाणों से उन के सारथी को घायल किया और एक बाण से उन की ध्वजा को छेद डाला, भीष्म जी दूसरा धनुष ले कर युद्ध करने लगे परन्तु अर्जुन ने उन के उस धनुष को भी तीन बाणों से काटा, भीष्म जी जो धनुष पकड़ते अर्जुन झट उस को काट डालता, अन्त में भीष्म जी ने घोर शक्ती को हाथ में लिया और बड़े क्रोध से उस को अर्जुन के रथ पर फैंका परन्तु अर्जुन ने उस आती हुई शक्ती को अपने पांच बाणों से टुकड़े २ कर डाला ॥

फिर शिखंडी ने भीष्मजी को बाणों से छाती पर घायल किया तब अर्जुन ने क्षुद्रक नाम के पच्चीस बाणों से पितामह जी को घायल किया और उन के धनुष को काट डाला, फिर भीष्म जी ने और धनुष त्यार किया परंतु अर्जुन ने उस को भी काट डाला और उस के तीन खंड कर डाले, इसी प्रकार भीष्म जी के अनेक बाण थोड़े काल में अर्जुन ने तोड़ डाले, भीष्म जी पीछे हट गये, अर्जुन ने फिर उन को क्षुद्रक नाम पच्चीस बाणों से घायल कर दिया, भीष्म जी ने दुशासन से कहा कि अर्जुन ने मुझ पर बहुत से बाण मारे हैं यह अर्जुन

संसार में अजेय है, य इ दोनों आपस में बातें कर ही रहे थे कि अर्जुन ने शिखंडी को आगे करके फिर अपने तीक्ष्ण बाणों से उन को घायल किया ॥

भीष्मजी ने दुशासन से कहा कि यह बाण अर्जुन के हैं क्योंकि सिवाय अर्जुन के संसार भर के किसी मनुष्य के बाण मुझ को मूर्छित नहीं कर सकते। इन बाणों से मुझे अति पीड़ा हो रही है। यह कह कर भीष्म जी ने अपनी शक्ती को अर्जुन के ऊपर फैंका परन्तु अर्जुन ने अपने विशाख नाम तीन बाणों से उस शक्ती को काट डाला। तब भीष्म जी ने और तलवार और ढाल हाथ में ली, अर्जुन ने उस ढाल को भी शायक नाम बाणों से सौ खंड कर डाला। फिर दोनों पक्षों का महा घोर युद्ध हुआ। सारी कौरवी सेना अर्जुन के बाणों से भयभीत होकर भाग निकली, केवल सौवीर, कितव, मालव देशी, अभीषह, शूरसेन इत्यादि योधा घावों से दुःखी होने पर भी भीष्म जी के पास रहे और उन्हों ने उस पितामह को अकेला न छोड़ा ॥

तब बहुत से क्षत्रियों ने अकेले भीष्म जी को चारों ओर से घेर लिया और सब कौरवों को हटा कर उन को बाणों से ढक दिया, इस समय भीष्म जी के रथ के समीप गिराओ मारो, पकड़ो, लड़ो और काटो ही के शब्द सुनाई देते थे। भीष्म जी का शरीर घावों से भरा हुआ था, सूर्य के अस्त होने में थोड़ा ही काल शेष था, इस दशा में अर्जुन ने उन पर और

बाण मारा वह धृतराष्ट्र के पुत्रों के देखते २ रथ पर से औंधे शिर होकर गिर पड़, इन के गिरते ही वहां हाहाकार मच गया और कौरवों के हृदय फट गये इस दशा में भी वह पृथ्वी पर नहीं गिरे वरन बाणों की शय्या ही के ऊपर रहे इस समय सूर्य दाक्षिणायन में था इस कारण उन्हों ने प्राण नहीं त्यागे, अपने प्राणों को उन्हों ने बराबर रखा और शय्या पर शयन कर गये, तब पांडवों और संजियों ने बड़े प्रसन्न चित होकर सिंह नाद किये ॥

इन के गरने पर कौरवों को बड़ा भारी मोह उत्पन्न हुआ तब कृपाचार्य और दुर्योधन आदि लम्बे श्वास ले लेकर रुदन करने लगे और उन्हों ने इस समय युद्ध को भी त्याग दिया उधर पाडवों ने बड़े २ शंखों को बजा कर प्रसन्नता को प्रकट किया, सोमक और पांचाल भी बहुत प्रसन्न हुये, इस समय दोनों ओर के शूर वीरों ने शस्त्रों का त्याग कर दिया और कोई भागा, कोई पुकारा, कोई अचेत हुआ किसी ने भीष्म जी की प्रशंसा की और किसी ने क्षत्री कुल को न सराहा ॥

एकसौचारका अध्याय

—:o:—

भीष्म के मरने पर कौरव तो व्याकुल हुए और पांडव बड़े प्रसन्न हुए, सब से अधिक प्रसन्नता भीमसेन को हुई जो

आनन्द में खूब उछला और कुदा, कर्ण और दुर्योधन बराबर हाय! हाय! करते थे, दुशासन इस समय झट द्रोणाचार्य की सेना में गया, सेना के लोग उसके गिर्द इकत्र हो गए, तब उस ने भीष्म जी के मरने का सारा वृत्तांत सुनाया द्रोणाचार्य दुशासन के बचनों को सुन कर अचेत हो गए, फिर सचेत होने पर सब कौरवी सेना को निषेध की आज्ञा दी और सब राजा लोगों ने अपने २ कवच उतार दिये ॥

इस के पीछे दोनों पक्षों के योधा बाणों की शय्या पर शयन करते हुए पितामह जी के पास गए और सब ने कर बांध कर उन को दण्डवत की, भीष्म जी ने सब की शिष्टाचारी की और उन से कहा हे महारथी लोगो ! तुम्हारा आगमन श्रेष्ठ हो, हे बीरो ! मैं तुम सब को देख कर बड़ा प्रसन्न होता हुं, फिर शिर को लटकाय हुए बोले हे बीरो ! मेरा शिर लटकता है और उस के लिये तकिया दो, राजाओं ने बड़े उत्तम और कोमल तकिये लाकर दिए ॥

भीष्म जी ने उन तकियों को अंगीकार न करके हंस कर कहा हे राजा लोगो ! यह तकिये बीरों की शय्या पर शोभित नहीं देते । तब पितामह जी ने अर्जुन से कहा कि हे महाबाहो मेरा शिर लटकता है तूं मुझ को उचित तकिये दे ॥

भीष्म जी के इन वचनों को सुन कर अर्जुन बड़े भारी धनुष को हाथ में लिया और अश्रुपात होकर दंडवत करता हूआ बोला, हे सब शस्त्र धारियों के शिरोमणि महा दुर्जय

पितामह ! मैं आपका दास हूं जो आज्ञा आप मुझ को देंगे वही करूंगा । पितामह जी ने कहा कि मेरा शिर लटकता है, उस को उचित तकिया दो ॥

तब अर्जुन ने अपने गांडीव धनुष को हाथ में लेकर गुप्त ग्रंथी वाले बाणों को अभिमंत्रित कर भीष्म जी की प्रतिष्ठा करके तीक्ष्ण और वेग युक्त तीन बाणों से उन के शिर को सीधा किया, अर्जुन के इस कर्म को देख कर भीष्म जी उस पर अत्यंत प्रसन्न हुये और उस की बड़ी प्रशंसा की और कहा हे पांडव ! तुम ने शयन के योग्य मुझ को तकिया दीया है यदि कदाचित् विपरीत कर्म करता तो मैं अवश्य तुम को शाप देता, क्षत्रियों को युद्ध भूमि में इसी रीति से शयन करना योग्य है ॥

इस के पीछे भीष्म जी ने पास बैठे हुए राज कुमारों से कहा हे वीरो, पाण्डवों के लगाय हुए मेरे तकिये को देखो, मैं इस शय्या पर तब तक शयन करूंगा जब तक कि सूर्य दक्षिण मार्ग से उत्तर मार्ग में न जायेगा, हे राजा लोगो ! इस मेरे निवास स्थान पर तुम खाई को खुदवाओ क्योंकि मै इस रीति से हज़ारों बाणों से छिदे हुए शारीर से सूर्य की उपासना करूंगा तुम सब लोग शत्रुता को त्याग कर अब युद्ध मत करो ॥

तब वहां बड़े २ वैद्य आये उन को देख कर भीष्म जी धृतराष्ट्र के पुत्रों से बोले, इन वैद्यों को दक्षिणा दे कर

सत्कार पूर्वक विदा करदो मुझे इन की कोई अवश्यक्ता नहीं क्योंकि मैं क्षत्रि धर्म में श्रेष्ठ होकर परम गति को प्राप्त हुआ हूं, आपने मुझ को इन्हीं बाणों सहित जला देना। दुर्योधन ने उन वैद्यों को परितोषिक दे कर विदा कर दिया ॥

इस के पीछे पितामह जी को वहीं छोड़ कर कौरव और पाण्डव अपने २ डेरों में गये, वहां पहुंच कर श्रीकृष्णजी ने युधिष्ठर से कहा, हे धर्म पुत्र! तुम प्रारब्ध से विजय पाते हो, यह अवध्य दुर्जय भीष्म भी प्रारब्ध ही से गिराया गया है ॥

युधिष्ठर ने कहा हे माधव जी! आप के प्रसन्न होने से विजय है और आप के अप्रसन्न होने से पराजय, हे मधूसूदन! जब आप हमारे रक्षक हैं हमारी जय क्यों न हो, इस हमारी विजय का कारण एक आप ही हो ॥

श्रीकृष्ण जी ने मन्द मुसकान से कहा, हे राजाओं में श्रेष्ठ युधिष्ठर ऐसा कहना तुम्ह ही को योग्य है ॥

एकसौपांच का अध्याय

—:०:—

प्रातःकाल होते ही कौरव और पाण्डव फिर भीष्म जी के पास पहुंचे इस समय अन्य स्त्री पुरुष और कन्यायें हाथों में सुंदर २ मालायें लेकर उन दर्शन को गईं यह मालायें उन को पहरादी गईं, भीष्म जी प्रसन्न चित्त

होकर बोले, बाणों से शरीर विधा हुआ होने के कारण मुख सूख रहा है जल लाओ, यह सुनते हीं वहां हर ओर से घटों में भरा हुआ जल एकत्र होगया, परन्तु पितामह जी ने कहा मुझे ऐसे जल की आवश्यक्ता नहीं अर्जुन को बुलाओ वह मुझ को जल देगा ॥

झट अर्जुन वहां उपस्थित हुआ और कर बांध कर बोला पिता जी ! क्या आज्ञा है। भीष्मजी ने कहा हे पुत्र ! तेरे बाणों से भरा हुआ मेरा शरीर जल रहा है। मर्म स्थलों में बड़ी पीड़ा है मुख सूखा जाता है, हे अर्जुन! मुझ दुःख से पीड़ावान को अपनी बुद्धी के अनुसार जल दे, अर्जुन ने उसी समय अपने गांडीव धनुष को प्रत्यंचा युक्त कर के बल से खैंचा और रथ सहित पितामह जी की परिक्रमा करके धनुष पर प्रकाशमान अभिमंत्रित बाणों को चढ़ा कर मेघ अस्त्र संयुक्त करके सर्व के देखते २ भीष्मजी के दक्षिण ओर में पृथ्वी को वेधा, उस के वेधते ही पृथ्वी में से निर्मल पवित्र जल की धारा ऊपर की ओर फुव्वारे के समान निकली वह अमृतवत जल देकर अर्जुन ने भीष्मजी को तृप्त किया, अर्जुन के इस अपूर्व काम को देख कर वहां के सब लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ ॥

तब भीष्मजी ने अर्जुन की बड़ी प्रशंसा की और कहा हे पुत्र इस समय इस संसार में तेरे समान कोई धनुष धारी नहीं, तूं सब धनुषधारियों में श्रेष्ट है, शोक कि दुर्योधन ने विदुर, श्रीकृष्ण

आदि का कहा न मान कर इस युद्ध का कारण हुआ दुर्योधन ने यह बहुत निकृष्ट कर्म किया है ॥

भीष्म जी के इन वचनों को सुन दुर्योधन उदास होगया इस को उदास देख कर भीष्म जी ने कहा हे राजा! अब भी समझ जाओ अहंकार को त्याग दो हे राजा! पांडवों को इस लोक में देवता और असुर भी नहीं जीत सकते तुम कैसे जीत सकोगे, अग्ने, वरुण, सौम्य, वायव्य, वैष्णव आदि सब अस्त्र या अर्जुन जानता है या श्री कृष्ण जी, इन के भिन्न इन अस्त्रों को और कोई भी नहीं जानता, तुम इन से संधि करलो इसी में तुम्हारी और सारे संसार की भलाई है, अब मेरे मरणान्त में भी यदि तुम्हारी संधि होजावे तो कुशल है, शेष बचे हुये क्षत्री बच रहेंगे, हे राजा! मेरा कहना मान कर अब भी पाण्डवों को आधा राज्य दे दो, धर्मराज युधिष्ठर अपने भाईयों और बचे हुये सहायकों सहित इन्द्रप्रस्थ को जाय और तुम मित्रों और सुहृदों सहित अपने नग्र को पधारो, यदि तुम मेरी बात को अब भी न मानोगे तो दुख पाकर संसार में अपकीर्ति के भागी बनोगे, यह कह कर भीष्म जी मौन होगये ॥

एकसौपांच का अध्याय

—:o:—

भीष्मजी के मौन होने पर वह सब राजा लोग फिर

अपने २ डेरों को गए कर्ण उन की यह दशा सुन कर कुछ व्याकुल सा होकर शीघ्रता से उन के पास गया, और उन को बाण शय्या पर देख कर अश्रुपात करता हुआ बोला, हे महाबाहो भीष्म ! मैं राधा का पुत्र कर्ण हूं। भीष्मजी ने नेत्र खोल कर और कर्ण को देख कर स्थान रक्षकों को उठाकर दूर भेज दिया और जैसा कि पिता पुत्र पर स्नेह करता है उसी प्रकार से कर्ण को एक हाथ से छाती के द्वारा मिल कर बड़े धीरे २ यह वचन कहा। हे मेरे द्वेषी ! आओ २ तू मेरे साथ ईर्षा करता है यदि तू मुझ को इस समय न मिलता तो तेरा भला न होता, तू राधा का पुत्र नहीं है, किंतु कुन्ती ही का पुत्र है, तेरा पिता सूर्य है इस बात में कोई संदेह नहीं है, और यह बात भी मैं सत्य कर कहता हूं कि तेरे साथ मेरी किसी प्रकार की भी द्वेषता नहीं है, मैंने तेरा तेज नष्ट होने के लिये कठोर वचन कहे थे, मैं तेरे पराक्रम को जानता हूं वह पृथ्वी भर के शत्रुओं से असह्य है। वेद ब्राह्मण की रक्षा करने में शूरता में और दान में तेरी बड़ी दृढ़ता को मैं जानता हूं तेरे समान इन गुणों को कोई नहीं रखता ॥

हे कर्ण ! बाण और अन्य अस्त्रों के चलाने में, हस्तलाघवता में और अस्त्र बल में तू श्री कृष्ण और अर्जुन के समान है मुझ को तुझ पर जो क्रोध था वह अब दूर हुआ, होनहार प्रबल है उस को कोई भी उपाओं से उल्लंघन नहीं कर सकते

हे शत्रुहन्ता ! यह वीर पाण्डव तेरे सगे भाई हैं यदि तू मेरा हित चाहता है तो उन से मिलाप करले ॥

कर्ण ने कहा हे महाबाहो भीष्म जी ! मैं इस बात को पूर्ण रीति से जानता हुं मैं सूत का नहीं वरन कुन्ति का पुत्र हुं परन्तु मुझे जब कुन्ति ने त्याग कर दिया था तो सूत ने मेरा पालन पोषण किया था. मैं दुर्योधन के ऐश्वर्य को भोग कर उस को निष्फल करना उचित नहीं समझता, जैसे श्री कृष्ण जी ने अपना सम्पूर्ण बल, धन इत्यादि पाडवों के अर्पण कर रखा है इसी प्रकार मेरा सर्वस्व दुर्योधन के लिये है, मैं रोग आदि से मरना अच्छा नहीं जानता आगे जो होतव्यता है उस को कोई भी मिटा नहीं सकता, हे महा पिता जी ! संसार के मनुष्यों के नाश कारी चिन्ह आप लोगों ने देखे हैं और सभा में वर्णन किये हैं, पांडव और वासुदेव जी सब प्रकार से मेरे जाते हुये हैं वह अन्य मनुष्य से अजेय हैं परंतु मैं उत्साह पुर्वक कहता हुं कि मैं उन पांडवों को विजय करूंगा मैं अर्जुन से लडूंगा ॥

हे तात ! युद्ध के निमित्त तुम्हीं निश्चय करके मुझ को आज्ञा दो ताकि आप की ही आज्ञा से मैं युद्ध करूं, हे तात ! मैं ने जो वारता आप से की है यदि इस में कोई कठोर शब्द हों तो उस के लिये आप मुझ को क्षमा करें ॥

भीष्म जी ने कहा हे कर्ण, यदि यह शत्रुता त्याग करने के योग्य नहीं तो मैं तुझ को आज्ञा देता हुं कि स्वर्ग की इच्छा से तू युद्ध कर, अहंकार रहित बलिष्ठ अपनी सामर्थ के आश्रय

में रहने वाले को धर्म युद्ध के सिवाये क्षत्री का कल्याण करने वाला दूसरा कोई भी धर्म नहीं है ॥

कर्ण दंडवत पूर्वक अतंयत स्तुति कर रोता हुआ अपने रथ पर सवार होकर वहां से चल कर दुर्योधन के पास आया ॥

॥ भीष्मपर्व समाप्तः ॥

महाभारत

द्रोणपर्व

प्रथम अध्याय

—:०:—

भीष्म का मरना और दुर्योधन का कर्ण को बुलाना और उसका शस्त्रपहिन कर युद्ध में जाना ॥

जिस समय भीष्म जी गिरे तो उसका सारा शररि बाणों से आच्छादित था, उसके गिरने पर पांडव और कौरव दोनों शंकातुर हो गये सारे वंश में वही वृद्ध था बड़ा शूरवीर परा-क्रमी सत्यवादी और सत्यप्रतिज्ञ था, उसकी मृत्यू सारे देश के लिये दुःखदायी थी, कौरवों

की सेना का वही स्तम्भ था, पाण्डवों का भी हितैषी था यद्यपि वह इस समय दुर्योधन का पक्ष लेरहा था तथापि वह पाण्डवों पर शस्त्रप्रहार करना बड़ा दोष समझता था, इस लिये यद्यपि वह शत्रुपक्ष पर ही लड़ रहा था तथापि उसकी मृत्यु पर पांडवों को बड़ा शोक हुआ ॥

दुर्योधन का हाल तो कुच्छ न पूछो, उस्की सारी सेना में खिलबिली मच गई उस समय दुर्योधन को कर्ण याद आया, और वह हाय कर्ण! हाय कर्ण! कहकर पुकारने लगा, परन्तु कर्ण कहां था, उस्की प्रतिज्ञा थी कि जबतक भीष्म जीता है मैं युद्ध नहीं करुंगा, अब भीष्म मर गिया कर्ण को आना चाहिये, दूतों ने तुरन्त कर्ण को सूचना दी और कहा कि महाराज भीष्म मारे गये अब राजा आपको याद करते हैं ॥

कर्ण ने ज्यूंही भीष्म की मृत्यु का समाचार सुना तो वह दुःख से बहुत व्याकुल हो गिया और समझने लगा अब तो जान पर आई । जब इतने बीर पराक्रमी भीष्म जी मारे गये तो कर्ण किस गनती में है । तथापि युद्ध तो करना ही होगा । युद्ध से भागना क्षत्रि धर्म के विरुद्ध है । चलो अब रण में माया त्याग कर क्षात्र यश को प्राप्त करें ॥

ऐसा विचार करके कर्ण दुर्योधन के पास आया। उस को देख कर दुर्योधन रोने लगा और कहने लगा कि हे कर्ण ! कौरवों की नाव को डूबने से बचाने वाले अब एक तुम्ही हो । भीष्म की यह बचन कि तुम अर्धरथ हो सर्वथा [illegible]

निर्मूल था, तुम तो अति रथियों से भी श्रेष्ठ महा रथ हो ॥

कर्ण बोला कि हे राजन् ! शोच मत करो । भीष्म जी मारे गये तो यह परारब्ध की बात है । अब मैं अपनी शक्ति से पाण्डवों को दलन करूंगा । उन के दलों को तोडूंगा और उन के योधाओं को यम पुरी को भेजूंगा । युधिष्ठिर भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव बड़े पराक्रमी हैं, कोई पुरुष भी कौरवी सेना में से उन के साथ युद्ध नहीं करसक्ता । केवल मैं ही हूं जोकि इन महारथियों के साथ संग्राम कर सक्ता हूं !

हे सूत ! मेरे लिये रथ तैयार करो । मेरा कवच और शिरस्त्राण लाओ । मेरे धनुष बाण निकालो, मेरे अस्त्र शस्त्र दो, मैं शीघ्र ही पाण्डवों के दल को मथन करने जाऊंगा, मेरे तूनीर कहां हैं ? मेरे लिये पुष्प माला लाओ, मैं रण में जाकर शत्रुओं का हनन करूंगा ॥

इस प्रकार शीघ्रता से अस्त्र शस्त्र पहिन और सुन्दर घोड़ों को रथों में जोड़ बड़ी लम्बी चौड़ी पताका सजा कर कर्ण जी युद्ध करने चले, उनका तेज और रूप अग्नि के समान प्रकाशमान था और कौरवों से पूजित होकर बड़े ठाठ से रण भूमि में आये ॥

दूसरा अध्याय

—:०—

कर्ण का भीष्मजी को जाकर दण्डवत करना और उससे युद्ध करने की आज्ञा पाना ॥

तब कर्ण भीष्मजी के पास गया और जाते ही उसने रथ से उतर कर वाण शय्या पर लेटे हुए राजर्षि भीष्म को दण्डवत् की और हाथ जोड़ कर कहने लगा कि हे भरत श्रेष्ठ आप का कल्याण हो मैं कर्ण हूं, आप मुझ को अपने कल्याण कारी वचन सुनाईये ॥

इस संसार यात्रा को पूरा करके आप तो अब पितृलोक को जायेंगे, परन्तु पाण्डव इस कौरव कुल का सर्व नाश कर डालेंगे। जब आप सरीखे धनुर्वेद के जानने वाले और शस्त्र धारियों में श्रेष्ठ मारे गये, तो प्राकृत मनुष्यों को क्या कहना है, । हे वीर ! जैसे प्रचण्ड अग्नि वायु से प्रेरित हो कर सारे वन वृक्षों को भस्म कर देती है, उसी प्रकार अर्जुन रूपी अग्नि को कृष्णरूपी वायु कौरव रूपी वनको जलाने के निमित्त उत्पन्न हुई है, आप को छोड़ कर और कौन राजा वा महारथ अर्जुन से युद्ध कर सक्ता है ? क्योंकि अर्जुन दिव्य कर्मी सर्वत्र प्रसिद्ध है, वह अर्जुन आप से भी विजय नहीं हुआ, अब आप की आज्ञा से उस महा प्रतापी अर्जुन से लड़ने जाता हूं, आप की आशीर्वाद से मैं उस महारथ को जीतने को समर्थ हूंगा ॥

कर्ण का यह विलाप सुन कर वृद्ध पितामह भीष्म जी बाण शैय्या से बोले कि हे कर्ण ! जैसे प्रकाश करने वालों में सूर्य, सत्यता में सन्त लोग, बीजों में पृथ्वी जीवों का आश्रय स्थान सूर्य है, वैसे ही तुम भी मित्रों में प्रतिष्ठा रखते हो, बान्धव लोक तेरे पास जीविका पाकर ऐसे ठहरते हैं जैसे देवता लोग इन्द्र के पास, शत्रुओं को दण्ड देने वाला और मित्रों का आनन्द बढ़ाने वाला होकर कौरवों की गति बनो, जैसेकि विष्णु भगवान देवताओं को पालते हैं ॥

हे दुर्योधन की विजय चाहने वाले कर्ण ! तुम ने काम्बोज देशियों को जीता, गिरि व्रज में नग्न जित को जीता और अम्बवष्ठ देशी, विदेह देशी, गन्धार देशी, उत्कल, मेकल, पौण्ड्र कालिंग, आन्ध्र, निषाद त्रिगर्त देशी राजाओं को भी दुर्योधन के वशवर्ति किया, इन के अतिरिक्त अनेक अन्य वीरों और योधाओं को भी जीता, तुम भी दुर्योधन की भान्ति कौरवों की गति हो, मैं आनन्द पूर्वक आज्ञा देता हूं कि तुम जाओ और युद्ध करो और कौरवों के शिक्षक बन कर दुर्योधन की विजय कराओ ॥

मैं तुम को दुर्योधन की तरह पौत्र समझता हूं, जो कुछ मेरा दुर्योधन है, तुम भी मेरे वही हो, देखो मित्रता ज्ञाति सम्बन्ध से अधिक होती है, इस लिये मैं जानता हूं कि तुम सेना पर दुर्योधन के समान प्रीति करोगे ॥

इस के पीछे कर्ण ने दण्डवत की और भीष्म से विदा हो कर धनुष धारीयों के सन्मुख आया। दुर्योधन उस को

देख कर बड़ा प्रसन्न हुआ, कौरव सेना ने हर्ष से बड़ा सहिंनाद किया, भुजाओं को उछाला और धनुषों को टंकारा जिस से कर्ण की बड़ी प्रतिष्ठा हुई ॥

तीसरा अध्याय

—:०:—

दुर्योधन और कर्ण की बातचीत, द्रोण का सेना पति नियत होना ॥

तब दुर्योधन ने कर्ण को कहा कि आप जैसा ठीक समझो वैसा करो। कर्ण ने कहा कि हे राजन्। आप धर्मात्मा और न्यायकारी हो आप मुझ से अपना प्रयोजन कहिये। दुर्योधन ने कहा कि भीष्म जी के गिरने पर हम को बड़ा कष्ट पहुंचा है। वह दशदिन तो शत्रुओं को मारते रहे हैं और हमारी रक्षा करते रहे हैं अब कहिये किस को सेना पति नियत करें? जो आयु, बल और विद्या में सब से बढ़ कर हो वही निश्चित सेनापति होने के योग्य है। कर्ण ने कहा कि भीष्म बड़े तेजस्वी और प्रतापी थे, उन के सदृश राजाओं में और कोई पुरुष दिखाई नहीं देता। मेरे मत में तो अब उन के पीछे आचार्य जी ही इस पदवी के योग्य हैं। इस लिये उन्हीं को सेनापति बनाया जाय ॥

इतर राजाओं ने भी कर्ण की बात का सत्कार किया,

और सब सम्मति से द्रोणाचार्य कौरवी सेना के सेनापति नियत किये गये ॥

दुर्योधन ने रीत्यानुसार उनका अभिषेक किया और हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि हे गुरुजी! महारज आप उत्तमवर्ण शास्त्र के जानने वाले, बुद्धिमान, प्राक्रमी, अर्थज्ञ, तपस्वी उपकारज्ञ, और सर्व गुण विशिष्ट हैं आप शत्रुओं से हमारी रक्षा के लिये सेना की वागडोर अपने हाथ में लिजीये, आपके अनयत्र कोई योधा इस महान कार्य को कर नहीं सक्ता, सेना का व्यूह बना कर शत्रुओं को ऐसा मारें जैसे कि इन्द्र दानवों को मारते हैं ॥

दुर्योधन के ऐसा कहते ही सब राजाओं ने सिंह नाद किया और द्रोणाचार्य को कहा कि महाराज विजय करो। द्रोणाचार्य बोला कि मैंने अङ्गों सहित वेद पढ़े हैं देश मबन्धनी विद्या को और धनुर्विद्या को जानता हूं, जो २ गुण आपने वर्णन किये हैं, उन की प्राप्ती की भी मुझे अभिलाषा है, मैं पाण्डवों से युद्ध करूंगा. परन्तु धृष्टद्युम्न को न मार सकूंगा क्योंकि वही मेरे मारने के निमित्त उत्पन्न हुआ है, मैं चन्द्र वंशियों को मारूंगा और पाण्डव लोग प्रकाश हो कर मुझ से युद्ध करेंगे ॥

चौथा अध्याय

—:०:—

द्रोणाचार्य का सेना व्यूह बनाना और पाण्डवों का लड़ने आने ॥

तब ब्राह्मणों ने स्वस्ति वाचन किया। द्रोणाचार्य सेना का व्यूह बना कर पाण्डवों से लड़ने आये, कौरवी सेना इस प्रकार खड़ी हुई, जयद्रथ, कलिंग नरेश और धृतराष्ट्र का पुत्र विकर्ण दाहिनी ओर ठहरे और पर पक्ष में सेनाओं का रक्षक अपने गन्धारी योधाओं और अश्वारोहों समेत शकुनि नियत हुआ। वाम पक्ष में कृपाचार्य, कृत वर्म्मा, चित्रसेन, विविंशति और दुशासनादि सावधान लोग खड़े हुए उन के पर पक्ष में काम्बोज देशी यवनों समेत सुदक्षिण ठहरा, जो शकुनि के पीछे शीघ्र गामी घोड़ों पर चलता था, मद्र, त्रिगर्त, अम्बष्ठ, पश्चमीय, उत्तरी राजा लोग, मालवीय, शिवय, सूरसेन और मल्लयदों समेत सौरि. धृतराष्ट्र के पुत्रों को साथ ले दुर्योधन को आगे कर कर्ण के पीछे चले, इस प्रकार द्रोणाचार्य ने व्यूह बना कर सेना को बहुत पुष्ट किया ॥

तब शीघ्रता से आगे बढ़ा, उस की पताका पर हस्ति का चिन्ह था, उस के प्रकाश को देख कर लोग भीष्म को भूल गये और कहने लगे कि अब पाण्डव युद्ध को छोड़ देंगे यह कर्ण इन्द्र को भी जीत सकता है, भीष्म तो पाण्डवों का

पालक पोषक था, इस लिये दया करके उन को छोड़ दिया परन्तु कर्ण उन को अवश्य ही मार देगा। द्रोण का रचा हुआ यह शकट व्यूह कैसा सुन्दर है ॥

पाण्डवों के क्रौंचव्यूह में अर्जुन सब से आगे था, पहिले कर्ण और अर्जुन ने जाकर परस्पर बाट देखी फिर द्रोणाचार्य ने रथ चलाया, जिसके शब्द से शब्दायमान दोनों सेना परस्पर युद्ध करने लगीं, द्रोणाचार्य ने बहुत बाण बर्षाये, फिर धृष्टद्युम्न ने उसके उत्तर में बाण वृष्टि की इसी प्रकार देर तक युद्ध हुआ, और द्रोणाचार्य ने बहुत सेना को मारा फिर निशंक होकर सेना के बीच में घूमने लगा ॥

युधिष्ठर ने धृष्टद्युम्न को कहा कि आचार्य जी को हटाना चाहिये, तब सब पाण्डवीय योधाओं ने द्रोणाचर्य को घेर लिया, यह देख कर द्रोण को बहुत क्रोध आया और वह लाल नेत्र करके शत्रु दल पर कूद पड़ा उस के आगे योधा लोग ऐसे भागे जैसाकि वायु के आगे चावलों के तोह उड़ते हैं द्रोणाचार्य वृद्ध होकर भी तरुणों से बढ़ कर रथ घोड़े मनुष्य और हाथियों के सन्मुख यत्र तत्र दौड़ते थे और मदोनमत्त की भांति इधर उधर बड़े वेगसे घूमते थे ॥

पांचवां अध्याय

—:०:—

द्रोणाचार्य की मृत्यु ॥

द्रोणाचार्य ने बहुत भयकर कर्म किये और शत्रु की सेना को बहुत मारा, राजा द्रुपद और उसके पुत्रों को बहुत घायल किया फिर पांडवों समेत और बहुत सी सेना उससे लड़ने आई द्रोणाचर्य सब को घायल करके युधिष्ठर के सन्मुख गये, भीमसेन अर्जुन शिनी के पौत्र द्रोय देह, सात्यकि, शैव्य का पुत्र काशिराज और शिवि द्रोणाचार्य को बढ़ते देख कर उस से युद्ध करने को आये, द्रोणाचार्य के बाणों ने उन सब को चारों ओर से ढक दिया घोड़े और हाथियों से रुधिर की धारें बहने लगीं, इन के मृतक शरीरों से सारी रण भूमि ढक गई ॥

परन्तु धृष्टद्युम्न ने साहस न छोड़ा और बिलकुल बेधड़क होकर ऐसे बाण चलाये, कि द्रोणाचार्य रथ से गिर कर भूमि पर जा पड़ा, पाण्डवों की एक अक्षौहिणी से अधिक सेना मर चुकी थी, द्रोणाचार्य को गिरे हुये देख कर पाण्डवों ने शंख बजाये और उच्च स्वर से जय का नाद किया, वृद्ध द्रोणाचार्य जिस ने सब क्षत्रियों को धनुर्विद्या का उपदेश किया था, इस प्रकार पांडवों और पांचालों के हाथ से मारा गया ॥

देवताओं ने आकाश वाणी से क्षत्रिय धर्म को धिक्कार किया जिस के कारण से ऐसे विद्वान, सत्यवादी और सत्य पराक्रमी गुरू अपने शिष्यों के हाथ से मारे गये ॥

छठा अध्याय

—:०:—

संजय का धृतराष्ट्र को द्रोणाचार्य की मृत्यु का समाचार देना और धृतराष्ट्र का बहुत विलाप करना और अचेत होकर पृथ्वी पर गिर पड़ना, फिर होश में आकर संजय से सब हाल पूछना ॥

द्रोणाचार्य के मरने पर संजय धृतराष्ट्र को समाचार देने के लिये रण भूमि से आया और आते ही यह हृदय बिदारक समाचार महाराज धृतराष्ट्र को सुनाया। द्रोणाचार्य के बल पर धृतराष्ट्र को बड़ा विश्वास था और भीष्म को मरा जान कर वही केवल कौरवों का आश्रय था। उस का मरना सुन कर धृतराष्ट्र की रही सही आशा भी टूट गई और अब उस को विजय का कोई अन्य चिन्ह बहुत सोचने पर भी विचार में न आया, बिचारा धृतराष्ट्र यह शोक समाचार सुन कर आसन से गिर पड़ा और मूर्छित होगया ॥

सब रणिवास की सब रानियें उस को उठा कर मुट्ठी चापी करने लगीं, उस के मुख पर सुगंधित शीतल जल छिड़का गया और मोह दूर करने के नानों प्रकार के उपाय किये गये, बहुत काल के उपरान्त धृतराष्ट्र को संज्ञा आई और वह बहुत विलाप करके संजय से पूछने लगे। कि हे संजय कहो तो द्रोणाचार्य कैसे मारा गया? किसें ने उस पर तीर चलाये? किस यम रूपी महापुरुष ने उस को रथ से गिराया? कौन धर्मात्मा हमारे पक्ष में उस की सहायता करता था? पाण्डवों में से किस २ ने उस पर आक्रमण किया? हमारी ओर से किस २ ने उसे रोका॥

मैं जानता हूं कि धृष्टद्युम्न बड़ा पराक्रमी है, उस वीर के बाण बड़े तीक्ष्ण पड़ते हैं, पाण्डव बड़े शूर वीर और दिव्य पराक्रमी हैं, कोई मनुष्य उन के बाणों की धारा को सह नहीं सकता, फिर श्रीकृष्ण जी उनके सहायक हैं जिन्हों ने केशी को मारा, वृषभासुर को मारा, मुर और नरकासुर को मारा, जम्बपीठ और कंस को मारा, गांधार देश के राजा की पुत्री सब राजाओं को जीत कर और राजाओं से अपना रथ घोड़ों की भांति हंकवाकर लाये शिशुपाल को मारा, और बड़े २ अजय दैत्यों को मार कर समुद्र की कुक्षि में गिराया, फिर दाक्षिणात्य, पड्शटक, कशमीर, सिक, पिशाच, मुद्गल, कांबोज वाट, धान, चोल, पाण्य और यवन देशों को जीता, इसी महा तेजस्वी श्री कृष्ण ने मेरे पुत्र को बार २ समझाया, परन्तु

उस मूर्ख ने काल प्रेरित हो कर श्री कृष्ण जी के वचनों का अनादर किया ॥

मेरा विचार है कि इस प्रकार प्राक्रम रखने वाले श्री कृष्ण के सहायक होने पर पाण्डव अवश्य विजयी होंगे हमारे दल में से अर्जुन के साथ युद्ध कौन कर सकता है ? अर्जुन और कृष्ण एक ही हैं जैसे नर और नारायण । भीष्म और द्रोणाचार्य की मृत्यु यह दर्शाती है कि हमारी राज्य लक्ष्मी को पाण्डव सहज ही में पायेंगे, क्योंकि वह धर्मात्मा हैं देखो भीष्म और द्रोणाचार्य यूंही मरगये, उनको मरा सुन कर मेरे जीवन पर धिक्कार है। वह भीष्म जिसने हमारा पालन पोषन किया और हमको राज्य कराया वह आज रण भूमि में बाण शय्या पर मरा पड़ा है, वह द्रोण जिसने हमको धनुर्वेद्या सिखाई, हमारे पुत्रों को क्षत्रिय बनाया, नहीं संसार भर के क्षत्रियों को क्षत्रधर्म का उपदेश किया वह आज सामान्य योधाओं की भांति पृथ्वी पर गिरा पड़ा है ॥

हे तात ! पक्के फलों के नाश करने के लिये तिनके भी कठोर हो जाते हैं, इसी प्रकार युधिष्ठर भी नम्र हो कर कौरवों का नाश कर रहा है, उसी के क्रोध से भीष्म और द्रोण गिराये गये, उसका स्वभाव ही धर्म है, मेरे पुत्रों में वह धर्म नहीं, यह निर्दय काल सब का नाश करने के लिये पृथक नहीं होता चित वाले मनुष्य और प्रकार सोचते हैं, परन्तु दैव और तरह पर करता है, यह सब परारब्ध की बात हैं। हे संजय ! अब मुझ को युद्ध का सारा वृत्तान्त सुनाओ ॥

सातवां अध्याय

—:०:—

दुर्योधन का द्रोणाचार्य से यह प्रतिज्ञा लेना कि मैं युधिष्ठर को पकडूंगा ॥

संजय ने कहा कि हे शत्रु नाशक महाराज! भीष्म के मरने पर जब दुर्योधन ने द्रोणाचार्य को सेनापति बनाया तो द्रोणजी कहने लगे कि हे राजा! कहो कि मैं क्या करूं, दुर्योधन ने कहा कि हे गुरुजी! मेरी यह इच्छा है कि आप युधिष्ठर को जीता ही पकड़ कर मेरे पास ले आवें? द्रोण बोले कि यह किस लिये? क्या तुम डरते हो कि युधिष्ठर अजात शत्रु है, और संसार भर में उसको मारने वाला कोई नहीं? अथवा तुम्हारा यह अभिप्राय है कि युधिष्ठर को इस प्रकार बुला कर भ्रात्र भाव प्रकट करूं और उसका राज्य उसको देदूं? क्यों उसको मारना उचित नहीं समझते हो?

दुर्योधन बोला कि हे गुरुजी! पाण्डव बड़े बलवान हैं। यदि युधिष्ठर मारा गया तो उसके शेप भाई हम सब को युद्ध में मार देंगे यदि एक भी उन में से बच गया तो वह हम सब को मारने के लिये पर्याप्त है, परन्तु यदि युधिष्ठर जीता ही हमारे वश में आगया, तो बस फिर हमारी चांदी है, हम उस को जुआ खिला कर फिर राज्य जीत कर इन को वनवास भेज देंगे। इस प्रकार सुगमता ही से हमारा काम बनजायगा ॥

द्रोणाचार्य दुर्योधन की इस नीच वृत्ति को देख कर कहने लगा कि हे राजा ! यदि वीर अर्जुन युधिष्ठर की रक्षा नहीं करता होगा तो मैं निस्संदेह एक ही क्षण में युधिष्ठर को पकड़ दूंगा । परन्तु अर्जुन की विद्यमानता में युधिष्ठर को पकड़ना असंभव है । अर्जुन है तो मेरा शिष्य परन्तु वह इन्द्रादिक देवताओं का भी शिष्य है । इस लिये उसकी उपस्थिती में युधिष्ठर पकड़ा नहीं जासक्ता । इस लिये यदि तुम विजय चाहते हो तो अर्जुन को युद्ध में दूर एक ओर को लेजाओ, मैं युधिष्ठर को पकड़ दूंगा और तुम्हारे मन की अभिलाषा पूरी करुंगा ॥

यह सुन कर दुर्योधनादि आनन्द से फूलगये, और युधिष्ठर को पकड़ा हुआ ही समझने लगे, यहां तक ही नहीं, वरन इस गुप्त गल्ल को सब पर प्रकाश भी कर दिया ॥

आठवां अध्याय

—:o:—

युधिष्ठर का द्रोणाचार्य की प्रतिज्ञा को सुन कर अर्जुन को सावधान करना, महारथियों का परस्पर युद्ध होना, द्रोण का बड़ा भय उत्पन्न करना ॥

द्रोणाचार्य की इस प्रतिज्ञा का युधिष्ठर को भी समाचार मिल गया उस ने अर्जुन को तुरन्त बुलवा कर बताया, अर्जुन बोला कि हे कौन्तेय! तुम रति भर भी इस बात की शंका न करो, गुरु जी से तो मैं लडुं ही गा नहीं, परन्तु मेरे जीते उन की क्या मजाल है, कि वह इस प्रकार आप को पकड़ कर लेजायें, यदि इन्द्र भी उन के सहायक बन कर आयें तो जीते बच कर न जायें गे॥

फिर पाण्डवों ने शंख भेरी और ढोलक बजाये, आप के पुत्रों ने भी बजाये, दोनों ओर के योधा परस्पर लड़ने मरने पर आये, बड़ा लोमहर्षन युद्ध आरंभ हुआ, इधर द्रोणाचार्य सेना की रक्षा करता था उधर अर्जुन। द्रोणाचार्य अकेला ही शत्रु सेना में घूमने लगा, परन्तु शत्रु सेना के असंख्य योधा उस से डरते थे, फिर द्रोणाचार्य ने अपने तीक्ष्ण बाणों की ऐसी वर्षा की, कि धृष्टद्युम्न की सेना छिन्न भिन्न हो गई॥

इस के पश्चात द्रोणाचार्य ने पांडवों की सेना में बड़े भय को उत्पन्न किया, इधर उधर के सब योधा आपस में लड़ने लगे सहदेव और शकुनि ने गदा युद्ध किया। द्रुपद ने द्रोण को बाण से घायल किया और फिर द्रोण ने द्रुपद को, भीमसेन ने विविंशती पर बीस बाण चलाये, परन्तु वह घायल हो न हुआ। इस को देख कर सब आश्चर्य मानने लगे! फिर विविंशती ने अपने बाणों से भीमसेन को घोड़े, ध्वजा और धनुष

से रहित कर दिया, इस बात से विविंशती की प्रशंसा सब राजा लोग करने लगे ॥

फिर शल्य ने अपने प्यारे भानजे नकुल को घायल किया परन्तु नकुल ने उस के घोड़ छत्र ध्वजा सब को गिरा दिया और अपनी विजय का शंख बजाय, फिर धृष्टकेतु और कृपाचार्य और सात्यकी और कृतवर्मा का घोर युद्ध हुआ विराट ने कर्ण को रोक लिया, जिस को देख कर सब आश्चर्य मानने लगे। परन्तु कर्ण ने शीघ्र ही गुप्त ग्रंथि वाले बाणों से सारी सेना को रोक दिया। भूरिश्रवा और शिखंडी का बड़ा भयंकर युद्ध हुआ ॥

हे राजन्! इस के पीछे पौरव गर्जता हुआ अभिमन्यु के पीछे गया, अभिमन्यु झट उस की ओर आया, उन दोनों का कई प्रकार का बड़ा घोर युद्ध हुआ, कभी वह उस को बाणों से घायल कर देता कभी दूसरा खड्ग प्रहार से उसको विह्वल कर देता। अन्त को अभिमन्यु पौरव का सारथीरहित कर के उसके रथ पर चढ़ा, और उस को चोटी से पकड़ कर चारों ओर घुमाने लगा ॥

यह देख कर जयद्रथ सह न सका, रथ दौड़ा कर तुरन्त अभिमन्यु की ओर भागा, जयद्रथ को आता देख कर अभिमन्यु बिजली की भान्ति पौरव को पटका कर रथ से नीचे आया और जयद्रथ से युद्ध करने लगा। उस ने जयद्रथ के प्रास और पट्टिश को अपनी तलवार से काट डाला, फिर दोनों का बड़ा घोर युद्ध हुआ, केवल तलवारों की चमक

और ढालों की खड़खड़ाहट ही देखने सुनने में आती थी जयद्रथ ने अभिमन्यु पर बहुत वार किये परन्तु अभिमन्यु ने सब रोक लिये फिर छः चरण पीछे हट कर अभिमन्यु जयद्रथ पर झपटा और जयद्रथ पर वार करके अपने रथ पर चढ़ गया ॥

अभिमन्यु को रथ पर चढ़ा हुआ देख कर और राजाओं ने उस को चारों ओर से घेर लिया, अभिमन्यु जयद्रथ को छोड़ कर ढाल तलवार लेकर सब राजाओं पर कूद पड़ा और अपने तेज और पराक्रम से सब को पीड़ित करने लगा फिर शल्य ने उस पर बरछी मारी, अभिमन्यु ने उछल कर बरछी पकड़ली, और उसी को शल्य पर छोड़ा, शल्य का सारथी मारा गया और आप रथ से गिर पड़ा, यह देख कर विराट, द्रुपद धृष्टकेतु, युधिष्ठर, सात्यकी, धृष्टद्युम्न और शिखण्डी आदि ने जयकारे बुलाये, और "धन्य हो; अभिमन्यु धन्य हो" यह कह कर उस की ओर बढ़े। यह देख कर आर्तायनि अभिमन्यु के सन्मुख गया ॥

नवां अध्याय

—:o:—

भीम और शल्य का गदा युद्ध, शल्य का हार जाना, वृषसेनका शतानीक से युद्ध, और फिर अन्य वीरों से युद्ध होना ॥

रथ से गिर कर शल्य ने गदा हाथ में ली. यह देख कर भीमसेन ने भी गदा उठाई और शल्य की ओर बढ़ा। भीमसेन तो गदा युद्ध में बड़ा प्रवीण था, परन्तु शल्य भी गदा धारी थी और सारी कौरवी सेना में अपनी तुलना न रखता था जब शल्य ने अभिमन्यु पर गदा लेकर आक्रमण किया, तो भीम सेन अभिमन्यु को रोक कर आप आगे बढ़ा, दोनों योधा उस महा भयंकर गदा युद्ध में प्रवृत्त हुये, और एक दूसरे की हड्डी पसली तोड़ने लगे, दोनो के पर्वताकार देहों से रुधिर की धारा बहिने लगी। फिर दोनों ओर की निरंतर प्रहारों से वह दोनों वीर गिरे। यह देख कर कृतवर्मा बड़ी शीघ्रता से शल्य के पास गया, और उसको अधमुआ पाकर उठाकर और रथ पर चढ़ा कर दूर लेगया, शल्य रथ में जाकर तुरन्त उठ खड़ा हुआ. और भीमसेन भी गदा हाथ में लेकर ज्यों का त्यों दिखाई पड़ा। उसको देख कर सब कौरवी सेना भाग गई। और आप के पुत्रों को बड़ी पीड़ा हुई। पाण्डवों ने सिंह नाद कर के बाजे बजाये॥

यह देख कर कर्ण का पुत्र वृषसेन लड़ने को आया। उसके बाणों ने सब पाण्डवों को दुःखित किया। नकुल का पुत्र शतानीक उससे लड़ने को आया, और वृषसेन को मर्म भेदी बाणों से घायल करने लगा वृषसेन ने भी अच्छी प्रकार सामना किया फिर द्रौपदी के शेष पुत्र भी आगये और अपने भाई की सहायता करने लगे। वृषसेन को अकेला

देख कर अश्वत्थामा बढ़ा और फिर पांडव और मत्स्य देशी भी आगये, जिन से बड़ा भयंकर रोमहर्षन युद्ध होने लगा अन्त को पाण्डवी सेना ने कौरवी सेना को बहुत मारा ॥

उस भागती हुई सेना को देख कर द्रोणाचार्य ने उच्चस्वर से कहा कि हे शूरवीर लोगो ! मत भागो यह कह कर अपना रथ आगे किया, सब कौरव उसके पीछे लौटे, द्रोणाचार्य पाण्डवी सेना में प्रवेश करके युधिष्ठर के सन्मुख हुये, युधिष्ठर ने बाण मारे परन्तु आचार्य जी ने उनको शीघ्र ही काट दिया ॥

द्रोण आगे बढ़ा परन्तु चक्र के रक्षक कुमार ने उसको वहां रोक दिया, यह देख कर पांडव कुमार को धन्य हो ! धन्य हो ! कहने लगे, फिर कुमार ने द्रोणाचार्य पर बाण वर्षा की. परन्तु उस द्विज सत्तम ने शीघ्र ही कुमार को रोका और उसके सहायक पांडवों को, द्रौपदी के पुत्रों को, राजा द्रुपद को, और अन्य वीरों को दो २ तीन ३ बाणों मार कर घायल किया ॥

फिर विराट, द्रुपद, केकय, सात्यकी, शिवि, व्याघ्रदत्त, और सिंहसेन ने आकर द्रोणाचार्य का मार्ग रोक लिया और उसको बाणों से घायल किया, परन्तु द्रोण ने ऐसा मल्ल युद्ध किया कि सिंह सेन और व्याघ्रदत्त के कुंडलों समेत कान कट गये । द्रोणाचर्य के इस पराक्रम को देखकर लोग कहने लगे कि दुर्योधन अवश्य जीतेगा ॥

लोगों के यह शब्द करते ही अर्जुन रथ दौड़ा कर आगया उसने आतेही घोर बाणवर्षा की, कौरवी सेना पीछे

छूट गई, रात्रि होगई थी दोनों सेना विश्राम करने को लौटीं और अपने २ स्थानों को चली गई ॥

दशवां अध्याय

—:-०-:—

द्रोणाचार्य का दुर्योधन को कहना कि अर्जुन को कहीं दूर ले चलो। त्रिगर्त देशियों का अर्जुन को युद्ध में बुलाना ॥

रात्री के समय द्रोणाचार्य ने दुर्योधन को कहा कि यदि अर्जुन न आजाता तो आज युधिष्ठर पकड़ा जाता। अर्जुन के आने पर सब काम विगड़ गया। यदि तुम युधिष्ठर को निश्चय पकड़ना चाहते हो, तो अर्जुन को युद्ध में एक ओर ले जाओ, जहां से वह युधिष्ठर को न देख सके। पीछे से युधिष्ठर को पकड़ लेंगे ॥

यह सुन कर त्रिगर्त नरेश सुशर्मा बोला कि मैं अर्जुन का बड़ा वैरी हूं। मेरा उस ने बहुत निरादर किया है। मैं उस को मारूंगा, जब प्रातः काल हुआ तो उस ने अपनी सब सेना को इकट्ठा किया। अग्नि होत्र कर के परमेश्वर से प्रार्थना की और कुश वस्त्र चीर पहिन कर सब के सामने प्रतिज्ञा की कि हम अर्जुन को मारेंगे यदि हम न मारें तो जो लोक मिथ्या

वादियों को प्राप्त होते हैं, अथवा ब्रह्म हत्या करने वालों को प्राप्त होते हैं वह हम को प्राप्त हों ॥

यह कह कर वह सुशर्म्मा सेना के दक्षिण भाग में जा कर सेना समेत अर्जुन को युद्ध करने के लिये बुलाने लगा, यह देख कर अर्जुन ने युधिष्ठर को कहा कि महाराज भाईयों समेत सुशर्मा मुझ को युद्ध के लिये बुलाता है, आज्ञा दें कि मैं इन से युद्ध करूं क्योंकि जब शत्रु आप लड़ने के लिये बुलावे, तो मैं रुक नहीं सकता यह मेरी प्रतिज्ञा है ॥

युधिष्ठर ने कहा कि अर्जुन यह सब द्रोणाचार्य की चालाकी है, वह तुम को मुझ से पृथक् करना चहता है ताकि अकेला पाकर मुझ को पकड़ ले, कहो इस का क्या उपाय करोगे ? अर्जुन बोला कि मैं तो अवश्य जाऊंगा और त्रिगर्तियों से लड़ूंगा, क्योंकि वह काल प्रेरित होकर मुझ को बुलाते हैं, आप की रक्षा के लिये सत्यजित को छोड़ जाता हूं, फिर धृष्टद्युम्न यहां ही है, उस के जीते द्रोणाचार्य की क्या मजाल है कि आप को किसी प्रकार का दुःख भी दे सके ॥

यह कह कर अर्जुन चला ही गया, दुर्योधन प्रसन्न हुआ कि अब काम बन जायेगा, तब दोनो सेना आपस में युद्ध करने लगीं ॥

ग्यारहवां अध्याय

—:o:—

अर्जुन का त्रिगर्त देशियों से युद्ध, सुधन्वा का अर्जुन के हाथ से मारा जाना और उस की सेना का भागना ॥

संसप्तकों ने अर्ध चन्द्राकार अपनी सेना बनाई, और दुर्योधन की सेना से बहुत अन्तर पर अपने मोरचे वानये, तब अर्जुन श्रीकृष्ण जी से रथहंकवा कर उन के सन्मुख गिया, पंद्रह सहस्र बाण एक साथ अर्जुन के ऊपर गिरे, परन्तु अर्जुन ने सब को काट दिया, इस के पश्चात् फिर उन्हों ने दश २ बाण अर्जुन को मारे, परंतु अर्जुन ने एक ही वार तीन २ बाण सब को मार, इस प्रकार चिर काल तक युद्ध होता रहा, इस के पश्चात सुशर्मा, सुरथ, सुधनु, सुधर्मा और सुवाहू अर्थात् पाचों त्रिगर्तदेशी भाईयों ने दश २ बाण अर्जुन को मारे, अर्जुन ने सुधनु को ऐसा मारा कि बिचारे का शिर धड़ से पृथक हो कर गिर पड़ा ॥

सुधनु के मरने पर उसकी सेना उधर को भागी जिधर दुर्योधन की सेना थी, उन भागते हुओं पर अर्जुन ने बड़ी भारी बाण वर्षा की, तब सुशर्मा अपने सैनकों को बुलाने लगा और कहने लगा कि ऐ शूरलोगो तुमने तो अनेक शपथ खाई थीं कि हम अर्जुन को मार डालेंगे, अब भागते क्यों हो, भाई आओ

क्षत्रिय बनो और अपनी प्रतिज्ञा का पालन करो, दुर्योधन की सेना में जाकर क्या करोगे सब से हास्य कराओगे देखो ।निन्दित कर्म करना कदापि उचित नहीं ॥

यह सुनकर वह लोग फिर आये और युद्ध की कामना करने लगे, उनके नारायण और गोपालनाम गणतो सारे के सारे ही लौट आये ॥

बारहवां अध्याय

—:०.—

अर्जुन का नारायण और गोपाल गणों से युद्ध, संसप्तकों का मारा जाना, द्रोणाचार्य का युधिष्ठर को पकड़ने के लिये युद्ध करना ॥

संसप्तकों के नारायण और गोपाल गणों के लौटने पर अर्जुन ने फिर श्रीकृष्णजी को कहा कि रथ को लौटाओ, चलो इन नारायण आदिगणों को मार कर संसप्तकों की शांति करं, अर्जुन को लौटे हुए देख कर वह गण उसके इरद गिरद ही गये और अपनी बाणों वर्षा से अर्जुन को चारों ओर से ढकने लगे, अर्जुन ने त्वाष्ट्र नाम अस्त्र का प्रयोग किया, जिस से वह सब के सब ऐसे विमोहित हुये कि आपस में एक दूसरे को अर्जुन समझने लगे और एक दूसरे पर ऐसे बाण वर्षाने लगे कि जिस से उन का वह भारी दल थोड़े ही काल में मर कर थोड़ा होगया ॥

अर्जुन उन के बाणों से ऐसा ढका गया कि श्री कृष्ण चन्द्र भी घबरा कर पूछने लगे कि हे अर्जुन तू कहां है? तब अर्जुन ने वायु अस्त्र का प्रयोग करके सब बाणों को दूर किया और श्री कृष्ण को शांति दी, फिर अर्जुन ने घबराये हुये उस संसप्तक दल को चारों ओर घूम २ कर रथ घोड़ों और सारथियों से विरहित करके बहुत ताड़ित किया और ऐसा युद्ध किया कि श्री कृष्ण भी मारे पसीनों के चूर होगये ॥

संसप्तकों के मुण्डों और मृतक शरीरों से वह स्थान भर गया, रुधिर की धाराओं से पृथ्वी दल दल होगई और बड़ी भयंकर दिखाई देने लगी ॥

इधर जब अर्जुन संसप्तकों के बाणों से आच्छादित हो कर गुप्त होगया, तो द्रोणाचार्य ने अवसर पाकर युधिष्ठर को घेर लिया और बड़ा भयंकर युद्ध करने लगा ॥

तेरहवां अध्याय

—:o:—

द्रोणाचार्य का धृष्टद्युम्न के साथ युद्ध होना और फिर युधिष्ठर के सन्मुख जाना ॥

अर्जुन के संसप्तक से युद्ध करने को जाने पर द्रोणाचार्य ने अपनी सेना को गरुड़ व्यूह में रक्खा आप तो मुख पर टिके

दुर्योधन और उस के सगे भाई शिर के स्थान पर कृपाचार्य और कृतवर्मा नेत्र के स्थान पर, भूत शर्मा, क्षेम शर्मा, करवर्ष, कलिंग देशी, सिंहल देशी, शकयवन, मद्र, दरद, और शूरसेन देशी आदि बहुत से राजा ग्रीवा भाग में नियुक्त हुए, भूरिश्रवा सोमदत्त और वाल्हीक अक्षौहिणी, से संयुक्त होकर दक्षिण पक्ष पर और विंदु अनुविंदु और अवंति देश के राजा वाम पक्ष पर अश्वत्थामा के आगे नियत हुये, कर्ण पूंछ और शेष सब राजा पृष्ठ पर नियत हुये ॥

युधिष्ठिर ने अपनी सेना को अर्धमण्डलाकार व्यूह बनाय रखा और आप उस के मुख पर खड़ा हुआ, दोनों ओर बड़े २ योधा नाना प्रकार के दिव्यास्त्रों से प्रकाशमान रथों को चलाते और हाथियों पर चढ़े हुये वायू से प्रेरित बादलों की भान्ति आये, युधिष्ठिर ने धृष्टद्युम्न को कहा कि अब सावधान होजाओ, द्रोणाचार्य मेरे पकड़ने का उपाय करेगा धृष्टद्युम्न ने कहा कि घबराओ नहीं ब्राह्मणों की क्या मजाल है कि तुम्हारे संमुख आजावे, मेरे जीते हुये द्रोणाचार्य कुच्छ नहीं कर सकता ॥

तब धृष्टद्युम्न आप ही बाण वर्षा करता हुआ द्रोणाचार्य के संमुख गया, द्रोणाचार्य उस को देख कर बहुत घबराये और दुर्योधन के छोटे भाई दुर्मुख को उस के सामने भेजा परंतु धृष्टद्युम्न दुर्मुख को तीरों से ढांक कर फिर द्रोणाचार्य के संमुख गया द्रोण ने दुर्योधन को उस से लड़ने के लिये

भेजा, फिर धृष्टद्युम्न और दुर्योधन की बड़ी भारी लड़ाई हुई, इस अवसर को पाकर द्रोणाचार्य युधिष्ठर की ओर बढ़ा और अस्त्र प्रहार से केवल उस की सेना को छिन्न भिन्न कर दिया, तब शूरवीर लोग उन्मत्तों के समान कर्म करने लगे हाथी हाथी से और घोड़ा घोड़े से भिड़ने लगा यहां तक कि ईश्वर की यह सब अपार सृष्टि युद्ध मय सी दिखाई देने लगी, हाथी घोड़े और मनुष्य बहुत मारे गये, रथ और पताका बहुत टूटे, बरछी, ढाल, तलवार, भले और अन्य शस्त्र बहुत कटे। रुधिर के बहने से पृथ्वी दल दल हो गई और देखने में बड़ी भयानक रूप वाली होगई ॥

घायल मनुष्य बड़े दुःख के शब्द करते हुये पृथ्वी पर लुड़कने लगे, इस प्रकार के इस घोर युद्ध में नाना प्रकार के पराक्रम दिखाता हुआ द्रोणाचार्य युधिष्ठर के समीप पहुंचा ॥

चौदहवां अध्याय

—:o:—

द्रोणाचार्य का युधिष्ठर को पकड़ने के लिये घोर युद्ध करना सत्याजित, सतानीक, क्षेम, वसुधान और पाचालदेशी कुमारों का द्रोणाचार्य के हाथ से मारे जाना ॥

जब द्रोणाचार्य युधिष्ठर के समीप पहुंचा, तो बड़ा भयानक

किलकिला नाम शब्द हुआ, लोगों ने कहा कि बड़ा सिंह हाथियों के स्वामी को पकड़ना चाहता है, बड़ा पराक्रमी सत्य जित द्रोणाचार्य को बढ़ते देख कर युधिष्ठर की रक्षा के लिये आगे गिया और द्रोणाचार्य से युद्ध करने लगा, उसने द्रोणाचार्य को बहुत घायल किया और उसके रथ की ध्वजा और पताका सब काट डाली फिर वृक भी उसकी सहायता को आगिया, और उसने सैकड़ों बाणों से द्रोणाचार्य को व्यथित किया ॥

यह दशा देख कर द्रोणाचार्य ने भी क्रोध युक्त हो छः बाणों से सत्यजित और वृक के धनुषों को काट डाला और फिर घोड़ों समेत वृक को मारा, सत्यजित ने और धनुष ले कर द्रोणाचार्य पर पराक्रम किया और दोनों का बड़ा तुमुल युद्ध हुआ, अन्त को द्रोणाचार्य के अर्द्धचन्द्र बाण से सत्यजित का शिर कट गया और भूमी पर जा पड़ा, उस को मरा हुआ देख कर युधिष्ठर शीघ्र घोड़े से पीछे हट गया, द्रोण ने युधिष्ठर की संरक्षक सेना को मार कर भस्म कर दिया ॥

फिर राजा विराट का भाई सतानीक युधिष्ठर की रक्षा के लिये आगे बढ़ा और द्रोणाचार्य पर सैंकड़ों बाण बरसाने लगा, परन्तु द्रोणाचार्य ने एक ही क्षुर नाम बाण से सतानीक का कुण्डलों वाला सिर काट डाला, यह देख मत्स्य देशी लोग भाग गये, द्रोणाचार्य शत्रुओं को सब ओर से रौंदता हुआ और बादलों के समान बाण वृष्टि करता हुआ बड़ा विध्वंस करने लगा ॥

द्रोणाचार्य के इस प्रकार विध्वंस करन पर बहुत से पाण्डवीय योधा उस को रोकने को बढ़े । उन्हों ने अपने बाणों से आचार्य को घायल किया, परन्तु मतवाले हाथी के समान द्रोणाचार्य से कोई युद्ध न करसका। उस ने नौ ही बाणों से क्षेमको मार कर भूमी पर गिरादिया। तब बारह २ बाणों से शिखंडी और उतमौजस को घायल करके भाले से वसुदान को यमपुर में भेजा। फिर क्षत्र देव को रथ के नीड़ से गिराया ॥

यह देख कर युधिष्ठिर शीघ्र ही पीछे हट गिया, और पांचाल देशी कुमार आगे बढ़ा, परन्तु द्रोणों ने उस को मार गिराया। फिर बड़ा भारी शब्द हुआ, पाण्डवों की सेना द्रोण को मारो, द्रोण को मारो, कहने लगी। परन्तु द्रोण विजयी रहा। पांचाल मत्स्य और केकय देश की सेनायें उस से कांपने लगी ॥

पन्द्रहवां अध्याय

—:o:—

दुर्योधन का कर्ण से बात चीत करते हुये यह कहना कि अब पाण्डव और नहीं लड़ेंगे, कर्ण का प्रत्युत्तर ॥

पाण्डवों की इस पराजय को देख कर दुर्योधन बहुत प्रसन्न

हुआ और कर्ण से कहने लगा कि देखो वह पांचाल भागे जाते हैं, यह द्रोणाचार्य से ऐसा डरते हैं, जैसा कि सिंह से बकरी, मेरा विचार है कि यह लोग द्रोणाचार्य से बहुत ताड़ित हुये हैं, इस लिये फिर यह लड़ने को नहीं आवेंगे॥

देखो यह भीमसेन मारा २ फिरता है, क्या यह अब द्रोणाचार्य से लड़ेगा? नहीं, कभी नहीं, मैं समझता हूं कि द्रोण ने ऐसा इन को मारा है कि यह लोग फिर लड़ने का साहस नहीं करेंगे। कर्ण ने कहा कि तुम्हारा विचार ठीक नहीं, पाण्डव कभी युद्ध को नहीं छोड़ सक्ते। भीमसेन द्रोणाचार्य से कुछ भी नहीं डरता। किसी उपाय ही को सोचता होगा। देखो यह लोग मार खा २ कर भी बार २ द्रोण को चिमटेत ही रहते हैं, मुझे डर है, कि जैसे क्षुद्र चिऊंटियें सर्प को चिमट कर उस के वार २ हटाने पर भी नहीं हटतीं और मार ही डालती है, वैसे ही यह पांचाल और पाण्डवों की सेना द्रोणाचार्य के गले चिमट कर उसको मार ही न डाले, देखो काक जन्तु कैसे भयंकर सर्प को मारडालता है॥

कर्ण के यह वचन सुन कर दुर्योधन भाईयों सहित द्रोणाचार्य के पास गिया और देखा कि पाण्डव उस के मारने के लिये सिंह नाद करते हैं॥

सोलहवां अध्याय

—:०:—

संजय का पाण्डवों के रथों का नाम लेना और धृतराष्ट्र का फिर युद्ध का वृत्तान्त पूछना ॥

यह बात सुन कर राजा धृतराष्ट्र संजय से पूछने लगा, कि जो २ पाण्डव द्रोणाचार्य से लड़ने आये हैं उनका नाम लो और उनके रथों का भी वर्णन करो, संजय ने सब पांडवों और उनके सहायकों के नाम लिये, उनके रथों का रूप भी वर्णन किया, उनके घोड़े दर्शाय और उनके धनुषों का जाति भेद सब प्रकार से वर्णन किया। यह सब रथी आगे बढ़ २ कर जाते थें और अपने नाम और गोत्र को ऐसा सुनाते थे, जैसे कि स्वयम्वर में सुनाया जाता है ॥

राजा धृतराष्ट्र यह बात सुन कर कई प्रकार के विचार करने लगा और कहने लगा कि हे संजय यह सब प्रारब्ध ही की बातें हैं, विदुर जी ने जो २ कहा था वह सब कुछ सत्य निकला है। यदि मुझ को लोग निर्दयी न कहें तो मैं दुर्योधन को छोड़ दूं। अपने शेष पुत्रों को तो न मरवाऊं। अच्छा संजय, अब फिर युद्ध की बातें बताओ, सुनाओ कौन २ भागे ? कौन २ मारे गये ? कौन २ प्राण छोड़ कर लड़े ? मेरे पुत्रों ने क्या विचारा ? तुम्हारा चित्त कैसा हुआ ?

संजय ने विस्तार पूर्वक सब द्वन्द्व युद्धों का वर्णन किया।

और कहा कि हे राजन्! आप का कल्याण हो, ऐसा भयंकर युद्ध न मैंने कभी देखा है और न कभी सुनाही है ॥

सतारहवां अध्याय

—:०:—

भीमसेन का हाथियों से युद्ध प्राग्ज्योतिष राजा भगदत्त की बहादुरी ॥

संजय बोला कि फिर दुर्योधन हाथियों की सेना लाया। और उसको रण में युद्ध के लिये छोड़ा, यह देख कर भीमसेन झट बाहिर निकल आया और उसने थोड़े ही काल में सारे हाथिदल को छिन्न भिन्न कर दिया, भीमसेन के प्रहारों स वायु से प्रेरित बादल की भांति वह हाथि इधर उधर दौड़े, यह देख कर दुर्योधन सामने गिया और भीमसेन से लड़ने लगा, पहिले भीमसेन ने बाण खाये, और फिर मारे भी, यह देख कर अंग देश का राजा हाथी पर चढ़ कर भीमसेन से लड़ने लगा, भीमसेन ने अपने बाणों से उसके हाथी को मार डाला, और अंग के राजा का शिर काट लिया, यह देख कर उसके हाथी और घोड़चढ़े अपनी ही प्यादा सेना को मर्दित करते हुए भाग ॥

फिर राजा प्राग्ज्योतिष ऐरावत के समान हाथी पर चढ़ कर भीमसेन से लड़ने आया, हाथी सूण्ड हिलाता हुआ भीम-

सेना के आग जाकर उसके रथ से चिमट गया, और उसको टुकड़े २ कर दिये, भीमसेन रथ से कूद कर उसके अंगो से लिपट गया और उसको थापी मार २ कर प्यार करने लगा। फिर सूण्ड से पकड़ कर उसको ऐसा घुमाया कि वह लट्टू की भांति चक्र लगाने लगा फिर हाथी दौड़ा भीमसेन उसके अंगो से निकल कर सामने गया, हाथी ने भीमसेन को बहुत लताड़ा, भीमसेन ने नीचे से उठकर हाथी को घुमाया, जिस से उसके सूंड की लपेट छुटगई। भीमसेन उसके अगों में प्रवेश कर गया और फिर वहां से निकल कर दूर चला गया. सेना ने समझा कि भीमसेन को हाथी मार गया, इस लिये सब पांडव शोकातुर हो गये॥

राजा युधिष्ठर ने भीमसेन को मरा हुआ जान कर भगदत्त को चारों ओर से घेर लिया, परन्तु वृद्ध भगदत्त ने अपूर्व हाथी पर चढ़ कर और वीरता दिखा कर सब पाण्डव और पाचालों को व्यथित कर दिया, फिर दशार्ण देश का राजा भगदत्त के सामने गिया, दोनो हाथी पर स्वार थे, वहुत लड़े, परन्तु दशार्ण का हाथी एक पार्श्व में घायल हो कर गिर पड़ा, तब भगदत्त को सब रथियों ने घेर लिया, परन्तु राजा प्राग्ज्योतिष का हाथी सब रथी महारथियों को मथन करता ही रहा॥

फिर प्राग्ज्योतिष ने अपने हाथी को रोक कर युयुधान के रथ पर भेजा, रथ उलटगिया, युयुधान कूद कर बाहिर

निकल आया परन्तु सारथी ने घोड़े ठहिरा लिये, इस के पीछे हाथी रथ मडंल से निकल कर बाहिर चलागिया और राजा मण्डल को मथन करने लगा, यह देख कर भीमसेन घोड़े पर चढ कर सामने आय, परन्तु हाथी ने अपनी सूण्ड से इतना पानी निकाल कर घोड़े पर छिड़का, कि वह घोड़ा डर कर भागा और भीमसेन को दूर लेगिया ॥

फिर अनेक घोड़ों और प्यादों को रौंदता वह हाथी चिर काल तक सब क्षत्रियों को व्यथित करता रहा। वाहनों के चलने से ऐसी धूल उठी कि आकाश धुआं धार होगिया ॥

अठारहवां अध्याय

—:०:—

अर्जुन का ससंप्तकों का सर्वनाश करना, और फिर लौट कर भगदत्त से युद्ध करने जाना॥

जब अर्जुन ने अपनी सेना का भगदत्त के हाथी से छिन्न भिन्न होते देखा तो उसने विचारा कि सिवाये राजा प्राग्ज्योतिष के कोई ऐसा कर्म नहीं करसक्ता, इस लिये उसने वासुदेव को कहा कि आप मेरा रथ अपनी सेना की ओर ले चलें, जब श्रीकृष्ण ने रथ को मोड़ा, तो अर्जुन को लौटा हुआ देखकर संसप्तक चिल्ला उठा कि "वह अर्जुन भाग गिया वह अर्जुन भाग गिया ॥"

यह सुनकर अर्जुन ने श्रीकृष्ण से पूछा कि अब क्या करना चाहिये? अपनी सेना की ओर चलें कि इन लोगों का नाश करें? दोनों की यही मती हुई, कि पाहिले इन का ही नाश करना उचित है, तब अर्जुन संसप्तकों की ओर लौटा, संसप्तकों ने लाखों बाणों से अर्जुन को ढकदिया जिससे न श्रीकृष्ण ही दिखाई दिये और न अर्जुन ही दोनो घोड़े और रथ समेत अदृष्ट होगये। फिर अर्जुन ने अस्त्र(ब्रह्मास्त्र) छोड़ा, जिस से सहस्रों योधाओं के धनुष समेत हाथ कटगये, घोड़ों समेत रथी रथ और पताका भी गिरपड़ीं, फिर अर्जुन ने और अस्त्र छोड़े और सब संसप्तों का सत्यानाश करदिया, श्रीकृष्ण जी को रथ के चलाने में इतना श्रम करना पड़ा, कि वह पसीना २ होगये, संसप्तकों को मार कर अर्जुन भागदत्त की ओर लौटा ॥

उन्नीसवां अध्याय

—:o:—

अर्जुन का सुशर्मा और उसके भाइयों से युद्ध, सुशर्मा के भाई का मारा जाना, अर्जुन का फिर कौरवी सेना की ओर आना

जब संसप्तकों मार कर अर्जुन लौटा, तो राजा सुशर्मा और उस के भाई जो अभी जीते थे, उस के पीछे होलिये, अर्जुन ने श्री कृष्ण से कहा कि मेरे चित्त में यह द्विविधा उत्पन्न

हुई है कि क्या मैं इन को मारूं, अथवा अपने भाईयों की रक्षा करूं ? आप जैसा उचित समझें, शिक्षा दें ॥

श्री कृष्ण ने कुच्छ उत्तर न दिया, परन्तु रथ को मोड़ कर उधर को लेगया जिधर सुशर्मा और उस के भाई थे। फिर अर्जुन ने सात बाणों से सुशर्मा को घायल किया, और उस के धनुष को काटा और बाणों से उस के भाई को घोड़े और सारथी समेत यमपुर को पहुंचाय, फिर सुशर्मा ने वासुदेव पर शक्ती फैंकी, अर्जुन ने उस को काट कर अपने शरों से सुशर्मा को अचेत किया और फिर दुर्योधन की सेना को मथन करता हुआ अपनी सेना की ओर जो भगदत्त से छिन्न भिन्न होरही थी बढ़ा कौरवी सेना में से किसी को भी उस के रोकने का साहस न हुआ ॥

इस प्रकार हे राजन्! आप के पुत्रों की सेना को दलन करता हुआ अर्जुन राजा भगदत्त के सन्मुख आया, आप की सब सेना अर्जुन के आने पर तितर बितर होकर भागी, इस के पीछे दश सहस्रवीर मरने की इच्छा करके लौटे। उन्हों ने आते ही अर्जुन को घेर लिया, अर्जुन भी उन की सेना को मर्दन करने लगा, इतने में हाथी को लेकर भगदत्त उस के सामने आ निकला, अर्जुन ने रथ के द्वारा उस को रोका, फिर दोनों योधः सेना में घूमने लगे फिर भगदत्त ने अर्जुन पर बाण मारे, अर्जुन ने उन को मार्ग ही में काट दिया, फिर भगदत्त ने अपने हाथी को श्री कृष्ण और अर्जुन के मारने के लिये प्रेरित किया, हाथी सामने आया, परन्तु अर्जुन ने

उस पर वार न किया, फिर उस हाथी ने हाथी घोड़ों और रथों को रौंद कर मार डाला, यह देख कर अर्जुन को क्रोध आया ॥

बीसवां अध्याय

—:o:—

अर्जुन का भगदत्त से युद्ध, भगदत्त का मारा जाना ॥

फिर धृतराष्ट्र ने पूछा कि हे संजय अब मुझे भगदत्त और अर्जुन के युद्ध का वृत्तान्त सुनाओ, संजय ने कहा कि जब अर्जुन ने भगदत्त के हाथी को इस प्रकार मारते हुए देखा तो उसने बहुत क्रोध किया, भगदत्त ने हाथी पर से बाण बरसाने आरंभ किये, वह बाण श्रीकृष्ण पर लगे फिर अर्जुन ने चौदह तोमर चलाये, परन्तु भगदत्त ने सब को काट दिया फिर अर्जुन ने बाणों से भगदत्त के हाथी के कवच को काट २ कर टुकड़े २ कर दिया, हाथी गिरा परन्तु कहते हैं कि भगदत्त ने उसको अपनी जंघो पर सहारा देकर गिरने न दियां, यह देख कर सब ने बड़ा आश्चर्य किया ॥

फिर भगदत्त ने अर्जुन पर बाण मारे। और उसके किरीट को उल्टा कर दिया, अर्जुन ने मुकुट को सम्भाला और भगदत्त को कहा कि लोक में देखी हुई तो बात करनी

चाहिये? फिर भगदत्त ने मन्त्रित अंकुश को अर्जुन पर छोड़ा,परन्तु श्रीकृष्ण ने उसको अपनी छाती पर रोक लिया, यह देख कर अप्रसन्न होकर अर्जुन श्रीकृष्ण जी से कहने लगा कि हे केशव मुझे घोड़े हांकने पर लगा दो और आप युद्ध करो जब आप कोई भी शस्त्र नहीं रखते, तो इस प्रकार आप का साहस करना मुझ को पाप का भागी करेगा ॥

श्री कृष्ण जी बोले कि अर्जुन तू उस शक्ति को सहने के असमर्थ था इस लिये मैं ने उस को रोक कर कोई व्यथा नहीं पाई है देखो मेरे चार रूप इस जगत में हैं, इसी से मैं सब संसार की रक्षा करता हुं इसी से अब मैंने आप लोगों का विभाग करके लोकों का कल्याण किया है, मेरी एक मूर्ति तो पृथ्वी पर नियत होकर तपस्या करती है, दूसरी शुभाशुभ कर्म करने वाली संसार को देखती है, तीसरी मूर्ति नर लोक में नियत होकर कर्म करती है और चौथी सहस्र दिव्य वर्ष सोती है ॥

पूर्वकाल में मेरी चौथी मूर्ति के उठने के समय पृथ्वी ने मुझ से यह वर मांगा था कि मेरा पुत्र नरक वैष्णवास्त्र को सफलता से प्रयोग करने वाला हो और उस को कोई भी न जीत सके, मैंने कहा कि ऐसा ही होगा, तुम्हारे पुत्र का नरक के हाथ से प्रयोग किया हुआ यह वैष्णवास्त्र कोई न काट सकेगा वह अस्त्र भगदत्त के हाथ में था, तुम उस को काट नहीं सकते थे, इस लिये मैंने उस को छीन लिया है

अब भगदत्त के पास कुछ नहीं, तुम इस को अभी मार सकते हो, इस लिये हे अर्जुन इस समय को मत हाथ से छोड़ो, आगे बढ़ कर भगदत्त को बाणों से पीड़ित करो, इस को इस प्रकार मारो जैसेंकि मैंने नरकासुर को मारा था ॥

इस प्रकार के वचन सुन कर अर्जुन ने भगदत्त पर बाण वर्षा आरंभ की और उस के हाथी को तीक्ष्ण तीरों से वेधित किया तब भगदत्त ने बारंबार हाथी को घेरा परन्तु हाथी ने उस के वचन को न माना। फिर हाथी दान्तों के बल गिरा और मृत्यु को प्राप्त हुआ ॥

यह देख कर भगदत्त नेत्र खोलने के निमित्त पटका बांधने लगा, परन्तु अर्जुन ने तुरन्त तीर मार कर उस के पटके को काट दिया भगदत्त अन्धा हो गिया इस के पश्चात अर्जुन ने उस के हृदय में बाण मार कर उसको घायल किया, जिस से निर्जीव हो कर भगदत्त भूमि पर गिर पड़ा उस का सोने का मुकुट सिर से परे जा गिरा। उस की दीन दशा को देख कर सब को संसार का अस्थैर्य याद आया ॥

इक्कीसवां अध्याय

—:o:—

अर्जुन का वृषक और अचल को मारना शकुनि का माया रूप से लड़ना और भाग

जाना, अर्जुन का कौरवी सेना का बहुत वध करना ॥

जब भगदत्त मर गिया तो सौबल शकुनि के पुत्र वृषिक और अचल अर्जुन से लड़ने आये और बड़ी तीव्रता से बाण बरसाने लगे, अर्जुन ने तुरन्त बाणों से वृषिक के रथ, घोड़े सारथी और ध्वजा को काट दिया, वृषिक रथ से हीन हो कर अपने भाई के रथ पर चला गिया, और फिर एक ही रथ से दोनों भाईयों ने बाण बरसाने आरंभ किये, अर्जुन उन बाणों से बहुत घायल हुआ परन्तु उस ने एक ही बाण ऐसा छोड़ा कि दोनों भाई मर कर भूमि पर जापड़े ॥

फिर उन का पिता शकुनि अनेक प्रकार की माया उत्पन्न कर के अर्जुन से लड़ता रहा, परन्तु अर्जुन ने उस की सब माया नष्ट करदी और शकुनि को बाणों से व्यथित कर दिया, यह देख कर शकुनि युद्ध से भाग गया ॥

इस के पश्चात अर्जुन दूसरी कौरवी सेना से युद्ध करने लगा उस के डर से सेना आप ही दो भागों में हो गई, कुच्छ तो द्रोणा चार्य के पास चली गई, और कुच्छ दुर्योधन की शरण में आई, शेष को अर्जुन ने बहुत व्यथित किया, सब रथ और ध्वजा टूट गई हाथी और घोड़े पृथ्वी पर मृतक हो कर गिर पड़े, गीदड़ और अन्य मांसाहारी क्षुद्रजन्तु उच्च स्वर से रो २ कर मांस के लोभ से निकट आने लगे, मनुष्य ऐसे घबराये कि पिता पुत्र की और पुत्र पिता की सुद्ध लेना

भूल गये, शत्रु और मित्र में कुच्छ भेद दिखाई न दिया, और एक ही सेना के शूरवीर परस्पर शत्रुओं का सा आचार करने लगे, इस अन्धकार मय कर्म से बहुत सी सेना निरर्थक मारी गई ॥

बाईसवां अध्याय

--:-*-:--

अश्वत्थामा का राजा नील को मारना, दुर्योधन और द्रोणाचार्य का पाण्डवों से घोर युद्ध होना, अर्जुन का कर्ण के भाईयों को मारना ॥

जब इस प्रकार कौरवी सेना का हनन हुआ तो योधा लोग महा व्याकुल हो कर चारों दिशाओं में भागने लगे, बहुत से लोग द्रोणाचार्य की शरण में गये, पांचाल लोगों का उत्साह बढ़ा हुआ थाँ वह उच्च स्वर से पुकारने लगे कि द्रोणाचार्य को मारो, द्रोणाचार्य को मारो, जब कभी द्रोणाचार्य युधिष्ठर के सन्मुख जाता तो धृष्टद्युम्न ही उस के आगे होता, फिर ऐसा घोर युद्ध हुआ कि बड़े २ बृद्ध भी कहने लगे कि ऐसा युद्ध न कभी सुना है और न देखा ही है ॥

फिर राजा नील अपने प्रकाशमान बाण और धनुष लेकर सेना को मथन करने लगा, उसने बहुत वीरों को और हाथी और घोड़ों को यमपुरी पहुंचाया, उसको देख कर अश्वत्थामा कहने लगा कि अरे नील इन विचारे योधाओं को मथन करने से क्या है! आओ तो मुझ पर बाण बरसाओ, यह सुन कर नील ने उस पर बाण बरसाये फिर अश्वत्थामा ने भल्लों से उस पर प्रहार की और उस के धनुष ध्वजा और छत्र का विध्वंस किया फिर नील ने रथ से कूद कर अश्वत्थामा का शिर काटना चाहा, परन्तु अश्वत्थामा ने शीघ्र ही अपने बाण प्रहारों से उस को यमपुरी में पहुंचा दिया ॥

फिर आचार्य पुत्र से पीड़ा मान पाण्डवी सेना बहुत दुःखित हुई और अर्जुन को याद करने लगी, अर्जुन उस समय दक्षिण दिशा में नारायण नाम संसप्तक दल को मथन कर रहा था। यह देख कर भीमसेन सामने आया। उस ने गुरूजी, कर्ण और दुर्योधन को घेर लिया। अश्वत्थामा भी उस से लड़ने आया, फिर अजातशत्रु युधिष्ठर ने सेना को लड़ने के लिये उद्यम दिया। फिर रथी रथी से, स्वार स्वारों से बहुत भिड़े, शक्ती खड़गों और फरसों का बड़ा भयंकर युद्ध हुआ, हाथियों ने मनुष्यों को पाओं तले मर्दन किया और रुधिर से दांतों को भर कर निर्भय होकर युद्ध में स्वेच्छा चारी हुये! पिता ने पुत्र को, पुत्र ने पिता को मारा, शत्रु और मित्र में कोई भेद न रहा। "हाय

पिता ! हाय पुत्र ! हाय मित्र ? कहां हो ? खड़े रहो ! मत दौड़ो ! किधर जाते हो" यही शब्द चारों ओर से सुनाई देने लगे ॥

सेना पति अपने सहायकों को उच्च स्वर से कहता था शूरवीरो ! शत्रुओं को मारो, भागने न दो । " इस समय अर्जुन संसप्तक दल को विनाश करके वहां आया उस की वानर ध्वजा को देख कर सब कौरवी सेना बहुत भयभीत हुई, अर्जुन अपनी बाण वर्षा से उस सब सेना को तपाने लगा, अपनी भयभीत सेना को देख कर कर्ण सामने आया और कहने लगा कि हे शूरवीरो ! मत डरो, फिर सात्यकि धृष्टद्युम्न और भीमसेन भी कर्ण से लड़ने लगे, अर्जुन ने कर्ण के तीन भाईयों को मार दिया, फिर भीमसेन ने रथ से कूद कर कर्ण के पंद्रह पक्ष वालों को मारा फिर धृष्टद्युम्न ने निषधदेशी बृहच्छत्र और चन्द्रवमा को मारा, फिर सात्यकि और धृष्टद्युम्न दोनों कर्ण पर टूट पड़े और बाणों से मारने लगे ॥

कर्ण की यह दशा देख कर दुर्योधन, द्रोणाचार्य और जयद्रथ उस की ओर बढ़े और कर्ण को वहां से निकाल कर ले गये, पाण्डवों ने जी खोल २ कर बाण बरसाये और अपने सारे पिछले दुखों को स्मरण करके शत्रु को दलन किया, रणक्षेत्र मृतक शरीरों से व्याप्त होगया और बड़ा भयंकर दृश्य दिखाई देने लगा ॥

तदनन्तर सूर्य अस्त होगया और श्रृगाल और वन्य पशुओं ने युद्ध की उपज को समेटने के लिये अपना घोर प्रवेश किया, सब योधा अपने २ निवेश स्थान में रात्रि बिताने के लिये चले गये ॥

तेईसवां अध्याय

—:०—

दुर्योधन का द्रोणाचार्य को उपलम्भ देना द्रोणाचार्य का फिर प्रतिज्ञा करना, अभिमन्यु से युद्ध होना ॥

अपनी सेना की सब प्रकार से पराजय और शत्रुओं की विजय देख कर दुर्योधन ने द्रोणाचार्य से कहा कि हे गुरु जी ! हमने अर्जुन को पृथक भी किया, परन्तु आप की प्रतिज्ञा निष्फल गई, आप ने हम को धोका ही दिया यदि देवता भी होते तो आप युधिष्ठर को पकड़ सकते थे, आप के कारण हमारे इतने वीर पराक्रमी योधा मारे गये, यदि ऐसा ही करना था तो हम से पहिले ही कहते ॥

यह सुनकर द्रोणाचार्य बोले—हे राजन् ! मेरे विषय में ऐसा विचार मत करो, मैं आपका भला ही विचार रहा हूं, अर्जुन से रक्षित युधिष्ठर को देवता भी नहीं पकड़ सकते, अब मैं सत्य कहता हूं कि मैं एक उत्तम रथी को गिराऊगा, मैं उत्तम

व्यूह बनाऊंगा जिसको कि देवता भी तोड़ नहीं सकते, अब आप किसी उपाय से अर्जुन को दूर ले जाओ ॥

यह सुनकर संसप्तकों के समूहों ने अर्जुन को दक्षिण दिशा में बुलाया, फिर अर्जुन का उनसे बहुत भयंकर युद्ध हुआ फिर युधिष्ठिर की आज्ञा से अभिमन्यु द्रोणाचार्य के व्यूह को तोड़ने के लिये चला, उसने बहुत सी सेना मारी परन्तु ६ वीरों ने उसे घेर लिया और वह वहीं मारा गया ॥

यह सुनकर धृतराष्ट्र बड़ा शोक करने लगा और बोला कि हे संजय यह कर्म धर्म के विरुद्ध हुआ बालक को मार कर मेरे पुत्रों ने बड़ा बुरा काम किया, क्या और कोई योधा उनसे लड़ने के योग्य न था, अच्छा बताओ तो विचारे अभिमन्यु को उन्हों ने किस प्रकार मारा ॥

चौबीसवां अध्याय

—:-०-:—

द्रोणाचार्य का सेना का चक्र व्यूह रचना, दुर्योधन का अपने पक्ष वाले योधाओं समेत रण भूमि में आना ॥

संजय ने कहा कि हे महाराज! अभिमन्यु बड़ा पराक्रमी और शौर्य में युधिष्ठिर के समान था, आप स्थिर चित होकर

बांधवों कबड़ नाश का वृत्तान्त सुनो, और अपने चित में उस दुःस्सह दुःख को सहो ॥

आचार्य ने चक्र व्यूह रचा और उसके द्वारों पर तेजस्वी कुमार स्थापन किये। उन सब ने अभिमन्यु से युद्ध करने की अभिलाषा की आप का दर्शनीय पौत्र लक्ष्मण सब का मुखिया बना। फिर राजा दुर्योधन सेना के मध्य में आया, कृपाचार्य, कर्ण और दुशासन से घेरा हुआ। वह इन्द्र के समान शोभा पाता था। उसके सिर पर श्वेत छत्र था और श्वेत ही चमर उसके शिर पर झूल रहा था। राजा जयद्रथ भी उसके साथ ही आकर खड़ा हुआ और अश्वत्थामा को आगे करके आप के तीस पुत्र भी जयद्रथ के पास खड़े हुए, शकुनि और शल्य और कितव यह भी जयद्रथ की रक्षा करने के लिये उद्यत हुये। इस प्रकार सेना को व्यूह कर के जीवन की आशा छोड़ कर सब योधा लड़न को प्रस्तुत हुये ॥

पचासवां अध्याय

—:o:—

युधिष्ठर का द्रोणाचार्य का चक्र व्यूह तोड़ने के असमर्थ होना और अभिमन्यु का चक्र व्यूह तोड़ने का प्रण करना ॥

द्रोणाचार्य के चक्र व्यूह रचने पर पाण्डव अपने महा

रथों के साथ लड़ने को बाहिर निकले, अर्जुन संसप्तकों के साथ लड़ रहा था और उनको छोड़ कर किसी की सामर्थ न थी कि चक्र व्यूह को तोड़ सके, इस लिये द्रोणाचार्य के बाणों से सब व्यथित हो गये ॥

युधिष्ठर सोचने लगा कि अब क्या करना चाहिये? यदि हार गये, तो अर्जुन आकर निन्दा करेगा, इस लिये बड़ी चिन्ता करने लगा, फिर अभिमन्यु, का विचार आया वह यद्यपि बालक था, परन्तु अर्जुन से दूसरे ही स्थान पर था, युधिष्ठर ने उस से कहा कि अभिमन्यु तुम्हारे बिना कोई भी इस व्यूह को नहीं समझ सक्ता, यदि तुम इस को तोड़ सको तो बहुत अच्छी बात है, अर्जुन यहां नहीं है और उस की अनुपस्थिति में यदि हमारी पराजय हो गई तो हमारी बहुत निन्दा होगी, यदि तुम उत्साह करो तो हम सब लोग तुम्हारे पीछे चल कर तुम्हारी रक्षा करेंगे ॥

यह सुन कर अभिमन्यु बोला कि मुझ को आप का कहना सब प्रकार से स्वीकार है, मैं इस व्यूह को तोड़ सकता हूं, यदि मैं न तोडूं तो मैं अर्जुन और सुभद्रा का पुत्र ही नहीं, मैं एक ही रथ से सम्पूर्ण क्षत्रिय मण्डल को आठ २ खण्ड कर दूंगा आप मेरे पराक्रम पर निश्चय रखें ॥

यह सुन कर युधिष्ठर का उत्साह बढ़ा और उस ने अभिमन्यु को अशीर्वाद दी और कहा कि तेरे पराक्रम की

वृद्धि हो, साध्य, रुद्र और मरुत तेरी रक्षा करें, फिर अभिमन्यु ने अपने सारथी सुमित्र को कहा कि मेरे रथ को द्रोणाचार्य की सेना में लेचलो ॥

छब्बीसवां अध्याय

—:०:—

अभिमन्यु का द्रोणाचार्य से युद्ध ॥

सारथी ने अभिमन्यु का रथ शत्रु सेना की ओर चलाया परन्तु इस की बालक अवस्था देख कर कहने लगा कि हे राजन्! आप अभी बालक हो, इस लिये युद्ध में कुशल नहीं हो सकते, आप इस भारी व्यूह को तोड़ने का साहस न करें, अच्छा हो कि आप लौट जायें, मैं आप की अवस्था इस काम के योग्य नहीं देखता हूं ॥

अभिमन्यु ने हंस कर कहा कि मुझे कोई भय नहीं मैं अर्जुन का पुत्र और श्रीकृष्ण का भानजा हूं, यह तो मनुष्यों की सेना है, साक्षात् इन्द्र भी ऐरावत पर चढ़ कर आये तो मैं उस को जीत लूंगा। इस लिये तुम इस बात की चिन्ता मत करो। मेरे मन में किञ्चित भी भय नहीं है। आप रथ के चलाने की चिन्ता करें। मैं तो शिवजी से भी नहीं डरता ॥

बालक अभिमन्यु के यह वचन सुन उत्साहित हो कर सुमित्र रथ को उड़ाता हुआ आगे बढ़ा, अभिमन्यु ने द्रोणाचार्य के चक्रव्यूह को तोड़ा और उस की सेना में जा घुसा, वहां जाकर बेधड़क हो कर चारों ओर बाण फैंकने लगा, उस के तीक्षण बाणों से सेना बहुत व्याकुल हो गई और सब योधा आश्चर्य युक्त होकर इधर उधर भागने लगे अभिमन्यु ने अनेक शिर काटे भुजायें तोड़ीं और हाथी घोड़ों को दलन किया, उस प्रहार से रण क्षेत्र में बहुत से रुण्ड मुण्ड दिखाई देने लगे, रुधिर की नदियां बहने लगीं और भूमि मृतक शरीर से भर गई, द्रोणाचार्य और सब कौरव बालक अभिमन्यु का ऐसा पराक्रम देख कर आश्चर्य युक्त हो गये। दुर्योधन की तीन अंगों वाली सेना ऐसी मथन हुई जैसे कि शिवजी से असुरों का दल। उस समय अभिमन्यु ऐसा शोभा देता था जैस देवताओं का सेनापति कार्तिक ॥

सताईसवां अध्याय

—:०:—

दुर्योधन का आक्रमण, अन्य राजाओं का उस को छुड़ाना अश्मक का मारा जाना। शल्य के छोटे भाई का मारा जाना और सब कौरवी सेना का भागना ॥

अभिमन्यु के आश्चर्य युक्त कर्मों को देख कर सब कौरवी सेना भय से कंपायमान होगई, तब दुर्योधन क्रोध करके आगे बढ़ा और अभिमन्यु से युद्ध करने लगा, अभिमन्यु ने तीरों की वह बोछाड़ की कि दुर्योधन घबरा कर अचेत सा होगया द्रोणाचार्य ने सब राजाओं को आज्ञा दी कि दुर्योधन की रक्षा करें, यह देख कर अश्वत्थामा, कृपाचार्य, कर्ण, कृतवर्मा, शकुनि, बृहद्बल, शल्य, भूरिश्रा, पौंखादि सब योधा तीक्ष्ण बाण चलाते हुए अभिमन्यु से लड़ने लगे, उन्हों ने अभिमन्यु से युद्ध आरम्भ करके दुर्योधन को छुड़ाया, वीर अभिमन्यु उस को छूटा हुआ जान कर बड़े क्रोध से उन राजाओं से लड़ने लगा और सब के मुखों को मोड़ दिया॥

फिर अभिमन्यु ने सिंहनाद किया, क्षत्रियों ने बहुतेरे बाण वर्साये, परन्तु अभिमन्यु ने सब को घायल किया और कौरवी सेना के समुद्र का किनारा बन गया, यह देख कर अश्मक राजा शीघ्र गामी घोड़ों से रथ को चलाता हुआ आगे बढ़ा और बड़े वेग से अभिमन्यु को बाण मारने लगा, अभिमन्यु ने कहा ठहिर २ तेरा प्रबंध अभी करता हूं।" यह कह कर और मुसकराते ही उस ने दश बाणों से अश्मक को गत प्राण किया, उस के मरते ही कौरवी सेना भागने में प्रवृत्त हुई॥

फिर कृपाचार्य, द्रोणाचार्य, कर्ण, विविंशती, अश्वत्थामा, गान्धाराज, सुषेण, कुण्डभेदि, प्रतर्दन, वृन्दारक, लालित्य, सुबाहु दीर्घलोचन इत्यादि क्रोध में आकर अभिमन्यु पर टूट पड़े परन्तु

उसने कर्ण को तो आते ही लिया, वह विचारा अभिमन्यु के बाणों से ऐसा कम्पायमान हुआ जैसे कि भूकंप होने से पर्वत कम्पायमान होता है, फिर कौरवों ने बहुत बाण चलाये अभिमन्यु सेना के मध्य में जाल हाथ में लिये हुये काल की भान्ति प्रतीत होता था, फिर शल्य आगे बढ़ा परन्तु अभिमन्यु ने उसे अपने पिता के मामे का भी मुख मोड़ दिया, यह देख कर कौरवों के वीर ऐसे भागे जैसे सिंह को देख कर गीदड़, अभिमन्यु ने देवता, पितर, चारण और यक्षों से कीर्ति पाई और अग्नि के समान प्रकाशमान हुआ ॥

अपने बड़े भाई की यह दशा देख कर शल्य का छोटा भाई मारे लज्जा के रोमाञ्चित होगिया, और क्रोध करके अभिमन्यु से लड़ने आया, उस ने आते ही अभिमन्यु को बुलाया कि छोकरे ठहिर जा, तब अभिमन्यु उस की ओर झुका, और सहिज ही उस के सारथी और घोड़ों को मार उस के रथ को तोड़ और उस के शिर को काट कर उस को यम पुर में भेजने वाला हुआ, विचारा शल्य का भाई इतनी देर युद्ध भी न कर सका जितनी देर कि उसे का क्रोध भड़का था, यह देख कर उस की सेना महा भयातुर हो दिशाओं को भागी, परन्तु जो उत्साही लोग थे उन का क्रोध और भी बढ़ा और वह अपना नाम, गोत्र और कुल बता २ कर अभिमन्यु से लड़ने लगे अभिमन्यु देर तक लड़ता रहा और नाना प्रकार के अस्त्र और शस्त्रों का

प्रयोग करता रहा, उस की कीर्ति ने कौरवी सेना के हृदय को कंपायमान कर दिया, यह अस्त्र फैंकता हुआ साक्षात् श्रीकृष्ण ही दिखाई देता था, उस के आगे सब कौरवी सेना खण्ड २ हो कर भाग गई ॥

अठाईसवां अध्याय

—:-०-:—

दुर्योधन की द्रोणाचार्य को धर्षना, दुश्शासन का अभिमन्यु से युद्ध । कर्ण का हारना, पाण्डवों का प्रसन्नता के वाजे बजाना ॥

यह देखकर दुर्योधन द्रोणाचार्य से कहने लगा कि हे भरद्वाज! आप अज्ञानता से स्नेह वश होकर अभिमन्यु को नहीं मारते आप के सामने इस की सामार्थ क्या है परंतु वह आप के शिष्य अर्जुन का पुत्र है शिष्यों म पुत्रत्व तो होता ही है इसी विचार से अब तक आपने अभिमन्यु को छोड़ा है परंतु आप यह नहीं जानते कि जो शस्त्र पहिन कर संमुख लड़ने आजाये वह शिष्य भी शत्रु हो जाता है इस लिये अब मैं तो आप की विजय से निराश हो रहा हुं ॥

यह सुन कर दुशासन बोला कि द्रोणाचार्य के लड़ने के विचार छोड़ दो अब मैं अभिमन्यु से लड़ने जाता हूं देखूं तो वह छोकरा मेरे सामने कैसे ठहर सकता है दुशासन यह कह कर

अभिमन्यु के सामने गया और उस को युद्ध के लिये पुकारने लगा, अभिमन्यु बोला कि चाचा जी मैं ही आप का घमण्ड तोडूंगा, आपने बहुत दुष्ट वचन मेरे पिताओं को कहे हैं और मेरे ताऊ भीमसेन ने आप के मारने की प्रतिज्ञा भी की हुई है, यदि तुम मेरे सामने ठहर गये तो अवश्य ही अपने ताऊ की प्रतिज्ञा को पूरा कर के उस को अनृण करूंगा ॥

यह कह कर अभिमन्यु दुशासन से लड़ने लगा! दोनों ओर से तीरों की बोछाड़ हुई, परंतु अभिमन्यु के बाणों से दुशासन ऐसा पीड़ित हुआ कि वह छिप कर रथ के भीतर बैठ गया और अचेत होकर गिर पड़ा, दुर्योधन उस को अचेत देख कर रथ को दूर ही निकाल कर लेगया, यह देख कर पाण्डवी सेना ने पाण्डव मृदंग, दुंदुभी, क्रकच और झर झर आदि बाजे बजाये और आकाश सिंहनादों से भर गया ॥

दुशासन को हारे हुये देख कर दुर्योधन भी बड़ी चिन्ता करने लगा और कर्ण से पूछने लगा कि अब क्या करना चाहिये? कर्ण नें कहा कि अब मैं अभिमन्यु से युद्ध करूंगा, कर्ण को रण भूमि में अभिमन्यु के सन्मुख आया हुआ देख कर सब वीर पाण्डव उसकी रक्षा करने लगे परन्तु न तो द्रोणाचार्य और न ही कर्ण उसके युद्ध के वेग को रोक सके, कर्ण ने अपने बाणों समूहों से उसको घायल किया और गुदाग्रंथि वाले बाण भी छोड़े परन्तु बालक अभिमन्यु ने उन सब को काट

दिया और यहां तक बल किया कि एक ही बाण से उसके धनुष और ध्वजा को काट कर पृथ्वी पर गिरा दिया ॥

कर्ण की आपत्ति देख कर उसका छोटा भाई आगे बढ़ा और अभिमन्यु से लड़ने लगा, तब पाण्डवों ने बाजे बजाये और सिंह नादों से आकाश को गूंजा दिया, यह सुन कर धृतराष्ट्र बोला कि हे संजय ! मैं अपने पौत्र अभिमन्यु के इस विचित्र पराक्रम को सुन कर बड़ा प्रसन्न हुआ हूं। और शोक भी करता हूं कि मेरे पुत्रों की अनीति के कारण पाण्डव महात्मा ऐसे दुःखित हुए ॥

उनतीसवां अध्याय

—:०:—

कर्ण के भाई का मारा जाना, कौरवी सेना की दुर्दशा, जयद्रथ का पाण्डवों को रोकना और अभिमन्यु से युद्ध करना ॥

संजय ने कहा कि हे राजा धृतराष्ट्र जी महाराज ! कर्ण के भाई ने छुटते ही अभिमन्यु पर बहुत तीर बरसाये उसको देख कर कौरवी सेना में तनक साहस आया। परंतु यह उत्साह थोड़ी देर तक ही रहा अभिमन्यु ने एक ही बाण से उस बिचारे का शिर काट दिया और वह भूमि पर रुण्ड

होकर गिर पड़ा, यह देख कर कर्ण ने लड़ने का साहस किया परंतु निरुत्साह होकर भागा, उसके साथ ही और भी कौरवी सेना भागी, अभिमन्यु ने पीछे जा २ कर सब का ऐसा सत्या नाश किया कि जिसको देख कर बड़े २ योधा भी कांपने लगे । उस समय कौरवी सेना में बड़ा हाहाकार मचा, और सेना के लोग एक दूसरे को रौंदते हुए घबराहट में पड़ कर इधर उधर दौड़ने लगे ॥

फिर आप का जमाई जयद्रथ युद्धाभिलाषी हो कर अभिमन्यु से लड़ने आया, पाण्डव यह देख कर अभिमन्यु की सहायता के लिये आगे बढ़े । परन्तु सिंधु नरेश जयद्रथ ने किसी को भी आगे बढ़ने न दिया और वहीं का वहीं रोक दिया ॥

यह सुन कर धृतराष्ट्र ने कहा कि मैं आश्चर्य करता हूं, कि जयद्रथ ने पाण्डवों को रोक लिया ! भला संजय इस का कारण तो बताओ ! संजय ने कहा कि हे राजन् ! भीमसेन से पराजित हो कर और द्रौपदी हरण के युद्ध में अत्यंत निन्दित हो कर जयद्रथ ने ईश्वर की आराधना के लिये अत्यंत यत्न किया, जब वह घोर तपस्या कर चुका तो रुद्र महाराज बहुत प्रसन्न हो कर बोले कि क्या वर मांगते हो जयद्रथ ने कहा कि मैं युद्ध में पाण्डवों को रोकूं, शिवजी ने कहा कि अच्छा अर्जुन को छोड़ कर इतर पाण्डवों को तुम अवश्य रोकोगे ॥

इसी वर के प्रताप से बलवान जयद्रथ सब पांडवों को जो अभिमन्यु की सहायता के निमित्त आये थे रोकने में समर्थ हुआ उस के धनुष की टंकार से पांडवों को बड़ा भय हुआ और कौरव प्रसन्नता से फूल कर उछलने लगे ॥

फिर उस ने जिस २ स्थान को अभिमन्यु ने तोड़ा था पूर्ण किया, फिर उस ने सात्यकी, भीमसेन, धृष्टद्युम्न, विराट, द्रुपद, शिखण्डी और केकयों को अनेक बाणों से घायल किया, फिर उस ने युधिष्ठर पर बाण बरसा कर उस को भी विह्वल किया, युधिष्ठर ने उस के धनुष को काटा. परंतु जयद्रथ ने झट ही नया धनुष ले लिया फिर भी भीमसेन ने उस के दूसरे धनुष का काटा, परंतु उसने एक ही क्षण में नया धनुष ले लिया ॥

तब जयद्रथ ने भल्लों से भीमसेन का रथ तोड़ कर उस के घोड़ों को गिरा दिया परन्तु भीमसेन कूद कर सात्यकी के रथ पर जा चढ़ा, फिर जयद्रथ अभिमन्यु को रोकने के लिये उस के मार्ग में गया, पांचालों और मत्स्य देशियों ने अभिमन्यु का साथ दिया, परन्तु जयद्रथ को जीत न सके फिर जयद्रथ अभिमन्यु के अन्य सहायकों को रोकने लगा ॥

अभिमन्यु फिर आगे बढ़ा और वृषसेन से युद्ध करने लगा थोड़े ही काल में उस ने वृषसेन के घोड़ों को घायल कर दिया परन्तु सारथी ने ऐसा उत्साह किया कि रथ को

लेकर दूर निकल गिया फिर विशातप सन्मुख हुआ, बालक अभिमन्यु ने विशातप के हृदय में ऐसा बाण मारा कि वह निर्जीव हो कर भूमि पर गिर पड़ा फिर सब क्षत्रिय मायों को छोड़ कर लड़े, और अभिमन्यु के हाथ से मारे गये, खड़ग, पट्टिश, अंगुलीचारग और फरसे समेत भुजायें इधर उधर लड़कती हुई दिखाई देने लगीं, टूटे हुये कवच, ढाल, हार, मुकुट, छत्र, चमर, अधिष्ठान, ईशा दण्ड, कन्वघ, अक्ष चक्र और जूओं से पृथ्वी व्याप्त हो गई, नाना प्रकार के विजय आभिलाषी क्षत्रियों के मृतक शरीरों से वर्तमान युद्ध भूमि भयानक दीखने लगी, सब दिशाओं में घूमते हुये और धूल उड़ाते हुये अभिमन्यु का रूप गुप्त हो गिया ॥

तब अभिमन्यु कौरव दल में फिर घुसा और जाते ही सत्यश्रवस पर प्रहार किया, वह विचारा इस प्रकार मर गया जैसे सिंह के प्रहार से गीदड़ ॥

तीसवां अध्याय

—:o:—

अभिमन्यु का रुक्मरथ को मारना, तेजकुमारों का उस को रोकना, अभिमन्यु का मायां प्रकट करना, फिर दुर्योधन का लड़ने आना और हार कर युद्ध से भागना ॥

अभिमन्यु ने प्राण हरने वाले काल के समान कौरवी सेना की आयु को हरा, सत्यश्रवस के मरने पर महारथी शीघ्र आगे बढ़ और अभिमन्यु से लड़ने गये, उस ने उस सारे क्षत्रिय दल को आधीन किया ॥

फिर मद्र देश के राजा शल्य का पुत्र रुक्मरथ उस पराजित सेना को विश्वास देने लगा और कहने लगा कि जब तक मैं जीता हूं अभिमन्यु कौरवों को दुःख नहीं दे सकता, मर गया तो दैव इच्छा, अब मैं उस से युद्ध करूंगा, हे शूरवीरो! भय मत करो, मेरी विद्यमानता में कोई भय नहीं, देखो मैं अभी इस को पकड़ता हूं ॥

यह कह कर रुक्मरथ ने उस पर धावा किया और तीन तीन बाणों से उस की छाती पर दाहिने और बायें पार्श्वों पर घायल किया इस के पीछे सिंहनाद करके गर्जा और पुकारा कि खड़ा रहो! खड़ा रहो! परंतु वह अर्जुन रूपी सिंह का बच्चा था वह रुक्मरथ को क्या समझता था उस ने शीघ्र ही अपने बाणों से रुक्मरथ का शिर काट कर भूमि पर गिरा दिया ॥

फिर तेज कुमार आये उन्हों ने अपने बाणों से अभिमन्यु को शीघ्र ही ढक दिया, उस समय अभिमन्यु दृष्टि से गुप्त हो गया यह देख कर दुर्योधन बड़ा प्रसन्न हुआ अभिमन्यु ऐसा शोभायमान हुआ जैसे कि टिड्डी दल से ढका हुआ सूर्य, फिर अभिमन्यु ने अस्त्रास्त्रों को लेकर ऐसी माया प्रकट की कि एक अभिमन्यु

के कई अभिमन्यु दिखाई देने लगे फिर तो अभिमन्यु ने सब राजाओं के शिरों को पकड़ २ कर काटा वह शिर भूमि पर इस प्रकार लुड़कने लगे जैसे कि ताल वृक्ष से गिरा हुआ नारियल ॥

यह देख कर दुर्योधन निराश हो कर भयभीत हो गया और शीघ्र ही अभिमन्यु के सन्मुख जा डटा एक क्षण भर तो उस से बड़ा युद्ध करता रहा परंतु अंत को मुख फेर गिया, फिर अश्वत्थामा, कृपाचार्य, बृहद्बल, शकुनि, कर्ण, कृतवर्मा यह सब मिल कर उस से लड़ने लगे, परंतु बाण खा २ कर भागे आप का पौत्र लक्ष्मण अकेला ही आगे बढ़ा, दुर्योधन उसके पीछे गया, परंतु बाण खाकर लौट आया, अभिमन्यु अकेला लक्ष्मण को बोला कि लोक का दर्शन करलो, मैं तुम को परलोक में पहुंचाता हूं ॥

फिर वह दोनों शूरवीर बालक बहुत भिड़े, अंत को अभिमन्यु ने लक्ष्मण का शिर काट लिया, लक्ष्मण के मरने पर कौरवी सेना रुदन करने लगी, दुर्योधन को बड़ा क्रोध आया और वह बहुत से क्षत्रियों को लेकर उस से लड़ने गया, उस ने क्राथ के पुत्र को मार गिराया, तब तो सब क्षत्रिय भयभीत होकर हट गये ॥

इसके पीछे और बहुत से क्षत्रिय सामने आये, जिन में अश्वत्थामा, द्रोणाचार्य और कृपाचार्य भी थे परंतु अभिमन्यु ने सब को हटा दिया, वृंदारक को तो वहीं चित किया फिर कौशल देश का बृहद्बल आगे बढ़ा और वहीं मारा गया

अभिमन्यु क्षत्रियों का नाश कर के शत्रु सेना में चारों ओर घूमने लगा, किसी को साहस न था कि उसके आगे लड़ने को आवे, फिर कर्ण ने उसको अपने बाणों से घायल किया परंतु कर्ण को उसने भी अत्यंत ही पीड़ित कर के लौटाया और उसके छः मंत्रियों को मार दिया ॥

फिर अभिमन्यु ने राजा मगध के तरुण पुत्र अश्वकेतु को मारा और फिर ध्वजा में हाथी का चिन्ह रखने वाले राजा मार्तिका वर्तिक भोज को क्षुरप्र से पीड़ित किया ॥

इकतीसवां अध्याय

—:o:—

अभिमन्यु के सर्व नाशक युद्ध से भयभीत कौरवों का उसको मारने के निमित्त विचार, अभिमन्यु को विरथ करना ॥

जब अभिमन्यु इस प्रकार युद्ध कर के सब को नाश करने लगा और कौरवी सेना उस से मर्दित होकर चारों ओर भागने लगी, तो कौरव लोग आपस में विचार करने लगे कि इस को किसी प्रकार मारना चाहिये, दुर्योधन ने कहा कि अकेले २ तो यह हम सब को मारता है, इस को इकट्ठे मिल कर मारो, फिर कर्ण द्रोणाचार्य से पूछने लगा

कि आप बताईये अभिमन्यु कैसे मर सकता है, द्रोणाचार्य ने कहा कि इस का छिद्र देखो, मुझे तो इस का धनुष मण्डल ही दिखाई देता है, यदि इस का कोइ छिद्र मिल जाये तो इस को मार सकते हैं, मैंने इस के पिता को कवच लगाना सिखाया हुआ है, उसी प्रकार यह भी कवच धारण करता है इस लिये इस का कवच टूट नहीं सकता, मैं अभिमन्यु और अर्जुन में कोई अंतर नहीं देखता हूं। कर्ण बोला कि यद्यपि अभिमन्यु ने मुझ को मारा है तो भी मैं युद्ध को छोड़ कर नहीं जासकता, परंतु मेरे हृदय को बहुत पीड़ा है, द्रोणाचार्य बोला कि इस के धनुष और प्रत्यंचा को काटना संभव है परंतु अच्छी रीति से चलाये हुए बाणों से ही, इस के घोड़े सारथी और पृष्ठ रक्षक भी मर सकते हैं, इस लिये यदि तुम इस को मारना चाहते हो तो ऐसा करो, फिर इस के मुख को फिरवा देना तो वह साधारण युद्ध में हार सकता है ॥

द्रोणाचार्य की यह आज्ञा पाकर कर्ण ने सब क्षत्रियों को इकठा किया और अभिमन्यु का सामना किया, अभिमन्यु ने सात बाणों से दुशासन के पुत्र को मारा फिर अभिमन्यु ने अश्वत्थामा और शल्य को घायल किया और शत्रुंजय. चंद्रकेतु, मेघवेग, सुवर्चस और सूर्याभास को मार कर गिरा दिया, शकुनि उस के बाणों से पीड़ित होकर हाहाकार करने लगा, शकुनि ने दूर्योधन को कहा कि अब अभिमन्यु को मारने का कोई शीघ्र ही उपाय करना चाहिये ॥

तब कर्ण ने मस्तक बाणों से अभिमन्यु के धनुष को काटा, भोज ने उस के घोड़े को मारा और कृपाचार्य ने पृष्ठ रक्षक और सारथी को मार गिराया, इस के पीछे अन्य छः महारथियों ने उस को बाणों से ढक दिया, रण वीर अभिमन्यु इस प्रकार सारथी और घोड़ों के मारे जाने पर तलवार ले कर भूमि पर आया और रण में सिंह की भांति घूमने लगा फिर द्रोणाचार्य ने चुरप्र से मुष्टि समेत उस की तलवार को गिराया और कर्ण ने उस की ढाल को तोड़ा ॥

इस प्रकार आकाश से पृथ्वी पर गिरा हुआ क्रोध युक्त अभिमन्यु रथ चक्र का उठाकर द्रोणाचार्य की ओर दौड़ा। उसके रुद्र रूप को देख कर सब क्षत्रिय भयभीत हुए ॥

बत्तीसवां अध्याय

—:०:—

अभिमन्यु का गदा युद्ध में अनेक शूरवीरों को मारना और फिर दुशासन के पुत्र के हाथ से मारा जाना ॥

फिर क्षत्रियों ने तीनों के प्रहार से उसके चक्र को काटा। चक्र से विरोहित अभिमन्यु ने गदा हाथ में ली, पहिले तो उसने अश्वत्थामा ही पर प्रहार किया। अश्वत्थामा अपने रथ पर तीन चरण पीछे हट गया, यह देख कर अभिमन्यु

ने उसके घोड़ों और सारथी को मार दिया और पृष्ठ रक्षक का भी नाश किया। फिर [illegible] के पुत्र के पीछे चला और उस कालिकेय नाम शकुनि पुत्र को मारा। कालिकेय को मरा देख कर सब गंधारी अभिमन्यु पर टूट पड़े, अभिमन्यु ने सतल मनुष्यों को वहीं मार गिराया फिर दशरथी विशातप लड़न लगे, अभिमन्यु न दशरथों को तोड़ दिया, फिर केकेयों के सात रथों को मारा॥

इस के पीछे दुःशासन का पुत्र गदा उठा कर उस की ओर दौड़ा और कहने लगा कि ठहिर जा! दोनों वीर परस्पर मारने लगे, दुःशासन के पुत्र ने गदा से अभिमन्यु का सिर फोड़ दिया और वह अचेत हो कर भूमि पर गिर पड़ा, हे राजन्! इस प्रकार गिर कर वह शत्रुओं के मारने वाला बलवान योधा निश्चेष्ट होकर भूमि पर गिर पड़ा, उस के गिरते ही सब कौरवों ने उस को चारों ओर से घेर लिया, और बड़ा आनन्द करने लगे परन्तु सब का अन्तः करण यही कहता था कि द्रोणादि छः रथियों ने अभिमन्यु को अधर्म ही से मारा है॥

धर्म राज युधिष्ठर की सेना अभिमन्यु को मरा हुआ देख कर भागने लगी, परन्तु युधिष्ठर न सब को आश्वास दे कर पुकारा कि भय मत करो परारब्ध से अभिमन्यु मारा गया उस ने युद्ध में पीठ नहीं दिखाई, वह अब सीधा स्वर्ग को जायगा, उस ने दश हजार शूर वीरों को यम लोक में

पहुंचाया है, और पीठ न दिखाता हुआ रण में अधर्म से मारा गया है अब इन्द्र लोक उसी का है, हम को उसी प्रकार का कर्म करते हुये युद्ध में आरूढ़ होना चाहिये, इस लिये आप सब लोग अपने २ स्थान पर नियत हो जाओ, हम निश्चय शत्रुओं को विजय करेंगे ॥

तेतीसवां अध्याय

—:०:—

संजय का युद्ध भूमि का वर्णन करना और युधिष्ठर का विलाप ॥

संजय ने धृतराष्ट्र को कहा कि हे महाराज ! वह युद्ध भूमी चारों ओर मृतक शरीरों से व्याप्त दिखाई देती थी, हाथी घोड़े और मनुष्यों की देहों को शृगाल और गिद्ध घसीट २ कर खाने और खालों को उतार कर भयंकर दृश्य बनाने लगे रुधिर के बहिने से भूमि रक्त वर्ण होगई, टूटे हुये रथों की तो कुछ गणना ही न थी, अभिमन्यु ने ऐसा नाश किया कि कौरवी सेना उसको मार कर भी व्यथित चित ही रही ॥

इतने में संध्या हो गई और लोग उस महा भयंकर कर्म को छोड़ कर अपने २ डेरों में आये हमने कई लोगों को अपने मृतक बान्धवों का शोक करते देखा, पाण्डव अभिमन्यु के मरने पर

बड़ा शोक करने लगे, युधिष्ठिर तो बहुत ही व्याकुल हो कर करुणा वचन से विलाप करने लगा और कहने लगा कि हाय मैं कैसा निर्बुद्धि हूं कि युद्ध के लिये मैंने बालक को भेज दिया वह अभिमन्यु जो कि हमारे घर की शोभा था और जिसको कि सुंदर वस्त्र और आभूषण पहिनां कर अछे २ उत्सवों पर घोड़े पर स्वार करा कर बाहिर भेजना चाहिये थे, हमने युद्ध में भेजदिया सच है अर्थी दोषों को नहीं जानता, वह तो लोभ और मोह के वश होता हुआ यही चाहता है कि मेरा काम बन जाये, इसी प्रकार मैंने भी मधु की लालसा से मधु मक्खियें का विचार न किया ॥

अब मैं अर्जुन और सुभद्रा को यह अप्रिय समाचार कैसे दूंगा, कदाचित अर्जुन हम से रोष करे और हम सब को भस्म करदे, वह महा बली, तेजस्वी, मानी, सत्य पराक्रमी बीर लज्जावान और क्षमावान है, उसके कर्मों की देवता लोग भी प्रशंसा करते हैं, उसने बड़े २ दानवों और राक्षसों को मार कर देवताओं को कृतज्ञ किया है, बड़ा शोक है कि उसका यह पुत्र हम से रक्षित नहीं हुआ ॥

बड़े शोक की बात है कि अभिमन्यु मारा गया, अब यदि हमारी विजय भी हो गई तो क्या हुआ जिसके लिये हम ने युद्ध आरंभ किया था, वह तो शत्रु को पीठ न दिखाता हुआ और उनके व्यूहों को छेदन भेदन करता हुआ इन्द्र लोकों को चला गया, अब न तो राज्य, न देवता रूप होना

न देवताओं के साथ सालोक्यता रखना भी मुझे अच्छा लगता है ॥

इस प्रकार युधिष्ठर के विलाप करने पर भगवान् कृष्ण द्वपायन पास आये। युधिष्ठर ने सत्कार पूर्वक आसन दिया और अभिमन्यु की मृत्यु का खेद युक्त समाचार कह सुनाया, युधिष्ठर ने कहा हे व्यास जी! पुत्र मरण से अधिक कोई शोक नहीं है! व्यास जी बोले हे युधिष्ठर मनुष्य प्रारब्ध से ही यह फल पाता है और अपने कर्मों के द्वारा ही नाश को प्राप्त होता है, आप को इस विषय पर शोक करना ठीक नहीं आप बड़े पंडित और ज्ञानी हैं, युधिष्ठर ने कहा कि अभिमन्यु अधर्म युद्ध में मारा गया है, मैंने ही उसको कहा था कि तुम हमारे लिये व्यूह का भेद न करो, परन्तु हम को तो जयद्रथ ने रोक लिया और अभिमन्यु अकेला ही शत्रु सेना में प्रवेश कर के अनेक वीरों को मार कर मरा। उसके शोक में मैं महा व्याकुल हूं, और मुझ को वारंवार भी चिन्ता करते हुए शांति नहीं आती आप मुझे बतईये, कि मृत्यु कहां से आती है? कौन मृत्यु पाता है? और किस प्रकार यह संसार का हनन करती है? आप देवताओं के समान हमारे पिता महा हैं, इस लिये मुझे इन सारे प्रश्नों का उत्तर दें ॥

चौतीसवां अध्याय

—:-*-:—

व्यास जी का मृत्यु का रूप वर्णन करना ॥

व्यास जी बोले कि हे राजन्, इस विषय पर मैं आप को एक पराचीन इतिहास जो नारद जी ने सुनाया था बताता हूं, आप ध्यान दे कर सुनें। कहते हैं कि सत्युग में अकंपन नाम एक राजा हुआ है, एक बार बलवान शत्रुओं ने उस पर आक्रमण किया और बहुत सेना से उस को घेर लिया, अकंपन का पुत्र बड़ा शूरवीर और बलवान था, शत्रुओं ने उस को घेर कर मार दिया ॥

अकंपन को इस से बड़ा शोच हुआ और अपने पुत्र का अन्त्येष्टि कर्म कर के वह शोक चिन्ता में निमग्न हुआ ॥

उस को इस प्रकार शोक सागर में निमग्न देख कर नारद जी आये, राजा ने बहुत सत्कार किया और विधिवत पूजा करके आसन दिया, तब राजा ने अपने पुत्र की मृत्यु का सारा वृत्तांत सुनाकर नारद जी से पूछा कि हे भगवन्! यह मृत्यु क्या है? और किस प्रकार यह मनुष्यों को भस्म करती है? नारद जी ने कहा कि हे राजन्! मैं आप से एक प्राचीन आख्यान वर्णन करता हुं सुनो ॥

पूर्वकाल में जब संसार में बढ़ती के कारण पृथ्वी पर बहुत भार होगया, तो पति व्रता देवी पृथ्वी श्री ब्रह्मा जी के पास जाकर कहने लगी । कि हे भगवन्, मैं इस बोझ को सहार नहीं सकती आप मेरे भार का हलका कीजिये । पृथ्वी के इस वचन को सुन कर और उस की विपद्ग्रस्त दशा का विचार करके ब्रह्मा जी ने क्रोध किया जिस से उन की कर्ण छिद्र से वैश्वान अग्नि उत्पन्न हुई उस अग्नि से संपूर्ण सृष्टि ढक गई और चर अचर सब प्राणी जंगम और स्थावर पीड़ा पाने लगे उन को पीड़ित देख कर रुद्र रुप शिवजी प्रकट हुए और श्री ब्रह्मा जी से कहने लगे कि हे भगवन् क्षमा कीजिये आप ने क्रोध किया है जिस से सब प्राणी दुःख पाते हैं आप सब के पितामह और आदि करता हैं आप को ऐसा क्रोध करना उचित नहीं क्षमा करो ! हे नाथ ! क्षमा करो । हे भगवन् ! सब जगत भस्म होने लगा है, आपने जगत को उत्पन्न किया और जीवों का पोषण किया उन के नाश को देख कर मैं नहीं सह सकता हूं ॥

यह सुन कर ब्रह्मा जी ने कहा कि मैं जीवों को नाश करना नहीं चाहता, मैंने केवल पृथ्वी के हित के लिये क्रोध किया था ! पृथ्वी ने बार बार मुझ से प्रार्थना भी की थी कि इस संसार को मारो, परंतु मुझे इस के मारने का कोई उपाय दिखाई नहीं दिया था इस कारण मुझे क्रोध आया । शिवजी बोले कि हे भगवन् ! क्रोध मत कीजिये

प्रसन्न हूजिये। सब जगत को प्रकट कीजिये। देखो आप के क्रोध रूप अग्नि से पर्वत, वन शिखर, नदि, तड़ाग और स्थावर जगत सब संसार भस्म हो रहा है, हे भगवन्! आप इस अपने तेज को फिर अपने में ही लय कीजिये यही वर मैं आप से मांगता हूं॥

शिवजी के बारं बार इस प्रकार की प्रार्थना करने पर ब्रह्माजी ने उस क्रोध रूपी अग्नि को फिर अपने अन्तरात्मा में लीन किया और फिर संसार की उत्पत्ति सम्बन्धि और मोक्ष सम्बन्धि कर्मों का विस्तार किया तब ब्रह्माजी की सब इन्द्रियों से एक स्त्री उत्पन्न हुई, उसका कृष्ण रक्त और पिंगल वर्ण था और जिह्वा और नेत्र रक्त थे, वह स्त्री सुन्दर आभूषण और वस्त्र रखती हुई उन दोनों देवताओं के सन्मुख हो कर दक्षिण दिशा में स्थित हुई॥

तब ब्रह्मा जी ने उस को कहा कि देवी तेरा नाम मृत्यु है तू सब सृष्टियों का नाश कर, बुद्धि नाश का हेतु है इसी नाश के कारण तू मेरे क्रोध से उत्पन्न हुई है, इस लिये तू सब जड़ और चेतन को नाश कर, तेरा कल्याण होगा। यह सुन कर अबला मृत्यु रोने लगी। ब्रह्मा जी ने उस के आंसुओं को अपने हाथों में ले कर उस को धीर्ज दी और कहा कि मत रो॥

दुःखित हुई २ मृत्यु ब्रह्मा जी से कहने लगी कि हे पिता! मैं आप से उत्पन्न भी हुई सृष्टि को कैसे मार सक्ती

हूं। मैं अवला हूं। यह निर्दयता का कर्म कर नहीं सक्ती मैं अधर्म से डरती हूं, जिन स्त्रियों के प्रिय पुत्र, भाई और अन्य संबंधी मारे जायेंगे वह अपने अश्रु पातों से मुझ को भयभीत करके शाप देंगी। हे भगवन्! महा अप्रिय कर्म मुझ से नहीं हो सक्ता, हे भगवन्! मैं भयभीत आप की शरण में हूं, मैं यम राज के भवन में नहीं जा सक्ती। हे श्रेष्ठ देवता! आप प्रसन्न हों और मुझ को तप करने की आज्ञा दें, मैं धेनक नाम आश्रम को जाऊंगी॥

ब्रह्मा जी बोले कि हे मृत्यु! तू इसी लिये इस संसार में उत्पन्न हुई है, जाओ सब सृष्टि को जाकर मारो, यह मेरी इच्छा है, इसी प्रकार होगा इस से विपरीत नहीं हो सकता, लोक तुम्हारी निन्दा करें परन्तु तू मेरे हित की बात कर, ऐसा करने में तुझे अधर्म नहीं होगा, यह सुनकर मृत्यु ने हाथजोड़ दिये और चुप हो गई उस के चुप होने पर ब्रह्मा जी का क्रोध जाता रहा और वह मंद २ मुसकराने लगे जगत के सब पदार्थ पहिले की भांति फिर प्रकट हो गये परन्तु मृत्यु जगत का उपकार चाहती हुई नाश कर्म में प्रवृत्त न हुई, और ब्रह्मा जी के सामने से चली गई॥

पहिले मृत्यु धेनुकाश्रम में गई और बड़ी उग्र तपस्या करने लगी फिर सात पवित्र वनों में एक चरन से खड़ी रही फिर मृगों के साथ भ्रमण करती रही फिर नन्दा तीर्थ पर गई, फिर

कौशकी नदी पांचो गंगा वेतसक आकाश गंगा महा मेरू और हिमाचल पर जा कर तपस्या करने में चिर काल बिताने लगी उसके धर्म से प्रसन्न हो कर ब्रह्मा जी कहने लगे कि हे मृत्यु यह क्या बात है, तपस्विनी मृत्यु ने उत्तर दिया कि हे भगवन्! अपने संबंधियों के सुख को बढ़ाने वाले मनुष्यों को मैं मारना नहीं चाहती, यही वर मुझे दें मैं अबला आप से प्रार्थना करती हूं और आपकी शरण में आती हूं हे महाभाग अविनाशी! मुझ भयभीत की रक्षा करो मुझ को अभय दान दो यही वर आपसे मांगती हूं ॥

ब्रह्मा जी ने उत्तर दिया कि हे कल्याणी, सृष्टि के नाश करने में तुझ को अधर्म नहीं होगा और न मेरा कहा हुआ वचन ही निष्फल होसकता है इस लिये तुम सब सृष्टि का हनन करो तुम को सनातन धर्म सब प्रकार से याचना करेगा, यमराज लोकपाल और सब रोगादिक तेरे सहायक होंगे, मैं और सब देवता मिल कर तुझ को यह वर देते हैं, तू जगत में विरजानाम से विख्यात होगी ॥

यह वचन सुन कर मृत्यु सन्न हुई और ब्रह्मा जी को नमस्कार कर कहने लगी कि हे पितामह! यदि आप की यही आज्ञा है तो ऐसा ही होने दो, मैं यही करूंगी, परन्तु आप से एक प्रार्थना करती हूं, वह यह है कि क्रोध, लोभ, दूसरे के गुणों में दोष लगाना, ईर्षा शत्रुता देह में मोह करना निर्लज्जता और परस्पर कठोर वचन यह सब पदार्थ पृथक २ प्रकार से शरीरों को पीड़ित करें, ब्रमा जी ने कहा कि हे

मृत्यु ! ऐसा ही होगा, तुम सृष्टि को मारो, तुम को अधर्म न होगा, मैंने जिन आंसुओं को हाथ में लिया है वह जीवों के शरीरों से उत्पन्न रोग हैं, वह निर्जीव मनुष्यों को मारेंगे तुझ को अधर्म नहीं होगा, तू ही धर्म है तू ही धर्म की स्वामिनी है, तू ही धर्म रूप होकर सब को धारण करने वाली है, इस लिये सब प्राणियों को स्वाधान करो, क्रोध और इच्छा को त्याग दो, प्राणियों को आधीन न करो, इस लिये अत्यन्त धर्म होगा, अधर्म दुराचारी लोगों को मारेंगे, इस लिये आत्मा से आत्मा को पवित्र करो, सतोगुण से हीन लोग अपने पाप से ही अपने को नाश करेंगे इस लिये तुम अपने सन्मुख आये हुए इच्छा और क्रोध को छोड़ कर अवस्था के अन्त होने पर जीवों को मारो ॥

नारद जी बोले कि ब्रह्मा जी का यह वचन सुन कर मृत्यु बोली कि बहुत अच्छा ऐसा ही होगा । तब से मृत्यु अवस्था के हीन होने पर सब प्राणियों के जीवन को हरती है, उसी से उत्पन्न होने वाले रोग जिन से जीव पीड़ा पाता है शरीर त्यागने के समय पर आते हैं, इस लिये हे अकंपन आप सोच न कर, इन्द्रिय रूप देवता जीवात्मा के साथ मृतक के समान जैसे जाते हैं वैसे ही लौट कर आते हैं, कर्मदेव भी लौट कर आते हैं और सच्चे परमात्मा से प्रकाशित होने वाले ज्ञान देवता, फिर लौट कर नहीं आते ॥

हे राजाओं में उत्तम ! इस प्रकार जीवों के आदि देवता शीघ्रता से मृतक के सदृश जा कर फिर प्रकट हुये, यह भयानक वेगवान शब्द युक्त प्राण वायु जीवों के शरीरों को मारने वाला है, अत्यन्त प्रकाशित उग्र वायु रूप शिव अपूर्व प्राण जीवन मुक्त है और जन्म मरण को नहीं पाता अन्य सब देवता मृतक नाम के योग्य हैं इस लिये आप पुत्र की मृत्यु का शोक न करें, आप का पुत्र स्वर्ग को पाकर सर्वदा आनन्द करता है, दुःख को छोड़ो और पवित्र कर्मी मनुष्यों के पास बैठो, यह मृत्यु ब्रह्मा जी की आज्ञा से समय आने पर विधि के अनुकूल मारने वाली है यह सब के प्राणों को हरने वाली अपने ही कर्म से उत्पन्न होती है, इस लिये सब प्राणी आप ही अपनी मृत्यु बनाते हैं, इतर कोई मृत्यु उन को हनन नहीं करती इस लिये पुत्र की मृत्यु का शोक दूर करो ॥

व्यास जी बोले कि नारद जी के इन वचनों को सुन कर राजा अकंपन शोक से रहित हुआ और नारद जी को कहने लगा कि हे भगवन् ! मैं आप का धन्य वाद करता हूं आप ने इस मनोहर व्याख्यान को सुना कर मेरे चित का शोक दूर कर दिया है ।

राजा युधिष्ठर इस अपूर्व वृत्तान्त को सुन कर क्षत्रिय धर्म पर आरूढ़ हुआ, और समझने लगा कि अभिमन्यु ने निश्चय परमगति को प्राप्त किया है, यह विचार कर और अपने भाईयों को धीर्ज दे कर युधिष्ठर फिर सेना

ले कर शत्रु से लड़ने के लिये युद्ध भूमि में गिया ॥

पैंतीसवां अध्याय

युधिष्ठर का प्राचीन राजाओं के सत्य कर्मों का बृत्तान्त पूछना और व्यास जी का संजय का बृत्तान्त सुनाना ॥

फिर युधिष्ठर मृत्यु की उत्पात्ति को सुन कर और विश्वस्थ चित हो कर भगवान व्यास जी को कहने लगा कि हे पितामह ! मुझ को प्राचीन राजाओं के सत्य कर्मों को सुनाओ मैंने सुना है कि वह बड़े २ यज्ञ करके और बहुत दक्षिणायें देकर सत्य लोकों को प्राप्त हैं, उन का बृत्तान्त मुझे सुनाओ । व्यास जी बोले कि हे युधिष्ठर ! पूर्व काल में शैव्य का पुत्र संजय नाम राजा हुआ है, उस के नारद और पर्वत दो ब्रह्मर्षि बड़े मित्र थे, एक बार यह दोनों राजा को मिलने गये संजय बड़े आदर सत्कार से मिला और उस ने उत्तम आसन बैठने को दिया ॥

इतने में राजा की कन्या आई और आते ही राजा को प्रणाम करके खड़ी हो गई राजा ने कन्या को आशीर्वाद

दिया और पास बिठाया। पर्वत ऋषि उस कन्या के रूप को देख कर मोहित हो गये और राजा से पूछने लगे कि हे राजन् यह कन्या किस की है, राजा ने कहा कि हे ऋषि वर! यह कन्या मेरी है, अब यह यौवन को प्राप्त है और वर की अभिलाषा रखती है नारद जी बोले कि हे राजन्! यदि इस कन्या को मेरी भार्या कर दें तो आप का बड़ा कल्याण होगा। राजा ने कहा बहुत अच्छा॥

यह सुन कर पर्वत जी बोले हे नारद! इस कन्या को मैंने पहिले अपने मन में वरा था, इस लिये आप को इसके वरने का कोई अधिकार नहीं था, क्योंकि हृदय से मुझ से वरी हुई इस कन्या की आपने कामना की है, इस लिये आप को स्वर्ग प्राप्ति नहीं होगी, यह सुन कर नारद जी बोले कि हे पर्वत कन्या को तब ही वरा जाता है, जब वह मन, बचन, कर्म और जल से दी जाये वर उसका पाणि ग्रहन करे मन्त्र से पवित्र की जाये, परन्तु यह विवाह ठीक नहीं होता इस लिये यह कन्या आप से वरी हुई नहीं है, आपने व्यर्थ मुझे शाप दिया है इस से आप भी मेरे विना स्वर्ग को प्राप्त न होंगे॥

इस प्रकार एक दूसरे को शाप देकर वह वहां ही रहने लगे इतने में राजा संजय ने पुत्रार्थ यज्ञ किया. सब खान पान के पदार्थों से और वस्त्रों के आस्तरण से उस ने ब्राह्मणों की सेवा की उस राजा से प्रसन्न हो कर सब ब्राह्मण लोग नारदजी से बोले कि आप इस राजा को पुत्र प्रदान करें, नारद जी

राजा से बोले कि आप के हित यह ब्राह्मण लोग पुत्र की याचना करते हैं, आप का कल्याण हो, कहिये आप के कैसा पुत्र उत्पन्न हो ॥

राजा ने कहा कि मेरा पुत्र सब गुणों में पूर्ण हो और उस का मूत्र विष्ठा जो कुच्छ हो सब स्वर्ण होजाय, नारद ने कहा कि ऐसा ही होगा । समय पर राजा के हां वैसे ही गुणों वाला पुत्र उत्पन्न हुआ उस का नाम स्वर्णनाव विख्यात हुआ राजा ऐसे पुत्र को पाकर और उस के मूत्रऔपुरीश से स्वर्ण प्राप्त कर के बड़ा धनवान होगया, उस ने राजभवन बैठने उठने के सामान सब स्वर्ण के बनवाये और ब्राह्मणों को बहुत सा स्वर्ण दान किया इस पुत्र के गुणों से उस का सारा नग्र स्वर्ण मय होगया ॥

यह देख कर चोर विचार करने लगे कि यह राजा अपने पुत्र के द्वारा इतना धनवान हुआ है चलो इस के पुत्र को चुरा कर उस के पेट से सब स्वर्ण निकाल लें, यह विचार कर रात को वह राजा के भवन में आकर सब द्वार पालों को सोया हुआ पाकर राज कुमार को चुरा कर लेगये, बन में जा कर उस विचारे रोते बिलकते को मार कर उस के पेट के सोने को निकालने लगे, वहां स्वर्ण कहां था, उस को खंड २ कर दिया परंतु कोई स्वर्ण भी प्राप्त न हुआ तब चोर उस मृतक को छोड़ कर कहीं चले गये ॥

प्रातःकाल जब राजा को पता लगा तो अपने पुत्र की मृत्यु पर बड़ा शोक करने लगा, तब नारद जी आये और

विलाप करते हुये राजा से कहने लगे कि हे राजन्! अभिष्ठों से तृप्त होकर तू मर जायेगा, हम ब्रह्मवादी राजा मरुत स्थान में ठहरे थे परंतु हम उन को मृतक सुनते हैं, मरुत ने बृहस्पति जी से सम्पतक को पूजन कराया और हिमालय पर्वत के स्वर्ण चांदी भाग को दान किया, जिस के यज्ञ में देवताओं समेत इन्द्र और बृहस्पति वर्तमान हुये, जिस की यज्ञ शाला में सब पदार्थ स्वर्ण के बने हुये थे, जिस के यज्ञ में इच्छा के अनुसार सब ब्राह्मणों ने पवित्र भोजन किये जिस के यज्ञ में दूध, दही, घृत, मधु और भक्ष्य भोज्य की वस्तुएँ और वस्त्र भूषणादि भी उत्तम सुडौल और मनोहर थे, उस मरुत के गृह में मरुत देवताओं को परोसने वाले हुये और राजर्षि आवाक्षित के सभासद विश्वेदेवा देवता हुये, जिस ने देवता और ऋषियों को अच्छी प्रकार से तृप्त किया और शैय्या, आसन और खान पान की वस्तुओं, स्वर्ण के ढेरों और अन्य सब प्रकार के धनों से प्रसन्न किया ॥

वह राजा मरुत अपने इस प्रकार के यज्ञों से अविनाशी लोकों को विजय करके इन्द्र के बुलाने से प्रजा, राज्य, मंत्रि स्त्री और सन्तान समेत स्वर्ग को प्राप्त हुआ उस ने कई सहस्र वर्ष तक राज्य किया, इस लिये हे राजेन्द्र! जब वह भी धर्मात्मा मर गया तो आप किस गिनती में हैं, न आपने यज्ञ किये, न दक्षिणा दी और न वैसा तप ही किया, इस लिये आप पुत्र के मरने का शोक न करें ॥

हे राजन् मह ाज सुह्होत्र बल में देवताओं से भी अजय हुआ है, उसने धर्म से राज्य को पाया और सदा ऋत्वजों से सत्य धर्म का मार्ग पूछ कर राज्य करता रहा, उसने धर्म ही से धन को प्राप्त किया, देवताओं को पूजा और बाणों से शत्रुओं को विजय किया जिसके लिये वर्षों तक इन्द्र न स्वर्ण वर्साया ! और अनुपम स्वर्ण मूर्तियों को पृथ्वी पर फैंका उसके स्वर्ण को देख कर सब आश्चर्य करते थे, इसी कुरु जांगल देश में बैठ कर जिसने बहुत सा स्वर्ण दान किया, वह राजा सुहोत्र यदि न रहा, तो हे संजय तुम यज्ञ न करने वाले किस प्रकार अपने पुत्र का शोक करते हो ?

हे राजा संजय ! राजा पौरव ने दश लाख घोड़े यज्ञ के निमित्त छोड़े थे। उसने सहस्रों हाथी और स्वर्ण मय रथ ब्राह्मणों को दान किये थे और असंख्य गांयें, दास और दासियें भी दी थीं गौवों को स्वर्ण की मालायें और चांदी सोने की सिंगोटियां भी लगवादीं जब इस प्रकार दान करने वाले राजा पौरव मर गये, तो हे संजय ! आप अपने पुत्र का क्या शोच करते हैं ? आपने न तो दान किया, न यज्ञ में दक्षिणा दी, पौरव के सन्मुख आप की कौन गिनती है ?

हे राजन् ! उशीनर के पुत्र शिवी का हाल सुनो, उसने लाखों यज्ञ किये समुद्र तक पृथ्वी को अपने आधीन किया उसके रथ के शब्द से द्वीप, समुद्र, पर्वत, वन शब्दायमान हुए उस ने हजारों निष्क दान किये, और हाथी घोड़ों की तो कुछ गनणा ही नहीं, दूध, दही, अन्न, जल और वस्त्र इतना

दान किया कि जिसको सुन कर बुद्धि निश्चल नहीं करती, उसके दान धर्म से प्रसन्न होकर शिवजी ने कहा कि हे राजन्! तुम उत्तम स्वर्ग को पाओगे, शिवि इन उत्तम कर्मों को करके स्वर्ग को गया, इस लिये हे राजन्! जब वह चारों कल्याणों से युक्त राज ऋषि शिवि इस संसार में नहीं रहा तो आप का पुत्र कैसे रह सकता है शिवि आप से अधिक धर्मात्मा था, आप के पुत्र से भी अधिक [illegible] था, [illegible] आप अपने पुत्र की मृत्यु का शोच न करें ॥

हे राजन्! दशरथ के पुत्र रामचन्द्र को भी हम शरीर त्यागने वाला सुनते हैं, जिस रामचन्द्र ने पिता की आज्ञा से चौदह वर्ष तक बनवास के दुःख सहे, और अतुल पराक्रमी राक्षसों को मारा, जिसने पुलस्त्यवंशी रावण से युद्ध किया, जिसके राज्य में सब लोग संपूर्ण सुखों को भोगते थे, और पूर्ण आयु को पाते थे ऐसे वह रामचन्द्र दीर्घ काल तक राज्य कर के स्वर्ग को गये ॥

हे संजय! वह रामचन्द्र चारों कल्याणों में तुझ से और तेरे पुत्र से भी अधिक धर्मात्मा थ, इस लिये तुम यज्ञ और दक्षिणा से रहित होकर अपने पुत्र का शोक क्यों करते हो ॥

हे संजय! हम राजा भागीरथ को भी देहत्यागने वाला सुनते हैं, जिस भागीरथ ने गंगा जी का स्वर्ग से आवाहन किया, और जो उसका पिता विख्यात हुआ, जिस ने बहुत सी दक्षिणा वाले अनेक यज्ञ किये और जिसने ब्राह्मणों को जो कुछ किसी ने मांगा वही दिया, हे राजन्! ब्राह्मणों को

प्रसन्न करने से हम उसको भी ब्रह्म लोक में गिया हुआ मानते हैं, वह भी अर्थ धर्मादि चार कल्याणों में तुझ से और तेरे पुत्र से भी अधिक धर्मात्मा था, जब वह शरीर छोड़ गिया तो तुम यज्ञ और दक्षिणा से रहित हो कर पुत्र के मरने का क्यों शोक करते हो॥

हे संजय! हम अलोल के पुत्र दिलीप को भी मरा हुआ सुनते हैं जिस के यज्ञ में सहस्रों वेद वक्ता ब्राह्मण वर्तमान थे जिस ने स्वर्ण मय मार्ग बनवाये और यज्ञ की सब वस्तुओं को स्वर्ण मयी बनाया, जिस के घर से वेद ध्वनि धनुष की टंकार और खाओ पियो भागो इत्यादि शब्द कभी नष्ट न हुये थे, जिस के यज्ञ में विश्वावसु आप वीणा, बजाते थे और अप्सरा नृत्य करती थीं, हे संजय! वह दिलीप चारों कल्याणों से युक्त, आप और आप के पुत्र से अधिक धर्मात्मा थे॥

छत्तीसवां अध्याय

—:०:—

राजा मान्धाता, ययाति अम्बरीष, शशिविन्दु, अमूर्तरयस, साकृति रंतिदेव, और दुष्यन्त के पुत्र भरत की संक्षिप्त कथायें॥

हे संजय! हम राजा युवनाश्व के पुत्र मान्धाता को भी शरीर त्यागने वाला सुनते हैं, उस देवता ने, असुरों और मनुष्यों

समेत तीनों लोकों को जीता। अश्वनि कुमारों ने पूर्व जिस को पिता के गर्भ से खैंचा. कहते हैं कि शिकार में थकावट से चूर वह राजा वन में धूंएं को देख कर यज्ञ शाला में गिया, वहां उस ने दही से मिश्रत घी को पीया जिस से राजा का पेट भारी हो गिया अश्वनी कुमारों ने देखा कि यह राजा गर्भ से दुःखी है तो उन्हों ने युवनाश्व के उदर से उसे खैंच लिया और उस के पास ही सुला दिया फिर देवताओं ने सोचा कि अब इस बालक का पालन पोषण कैसे हो, इन्द्र ने कहा कि मैं इस को पालूंगा, इस लिये उस ने अपनी अंगुलियें बालक के मुख में डालीं और उन से दूध की धारें अवश्य निकल पड़ीं॥

यह अमृत पी कर एक ही दिन में वह बालक एक वर्ष आयु वाले बालकों के समान हो गया और बारह दिन में १२ वर्ष की आयु वालों के समान हो गिया, उस ने एक ही दिन में संपूर्ण पृथ्वी को जीता, क्योंकि इन्द्र ने उस को कहा था कि यह मुझ को ही धारण करेगा, इस लिये उस का नाम मानधाता विख्यात हुआ॥

उस मानधाता ने जनमेजय, सुधन्वा, गय, पुरु, बृहद्बल, असित और नृग को विजय किया, उदयाचल से अस्ताचल तक सब पृथ्वी मानधाता का क्षेत्र कहाती है, उस ने सैंकड़ों अश्वमेध किये और स्वर्ण की बड़ी लंबी चौड़ी मछलियां दान कीं, अन्न के पहाड़ बनवा कर दान किये और दूध और घृत की नदियें चलवाईं, ऐसा वह राजा मानधाता चिरकाल

तक राज्य करके भी पवित्र कर्मी पुरुषों के लोकों को गया। हे संजय! वह चारों कल्याणों के रखने वाला तुझ से और तेरे पुत्र से अधिक धर्मात्मा था, तुम यज्ञ और दक्षिणा से रहित हो, इस लिये तुम को पुत्र की मृत्यु का शोक नहीं करना चाहिये॥

हे संजय! हम नहुष के पुत्र ययाति को मरा हुआ सुनते हैं उस ने कई राजसूय और अश्वमेध यज्ञ किये, हज़ारों पुण्डरीक और वाजपेय यज्ञ किये अतिरात्र, चतुर्मास और अग्निष्टोम आदि का तो कहना ही क्या है, उस ने ब्राह्मणों के द्वेषी म्लेच्छों से सब धन हर कर ब्राह्मणों में बांट दिया उस ने धर्म पूर्वक शुक्राचार्य की कन्या देवयानि और शर्मिष्ठा से विवाह किया और उन से धर्मात्मा संतान उत्पन्न की, वह राजा चिरकाल पृथ्वी को भोग कर दया दान और यज्ञों से स्वर्ग को जीत कर इन्द्र पदवी को प्राप्त हुआ. हे संजय! वह चारों कल्याणों वाला तुझ से और तेरे पुत्र से अधिक धार्मिक था इस लिये जब वह शरीर छोड़ गया तो तेरे पुत्र की मृत्यु किस प्रकार अपूर्व समझी जाय इस लिये पुत्र का शोक मत करो॥

हे संजय! हम नाभाग के पुत्र अम्बरीष को मृतक हुआ सुनते हैं वह राजा विजयाभिलाषी अस्त्र युद्ध का ज्ञाता और अशुभ वचनों के कहने वाले शत्रुओं का संहार करता था, उस ने अनेक यज्ञ किये और याचकों को उन की इच्छानुसार

प्रसन्न किया शरणागतों का रक्षक हो कर सैंकड़ों वेद पढ़ने वाले उत्तम ब्राह्मण उस से पूजित हो कर तृप्त हुये जब वह राजा अम्बरीष भी काल वश हो कर मर गया तो आप यज्ञ दक्षिणा रहित हो कर भी किस प्रकार अपने पुत्र की मृत्यु का शोक करते हैं ॥

हे राजन् ! हम राजा शशिबिन्दु को मृतक हुआ सुनते हैं, उस महात्मा की अनेक स्त्रियें थीं उन के अनेक ही पुत्र थे जो बड़े शूरवीर, धर्मात्मा और यज्ञ के कर्ता हुये हैं। उसने सब पुत्रों को दान कर दिया और बड़ी २ दक्षिणायें दीं वह महाभाग चिर काल तक पृथ्वी का राज्य कर के काल वश हो गया। हे संजय ! शशिबिन्दु गुण में और धर्म में तुझ से और तेरे पुत्र से अधिक तर धर्मात्मा था, जब वह भी शरीर त्याग गया तो यज्ञ और दक्षिणा से हीन तुम अपने पुत्र का क्यों शोक करते हो ॥

हे संजय ! हम अमूर्त्तरयंस को भी मृतक हुआ हुआ सुनते हैं इसने यज्ञ का शेष बचा हुआ हव्य सौ वर्ष तक खाया, उसको अग्नि ने वर दिया और फिर उस ने यह वर मांगा कि मैं व्रत, नियम, तप, ब्रह्मचर्य्य और गुरुओं की प्रसन्नता समेत वेदों को जानूं अविनाशी धन को पाऊं, दान देने में श्रद्धा रखूं, पति व्रता सजातीय स्त्रियों में मेरे पुत्र उत्पन्न, हों, धर्म में मेरा चित्त रमे। अग्नि ने कहा कि ऐसा ही होगा, यह कह कर अग्नि अन्तर्धान होगये। उस राजा ने छब्बीस योजन चौड़ी और तीस

योजन लंबी यज्ञ शाला बनवाई और अर्थियों को सब पदार्थों से तृप्त किया, हे संजय ! जब वह तुझ से और तेरे पुत्र से अधिक धर्मात्मा हो कर भी मरगया तो तुम यज्ञ और दक्षिणाओं से रहित हो कर अपने पुत्र का शोक मत करो ॥

हे संजय ! हम सांकृतिरन्ति देव को मृतक हुआ सुनते हैं उस रन्त देव के दान धर्म से प्रसन्न सब ब्राह्मण उस की गाथा गाते हैं, वह नित्य प्रति सहस्रों निष्क ब्राह्मणों को दान करता था, उस की बड़ी २ पाकशालाएं थीं जिन में असंख्य रसोईये लोगों को उत्तम २ अन्न रस पकाकर देते थे उस के चर्म समूह से चमरावती नदी अग्नि होत्र में विख्यात हुई, वह सुन्दर २ यज्ञ पात्र बनवा कर दान करता था, कहते हैं कि जैसा पूर्ण धन रन्ति देव के पास था इतना कुबेर के पास भी नहीं था उस का सब पुर स्वर्ण मयी था, मनुष्य आश्चर्य से यह कहते थे कि रन्ति देव के घर में जो अतिथि एक दिन भी निवास करता था वह धन वान हो जाता था, एक वार अतिथियों ने इक्कीस सहस्र गौवों को पाया, देवता पितर और ब्राह्मण सब प्रसन्न हुये । हे संजय ! जब वह रन्ति देव न रहे, तो तुम अपने पुत्र को क्यों शोचते हो ?

हे संजय हम दुष्यन्त के पुत्र राजा भरत को भी मृतक हुआ सुनते हैं। कहते हैं कि उस राजा ने कठिनता से होने योग्य कर्म किये उस ने बड़े २ दाड़ों वाले सिंहों को कान से पकड़ अपनी तीव्रता से निर्बल से निर्बल करके खैंचा और गाय

बकरी के समान बान्धा, जिसने व्याघ्रों को पराजय करके अपने आधीन किया जिसने व्याल और सुप्रतीक वंशी हाथियों को दान्त से पकड़ कर अपने वश में किया और बड़े २ बलवान भैंसों को भी अपने वश में किया, जिस से उस का सर्व दमन नाम सब जगत में विख्यात हुआ। फिर उसने यमुना जी के समीप सौ अश्वमेध यज्ञ किये, अग्निष्टोम और वाजपेय आदि अनेक यज्ञ भी किये, जिस से उस की कीर्ति जगत में फैल गई॥

हे संजय! जब वह सर्वद मन भरत जिसके नाम से भारत खण्ड देश प्रसिद्ध है चारों कल्याणों का रखने वाला हो कर भी नहीं रहा तो तू पुत्र की मृत्यु का क्यों शोक करता है?

सैंतीसवां अध्याय

राजा पृथु का वृत्तान्त॥

हे संजय! वेणु का पुत्र राजा पृथु भी शरीर त्याग गया। उसने संपूर्ण पृथ्वी पर राज्य किया, उसी के नाम से पृथ्वी का यह नाम हुआ, सब महर्षियों ने उसको संपूर्ण संसार का राजा माना, उसके समय में पृथ्वी सब पदार्थों को उत्पन्न करती थी और जोतने के विना भी सब अन्नों को पकाती थी, प्रजा के लोग बड़े सुखी थे, फल अमृत के समान स्वादु थे और

बहुधा उन्हीं का आहार करते थे लोग रोगों से रहित अपनी इच्छाओं को पूर्ण कर के निर्भय होकर पर्वत की गुफाओं अथवा वृक्षों के नीचे रहते थे, उस समय देश और पुरों का विभाग न हुआ था ॥

तब सब मनुष्य देवता गन्धर्व राजा के पास जाकर कहने लगे कि हे महाराज! आप समर्थ हो, हम को वह वर प्रदान करें जिसके कारण कि हम सब लोग सुख पूर्वक रह कर सदैव तृप्त रहें। राजा ने कहा कि यही होगा, फिर राजा ने अजगव नाम धनुष लेकर पृथ्वी को बुलाया और कहा कि हे पृथ्वी! इन सब प्रजाओं को अभीष्ट दुग्ध दो इस के पीछे मैं सब को अभीष्ट अन्न दूंगा ॥

पृथ्वी बोली कि हे राजन्! मुझे अपनी पुत्री समझो, राजा ने कहा बहुत अच्छा तब राजा ने सब विधान को किया और पृथ्वी को दोहन का विचार किया, पृथ्वी ने कहा कि बछड़े को लाओ, दूध दोहने वाले को लाओ और दूध के पात्र को लाओ, पहिले तो वनस्पति ने दोहने की अभिलाषा की, उस ने शाल वृक्ष को तो बछड़ा बनाया और पलक्ष दोहने वाला हुआ और अंकुर दूध हुआ और दुम्बर का वृक्ष दोहने का पात्र बना ॥

फिर उदयाचल बछड़ा बना, मेरु पर्वत दोहने वाला, रत्न औषधि दूध और पाषाण पात्र हुआ। फिर सब देवताओं का समूह बछड़ा बना, इन्द्र पात्र बना और सविता दूध दोहने

वाला हुआ और दूध पराक्रम उत्पन्न करने वाला सब का प्रिय कारी हुआ असुरों ने आमपात्र में मध को दुहा, दोहने वाला द्विमूर्द्धा था, वैरोचन बछड़ा ॥

फिर मनुष्यों ने सब अनाजों को दुहा, उस के लिये स्वयंभू मनु तो बछड़ा बने और राजा पृथु दोहने वाले हुये, फिर तांबे के पात्र में पृथ्वी के विष को दुहा, धृतराष्ट्र सर्प तो दोहने वाला हुआ और तक्षक बछड़ा हुआ, फिर वेदों को दुहा गिया, दोहने वाला बृहस्पति बना, छन्द पात्र बने और बछड़ा सोमराट हुआ फिर गन्धर्व और अप्सराओं ने कमल पात्र में पवित्र सुगन्धियों को दोहा, उन का बछड़ा चित्ररथ और विश्व रुचि दोहने वाले हुये ॥

फिर पितरों ने चांदी के पात्र में स्वधा को दोहा वैवस्वत उन का बछड़ा और यमराज दोहने वाला हुआ, इस प्रकार सब प्राणियों का उन के अभीष्ट की प्राप्ती से राजा पृथु ने प्रसन्न किया, उस ने रत्नों से अलंकृत पृथ्वी को स्वर्ण मयी कर दिया और फिर सब पृथ्वी दान कर दी, इस लिये हे संजय ! यदि वह पृथु जो चारों कल्याणों को रखने वाला तुझ से और तेरे पुत्र से अधिक बलवान और धर्मात्मा हो कर भी शरीर त्याग गया तो तू यज्ञ और दक्षिणा से रहित होकर भी अपने पुत्र का क्यों शोक करता है ? ॥

अड़तीसवां अध्याय

—:०—

परशुराम का वृत्तांत ॥

हे संजय ! जमदग्नि के पुत्र परशुराम भी समय पर शरीर छोड़ेंगे, उस परशुराम ने इक्कीस वेर पृथ्वी के सारे क्षत्रियों का संहार किया है और अतुल बल वाले कार्तवीर्य को जीता है, उस ने कश्मीर, दरद, कुंति, क्षुद्रक, अंग, वंग, कलिंग, वैदेह, ताम्र, लिप्तक, रक्षोवाह, वीतिहोत्र, त्रिगर्त, मार्तिकावत और अनेक देश के क्षत्रियों को तीक्ष्ण धार वाले बाणों से मारा, रुधिर की नदियें बहा दीं, अष्टादश द्वीपों को अपने स्वाधीन किया और पृथ्वी को नाना प्रकार के स्वर्ण भूषणों से अलंकृत करके कश्यप जी को दान कर दिया ॥

जब परशु राम जी से जीती हुई सब पृथ्वी कश्यप जी ने ले ली तो परशु राम जी को कहने लगे, कि आप अब पृथ्वी के बाहर चले जायें क्योंकि यह पृथ्वी मेरी है, परशुराम जी ने ब्राह्मण की आज्ञा पालन करने की इच्छा से अपने बाणों से समुद्र को परे हटाया और महेन्द्र पर्वत पर बसने लगे, इस प्रकार उस ने भृगु वंश कीर्ति और यश को बढ़ाया, हे संजय ! इस प्रकार से तुम से अधिक बलवान और धर्मात्मा परशुराम भी समय के आने पर शरीर को

त्यागेगा फिर तुम यज्ञ को न करने वाले और दक्षिणा रहित होकर भी अपने पुत्र का क्यों शोक करते हो ? ॥

उनतालीसवां अध्याय

—:०:—

व्यास जी का आख्यान समाप्त करना और युधिष्ठर को आश्वासन कर के चले जाना और युधिष्ठर को धीरज आना ॥

व्यास जी कहने लगे कि राजा संजय इस आख्यान को सुनकर चुप हो गिया, नारद जी बोले कि हे संजय कहो अभी तुम्हारे मन को शांति आई है कि नहीं, क्या अभी तुम्हारा दुःख शेष है। संजय ने कहा कि हे महाराज ! अब मुझे पुत्र के मरने का शोक नही है, मैं आप का धन्य वाद करता हुं कि आपने यह ज्ञान बता कर मेरे मन के शोक को हर लिया है आपके ज्ञान प्रकाश से मेरे चित का अन्धकार दूर हो गिया है अब आप आज्ञा करें कि मैं क्या करूं, नारद ने कहा कि अब तुम इस प्रकार निःशोक हो कर जो चाहते हो कहो मैं तुम को वही वर दान दूगा ॥

संजय बोला कि आप की प्रसन्नता प्राप्त करके मैं कृत कृत्य हुआ हूं, इसी में मेरी प्रसन्नता है, अब मुझे कोई वस्तु दुष्प्राप्य नहीं है, नारद ने कहा कि पशु के समान नरक रूप

दुःख से उठाकर तेरे पुत्र को फिर देता हूं, यह कह कर नारद ने स्वर्णष्ठीव को जीवित किया, राजा उस पुत्र को पाकर परम आनन्दित हुआ और धर्म वर्धिक यज्ञों को करने लगा ॥

हे राजन् ! क्योंकि वह बालक असंतान था और अभीष्टों के न प्राप्त करने वाला यज्ञों से रहित युद्ध के बिना मारा गया था, इस लिये वह फिर जी उठा, परन्तु अभिमन्यु तो सहस्रों शत्रुओं को संतप्त करके सेना के सन्मुख हो कर मारा गया है इस लिये वह सीधा स्वर्ग को जाकर देवताओं के सुखों को भोगने वाला हुआ है, ज्ञानी लोग सदैव स्वर्ग चाहते है, परन्तु संसारी लोग स्वर्ग को नहीं चाहते, इस लिये उनको संसार ही प्रिय है, इस लिये अभिमन्यु को फिर सजीव करना और स्वर्ग से यहां लाना ठीक नहीं, वह किसी पदार्थ की अपेक्षा नहीं रखता उसको सब पदार्थ आप ही प्राप्त हैं । अविनाशी गति को उसने प्राप्त किया है। हे राजन ! तुम अपने पुत्र का शोक मत करो ॥

हे युधिष्ठर ! इस प्रकार जानकर दृढ़ चित होकर शत्रुओं को मार कर धैर्य को प्राप्त करो । हे राजन ! हम जीते हुओं पर शोक करना उचित है स्वर्ग वासियों पर शोक करना कभी भी उचित नहीं, इस से पाप ही बढ़ता है, इस से कल्याण के निमित शोक को त्यागना चाहिये। इस में कल्याण है, शोच में कल्याण नहीं। हे ज्ञानी ! तुम उठो और नियम के

धारण करने वाले हो कर शोच को छोड़ दो, बस अब मैं जाता हूं। यह कह कर व्यास जी विदा हुए, युधिष्ठर को शांति तो आई परन्तु वह सोचने लगा कि अब मैं अर्जुन को क्या उत्तर दूंगा ॥

चालीसवां अध्याय

अर्जुन का लौट कर आना और अभिमन्यु को न पाकर विलाप करना ॥

जब दिन व्यतीत हुआ तो अर्जुन संसप्तकों के दल को मार कर अपने विजयी रथ पर स्वार होकर डेरे को आया परन्तु उस के मन में कई प्रकार के क्लेश उत्पन्न होने लगे, फिर उस ने कृष्ण जी से कहा कि हे गोविन्द मेरे चित्त में नाना प्रकार की अशुभ चिन्ता होरही है, ईश्वर करे कि धर्म राज युधिष्ठर कुशल पूर्वक हो, श्री कृष्ण जी बोले कि हे अर्जुन मंत्रियों समेत तेरे भाई का कल्याण होगा, शोच मत करो। कोई और ही अप्रिय होगा ॥

फिर दोनों सन्ध्या करके रथ पर चढ़ कर युद्ध के वृत्तान्तों को कहते हुये चले और डेरे में पहुंचे, वहां जाकर देखा कि न वहां प्रकाश है न दिया जलता है। वरन सब लोक शोक सागर मे निमग्न हैं। न बाजे बजते हैं न बंदि

गण स्तुति करते हैं। न योधा और शूर वीर आगे से आकर अभिनन्दन करते हैं। यह दशा देख कर अर्जुन ने डेरे में प्रवेश किया। देखा तो पाण्डव सब के सब बैठे रुदन कर रहे हैं। अभिमन्यु आगे बढ़ कर पिता से प्रेम भी प्रकाशित नहीं करता। सब के मुख का वर्ण अप्रसन्न दिखाई देता था॥

अर्जुन उन को देख कर कहने लगा कि हे भाईयो! क्या बात है? आप क्यों इतने उदास हैं? मैंने सुना है कि द्रोणाचार्य ने चक्र व्यूह बनाया था, तुम में से उस को कोई भी तोड़ नहीं सक्ता था अभिमन्यु केवल तोड़ना जानता था, परन्तु बाहर निकलना नहीं जानता था, क्या तुम ने उस को युद्ध में तो नहीं भेजा, क्या वह शत्रुओं को पराजय करके मारा तो नहीं गया? मुझे शीघ्र ही बताओ? उस सुभद्रा के पुत्र को किसने मारा? मुझे शीघ्र ही बताओ? मैं उस शूर वीर पुत्र को न देख कर यमलोक को जाऊंगा॥

इस प्रकार अभिमन्यु के गुण वर्णन करके अर्जुन करुण वाणी से चिरकाल तक विलाप करने लगा और बड़े दुःख को प्राप्त होकर युधिष्ठर को कहने लगा कि हे कुरुनन्दन क्या अभिमन्यु मरते समय पिता का स्मरण करता होगा?- क्या उस ने पिता जी! पिता जी! कहकर सहायता नहीं मांगी? मेरा हृदय बड़ा कठोर है जो उस सुंदर पुत्र को न पाकर

नहीं फटका. हाये मैं उस सुकुमार वधु के दुख को कैसे सहूंगा ? अपने प्रिय पुत्र को न पाकर सुभद्रा और द्रौपदी मुझ को क्या कहेंगी। हे धृतराष्ट्र के पुत्रो ! तुम ने क्यों सिंहनाद किये जो अर्जुन को युद्ध में संहार कर बालक पर टूट पड़े, तुम्हारे क्षात्र धर्म पर धिक्कार है। तुम ने यह बालक के वध का बड़ा घोर पाप किया है इस बुरे कर्म का फल तुम को शीघ्र मिलगा ॥

हे श्री कृष्ण ! आप ने किस लिये युद्ध में मुझे यह बात नहीं बताई, मैं उसी क्षण इन महारथियों को नष्ट करता। श्री कृष्ण ने दुखी होते हुये अर्जुन को पकड़ कर धीर्ज दी और कहा कि बुद्धिमान पुरुष इस प्रकार शोक नहीं करते शूरों का यही मार्ग है, युद्ध से मुख न मोड़ने वाले क्षत्रियों की यही गति शास्त्र जानने वाले बताते हैं, ऐसे लोग युद्ध ही में मरते, हैं पवित्र कर्मी अभिमन्यु स्वर्ग को गया है, सब वीरों की यही चिंतना इच्छा होती है कि रण में मारे जावें हे पुरुषोत्तम ! वह अभिमन्यु वीरों समेत राजकुमारों को मार कर वीरों की गति को पागया है इस लिये हे भरतर्षभ ! अभिमन्यु का शोच मत करो, यह तुम्हारे भाई महादुखी हैं इन को धीर्ज दो ॥

श्रीकृष्ण के यह बचन सुन कर अर्जुन भाईयों से बोला कि मुझे अभिमन्यु का सारा वृत्तान्त सुनाओ, मैं सम्बन्धियों समेत सब कौरवों का मारूंगा, यदि मैं पाण्डवों और पांचालों

को अभिमन्यु की रक्षा में असमर्थ जानता तो मैं आप उसकी रक्षा करता । क्या तुम ने हाथ पाओं न हिलाये ? तुम्हारा उद्योग और उपाय किधर गये ? तुम्हारे पराक्रम को क्या हुआ । मेरे विचार म तुम कुच्छ भी नहीं रखत, तुम्हारे कवच और शस्त्रादि केवल शोभा ही के निमित्त हैं । नहीं यह मेरा ही दोष है कि मैं उसको आप लोगों को सौंप कर चला गया । इस प्रकार बार २ श्वास लेते हुए अर्जुन की ओर कोई भी पाण्डव देखने को समर्थ न हुआ ॥

फिर युधिष्ठर ने यह वचन कहे ॥

इकतालीसवां अध्याय

—:०:—

युधिष्ठर का अभिमन्यु के मारे जाने का वृत्तान्त कहना और अर्जुन का जयद्रथ को मारने की प्रतिज्ञा करना ॥

युधिष्ठर ने कहा कि हे महाबाहू अर्जुन ! जब आप संसप्तकों के समूह को मारने चले गए तो द्रोणाचार्य ने मेरे पकड़ने का बड़ा कठिन उपाय किया, हमने उसको रोका, परन्तु उसके तीक्ष्ण बाणों से बहुत पीड़ा पाई यहां तक कि पराजय करना तो एक ओर रहा, उसको देखना भी असंभव हो गया

फिर हमने अभिमन्यु को कहा कि तुम इसको पराजय करो। उसने बड़े साहस से कहा कि मैं अवश्य ही विजय करूंगा॥

हमारी आज्ञा पाकर अभिमन्यु व्यूह में प्रवेश कर गया, हम उसके पीछे २ गये, परन्तु जयद्रथ ने हम को वहीं रोक दिया, जिससे हम आगे न बढ़ सके। इस के पीछे द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, कर्ण, अश्वत्थामा, कोशिली कृत वर्मा। इन छयों ने अभिमन्यु को चारों ओर से घेर लिया और विरथ कर दिया, फिर दुशासन के पुत्र ने गदा से उसका मस्तक फोड़ा॥

अभिमन्यु ने आठ हजार हाथी नौ सो घोड़ा और दो हजार राज कुमार और शूरवीरों को मारा, राजा बृहद्बल को भी मारा और फिर आप मर गया। इसी से हम शोक सागर में निमग्न हैं॥

युधिष्ठिर के वचन सुन कर अर्जुन अचेत हो कर भूमि पर गिर पड़ा, और हाय पुत्र! हाय पुत्र! पुकार कर लम्बी २ श्वास लेने लगा, भाई बन्धुओं ने उसको अचेत देख कर चारों ओर से घेर लिया और उसकी मुर्च्छा को दूर करने का उपाय करने लगे जब वह चैतन्य हुआ तो क्रोध में दांतों को पीसता हुआ बोला कि मैं सब के सामने मन से प्रतिज्ञा करता हूं कि कल प्रातः काल होते ही मैं जयद्रथ को मारूंगा, क्योंकि जयद्रथ ने ही आप लोगों को रोक कर अभिमन्यु को मरवाया इस लिये मैं सूर्य अस्त होने से पहिले २ जयद्रथ को मारूंगा, यदि वह आप लोगों की शरण आजाये तो और बात है परन्तु

जब तक वह शत्रु पक्ष पर नियत है मैं उस का कल प्रातः काल होते ही युद्ध में बुलाऊंगा और सूर्य अस्त होने से पहिले २ मारूंगा, वह पृथ्वी पर हो अथवा आकाश में हो, पर्वत की कन्दिरा में हो चाहे पानियों के बीच में हो जब तक मेरे प्राणों में प्राण हैं मैं जयद्रथ को अवश्य कल ही मारूंगा ॥

जो कोई उसका सहायक मुझ से लड़ने आवेगा मैं उसको भी मार गिराऊंगा अथवा बाणों से व्यथित करूंगा, यदि मैं अपनी प्रतिज्ञा को पुरा न करूं तो मेरा जन्म नीच योनियों म हो, मुझ को वह जन्म मिले जो नीच से भी नीच और अधम पामर लोक पाते हैं जो इस पापी के मारने पर सूर्य अस्त हो जायगा तो मैं आप अग्नि में प्रवेश कर जाऊंगा ॥

असुर, देवता, मनुष्य, यक्ष, सर्व पितृ, राक्षस, ब्रह्म ऋषि, देव ऋषि कोई भी मेरे शत्रु की रक्षा नहीं कर सके। यदि वह रसातल, अग्नि, आकाश, देवताओं के पुर, और असु. के पुर में भी प्रवेश कर जाय, तो भी प्रातः काल होने पर मैं उस अभिमन्यु के शत्रु का शिर काटूंगा, यह कह कह कर अर्जुन ने अपने गांडीव धनुष को दोयें बायें ओर फिराया, उस के शब्द से आकाश गूंजने लगा, श्रीकृष्ण ने तुरन्त अपना पांचजन्य शंख बजाया, फिर अर्जुन ने देवदत्त शंख बजाया, तब तो शंखो की ध्वनि से पृथ्वी और आकाश गूंजने लगे, फिर पाण्डव सिंह नाद करने लगे और सहस्रों बाजे बजाने लगे ॥

ब्यालीसवां अध्याय

—:०:—

जयद्रथ का अर्जुन की प्रतिज्ञा को सुन कर भयभीत होना और भागने का विचार करना दुर्योधन और द्रोणाचार्य का उस को धीर्ज देना ॥

अर्जुन की यह प्रतिज्ञा जब सिंध के राजा जयद्रथ ने सुनी तो वह भय के मारे शोक सागर में निमग्न हुआ वह द्रौपदी हरण के समय अर्जुन के पराक्रम को देखे ही चुका था, अभिमन्यु के मरने पर अर्जुन को अब विशेष दुख हुआ था, इस लिये वह जानता था कि अर्जुन जो कुछ कहेगा वह निश्चय कर दिखायेगा उस को रोकने वाला शूर वीर न कोई हुआ है और न आगे ही हो सकता है ॥

इस लिये डर से कांपता हुआ जयद्रथ राजाओं के मध्य में गया उस की वाणी गिरी हुई थी और अंग शिथिल पड़े हुये थे और जाते ही कहने लगा कि हे राजा लोगो ! मैं आप को प्रणाम करता हूं आप का कल्याण हो, राजाओं ने पूछा कि कहो जयद्रथ क्या बात है ? जयद्रथ बोला कि बस अब मैं युद्ध नहीं करूंगा मैं अभी घर को जाऊंगा, अर्जुन ने मेरे मारने की प्रतिज्ञा की है और वह निस्संदेह कल मुझ को प्रातःकाल ही युद्ध के लिये बुलावेगा, इस लिये मैं चाहता

हूं कि अभी से घर को चला जाऊं, जब अर्जुन शपथ खा कर मुझे मारने की प्रतिज्ञा करता है तो उस के मारने में क्या संदेह है ? बस अब आप सब को प्रणाम हो; जितना मिलना था मिल लिया, अर्जुन बड़ा निर्बुद्धि है जो मुझ अकेले को यम लोक में पहुंचाना चाहता है, हे मित्र ! क्या आप मेरी सहायता कर सकते हैं, हे वीर लोगो ! मुझ को अभय प्रदान दो क्या आप लोग अकेले अर्जुन से मेरी रक्षा नहीं कर सकते ? देखो पाण्डवों ने मेरे मारने के निमित्त कैसे सिंहनाद किये हैं ॥

जयद्रथ के इस प्रकार के भयातुर वचन सुन कर दुर्योधन बोला कि हे सिंध देश के राजा ! आप को क्या हो गया ? जयद्रथ बोला कि मुझ को आज्ञा दो कि मैं भाग कर ऐसा गुप्त होजाऊं कि जहां पाण्डव मुझ को देख भी न सकें। दुर्योधन बोला कि हे नरोत्तम ! मत डरो, कौन ऐसा वीर है जो हम सब क्षत्रियों के मध्य में तुझ अकेले को आधीन कर सक्ता है। मैं, कर्ण, चित्रसेन विविंशती, भूरिश्रवा, शल्य, वृषसेन, पुरु मित्र, जय भोज, कम्बोज, सुदक्षिण, सत्य वाह, विकर्ण, दुर्मुख, दुशाशनु, सुबाहू, कलिंग, विन्द, अनुविन्द द्रोणाचार्य, अश्वत्थामा और शकुनि के होते हुये और मेरी ग्यारह अक्षोहिणी सेना के वर्तमान होने पर भी आप को किस प्रकार भय हो सकता है। यह सब लोग तेरी ही रक्षा में हैं, और यदि इन से तुम्हारी रक्षा न हुई तो चाहे तुम आकाश में उड़ कर जाओगे वहां भी न होगी ॥

हे जयद्रथ! तुम आप भी पूर्ण बुद्धिमान हो फिर भय करना कौन सी बुद्धिमता है ? जब इस प्रकार दुर्योधन ने आश्वासन किया तो जयद्रथ उस को साथ ले कर द्रोणाचार्य के पास गया, वहां जा कर अर्जुन की प्रतिज्ञा सुना कर पूछने लगा कि हे प्रभो ! अर्जुन में मुझ से कौन गुण अधिक हैं, लक्षभेदन में, दूर गिराने में, हस्तलाघवता में किस बात में वह मुझ से अधिक है आप सब कुछ यथा तथ्य कहिये ॥

द्रोणाचार्य बोला कि हे तात ! विद्या में तो तुम और अर्जुन समान हो परन्तु योग और दुःख के सहने में अर्जुन तुम से अधिक है। तुम अर्जुन से क्यों भय करते हो ? तुम्हारी रक्षा मैं करूंगा। मैं उस व्यूह को बनाऊंगा कि जिस को अर्जुन तोर नहीं सकेगा, इस लिये भय मत करो अपने बाप दादे के धर्म पर चल कर यश का पालन करो, तुम ने वेद पढ़े हैं क्षत्रिय को इस प्रकार साहस को छोड़ना कहां लिखा है। भुज बल से विजय को प्राप्त करो कौरव, पाण्डव, यादव और मैं भी पुत्र समेत और शेष सब मनुष्य नाश वान हैं और काल पर शरीर त्यागेंगे तपस्वी जिन लोकों को तपोबल से पाते हैं क्षत्रिय युद्ध धर्म से पाते हैं इस लिये भय को छोड़ कर युद्ध करो ॥

यह सुन कर जयद्रथ ने भय दूर किया और युद्ध में चित्त लगाया इस के पश्चात कौरवों ने सिंहनाद किये और बाजे बजने लगे ॥

तैतालीसवां अध्याय

—:०:—

श्रीकृष्ण का अर्जुन की प्रतिज्ञा करने पर उपलम्भन करना, अर्जुन का अपनी प्रतिज्ञा पर स्थिर रहना, श्रीकृष्ण का सुभद्रा को धीर्ज देना ॥

तब श्रीकृष्णजी ने अर्जुन को कहा कि हे अर्जुन ! तुम ने न अपने भाईयों से पूछा, न मुझ से सम्मति ली, यूंही क्रोध वश हो कर प्रतिज्ञा करदी । यह काम आपने ठीक नहीं किया । जानते हो इसका क्या परिणाम हुआ है ॥

जयद्रथ तो डर के मारे घर को भाग चला था, परन्तु द्रोणाचार्य, कृपाचार्य और कर्ण आदि छः रथी उसकी रक्षा के लिये नियत हुए हैं । प्रातःकाल ही द्रोणाचार्य एक बहुत दुर्भेद्य व्यूह की रचना करेंगे, जिस का तोड़ना तो, क्या देखना भी दुःख दायी होगा । अब कहो क्या इच्छा है ?

अर्जुन बोला कि अजी श्रीकृष्ण जी ! क्यों मेरी निन्दा करते हो क्यों मेरे अस्त्रों और शस्त्रों का अपमान करते हो ! क्या यह छियों रथी मिल कर भी मेरी तुलना हो सक्ते हैं ? दिन चढ़ने पर जयद्रथ को मरा हुआ पाओगे। देवताओं समेत इन्द्र भी उसकी रक्षा करना चाहे तो उसको निष्फल ही

लौटना पड़ेगा । वह द्रोणाचार्य जिसको आप बड़ा योधा समझते हो, मैं पहिले उसी की खबर लूंगा ॥

मेरी प्रतिज्ञा कभी टूट नहीं सक्ती, और यदि जयद्रथ बच रहा, तो मैं आप अग्नि में प्रवेश करूंगा । इस लिये हे श्रीकृष्ण ! सूर्य के उदय होते ही मेरा रथ अलंकृत हो जाय ॥

तब अर्जुन ने श्रीकृष्ण को कहा कि आप घर जायें और शोक में निमग्न सुभद्रा जी को धीर्य दें वह उत्तरा समेत बहुत दुःखी है, तब श्रीकृष्ण जी अर्जुन के घर में गये, सुभद्रा उनको देख कर फूट २ कर रोने लगी और अभिमन्यु के गुणों को याद करके कहने लगी कि हे केशव ! तुम ने भी उसकी रक्षा न की, अर्जुन के गंडीव धनुष को धिक्कार है, भीमसेन के बल को धिक्कार है, पांचालों के बाणों को धिक्कार है, केकयों के मणों को धिक्कार है, जिन के देखते हुये बालक अभिमन्यु बलवान शत्रुओं से मारा गिया ॥

श्रीकृष्ण ने कहा हे यादवी सुभद्रा! शोक मत कर, तू वीर की स्त्री, वीरं पुत्र की माता, वीर की पुत्री और वीर ही की बहिन है, हे कल्याणिनी सुभद्रा ! पुत्र का शोक मत कर उसने परम गति को पाया है उस ने सहस्रों शत्रुओं को मारा और फिर आप मरा, उस शूर ने क्षत्रिय धर्म को आगे रख कर सत्यपुरुषों की गति को प्राप्त किया है, हम सब की यही अभिलाषा है कि हम को भी वैसा ही गति प्राप्त हो । हे यशस्विनि हमारे वंश में जो अन्य पुरुष हैं वह भी उसी

गति को पावें हम सब और हमारे मित्रादि उसी कर्म का करें जिस को कि तेरे यशस्वी पुत्र अभिमन्यु ने अकेले ही किया है ॥

इस प्रकार द्रौपदी और सुभद्रा को ढारस देकर श्रीकृष्ण फिर अर्जुन के पास आये और फिर सब से मिल कर और आज्ञा देकर अन्तः पुर में प्रवेश कर गये ॥

चुवालीसवां अध्याय

—:०:—

श्रीकृष्ण और दारुक का विचार करना ॥

जब श्रीकृष्ण घर को गये, तो उनका सारथी दारुक उनके साथ गया, श्रीकृष्ण जी अनेक प्रकार की बातें दारुक से करते रहे, दारुक ने कहा कि महात्मा पाण्डव ने बड़ी कठिन प्रतिज्ञा की है, ईश्वर उसकी प्रतिज्ञा को पूरी करे, यदि वह सिंध के राजा को न मार सका तो अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार अग्नि में प्रवेश करेगा, उस समय धर्म राज युधिष्ठर की क्या दशा होगी, उसकी सारी विजय का भार केवल अर्जुन पर ही है ॥

तब श्रीकृष्ण जी दारुक से कहने लगे कि हे दारुक! दुर्योधन अब यह यत्न करेगा कि किसी प्रकार भी कल जयद्रथ बचा रहे, ताकि अर्जुन अग्नि में प्रवेश करे, इस लिये

वह अपनी गयारह अक्षौहिणी सेना को उसकी रक्षा पर नियुक्त करेगा, अब मैं प्रातःकाल वही करूंगा जिससे सूर्य अस्त होने से पूर्व ही अर्जुन जयद्रथ को मारले, अर्जुन से अधिक कोई मेरा प्यारा नहीं है, मैं एक क्षण भर भी उस से पृथक नहीं हो सक्ता, इस लिये मैं अकस्मात सब क्षत्रियों को अर्जुन के आधीन करूंगा, प्रातःकाल सब लोग मुझ को अर्जुन का मित्र जानेंगे ॥

हे दारुक! सब अस्त्र, शस्त्र, गदा और कवच मेरे रथ में रख दो, और रथ को अच्छी तरह से अलंकृत करो, सूर्योदय के साथ ही मैं युद्ध में चलना चाहता हूं, अर्जुन जिसको मारना चाहेगा, वही मारा जायेगा, हे दारुक! विजय निश्चय से हमारी ही होगी ॥

दारुक ने कहा कि महाराज बहुत अच्छा, सूर्योदय पर आप का रथ पूर्णता से अलंकृत हो जायगा ॥

पैंतालीसवां अध्याय

—:o:—

अर्जुन का अपनी प्रतिज्ञा को स्मरण कर के व्याकुल होना और स्वप्न में शिवजी के पास जाकर पाशुपात अस्त्र को प्राप्त करना ॥

जब श्री कृष्ण विश्राम करने के लिये अपने स्थान को

चले गये तो अर्जुन भी लेट गिया, परन्तु उस को नींद कहां। जब एक बार आंख लगी तो अपनी प्रतिज्ञा का स्मरण बार २ डराने लगा, तब श्री कृष्ण जी सामने आये, अर्जुन ने पूजा करके पास विठाया और कहा कि हे माधव ! कदाचित् जयद्रथ सूर्यास्त होने तक न मरा तो मैं अवश्य ही मर जाऊंगा। मैंने यह प्रतिज्ञा करके निश्चित बड़ा भार अपने ऊपर लिया है, हे माधव ! मेरी सहायता करो ॥

यह वचन सुन कर श्री कृष्ण जी बोले कि अर्जुन शोक मत करो, शोक नाश कारक कर्म है। जो करने के योग्य हो उस को करो, कर्म से पृथक जो मनुष्य का शोक है, वही शत्रु है शोक करने वाला अपने शत्रुओं को प्रसन्न करता है और बन्धुओं को दुःख देता है, इस लिये हे अर्जुन ! शोक मत करो, अर्जुन बोला कि हे भगवन् ! अभी ग्यारह अक्षौहिणी कौरवी सेना से बहुत थोड़ी मृत्युवश हुई हैं। यदि यह सब एक दिन के लिये जयद्रथ को छुपा रखें तो मैं क्या करूंगा ?

श्री कृष्ण जी ने कहा कि हे अर्जुन ! तुम को शिवजी ने पशुपति अस्त्र दिया था, वह तुम को याद होगा, याद न हो तो शिवजी की उपासना करो, वह अवश्य ही प्रसन्न होकर तुम को वह अस्त्र देंगे, तब अर्जुन ने श्री कृष्ण जी को साथ लिया और बड़े २ पर्वतों पर से होते हुये आकाश मार्ग पर चलते हुये शिवजी के पास गये, उस ईश्वर को बैठा हुआ

देख कर स्तुति करने लगे, शिवजी ने आशीर्वाद देकर कहा कि तुम्हारा आना सफल हो, जो इच्छा हो कहो मैं उसे पूरी करुंगा, तब अर्जुन ने पशुपात अस्त्र मांगा, शिवजी ने वह अस्त्र दे दिया, तब श्री कृष्ण समेत अर्जुन लौट कर आये इस के पश्चात् अर्जुन को नींद नहीं आई और वह जाग कर अनेक प्रकार की चिन्ता करने लगा ॥

छयालीसवां अध्याय

—:०:—

युधिष्ठर का पूजा पाठ को समाप्त करना श्री कृष्ण का आना युधिष्ठर का बार बार विजय के लिये प्रार्थना करना, अर्जुन का आना और सात्यकि को युधिष्ठर की रक्षा में नियुक्त करके आप जयद्रथ से लड़ने को आना ॥

जब रात बीत गई और सुवेरा हुआ तो बान्दी और मागधों ने उत्तम गीत गा गाकर युधिष्ठर को जगाया, उन में से एक गीत की टेक यह थी" आप का वंश अपने अभीष्टों को प्राप्त करे." तब महाराज ने शौचादिक कर्म करके स्नान किया और सन्ध्या बन्दन करके ब्राह्मणों को दान दिया, इतने में श्री

कृष्ण जी आये, युधिष्ठर ने यथा योग्य पूजन करके अपने पास बिठाया और हाथ जोड़ कर कहने लगा कि हे माधव! अब पाण्डवों की लज्जा आप के हाथ है, अर्जुन ने बड़ी कठिन प्रतिज्ञा की है, रथियों से सारथी अधिक युद्ध करते हैं, अब आप के विना हमारी और कोई गति नहीं ॥

श्री कृष्ण जी बोले कि युधिष्ठर क्यों घबराते हो ? तुम ने अर्जुन को क्या समझा हुआ है ? तुम आज निस्संदेह जयद्रथ को मरा हुआ पाओगे, इतने में अर्जुन भी आ गया, उस के रात के स्वप्न को सुन कर सब लोग प्रसन्न हुये और अपनी विजय मनाने लगे, इतने में द्वार पाल ने आ कर सूचना दी कि महाराज रथ आ गये ॥

तब श्री कृष्ण जी सारथ कर्म करने लगे और अर्जुन रथ पर चढ़ कर धनुष बाण ले कर डट गया, जाते हुये सात्यकी को कहने लगा कि हे शिनी वंशियों में उत्तम, मैं सब कामों से बढ़ कर युधिष्ठर की रक्षा को अच्छा समझता हूं, इस लिये आप युधिष्ठर के पास रह कर उस की रक्षा करें । सात्यकी बोला कि बहुत अच्छा । तब अर्जुन शत्रु की सेना की ओर गया और सात्यकी युधिष्ठर की रक्षा करने लगा ॥

सैंतालीसवां अध्याय

—:-०-:—

धृतराष्ट्र का शोच करना और संजय को बार २ पूछना, संजय का फिर युद्ध का वृत्तांत सुनाना और द्रोणाचार्य के शकट व्यूह का वर्णन करना ॥

इतना वृत्तांत सुन कर धृतराष्ट्र बोला कि हे संजय ! मैंने विलाप के बहुत वचन सुन लिये, अब मेरा मन विह्वल हो रहा है। मुझ को कोई रोचक वृत्तान्त सुनाओ, बताओ कौरवों ने अर्जुन की इस प्रतिज्ञा को सुन कर क्या किया, वह बन्दि और मागध गण हम को अपने गीतों और वादित्रों की ध्वनि से प्रसन्न नहीं करते हैं। मैंने दुर्योधन को बहुत २ समझाया, परन्तु उस ने मेरी बात न मानी। कहो कौन २ वीर अर्जुन को रोकने के लिये आगे बढ़े ? द्रोणाचार्य ने क्या उपाय किया जयद्रथ किस प्रकार से सुरक्षित किया गया ?

संजय बोला कि महाराज ! मैंने सब वृत्तान्त अपनी आंखों देखा है, यह शोच करने का कोई अवसर नहीं, बलवान काल प्राचीनकाल से सब मनुष्यों को अपने वश में करता चला आया है, आप के पुत्रों का नाश आप ही से उत्पन्न हुआ, न आप द्यूत कर्म को प्रवृत्त कराते, न उन की यह दशा

होती। जब श्री कृष्ण जी आप को समझाने आये थे, तभी अपने पुत्रों को समझा लेते, तो फिर भी इस दुर्दशा का निवारण होता, परन्तु आप ने अपने पुत्रों को रोका ही नहीं इस लिये हे राजन्! अब चित्त लगा कर इस सर्व नाशक युद्ध का वृत्तान्त सुनो॥

जब प्रातः काल हुआ और पाण्डव रण भूमि में आये तो द्रोणाचार्य ने अपनी सेना का शकट व्यूह बनाया। यह व्यूह चौबीस कोश लंबा और पीछे से दश कोश चौड़ा था उस के बीच में पद्मगर्भ नाम गुप्त व्यूह रखा और पद्मगर्भ में शूची नाम और गुप्त व्यूह रखा, द्रोणाचार्य ने सोमदत्त, कर्ण, अश्वत्थामा, शल्य, वृषसेन और कृपाचार्य को कहा कि तुम जयद्रथ के साथ वहां से छे कोश के अंतर पर शूची व्यूह के पाश्वर्य में रहो. एक लाख घोड़े, साठ हजार रथ. चौदह सहस्र हाथी और इक्कीस सहस्र पदाती तुम्हारे साथ रहेंगे जो कोई शकट व्यूह को तोड़ कर पद्मगर्भ व्यूह का भेदन करेगा और यहां से बराबर छे कोश तक युद्ध करता २ जायगा वही तुम को पावेगा, फिर तुम को किस का भय है। इन्द्र भी तुम पर आक्रमण नहीं कर सकता, जयद्रथ उन महारथियों से वेष्टित होकर सात सहस्र गन्धारियों के साथ चला, तीन सहस्र सिंधी भी साथ थे, आप का पुत्र दुर्मर्षण डेढ़ सहस्र मस्त हाथियों के साथ सेना के आगे नियत हुआ उस के पीछे आप के दोनों पुत्र दुशासन और विकर्ण नियत हुये॥

इस प्रकार जयद्रथ की रक्षा करके द्रोणाचार्य ने सहस्रों राजा, रथ, घोड़े और शूर वीर अपने व्यूह के मुख्य स्थानों में अधिकृत किये, कृतवर्मा को शूची व्यूह के मुख्य पर नियत किया उस के पीछे काम्बोज और जलसंध नियत हुये उन के पीछे दुर्योधन और कर्ण, फिर लाखों शूरवीरों ने शकट के मुख को रोका, द्रोणाचार्य आप वहां नियत हुये उन के पीछे राजा भोज हुआ ॥

इस प्रकार से रक्षा किया हुआ वह व्यूह सर्वथा अपूर्व और अभेद्य हुआ, द्रोणाचार्य को छोड़ कर कोई मनुष्य उस के अन्त को नहीं जानता था; राजा दुर्योधन उस को देख कर बड़ा प्रसन्न हुआ ॥

अड़तालीसवां अध्याय

—:०:—

दोनो सेनाओं का आमने सामने आना, दुर्मर्षण का अर्जुन को युद्ध में बुलाना, अर्जुन का दुर्मर्षण और दुशासन की सेना को मार कर भागना ॥

जब दोनों सेना एक दूसरे के सामने आईं, भेरी और दुन्दभी बजने लगी, शस्त्रों का तुमुल शब्द हुआ, फिर अर्जुन दिखाई पड़ा, तब नकुल के पुत्र शतानीक और धृष्टद्युम्न

ने पाण्डवी सेना को अलंकृत किया, तब दुर्मर्षण ने उच्च स्वर से कहा कि मैं अर्जुन के साथ लड़ना चाहता हूं, अर्जुन मेरे सामने आवे. यह बात सुन कर अर्जुन ने श्री कृष्ण को कहा कि मेरे रथ को दुर्मर्षण के सामने ले चलो, श्री कृष्ण रथ को चला कर दुर्मर्षण से एक तीर के अन्तर पर रथ को लेगये तब अर्जुन ने धनंजय शंख को बजाया और श्री कृष्ण ने पांचजन्य का ॥

शंखों की ध्वनि से कौरवी सेना में ऐसा भय उत्पन्न हुआ कि योधाओं के रथों में ही मूत्र और विष्टा निकल गये, व अर्जुन ने बड़े वेग से आक्रमण किया और हाथियों के दलों को तोड़ कर सब सेना को छिन्न भिन्न किया, अनेक राजा पृथ्वी पर गिरे, हाथियों की सूंड मनुष्यों की भुजायें और शिर स्थान २ पर पड़े हुये दिखाई देने लगे कई २ योधा जिन के शिर कट गये थे हाथ में तलवार लिये हुये आगे पीछे दौड़ने की चेष्टा में दिखाई दिये और शीघ्र ही शिथिल होकर गिर पड़े, कई तो अपने लगे हुये घाव को न जान कर युद्ध बराबर किये जारहे थे, वरन प्रत्येक योधा दूसरे को मारने की ही चिन्ता में था और अपने जीवन की कभी चिन्ता न रखता था ॥

इस प्रकार एक दूसरे को पुकारते हुए भीन्दिपाल, प्रास, शक्ति, दुधारा खड्ग, फरसा, यूथक, धनुष और तोमर को चलाते हुए गदा और बाणों से परस्पर व्यथित करते

हुए सब कौरव और पाण्डव घोर युद्ध में प्रवृत हुए, अर्जुन ने अनेक शिर काटे, भुजा तोड़ीं और हाथियों को गिराया उसकी हस्तलाघवता से भयभीत आप की सेना भागी, स्वारों को गिरा कर खाली घोड़े रण क्षेत्र से भागे, और हाथी अपने ही दल को रौंदते हुए बेमुख हो गये, तब दुर्मर्षण भाग कर द्रोणाचार्य की शरण में गया और दुशासन सामने आया। उसकी सिंह नाद तो बड़ी थी, परन्तु अर्जुन के सामने उसकी सारी सेना बाणों से पीड़ित हो २ कर भागी अर्जुन ने गुप्त ग्रंथिवाले भल्लों से सब के शिरों को काटा और रुण्डों से पृथ्वी को आच्छादित कर दिया॥

हे महाराज! वहां असंख्य घोड़े दिखाई दिये, धनुष हस्तत्राण, खड्ग बाजूबन्द और स्वर्णमयी भूषणों से अलंकृत अनेक कटी हुई भुजायें दिखाई दीं, क्षत्रियों के कटे हुए शरीर उस खेत को अत्यन्त भयानक रूप में प्रकट करते थे इसके पीछे द्रोणाचार्य की शरण चाहता हुआ दुशासन शकट व्यूह में प्रवेश कर गया॥

उनचासवां अध्याय

—:o—

द्रोणाचार्य और अर्जुन की बात चीत, अर्जुन का द्रोणाचार्य को छोड़ कर जयद्रथ को

खोजना और कौरवी योधाओं का अर्जुन से युद्ध करना ॥

तब अर्जुन व्यूह के मुखिया द्रोणाचार्य के सन्मुख गिया, और दण्डवत करके हाथ जोड़ कर बोला कि हे ब्राह्मणों में श्रेष्ठ आप मेरे गुरु हैं। मेरे कल्याण का विचार करो, मैं आप के इस कठिन व्यूह में प्रवेश किया चाहता हूं। आप मेरे और धर्मराज युधिष्ठर के पिता के समान हैं। जैसे अश्वत्थामा आप से रक्षित हैं, वैसे ही हम भी रक्षित हैं, मैं आप की कृपा से जयद्रथ को मारना चाहिता हूं, ब्राह्मण मेरी प्रतिज्ञा की रक्षा करें। जैसा मैं आप का प्रिय हूं वैसे ही वास देव भी आप के प्रिय हैं, हे गुरु जी ऐसी कृपा करें कि जिस में हमारा कल्याण हो ॥

द्रोणाचार्य जी हंस कर बोले कि हे अर्जुन! जब तक मैं जीता हूं, तब तक जयद्रथ को विजय करना तुझे योग्य नहीं। यह कहते ही द्रोण चार्य ने बाणों की वर्षा से अर्जुन को ढक दिया, तब दोनों ओर स बड़ा भयानक युद्ध हुआ, यह देख कर श्रीकृष्ण जी ने अर्जुन को कहा कि हे अर्जुन। समय को यूहीं गंवाना ठीक नहीं, जयद्रथ की खोजना करो। फिर अर्जुन ने द्रोणाचार्य की परिक्रमा ली और उस को छोड़ कर चल दिया, उस को छोड़ कर जाते हुये देख कर द्रोण बोला कि अर्जुन कहां जाते हो! युद्ध में बुलवाते हुये शत्रु को छोड़ना क्षत्रिय का धर्म नहीं, अर्जुन बोला कि आप

मेरे गुरु जी हैं, शत्रु नहीं हैं, और मैं शिष्य आप के पुत्र के समान हूं, ऐसा कौन मनुष्य है जो आप को युद्ध में जीत सके ॥

यह कह कर अर्जुन जयद्रथ की खोज में चलदिया, तब युधामन्यु उतमौजस और अन्य क्षत्रिय जो चक्र की रक्षा में नियुक्त थे उसके पीछे चलादिये, फिर जय, यादव, कृतवर्मा, काम्बोज और श्रुतायुध नें अर्जुन को रोका, उन के साथ दश सहस्र हाथी थे और और भी बहुत सी सेना थी उस सेना दल को पाकर अर्जुन आगे बढ़ने से हट गिया ॥

पचासवां अध्याय

कृतवर्मा आदि शूरों का अर्जुन से युद्ध होना श्रुतायुध और सुदक्षिण का मारा जाना और शेष सेना का भागना ॥

जब अर्जुन आगे बढ़ने से रुक गिया तो उसको विवश हो कर युद्ध करना ही पड़ा, थोड़े ही काल में उसने अनेक क्षत्रियों को मार कर पृथ्वी पर गिरा दिया, फिर द्रोणाचार्य से भयंकर युद्ध होने लगा जिस से वह वीर अत्यन्त घायल हो गिया, तब कौरव उसको हटा कर परे ले गये और कृतवर्मा

लड़ने लगा, अर्जुन ने कृतवर्मा की सेना का बहुत नाश किया और उसके धनुष को काट दिया, इतने में अर्जुन व्यूह में प्रवेश कर गया, कृतवर्मा उसका तो कुच्छ न कर सका परन्तु पांचाल रथियों को जो उस के पीछे जा रहे थे रोकने में समर्थ हुआ, उत्तमौजस और युधामन्यु ने बहुतेरा यत्न किया परन्तु वह अन्दर जाने का मार्ग न पासका और उनका समान युद्ध कृतवर्मा से होता रहा ॥

इतने में श्रुतायुध अर्जुन से लड़ने को आया, यह श्रुतायुध बड़ा पराक्रमी था किसी समय में उसकी माता ने वरुण से वर पाया था कि यह कुमार सब से अजेय होगा, वरुण ने उस कुमार को एक शक्ति दी थी और कहा था कि जब तुम को अत्यन्त दुस्सह दुख हो तभी इसको चलाना और जो क्षत्रिय लड़ता हो, उसी के ऊपर फैंकना यदि अकारण चलाओगे तो यह तुम्हारे ही ऊपर गिरेगी, मनुष्य अविनाशी तो हो नहीं सकते और मरना सब को है परन्तु कोई शत्रु तुम को जीत न सकेगा, इस प्रकार के वर के प्रभाव से श्रुतायुध निडर हो कर अर्जुन से लड़ने आया ॥

अर्जुन ने श्रुतायुध को वाणों से ढक दिया फिर श्रुतायुध ने भी अर्जुन को घायल किया। कुछ काल उन का भयंकर युद्ध होता रहा अंत को श्रुतायुध ने अर्जुन के सारथी मारने की इच्छा से श्री कृष्ण पर शक्ति छोड़ी, श्री कृष्ण तो प्रहार करते ही न थे और न शस्त्रधारी ही थे इस लिये वर प्रभा

से वह शक्ति उलटी श्रुतायुध पर ही गिरी और वह उस से तत्क्षण मर गया ॥

श्रुतायुध को मरे हुये देख कर सारी सेना में हाहाकार मच गया और शूर बीर योधा भागने लगे, यह देख कर काम्बोज का पुत्र सुदक्षिणा आगे बढ़ा और सब दलों को समेट कर अर्जुन से लड़ने आया, उस की शक्ति प्रहारों से अर्जुन को क्षण भर मूर्छा होगई, परंतु फिर वह शीघ्र ही सुचेत होकर लड़ने लगा, फिर अर्जुन ने क्रोध में आकर सुदक्षिणा के रथ को तोड़ कर उस को हृदय में घायल किया जिस से वह टूटे वृक्ष के समान मुंह के बल गिरा और मृतक होकर पृथ्वी पर सोगया ॥

श्रुतायुध और सुदक्षिणा को मरा हुआ देख कर सब कौरवी सेना भाग गई ॥

इक्यावनवां अध्याय

अभिषाह, शूरसेन, शिवय, वशातय, श्रतायु, दीर्घायु आदि वीरों का अर्जुन से युद्ध, अर्जुन का सब को मार कर सेना को भगाना ॥

तब अभिषाह, शूरसेन, शिवय, वशातय आदि अर्जुन पर वाण वर्षा करने लगे, अर्जुन ने पहिले तो उन के साथियों को वाण वर्षा से डरा कर भगा दिया और फिर उन को ऐसी तीव्रता से घायल किया कि वह विचारे अचेत हो कर ऐसे गिरे कि फिर न उठ सके ॥

फिर श्रुताय और अच्युतायु लड़ने आये, परंतु शीघ्र ही अर्जुन से घायल हुये। फिर उन्हों ने अर्जुन पर ऐसी वाण वर्षा की कि वह अचेत हो कर ध्वजा दण्ड के पीछे जा छुपा लोगों ने कहा कि अर्जुन मर गया, त तो कौरवों ने बाजे बजाये और सिंह नाद किये, श्री कृष्ण अर्जुन की यह दशा देख कर अत्यन्त विस्मित हो कर उस को ढारस दिलाने लगा फिर उसने वहां से उठाकर युद्ध के लिये प्रस्तुत किया ॥

तब अर्जुन ने तीव्र वाण वर्षा की और श्रतयु आदि को वाणों से ढक दिया, परन्तु श्रतायु ने वह वाण छोडे कि जो टिड्डी दल के समान आकाश में छागये, अर्जुन ने इन्द्रास्त्र से उस सब वाण जाल को काटा और श्रतायु और अच्युतायु को मार कर भूमि पर गिरा दिया ॥

तब उनके पुत्र नियतायु और दीर्घायु क्रोध में भर कर उठे और सब को वाण वृष्टि से मथन करने लगे, उन्हों ने हाथियों के द्वारा अर्जुन को रोका, परन्तु प्रज्वलित अग्नि के समान अर्जुन को कौन जीत सक्ता था, उन के शिर और भुजा शीघ्र ही कट गईं और वह पृथ्वी पर गिराये

गये, अर्जुन का वह युद्ध बड़ा कठिन हुआ, अर्जुन ने चारों ओर नाश किया, उसकी महारों से हाथी रुधिर का वमन करने लगे, तब अर्जुन जयद्रथ की खोज में आगे बढ़ा ॥

फिर अनेक म्लेछ अर्जुन के सन्मुख आये, उनकी आंखें और रूप डरावना था, उन्हीं में काकवर्ण, दुराचारी, स्त्रियों के लोभी, वारदशक, उपद्रवी और युद्ध करने वाले बाहीक थे, इनके अतिरिक्त हाथी के समान पराक्रमी द्राविड़े और वशिष्ठ जी की गौ से उत्पन्न होने वाले म्लछ और दारव आतिसार, दरद पुन्द्र और व्रात जिन की संख्या बहुत थी अर्जुन से लड़ने लगे, परन्तु बाण खा २ कर भूमि पर अचेत सोते गये, अर्जुन ने अनेक क्षत्रियों का संघात किया और पृथ्वी को शिरों से ढक कर रुधिर की नदियां बहादीं। अर्जुन जयद्रथ की खोजना में और आगे बढ़ा, फिर उस के श्रुतायु और अम्बष्ठ ने रोका परन्तु अर्जुन ने शीघ्र ही उसको धनुष को काट डाला, और उसके घोड़ों को भी मारा, तब यह क्षत्रिय वीर गदा से श्रीकृष्ण समेत अर्जुन को मारने लगे, और दोनों को घायल किया, अर्जुन ने बाण वर्षा स दानों को ढक कर छे तीरों से उनकी गदा काटी, फिर गुप्त ग्रंथिवाले तीरों से तुरन्त उनके शिरों को काट डाला, इस युद्ध का देख कर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ; तब आप की सना भागी ॥

बावनवां अध्याय

—:o:—

दुर्योधन का निराश होकर द्रोणाचार्य को घर्षणा करना, द्रोणाचार्य का दुर्योधन को युद्ध करने के लिये भेजना और उत्तम कवच पहिनाना ॥

अपनी सेना का इस प्रकार नाश देख कर दुर्योधन निराश होकर द्रोणाचार्य के पास गया और कहने लगा कि हे पुरुषोत्तम ! अर्जुन ने हमारे वीरों का नाश किया और लाखों मनुष्यों, हाथियों और घोड़ों को भी मार दिया, यदि यही अवस्था रही तो अब वह शीघ्र ही जयद्रथ को भी मार देगा, आपने और मैंने जयद्रथ को विश्वास देकर रखा था, परन्तु आप भी अर्जुन से हार गये तो अब उस का जीना कैसे हो सक्ता है, मैं उसको भी क्षण भर में मरा हुआ ही समझता हूं। हम समझते थे कि अर्जुन आप को उल्लंघन नहीं कर सकेगा, परन्तु वह आप के देखते हुये ही आप को छोड़ कर दूर चला गया, इस से वह सब सेना व्याकुल है और मैं इस को मरी ही समझता हुं ॥

मेरे विचार में आप पाण्डवों के हित में प्रवृत चित हैं और यह सोच कर मेरे मन में शांति नहीं आती, मैंने आज तक

अपनी सामर्थ्य के अनुसार आप में उत्तम वृत्ति रखी है, परन्तु आपने उस पर कुछ ध्यान नहीं किया, और सदैव हमारा अप्रिय करने वाले पाण्डवों को चाहते रहे, और हम पर मीठी छुरी का प्रहार कराते रहे, यदि आप जयद्रथ को अभय प्रदान नहीं करते तो मैं उस को घर जाने से क्यों रोकता! यमराज के वश में आया हुआ मनुष्य चाहे तो बच जाये, परन्तु अर्जुन के सन्मुख आया हुआ जयद्रथ कभी नहीं बच सक्ता। आप मेरे दुःखी वचनों पर क्रोध न करें, और जयद्रथ को बचाने का उपाय सोचें॥

यह सुन कर द्रोणाचार्य बोले कि तू मुझ को अश्वत्थामा के समान प्रिय है, मैं तेरे वचन में दोष नहीं लगाता तू यह नहीं जानता कि श्रीकृष्ण जैसे उत्तम सारथी के साथ अर्जुन छोटा सा भी विवर करके सेना में प्रवेश कर सकता है, क्या उस के रथ के पीछे एक कोश तक फैंके हुये बाणों को तुम ने नहीं देखा है,? मैं तो वृद्ध हूं और वैसी शीघ्रता से नहीं चल सक्ता। हमारे मुख पर यह पाण्डवी सेना स्थित है, यदि मैं इस को छोड़ कर जाऊं तो इधर से सत्यानाश हो जायेगा। हां यहां ठहिर कर मैं युधिष्ठिर के पकड़ने का यत्न करता हूं और अर्जुन से नहीं लड़ता हूं॥

तू बड़ा शूर मनुष्यों का रखने वाला समान कुल और कर्म अकेले अर्जुन को पाकर क्यों नहीं उस के सामने जाता भय को छोड़, पृथ्वी भर का स्वामी हो सावधान हो कर

शत्रु के सामने जा और दोचार बाणों से उस को मार गिरा। इस में कोई लम्बी चौड़ी बात नहीं ॥

यह सुन कर दुर्योधन बोला कि हे आचार्य ! जो अर्जुन आप को भी पराजय कर गया, वह मुझ से कैसे जीता जासकता है, इन्द्र चाहे युद्ध में पराजय किया जाये, परन्तु अर्जुन विजय करने के योग्य नहीं है, उस ने कृतवर्मा और आप को भी हरा दिया, राजा श्रुतायु, सुदक्षिण श्रुतायुध और अश्रुतायू को भस्म कर दिया, फिर उस अर्जुन को मैं कैसे जीत सकता हूं ? मैं आप का दास होकर आप की शरण आया हूं आप मेरे यश की रक्षा करें ॥

द्रोणाचार्य बोला कि हे दुर्योधन ! आप सच कहते हैं अर्जुन वास्तव में दुर्जय है, परन्तु अब मैं तुझ को बलवान करता हूं, तेरे शरीर पर मैं सुन्दर कवच बांधता हूं, इस से कोई तुझ पर प्रहार नहीं कर सकेगा, इस लिये उस कवच को बान्ध कर आप क्रोध करके अर्जुन के सन्मुख जाओ ॥

तब द्रोणाचार्य ने दुर्योधन को स्वर्ण मयी कवच पहिनाई और मंत्रों से उस के कल्याण को चाहा और आशीर्वाद दी कि सब देवता और राज ऋषि तुम्हारा कल्याण करें, फिर कहने लगे कि यह कवच पूर्वकाल में शिवजी ने इन्द्र को वृतासुर को मारने के लिये दी थी, इन्द्र ने वृतासुर को मार कर वह कवच अंगिरा को दी थी और अंगिरा ने बृहस्पति को और बृहस्पति ने अग्निवेश्य को और अग्निवेश्य ने मुझ को,

अब वही कवच मैं आप को युद्ध के लिये बांधता हूं। यह कह कर द्रोणाचार्य ने मन्त्र द्वारा उस कवच को दुर्योधन को बांध कर युद्ध करने के लिये भेजा ॥

———

तिरपनवां अध्याय

—:o:—

दुर्योधन के अर्जुन से युद्ध करने को जाने पर पाण्डवों और कौरवी सेना का परस्पर युद्ध ॥

जब दुर्योधन अर्जुन से युद्ध करने के लिये गया तो पांडव लोग सोमकों समेत तीव्रता करके कौरवों पर टूट पड़े, तब धृष्टद्युम्न और द्रोणाचार्य का बड़ा युद्ध हुआ, धृष्टद्युम्न ने बाणों से द्रोणाचार्य की सेना को बहुत काटा, द्रोणाचार्य भी कालाग्नि के समान प्रज्वालित हो कर धृष्टद्युम्न की सेना को मारने लगा, उसने सब पांचालों और केकयों को रोक दिया। तब धृष्टद्युम्न ने द्रोणाचार्य को बहुत घायल किया, कौरवी सेना डर कर भागी और तीन खण्डों में विभक्त हो गई, कुच्छ तो कृतवर्मा के पास चली गई, कुच्छ जलसन्ध की शरण में चली गई और कुच्छ द्रोणाचार्य के ही पास रही ॥

द्रोणाचार्य फिर क्रोध कर के आगे बढ़ा और उसने धृष्टद्युम्न की सेना को पराङ्मुख कर दिया, फिर विविंशती, चित्रसेन, महारथी विकर्ण ने कुन्ती के पुत्र भीमसेन को चारों ओर

से घेरा, फिर विन्द, अनाविन्द, भाकूपीत्तमघूर्ति और बाह्लक ने द्रौपदी के पुत्रों को रोका, फिर शैव्य ने काशीराज के पुत्र अभिसुव को रोका, शल्य ने युधिष्ठिर को घेर लिया, दुशासन सात्यकी के सन्मुख गिया, शकुन ने माद्री के पुत्रों को रोका इस प्रकार सब महारथी एक दुसरे के सन्मुख जाकर डट गये ॥

जयद्रथ सब से पीछे था, उस के चक्र की रक्षा करने वाले दो वीर अश्वत्थामा और कर्ण दाहिनी और बायीं ओर ठहिरे हुये थे, पृष्ठ के रक्षक कृपाचार्य, वृषसेन शल, शल्य और दुर्तप थे, सोमदत्त आगे की रक्षा करता था ॥

इस प्रकार अनेक द्वन्द आपस में भिड़ने लगे, शकुनि व्याकुल हो कर भागा, धृष्टद्युम्न ने आगे बढ़ २ कर धावे किये और आचार्य पर तलवार ले कर कूदा, द्रोणाचार्य ने उस की ढाल तलवार काट ली और उस के घोड़ों और सारथी को मार कर चाहता ही था कि उस को मार दे कि सात्यकी यह दशा देख कर आगे बढ़ा और द्रोणाचार्य पर आक्रमण कर के धृष्टद्युम्न को छुड़ा लाया ॥

चौव्वनवां अध्याय

—:०:—

सात्यकी और द्रोणाचार्य का युद्ध ॥

तब सात्यकि और द्रोणाचार्य का महा भयंकर युद्ध हुआ

द्रोणाचार्य के सब अस्त्र शस्त्र कट गये और वह सात्यकि के पराक्रम और धनुर्विद्या में प्रवीनता को देख कर बड़ा प्रसन्न हुआ, उन के रथों के चलने से ऐसी धूल उठी कि सब आकाश धुआं धार होगया, सब योधा उस अपूर्व द्वैरथ युद्ध को देखने के लिये दूर २ खड़े होगये और शत्रु मित्र में कोई भेद दिखाई न दिया, जिस अस्त्र को द्रोणाचार्य चलाता था सात्यकि भी उसी का प्रयोग करता था ॥

फिर द्रोणाचार्य ने अग्नियास्त्र का प्रयोग किया और सात्यकि ने वरुणास्त्र से उस को शांत किया, यह देख कर लोग हाहाकार करने लगे, पक्षियों ने आकाश में चलना छोड़ दिया, उस समय सूर्य मध्यान्ह से आगे बढ़ा गया था, फिर युधिष्ठिर भीमसेन, नकुल, सहदेव, विराट और धृष्टद्युम्न ने सात्यकि की रक्षा की, उधर से दुशाशन भी द्रोणाचार्य की सहायता को आगया, परन्तु धूल के वर्तमान होने से अपने पराये में कोई भेद नहीं दिखाई देता था ॥

पचपनवां अध्याय

—:०:—

अर्जुन का जयद्रथ का खोज लगाने में प्रवृत होना ॥

अब इधर अर्जुन का वृत्तान्त सुनिये, जयद्रथ को मार

कर अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण करने का अभिलाषी अर्जुन श्रीकृष्ण जी सारथी समेत शत्रु दल को तोड़ता फोड़ता आगे बढ़ा, वह अपने बाणों को एक कोश पर फेंकता था, और साथ ही श्रीकृष्ण जी भी रथ को उड़ा कर ले जाते थे, उधर बाण से व्यथित हो कर शत्रु हटते थे, इधर अर्जुन का रथ उन को उल्लंघन करके पार हो जाता था। इस प्रकार अर्जुन बहुत सी सेना को मार कर आगे बढ़ा, तब विन्द और अनुविन्द उस के सामने आये, और बाणों को बरसाते हुये अर्जुन से लड़ने लगे, उन्हों ने श्रीकृष्ण जी को भी घायल किया, परन्तु अर्जुन ने पहिले तो विन्द को मारा और उस के शिर को काट कर पृथ्वी पर गिराया, फिर अनुविन्द के धनुष को काट कर उस के सारथी और घोड़ों को मार दिया॥

क्रोध युक्त अनुविंद गदा लेकर लड़ने आया और उस ने श्री कृष्ण को मस्तक पर प्रहार किया, परन्तु अर्जुन ने शीघ्र उस को भी मार गिराया, इस प्रकार दोनों अवान्ति के राजाओं को मार कर अर्जुन आगे बढ़ा वहां पर बहुत से क्षत्रियों ने उस को घेर लिया, अर्जुन ने श्री कृष्ण जी से कहा कि अभी जयद्रथ बहुत दूर है ऐसा उपाय करो कि शीघ्र ही कार्य हो जाये॥

श्री कृष्ण बोले कि घोड़े बहुत थके हुये हैं, मेरी सम्मति है कि तुम पृथ्वी पर उतर कर इन को रोको तो मैं घोड़ों को पकड़ कर विश्राम दिलाता हूं॥

अर्जुन ने कहा कि बहुत अच्छा, तब अर्जुन रथ से नीचे उतरा और श्रीकृष्ण भी रथ से उतर कर घोड़ों को सम्भालने लगे, अर्जुन को भूमि पर खड़े देख कर सब शत्रु उस पर टूट पड़े और चिल्लाने लगे कि यही समय है अर्जुन को मारो, परन्तु अर्जुन के आगे कौन योधा ठहिर सक्ता था? थोड़े ही काल में सब छिन्न भिन्न हो गये फिर श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कहा कि यह घोड़े पियासे प्रतीत होते हैं, यदि यह जल पीलें तो फिर स्वस्थ चित्त होजायें, अर्जुन ने झट बाणों से पृथ्वी को बेधा और एक उत्तम स्रोत वहां से जारी हुआ, श्री कृष्ण जी इस कर्म से अर्जुन की बड़ी शलाघा करने लगे ॥

छप्पनवां अध्याय

—:o:—

श्री कृष्ण जी का घोड़ों को तैयार करना और अर्जुन को रथ पर बिठा कर सब रथियों को छोड़ कर निकल जाना, जयद्रथ के सामने होने पर दुर्योधन का पहुंच जाना ॥

तब श्री कृष्ण ने घोड़ों को पानी पिलाया और स्नान कराके उन के घावों को दूर किया, शालिहोत्र कर्म जानने के कारण से उन की सब वेदना दूर की, जब घोड़ों की थकावट जाती रही तो उन को रथ में जोता और अर्जुन को उस पर

स्वार करके जयद्रथ की खोजना में दूर निकल गया, सब क्षत्रिय लोग उन के इस अपूर्व कर्म को देख कर बड़े चकित हूये, यहां तक कि कौरवों ने भी प्रशंसा की ॥

जब क्षत्रियों ने यह देखा कि अर्जुन इस प्रकार हाथ से निकल गया है तो वह जयद्रथ के विषय में निराश हो गये और अपने बल पराक्रम पर धिक्कार करने लगे, कई २ तो यह कहने लगे कि दुर्योधन के हेतु ही सब पृथ्वी नाश हो रही है, पाण्डव बड़े बलवान और अमित पराक्रमी है, उन के सन्मुख किसी सामान्य क्षत्रिय का ठहरना सम्भव नहीं, इस लिये दुर्योधन को ही उन से लड़ने दो, इतने में सूर्य डूबने के लग भग होगया ॥

तब अर्जुन ने जयद्रथ के समीप पहुंच कर इधर उधर की सब सेना को छिन्न भिन्न किया, श्री कृष्ण ने पांचजन्य शंख को बजाया जिस से सब सेना भयभीत होकर भागी, तब रथों, हाथियों और पदातियों के चलने से ऐसी धूल उठी कि उस से सारे आकाश में अंधेरा छागया और सूर्य गुप्त हो गया ॥

फिर कौरवों के योधा अर्जुन के सन्मुख हुये और ऐसे लड़े कि लौट कर न आये, अर्जुन ने सब को भस्म किया, कई लोग जान बचा कर ऐसे भागे कि उन का फिर पता नहीं लगा, द्रोणाचार्य और कृतवर्मा समझते थे कि अर्जुन व्यूह को नहीं तोड़ सकेगा, परंतु अर्जुन और श्री कृष्ण के

इस दुष्कर कर्म को देख कर जयद्रथ के जीवन की सब आशा निष्फल प्रतीत होने लगी ॥

तब श्री कृष्ण और अर्जुन ने जयद्रथ को छः महारथियों के बीच में देखा और कहा कि अय जयद्रथ ! अब हमारे सामने आया हुआ तू बच नहीं सकता, देवताओं समेत इन्द्र भी तेरी रक्षा के लिये समर्थ नहीं होसकते, इन के वचनों को सुन कर सूर्य के समान प्रकाशमान दोनों कालरूप योधा वीरों को देख कर सब कौरवी सेना को बहुत भय उत्पन्न हुआ और सब लोग जयद्रथ को मृतक हुआ मानने लगे, अर्जुन और श्री कृष्ण वार २ गर्जे और जयद्रथ को ऐसा देखने लगे कि जैसे दो बाज मांस को देखते हैं अथवा दो सिंह मृग को देखते हैं ॥

इतने में दुर्योधन आगया और वह अर्जुन के रथ को पीछे छोड़ कर आगे बढ़ कर अर्जुन के सन्मुख होगया, हे राजन् ! दुर्योधन के इस कर्म को देख कर सब कौरवों को ढारस हुई और वह फिर सिंहनाद करने और बाजे बजाने लगे, दुर्योधन को इस प्रकार आया हुआ देख कर श्री कृष्ण अर्जुन से कहने लगे ॥

हे अर्जुन ! देखो धृतराष्ट्र का पुत्र बड़ा बलवान पराक्रमी मित्रों से सदा द्वेष रखने वाला युद्ध में दुर्मद किस प्रकार पराक्रम करके तुम को पीछे छोड़ कर आगे बढ़ा है, इस के समान युद्ध में कोई धनुषधारी और अस्त्र नहीं है, हे तात ! समय आने पर इस के साथ मैं तेरा युद्ध उचित समझता हूं,

यही तुम्हारे अनर्थ का मूल है, अब इस पर चिरकाल से रोके हूये क्रोध को छोड़ो, यह परारब्ध से ही तुम्हारे संमुख आया है अब इस को मार कर अपना कार्य करो, यह सदा सुख में पला है इस ने कभी दुख नहीं पाया है इस लिये दुख में तुम्हारी सहन शीलता नहीं जानता, हे अर्जुन! देवता, असुर और मनुष्य तीनों मिल कर तेरे पराक्रम को नहीं सह सकते, अकेला दुर्योधन क्या कर सकता है ॥

हे महाबाहु! इसको इस प्रकार मारो जैसे इन्द्र ने वृत्रासुर को मारा था। इसी पाप बुद्धि ने कपट द्यूत से तुम को ठगा था इसी ने तुम को सदैव दुःख दिया था, द्रौपदी के दुखों का यही कारण था, यह भाग्यवश तुम्हारे सामने आगया है इस को मार लोगे तो सारी सेना आप ही भाग जायगी, इसको ऐसा मारो कि जैसे इन्द्र ने जम्भासुर को मारा था ॥

तब अर्जुन ने क्रोध से उत्तेजित हो कर श्रीकृष्ण को कहा कि मेरे रथ को दुर्योधन के सन्मुख ले चलो, मैं पहिले इसी को मारूंगा, तब श्रीकृष्ण आप के पुत्र के सन्मुख रथ ले गये, दुर्योधन निर्भय हो कर लड़ने लगा, उस ने श्रीकृष्ण और अर्जुन को आगे न बढ़ने दिया, जिस को देख कर सब क्षत्रिय प्रशंसा करने लगे फिर दुर्योधन ने अर्जुन और श्रीकृष्ण पर बहुत बाण बरसाये और सिंह नाद किये उधर से अर्जुन ने और श्रीकृष्ण ने भी सिंह नाद किये और हंसते हुये आगे बढ़े उन को बढ़ते हूये देख कर आपके वीरों को बड़ा संशय हुआ और वह कहिने लगे कि अब राजा मरा अब राजा मरा ॥

यह सुन कर महा पराक्रमी दुर्योधन बोला कि भय मत करो मैं इन दोनों को अभी यम लोक में पहुंचाऊंगा, लोगों को इस प्रकार धीर्ज दे कर दुर्योधन अर्जुन से कहने लगा कि हे अर्जुन! मैंने तुम्हारी स्वर्ग में शस्त्र विद्या सीखने की बहुत प्रशंसा सुनी है और परोक्ष में लोग तुम्हारी बहुत शलाघा करते हैं, अब गुरुओं से अभ्यस्त और देवताओं से सीखे हुये सब शस्त्र अस्त्र मुझ को दिखाओ, यदि तू सचमुच पांडु का पुत्र है तो अब मुझे अपना प्राक्रम दिखा ॥

सतावनवां अध्याय

—:०:—

दुर्योधन और अर्जुन का युद्ध ॥

तब दुर्योधन ने अपनी बाण वर्षा से अर्जुन को ढक दिया और श्रीकृष्ण जी को भी छाती में घायल किया, अर्जुन ने कई बाण मारे परन्तु वह बाण दुर्योधन के कवच पर लग कर टूट पड़े, यह देख कर श्रीकृष्ण को बड़ा आश्चर्य हुआ और वह कहने लगे कि हे अर्जुन! तेरे बाण भी वही हैं और तेरी शक्ती भी वही है फिर क्या कारण है कि तेरे बाण निष्फल जाते हैं, अर्जुन ने कहा कि हे श्रीकृष्ण जी! द्रोणाचार्य ने जो यह कवच दुर्योधन को पहिनाया है यह इसी का कारण है मैं इस कवच को जानता हूं परन्तु दुर्योधन को कुछ प्रतीत नहीं, अच्छा अब मैं और प्रकार से इसको जीतूंगा ॥

तब अर्जुन ने मानव अस्त्र का प्रयोग किया, परन्तु अश्वत्थामा ने उन बाणों को बीच में ही काट दिया। अर्जुन को बहुत आश्चर्य हुआ और वह श्रीकृष्ण जी से कहने लगा कि अब मैं इन बाणों को नहीं चलाऊंगा क्योंकि अब चलाने से यह मुझ को ही मारेंगे। यह देख कर दुर्योधन ने अपने बाण छोड़ और श्रीकृष्ण और अर्जुन को घायल किया। तब अर्जुन ने दुर्योधन के सारथी और घोड़ों को मारा और उसके रथ को तोड़ना आरंभ किया, दुर्योधन विरथ होकर लड़ने लगा, परन्तु अर्जुन न उसकी हथेलियों में बाण मार कर उस को व्यथित कर दिया और उसकी ऊंगलियों के मांस को नखों से पृथक कर दिया। तब तो दुर्योधन की बहुत दुर्दशा हुई यह देख कर अन्य महारथी दौड़े आये और अर्जुन से लड़ने लगे॥

अर्जुन ने अमित पराक्रम दिखा कर सब को भस्म किया और अंगों से रहित सैकड़ों हाथी पृथ्वी पर गिर पड़े। तब श्रीकृष्ण जी ने अर्जुन को कहा कि धनुष को टंकारो। अर्जुन ने सेसाठी किया, श्रीकृष्ण ने शंख बजाया। इस से सब वीर भयभीत होकर पृथ्वी पर गिरे। तब जयद्रथ के रक्षक अर्जुन के सन्मुख आये और सिंह नाद करने लगे॥

अठावनवां अध्याय

—:o:—

अर्जुन का जयद्रथ के रक्षकों से युद्ध॥

तब कौरवों ने बड़े बाजे बजाये, अर्जुन ने देवदत्त और श्रीकृष्ण ने पांचजन्य शंख बजाया जिससे पृथ्वी और आकाश शब्दायमान हो गये। सब सेना उस तुमुल शब्द से भयभीत हुई। सब महारथों ने अर्जुन को चारों ओर से घेर लिया। फिर अश्वत्थामा ने श्रीकृष्ण और अर्जुन को बाणों और भल्लों से घायल किया, और अर्जुन के रथ के घोड़ों को भी ताड़ित किया इस पर अर्जुन को क्रोध आया और उसने पृषड़ बाणों से अश्वत्थामा को पीड़ित किया। कर्ण और वृषसेन को भी ताड़ित किया, और शल्य की मुष्टि को धनुष और बाण समेत काटा, शल्य दूसरा धनुष बाण ले आया फिर भूरिश्रवा से भयंकर युद्ध हुआ, भूरिश्रवा ने श्रीकृष्ण के चाबुक को काटा और अर्जुन को भी घायल किया, बाणों से घायल अर्जुन ने क्रोध करके सब शत्रुओं को छिन्न भिन्न किया और दूर तक भगा दिया ॥

उनसठवां अध्याय

—:-०-:—

कौरवी और पाण्डवी सेना का परस्पर युद्ध, द्रोणाचार्य और युधिष्ठर का परस्पर युद्ध, युधिष्ठर का विरथ होना ॥

दूसरी ओर पांचाल द्रोणाचार्य से लड़ रहे थे, और

बाणों से महात्मा ब्राह्मण और उसके दल को घायल कर रहे थे, यह देख कर वृहच्छत्र सामने गिया क्षेम धूर्त उससे लड़ने लगा, इतने में धृष्टकेतु भी आपहुंचा, और शूरधन्वा शीघ्रता से उसके सन्मुख हुआ। इतने में द्रोणाचार्य ने युधिष्ठर को रोका। आप का पुत्र विकर्ण नकुल से लड़ने लगा और उसको तीरों से ढकने लगा, दुर्मुख ने अनेक बाणों से सहदेव को रोका। व्याघ्रदत्त ने सात्यकि पर प्रहार किया। सोमदत्त ने द्रौपदी के पुत्रों को रोका। आर्षशृंगी ने भीमसेन को रोका॥

तब युधिष्ठर ने द्रोणाचार्य को बहुत बाणों से घायल किया, द्रोणाचार्य ने पचीस बाणों से उस को छाती पर घायल किया और उस के धनुष को तोड़ दिया। द्रोणाचार्य ने उस को बाणों से ऐसा ढका कि सब लोग उस को मृतक मानने लगे और कहने लगे कि द्रोणाचार्य ने युधिष्ठर को मार दिया है, युधिष्ठर ने उठ कर शीघ्र ही नया धनुष लिया और द्रोणाचार्य के बाणों को काटा और स्वर्ण दण्ड युक्त महा भयंकर शक्ती को उस पर छोड़ा। कौरव चल्लाये कि द्रोणाचार्य को ईश्वर बचाये, द्रोण ने शीघ्र ही ब्रह्मास्त्र को छोड़ा जिस से शक्ती नष्ट हो गई, युधिष्ठर ने भी ब्रह्मास्त्र चला कर द्रोण के धनुष को काटा, आचार्य ने गदा छोड़ी, युधिष्ठर ने भी गदा का ही प्रयोग किया वह दोनों गदा मार्ग में भिड़ कर वहीं गिर पड़ीं॥

तब द्रोण ने युधिष्ठर के घोड़ों को मार कर उस के शस्त्रों को काटा और तीक्ष्ण बाणों से उस को घायल किया, युधिष्ठर रथ को छोड़ कर भूमि पर कूदा, द्रोणाचार्य तीक्ष्ण बाणों को छोड़ता हुआ और उस की सेना को मोहित करता हुआ उस की ओर दौड़ा, युधिष्ठर को पराजित हुये देख कर पाण्डव हाहाकार करने लगे और कहने लगे कि द्रोणाचार्य ने राजा को मार दिया, परन्तु युधिष्ठर शीघ्र ही दौड़ कर सहदेव के रथ में चढ़ गिया ॥

फिर क्षेमधूर्ति ने बृहच्छत्र के धनुष को काटा, बृहच्छत्र ने उस के सारथी और घोड़ों को मार कर नीचे गिराया और उस का शिर भी काट दिया, फिर धृष्ट केतु ने वीरधन्वा को मारा, फिर दुर्मुख और सहदेव का युद्ध हुआ, सहदेव ने बाण वर्षा से उस के घोड़े और सारथी को मारा, दुर्मुख वीरधन्वा के पुत्र त्रिगर्त देशी निरामित्र के रथ पर चढ़गिया, सहदेव ने निरमित्र को भी मार कर यमपुरी में उस के पिता के पास भेजा, तब तो त्रिगर्त देशी रोने लगे ॥

व्याघ्र दत्त सात्यकि से लड़ने लगा, परन्तु सात्यकी से युद्ध करने की सामर्थ्य कहां, सहिज ही उस से पराजय हुआ तब कौरवों की सब सेना भाग गई तब द्रोणाचार्य आप ही उस के सामने गये, द्रौपदी के पुत्रों ने सोमदत्त को घेर कर मार दिया अलंबुष भीमसेन से लड़ने लगा और उस के तीस रथों को मार गिया। फिर उस ने अनेक प्रकार के शस्त्र

छोड़े और सेना समेत भीमसेन को घायल किया। तब कौरव सिंह नाद करने लगे। यह देख कर भीमसेन ने त्वाष्ट्र अस्त्र का प्रयोग किया, जिस से राक्षस की सारी माया जाती रही। तब अलंबुष भागा और द्रोणाचार्य की सेना में चला गिया। तब तो भीमसेन की बड़ी प्रशंसा होने लगी॥

अलंबुष फिर आया घटोत्कच ने उस को भलि प्रकार रोका। बहुत काल तक दोनों का आपस में युद्ध होता रहा, फिर घटोत्कच ने अलंबुप को मार गिराया जिस से कौरवी सेना को बड़ा भय हुआ। सब पाण्डव घटोत्कच की स्तुति करने लगे। उस हिड़म्बा के पुत्र ने सब गुरूओं को नमस्कार किया, पाडवों ने सिंह नाद किये और बाजे बजाये॥

साठवां अध्याय

—:०:—

द्रोणाचार्य और सात्यकी का युद्ध, युधिष्ठर का पांचजन्य शंख को सुनना और सात्यकी से अर्जुन की सहायता के लिये प्रार्थना करना॥

धृतराष्ट्र ने संजय से कहा कि अच्छा अब मुझ को सात्यकी और द्रोणाचार्य के युद्ध का हाल सुनाओ, संजय ने

कहा कि द्रोणाचार्य ने सात्यकी को बहुत पीड़ित किया, युधिष्ठर ने उस सात्यकी रूपी चन्द्रमा को द्रोणाचार्य रूप राहु से ग्रसा हुआ देख कर सब सेना को ललकारा कि सात्यकी की सहायता करो, इस से सब पाण्डव द्रोणाचार्य की ओर बढ़े, युधिष्ठर सेना समेत सब के पीछे गया भीमसेन आदि द्रोणाचार्य से डट गये और सात्यकी को छुड़ा लाये ॥

इतने में पांच जन्य शंख का बड़ा तुमुल शब्द हुआ और कौरवों का सिंहनाद सुनाई दिया गांडीव धनुष की टंकार बंद होगई, युधिष्ठर ने समझा कि अर्जुन पर कोई आपत्ति आन पड़ी है, इस लिये मूर्छित सा हो कर सात्यकि को कहने लगा कि हे वृष्णियों में श्रेष्ठ माधव सात्यकी! मैं अर्जुन को आपत्ति में ग्रस्त हुआ देखता हूं, उस के गाण्डीव धनुष की टंकार सुनाई नहीं देती और कौरवों के भयानक सिंहनाद सुने जा रहे हैं, आप से बढ़ कर मैं किसी योधा को सामर्थ्य नहीं देखता जो इस समय अर्जुन के पास जाकर उस की सहायता करै, अर्जुन तेरा सखा और गुरू है और श्री कृष्ण भी तुम्हारे परम प्रिय और पूज्य हैं, इस लिये मैं आप से आशा करता हुं कि आप मेरी सहायता करेंगे, कृपा करके अर्जुन के पास जाईये और उस की सब प्रकार से रक्षा कीजिये, सूर्य उदय के समय पर अर्जुन दुर्योधन की सेना में प्रविष्ट हुआ था और अब दिन का तीसरा पहिर है, इस लिये मेरा चित्त मूर्छित होरहा है, मैं नहीं जानता कि अर्जुन जीता है, या मर गया है, आप शीघ्र ही जाकर अर्जुन की सहायता

करके मेरे हृदय को निशल्य करें, हम सब लोग तुम्हारे पीछे द्रोणाचार्य को रोकेंगे ॥

यह वचन सुन कर सात्यकी बोला कि हे राजा ! मैं भी अर्जुन के समान आप का आज्ञा कारी हूं, जो २ आप आज्ञा दें मैं उस को अवश्य करूंगा, अर्जुन में और मुझ में कोई भेद न समझें, कोई काम ऐसा नहीं जो आप की आज्ञा पाकर मैं न कर सकूं, मेरे प्राण आप की आज्ञा में रह कर चले जायें तो महा भाग्य हैं, मैं दुर्योधन की सेना से युद्ध करूंगा, हे राजन् ! आप सावधान रहिये, मैं अर्जुन के पास जाता हूं और जयद्रथ के मारने में अर्जुन की सहायता करता हूं मैं आप को निश्चय दिलाता हूं कि जब तक जयद्रथ मर न ले मैं नहीं लौटूंगा, परन्तु अर्जुन के वचन आप सुन लें, उस ने जाते समय मुझ को कहा था कि तुम युधिष्ठर को अकेला छोड़ कर कहीं न जाना, क्योंकि द्रोणाचार्य युधिष्ठर को पकड़ना चाहता है, इस लिये मैं तुम्हारे और प्रद्युम्न के आश्रय राजा युधिष्ठर को छोड़ता हूं, द्रोणाचार्य को अवसर मिला तो वह निस्संदेह युधिष्ठर को पकड़ लेगा, यदि युधिष्ठर पकड़ा गया तो मेरी सब जय व्यर्थ जायेगी और हम को फिर बनको जाना पड़ेगा, इस लिये हे राजन् ! आप की रक्षा मेरे सुपुर्द है और जब तक प्रद्युम्न जी यहां न हों मेरा जाना ठीक नहीं, अर्जुन के विषय में आप कोई भय न करें श्री कृष्ण जी उस के साथ हैं फिर उस को कौरवी सेना से क्या भय है, नहीं

पर सत्य पराक्रमी धनुषधारी वीर अर्जुन और श्री कृष्ण जी हैं, वहां पर किसी प्रकार की आपत्ति नहीं आ सकती ॥

इस लिये हे महाराज ! आप अपनी रक्षा का विचार कीजिये, मैं चला गिया तो आप का रक्षक कौण होगा, आप मेरी रक्षा में हैं, इस लिये मैं आप को छोड़ कर कहीं नहीं जाऊंगा, आप बुद्धि से इस बात को विचारो और फिर मुझ को आज्ञा दो ॥

युधिष्ठर ने कहा कि आप कहते तो ठीक हैं, परन्तु अर्जुन के विषय में मेरा विचार ठीक नहीं और मैं यही ठीक समझता हूं कि आप चले जायें, भीमसेन, द्रौपदी के पुत्र और धृष्टद्युम्न मेरी रक्षा करेंगे, द्रोणाचार्य धृष्टद्युम्न को मार नहीं सकता, वह उसी के मारने के लिये उत्पन्न हुआ है, हे सात्यकी ! आप विश्वास करो और मेरे विषय में व्याकुल मत हो, धृष्टद्युम्न निश्चित द्रोणाचार्य को रोके गा ॥

सात्यकी ने बहतेरा कहा परन्तु युधिष्ठर न माना, सात्यकी ने सोचा कि कदाचित् युधिष्ठर यह न समझे कि यह युद्ध में जाने से डरता है, इस लिये अन्त को कहने लगा कि अच्छा यदि आप की यही इच्छा है, तो मैं अवश्य जाऊंगा और आप देखेंगे कि मैं उस सेना को कैसे दलन करता हूं, मेरे लिये एक उत्तम रथ तैयार कराओ और उस में सब प्रकार के अस्त्र शस्त्र रखवाओ, उत्तम घोड़े जुतवाओ मैं अभी दुर्योधन की सेना को तोड़ फोड़ कर अर्जुन के पास पहुंचूंगा ॥

युधिष्ठर ने वैसा ही रथ अलंकृत कराया और सिन्ध देशी उत्तम घोड़ जुतवाये, सात्यकी स्वस्तयण करा कर उस रथ पर स्वार हुआ, भीमसेन भी उस के पीछे २ चला, सात्यकी ने कहा कि हे पाण्डव आप राजा की रक्षा करो, इस काम के योग्य आप ही हैं, आप मेरी सामर्थ्य को जानते हैं और मैं आप की सामर्थ्य को जानता हुं, इस लिय यह काम आप के विना और कोई कर नहीं सकता, जो आप मेरा हित चाहते हैं तो यहीं रहें, अर्जुन के हाथ से जयद्रथ के मरने पर फिर मैं आप से मिलुगा । यह सुन कर भीमसेन ठहिर गया ॥

हे राजन्! सात्यकी को देख कर आप की सेना बहुत पीड़ित हुई और सब योधा भय से कांपने लगे ॥

इकसठवां अध्याय

—:-*-:—

सात्यकी का दुर्योधन की सेना में जाना, द्रोणाचार्य का रोकना, सात्यकी का छोड़ कर चला जाना, कृतवर्मा का युद्ध करना, सात्यकी का उस को विरथ करना और चले जाना ॥

जब सात्यकी ने कौरवी सेना में प्रवेश किया तो

द्रोणाचार्य ने उस को रोका । सात्यकी ने बाण बरसाये द्रोणाचार्य बोला कि तुम भी आचार्य की भान्ति भाग तो नहीं जाओगे ? सात्यकी बोला कि हे ब्राह्मण ! आप का कल्याण हो । मैं अपने गुरु के पीछे जाऊंगा । जब मेरा गुरु अर्जुन आप से नहीं लड़ा तो मुझ में लड़ने की क्या सामर्थ्य है ? यह कह कर सात्यकी आगे चल दिया और द्रोणाचार्य देखता ही रह गिया ॥

तब कृतवर्मा ने उस को रोका, सात्यकी ने उस से युद्ध किया और उस के घोड़े और सारथी को मार दिया, कृतवर्मा भी नीचे गिर पड़ा सात्यकी ने बाण मारे परन्तु कृतवर्मा उठा और रथ को घसीट कर बाहिर ले गिया, और क्षण भर दम ले कर रथ को घसीट कर बाहिर ले गिया, सात्यकि इस अवसर को पाकर आगे चला गया और सारथी को कहने लगा कि कर्ण की सेना में मुझे ले चल, यह देख कर द्रोणाचार्य सात्यकी के पीछे दौड़ा, परंतु पांडवी सेना ने उसे वहीं रोक लिया ॥

राजा धृतराष्ट्र यह वृत्तान्त सुन कर आंसू बहाने लगा और अपने पुत्रों और सेना का शोच करता हुआ बार २ संजय से पूछने लगा, कि हे संजय ! मुझ को यह बताओ कि मेरी सेना किस प्रकार मारी गई । मैं सेना को सदैव शिक्षित रखता था सब लोग अच्छा २ वेतन पाते थे और पारितोषक भी लेते थे बड़े २ राजा लोग जो हमारे बुलाने पर युद्ध में आये हैं, हमारे साथ बहुत स्नेह रखते हैं और

हमारे लिये प्राण त्यागना भी स्वीकार करते हैं, फिर किस कारण हमारी पराजय ही होती है, निश्चित यह सब कुछ परारब्ध से ही हो रहा है, मुझे पूर्ण विश्वास है कि मेरे पुत्र जान तोड़ कर लड़ होंगे, परन्तु जय का होना तो परारब्ध के आधीन है, अच्छा मुझे यह बताओ कि सात्यकी के जाने पर मेरे पुत्रों ने क्या किया ?

संजय बोले कि महाराज, आप ही इस नाश का मूल हैं आपने अधर्म से पांडवों को राज्य से निकाल दिया, अब अपनी दुर्मति के कारण इन सब अनर्थों को भोगे, सुनो महाराज मैं आप को सब वृत्तान्त सुनाता हूं, जब सात्यकी आप की सेना में प्रवेश कर गया तो पाण्डवों ने कृतवर्मा को जा घेरा, मैंने कृतवर्मा को अपूर्व कर्म करते देखा है, उसने सब पाण्डवों को अपने उग्र तेज से वहीं रोक दिया, तब भीमसेन ने उसको बाणों से वेध कर शंख बजाया, फिर सहदेव, धर्मराज और नकुल ने बाण बरसाये, द्रौपदी के पुत्र और धृष्टद्युम्न ने भी कृतवर्मा पर प्रहार किया, विराट, शिखंडी और धृष्टद्युम्न ने भी बाण चलाये, परन्तु कृतवर्मा ने सब का अनादर किया, और सब को पृथक २ बाणों से घायल किया; भीमसेन ने शक्ती चलाई, परन्तु कृतवर्मा ने उसको शीघ्र ही काट दिया फिर क्रोध युक्त भीमसेन ने तीक्ष्ण बाणों से कृतवर्मा को रोका परन्तु आप ही घायल हुआ ॥

इस के पीछे शिखंडी सामने आया और चिर काल तक कृतवर्मा से लड़ता रहा, कृतवर्मा ने उस को बहुत

घायल किया और शिखंडी अचेत हो कर गिरा, यह देख कर पाण्डवों के महारथी शीघ्र ही उस को परे लेगये, फिर कृत वर्मा ने चन्देरी, पांचाल, केकय देशी और अन्य शूरों को भी पराजय किया, यहां तक कि उस के आगे सब योधा मुख फेर गये ॥

बासठवां अध्याय

—:०:—

सात्यकी से कृतवर्मा का युद्ध होना, जल सिन्धु का मारा जाना और फिर द्रोणाचार्य का घोर युद्ध होना ॥

अब तनक सात्यकी का वृत्तान्त सुनो, उस ने सारथी को कहा कि मेरे रथ को कृतवर्मा के सन्मुख ले चलो यह पांडवी सेना का नाश करता है, मैं इस को जीत कर अर्जुन के पास जाऊंगा, जब सात्यकी कृतवर्मा के सन्मुख गया, तो दोनों में बड़ा भयंकर युद्ध हुआ, अन्त को सात्यकी ने कृतवर्मा के सारथी और पृष्ठ रक्षक को मार दिया और उस के धनुष को काटा, जब इस प्रकार कृतवर्मा विरथ हुआ तो सात्यकी चल पड़ा रासते में जल सिंधु के साथ बड़ी टक्कर हुई बड़े घोर युद्ध के पश्चात् सात्यकी ने हाथी पर चढ़े हुये जल सिंधू की दोनों भुजा काट लीं, फिर तो उस का शिर काटना भी कठिन न

था, सात्यकी ने तीक्ष्ण भल्लों से उस के शिर को काटा और उस को यमपुरी में पहुंचाया। अपने राजा को मृतक देख कर सब मगध देशी योधा हाहाकार करने लगे और भयभीत हो कर चारों दिशों में भागने लगे ॥

तब जलसिंधु के मरने पर सात्यकी ने हाथी के विमान को भी गिराया. यह देख कर भय से त्रसित हाथी अपनी ही सेना को मर्दन करता हुआ भागा, अपनी सेना को छिन्न भिन्न देख कर द्रोणाचार्य शीघ्रगामी घोड़ों को रथ में जोड़ कर सात्यकी के सामने गया, बड़े २ कौरव योधा भी उस के साथ चले, तब सात्यकी का कौरवों से बड़ा भयकारी युद्ध हुआ, सात्यकी ने दुस्सह, दुर्मुख, विकर्ण और चित्रसेन को घायल किया और फिर दुर्योधन से लड़ने लगा, अपने क्षुरप्र नाम बाण से उस ने दुर्योधन की प्रत्यंचा को काटा, दुर्योधन ने झट दूसरा धनुष लेकर सात्यकी को घायल किया, आप के और पुत्र भी बाण मारने लगे, परन्तु सात्यकी ने शीघ्र ही दुर्योधन का धनुष काटा, तब दुर्योधन भाग कर चित्रसेन के रथ में चला गया ॥

दुर्योधन की यह दशा देख कर आप की सेना हाहाकार करने लगी, तब कृतवर्मा आगे बढ़ा और सात्यकी से लड़ने लगा, दोनों वीर चिर काल तक लड़ते रहे, अन्त को सात्यकी ने तीक्ष्ण बाणों से कृतवर्मा के कवच को काटा और ऐसे बाण मारे कि उसके शरीर से रुधिर बहने लगा, जिस से व्याकुल हो कर कृतवर्मा रथ से गिर पड़ा, यह देख कर सात्यकी आगे चला

गया और कृतवर्मा सचेत हो कर फिर पाण्डवों से लड़ने आया ॥

तब द्रोण ने सात्यकी पर प्रहार किया और बहुत उग्र रूप हो कर दोनों लड़ते रहे, द्रोण ने सात्यकी के सारथी को बाणों से अचेत किया, परन्तु सात्यकी आप ही बाग डोर पकड़ कर लड़ता रहा, द्रोण ने उस पर शक्ति छोड़ी परन्तु वृथा ही गई, सात्यकी ने पराक्रम करके द्रोण के सारथी को मार दिया, तब तो घोड़े आपही रथ को उड़ा कर भागे और इधर उधर दौड़ने लगे, कौरवी सेना यह देखकर द्रोणाचार्य की चिन्ता करती हुई पुकारने लगी कि द्रोणाचार्य के रथ को पकड़ो, द्रोणाचार्य के घोड़े को पकड़ो, यह कह कर सब योधा इधर उधर दौड़ने लगे तब तो सेना में खिलबिली सी मच गई ॥

फिर द्रोण ने घोड़ों को ठहराया और व्यूह के मुख में नियतहुआ, इधर से अमित पराक्रमी सुदर्शन सात्यकी के सन्मुख आया, कुछ देर तक दोनों का समान युद्ध होता रहा, परन्तु अन्त को सात्यकी ने राज कुमार सुदर्शन का शिर काट कर पृथ्वी पर गिरा दिया, तब सात्यकी वीरों से लड़ता भिड़ता जिस रासते अर्जुन गिया था उसी रासते चलपड़ा ॥

तिरसठवां अध्याय

—:०:—

सात्यकी का कम्बोज, दरद और बर्ब्बरों को जीतना, दुर्योधन, दुस्सह, विविंशती और चित्र सेन से युद्ध और दुर्योधन का भागना॥

तब सात्यकी ने अपने सारथी को कहा कि हे सूत ! मैं कम्बोज देशियों से लड़ना चाहता हूं, मेरे रथ को कम्बोज आदि यवनों के सन्मुख ले चलो सारथी बोला कि हे माधव ! मैं बाणों से किंचित नहीं डरता. जिधर कहैं उधर को ही जा सक्ता हूं, तब सारथी रथ को यवनों के सामने ले गिया, कम्बोजी, दरद. बर्बर आदि म्लेछ क्रोध करके दौड़े, सात्यकी ने सब को बाणों से घायल किया और सब के मुख फेर दिये सैंकड़ों यवन तीर खा २ मर गये और शस्त्रों समेत उन की भुजायें कट गईं॥

तब सात्यकी ने सारथी को कहा कि हे सूत ! अब दुर्योधन की सेना की ओर मुंह फेरो, मैं इस युद्ध में दुर्म्मद कुटिल पराक्रमी कौरव राज से लड़ना चाहता हूं. तब सारथी दुर्योधन की सेना की ओर चला। उसको आया हुआ देख कर दुर्योधन, चित्रसेन, दुशासन, विविंशती, दुस्सह, तरुण, शकुनि, दुधर्षण, क्रथ, और अन्य बहुत से शूरवीर लड़ने आये॥

सात्यकी बोला कि द्रोणाचार्य की सेना को उल्लंघन कर लिया तो दुर्योधन क्या वस्तु है, चलो सूत रथ को शीघ्र हांको, मैं इस सेना को ऐसे रोकूंगा जैसे मर्य्यादा समुद्र को रोकती है। तब "मारो, भिड़ो, देखो" इस प्रकार के अनेक शब्द हुए, हे राजन्! सात्यकी ने सर्पों के समान बाणों से आप के पुत्रों को ढक दिया, मैंने जो अद्भुत बात देखी वह यह थी कि सात्यकी का एक भी बाण निष्फल नहीं गया, हे राजन्! आप की सेना उन बाण समूहों से अत्यन्त दुःखित हुई, निस्संदेह अर्जुन ने वैसा नाश नहीं किया, जैसा कि सात्यकी ने सेना को मारा, तब आप के वीरों ने सात्यकी को अनेक बाणों से घायल किया, सात्यकी ने सब को ताड़ित किया और फिर सिंहों की भांति युद्ध क्षेत्र में घूमने लगा, दुर्योधन को बहुत क्रोध आया, और उसने आठ बाणों से सात्यकी को घायल किया, फिर चित्रसेन, दुस्सह और दुशासन ने भी बाण चलाये और सात्यकी को मारा, परन्तु सात्यकी ने तनिक भी चिन्ता न की ॥

तब सात्यकी ने दुर्योधन के सारथी को मार गिराया, और घोड़ों को भी ताड़ित किया, इस पर दुर्योधन के घोड़े निरंकुश होकर भागे और दुर्योधन को लेकर दूर निकल गये, जब दुर्योधन भाग गया तो और किसी की कहां सामर्थ्य थी कि युद्ध में सामने ठहिरे, सब दुम दबा कर भागे, हे राजन्! आप के पुत्रों को इस प्रकार परास्त कर के वीर पराक्रमी सात्यकी निष्कण्टक होकर घूमने लगा, इतने में

वह अर्जुन के बहुत ही निकट पहुंच गया, कौरवी सेना सात्यकी के पराक्रम की बहुत प्रशंसा करने लगी ॥

चौसठवां अध्याय

—:०:—

द्रोणाचार्य की दुशासन को धर्षणा, द्रोणाचार्य और पांचालों का परस्पर युद्ध ॥

द्रोणाचार्य ने दूर से पत्थरों की खड़खड़ाहट सुनी और समझा कि म्लेच्छ और पहाड़ी लोग पाषाण युद्ध कर रहे हैं। उस ने सारथी को कहा कि यह शब्द पहाड़ी लोगों के पाषाण युद्ध का है, मैं समझता हूं कि सात्यकी इन से लड़ रहा है, चलो मेरा रथ भी वहां ही ले चलो, सारथी ने कहा बहुत अच्छा और यह कह कर रथ को मोड़ने लगा, देखा तो सब कौरवी सेना भागी हुई चली आ रही है, सात्यकी उन को मार कर दूर निकल गया था ॥

द्रोणाचार्य ने दुशासन को देख कर कहा कि हे भरतवंशी! राजा दुर्योधन का क्या हाल है? अब भाग कर कहां जा रहे हो, जुआ खेलने म तो तुम ही सब से बढ़ २ कर दाव लगाते थे और द्रौपदी को भी तुम ही सब से अधिक दुःख देते थे, तुम ही कहते थे कि अब तू दुर्योधन की दासी हो कर उस को कपड़े पहिनाया कर इसी वीरता पर महात्मा पाण्डवों

पर हंसी ठट्ठा किया करते थे? धिक्कार है उस राजा पर जिस का भाई ऐसा हो! और धिक्कार है उस सेना पर, जिस के महा रथी ऐसे हों! जाओ अब मां की गोद में फिर बैठो?

अब भी समय है, पाण्डवों से सन्धि करलो, भीमसेन ने तुम्हारा रुधिर पीने की प्रतिज्ञा की हुई है, वह निश्चित सत्य होगी, सात्यकी से घबरा कर तुम ऐसे भाग रहे हो, तो अर्जुन के सामने तुम्हारी क्या दशा होगी॥

दुश्शासन ने द्रोणाचार्य के शब्दों का कुछ उत्तर न दिया और ऐसा चिताया कि मानो उस ने कुछ भी नहीं सुना, तब वह फिर लौटा और सात्यकी के पीछे गिया, द्रोण अपनी सेना के मुख पर फिर नियत हुआ. धृष्टद्युम्न ने उस से भयंकर युद्ध किया, द्रोण ने द्रुपद के पुत्र वीर केतु को मारा तब भाई के दुःख से पीड़ित हो कर चित्र केतु, सुधन्वा, चित्र वर्म्मा, और चित्ररथ, उस पर टूट पड़े, परन्तु द्रोणाचार्य के मारने से सब के सब मार गये, धृष्टद्युम्न ने द्रोण को बाणों से ढक दिया जिस से उसको मूर्छा आगई, धृष्टद्युम्न अपने रथ से कूद कर झट वहां पहुंचा और चाहता ही था कि उस का शिर काट ले, जब कि द्रोण फिर सचेत होकर उठा और धृष्टद्युम्न को वैतारिच बाणों से घायल करने लगा धृष्टद्युम्न ने भी बहुत वार किये; पांचाल सोचने लग कि अब द्रोण हार जायेगा, परन्तु इसी अवसर में धृष्टद्युम्न का सारथी मारा गया और सारथी रहित घोड़े रथ को उड़ा कर भागे

द्रोणाचार्य पांचालों से लड़ कर अपने पूर्वस्थान पर आकर नियत हुआ और व्यूह की रक्षा करने लगा ॥

इधर दुश्शासन सात्यकी के पास पहुंच कर लड़ने लगा परन्तु हार गया, सात्यकी ने उस को तीरों से ढक दिया, दुर्योधन ने यह देख कर त्रिगर्त देशियों को आगे किया, सात्यकी ने पांच सौ त्रिगर्त देशियों को यमपुरी में भेजा और उन के तीन सहस्र हाथियों को मार २ कर भगा दिया, तब अर्जुन की ओर चला, परन्तु दुश्शासन ने फिर बाण छोड़े जिस से सात्यकी को ठहरना पड़ा, सात्यकि ने इस बार दुश्शासन के सारथी और घोड़ों को मार दिया और धनुष और हस्तत्राण काट कर चाहता था कि दुश्शासन का शिर काटे परन्तु भीमसेन की प्रतिज्ञा स्मरण करके फिर लौटा और उस को छोड़ कर चला गया, दुश्शासन की यह अवस्था देख कर त्रिगर्त देशी उस को बिठा कर ले गये ॥

धृतराष्ट्र ने पूछा कि हे संजय ! मेरी सेना में कोई भी ऐसा वीर न था कि जिस ने सात्यकी को रोका हो ! मैं बड़ा आश्चर्य करता हूं कि इस प्रकार का कर्म करने से सात्यकी ने निश्चित अपने अपूर्व बल को प्रकट किया है! कहो इस के पीछे क्या हुआ ?

संजय बोला कि हे राजन् ! वहां सेनाओं के भिड़ने का बड़ा भयंकर शब्द हुआ, द्रोणाचार्य के व्यूह को देख कर सब प्रशंसा करने लगे, तब भीमसेन और युधिष्ठिर ने अपनी

सेना को उत्तेजित किया और दुर्योधन से जाकर युद्ध करने लगे, धृतराष्ट्र वार २ दुर्योधन को युद्ध में जुटे हुये सुन कर बड़ा शोक करने लगा और कहने लगा कि हे संजय! मुझे दुर्योधन का बहुत शोक है, वह न कभी युद्ध में गया न उस ने ऐसा कठिन काम किया, सुख में पला और राज लक्ष्मी को भोगता रहा, भला वह अकेला युद्ध जैसे घोर कर्म को बलवान शत्रुओं के सन्मुख कैसे करने को सामर्थ्य हुआ होगा ॥

संजय ने कहा कि हे महाराज! दुर्योधन ने अकेले ही युद्ध में अपूर्व कर्म किया और सारी पाण्डवी सेना को भली प्रकार मथ डाला, उस के बाणों की वर्षा से सारी पाण्डवी सेना तितर बितर होगई, यह देख कर भीमसेन पांचालों समेत लड़ने आया परंतु दुर्योधन ने विराट और द्रुपद समेत सब को घायल किया और युधिष्ठर से बोला कि ठहर २ मैं तेरी खबर लेता हूं। फिर दोनों का वड़ा युद्ध हुआ, कौरवों ने युधिष्ठर को चारों ओर से घेर लिया। युधिष्ठर ने दुर्योधन का धनुष काट लिया, यह देख कर राजा ने नया धनुष लिया, द्रोणाचार्य झट दुर्योधन की सहायता के लिये आये ॥

पैंसठवां अध्याय

—:o:—

द्रोणाचार्य का पाण्डवों के वीर क्षत्रियों को

मारना, बृहच्छत्र राजा चन्देरी और उस के पुत्र को मारना औ दूसरे क्षत्रियों को भी यम लोक में पहुंचाना ॥

तब बृहच्छत्र उस के सन्मुख गया, उस ने सब कौरवों को बड़ा भय दिखलाया, द्रोणाचार्य का सारथी भी बहुत घायल हुआ, तब भरद्वाज द्रोण ने चार बाणों से उस के घोड़े और सारथी को मार कर बृहच्छत्र का हृदय विदीर्ण किया; फिर बारी बारी शिशुपाल का पुत्र और उस का पुत्र लड़े, परन्तु मारे गये, इस के पीछे जरासन्ध का पुत्र लड़ने आया परन्तु वह भी मारा गया, यह देख कर लोगों ने भीमसेन और धृष्टद्युम्न को पुकारा और कहा कि ब्राह्मण ने सब क्षत्रिय नष्ट कर दिये, इस के क्रोध के आगे ठहिरना बड़ा कठिन है, किसी प्रकार से इस को मारना चाहिये, जब तक यह जीता है, पाण्डवों की विजय होनी असंभव है, यह देख कर धृष्टद्युम्न का पुत्र क्षत्रधर्मा सामने गया परन्तु मारा गया, द्रोणाचार्य पांचालों का काल रूप हो कर सब को भस्म करता रहा, तब अक्षौहिणी के स्वामी राजा द्रुपद पाण्डवों को आगे करके आप आगे बढ़े ॥

छयासठवां अध्याय

—:-०-:—

युधिष्ठर का भीमसेन को सात्यकी की खोज में भेजना। भीमसेन का जाना, द्रोणाचार्य और दूसरे रथियों से युद्ध होना ॥

युधिष्ठर ने फिर पांचजन्य शंख का शब्द सुना और समझा कि अर्जुन मर गया है और अकेला श्रीकृष्ण लौट कर आरहा है, युधिष्ठर ने बहुतेरा देखा परन्तु अर्जुन और सात्यकी का रथ अथवा ध्वजा उसकी दृष्टि में न आये, तब धर्म राज को मूर्छा हो गई और वह रथ पर ही गिर पड़ा, थोड़ी देर के पश्चात् जब होश आई तो सारथी को कहने लगा कि मेरे रथ को भीमसेन के पास ले चलो ॥

सारथी वायु वेग से रथ को उड़ा कर शीघ्र ही भीमसेन के पास आया, भीमसेन कहने लगा कि हे राजन्! तुम को क्या हो गया, मैंने आप की इस प्रकार की मूर्छा न कभी देखी न सुनी है, आप हम दुःखियों की गति हैं, हे महाराज! उठिये, उठिये, यदि आप को कोई पीड़ा हो तो उसको मैं दूर करूंगा, हे बड़ाई देने वाले, चित्त में खेद न करो, मेरा कर्म निष्फल न होगा उठो, जो आज्ञा हो कहो ॥

भीमसेन के यह शब्द सुन कर युधिष्ठर को होश आई और वह कहने लगा हे भीमसेन! मैं तेरे भाई देवताओं,

गन्धर्वों और दैत्यों के अकेले जीतने वाले को नहीं देखता हूं। उसके रथ की ध्वजा भी मुझे दिखाई नहीं देती। सात्यकी को मैंने उस की रक्षा के लिये भेजा था, उसका रथ भी दिखाई नहीं देता। इस लिये मुझ को अर्जुन का और विशेष कर के यादव सात्यकी का भी शोच है। इसी हेतु से मूर्छा पाता हूं। मैं पांच जन्य शंख की ध्वनि सुन रहा हूं। मेरा विश्वास है कि अर्जुन मारा गया और अकेला सात्यकी युद्ध कर रहा है यदि तुम मेरा वचन अंगीकार करो तो शीघ्र ही अर्जुन के पास जाओ ॥

यह वचन सुन कर भीमसेन बोला कि हे राजन्! मैं आप की आज्ञा को शिर पर धर कर जाता हुं, आप मेरे लिये उत्तम रथ सजवा दें, युधिष्ठर ने भीमसेन के लिये उत्तम रथ तैयार कराया और भीमसेन यथोचित प्रकार से मंगल विधि करके और ब्राह्मणों से आज्ञा ले कर चल पड़ा, उस समय भीमसेन ने धृष्टद्युम्न को कहा कि हे तात्! मैं राजा की आज्ञा से सात्यकी की खोज में जाता हुं, आप सावधानी से रहिये और द्रोणाचार्य के हाथ से राजा की रक्षा कीजिये, इस से बढ़ कर हमारे लिये कोई कार्य नहीं कि युधिष्ठर कौरवों के हाथ में न पड़ जाये, द्रोणाचार्य यही विचार कर रहे हैं कि किसी प्रकार से युधिष्ठर हमारे हाथ में आजावे, आप से बढ़ कर किसी योधा को भी युधिष्ठर की रक्षा में सामर्थ्य मैं नहीं देखता हूं ॥

यह सुन कर धृष्टद्युम्न बोला, कि हे तात ! आप निश्चित रहें, धृष्टद्युम्न को मारे बिना, द्रोणाचार्य युधिष्ठर को नहीं पकड़ सकता, इस प्रकार का आश्वासन पाकर भीमसेन अपने बड़े भाई युधिष्ठर को दण्डवत करके और ब्राह्मणों से आशीर्वाद लेकर अर्जुन और सात्यकी की खोजना करने के लिये कौरवी सेना की ओर चल पड़ा, चलते ही उस ने दुंदुभी बजाई और धनुष की प्रत्यंचा का कठोर शब्द किया, रथ के घोड़े हिन हिनाने लगे और वायु के वेग के समान कौरवी सेना की ओर दौड़े ॥

सोमकों और पांचाल देशियों समेत आते भीमसेन को देख कर हे राजन् ! आप के शूरवीरों ने जिन के नाम दुःशल, चित्रसेन, कुण्डभेदी, विविंशती, दुर्मुख, दुस्सह, विकर्ण, शल, विन्दु, अनुविन्दु, सुमुख, दीर्घबाहु, सुदर्शन, वृन्दारक, सुहस्त, सुषेण, दीर्घलोचन, अभयरुद्रकर्मा, सुवर्मा, दुर्विमोचन आदि थे भीमसेन को चारों ओर से घेर लिया। इन्हों ने इस प्रकार तीरों से ढक दिया, जैसे बादल सूर्य को गुप्त कर लेते हैं। भीमसेन ने शीघ्र ही वाण समूहों को छोड़ा और हाथियों के दलों को छिन्न भिन्न कर के सब कौरवी योधाओं को भगा दिया ॥

तब भीमसेन द्रोणाचार्य की सेना के सन्मुख गया, द्रोण ने वहीं रोक दिया और भीमसेन के ललाट पर तीर मारे, परन्तु शिरस्त्राण पर लग कर वह वाण नीचे गिर पड़े, आचार्य

ने समझा कि अर्जुन की भान्ति भीमसेन भी मेरा ही शिष्य हो कर मेरी पूजा करेगा, इस लिये कहने लगा कि हे महा बाहु भीमसेन! मुझ शत्रु को विजय किये विना तुम को शत्रु सेना में प्रवेश करना ठीक नहीं, तेरा छोटा भाई तो मेरी अनुमति से सेना में प्रविष्ट हुआ, परन्तु तेरे लिये यह कार्य असंभव है, भीम ने कहा कि हे ब्रह्मबन्धु! अर्जुन आप की अनुमति के आश्रय नहीं, वह इन्द्र की सेना में भी प्रवेश कर सक्ता है, उस ने दयावान हो कर आप की पूजा की, परन्तु मैं दयावान अर्जुन नहीं हूं। मैं तो आप का शत्रु भीमसेन हूं। आप हमारे पिता, गुरु और बन्धु हो, और उसी प्रकार हम भी आप के शिष्य और पुत्र हैं। हम आप की नम्रता से प्रतिष्ठा करते हैं, परन्तु आप की बातें गुरू प्रीति के विपरीत दिखाई देती हैं यदि आप अपने को शत्रु मानते हैं, तो ऐसा ही सही, मैं भीमसेन आप जैसे शत्रु के योग्य काम करता हूं॥

यह कह कर भीम ने काल दण्ड की भांति अपनी गदा घुमाई और यमराज रूप हो कर द्रोणाचार्य पर छोड़ी, पचासी वर्ष का बूढ़ा आचार्य यम दण्ड की भांति छोड़ी हुई गदा को देख कर रथ से कूदा परन्तु उसके घोड़े और सारथी सब मारे गये और रथ भी चूरा चूरा हो गिया, द्रोणाचार्य दूसरे रथ पर चढ़ कर युद्ध के लिये व्यूह के मुख पर नियत हुआ, भीमसेन रथियों से लड़ने लगा, तब भीमसेन को मारने की अभिलाषा

से दुशासन ने अत्यन्त लोहमयी रथ शक्ती छोड़ी, भीम सेन ने झट उसको दो खंड करके सब को आश्चर्य दिलाया, फिर भीम ने तीक्षण तीन बाणों से गण्डभेदि, सुषेण और दीर्घनेत्र को मारा और बुन्दारक को भी मारा फिर रुद्रकर्म और दुर्मोचन को मोत दिलाई, फिर बाण वर्षा को छोड़ते हुये भीमसेन ने विन्द, अनुविन्द और सुवर्मा को यमलोक में भेजा, आप का पुत्र सुदर्शन भी घायल हो कर शीघ्र ही मर गिया ॥

फिर आप के पुत्र इस प्रकार छिन्न भिन्न हुये जैसे रथ के शब्द से वन के मृग, वह भीमसेन के आगे भागे और भीम सेन उन के पीछे दौड़ा, तब भीम ने बड़े २ उत्तम रथी मारे और मारता काटता द्रोणाचार्य की सेना के सन्मुख गिया ॥

सतासठवां अध्याय

—:o:—

भीम सेन का गदा युद्ध कर के सब कौरवी सेना को परास्त करना और अर्जुन के पास पहुंचना, कर्ण से युद्ध होना और कर्ण का हार जाना ॥

हे राजन ! आप के शूरों ने आये हुये भीम सेन को चारों ओर से बाण वर्षा कर के तीरों से ढक दिया, भीमसेन गदा

हाथ में लेकर चारों ओर घूमा और सिंहनाद कर के गदा को घुमाने लगा, उस गदा से आप के सब योधा और शूर वीर महारथी चूर्ण होकर गिर पड़े, अनेक भयभीत होकर भागे, द्रोणाचार्य यह देख कर बाण वर्षा करने लगा, परन्तु भीमसेन शीघ्र ही रथ से उतरा और गुरु जी के रथ को पकड़ कर उस ने बहुत अन्तर पर फैंक दिया, गुरु जी दूसरा रथ लेकर आये परन्तु वह भी तुड़वा गये, इस प्रकार उस ने द्रोणाचार्य के आठ रथों को तोड़ा, द्रोण विचारे हार कर फिर व्यूह के मुख पर बैठ गये ॥

तब भीमसेन आगे बढ़ा, आप के अन्य रथी उस को देख कर भाग गये, भीमसेन ने उस सेना को ऐसा विजय किया जैसे शर्दूलसिंह गौ और बैल के वृन्दों को करता है, फिर कृतवर्मा की सेना को जीता और दुर्योधन की सेना को भी मार गया इस के पीछे म्लेच्छों के समूहों को जीता, तब उस ने सात्यकी और अर्जुन को देखा और सिंहनाद किया, उस का शब्द सुन कर अर्जुन और सात्यकी भी गर्जे ॥

राजा युधिष्ठिर ने दूर से इन शब्दों को सुना और समझ लिया कि अर्जुन जीता है, यह विचार कर वह बड़ा प्रसन्न हुआ और विचारने लगा कि अर्जुन भीमसेन और सात्यकी का जीते रहना प्रारब्ध से ही समझना चाहिये मेरा निश्चय है कि अब वह अवश्य ही जयद्रथ को मार लेंगे जिस से हमारी जय का होना दिखाई देता है कैसा शुभ हो कि अब भी

दुर्योधन समझ जाय और हम से संधि करले। अर्जुन निस्संदेह सूर्यास्त होने से पूर्व ही जयद्रथ को मारेगा, क्या दुर्योधन उस की रक्षा कर सकता है? कभी नहीं! शोक है कि वह मूर्ख लोभ के वश होकर पश्चाताप नहीं करता, वास्तव में होनहार बड़ी बलवान है जो दुर्योधन से सब प्रकार के कुकर्म करा रही है॥

तब धृतराष्ट्र ने पूछा कि हे संजय! मैं भीमसेन के साथ लड़ने में अपने किसी शूर वीर को समर्थ नहीं देखता, बताओ किस ने भीमसेन को रोका? संजय ने कहा कि कर्ण उस से लड़ने आया, तीक्ष्ण बाणों की वर्षा दोनों ओर से हुई, परन्तु भीमसेन के शब्दों को सुन कर आप के सब वीर भयभीत होकर भागे, कई अचेत होकर गिर पड़े और कई जहां तहां अपनी शरण पाकर बैठ गये, भीम ने कर्ण के धनुष की प्रत्यंचा को काटा और उस के सारथी को भी मार गिराया, कर्ण अपने रथ को छोड़ कर वृषसेन के पास चला गया, यह देख कर भीमसेन बादल के समान गर्जा, पाण्डव की सेना ने बड़े वेग से शंख बजाये, जिस से पृथ्वी और आकाश शब्दायमान हुये, तब कर्ण के शस्त्र मात होगये और भीमसेन कठिन प्रहार करने लगा॥

अठासठवां अध्याय

—:•❋•:—

द्रोणाचार्य का दुर्योधन को लड़ने के लिये भेजना उतमौजस और युधामन्यु का व्यूह को तोड़ कर बाहिर की ओर से अर्जुन के पास जाना, दुर्योधन और उतमौजस का युद्ध, दुसरे पांचालों का भी व्यूह में प्रवेश करना ॥

यह देख कर दुर्योधन द्रोणाचार्य के पास गया और कहने लगा कि हे गुरु जी ! किस प्रकार अर्जुन, सात्यकी और भीमसेन आप को जीत कर व्यूह में प्रवेश कर गये ? सब योधा इस को बहुत आश्चर्य मानते हैं, अब जयद्रथ की रक्षा कैसे होगी, मैं अभागा चिन्ता में निमग्न हो कभी शान्ति नहीं पाता, आप मुझ को यह बतायें कि अब आगे को क्या किया जाये ॥

द्रोण बोला कि हे दुर्योधन ! इस समय जयद्रथ की रक्षा करना अत्यन्त आवश्यक है, देखो मैं सेना के मुख पर ठहिर कर शत्रुओं को मारता हूं, आप जयद्रथ के पास जाईये और उस की रक्षा कीजिये। हे राजन् ! यह सुन कर आप का पुत्र दुर्योधन जयद्रथ के पास आया, इतने में पांचाल देशी उतमौजस और युधामन्यु व्यूह के पार्श्व से होकर बाहिर

की ओर से अर्जुन के पास आये, दुर्योधन उन के सन्मुख गया और उन को तीक्ष्ण बाणों से घायल करने लगा, युधामन्यु ने दुर्योधन के सारथी और घोड़े को घायल किया, उतमौजस ने स्वर्ण जड़ित तीक्ष्ण बाणों से उस के सारथी को यमलोक में भेजा, फिर दुर्योधन ने उतमौजस के चारों घोड़ों और आगे और पीछे के रक्षकों को मारा, फिर उतमौजस अपने भाई के रथ पर चला गया, तब उस ने दुर्योधन के घोड़ों को मारा युधामन्यु ने उस के धनुष और तरकस को काटा ॥

तब दुर्योधन ने रथ से उतर कर गदा हाथ में ली और दोनों पांचाल देशियों को मारने लगा । उसने उस रथ को सारथी और घोड़ों समेत खण्ड २ कर दिया और आप शल्य के रथ पर चला गया इतने में और पांचालों ने व्यूह को तोड़ा और अर्जुन के पास आये ॥

धृतराष्ट्र इतनी कथा सुन कर अत्यन्त शोचने लगा और कहने लगा कि हे संजय ! कहो कर्ण कैसे लड़ा ? भीमसेन से उसका कैसे युद्ध हुआ, मेरा पुत्र तो उसको अपना बड़ा आश्रय स्थान मानता था, वह कैसे भीमसेन से हार गया । संजय ने उत्तर दिया कि हे महाराज ! जब कर्ण ने भीमसेन को अर्जुन की ओर जाते देखा तो कहने लगा कि हे भीमसेन मैं तुम्हारे साथ युद्ध करूंगा तुम मुझ को पीठ दिखा कर क्यों जाते हो, तुम्हारा यह कर्म कुन्ती के पुत्रों के समान नहीं । भीमसेन ने इन वचनों को सुन कर रथ को मोड़ा

और कर्ण से लड़ने लगा। हे महाराज! बहुत काल तक उन अमित पराक्रमी वीरों का युद्ध हुआ, कर्ण नम्रता से लड़ता था और भीमसेन कठोर शस्त्रों का प्रयोग करता था, अन्त में भीमसेन ने कर्ण के सारथी और घोड़ों को मारा और उसके धनुष को भी काटा। यह देख कर कर्ण दूसरे रथ पर चला गया॥

उनहत्तरवां अध्याय

—:o:—

कर्ण का दूसरा रथ ले कर आना, भीमसेन का फिर उसको पराजय करना, दुर्योधन का दुर्जयको भेजना, और दुर्जय का मारा जाना॥

कर्ण दूसरा रथ ले कर सामने आया और फिर भीमसेन से लड़ने लगा, उसने भीम पर शक्ति छोड़ी और गर्जने लगा, भीम ने सात बाणों से उस शक्ति को आकाश में ही काटा, और मोर पक्ष वाले बाणों से कर्ण को घायल किया और बड़े शब्द से सिंह के समान गर्जने लगा, तब दोनों परस्पर बाणों से एक दूसरे को मारने लगे और शंख बजाने लगे फिर भीमसेन ने कर्ण के धनुष को मुष्टि स्थान से काटा और उसके घोड़ों को यमलोक में पहुंचा कर सारथी को भी रथ के नीड़ से नीचे गिराया तब कर्ण बड़ी चिन्ता करने लगा।

यह देख कर दुर्योधन कांपने लगा. और उसने अपने भाई दुर्जय को आज्ञा दी कि जाकर कर्ण की रक्षा करे, दुर्जय दौड़ता हुआ भीमसेन के सामने आया, परन्तु शीघ्र ही बाण खाकर मर गया, भीमसेन ने कर्ण को विरथ करके अनेक शतघ्नी शंकुओं से आच्छादित किया, परन्तु अतिरथी कर्ण ने उसको त्याग नहीं किया ॥

कर्ण शीघ्र ही दूसरा रथ लेकर आया और बड़े क्रोध से भीमसेन से लड़ने लगा, अनेक प्रकार के अस्त्र व्यवहार के पश्चात् भीमसेन ने फिर कर्ण को विरथ किया, कर्ण रथ हीन हो कर भी लड़ता रहा, दुर्योधन ने यह देख कर दुर्मुख को कहा कि कर्ण को रथ दो, यह सुन कर दुर्मुख कर्ण की सहायता को आया, परन्तु भीमसेन से तुरन्त ही मारा गया, दुर्मुख को मरा देख कर कर्ण रोता हुआ आगे बढ़ा और दुर्मुख की प्रदक्षिणा करके और उसको उल्लंघन करके फिर लड़ने लगा, कुछ काल तक युद्ध होता रहा. और दोनों के बाण एक दूसरे का रुधिर चाटते रहे, परन्तु भीमसेन के बाणों से घायल कर्ण शीघ्रगामी घोड़े से रथ को उड़ाकर युद्ध से भाग गया और भीमसेन युद्ध में नियत रहा ॥

सत्तरवां अध्याय

—:o:—

धृतराष्ट्र का पश्चाताप, संजय का दुमर्षण

आदिकके मारे जाने का बृत्तान्त सुनाना ॥

इतनी कथा सुनकर धृतराष्ट्र शोक से गद गद वाणी हो कर कहने लगा कि हे संजय ! मेरे पुत्र कर्ण को बड़ा शूरवीर मानते थे और कहते थे कि कर्ण प्रकृज्ञा हो सब पाण्डवों को जीत सकता है, उस कर्ण के हार जाने का समाचार सुन कर मेरा मन बहुत दुःखी हुआ है, मैं इस सारे युद्ध में होनहार की प्रबलवता देखता हूं, देखो कर्ण ने अपनी ओर से भीम को वश में करने का कोई उपाय नहीं छोड़ा परन्तु होनहार के आगे सब को सिर झुकाना पड़ता है, मैं तो यही समझता हूं कि मनुष्यों का अनेक प्रकार के उपाय करना बृथा ही है, मुझे शोक है कि मेरे दुर्बुद्धि पुत्रों ने दैव वश होकर अपने प्रिय कर्म को नहीं विचारा मैं उनको घोर आपत्ति में ग्रस्त देखता हूं॥

संजय ने कहा कि हे राजन् ! यह आप की पाप बुद्धि का फल है, हमारे समझाने पर तो आप समझते ही न थे, मरनहार मनुष्य जैसे उत्तम औषधी को नहीं खाता इसी प्रकार आप ने हमारे वचनों का तिरस्कार किया, तब धृतराष्ट्र ने फिर युद्ध का बृत्तान्त पूछा, संजय ने कहा कि हे राजन् ! कर्ण को भागा हुआ देख कर दुशासन भी पीछे हट गया, परन्तु आप के पांच पुत्र दुर्मर्षण, दुस्सह, दुर्म्मद, दुर्धर और जय प्राणों की आशा छोड़ कर उत्तम रथों को चलाते और धनुषों को टंकारते देव कुमारों के समान सन्मुख आये, भीम सेन ने हंसते २ ही उन कुमारों पर ऐसे बाण मारे कि वह

विचार सब के सब यम पुरी के भागी हुये, फिर कर्ण सामने आया, परन्तु भीमसेन ने वहीं रोक दिया, दोनों वीर एक दूसरे की ओर टिकटिकी लगा कर देखने लगे ॥

फिर कर्ण ने भीमसेन पर बाण छोड़े, भीमसन ने फिर उस को विरथ कर दिया, तब कर्ण रथ से रहित हो कर गदा से युद्ध करने लगा, भीमसेन न अपने तीरों के बल से उस गदा को रोका, दुर्योधन ने फिर अपने भाई उस की रक्षा को भेजे परन्तु भीमसेन ने फिर उन को मार गिराया, इस प्रकार हे राजन्! भीमसेन ने आप के इकतीस पुत्रों का हननकिया, जब आप का पुत्र विकर्ण भी मर गिया तो भीमसेन रोने लगा और कहने लगा कि हा! शोक विकर्ण धृतराष्ट्र के पुत्रों में तू ही एक धर्मात्मा था। तेरे मरन का मुझे बहुत दुःख है। मैंने तेरे मारने में केवल अपनी प्रतिज्ञा का ही विचार रखा, क्योंकि मैंने कहा था कि मैं धृतराष्ट्र के सब पुत्रों को मारूंगा; तुम ने भी अपन भाइयों का पक्ष ले कर युद्ध किया इस से तू मारा गिया, हे विकर्ण! तेरे मरने का मुझे बहुत शोक है ॥

इस प्रकार कर्ण और भीम का बड़ा अपूर्व हुआ, जिस को देख कर सब पाण्डव और कौरव प्रसन्न हुये और दोनों वीरों को धन्य धन्य करने लगे, दुर्योधन ने फिर भी अपने भाईयों को उत्तेजित कर के कहा कि नरोतम कर्ण की

रक्षा करो । हे राजन् ! इस प्रकार आज्ञा पाकर आप के और पुत्र युद्ध में भीमसेन के सामने आये, परन्तु शीघ्र ही मारे गये यह देख कर आप के सब वीर उदास चित हुये, हे राजन् ! इस के पश्चात् भीमसेन और कर्ण का भयंकर युद्ध हुआ, कर्ण ने आप के पुत्रों का शोच करते हुये और यह विचारते हुये कि इन सब की मृत्यु मेरे कारण ही हुई, प्राणों की आशा छोड़ कर और आगे बढ़ कर युद्ध किया, भीमसेन ने उस के अठारह धनुष काटे परन्तु उस ने तनिक भी चिन्ता न की और प्रत्येक वार नया धनुष ले कर भयंकर शायकों को छोड़ता रहा ॥

यह दशा देख कर सेना के सब लोग अपने २ कामों को छोड़ कर अपूर्व युद्ध को देखने लगे । इतने में कर्ण ने भीमसेन के घोड़ों को मार कर सारथी को नीचे गिराया, भीमसेन ने रथ शक्ति को पकड़ कर और चारों ओर घुमा कर कर्ण पर छोड़ा, परन्तु कर्ण ने शीघ्र ही उस शक्ति को काटा, तब कर्ण ने भीमसेन की कवच को काट कर गिराया भीम स्वर्ण जड़ित ढाल और खड्ग लेकर उठा, परन्तु कर्ण ने उस ढाल को शीघ्र ही खण्ड २ कर दिया, भीमसेन ने खड्ग से प्रहार की, जिस से कर्ण का धनुष टूट गया, तब भीमसेन आकाश में उछला, कर्ण झट झुक कर बैठने के स्थान में छुप गया भीमसेन उसकी ध्वजा पर चढ़ कर फिर पृथ्वी पर आगिया, उसका विचार था कि कर्ण को उठा नीचे

ले आये, परन्तु कर्ण उसके अभिप्राय को ताड़ गया था, इसी लिये मुकड़ कर बठ गया था ॥

तब भीमसेन ने अर्जुन के हाथ से मारे हुये हाथी घोड़ों को उठा २ कर कर्ण के ऊपर फेंका, कर्ण ने उन को बाणों से काटा, तब कर्ण ने वज्र रूप मुष्टिका को उठा कर मारना चाहा। परंतु फिर उस को अर्जुन की प्रतिज्ञा याद आगई। कर्ण ने तीक्ष्ण बाणों से भीमसेन को मार २ मूर्छित कर दिया, परन्तु कुंति के वचन को याद करके कोई कठोर अस्त्र नहीं मारा और पास जाकर बाणों की नोक से घायल किया, भीमसेन ने उस के धनुष को तोड़ कर उसे मस्तक पर घायल किया; भीम के बाणों और क्रोध से रक्त नेत्र कर्ण भीमसेन को कहने लगा ॥

इकहत्तरवां अध्याय

—:०:—

भीमसेन और कर्ण की बात चीत, अर्जुन का कर्ण से लड़ना ॥

कर्ण बोला कि हे बार २ भोजन करने वाले निर्बुद्धि भीमसेन ! बालकों की भांति युद्ध मत कर। तुझे युद्ध करना नहीं आता तूने केवल उदर को ही बढ़ा रखा है। जहां पर खाने पीने के पदार्थ हों वहां जाओ तुम युद्ध के योग्य

नहीं हो, तुम वन में फल मूल खाने वाले हो। कहां युद्ध और कहां मुनिभाव ? हे तात ! तुम वनवास में प्रीति रखने वाले हो, केवल रसोईयों को घूरना जानते हो। जाओ व्रत और उपवास कर के अतिथि पूजन करो, तुम्हारा युद्ध से क्या काम ? तुम मुझ जैसे शूरवीर से क्यों लड़ते हो, हे तात ! जाओ और किसी और से युद्ध करो, अब तुम्हें या तो कृष्ण के पास जाना चाहिये अथवा घर को भाग जाना चाहिये, हे बालक तुझ को युद्ध से क्या प्रयोजन है ॥

कर्ण के अत्यन्त कठोर वचन सुन कर भीमसेन न सहार सका और कहने लगे कि "अरे दुष्ट ! मैंने तुझ को कई बार जीता है, परन्तु तू मिथ्या ही अपनी बड़ाई करता है, यदि तुझ में साहस है तो आ मेरे साथ मल्ल युद्ध कर, देख सारे राजाओं के देखते ही तुझ को कैसे यमलोक में पहुंचाता हूं ? यह वचन सुन कर बुद्धिमान कर्ण भीमसेन से पृथक हो कर चला गया, भीमसेन को विरथ देख कर श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कहा कि तुम कर्ण को मारो, तब अर्जुन कर्ण से युद्ध करने लगा। और भीमसेन से कर्ण दूर हट गया, तब भीमसेन सात्यकी के रथ में चला गया और अर्जुन के पीछे हो गया, अर्जुन नाराच नाम बाणों से कर्ण को छेदने लगा। अश्वत्थामा ने उन बाणों को दूर से ही काट दिया, तब अर्जुन ने चौसठ बाणों से अश्वत्थामा को घायल किया और पुकारा

कि "ठहिरो २ मत जाओ" बाण खाकर वह अश्वत्थामा शीघ्र ही मतवाले हाथियों से भरी हुई सेना में चला गया, अर्जुन दूसरे बाहिर वाले मार्ग से हो कर और हाथी और मनुष्यों को मार कर शीघ्र ही अश्वत्थामा के सन्मुख हुआ ॥

बहत्तरवां अध्याय

—:o:—

सात्यकी का अलंबुष से युद्ध और अर्जुन के पास पहुंचना, अर्जुन का उसके आने पर अप्रसन्नता प्रकट करना ॥

सात्यकी का अर्जुन के समीप पहुंचने का वृत्तान्त तो आप सुन ही चुके हैं, अब यह सुनो कि किस प्रकार सात्यकी अर्जुन के पास पहुंचा, यह सुन कर धृतराष्ट्र बोले कि हे संजय ! मेरा यश नित्य प्रति घट रहा है, मेरे पुत्र मर रहे हैं। मैं अब जयद्रथ को भी मरा ही समझता हूं ॥

संजय बोला कि हे राजन् ! सात्यकी को आते देख कर सूर्यवंशी राज कुमार अलंबुष ने रोका, दोनों का युद्ध हुआ, परन्तु सात्यकी ने उस के रथ के घोड़ों और सारथी को मारा और फिर उस के शिर को भी काटा, उस को मार कर

नहीं हो, तुम वन में फल मूल खाने वाले हो। कहां युद्ध और कहां मुनिभाव ? हे तात ! तुम वनवास में प्रीति रखने वाले हो, केवल रसोईयों को घूरना जानते हो। जाओ व्रत और उपवास कर के अतिथि पूजन करो, तुम्हारा युद्ध से क्या काम ? तुम मुझ जैसे शूरवीर से क्यों लड़ते हो, हे तात ! जाओ और किसी और से युद्ध करो, अब तुम्हें या तो कृष्ण के पास जाना चाहिये अथवा घर को भाग जाना चाहिये, हे बालक तुझ को युद्ध से क्या प्रयोजन है ॥

कर्ण के अत्यन्त कठोर वचन सुन कर भीमसेन न सहार सका और कहने लगे कि "अरे दुष्ट ! मैंने तुझ को कई वार जीता है, परन्तु तू मिथ्या ही अपनी बढ़ाई करता है, यदि तुझ में साहस है तो आ मेरे साथ मल्ल युद्ध कर, देख सारे राजाओं के देखते ही तुझ को कैसे यमलोक में पहुंचाता हुं ? यह वचन सुन कर बुद्धिमान कर्ण भीमसेन से पृथक हो कर चला गया, भीमसेन को विरथ देख कर श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कहा कि तुम कर्ण को मारो, तब अर्जुन कर्ण से युद्ध करने लगा। और भीमसेन से कर्ण दूर हट गिया, तब भीमसेन सात्यकी के रथ में चला गिया और अर्जुन के पीछे हो गिया, अर्जुन नाराच नाम बाणों से कर्ण को छेदने लगा। अश्वत्थामा ने उन बाणों को दूर से ही काट दिया, तब अर्जुन ने पांसठ बाणों से अश्वत्थामा को घायल किया और पुकारा

कि "ठहिरो २ मत जाओ" बाण खाकर वह अश्वत्थामा शीघ्र ही मतवाले हाथियों से भरी हुई सेना में चला गया, अर्जुन दूसरे बाहिर वाले मार्ग से हो कर और हाथी और मनुष्यों को मार कर शीघ्र ही अश्वत्थामा के सन्मुख हुआ ॥

बहत्तरवां अध्याय

--:०:--

सात्यकी का अलंबुष से युद्ध और अर्जुन के पास पहुंचना, अर्जुन का उसके आने पर अप्रसन्नता प्रकट करना ॥

सात्यकी का अर्जुन के समीप पहुंचने का वृत्तान्त तो आप सुन ही चुके हैं, अब यह सुनो कि किस प्रकार सात्यकी अर्जुन के पास पहुंचा, यह सुन कर धृतराष्ट्र बोले कि हे संजय! मेरा यश नित्य प्रति घट रहा है, मेरे पुत्र मर रहे हैं। मैं अब जयद्रथ को भी मरा ही समझता हुं ॥

संजय बोला कि हे राजन्! सात्यकी को आते देख कर सूर्यवंशी राज कुमार अलंबुष ने रोका, दोनों का युद्ध हुआ, परन्तु सात्यकी ने उस के रथ के घोड़ों और सारथी को मारा और फिर उस के शिर को भी काटा, उस को मार कर

आगे बढ़ा और कई योधाओं से लड़ कर अर्जुन की ओर आया। उस को आता देख कर श्री कृष्ण ने अर्जुन को कहा कि हे अर्जुन! वह सात्यकी आता है, देखो इस के आने पर कौरव कैसे भागते हैं, जैसे सिंह के आने पर गाय, बैल, इस ने भाईयों समेत दुर्योधन को हरा दिया है और जल सिंधु को मारा है और इसी ने कौरवों की सेना में रुधिर की नदी चलाई है॥

यह सुन कर अर्जुन बोला कि हे श्री कृष्ण! सात्यकी के आने पर मैं प्रसन्न नहीं हूं। मैंने इस को धर्म राज युधिष्ठर की रक्षा के लिये नियुक्त किया था और विदित नहीं कि युधिष्ठर जीता है या मर गया। इस को युधिष्ठर को छोड़ कर नहीं आना चाहिये था क्योंकि इस के सिवाय और कोई योधा धर्मराज युधिष्ठर की रक्षा नहीं कर सक्ता। कदाचित द्रोणाचार्य राजा युधिष्ठर को पकड़ले, अभि राजा सिन्धु जीता है, भूरिश्रवा उस के सामने लड़ने आता है, सूर्य अस्ताचल पर पहुंचने लगा है और सात्यकी थकान से निर्बल प्रतीत होता है, ऐसा न हो कि न तो जयद्रथ ही मारा जाय और न युधिष्ठर ही अपनी रक्षा कर सके, वह सदैव इसी प्रकार के विपरीत काम करते हैं॥

देखो भूरिश्रवा सात्यकी से लड़ना चाहता है। वह अभी थका नहीं और उस के सहायक भी बहुत हैं, ईश्वर सात्यकी की रक्षा करे। मैं पूछना चाहता हूं कि धर्मराज युधिष्ठर का वृत्तान्त कैसा है। निस्संदेह उन्हों ने इस प्रकार की असभ्यता को दिखा कर बड़ा अनुचित कर्म किया है॥

तिहत्तरवां अध्याय

—:o:—

भूरीश्रवा और सात्यकी का युद्ध, पहिले बाण युद्ध और फिर मल्ल युद्ध होना, अर्जुन का भूरीश्रवा की भुजा काटना, भूरीश्रवा का अर्जुन की निन्दा करना और सात्यकी का भूरीश्रवा का शिर काटना ॥

तब भूरीश्रवा ने सात्यकी को ललकारा और युद्ध के लिये बुलाया, सात्यकी थका हुआ तो था ही, परन्तु शत्रु के बुलाने पर न रुक सका और दौड़ कर उस के सामने हुआ, सात्यकी ने कहा कि भूरीश्रवा अपने मुंह से अपनी बड़ाई मत करो, सज्जन लोग इस को अच्छा नहीं समझते, अच्छा यदि तुम्हारा विचार युद्ध करने का है तो मेरे सामने आओ, सात्यकी के ऐसा कहने पर दोनों वीर युद्ध में जुट गये और परस्पर बाण बरसाने लगे, अन्त को दोनों के रथ टूट गये, सारथी और घोड़े मारे गये और धनुष टूट गये ॥

इस दशा में दोनों ने खड्ग हाथ में ली और आमने सामने होकर लड़ने लगे, दोनों ने खड्गों को घुमाय, ऊंचे फैंका, तिरछे चलाये, रुधिर में डुबोया, हटाया और गिराया और उन के सम्बन्धियों को अनेक चमत्कार दिखाये, उनको देख कर सब योधा चुप चाप होकर खड़े होगये, फिर उन्हों ने एक दुसरे की ढालों को काटा और खड्गों को रख दिया ॥

फिर वह शूर वीर मल्ल युद्ध करने लगे, बड़ी छाती और लंबी भुजा रखने वाले वह परिघों के समान भुजा से भुजा मिला कर एक दूसरे को चिपट गये, उन की भुजाओं की घिसावट, शिरों की टक्कर, चरणों के खैंचने और पैंतरे के बदलने का भयंकर शब्द हुआ ॥

श्रीकृष्ण ने दूर से इस युद्ध को देख कर अर्जुन को कहा कि हे अर्जुन! देखो सात्यकी विरथ हो कर मल्ल युद्ध कर रहा है, इस ने सब कौरवी सेना को दलन किया है और मारता काटता आप के पास पहुंचा है। इस समय यह बहुत थका हुआ है, इस लिये इस का युद्ध करना ठीक नहीं विदित होता, इतने में भूरिश्रवा ने सात्यकी को उठा कर भूमि पर दे मारा, श्रीकृष्ण ने फिर अर्जुन को उस की दशा की ओर ध्यान दिलाया और कहा कि हे अर्जुन! अपने सहायक सात्यकी की रक्षा करो, ऐसा न हो कि तुम्हारे कारण वह आधीनता में पड़े इतने में फिर भूरिश्रवा ने सात्यकी को पृथ्वी पर दे पटका और केशों से पकड़ कर उस को घसीटने लगा, तब उस ने फिर खड्ग निकाली और चाहता था कि उस का शिर काट ले जब के श्रीकृष्ण ने अर्जुन को फिर कहा कि हे महाबाहु! वृष्णिवंशियों और अन्धकवंशियों में श्रेष्ठ सात्यकी आप का शिष्य मारा जाता है और तुम क्या विचार कर रहे हो, सात्य की विद्या में तुम्हारे समान है, देखो कितने दलों को मार कर वह तुम्हारी रक्षा के निमित्त आया है, यदि वह इस प्रकार

मारा गया तो तुम को बहुत क्लेश होगा, शघ्रता से उस की रक्षा करो ॥

अर्जुन ने शल्य के बड़े भाई वीर भूरिश्रवा की अपने मन में बहुत प्रशंसा की और श्रीकृष्ण से कहने लगा कि मेरी वृत्ति तो इस समय जयद्रथ में लगी हुई है, इस लिये मैं सात्यकी को नहीं देखता हू, तौ भी मैं इस कठिन कर्म को आप के निमित्त करता हूं, तब उस ने क्षुरप्र को गांडीव धनुष पर चढ़ा कर इस प्रकार मारा कि भूरिश्रवा की वह भुजा जिस में खड्ग पकड़ी हुई थी कट कर नीचे गिर पड़ी ॥

भुजा के कटने से निष्फल पराक्रमी भूरिश्रवा ने सात्यकी को छोड दिया और अर्जुन के पास जा कर कहने लगा कि हे अर्जुन ! तुम ने युद्ध धर्म का जान कर भी क्यों ऐसा कुकर्म किया है कि मुझ न लड़ने वाले की भुजा को काटा है, जब युधिष्ठर मेरे मारने का कारण तुम से पूछेगा तो तुम क्या उत्तर दोगे, तुम ने इन्द्र, रुद्र, द्रोणाचार्य और कृपाचार्य से विद्या सीखी इस लिये तुम सब अस्त्र धर्मों के ज्ञाता हो फिर तुम ने मुझ न युद्ध करने वाले को कैसे मारा, यह तुम्हारा काम सत्य पुरुषों से वर्जित नीच कर्म है, उत्तम पुरुष अचेत, भयभीत, विरथ, प्रार्थना करने वाले और आपत्ति में फसे हुये वीरों को नहीं मारते, मैं जानता हूं यह उपदेश तुम को कृष्णचन्द्र ने किया है ॥

भूरिश्रवा के इस वचन को सुन कर अर्जुन बोला कि हे भूरिश्रवा ! आप मेरी निंदा वृथा करते हैं, सच है वृद्ध लोक

अपनी बुद्धि का भी वृद्ध ही समझते हैं, भाइयों और सम्बन्धियों से युक्त क्षत्रिय लोग युद्ध करते हैं, उन सब की रक्षा करना सब मनुष्यों को योग्य है. इस लिये यदि मैं अपनी दक्षिण भुजा के समान मेरे शत्रुओं के मारने वाले और मेरे लिये अपने प्राणों तक निछावर करने वाले माधव सात्यकी की रक्षा न करूं तो मेरे जैसा पापी पुरुष और कौन होगा, यदि सात्यकी मारा जाता, तो न मुझ को एक परमहितैषी मित्र के वृथा मरवाडालने का ही अपराध होता, वरन मैं सहायता हीन होकर आप भी नष्ट होजाता, इस लिये जो कुछ मैंने किया है वह क्षत्रिय धर्म के विरुद्ध नहीं है। अभी कल ही आप लोगों ने बालक अभिमन्यु को घेर कर के मारा है, वह कौन सा धर्म किया है ? इस लिये आप का क्रोध करना ठीक नहीं ॥

इस में और भी हेतु है। इस संग्राम में दोनों ओर के इतने योधा, हाथी और रथ हैं। इस में द्वन्द युद्ध हो नहीं सक्ता है, इस लिये आप का मुझ पर दोष लगाना वृथा है देखो सात्यकी इतनी सेना से लड़ा और उस ने इतने हाथियों को मारा, इस समय वह थका हुआ और विमन सो हो रहा था, अब आपने उस से लड़ कर कौनसा धर्म का काम किया ? यदि कोई मनुष्य आप की शरण में आवे तो आप उस को क्या करेंगे ॥

यह वचन सुन कर भूरिश्रवा मरने के निमित्त बैठ गया और अर्जुन से कुछ न बोला, तब उस ने अपने मन को निश्चल करके ईश्वर में चित लगाया और उपनिषदों का विचार

किया, तब लोग श्री कृष्ण और अर्जुन की निन्दा करने लगे और कहने लगे कि भूरिश्रवा की भुजा काटने से अर्जुन ने बहुत पाप किया है ॥

तब अर्जुन ने सब राजाओं को पुकार कर कहा कि जो लोग मेरी निन्दा करते हैं, वह धर्म को नहीं जानते, भूरिश्रवा सात्यकी को मारने का अभिलाषी था, यदि मैंने उस की भुजा काटी तो कौनसा पाप किया ? यह कर्म धर्म से निन्दित नहीं है, तुम ने कल ही शस्त्र से रहित विरथ अभिमन्यु को मारा है, क्या वह आप का कर्म धर्म रूप है ? उस को कौन अच्छा कह सकता है ? जो कहता है वह मेरे सामने आवे और अपने पक्ष को सिद्ध करे ॥

भूरिश्रवा ने इस वचन को सुन कर शिर नीचे कर लिया और बायें हाथ से अपनी कटी हुई भुजा को अर्जुन की ओर फैंका, अर्जुन बोला कि हे वृद्ध जैसे मैं धर्मराज युधिष्ठर को अथवा नकुल और सहदेव को जानता हुं वैसे ही आप की प्रतिष्ठा करता हूं, आप अब पवित्र लोकों को जाईये, तब सात्यकी ने उठ कर भूरिश्रवा का शिर खड्ग से काट लिया ॥

दोनों सेनाओं के लोग नाना प्रकार के आक्षेप सात्यकी पर करने लगे, कोई कहता था कि मरे हुये को मारना अच्छा काम नहीं, कोई कहता था कि सात्यकी ने भूरिश्रवा को मुक्त कर दिया है, इसी प्रकार कई प्रकार की बातें होने लगीं, सात्यकी ने कहा कि मेरी प्रतिज्ञा यह है कि जो कोई

मुझ को युद्ध में खैंच कर पाओं से मर्दन करे, वह मुझ से ही मारने के योग्य है. यदि तुम इस को मरा हुआ मानते थे तो यह तुम्हारी मूर्खता है, मैंने इस का मारना योग्य समझ कर यह कर्म किया है, मुझे धोका हुआ कि अर्जुन ने पहिले ही उस की भुजा काट ली, जो होनहार है वह तो अवश्य होता है, इस लिये मैंने कौनसा अधर्म किया है ॥

इस प्रकार पुण्यात्मा भूरिश्रवा मौन व्रत में स्थित सात्यकी के हाथ से मर कर स्वर्ग को प्राप्त हुआ ॥

चौहत्तरवां अध्याय

—:०:—

सात्यकी और भूरिश्रवा के कुल का वृत्तान्त ॥

तब धृतराष्ट्र कहने लगा कि हे संजय ! जो सात्यकी द्रोणाचार्य, कृतवर्मा कर्ण और विकर्ण को जीत गया, आश्चर्य है कि वह भूरिश्रवा से इस प्रकार मर्दन किया जाये, यदि तुम को कोई कारण विदित हो तो कहो, संजय बोला कि हे भगवन् ? सुनो चन्द्रवंश में राजा ययाति हुआ है उसकी रानी देवयानी में उसका बड़ा लड़का यदु हुआ है, यदु का पुत्र देवमढ़ि हुआ, देवमढ़ि का शूरसेन, शूरसेन का पुत्र वसुदेव जी हुआ, उस कुल में उसी के समान राजा पराक्रमी राजा शिनी हुआ है ॥

दैवयोग से महात्मा देवक ने अपनी कन्या देवकी का स्वयम्बर रचा था, शिनी ने सब राजाओं को विजय करके देवी देवकी को रथ में बिठा लिया। परन्तु बड़े शूर सोमदत्त ने उसको क्षमा न किया, तब दोनों का आधा दिन युद्ध होता रहा, परन्तु शिनी ने सोमदत्त को पृथ्वी पर गिरा लिया और चरणों में बहुत मर्दन करा, फिर उसने बाल पकड़ कर चाहा कि सोमदत्त के शिर को काटले, परन्तु दयाभाव की प्रबलता से फिर उसको छोड़ दिया शिनी देवकी देवी को वसुदेव के निमित्त ले गया॥

तब सोमदत्त ने उग्र तपस्या की और महादेव को प्रसन्न किया, महादेव ने कहा कि कहो क्या मांगते हो। सोमदत्त बोला कि मेरा पुत्र शिनी के पुत्र को युद्ध में केशों से पकड़ कर घसीटे और चरणों से मथ डाले महादेव जी यह कह कर कि ऐसा ही होगा, वहीं अन्तर्धान हो गये और सोमदत्त अपने स्थान को आया। इसी कारण सोमदत्त के पुत्र भूरिश्रवा ने शिनी के पुत्र सात्यकी को युद्ध में गिराया, घसीटा और पाओं से घायल किया है। हे राजन्! आप के प्रश्न का उत्तर यह है॥

वैसे सात्यकी को कोई योधा जीत नहीं सक्ता, यादव लोग बड़े लक्ष्यभेदी योधा हैं, किसी से विजय नहीं होते। तीनों लोकों में बल पराक्रम में उन के समान कोई नहीं, उन में एक बड़ी बात विशेषता से यह है, कि वह जाती को

यह सुन कर कर्ण बोला कि हे राजन्! मैं आप का हितैषी और प्रिय चाहने वाला हुं, मेरा भीमसेन से बड़ा कठिन युद्ध हुआ है, जिस से मेरे सब अंग चूर्ण हो गये हैं, मेरा शरीर अत्यन्त घायल हो रहा है, युद्ध में उपस्थित रहना योग्य है, इसी लिये मैं ठहिरा हूं. नहीं तो बाणों से संतप्त मेरा कोई अंग चेष्टा नहीं करता, तो भी मैं सामर्थ्य के अनुसार अर्जुन से लड़ूंगा और यत्न करुंगा कि वह सूर्यास्त होने से पहिले जयद्रथ को न मार ले, मैं आप का भक्त हुं और आप की सदैव भलाई चाहता हुं, इस लिये अपने कर्तव्य को अवश्य करूंगा, विजय होना तो ईश्वर के आधीन है, हे पुरुषोत्तम! मैं आपके निमित्त अर्जुन को अपनी वीरता दिखाऊंगा, परन्तु विजय परमेश्वर के ही आधीन है ॥

इतने में अर्जुन ने कौरवी सेना को बाणों से मारना आरम्भ किया, थोड़े ही काल में उस ने अनेक हाथी, घोड़े और मनुष्य मार डाले और पृथ्वी पर रुधिर की नदियां बहा दीं, इस प्रकार भीम और सात्यकी से रक्षित उस अर्जुन के अपूर्व बाणों को सहार ने की शक्ति आप की सेना में न हुई, तब दुर्योधन, कर्ण, वृषसेन, शल्य, अश्वत्थामा, कृपाचार्य और आप जयद्रथ ने अर्जुन को घेर लिया, इतने में सूर्य रक्तवर्ण हो गया, कौरवों ने सोचा कि अब कोई मुहूर्त ही की बात है, अर्जुन को इधर उधर के बखेड़ों में फंसा कर दो चार मुहूर्त बिता देने चाहियें ॥

अर्जुन आप ही अपनी प्रतिज्ञा के कारण मरजायगा, यह सुन कर कौरवी महारथी जयद्रथ को पीछे करके अर्जुन से लड़ने लगे, अर्जुन ने भी सहस्र बाणों को छोड़ा, फिर अश्वत्थामा ने अर्जुन को रोका और दूसरे कौरवों ने चारों ओर से जयद्रथ की रक्षा की, उस समय हमने अर्जुन की युद्ध में अपूर्व कुशलता देखी, धनुष से सब योधाओं को रोक कर प्रत्येक को दश २ बाणों से घायल किया ॥

सूर्यास्तको चाहने वाले कौरवों ने उसको तीरों से आच्छादित कर दिया, फिर कुच्छ महूर्त तक दोनों ओर से युद्ध होता रहा, अर्जुन ने कर्ण के धनुष को काट कर नीचे गिराया, परन्तु कर्ण दूसरा धनुष लेकर सामने आया, अर्जुन ने उसको चर्म भेदी बाणों से हृदय में घायल किया, तब कर्ण ने अर्जुन को बाण वर्षा से ढक दिया, अर्जुन ने शायकों से ही उसको निवृत किया और कर्ण को पुकार कर कहने लगा कि हे कर्ण! मैं अर्जुन हूं, मेरे साथ युद्ध में ठहिर, तब दोनों का चित्त रोचक अपूर्व युद्ध हुआ, जिसको देख कर सब प्रशंसा करने लगे, तब दुर्योधन अपनी सेना को कहने लगा कि हे शूरवीरो देखो यह कर्ण अर्जुन को जीतेगा, इस की प्रतिज्ञा है कि अर्जुन को विना मारे कभी न लौटे, इस लिये आप इस की रक्षा करो ॥

इतने में अर्जुन ने कर्ण के चारों घोड़ों को मार कर यम पुरी में भेजा, और उसके सारथी को रथ नीड़ से नीचे गिराया,

अपमान नहीं करते, वृद्धों की आज्ञा सद मानते हैं, ब्राह्मण, गुरू और ज्ञानियों के धनों की रक्षा करते हैं, दुःखी और बन्धन में पड़े हुओं की रक्षा करते हैं, धन और अहंकार से रहित साधु ब्राह्मणों की सेवा करते हैं और सत्य वक्ता हैं, वह समर्थ हो कर भी किसी प्रकार के दुःखी लोगों का अपमान नहीं करते। ईश्वर के भक्त जितेन्द्रिय, रक्षक और आत्म श्लाघा के करने वाले नहीं हैं, इसी लिये उन के प्रताप का नाश नहीं होता। संसार में कोई पुरुष सन्मुख हो कर वृष्णि वीरों के प्रताप को सार नहीं सकता॥

पचहत्तरवां अध्याय

—:०:—

अर्जुन का महारथियों समेत जयद्रथ को पाना, दुर्योधन का कर्ण को युद्ध की प्रेरणा करना, कर्ण का युद्ध के लिये अर्जुन के सन्मुख जाना और अर्जुन का युद्ध में कौरवी सेना को भस्म करना॥

भूरिश्रवा के परलोक गामी होने पर अर्जुन ने श्रीकृष्ण से प्रार्थना की कि मेरे घोड़ों को चला कर शीघ्र जयद्रथ के सन्मुख करो। देखो सूर्य अस्त होने के निकट है और जयद्रथ अभी

जीता है, ऐसा न हो कि मेरी प्रतिज्ञा भङ्ग हो जाय, यह सुन कर श्रीकृष्ण ने अर्जुन का रथ को जयद्रथ के सन्मुख किया, कौरवी वीर यह देख कर अर्जुन के सन्मुख गये, दुर्योधन, कर्ण, वृषसेन, शल्य, अश्वत्थामा और कृपाचार्य ने जयद्रथ को घेर लिया ॥

यह देख कर दुर्योधन कर्ण से कहने लगा कि हे वीर सूर्य के पुत्र ! अब तुम्हारे युद्ध का समय आगया, देखो वह अर्जुन हमारे सामने है, उस का युद्ध तुम्हारे साथ चिर काल से नियत है। इस लिये आगे बढ़ कर अपना बल दिखलाओ, जिस प्रकार जयद्रथ बच जाये वही काम करो, यदि जयद्रथ के जीते २ सूर्यास्त हो गया तो अर्जुन आप ही अग्नि में प्रवेश कर जायगा और हमारी विजय होगी ॥

जब अर्जुन मर गया तो शेष पाण्डवों का क्या है ? हमारे सामने एक महूर्त भर भी जीते नहीं रह सक्ते। तब हम, सब पृथ्वी का निष्कण्टक राज भोगेंगे। मेरा विचार है कि अर्जुन अपनी प्रतिज्ञा पूरी नहीं कर सका और उस की मृत्यु के लिये ही देवन यह प्रतिज्ञा उस से कराई है, इस लिये हे नरोत्तम ! तुम्हारे जाते हुये अर्जुन सूर्य अस्त होने से पहिले जयद्रथ को कैसे मार सकता है ? फिर राजा शल्य जयद्रथ की रक्षा करता है, अश्वत्थामा, कृपाचार्य और अन्य वीर भी उस की रक्षा करते हैं, मैं भी उस की रक्षा करता हूं कैसे संभव है कि अर्जुन उस को सूर्यास्त से पहिले मारले ॥

यह सुन कर कर्ण बोला कि हे राजन्! मैं आप का हितैषी और प्रिय चाहने वाला हूं, मेरा भीमसेन से बड़ा कठिन युद्ध हुआ है, जिस से मेरे सब अंग चूर्ण हो गये हैं, मेरा शरीर अत्यन्त घायल हो रहा है, युद्ध में उपस्थित रहना योग्य है, इसी लिये मैं ठहिरा हूं. नहीं तो बाणों से संतप्त मेरा कोई अंग चेष्टा नहीं करता, तो भी मैं सामर्थ्य के अनुसार अर्जुन से लडूंगा और यत्न करुंगा कि वह सूर्यास्त होने से पहिले जयद्रथ को न मार ले, मैं आप का भक्त हूं और आप की सदैव भलाई चाहता हूं, इस लिये अपने कर्तव्य को अवश्य करूंगा, विजय होना तो ईश्वर के आधीन है, हे पुरुषोत्तम! मैं आपके निमित्त अर्जुन को अपनी वीरता दिखाऊंगा, परन्तु विजय परमेश्वर के ही आधीन है ॥

१ इतने में अर्जुन ने कौरवी सेना को बाणों से मारना आरम्भ किया, थोड़े ही काल में उस ने अनेक हाथी, घोड़े और मनुष्य मार डाले और पृथ्वी पर रुधिर की नदियां बहा दीं, इस प्रकार भीम और सात्यकी से रक्षित उस अर्जुन के अपूर्व बाणों को सहारने की शक्ति आप की सेना में न हुई, तब दुर्योधन, कर्ण, वृषसेन, शल्य, अश्वत्थामा, कृपाचार्य और आप जयद्रथ ने अर्जुन को घेर लिया, इतने में सूर्य रक्तवर्ण हो गया, कौरवों ने सोचा कि अब कोई मुहूर्त ही की बात है, अर्जुन को इधर उधर के बखेड़ों में फंसा कर दो चार मुहूर्त बिता देने चाहियें ॥

अर्जुन आप ही अपनी प्रतिज्ञा के कारण मरजायगा, यह सुन कर कौरवी महारथी जयद्रथ को पीछे करके अर्जुन से लड़ने लगे, अर्जुन ने भी सहस्र बाणों को छोड़ा, फिर अश्वत्थामा ने अर्जुन को रोका और दूसरे कौरवों ने चारों ओर से जयद्रथ की रक्षा की, उस समय हमने अर्जुन की युद्ध में अपूर्व कुशलता देखी, धनुष से सब योधाओं को रोक कर प्रत्येक को दश २ बाणों से घायल किया ॥

सूर्यास्तको चाहने वाले कौरवों ने उसको तीरों से आच्छादित कर दिया, फिर कुच्छ महूर्त तक दोनों ओर से युद्ध होता रहा, अर्जुन ने कर्ण के धनुष को काट कर नीचे गिराया, परन्तु कर्ण दूसरा धनुष लेकर सामने आया, अर्जुन ने उसको चर्म भेदी बाणों से हृदय में घायल किया, तब कर्ण ने अर्जुन को बाण वर्षा से ढक दिया, अर्जुन ने शायकों से ही उसको निवृत किया और कर्ण को पुकार कर कहने लगा कि हे कर्ण! मैं अर्जुन हूं, मेरे साथ युद्ध में ठहिर, तब दोनों का चित रोचक अपूर्व युद्ध हुआ, जिसको देख कर सब प्रशंसा करने लगे, तब दुर्योधन अपनी सेना को कहने लगा कि हे शूरवीरो देखो यह कर्ण अर्जुन को जीतेगा, इस की प्रतिज्ञा है कि अर्जुन को बिना मारे कभी न लौटे, इस लिये आप इस की रक्षा करो ॥

इतने में अर्जुन ने कर्ण के चारों घोड़ों को मार कर यम पुरी में भेजा, और उसके सारथी को रथ नीड़ से नीचे गिराया,

और फिर दुर्योधन के देखते ही उसको बाणों से ढक दिया, यह देख कर अश्वत्थामा उसकी रक्षा को आगे बढ़ा, उस ने तीस बाण अर्जुन पर मारे, और कर्ण को अपने रथ पर बैठा लिया, फिर कृपाचार्य, जयद्रथ और वृषसेन ने अर्जुन और वसुदेव को पृथक् २ बाणों से घायल किया। अर्जुन ने अपने बाणों से उन के बाणों को काटकर वरुण अस्त्र को प्रकट किया। जिस से हे राजन्! आपके सब पुत्र भय भीत हुये। यह देख कर दुर्योधन ने अजगव नाम धनुष लेकर आप बाणों को छोड़ा, फिर बड़ा भयंकर युद्ध हुआ, क्षत्रिय लोग गदा परिघ शक्ति आदि उग्र २ अस्त्रों को लेकर सन्मुख गये, मनुष्यों और घोड़ो की मृतक देहों से पृथ्वी आच्छादित हो गई। फिर अर्जुन गांडीव धनुष को लेकर दोनों हाथों से खींचता हुआ और बाणों की वर्षा करता हुआ शीघ्रचला, उस वीर ने बड़े २ धनुष धारियों को पदातियों के समूहों समेत यमपुरी में पहुंचाया॥

छिहत्तरवां अध्याय

—:०:—

अर्जुन का कौरवी सेना को छिन्न भिन्न करना और जयद्रथ को मारना॥

अर्जुन ने कौरवी सेना का मथन करके चारों ओर नाश

किया, हाथी घोड़ों के टूटे अंगों से, मनुष्यों की भुजाओं और शिरों से ढकी हुई युद्ध भूमी भयंकर दिखाई देने लगी। इतने में सूर्य के अस्त होने में थोड़ा ही काल रह गया। श्रीकृष्ण ने कहा कि हे अर्जुन! शीघ्रता करो, सूर्य अस्त हुआ जाता है उन छः महारथियों को देखो जो जयद्रथ को घेरे हुये हैं। उन को जीतने के बिना तुम कभी जयद्रथ को नहीं मार सकते॥

यह सुन कर अर्जुन ने अश्वत्थामा, कृपाचार्य और शल्य को घायल किया, शल्य के सारथी को भी मार कर भल्ल से नीचे गिराया, तब अर्जुन ने उत्तम रथियों को उल्लंघन किया और जयद्रथ की ओर चला सब वीरों के अस्त्रों का अपने अस्त्रों से काटते हुये प्रकाशमान अर्जुन के तेज से सब मनुष्य भयभीत होकर भागे, अर्जुन ने अपने शरीर को रुद्र रूप बनाया, उसको सहस्रों बाण आकाश और दिशाओं में दिखाई पड़े, उसको बाण लेते चढ़ाते और छोड़ते कोई भी मनुष्य न देख सक्ता था, उसने चौंसठ बाण जयद्रथ पर मारे। तब लोगों ने जयद्रथ के प्राणों से हाथ धोये, जो कोई उसकी रक्षा के लिये दौड़ा वह अर्जुन के हाथ से जीता न बचा, तब अर्जुन जयद्रथ के पास पहुंचा, फिर उसने अश्वत्थामा और वृषसेन आदि महारथी रक्षकों को बाणों से घायल किया, जयद्रथ ने भी क्रोध से भर कर तीक्ष्ण सर्प रूप बाणों को छोड़ा, तब अर्जुन ने तीक्ष्ण बाणों से उसकी ध्वजा को काट कर उसके सारथी को मारा और नीचे गिरा दिया॥

तब श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कहा कि हे महारथी अर्जुन ! इस समय छः वीर महारथी जयद्रथ की रक्षा कर रहे हैं, उन को जीते विना तुम जयद्रथ को मार नहीं सक्के। तुम को उचित है कि शीघ्र पुरुषार्थ करो। देखो सूर्य अस्त होने लगा है। मैं ऐसी माया उत्पन्न करूंगा कि अकेला जयद्रथ ही सूर्य को अस्त हुआ मानेगा। और अपने जीवन की आशा से अपने आप को नहीं छुपावेगा तुम सूर्य के अस्त होने का कोई विचार न करना और केवल जयद्रथ के मारने का ही विचार करना। अर्जुन ने कहा कि बहुत अच्छा जैसा आप कहते हैं वैसा ही होगा॥

उस समय ऐसा अन्धकार उत्पन्न हुआ कि सब ने यही समझा कि सूर्य अस्त हो गया है। कौरव प्रसन्न हो कर मुंह उठा २ कर पश्चिम की ओर देखने लगे और कहने लगे कि अब अर्जुन का नाश हुआ, श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कहा कि यह देखो जयद्रथ सूर्य को मुंह उठा २ कर देख रहा है, यही समय है अब इसको शीघ्र मारो, यह अब अपने आप को निर्भय समझ रहा है। फिर अर्जुन ने प्रकाशमान अग्नि के समान बाणों से आप की सेना को मारा, शल्य ने दुर्योधन, वृषसेन और कृपाचार्य को भी अनेक बाणों से घायल किया, फिर आप के शूरवीरों ने भी अर्जुन को बाणों से सींचा। अर्जुन ने बाण जालों से सब कौरवों को ढक दिया, तब आप के घायल शूरवीर जयद्रथ को त्याग गये और दो

पुरुष भी साथ न रहे, अर्जुन ने सेना का इस प्रकार हनन किया कि जैसे रुद्र जी पशुओं को मारते हैं, अन्धेरे और धूल से गुप्त नेत्र वाले शूरवीर घोर मोह में प्रवृत्त हुये और बाणों से छिदे जाकर मृतक प्राय शरीर वाले हो गये ॥

तब अर्जुन ने अग्नि बाण को वज्र अस्त्र से मिला कर धनुष पर चढ़ाया, श्री कृष्ण बोले कि अर्जुन अब जयद्रथ के शिर को काटो, क्योंकि सूर्य अस्ताचल को जाना चाहता है, हां एक और बात को याद रखो, जयद्रथ के शिर को भूमि पर न गिराना. इस के पिता वृद्ध क्षत्र ने बहुत काल के पश्चात् इस पुत्र को पाया है, इस के पश्चात् गुप्त वाणी ने वृद्ध क्षत्र को बतलाया था कि वह क्षत्रियों में शत्रु इस के शिर को काटेगा जो पृथ्वी पर दिखाई नहीं देता, यह सुन कर वृद्धक्षत्र को शान्ति नहीं आई, इस ने तपोबल से वर दिया कि जो कोई इस के शिर को पृथ्वी पर गिरावेगा उस का शिर भी सौ टुकड़े होजायेगा. इस से ध्यान रखो कि जयद्रथ के शिर को भूमी पर न गिराना इस के पिता युद्ध भूमी से बाहिर सन्ध्या वन्दन कर रहा है, उसी की गोद में रख देना, यदि वह अपने पुत्र के शिर को पृथ्वी पर गिरावेगा तो आप ही अवश्य मारा जावेगा और अपने पूर्व किये हुये वर का फल पावेगा ॥

यह वचन सुनकर अर्जुन ने क्रोध से धनुष पर चढ़ाये हुए बाण को छोड़ा, वह बाण जयद्रथ के शिर को काट कर आकाश में उछला, अर्जुन ने जयद्रथ का शिर हाथों में

दुशाच लिया और फिर छः महारथियों से भयंकर युद्ध किया, तब अर्जुन ने जयद्रथ के शिर को उसके पिता की गोद में चुप करके धर दिया, वह विचारा सन्ध्या वन्दन में स्थित था, जब वह उठा तो शिर भूमि पर गिर पड़ा, जिस से वृद्ध क्षत्र के अपने शिर के सौ टुकड़े हो गये, तब श्रीकृष्ण ने अन्धकार को दूर किया, सब ने देखा कि सूर्य अभी अस्त नहीं हुआ, लोग श्रीकृष्ण और अर्जुन की प्रशंसा करने लगे, और आप के पुत्र अपनी विजय से निराश हो बैठे ॥

हे राजन्! इस प्रकार आप का जामाई और सम्बन्धि महात्मा अर्जुन के शस्त्र प्रयोगों से मारा गया। तब केशव और अर्जुन ने अपने २ शंख बजाये, धर्मराज समझ गये कि अब जयद्रथ मारा गया, उन्हों ने भी बाजे गाजे बजाये और द्रोणाचार्य से युद्ध करने लगे। इधर अर्जुन भी जयद्रथ को मार कर आप के महारथियों से लड़ने लगा ॥

सतत्तरवां अध्याय

—:※:—

जयद्रथ के मारे जाने पर कौरवों का अर्जुन को घेर लेना, अर्जुन के बाणों से कृपाचार्य का अचेत होना, अर्जुन का विलाप, कर्ण और सात्यकी की लड़ाई ॥

जयद्रथ के मारे जाने पर कौरवी योधाओं को बड़ा क्रोध आया और वह सब के सब अर्जुन को घेर कर और तीक्ष्ण बाणों की वर्षा करके अत्यन्त क्रूरता से लड़ने लगे, कृपाचार्य और अश्वत्थामा दोनों मामा भानजा क्रोध खा २ कर अर्जुन पर धावा करने लगे, अर्जुन इन ब्राह्मण वीरों को गुरू मानता था और इस लिये उन से लड़ना युक्त नहीं समझता था, परन्तु उन के अग्र वर्ति होने के कारण कुछ न कुछ उस को करना अवश्य पड़ता था, अर्जुन को उन के बाणों से अत्यन्त पीड़ा हुई, तब उन को छोड़ने के असमर्थ होकर हलके २ बाणों से कृपाचार्य को मारने लगा ॥

अर्जुन के मन्द वेग वाले बाणों से कृपाचार्य अत्यन्त घायल होकर रथ के बैठने के स्थान में बैठ गया और मूर्छित हो गया सारथी उसको लेकर निकल गया, अश्वत्थामा भी यह दशा देख कर युद्ध से हट गया अर्जुन अपने गुरु कृपाचार्य की यह दशा देख कर करुणा स्वर से विलाप करने लगा ॥

रोता हुआ अर्जुन बोला कि जब दुर्योधन उत्पन्न हुआ था तो उसी समय विदुर ने कहा था कि इस के कारण सब श्रेष्ठ कौरवों को दुःख होगा, वह वचन अब सत्य होता है, हमारे क्षत्रिय धर्म पर धिक्कार है कि जिस के कारण ऐसे २ गुरु महात्मा दुःखी होते हैं, कृपाचार्य ने मुझ को उत्तम युद्ध विद्या सिखाते समय यह भी उपदेश दिया था कि गुरूओं पर कभी भी प्रहार न करना चाहिये, शोक है कि मैंने उन बातों का विचार बिलकुल छोड़ दिया, यद्यपि मैं उन को मारने का

विचार कभी भी नहीं करता था तो भी मेरे मंद वेग वाले बाणों से मेरे गुरु की यह दशा हुई। हे कृपाचार्य! मैं आप को नमस्कार करता हूं. हे श्री कृष्ण मुझ को धिक्कार है कि जिस ने ऐसा पाप कर्म किया, इस प्रकार के वचन कहता हुआ अर्जुन कृपाचार्य के रथ के पास गया॥

तब कर्ण जयद्रथ को मरा हुआ सुन कर सामने आया और सात्यकी, युधामन्यु और उतमौजस से लड़ने लगा, अर्जुन ने श्री कृष्ण से कहा कि मेरे रथ को कर्ण के सामने ले चलो श्री कृष्ण बोले कि ठहरो, अभी कर्ण के हाथ से इन्द्र की शक्ति जिस की वह तुम्हारे लिए रक्षा करता है जा लेने दो फिर इस से तुम्हारा लड़ना ठीक है, अभी तो सात्यकी ही पर्याप्त है फिर द्रौपदी के पुत्र उस के साथ हैं, तुम्हारे लड़ने की कोई आवश्यक्ता नहीं॥

धृतराष्ट्र ने पूछा कि हे संजय! तुम ने तो सात्यकी का विरथ होना बताया था, अब वह किस प्रकार रथ को पागिया, क्या कर्ण विरथ सात्यकी से युद्ध करता रहा, संजय बोले कि हे राजन्! सात्यकी की यह दशा देख कर श्रीकृष्ण ने अपना शंख बजाया, इस संकेत को देख कर दारुक सारथी उत्तम रथ सजा कर लाया, जिस पर सात्यकी स्वार हुआ, फिर कर्ण और सात्यकी का बड़ा युद्ध हुआ जिस में सात्यकी ने कर्ण को विरथ कर दिया और उसके सारथी और घोड़ों को मार कर उसके रथ को सौ टुकड़ों में विभक्त किया॥

तब कर्ण के पुत्र वृषसेन, मद्रदेश के राजा शल्य और अश्वत्थामा ने सात्यकी को चारों ओर से घेर लिया, कर्ण फिर दुर्योधन के रथ पर जाकर स्वार हो गिया, यदि सात्यकी चाहता तो कर्ण और दुश्शासन को मार लेता परंतु उस को अर्जुन और भीमसेन की प्रतिज्ञा विदित थी, इस लिये उस ने कुछ नहीं किया ॥

अठहत्तरवां अध्याय

—:०:—

भीमसेन का अर्जुन को कर्ण के शब्द सुनाना, अर्जुन का कर्ण के पुत्र वृषसेन को मारने की प्रतिज्ञा करना, सूर्य का अस्त होना, अर्जुन का सब मित्रों समेत लौटना और युद्ध भूमी को मृतक शरीरों से आच्छादित हुआ देखना ॥

इस के पश्चात् भीमसेन ने अर्जुन को कहा कि हे तात ! तुम्हारी प्रतिज्ञा की रक्षा के निमित्त आज मैंने कर्ण को नहीं मारा, मुझे उस ने बड़े अनुचित शब्द कहे हैं और कहा है कि हे वृकोदर ! तू बहुत खाना ही जानता है, तुझे लड़ना नहीं आता, यद्यपि मैंने उस को कई वार विरथ किया, परंतु तुम्हारी प्रतिज्ञा के निमित्त नहीं मारा, मेरा विचार है कि यह कर्ण मुझ

स भी वैसा ही वध्य है जैसा कि आप से, यह सुन कर अर्जुन कर्ण के पास गया और उस को धीरे से कहने लगा, कि अरे मन्द बुद्धि! तुम आज भीमसेन को क्यों इतने अनुचित शब्द कहे, देखो तुम को इतनी बार विरथ कर के भी भीमसेन ने नहीं मारा, यह उसी का साहस था, तुम ऐसे मंद बुद्धि हो कि तुम ने बालक अभिमन्यु को विरथ करके मार डाला, अच्छा इस घोर पाप का परिणाम मैं तुम को अवश्य दूंगा और तुम्हारे पुत्र वृषसेन को उसी प्रकार मारूंगा कि जिस प्रकार तुम ने अभिमन्यु को मारा है, यह सत्य ही होगा, मैं शपथ खाकर कहता हूं॥

—:०:—

अर्जुन की इस प्रतिज्ञा को सुन कर कौरवी सेना कांपने लगी, इतने में सूर्य अस्त होगया, श्री कृष्ण ने कहा कि हे अर्जुन! तुम ने प्रारब्ध से ही अपनी प्रतिज्ञा को पूरा किया है, हे विजय के अभ्यासी अर्जुन! परारब्ध से ही पुत्र समेत वृद्धक्षत्र मारा गया है, दुर्योधन की सेना को विजय करना सुगम कार्य नहीं है तुम ने बड़े २ बलवान राजाओं को पराजित किया है, अब इसी प्रकार तुम्हारे हाथ से दुरात्मा कर्ण और उस के सम्बन्धियों के मारे जाने पर मैं तुम्हारी प्रशंसा करूंगा॥

यह सुन कर अर्जुन बोला कि हे श्रीकृष्ण जी! हमारी क्या सामर्थ्य है कि हम दुर्योधन की सेना से लड़ें, केवल आप के ही प्रभाव से सब कुछ हो रहा है, मेरी प्रतिज्ञा

केवल आप ही की दया से पूरी हुई है, मैं आप की ही कृपा पर विश्वास करके दूसरी प्रतिज्ञाओं को भी पूरा करूंगा। आप ही की कृपा से राजा युधिष्ठर सम्पूर्ण पृथ्वी का स्वामी होगा, हे श्रीकृष्ण जी! हम आप से सदैव पोषण के योग्य हैं॥

ऐसा सुनते हुये और रथ को चलाते हुये श्रीकृष्ण जी ने अर्जुन को खड्ग भूमि दिखाई और कहा कि हे अर्जुन! देखो यह पृथ्वी के निमित्त लड़ने हुये पृथ्वी के स्वामी पृथ्वी पर ही मर कर पृथ्वी पर सोते हैं, देखो चारों ओर मृतक शरीरों के ढेर लग रहे हैं, हाथी घोड़ों के मृतक शरीर स्थान २ पर पड़े हैं, टूटे रथ और शस्त्र पग २ पर दिखाई देते हैं, इस प्रकार कहते हुये श्रीकृष्ण जी ने अपने डेरे को लौटते हुये इस भय युद्ध भूमि को दिखाया। उस समय श्रीकृष्ण ने पांचजन्य शंख को बजाया॥

उनासीवां अध्याय

—:०:—

श्रीकृष्ण और अर्जुन का लौट कर आना, युधिष्ठर को विजय का समाचार देना। युधिष्ठर का प्रसन्न होना। दुर्योधन का

विलाप और द्रोणाचार्य का प्राणों की आशा छोड़ कर युद्ध करना ॥

जब श्रीकृष्ण जी लौट कर डेरे में आये तो युधिष्ठर को कहने लगे कि हे शत्रु संतापी! तुम्हारा कल्याण हो। तेरे सब शत्रु विजय हुए हैं। तब अर्जुन बोला कि हे अजात शत्रु! आप को प्रणाम हो जयद्रथ मारा गया और शेष कौरव लोग भी हार गये हैं ॥

युधिष्ठर अर्जुन को देख कर बड़ा प्रसन्न हुआ और कहने लगा कि हे महाबाहू! तुमने बहुत अपूर्व काम किया है, जो देवताओं से होना भी असंभव है,तब वह श्रीकृष्ण को देख कर कहने लगा कि मैंने आप के पराक्रम की कथा अनेक ऋषियों से सुनी है, जहां श्रीकृष्ण हैं, वहां ही जय होती है हम तुच्छ बुद्धि क्या कर सकते हैं, यह केवल आप ही की कृपा है कि हमारे सब शत्रु मारे गये, आप ही के प्रभाव से जयद्रथ मरा और आप ही के प्रभाव से पाण्डवों की जय हुई। हे श्रीकृष्ण जी! देवता भी इस कर्म के करने में असमर्थ हैं, जो आपने किया है, आप हमारे सहायक न होते, तो हम कभी भी युद्ध को प्रारम्भ न करते ॥

यह बात सुन कर धृतराष्ट्र बोला कि हे संजय! जयद्रथ के मरने पर दुर्योधन ने क्या किया? उसका वृत्तान्त भी सुनाओ, संजय ने कहा कि सुनिये ॥

दुर्योधन डेरे में आकर फूट २ कर रोने लगा और द्रोणाचार्य के पास जाकर कहने लगा, कि हे गुरुजी ! इतने बड़े शूरवीरों से रक्षित भी जयद्रथ मारा गया, तो हमारी अकेलों की क्या दशा है ? मैं अर्जुन को शूरवीर मानता हूं। उसके समान कोई योधा हमारे दल में नहीं है। हमारे निमित्त लड़ने वाले बड़े २ शूरवीर मारे गये, फिर हमारी क्या दशा होगी। देखो सब लोग हमारी निन्दा करते हैं और कहते हैं कि मेरे ही लोभ और अधर्म से सब राजा पृथ्वी पर सोते हैं, हाय ! मै कैसा अभागा हूं कि इस सारे जगत के नाश का कारण हुआ हूं। मेरे अर्थ पृथ्वी की रक्षा करते हुए मेरे मित्र मारे गये। इस लिये मैं जीवन रखना पसन्द नहीं करता, हे महाराजों के आचार्य ! मुझे आज्ञा दो ॥

यह सुन कर द्रोणाचार्य बोला कि हे दुर्योधन ! तू सर्वदा पाण्डवों से लड़ने का अभिलाषी होकर इस प्रकार के बाण रूपी बचनों से क्यों मुझ को घायल करता है ? अर्जुन से रक्षित शिखण्डी ने भीष्म को मारा। मैंने तभी समझ लिया था कि बस अब हमारी सेना हो चुकी। जब तीनों लोकों में सब मनुष्यों में सब से बड़ा शूर मारा गया, तो शेष क्या रहा ? जूये में तुम जो पाशे फैंकते थे, वह पाशे न थे, बाण थे, विदुरजी के समझान पर भी तुमने न माना और द्रौपदी की अप्रतिष्ठा की, यह उन्हीं दुराचारों का फल है ॥

देखो कर्ण, शल्य, अश्वत्थामा, कृपाचार्य और तुम्हारे जीते हुए भी राजा सिन्धु मारा गया, इस से बढ़ कर असमर्थता का और क्या चिन्ह हो सकता है ? अब मुझ को भी जीने की आशा निष्फल प्रतीत होती है, हे दुर्योधन! जयद्रथ को मरवाकर क्यों अपने बाण से भी अधिक तीक्ष्ण वचनों से मुझ को छेदना चाहते हो, मैं जान चुका हूं कि कौरवी सेना शीघ्र नष्ट होगी इस लिये अब सब प्रकार से उपाय करो, अश्वत्थामा को कहो कि मन लगा कर युद्ध करे, मैं समझता हूं कि पाण्डव अब रात को भी युद्ध करेंगे, इस लिये अश्वत्थामा को कहो कि धर्म अर्थ को न पीड़ा देता हुआ युद्ध करे, हे राजन्! तेरे वचनों से पीड़ित अब युद्ध के लिये मैं सेना में प्रवेश करता हूं, यदि तुम में सामर्थ्य हो तो सेना की रक्षा करो॥

यह कह कर द्रोणाचार्य पाण्डवों की सेना पर टूट पड़ा तब दुर्योधन कर्ण से बोला कि हे वीर! गुरू जी के बनाये हुये अपूर्व व्यूह को देवता भी नहीं तोड़ सकते थे, फिर किस प्रकार अर्जुन उस में प्रविष्ट हुआ? वास्तव में गुरू जी अर्जुन के बहुत प्यारे हैं, मैं विचार करता हूं कि यह जान बूझ कर इधर होगये होंगे और अर्जुन को व्यूह में जाने दिया होगा, अब देखो अर्जुन ने सब को ही विजय किया है, हमारी सेना में कोई योधा उस से लड़ने में सामर्थ्य नहीं दीखता, अर्जुन ने गुरू जी के दयाभाव से जयद्रथ को मार कर अपनी प्रतिज्ञा पूरी करली। यह मेरी दुर्भाग्यता का लक्षण है॥

कर्ण बोला कि हे शत्रुओं के तपाने वाले राजन् ! अर्जुन के व्यूह में जाने में गुरू जी का कुच्छ भी दोष नहीं । अर्जुन दिव्य अस्त्रों को रखने वाला है, तिस पर भी श्री कृष्ण जी उस के सारथी हैं, वह भली प्रकार जानता था, अचार्य जी वृद्ध होने के कारण शीघ्र चल नहीं सकते, इस लिये शीघ्रता करके पास से निकल गया, द्रोणाचार्य के अस्त्र अजेय हैं और उन्हों ने बहुत पाण्डवी सेना मारी है, इस लिये उन में इस प्रकार का दोष लगाना सर्वथा निष्फल है, द्रोणाचार्य अपने कर्तव्य को भली प्रकार से पालन कर रहे हैं, यह केवल दैव की इच्छा से हमारा यत्न विपरीत हो रहा है, इस से पहिले हम ने कितने उपायों से पाण्डवों को मारने का यत्न किया है परन्तु दैव की इच्छा से वेह नहीं मरे, भला इस में किस का दोष समझते हो, देखो हमारे सब काम कुटिलता से भरे हुये हैं और पाण्डवों के सरलता से, फिर भी जय उन्हीं की होती है । तुम्हारी बहुत सी सेना है और उनकी थोड़ी परन्तु विजय फिर भी उन्हीं की होती है, इस लिये मेरा यह निश्चय है कि हमारा उद्योग और यत्न केवल दैवी कर्मों से नष्ट हो रहा है, यह कह कर संजय बोले कि हे राजा ! आप के कुविचार से आप के शूरवीर दूसरे शूरवीरों से लड़ने को उद्यत हुये, इस के पीछे पाण्डवी सेना भी दिखाई दी ॥

तब दुर्योधन बड़े क्रोध से पाण्डवी सेना पर टूट पड़ा, अपने बाणों को छोड़ता हुआ और बड़े महारथियों से लड़ता

हुआ वह दुर्योधन बड़े क्रोध से आगे बढ़ा उसके बाणों के प्रहारों से सब पाण्डवी सेना भागी ॥

फिर दुर्योधन के इस प्रकार के साहस को देख कर युधिष्ठर आगे बढ़ा, दुर्योधन ने शीघ्र ही उसके धनुष को काटा, युधिष्ठर ने एक ही निमेष में और धनुष हाथ में लिया, तब दोनों राजाओं का परस्पर बड़ा पीड़ावान और भयंकर युद्ध हुआ, अन्त को युधिष्ठर ने दो भल्लों से दुर्योधन के धनुष के तीन खण्ड किये और उसको भी तीक्ष्ण बाणों से घायल किया, दुर्योधन मूर्छित होकर रथ में गिर पड़ा, उसको देख कर सेना के लोग चिल्लाने लगे कि "राजा मर गया, राजा मर गया ॥

तब द्रोणाचार्य सन्मुख आये और पाण्डवी सेना से कोप कर के लड़ने लगे, फिर महा प्रबल और कठिन युद्ध वर्तमान हुआ ॥

अस्सीवां अध्याय

—:o:—

पाण्डवों का द्रोणाचार्य से युद्ध, भीमसेन का मुष्ठिका युद्ध में बहुत से शूरवीरों को मारना ॥

तब बड़े २ पाण्डवी योधा द्रोणाचार्य के सन्मुख गये, द्रोण ने सब पाण्डवों को मार २ कर भगा दिया, कोई योधा

उसके सामने ठहिर न सका, तब शिवि सामने आया, उसने द्रोण के सारथी को मार दिया, परन्तु द्रोण अपने स्थान से न हिला और उसने बड़ी शीघ्रता से शिवि के सारथी को मार कर उसके शिर को भी काटा, इतने में दुर्योधन ने और सारथी द्रोण के पास भेज', उसको पाकर द्रोणाचार्य पांडवी सेना में घूमने लगा ॥

अपने पिता की मृत्यु से क्रोधित कालिंग देश का राज कुमार भीमसेन के सन्मुख गिया, भीमसेन ने मुष्टिका युद्ध में उस को मर्दन कर उस की सब हड्डी पसली तोड़ दी, फिर भीमसेन ध्रुव रथ के पास गिया और उस को भी इसी प्रकार मुष्टिकाओं से मारा और सिंह के समान गर्जने लगा, फिर जयरात को तमाचों से मार कर गिरा दिया, फिर कर्ण ने सुनहरी शक्ती को उस के ऊपर छोड़ा, भीमसेन ने उस शक्ती को हाथ में पकड़ा और कर्ण पर ही फेंका, कर्ण ने झट उस को तैल पायनी बाण से काटा ॥

तब भीमसेन आप की सेना पर टूट पड़ा, आप के पुत्र उस के सन्मुख आये भीमसेन ने दुर्म्मद के सारथी को मारा, दुर्मद शीघ्र ही दुष्कर्ण के रथ पर चला गया, भीमसेन ने एक लात से उस रथ को तोड़ा और दोनों भाईयों को मुष्टिका युद्ध में घेर कर मार डाला, भीमसेन के रुद्र रूप को देख कर आपकी सेना हाहाकार करने लगी और पाण्डवी उस की बड़ी प्रशंसा करने लगी ॥

———

इक्यासीवां अध्याय

—०:—

सोमदत्त का सात्यकी पर क्रोध, अश्वत्थामा और घटोत्कच का युद्ध, द्रोणाचार्य का पाण्डवी सेना को मारना, युधिष्ठर और कौरवों का युद्ध ॥

तब सोमदत्त सात्यकी को देख कर बोला कि हे सात्यकी! तू ने अशस्त्र और रथ हीन भुरिश्रव को मार कर यादव कुल को कलंक लगाया है, तूने क्षत्रिय धर्म नहीं किया, जब अर्जुन ने उस विचारे की भुजा काट दी, तो तुम्हारा उस पर प्रहार करना कैसे उचित था? इस लिये अब युद्ध के निमित्त खड़ा होजा मैं तुझ से ञ का बदला अवश्य लूंगा, यह बात मैं दोनों पुत्रों की शपथ खाकर कहता हुं ॥

यह सुन कर सात्यकी बोला कि हे कौरव! मैं तुम्हारे युद्ध सार शब्दों से नहीं डरता, यदि तुम्हारी लड़ने की इच्छा है तो मुझ पर बाण मारो मैं उत्तर दूंगा ॥

यह कह कर दोनों पुरुषोत्तम युद्ध में जुट गये, दुर्योधन ने सोमदत्त को अच्छी रीति से मध्य वर्ति किया, सोमदत्त ने सात्यकी को बाणों से ढक दिया, सात्यकी ने भी बहुत बाण मारे धृष्टद्युम्न सात्यकी की सहायता को पहुंचा, सोमदत्त नौ

बाणों से सात्यकी को व्यथित किया, फिर सात्यकी ने ऐसी बाण वृष्टि की कि सोमदत्त घायल हो कर रथ के बैठने के स्थान पर बैठ गया, उसका सारथी यह देख कर रथ को दूर ले गया ॥

फिर द्रोणाचार्य पाण्डवों के सामने आया और अपनी बाण वर्षा से सब पाण्डवों को घायल करने लगा, उस के सामने पाण्डवी सेना ऐसी भागी जैसे वायु के चलने से बादल भागते हैं, अर्जुन ने दूर से यह देख कर श्री कृष्ण जी को कहा कि मेरा रथ द्रोणाचार्य के सामने ले चलो, पाण्डवी सेना फिर लौटी, सब महारथी उधर ही आये, फिर अर्जुन ने कौरवी के दक्षिणीय भाग और भीमसेन ने उत्तरीय भाग में स्थान किया और धृष्टद्युम्न और सात्यकी बीच में होकर लड़ने लगे ॥

सात्यकी को देख कर अश्वत्थामा जो भूरीश्रवा की मृत्यु से अत्यन्त क्रोध युक्त था, उस से लड़ने के लिये आगे बढ़ा, घटोत्कच ने अपनी राक्षसी सेना लेकर उसे वहीं रोक दिया, फिर दोनों का भयंकर युद्ध हुआ, अश्वत्थामा ने घटोत्कच के पुत्र अंजन पर्वा को मार दिया, घटोत्कच को बड़ा क्रोध आया और वह अश्वत्थामा पर प्रहार करके बोला कि हे द्रोण के पुत्र ! ठहिर मैं तेरा पौरुष देखता हूं, अश्वत्थामा ने कहा कि हे हिडम्बा के पुत्र घटोत्कच ! पुत्र से पिता को पीड़ा होना ठीक नहीं। मेरा तुझ पर कोई क्रोध नहीं तू किसी और से जाकर युद्ध कर, यह बात सुन कर पुत्र के क्रोध से रक्त नेत्र घटोत्कच बोला कि हे द्रोण के पुत्र ! मैं आप

के वचनों का धन्यवाद करता हूं परन्तु मैं भी भीमसेन का पुत्र हूं, आप ने मेरे पुत्र को मारा है, इस लिये आप मेरे वध्य हैं, यह कह कर दोनों युद्ध में जुटे, अश्वत्थामा ने अपने अमित पराक्रम से सब राक्षसी सेना मार डाली, घटोत्कच ने अनेक अस्त्रों को अश्वत्थामा के मस्तक पर छोड़ा, जिस से कौरवी सेना अश्वत्थामा के जीवन से निराश होगई। परन्तु अश्वत्थामा ने शीघ्र ही उन अस्त्रों को काट डाला, घटोत्कच ने फिर धावा किया, परन्तु अश्वत्थामा ने उस के रथ को शीघ्र ही भस्म कर दिया, तब घटोत्कच धृष्टद्युम्न के रथ पर चला गया और अश्वत्थामा से लड़ने लगा। अश्वत्थामा ने ऐसे तीक्ष्ण धार वाले बाण छोड़े कि वह राक्षस वहीं अचेत हो कर गिर पड़ा, यह देख कर धृष्टद्युम्न उस को युद्ध से बाहिर लेगया, इस प्रकार अश्वत्थामा ने एक अक्षौहिणी राक्षसों का विध्वंस किया ॥

इस के पीछे अश्वत्थामा ने सब पाण्डवों को घायल करके द्रौपदी के तीन पुत्रों को मारा और राजा श्रुताहुय को यमलोक में पहुंचाया, तब सब कौरव अश्वत्थामा की स्तुति करने लगे ॥

सात्यकी को देख कर सोमदत्त का क्रोध फिर भड़क उठा। भीमसेन शीघ्र ही उसके सामने आंयो, दोनों वीरों ने शक्ति और परिघों से सोमदत्त विचारे को छाती पर घायल किया, जिससे वह महारथी गिर पड़ा, यह देख कर उसका

पिता वाह्लीक बाणों की वर्षा करता हुआ सात्यकी से लड़ने लगा, भीमसेन ने नौ बाणों से उसको घायल किया, वाह्लीक ने इन्द्र वज्र के समान शक्ति उस पर चलाई, जिससे भीमसेन की छाती पर घाव पड़ गये, भीमसेन ने ऐसी गदा मारी कि वाह्लीक विचार वहीं चिररहा, यह देख कर वाह्लीक के दश पुत्र भीम पर आ कूदे, परन्तु भीमसेन की गदा ने सब को क्षण भर में नाश किया, फिर भीम ने अनेक रथियों को मार नाराचों से सूत चन्द्र को मारा ॥

यह देख कर द्रोणाचार्य सामने आये और युधिष्ठर से लड़ने लगे उन्हों ने पाण्डवी सेना को मार २ कर भगा दिया ॥

व्यासिवां अध्याय

—:०:—

दुर्योधन और कर्ण की बात चीत, कृपाचार्य अश्वत्थामा और कर्ण का विवाद और परस्पर क्रोध, दुर्योधन का शांति कराना और कर्ण का पाण्डवों से लड़ने जाना ॥

अर्जुन और भीमसेन ने सेना को इकट्ठा कर के फिर छांटे, दुर्योधन यह देख कर कर्ण को कहने लगा कि हे मित्र! यही समय मित्रता प्रकट करने का है, पाण्डवों की मारी सेना

तुम पर चढ़ आई है, तुम अपने सब महारथियों की रक्षा करो, देखो पाण्डव लोग पांचाल और मतस्यों से बल पा कर कैसे गर्ज रहे हैं। कर्ण बोला कि यदि इन्द्र भी यहां अर्जुन की रक्षा को आवे तो पहिले अर्जुन को ही मार फिर पाण्डवों को मारूंगा, मैं ही उनके नाश के लिये उत्पन्न हुआ हूं और इस लिये जीता हूं, मैं आप का अभीष्ट अवश्य करूंगा, मेरे पास इन्द्र की दी हुई अमोघ शक्ति है, मैं उसको अर्जुन पर छोडूंगा जब वह मर गया तो दूसरे पाण्डव अवश्य आप के आधीन होंगे, हे कौरव! व्याकुल मत हो ॥

यह वचन सुन कर कृपाचार्य बोले, हे कर्ण! तुम धन्य हो बातों ही में दुर्योधन की विजय करते हो, पराक्रम तुम्हारा तो कभी प्रगट न हुआ, जहां तुम रण में गये, वहां ही तुम हारे, क्यों कौरव राज दुर्योधन को धोका देते हो? मैं तो जानता हूं कि शूरवीर लोग बहुत बका नहीं करते, पर तुम तो बातों ही में सारी पृथ्वी को जय करते हो, हे राधा के पुत्र! तभी तक तुम्हारा गर्जना शेष है, जब तक तुम अर्जुन के सामने नहीं जाते, क्षत्रिय भुजाओं से शूर होते है, ब्राह्मण बातों में शूर है अर्जुन धनुष में शूर है, परन्तु कर्ण मनोरथों में ही शूर है। यह बात सब लोग अच्छी तरह से जानते हैं ॥

यह सुन कर क्रोध युक्त कर्ण कृपाचार्य को कहने लगा कि हे ब्राह्मण! मेरा गर्जना वृथा नहीं, शूर लोग जिस बात का निश्चय करते हैं, दैव उसमें अवश्य सहायता देता है यदि मैं यादवों समेत पांडवों को मारता हूं तो आप की उस में क्या

ह्याने है, मैं श्रीकृष्ण और अर्जुन को मारने के लिये उत्साह करता हूं। इस लिये गर्जता हूं, हे ब्राह्मण! मेरे गर्जने के फल को देखो, मैं युद्ध भूमि में श्रीकृष्णजी समेत पांडवों को मार कर निष्कण्टक पृथ्वी को दुर्योधन को दूंगा॥

कृपाचार्य बोले हे कर्ण! मैं तेरी बकवास को नहीं जानता तूं सदैव पाण्डवों की और श्रीकृष्ण की निन्दा करता है, वह पाण्डव सब के सब धर्मात्मा और जितेन्द्रिय हैं, तुम उन के सौंवा भाग भी नहीं हो, उन के सम्बन्धि भी सब धर्मात्मा और प्राक्रमी हैं, वह चाहें तो इस संसार को अस्त्रों के बल से निर्मूल कर दें, हे सूत पुत्र! तेरा श्रीकृष्ण और अर्जुन को मारने का उत्साह करना निरर्थक है॥

यह सुन कर क्रोध युक्त कर्ण कृपाचार्य को कहने लगा कि हे ब्राह्मण! जो कुछ तुम पाण्डवों के विषय में कहते हो वह सत्य है, वह सर्वथा अजेय हैं परन्तु मेरे पास इन्द्र की दी हुई अमोघ शक्ती है, मैं उस से अर्जुन को मारूंगा अर्जुन के मरने पर उस के सब भाई हमारे वश में होंगे, हे गौतम जी मैं इस बात पर गर्जता हूं, आप मोह से मेरा अपमान करते हो, यदि फिर इस प्रकार का कठोर वचन कहोगे तो खड़ग से तुम्हारी जिह्वा काट डालूंगा, तुम्हारी सब सेना को विमन कर रहे हो, यदि पाण्डवों के सम्बन्धि धर्मात्मा और पराक्रमी हैं, तो दुर्योधन के क्या कम है, देखो द्रोण, शकुनि, दुर्मुख, जय दुश्शासन, वृषसेन, शल्य, तुम, सोमदत्त और अश्वत्थामा। अदि विजय

तो दैव के आधीन हैं, परन्तु कौन है जो इन को जीतने का साहस करे?

हां हमारे बहुत से वीर योधा मारे गये हैं, तो क्या पाण्डवों के नहीं मारे गये? इस में पाण्डवों का क्या प्रभाव है, हे नीच ब्राह्मण तुम सदैव पाण्डवों की प्रशंसा करते हो। मैं युद्ध में अपनी सामर्थ्य के अनुसार दुर्योधन का हित करूंगा॥

यह सुनकर अश्वत्थामा भड़क उठा, उसने खड्ग को उठाया और बोला कि हे मनुष्यों में नीच कर्ण! मैं अभी तेरा सिर काटता हूं, तूने अर्जुन के सच्चे गुणों के कहने वाले मेरे मामा का निरादर किया है, मैं तुझ को अच्छी भांति जानता हूं, तू सदैव अपनी स्तुति करता है और प्रशंसनीय वीरों की निंदा करता है, दुर्बुद्धि सूत! जिस अर्जुन की तू निंदा करता है, वही तुझ को यमराज के दर्शन करायेगा॥

राजा दुर्योधन में इस प्रकार का परस्पर क्रोध युक्त विवाद सुनने की समर्थ न रही, उसने तुरन्त अश्वत्थामा को रोका, कर्ण बोला कि हे कुरु श्रेष्ठ! यह नीच ब्राह्मण छोड़ने के योग्य है, यह आपकी सदैव निन्दा करता है, तब दुर्योधन बोला कि हे ब्राह्मण! मेरे युद्ध का भार कर्ण, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य, शल्य, शकुनि और आप पर ही है, परन्तु आपही परस्पर वाणी युद्ध में आरूढ़ हैं, मेरी विजय किस प्रकार होगी, हे ब्राह्मण!

क्षमा की, तब अश्वत्थामा और कृपाचार्य ने कहा कि हे कर्ण हमने तुम्हारा अपराध क्षमा किया ॥

इतने में कर्ण को बुलाते हुये पंचाल और पांडव एक साथ ही आ पहुंचे, कोई बोला कर्ण को मारो, कोई बोला कि मिथ्या भिमानी बकवासी कर्ण बाहिर निकले, उसीने सब राजाओं को क्लेश दिया है, कोई बोला कर्ण जीता न जाये, कोई बोला कि कर्ण उपद्रवों का मूल है इस को अवश्य मारना चाहिये ॥

यह देख कर कर्ण सामने गया और ऐसा जान तोड़ कर लड़ा कि पाण्डवों की सेना हार कर भाग निकली, दुर्योधन ने धन्य धन्य कहा और कृपाचार्य को उस का पराक्रम दिखाया, इस अवसर में अर्जुन आगे बढ़ा, दुर्योधन ने अश्वत्थामा और कृपाचार्य को कहा कि आगे बढ़ कर कर्ण की रक्षा करो, तब अश्वत्थामा, कृपाचार्य, शल्य और कृतवर्मा कर्ण की रक्षा के लिये आगे बढ़े ॥

तिरासीवां अध्याय

—:०:—

कर्ण की पराजय, दुर्योधन का सेना को उत्साहित करना, अश्वत्थामा का लड़ने जाना, पाण्डवी सेना का भागना, भीमसेन और

अर्जुन का सेना को फिर लौटाना, पाण्डवों की विजय होना ॥

तब अर्जुन कर्ण के सामने गया, एक मुहूर्त भर दोनों का घोर युद्ध हुआ, फिर अर्जुन ने कर्ण के रथ को तोड़ डाला और उस के सारथी और घोड़ों को मार कर तीक्ष्ण बाणों से उस को घायल किया, तब कर्ण कृपाचार्य के रथ पर चला गया, उस को पराजित देख कर कौरवी सेना भागी, तब दुर्योधन आगे बढ़ा और कहने लगा कि हे वीर क्षत्रियो, भाग कर कहां जाते हो, तुम्हारा यह कर्म क्षत्रिय धर्म के विरुद्ध है, आओ मैं तुम्हारे साथ हूं जब तक जीता हूं लौट कर न आऊंगा पान्चालों को मारो पांडवों को हराओ और लोक में यश और कीर्ति पाओ ॥

दुर्योधन को आगे बढ़ा देख कर कृपाचार्य अश्वत्थामा को कहने लगे कि हे अश्वत्थामा, देखो दुर्योधन क्रोध से मूर्छावान होकर आप युद्ध करने जाता है, हमारे जीते हुये राजा का अर्जुन के सन्मुख जाना उचित नहीं, यह कभी अर्जुन के बाणों को न सहार सकेगा, तुम आप इस के साथ होकर इस की रक्षा करो, यह सुन कर अश्वत्थामा आगे बढ़ा और राजा से कहने लगा कि हे महाराज! हमारी वर्तमानता में आप किस प्रकार युद्ध के लिये आप जाते हैं? ठहिरो मैं शत्रुओं के सामने जाता हूं ॥

यह सुन कर दुर्योधन बोला कि हे गौतमी के पुत्र! गुरु जी पाण्डवों पर सदा दयावान हैं और पुत्रों की भान्ति

उन की रक्षा करते हैं। आप भी उन में उदासीनता दिखाते हो, कदाचित मेरी मन्द भाग्यता के कारण आप के शस्त्रों का पराक्रम नष्ट होता है, अथवा धर्मराज और द्रौपदी के कारण मुझे कुछ प्रतीत नहीं होता। आप चाहें तो सारे संसार को भस्म करदें। परन्तु आप का प्रभाव पाण्डवों को पाकर कुछ नहीं रहता, मुझ लोभी को धिक्कार है कि जिस के कारण सब सज्जन लोग दुःख पाते हैं। हे अश्वत्थामा! आप के बिना कौन शत्रुओं को जीत सकता है? देखो समय बहुत थोड़ा है चल कर सेवकों समेत पांडवों को मारो, यह देखो हमारी सेना भाग रही है॥

यह सुन कर अश्वत्थामा बोला कि हे राजन! आप का कहना ठीक है, पांडव मेरे और मेरे पिता के सदैव प्रिय हैं, परन्तु युद्ध में नहीं। हे राजन! आप के महारथी एक निमेष में पांडवी सेना का विनाश कर सकते हैं और पांडव आधे निमेष में आप की सेना को मार सकते हैं, परन्तु यदि हम युद्ध में न हों तो, हे कौरव राज! यदि इधर हम न हों और उधर पांडव न हों तो तेज तेज से मिल कर सर्व नाश हो जाये, पांडवों के जीते उन की सेना शीघ्र नाश नहीं होसकती, यह बात आप सत्य समझें॥

तुम बड़े छली और लोभी हो, इसी लिये हम लोगों पर संदेह करते हो। हे कौरव! मैं मानता हूं कि तुम पापी और नीच हो, नहीं तो तुम इस प्रकार का सन्देह हम पर

कभी न करते। देखो हम लोग प्राणों को छोड़ कर आप के निमित्त लड़ते हैं, परन्तु आप फिर भी हम पर सन्देह करते हैं, हे राजन्! अब मैं आप के निमित्त युद्ध करने जाता हूं, आप मेरे पराक्रम को देखो॥

यह कह कर अश्वत्थामा युद्ध करने को गया, उस ने सामने आने वाले सेवकों और पांचालों को मार २ कर नीचे गिराया, धृष्टद्युम्न बोला कि हे अश्वत्थामा! इस सेना को मार कर क्या करेगा, तू मेरे सामने आ, मैं तुम को युद्ध का स्वाद दिखाता हूं, तब उन दोनों का बहुत भयंकर युद्ध हुआ, सेना के लोग इस युद्ध को देखने के लिये खड़े होगये अश्वत्थामा ने धृष्टद्युम्न को विरथ किया और पांडवी सेना भागी॥

तब भीमसेन और अर्जुन आगे बढ़े, भीमसेन ने घोर युद्ध आरम्भ किया, अंबष्ठ, मालव, शिवी, अभिषाह। शूरसेन और माद्रिक क्षत्रिय यमपुर को प्राप्त हुये, फिर द्रोणाचार्य सन्मुख आये, उन्हों ने पांडवी सेना के मुख फेर दिये अर्जुन और भीमसेन फिर यत्न से अपनी सेना की रक्षा करने लगे। फिर द्रोणाचार्य और आप के पुत्र से रुके हूये वह शूर वीर न रुक सके, उन्हों ने आप की सेना को मार कर भगाया और छिन्न भिन्न किया॥

चौरासीवां अध्याय

—०—

सोमदत्त और सात्यकी का युद्ध । सोमदत्त का मारा जाना, युधिष्ठर का द्रोणाचार्य से युद्ध, रात्रि का अन्धकार, मशलों का जलाना कौरवों का फिर व्यूह बनाना, दर्योधन का सेना को उत्साहित करना ॥

सोमदत्त को देख कर सात्यकी ने कहा कि वह मेरा शत्रु जाता है, मैं इस के साथ अवश्य युद्ध करूंगा। तब सात्य कि सोमदत्त के सन्मुख गिया, दोनों ओर से भारी बाणों की वर्षा हुई, जिस में सोमदत्त विरथ हो कर मारा गिया, तब कौरवी योधा सात्यकी से लड़ने लगे, युधिष्ठर ने द्रोणाचार्य का सामना किया और ऐसे बाण मारे कि द्रोण घायल हो कर रथ में बैठ गिया, श्रीकृष्ण जी युधिष्ठर से कहने लगे कि हे राजन्! तुम गुरु जी को छोड़ो, यह तुम्हारे पकड़ने का यत्न करते हैं, जाओ दुर्योधन से जा कर लड़ो, राजा का युद्ध राजा से ही होना योग्य है ॥

यह सुन कर युधिष्ठर द्रोणाचार्य को छोड़ कर चला गिया। इतने में रात्रि का अन्धकार ऐसा बढ़ गिया कि कुछ दिखाई न देता था, दुर्योधन ने अपनी सेना को कहा कि

मशालें जलाओ और सब पादातियों, रथों और घोड़ों को प्रकाश दो! एक २ रथ पर पांच २ मशालें, एक २ हाथी पर तीन २ और एक २ घोड़े पर एक एक मशाल लग गई, तब कौरवी सेना बड़ी प्रकाश मान हुई ॥

पांडवों ने भी इसी प्रकार सेना को प्रकाश युक्त किया, प्रत्येक हाथीपर सात २ मशालें लगाईं, प्रत्येक रथ पर दश २ और प्रत्येक घोड़े पर दो २, इस प्रकार प्रकाश युक्त दोनों सेना आपस में लड़ने लगीं, तब द्रोणाचार्य ने नया व्यूह बनाया, दुर्योधन उसके विचार को देख कर अपने भाईयों को कहने लगा कि विकर्ण, चित्रसेन, दुर्धर्ष, महाबाहु और दीर्घबाहु अपने अनुयायियों को साथ लेकर द्रोणाचार्य की पृष्ठ की रक्षा करो, कृतवर्मा दक्षिण चक्र की रक्षा करे, शल्य उत्तर चक्र की और त्रिगर्तियों के शेष महारथी द्रोणाचार्य की आगे से रक्षा करें ॥

धृष्टद्युम्न को छोड़ कर कोई राजा द्रोणाचार्य के सन्मुख नहीं ठहिर सक्ता। मेरा पूर्ण विश्वास है कि गुरूजी पाण्डवों और सोमकों को मारेंगे, अश्वत्थामा धृष्टद्युम्न को मारेंगे। इस प्रकार कर्ण अर्जुन को मारेगा, मैं आप भीमसेन का सिर फोडूंगा, इस प्रकार हमारी विजय अवश्य होगी, आप साव-धानी से द्रोणाचार्य की रक्षा करें, जो शूरवीर शेष होंगे, उनका मारना कुछ बड़ी बात नहीं, आप लोग उद्यम करें। इस काम को देर तो लगेगी परन्तु आप उद्यम न छोड़ें, दुर्योधन के इन वचनों को सुन कर बड़ा कठिन युद्ध जारी हुआ ॥

पचासीवां अध्याय

—:-*-:—

दोनों ओर के महारथियों का परस्पर घोर युद्ध ॥

तब युधिष्ठिर का कृतवर्मा के साथ युद्ध हुआ। राजा युधिष्ठिर कृतवर्मा से हार गये और विरथ और शस्त्र हीन हो कर हट गये, सात्यकी ने भूरि को मारा, फिर घटोत्कच और अश्वत्थामा लड़े, अश्वत्थामा पर ऐसा घायल हुआ कि सब उसको मृतक समझ कर हाहा करने लगे परन्तु फिर उसने शीघ्र ही उठ कर घटोत्कच को जीता, और उसका सारथी उसको अचेत देख कर दूर ले गया, भीमसेन ने गदा प्रहारों से दुर्योधन को ऐसा अचेत किया कि कौरवी सेना उसको मृतक मान कर रोने लगी, और पांडवी सेना सिंह नाद करने लगी, फिर सहदेव कर्ण से लड़ा, कर्ण ने उसका रथ तोड़ दिया और चाहता तो मार भी डालता, परन्तु कुन्ति का वचन याद कर के बोला कि हे माद्री के पुत्र! अपने समान वीरों से लड़ो, बड़ों की बराबरी क्यों करते हो, जाओ तुम भी अर्जुन के पास जाओ ॥

यह कह कर रथ को चला कर चला गया। फिर विराट शल्य से लड़ने लगा, परन्तु विरथ हो गया। शता-

नीक उस का भाई उस की सहायता को आया, परन्तु शल्य से मारा गया; विराट उस के रथ पर स्वार हुआ, परन्तु अचेत हो कर सारथी से बाहिर ले जाया गया। तब अलंबुश अर्जुन से लड़ने आया, परन्तु विरथ हो कर भागा। अर्जुन ने कौरवी सेना का बड़ा नाश किया और मार २ कर भगा दिया। आप के पुत्र चित्रसेन और नकुल के पुत्र सतानीक का युद्ध हुआ, चित्रसेन विरथ हो गया और कृतवर्मा के रथ पर चला गया। वृषसेन ने द्रुपद को मूर्छित किया और सारथी उस को दूर ले गया॥

दुरशासन ने प्रति विंध्य को विरथ किया और वह सुतसोम के रथ पर चला गया, शकुनी और नकुल बहुत लड़े, परन्तु शकुनी हार कर भागा। शिखण्डी कृपाचार्य से लड़ने लगा। कृपाचार्य ने उस को बहुत बाणों से घायल किया। यह देख कर सोमकों ने शिखण्डी की रक्षा की। कौरवों ने कृपाचार्य को मध्यवर्ती किया। फिर बड़ा घमसान युद्ध हुआ, हाथी हाथी से लड़ा, घोड़ा घोड़े से भिड़ा। भाई भाई के साथ और मामा भानजे के साथ उस महाघातक युद्ध में प्रवृत्त हुआ, काल रात्री के समान वह रात्री संसार को अत्यंत भयानक दिखाई देने लगी, फिर धृष्टद्युम्न द्रोणाचार्य से लड़ा, कर्ण दुरशासन और अश्वत्थामा उस की सहायता को आये, धृष्टद्युम्न ने द्रुमसेन को मार गिराया, फिर सात्यकी उस की सहायता को आया कौरवों ने सात्यकी

को घेर लिया, फिर कर्ण ने दुर्योधन को कहा देखो कि अर्जुन सात्यकी को हमारे वशवर्ति देख कर आता है आप और वीरों को भेज कर अर्जुन को वहीं रोकें और पीछे से हम सात्यकी और धृष्टद्युम्न का नाश करेंगे, आओ इन को अभिमन्यु की तरह घेर कर मारो ॥

दुर्योधन ने शकुनि को कहा कि मामा जी आप बहुत सी सेना ले जाँय और आते हुये अर्जुन को रोकें, तब शकुनि ने अर्जुन पर चढ़ाई की और धृष्टद्युम्न द्रोणाचार्य पर चढ़ आया, कर्ण सहस्रों बाणों को छोड़ता हुआ सात्यकी को सामने गिया, सात्यकी विरथ हो कर दूसरे रथ पर चला गिया, कर्ण ने मार २ कर पाण्डवी सेना का नाश किया, तब सेना चारों दिशाओं में भागी, तब युधिष्ठर अर्जुन को कहने लगा कि हे तात ! यदि कर्ण को मारना हो तो अब मारो, इस के बाणों से हमारी सब सेना नाश हो रही है, अपने बांधवों के आतुर वचनों को सुनो, अर्जुन ने श्री कृष्ण को कहा कि धर्म राज युधिष्ठर इस समय अत्यन्त भय भीत हैं, इन को किसी प्रकार धीर्ज देनी चाहिये, श्री कृष्ण ने कहा कि जब तक कर्ण के हाथ में अमोघ शक्ती है, तब तक मैं तुम को उस के सामने नहीं भेज सक्ता। किसी और का भेजना उत्तम समझता हूं। घटोत्कच कहां है, उस को बुलाओ। घटोत्कच को बुला कर श्री कृष्ण ने कहा कि हे पुत्र ! तुम राक्षसी और मानुषी दोनों कर्मों को जानते हो, अपने पिता के समान अमित पराक्रमी भी हो। तुम इस समय कर्ण के सामने जाओ।

घटोत्कच बोला कि बहुत अच्छा मैं कर्ण को मारूंगा, यह कह कर घटोत्कच कर्ण के सन्मुख गया ॥

जटासुर का पुत्र अलंबुष दौड़ता हुआ दुर्योधन के पास आया और कहने लगा कि मेरे पिता को पाण्डवों ने मारा था, इसलिये मैं पाण्डवों से लड़ना चाहता हूं। दुर्योधन ने घटोत्कच के सन्मुख भेजा पहिले तो उन का बाणों से युद्ध हुआ फिर घटोत्कच ने अलंबुष को विरथ किया, विरथ होकर अलंबुष मुष्टका युद्ध करने लगा, घटोत्कच पहले तो बहुत घायल हुआ, परंतु फिर शीघ्र ही उस ने अलंबुष का शिर काट लिया और उस शिर को लेकर दुर्योधन के रथ के सामने गया और उस शिर को उस के रथ में फैंक कर कहने लगा कि अपने बन्धु का शिर लो, राजा बालक और स्त्री के पास जाते हुये खाली हाथ जाना उचित नहीं, मैं इस शिर को आप की भेट करता हूं; आप यहां ठहरये, मेरे और कर्ण के युद्ध को देखिये, हे महाराज! फिर कर्ण और घटोत्कच का भयंकर युद्ध आरम्भ हुआ ॥

छयासीवां अध्याय

—:o:—

कर्ण और घटोत्कच का युद्ध, अलायुद्ध राक्षस का कौरवों के पास आना और सहायता

देना, अलायुध का मारा जाना, कर्ण के हाथ से अमोघ शक्ति का चलना और घटोत्कच का मारा जाना ॥

हे महाराज ! कर्ण और घटोत्कच का बड़ा भारी युद्ध हुआ, ऐसा युद्ध न हम ने कभी देखा है और न हां सुना है, घटोत्कच अपनी राक्षसी माया को उत्पन्न करता रहा, फिर उस ने महा भयंकर अशनी को छोड़ा । कर्ण ने अशनी को दोनों हाथों से पकड़ा और घटोत्कच पर प्रहार किया, घटोत्कच रथ से उतर पड़ा, परन्तु उस के घोड़े मारे गये, घटोत्कच बोला कि अच्छा अब तेरी मृत्यु को उत्पन्न करता हूं । यह कह कर अन्तर्धान होगया, तब अलायुध राक्षस बड़ी सेना लेकर दुर्योधन के पास आया और कहने लगा कि आप को विदित है कि किस प्रकार भीमसेन ने हमारे भाई किर्मीर बक और हिडम्ब को मारा और हमारी हिडम्ब नाम कन्या को हर लाया, जिस का पुत्र घटोत्कच है, मैं चाहता हूं कि उस वैर का बदला लूं । आप मुझ को आज्ञा दीजिये, दुर्योधन बोला कि हे अलायुध आप आगे होकर लड़ें, हम आप के पृष्ठ की रक्षा करेंगे और सब पांडवों को मारेंगे ॥

यह कह कर अलायुध अपनी राक्षसी सेना को लेकर घटोत्कच के सन्मुख गया और दुर्योधनादि उस के पीछे हुये, अलायुध को घटोत्कच पर बढ़ता हुआ देख कर भीमसेन

ने उधर को रथ फेरा, फिर भीमसेन और अलायुध का कठिन युद्ध हुआ, भीमसेन ने राक्षसी सेना बहुत मारी परन्तु अलायुध ने उस को पीड़ावान किया। श्री कृष्ण ने घटोत्कच को उस के सामने भेजा, घटोत्कच ने उस राक्षस का शिर काट कर दुर्योधन के रथ पर फेंका। यह देख कर दुर्योधन अपनी विजय से निराश हुआ और शोचने लगा॥

तब कर्ण घटोत्कच से लड़ने लगा, घटोत्कच ने बाणों की वर्षा से कर्ण को ढक दिया, कर्ण ने अपने बाणों से उस के बाणों को काटा, तब घटोत्कच ने बड़ी माया उत्पन्न की जिस से सब कौरवी सेना भयभीत होकर भागी बहुत से मारे गये और जो २ बच भय से अचेत होकर उन्मत्तों की भान्ति बोलने लगे, तब कौरवों ने कहा कि हे कर्ण! तुम ने इन्द्र की शक्ति किस समय के लिये रखी हुई है, जब सारी सेना मारी गई तो आप की अमाघ शक्ति जैसी हुई वैसी न हुई, देखो राक्षस सब का नाश करता है, वीर लोग डर कर शान्ति नहीं पाते, आप शीघ्र ही शक्ति का प्रयोग करें और इस राक्षस को मारें, तब कर्ण ने उस शक्ति का विचार किया और हाथ में लेकर घटोत्कच पर मारी उस के लगते ही घटोत्कच पृथ्वी पर गिरा और निर्जीव होकर मर गया, कौरवों ने शंख मुर्जा और ढोलक बजाये और अतयन्त गर्जने लगे, तब उन्हों ने कर्ण की ऐसी पूजा की कि जैसी वृत्तासुर को मार कर इन्द्र की पूजा देवताओं ने की थी॥

सतासीवां अध्याय

—:०:—

श्रीकृष्ण अर्जुन और सात्यकी की बात चीत धृतराष्ट्र का संजय से प्रश्न करना ॥

पांडवी सेना घटोत्कच के मरने पर आंसु बहाने लगी और भय से भीत हो कर भागने लगी, तब श्रीकृष्ण प्रसन्न होकर नाचने लगे, अर्जुन ने पूछा कि हे वासुदेव ! यह नाचने का कौनसा अवसर है ? हम तो अपनी पराजय के कारण अश्रुपात कर रहे हैं और आपने नाचना आरंभ किया है, मानो कि इस से बढ़ कर और कोई समय आप के आनन्द बढ़ाने का नहीं है ? हे यादव ! यदि गुप्त रखने की बात न हो तो मुझ को समझाईये। श्रीकृष्ण ने अर्जुन को छाती से लगाया और कहने लगे कि हे अर्जुन ! मैं आज आप को काल के मुख से छूटा हुआ जानता हूं, घटोत्कच मर गया तो अच्छा हुआ क्योंकि यदि कर्ण इसको न मारता तो मैंने मारना था, क्योंकि वह पापी वेद विरुद्ध धर्मों के करने वाला था, परन्तु कर्ण के हाथ से मरने पर उसने तुम को काल से छुड़ा दिया, अब कर्ण लगी हुई आग के समान निर्बल है, तुम उसको मार सक्ते हो ॥

तब धृतराष्ट्र संजय से पूछने लगे कि हे सूत ! जब वह शक्ती इस प्रकार की थी, और कर्ण इसको जानता था, तो

उसने पहिले ही इसको अर्जुन पर क्यों न छोड़ा, इतने दिन युद्ध होता रहा, यदि वह अर्जुन को बुलाता, तो अर्जुन अवश्य उस से युद्ध करता, अर्जुन के मरने पर सब पाण्डव तुम्हारे वश में हो जाते, संजय बोला कि महाराज ! हम नित्य रात को यही विचार करते थे, परन्तु दिन को दैवाधीन कर्ण को विस्मर्ण हो जाता था, साथ ही श्रीकृष्ण जी अर्जुन की इस प्रकार रक्षा करते थे, कि वह अर्जुन को कभी कर्ण के सामने जाने ही न देते थे और २ वीरों को भेजते रहते थे, मेरा विचार है, कि मनुष्य की गति दैवी कर्मों में नहीं हो सक्ती,केवल दैव ही की इच्छा यह सब कुच्छ हुआ ॥

दूसरी ओर धर्म पुत्र राजा युधिष्ठर शोक से मूर्छित हुआ, उसको देख कर वासुदेव ने कहा कि हे युधिष्ठर ! तुम को शोक करना उचित नहीं, व्यामोहिता साधारण मनुष्यों में होती है आप में नहीं होनी चाहिये, उठो युद्ध करो और भारी धुर को उठाओ, आप के अधैर्य होने में विजय में सन्देह होगा, श्रीकृष्ण जी के वचन सुन कर युधिष्ठर बोला कि हे वार्ष्णेय ! मैं कृतघ्न नहीं हूं, मैं घटोत्कच के उपकारों को जानता हूं; वनवास में जो कुच्छ सहायता उसने हम को दी थी मैं उसको भूल नहीं सक्ता, फिर उसकी मृत्यु क्यों मुझ को दुःखदायी न हो, मैं उसको नकुल और सहदेव के समान समझता हूं । अर्जुन ने अभिमन्यु की मृत्यु के वास्तविक कारण द्रोणाचार्य और कर्ण को छोड़ दिया और बिचारे

जयद्रथ को मारा, वह दूर देशी हमारा क्या बिगाड़ता था? उसने अभिमन्यु को हाथ तक नहीं लगाया था, केवल हम को जो उसकी रक्षा के लिये जाते थे रोक दिया था, परन्तु कर्ण और गुरुजी अभिमन्यु की मृत्यु में मुख्य कारण थे। यदि अर्जुन इन को मार देता तो आज घटोत्कच की मृत्यु न होती, अच्छा मैं आप इन के सामने जाता हूं, और याव जीवन इन से लड़ता हूं॥

अठासीवां अध्याय

—:o:—

सेनाओं का विश्राम, दुर्योधन और द्रोणाचार्य का विवाद॥

क्रोध युक्त युधिष्ठर यह कह कर रथ को चला कर कर्ण के सामने गया, पांचाल और सृञ्जिय उसके पीछे गये, श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कहा कि युधिष्टर क्रोध में भर कर कर्ण से लड़ने जाता है, उसका अकेला जाना ठीक नहीं तुम भी उसके साथ चलो॥

तब अर्जुन पाण्डवी सेना को साथ लेकर युधिष्ठर के पीछे गया, युधिष्ठर ने धृष्टद्युम्न को कहा कि हे वीर! तुम द्रोणाचार्य को क्यों नहीं मारते? यही उपद्रव का मूल है और तुम से बलिष्ट नहीं है, तब धृष्टद्युम्न द्रोणाचार्य के

सन्मुख गया, इतने में आधी रात बीत गई और सब योधा थके मान्दे होकर निन्द्रान्ध दिखाई देने लगे; अर्जुन ने उच्च स्वर से कहा कि हे पाण्डव और कौरव वीरो, अब तुम बहुत थक गये हो, यदि तुम्हारी इच्छा हो तो विश्राम करो, चन्द्रमा के उदय होने पर जागना और युद्ध करना ॥

अर्जुन के इस शब्द को सुन कर सब लोग प्रसन्न हुये और अर्जुन का धन्य वाद कर के कहने लगे कि हे धर्म के जानने वाले महात्मन्! तेरा कल्याण हो? तब सब लोग यथास्थान सो गये। कोई रथ की नीड़ पर, कोई हाथी पर कोई भूमी पर जहां जिस को स्थान मिला वो वहीं सो गिया। कुछ काल सोने के पश्चात् भगवान् चन्द्रमा का प्रकाश हुआ, तब सब लोग जागे और अपने कर्म पर आरूढ़ हुये। परन्तु दुर्योधन नहीं सोया ॥

वह झट द्रोण के पास गिया और कहने लगा कि हे गुरु जी, थके हुये और विश्राम करने वाले शत्रुओं को क्षमा करना योग्य नहीं है। मैंने केवल आप के निमित इस बात को स्वीकार किया है। वह बड़े पराक्रमी हैं, हम निर्बल हैं, इस लिये हमारा उन को क्षमा करना उचित नहीं। आप की कृपा और पोषण से वह सदैव वृद्धि पाते हैं। आप सब अस्त्रों के ज्ञाता हो, परन्तु पाण्डवों की शिष्यता से अथवा हमारी अभाग्यता से आप के अस्त्र फल नहीं लाते और आप उन को क्षमा कर देते हैं ॥

क्रोध युक्त द्रोण यह वचन सुन कर बोला कि हे दुर्योधन ! मैं वृद्ध हो कर भी सामर्थ्य से शत्रुओं को मारता हूं, अब मुझ से नीच कर्म कराना चाहता है, तो वह भी करूंगा. मैं सब पंचालों और पांडवों को मार कर ही कवच उतारूंगा। तुम समझते हो कि अर्जुन विश्राम करता है, ऐसे विचार को मन से हटादो' पाण्डव थके हुये नहीं हैं, अर्जुन के मारने के विषय में तुम साहस करना चाहते हो. परन्तु यह नहीं जानते कि देवता भी उस को नहीं जीत सकते, यह वचन सुन कर दुर्योधन फिर बोला कि अच्छा' आप अर्जुन की प्रशंसा करें और उस की अजेय मानें, मैं दुश्शासन, कर्ण और अपने मामे शकुनी को ले कर और सेना के दो भाग कर के शत्रुओं को मारूंगा ॥

यह सुन कर हंसते हुये द्रोणाचार्य ने कहा कि जाओ तुम्हारा कल्याण हो, तुम पापी कठोर चित्त सब पर सन्देह करने वाले हो, तुम अपने हितैषियों को ऐसे अनुचित वचन कहते हो ! जाओ आप अर्जुन को मारो, देरी न करो ऐसा न हो, कि काम बिगड़ जाय तुम भी लड़ना चाहते हो क्योंकि कुलीन क्षत्रिय हो ! इन क्षत्रियों का क्यों नाश करवा रहे हो, यह बिचारे निरापराधी हैं, केवल तुही उपद्रव का मूल है, यह तेरा मामा भी दुर्बुद्धि द्यूत भी अर्जुन से लड़े ! यह पाशा खेलना अच्छा जानता है, यह छली कपटी कुटिल प्रकृति ज्वारी छल बुद्धि शकुनि अवश्य अर्जुन को जीतेगा जाओ देरी न करो ?

तुम ने कर्ण समेत सदैव ऐसे वचन कहे हैं और मैंने बार बार क्षमा किया है, यदि कर्ण दुश्शासन शकुनि और तुम मिल कर यह काम कर सकते हो, तो हमारे रहने का क्या प्रयोजन है ? जाओ वह अर्जुन सामने खड़ा है ! उस से जा कर युद्ध करो, क्षत्रिय धर्म का विचार कर, तेरा मरण विजय से भी अच्छा है, तुम ने जप किया, भोग किया, दान किया और राज्यैश्वर्य भोगा। सब ऋणों से अनृण हो कर यदि अब भी युद्ध में प्राणों को प्यारा समझो, तो तुम्हारे जीने का क्या प्रयोजन है ॥

यह कर द्रोणाचार्य जी उत्तर की दिशा में शत्रुओं के सन्मुख हुये और दुर्योधन ने सेना के दो भाग करके युद्ध जारी किया ! द्रुपद और विराट वृद्ध महारथी द्रोणाचार्य के हाथ से मारे गये, द्रुपद के तीन पौत्र भी मारे गये ! धृष्टद्युम्न को बहुत क्रोध आया और उस ने शपथ खाई कि मैं द्रोण को मारूंगा ! इतने में शकुनि और दुर्योधन भी द्रोणाचार्य की रक्षा पर आगये। उन्हों ने बढ़ते हुये पांचालों को रोक दिया, भीमसेन को क्रोध आया और धृष्टद्युम्न को झिड़कता हुआ कहने लगा कि तुम यूंही शपथ खाया करते हो, क्षत्रिय होकर क्षमा करना कहां लिखा है, ठहिरो मैं आगे जाता हूं, यह कह कर भीमसेन द्रोणाचार्य की सेना में घुस गया और प्रहार करने लगा, इस के पश्चात् सब वीरों का घोर युद्ध हुआ, फिर द्रोणाचार्य और अर्जुन परस्पर लड़ने लगे उन का युद्ध देखने

के लिये सब सेना खड़ी होगई. द्रोणाचार्य जिन २ अस्त्रों का प्रयोग करता था, पांडव अर्जुन उन्हीं अस्त्रों से उन को काट देता था, देवता लोग कहते थे कि इन दोनों वीरों की उपमा संसार में नहीं है आचार्य में केवल एक ज्ञान ही नियत है, पांडव में ज्ञान और योग दोनों हैं, आचार्य में केवल शूरता है, अर्जुन में शूरता और पराक्रम भी है ॥

द्रोण ने ब्रह्मास्त्र प्रकट किया, अर्जुन ने ब्रह्मास्त्र ही से उस को काटा, फिर दोनों का कठिन युद्ध जारी हुआ, जिस से सब संसार अन्धकार मय हुआ, और अन्तरिक्ष बाणों से व्याप्त हो गई ॥

उनानवेंका अध्याय

—०:—

सात्यकी और दुर्योधन का युद्ध, कर्ण और भीमसेन का युद्ध, पांचालों का द्रोणाचार्य को घेरना ॥

फिर कौरवी वीर पाण्डवी सेना से भयंकर युद्ध करने लगे, धृष्टद्युम्न दुशाश्सन के सन्मुख गिया, कृतवर्मा दुशाश्सन की सहायता को दौड़ा, सहदेव और नकुल धृष्टद्युम्न के पीछे आये, उन सब क्रोध युक्त महारथियों ने बहुत उत्तम और युक्त युद्ध आरम्भ किया उत्तम गतियों के अभिलाषी उन महारथियों ने अधर्म युद्ध वाले शस्त्रों को नहीं वर्ता । नकर्णी, नालीक, लिप्त,

वस्तिक, सूची कपिश, गवास्यि और गजास्यिक नाम वाण मारे और नहीं संश्लिष्ट पूति और जिह्नग नाम वाण जो कि क्रूरकटादि युक्त होते हैं प्रयोग किये, धृष्टद्युम्न को साथियों समेत द्रोण पर जाते देख कर दुर्योधन सन्मुख आया सात्यकी ने उस को रोका, दुर्योधन सात्यकी को देख कर हंसता हुआ कहने लगा कि हे श्रेष्ठ माधव! बचपन की बातों का स्मरण करो, तुम मुझ को और मैं तुम को कैसे प्रिय थे अब वह हम तुम दोनों एक दूसरे को हनन करना चाहते हैं, हे मित्र! क्रोध को धिक्कार है, लोभ को धिक्कार है, मोह और अर्मपता को धिक्कार है, क्षत्रियों के आचार का धिक्कार है और बल पराक्रम को धिक्कार है. इस युद्ध भूमी में हमारे पूर्व के वृत्तान्त प्राचीन होगये, वास्तव में क्रोध और लोभ से बढ़ कर कोई पदार्थ अधिक बुरा नहीं ॥

सात्यकी बोला कि हे राजकुमार! यह गुरू की शाला नहीं, न सभा है, जहां हम इस प्रकार की बातें करें, अथवा क्रीड़ा करें, दुर्योधन बोला कि धन की इच्छा से हम को क्या हो गया, हमारी पूर्व की क्रीड़ा कहां गई कि हम इकट्ठे हो कर इस प्रकार लड़ते हैं। सात्यकी बोला कि क्षत्रियों का वंश सदा से ऐसा ही चला आया है, यहां गुरूओं से भी लड़ते हैं, हे राजा! यदि मैं तुम्हारा प्यारा हूं तो मुझ को बाणों से मारो. फिर दोनों का घोर युद्ध हुआ दुर्योधन मूर्छित हो कर चला गया और कर्ण आदि लड़ते रहे ॥

युधिष्ठिर ने पांचालों को आकर कहा कि तुम किस नीन्द में सोते हो ? देखो हमारे प्राणों के प्राण तो युद्ध में लड़ रहे हैं, उठो युद्ध करो और शत्रुओं को मार कर लोक में यश और पर लोक में उत्तम गति को पाओ, तब पांचाल फिर आगे बढ़े। तब भीम और नकुल और सहदेव ने अर्जुन को पुकारा और कहा कि कौरवी सेना को द्रोणाचार्य से पृथक करो। फिर उस को पांचाल देशी मारेंगे। अर्जुन शीघ्र ही कौरवों के सन्मुख दौड़ा, तब पांचाल धृष्टद्युम्न को आगे करके द्रोण के सन्मुख गये और पांचवें दिन उस को मर्दन किया ॥

नब्बेवां अध्याय

—:०:—

द्रोणाचार्य का मारा जाना ॥

द्रोणाचार्य जिधर जाता था क्षत्रियों के समूहों को और हाथी घोड़ों को मारता फिरता था, इस प्रकार उस ने बीस हजार क्षत्रिय, दश हजार हाथी और अनेक रथी मारे ! उस के नाश करने वाली शक्ति पर रण भूमी में हाहा कार मच गया, था तो वह पच्चासी वर्ष का बूढ़ा, परन्तु अपने कर्मों के प्रभाव से सोलह वर्ष का प्रतीत होता था, श्रीकृष्ण ने कहा कि द्रोणाचार्य को शस्त्रों से मारना असम्भव है और यद्यपि धृष्टद्युम्न उस की मृत्यु है, तथापि वह उस को साधारण अस्त्रों से नहीं

मार सकता, यदि वह आधा दिन और जीता रहा, तो सारी पाण्डवी सेना भस्म कर देगा, इस लिये आप उस को धोखे से मारो ॥

पाण्डव बोले कि वह किस तरह? श्री कृष्ण बोले कि इसे अपने पुत्र में बहुत हित है, कोई इस से जाकर यह कह दे कि अश्वत्थामा मारा गिया, तो यह आप ही शस्त्र छोड़ देगा। उस समय धृष्टद्युम्न इस को मार सक्ता है। सब ने इस अनुमति को ग्रहण किया, परन्तु अर्जुन ने न माना और युधिष्ठिर ने झिजकते हुये माना ॥

तब भीमसेन ने झट मालव के राजा के हाथी अश्वत्थामा नाम वाले को मारा और आचार्य के पास जा कर कहने लगा कि अश्वत्थामा मारा गिया। फिर और लोगों ने भी यह शब्द कहे, द्रोणाचार्य उन अशुभ शब्दों को सुन कर उदास हो गिया, परन्तु फिर विचारने लगा कि भीमसेन की बात पर विश्वास नहीं हो सक्ता। कदाचित् यह मुझ को धोखा ही देता हो, इस लिये उस ने फिर युद्ध आरंभ किया ॥

इतने में देवर्षि लोगों ने दर्शन दिया, वह बोले कि हे ब्राह्मण! अब शस्त्रों को त्याग दो, तेरे अन्त का समय आ पहुंचा है। तुने ब्रह्मास्त्र को न जानने वाले क्षत्रियों को ब्रह्मास्त्र से ही मारा है। अब तुम्हारे पाप कर्म का अन्त होना चाहिये, देखो स्वर्ग में तुम्हारे लिये द्वार खुला है, यह

सुन कर द्रोणाचार्य के हाथ से शस्त्र गिर पड़े, उस ने धृष्टद्युम्न को मारना चाहा, परन्तु हाथ ने बाणों को फैंकना स्वीकार न किया, तब द्रोण को भीमसेन के वचन का स्मरण हुआ उस ने युधिष्ठर से पूछा कि कहो अश्वत्थाम कैसे हैं ? श्री कृष्ण ने झट युधिष्ठर को समझाया कि इस समय को हाथ से मत खोओ, यदि द्रोण आधा दिन और जीता बचा तो तुम्हारी सब सेना को नाश करदेगा, इस लिये इस स्थान में झूठ बोल कर हमारी रक्षा करो, जीवन के निमित्त, स्त्रियों में, विवाहों में और ब्राह्मणों के प्रिय करने में झूठ बोलने से पाप नहीं होता. भीमसेन बोला कि अश्वत्थामा हाथी तो मारा ही गया है तुम हाथी का शब्द बीच में से छोड़ दो ॥

यह सुन कर युधिष्ठर आगे बढ़ा और बोला कि अश्वत्थामा (हाथी) मारा गिया है, हाथी शब्द को उस ने ऐसे धीरे बोला कि उस भयंकर शब्दायमान युद्ध भूमी में गुरू जी न सुन सके, युधिष्ठर कभी झूट नहीं बोलता था, इस लिये आचार्य को उस के वचन पर श्रद्धा थी, युधिष्ठर ने अपने जीवन में यह पहली और अन्तिमवार ही झूट बोला, यह सुन कर आचार्य के छक्के छूट गये, उस ने बहुत भारी युद्ध करना चाहा परन्तु उस के अस्त्र प्रकट ना हुये लड़ते २ उस को चार दिन और एक रात व्यतीत हुये और तीसरे पहिर उस के बाण निष्फल हुये, फिर भीमसेन आगे बढ़ कर कहने लगा कि

किसी जीव को दुःख न देना सब से बढ़ कर धर्म है, उस के मूल ब्राह्मण हैं और आप तो ब्राह्मणों में श्रेष्ठ हैं, हे ब्राह्मण के पुत्र और धन कि इच्छा से चण्डाल! अपनी अज्ञानता से दुष्ट कर्म में प्रवृत्त हो कर तुम एक पुत्र के लिये ऐसा कर्म करते हो? बहुत क्षत्रियों को मार कर क्यों नहीं लज्जित होते? जिस के लिये तुम इतने पाप कमाते थ वह पृथ्वी पर मरा पड़ा है॥

यह सुन कर द्रोण के हाथ से धनुप गिर पड़ा और वह ऊंचे स्वर से बोला कि हे बड़े धनुप धारी कर्ण, कृपाचार्य और दुर्योधन! अपने युद्ध की रक्षा करो, पांडवों से तुम्हारा कल्याण हो। मैं अब शस्त्रों को छोड़ता हूं। फिर उस ने अश्वत्थामा को पुकारा और धनुष को रख कर सब को अभयता दी। फिर ज्योति स्वरूप परमात्मा का मन से ध्यान करके आत्मा को उस के योग में लगाया और ओ३म् आधार का ध्यान करके चितवृत्ति को रोक कर बैठ गया, धृष्टद्युम्न ने यह अवसर देख कर उस के शिर को काटा और द्रोणाचार्य ब्रह्मलोक को प्राप्त हुआ, भीमसेन और धृष्टद्युम्न ने उस शिर को दुर्योधन के आगे फेंका॥

तब दुर्योधन अपनी विजय से निराश हुआ और उस की सेना भयभीत होकर भागी, शकुनि रथ पर चढ़ कर भागा, कर्ण सेना समेत भागा, कृपाचार्य भी बड़ा शोक है, बड़ा शोक है, यह कह कर चल दिया, भोजवंशी, आर्द्दवंशी और बाह्लिक देशी सब भयभीत होकर भागे, कृतवर्मा भी हाथी पर

चढ़ कर भागा, उलूक भी गिरे हुए द्रोणाचार्य को देख कर भागा, दुर्योधन आप भी चल दिया, युवराज पद धारी दुश्शासन भी भागता ही दिखाई दिया, परन्तु अश्वत्थामा अपनी सेना को सम्भाल कर आगे बढ़ा, सारी सेना को भागते हुये देख कर दुर्योधन से पूछने लगा कि कुशल तो है? आप सब लोग क्यों भाग रहे हो? दुर्योधन में यह सामर्थ नहीं थी कि इस प्रश्न का उत्तर दे, कृपाचार्य की ओर देख कर कहने लगा कि आप ही बताईये ॥

तब कृपाचार्य ने सारा वृत्तान्त सुनाया और कहा कि इस प्रकार धृष्टद्युम्न के हाथ से आप के पिता महात्मा मारे गये, अर्जुन ने पाण्डवों के मत को स्वीकार नहीं किया और कहा कि गुरु जी को मत मारो जीवत ही पकड़ कर ले आओ परन्तु धृष्टद्युम्न ने उस की बात को उल्लंघन करके प्राणों के त्यागने की इच्छा से बैठे हुये आप के पिता को केशों से पकड़ कर शिर काटा है ॥

अश्वत्थामा यह वृत्तान्त सुन कर क्रोध से लाल नेत्र दुःख से श्वास लेता हुआ अश्रुपात से मुख को म्लान करता हुआ, दान्तों को पीसता हुआ बोला कि मैं पाण्डवों को मारूंगा, मैं धृष्टद्युम्न को मरूंगा। राजा युधिष्ठर मिथ्या वादी होकर अपने पाप को भोगेंगे, मैं नारायण अस्त्र का प्रयोग करके पाण्डवी सेना को मारूंगा, अय कौरव लोगो, मेरे पराक्रम को देखो! अश्वत्थामा के इन बचनों से दुर्योधन

के मन में तनिक धैर्य आया। उसकी सेना घोर नादों से गर्जने लगी॥

इक्कानबेवां अध्याय

—:०:—

द्रोणाचार्य के मरने पर पाण्डवों का विवाद, अर्जुन का सब को झिड़कना, धृष्टद्युम्न का उत्तर, सात्यकी का क्रोध, भीमसेन नकुल और युधिष्ठर का शांत कराना॥

यह शब्द सुन कर युधिष्ठर ने अर्जुन से पूछा कि आचार्य तो मारे गये, अब कौन से योधा दुर्योधन के पास आये हैं, कि यह घोर शब्द सुनाई देता है, अर्जुन ने कहा कि हे राजन्! आपने बड़ा घोर पाप किया है, कि मिथ्या बोल कर गुरू जी को अशस्त्र किया है। गुरु जी हम को बड़ा प्रेम करते थे और बच्चों के समान जानते थे, धृष्टद्युम्न ने अन्याय से उन के शिर को काटा है, उस के इस नीच कर्म को सुन कर साक्षात् इन्द्र के समान अश्वत्थामा गर्ज रहा है यह निश्चय सब पाण्डवी सेना का नाश करेगा, धृष्टद्युम्न मारा जायगा; उस की रक्षा के निमित उपाय करो, तुम्हारा अपयश संसार में इस प्रकार फैलेगा जैसा कि बाली के वध से रामचन्द्र का फैला था हे राजन्! गुरू जी का अन्याय से इस प्रकार केशों से

पकड़ कर मारने में धृष्टद्युम्न ने बड़ा अधर्म किया है, अब हम में से कोई भी उस की रक्षा करने को समर्थ न होगा। हा शोक हम ने थोड़े दिनों की शेष आयु में राज्य भोगने के निमित्त पिता के समान अपने गुरू को मरवाडाला, जीविका के अर्थ हम नीच पुरुषों ने वृद्धाचार्य जी के साथ शत्रुता की और साधु महात्मा को मारा, इस पाप कर्म से हम सब अवश्य घोर नरक में जायेंगे ॥

यह बचन सुन कर किसी पाण्डव को उत्तर ना आया, परन्तु भीमसेन बोला कि अर्जुन दुखियों की रक्षा करना, शत्रुओं को मार कर जीविका करना, स्त्री और साधु को क्षमा करना, क्षत्रियों के मुख्य धर्म हैं, जो इन पर आरूढ़ हैं, वह धर्म, यश, पृथ्वी और लक्ष्मी को पाता है, सो क्षत्रिय होकर तुम ऐसे अज्ञानता के बचन क्यों कहते हो, हम ने तेरह वर्ष बनवास किया, दुःख उठाये, सब शत्रुओं के हर्ष को बढ़ाया, क्या यह सब कुछ धर्म से हमारे साथ किया गया था? मेरे विचार में प्रत्येक कौरव और उन का सहायक सब उपायों से मारने के योग्य हैं। अश्वत्थामा क्या है ? वह तेरी सोहलवीं कला के भी समान नहीं, क्या अपनी निन्दा करते हुये तुझ को लज्जा नहीं आती ? मैं अश्वत्थामा से लडूंगा, मैं पर्वतों को फोडूंगा, मैं पृथ्वी को चीरूंगा, मैं गदा को घुमाऊंगा, मेरे सामने इन्द्र भी आये तो कभी नहीं छोडूंगा, क्या तुम मुझ को इस प्रकार का जानने वाले भी होकर अश्वत्थामा से भय करते हो ॥

फिर धृष्टद्युम्न बोला कि हे अर्जुन! द्रोणाचार्य तो नाम मात्र ब्राह्मण थे, उन में कौन से ब्राह्मणों के गुण थे? यदि वह क्षत्रिय धर्म में आश्रित, नीच कर्म में प्रवृत्त, दिव्यास्त्रों से अज्ञानियों को मारने वाला मेरे हाथ से मारा गया, तो कौन सा अनर्थ हुआ? मुझे द्रौपदी का आदर स्वीकार है, नहीं तो मैं कभी आप के इन निन्दक वचनों को न सहता? मैंने आप को बड़े भय से बचाया है अभी उस ने मेरे बांधवों को मारा, मैं उस को क्यों कर न मारता। हे अर्जुन! मैं आप से सम्बन्ध रखने के कारण नीचे झुका हुआ हूं॥

इस प्रकार धृष्टद्युम्न को तिरछा देख कर अश्रुपातों को छोड़ता हुआ अर्जुन बोला कि धिक्कार है! धिक्कार है! तब श्रीकृष्ण और युधिष्ठिर भी अत्यन्त लज्जा युक्त हुये। तब सात्यकी बोला कि हे नीच धृष्टद्युम्न! इस पाप कर्म के कारण सब लोग तुझ को ऐसा बुरा कहते हैं जैसा ब्राह्मण लोग चण्डाल को बुरा कहते हैं। तुम को इस पाप में लज्जा नहीं आती। तुम मेरे गुरु के गुरु की निन्दा करते हो। द्रुपद के पुत्र सारे दुष्ट कर्मी हैं, देखो पहिले इन्हों ने भीष्मपितामह को मारा, अरे नीच! मत बक, नहीं तो अभी गदा से तेरा सिर फोड़ता हूं। तुझ ब्राह्मण हत्या करने वाले को देख कर सब को पश्चाताप पूर्वक सूर्य का दर्शन करना चाहिये तुझ को अपने कर्म पर लज्जा आनी चाहिये॥

सात्यकी के क्रोध युक्त वचनों को सुन कर धृष्टद्युम्न बोला कि हे सात्यकी! हम सुनते हैं और क्षमा भी करते हैं, तू सदैव

हमारी निन्दा करता है ? परन्तु क्षमा करना सर्वदा उत्तम है, पापी समझता है कि यह मुझ से हार गये, परन्तु वास्तव में यह नहीं होता. तु सर्वश नीच होकर मुझ को झिड़कता है ? तु ही बता, कौनसे धर्म को आगे रख कर तुने भूरीश्रवा को मारा ? क्या भूरीश्रवा अर्जुन स हार नहीं चुका था, फिर उस का मारना किस प्रकार धर्म युक्त हुआ ? हां इत्रियों में नीच तुम इस प्रकार का कर्म करके मुझ को झिड़कते हो, कौरवों ने कितने अधर्म किये, पहिले युधिष्ठर को ठगा द्रौपदी का निरादर किया, सब को वनवास दिया, मारने का यत्न किया, अभिमन्यु को मारा, बुलाये हुये शल्य को अपनी ओर कर लिया इस प्रकार अनेक कुकर्मों स पाण्डवों को पीड़ा दी, फिर ऐसे शत्रु को मारने में मैंने क्या अपराध किया, यदि फिर ऐसी बकवास करेगा तो तीरों से मार कर तुझ शीघ्र ही यमपुरी में भेजूंगा ॥

धृष्टद्युम्न के इन वचनों से क्रोध खाकर सात्यकी उठा और गदा हाथ में लेकर धृष्टद्युम्न पर आया, भीमसेन झट आगे बढ़ा और सात्यकी को पकड़ कर कहने लगा कि हे यादव ! क्षमा करो, धृष्टद्युम्न भी क्षमा करे, सहदेव ने भी समझाया, तब सात्यकी शांत हो गया, धृष्टद्युम्न कहने लगा कि सात्यकी को छोड़ दो, यह मुझ को ऐसे पावेगा जैसे कि वायु पर्वत को पाती है। यह देखो कौरव आरहे हैं, अर्जुन इन को रोकेगा और मैं शायकों से सात्यकी को छेदूंगा। यह

मुझ का टूटी भुजा वाला भूरिश्रवा मानता है, इसको मारूंगा अथवा यह मुझ को मारेगा, यह देख कर वासुदेव और धर्मराज शीघ्रता से आये और दोनों को समझा कर कौरवों के सन्मुख गये ॥

बानवेंवां अध्याय

—:*:—

अश्वत्थामा का नारायणास्त्र प्रकट करना, श्रीकृष्ण का उसको निवारण करना, अश्वत्थामा का आग्नेय अस्त्र का प्रयोग करना, अर्जुन का उसको रोकना, अश्वत्थामा का धनुष छोड़ कर युद्ध को त्याग करना और व्यास जी का आना ॥

अश्वत्थामा ने क्रोध में आकर नारायण अस्त्र का प्रयोग किया, जिससे जहां तहां सब पाण्डवी सेना नाश होने लगी ज्यों २ पाण्डव लड़ते थे त्यों २ अस्त्र बढ़ २ कर उनको मारता था, यह दशा देख कर कौरवों ने सिंह नाद किये युधिष्ठर भी घबरा गया और सब सेना को कहने लगा कि हे वीरो! अपने प्राणों की रक्षा करो, युद्ध भूमि से भागो मेरे हित के लिये आप मारे जाते हैं, मैं आप का यह विनाश

नहीं सहार सक्ता, धृष्टद्युम्न ! घर को जाओ । सात्यकी ! सेना समेत भागो । कृष्णजी ! अपनी रक्षा करो । भीमसेन ! लौटो । द्रोणाचार्य गुरू के मारने का फल हम को प्राप्त हुआ है, अब मैं अग्नि में प्रवेश करूंगा, दुर्योधन को राज्य भोगने दो दैव की यही इच्छा है ॥

भयभीत युधिष्ठर के यह वचन सुन कर श्रीकृष्ण जी आगे बढ़े और सब सेना को कहने लगे कि हे शस्त्रधारियो ! शस्त्रों को छोड़ कर रथों से नीचे उतरो, यही उपाय इस शस्त्र से बचने का है, कोई मनुष्य मन से भी युद्ध का विचार न करे, तब सब लोग नीचे उतरे और वह अस्त्र बढ़ने से थम गया, भीमसेन बोला कि मैं शस्त्रों को नहीं छोडूंगा और आप जाकर अश्वत्थामा से लडूंगा, हे अर्जुन ! तुम को भी गाण्डीव धनुष छोड़ना उचित नहीं, अर्जुन बोला कि मैं गांडीव धनुष नहीं रख सक्ता, मैं अवश्य त्यागूंगा, तब भीमसेन फिर अश्वत्थामा से लड़ने गया, नारायणास्त्र ने वृद्धि पाई और भीमसेन बाणों से ढक गया, श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कहा कि भीमसेन फंसे हूये को निकालो, तब अर्जुन और दूसरे महारथी आगे बढ़े और भीमसेन ग्रसे हुये को खैंच कर निकाला ॥

तब भीमसेन रथ से नीचे खड़ा हो कर शान्त हुआ और वह अस्त्र भी शान्त हो गिया । तब श्री कृष्ण ने पाण्डवों को कहा कि अब तुम अपने अस्त्र ले कर शत्रुओं से युद्ध कर सक्ते हो, तब पाण्डवों के महारथी अश्वत्थामा

के सन्मुख गये और बड़ा युद्ध वर्तमान हुआ, अश्वत्थामा ने धृष्टद्युम्न को अचेत कर के भगा दिया, सात्यकी भी घायल हुआ, भीमसेन विरथ हुआ और सुदर्शन मारा गिया ॥

यह देख कर अर्जुन आगे बढ़ा और कहने लगा कि हे अश्वत्थामा ! मैं तेरे अहंकार को तोड़ता हुं, दुर्योधन ने अश्वत्थामा को कहा कि नारायण अस्त्र को चलाओ, अश्वत्थामा ने कहा कि यह अस्त्र दूसरी बार चलाया हुआ चलाने वाले को ही मारता है, मेरे पहिले प्रयोग को श्री कृष्ण ने निष्फल कर दिया है, फिर अर्जुन और अश्वत्थामा का घोर युद्ध हुआ, अश्वत्थामा ने अग्नियेस्त्र का प्रयोग किया, उस से पाण्डवी सेना बड़ी पीड़ामान हुई और सब दिशाओं मे अन्धकार छा गया, यह देख कर अर्जुन ने उस ब्रह्मास्त्र को प्रकट किया जो ब्रह्मा जी ने उस को दिया था, उस के प्रयोग से अग्नियेस्त्र शान्त होगया, शीतल वायु चलने लगी और अन्धकार का नाश होकर सब सेना सुखी हुई ॥

यह देख कर अश्वत्थामा सोचने लगा कि यह क्या बात है! इस सोच में निमग्न अश्वत्थामा चित में उदास हुआ और धनुष को छोड़ कर रथ से कूद कर यह सब मिथ्या है, ऐसा कह कर भाग गिया, रास्ते में उस को वेदव्यास जी मिले, उन को देख कर नमस्कार कर के पूछने लगा कि हे व्यास जी ! मैं यह नहीं समझता कि नाश युक्त अविनाशीपन के साथ क्यों दर्शन देता है और अस्त्र

क्यों नियम से रहित हो जाता है, मेरे किस विपरीत कर्म के करने से आग्नेयस्त्र विपरीत हुआ और दोनों कृष्ण जीते बचे? व्यास जी ने श्रीकृष्ण और अर्जुन के नर नारायण रूप को वर्णन किया और कहा कि उन के पूर्व जन्म कि तपस्या का यह फल है, तब अश्वत्थामा उन के इस वचन को सुन कर कृष्ण जी की बड़ी प्रतिष्ठा करने लगा, इस के पीछे व्यास जी चले गये और द्रोणाचार्य के मरने पर कौरवों और पाण्डवों न विश्राम किया ॥

अर्जुन ने व्यास जी से पुछा कि हे महाराज ! स्वच्छ शस्त्रों के युद्ध में मैने अग्नि के समान प्रकाशमान पुरुष को देखा है । उस के हाथ में प्रज्वलित शूल है और जिस जिस ओर को वह जाता है, मेरे सब शत्रु उसी ओर को भस्म हो कर जाते हुये दिखाई देते हैं, व्यास जी बोले कि यह सर्वेश्वर शिवजी महाराज हैं, जिन को जयद्रथ के मारने के समय तुम मिले थे, वह तुम्हारे शत्रुओं का नाश कर रहे हैं, तुम सदैव उन को नमस्कार करो और उन्हीं के ध्यान में अवस्थित होकर अपने सब कर्म करो, तब व्यास जी चले गये ॥

दोहा ॥

उन्निससौ और एक कम, सप्तती संवत माहिं ।
सोमवार तिथि पन्द्रहवीं, माघ मास पुनिअहहिं ॥

द्रोण पर्व पूर्ण भयो सब कविथन के हेतु।
कृपा त्यहि भगवान की जो भवसागर सेतु॥

सवैया॥

शूरन के दल मारि नठाय के नाश कियो गजराज तुरंगा।
के हरि नाद सुं गज्जर्न ते युधिनाश कियो बहु भूप कुरंगा॥
बाण वर्षय के शस्त्र चलायके काट दियो वर वीर निहंगा।
सोमप्रभु से बहु या की कृपाहिते द्रोण तरे युद्ध सागर तरंगा॥

इति शुभम्॥

महाभारत
कर्ण पर्व

पहिला अध्याय

—:o:—

संजय का युद्ध भूमि से आना और कर्ण की मृत्यु का वृत्तान्त सुनाना ॥



द्रोणाचार्य की मृत्यु के पश्चात् दोनों दल रात्री के विश्राम के लिये अपने २ डेरों को गये, कौरव लोग अपनी पराजय पर महा व्याकुल हुए, और शोक में निमग्न होकर युद्ध से उदास चित्त हुए, दुर्योधन भी घबरा गया, परन्तु सब को निरुत्साह देख कर अपनी सेना का साहस बढ़ाने लगा, उस ने कहा कि ऐ वीरो ! आप के अश्वत्थामा और कर्ण के आश्रय पर मैं ने युद्ध आरंभ किया था, हार और जीत

दोनों युद्ध के परिणाम हैं, योधा लोग अपने धर्म पर टिके हुये इन बातों से नहीं घबराते, आप क्यों उदास चित्त हैं, भीष्म जी और द्रोणाचार्य का मरना प्रारब्ध से हुआ है इस लिये उस पर शोच करना वृथा है, आप कर्ण को सेनापति नियत करें और शत्रु को मारें देखो अर्जुन डरता हुआ उस के सामने नहीं आता, मायावि राक्षस घटोत्कच उस की एक ही शक्ति से मारा गया है, भीम भी केवल मानुषि युद्ध में उस से हार चुका है, फिर घबराने का कौनसा अवसर है, उत्साह को न छोड़ो और रण भूमि में शस्त्र बल से शत्रुओं को पराजय करो ॥

दुर्योधन के इन शब्दों से उत्साहित होकर सब राजा लोग शस्त्र बांध कर फिर रण भूमि की ओर लौटे, कर्ण सेना पति बनाया गया, दो दिन तक घोर युद्ध होता रहा, अन्त को कर्ण मारा गया, संजय यह समाचार लेकर हस्तिनापुर में आया और महाराज धृतराष्ट्र को सब वृत्तान्त कह सुनाया, धृतराष्ट्र के शोक की कोई सीमा न थी, वह अचेत हो कर भूमि पर गिर पड़ा, उस को देख कर राणियें हाहाकार करके रोने लगीं संजय ने सब को समझाया और आश्वासत किया विदुर ने बुद्धिमत्ता के शब्दों से धृतराष्ट्र को सचेत किया। धृतराष्ट्र स्त्रियों के विलाप को देख कर फिर मौन हो गया। फिर बार २ श्वास लेता हुआ अपने पुत्रों की निन्दा और पाण्डवों की प्रशंसा करने लगा, फिर उस ने शकुनि की बुद्धि को धिक्कार किया और कांपता हुआ पूछने लगा कि हे संजय!

कहो दुर्योधन तो जीता है ? हे संजय संपूर्ण कथा को फिर वर्णन करो ॥

धृतराष्ट्र के इस वचन को सुन कर संजय ने कहा कि हे राजन् ! कर्ण अपने सब भाईयों समेत मारा गिया है और आप का पुत्र दुशासन भी मारा गिया है और भीमसेन ने उस का रुधिर पिया है, शोकातुर राजा धृतराष्ट्र फिर पूछने लगा कि हे संजय कहो कौन कौन मारा गिया और कौन २ जीता है ? संजय ने सब शूरवीरों के जो मारे गये थे नाम लिये और कहा कि हे राजन् ! पाण्डव लोग उस दोष से निवृत्त हुये हैं, जो पूर्व समय में बांधवों के समझाने से भी अंगीकार नहीं किया, इसी लिये आपने यह घोर दुःख पाया फिर उस ने पाण्डवों के मरे हुये वीरों का नाम पूछा, संजय ने वह भी कह सुनाया, धृतराष्ट्र ने कहा कि प्रधान पुरुष तो मारे गये, अब मुझ सेना के बचने की कोई आशा नहीं है ॥

दूसरा अध्याय

—:०:—

संजय का कौरवों के बचे हुये योधाओं का नाम लेना और धृतराष्ट्र का कर्ण के मारे जाने का सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनने का अभिलाषा करा ॥

तब राजा धृतराष्ट्र संजय से पूछने लगा कि हे संजय !

मुझ को यह बताओ कि कौन २ योधा मेरी सेना में शेष बचे हैं संजय ने कहा कि हे राजन्! आप की सेना में विशेष २ महारथी तो मारे गये हैं, जो शेष बचे हैं उन का नाम सुनो, प्रथम तो द्रोणाचार्य के पुत्र महात्मा अश्वत्थामा फिर कृतवर्मा, शल्य, शकुनि, कृत्य का पुत्र, आपका पुत्र पुरुमित्र और आप महाराज दुर्योधन और आपके पुत्र सुषेण, चित्रसेन, सत्यसेन, जलसिन्धु का पुत्र, अदृढ़, चित्रायुध, श्रुतवर्मा, जय, शल्य, सत्यव्रत, दुःशल, श्रुतायु, धृतायु, चित्रांगद, कर्ण का पुत्र सत्यप्रतिज्ञ, और उसके दो और भाई भी अभी तक सेना समेत आपके निमित लड़ने को प्रस्तुत युद्ध भूमी में नियत हैं ॥

यह सुनकर धृतराष्ट्र विलाप करने लगा और कहने लगा कि हे संजय! महापराक्रमी सत्र को जीतने वाला कर्ण कैसे मारा गिया। मेरे पुत्र ने उसी के आश्रय होकर युद्ध को आरम्भ किया था, वह महा बलि सूर्य का पुत्र कर्ण कैसे मारा गिया! उस कर्ण ने पूर्व समय में काम्बोजदेशी, अवन्तदेशी, केकय देशी, गन्धार, मद्रक, मतस्य, त्रिगर्त, शक, पांचाल, विदेह, काशी, कोशल, सुगूल, अंगवंग, निषाद, पुण्ड चारब, वत्स, कलिंग, जरत्व अश्मक, और ऋषीक देशियों को जीत कर बालिभृत किया। जैसे घोड़ों में उच्चैश्रवा, राजाओं में कुवेर और देवताओं में इन्द्र उत्तम है उसी प्रकार शस्त्रधारियों में कर्ण उत्तम था॥

कर्ण बड़ा दानी था, मैं उसका मरा हुआ सुनकर शोक सागर में निमग्न होता हूं। जिस प्रकार बिना नौका के मनुष्य समुद्र को तैरना चाहे, उसी प्रकार अपने पुत्रों को समझता हूं। यदि मैं इस दुःख से भी न मरूं तो मेरा हृदय वज्र से भी कठोर है मैं चाहता हूं कि विष खालूं, अथवा अग्नि में प्रवेश करूं, अथवा पर्वत पर से गिर कर मर जाऊं, मैं इस कठिन दुख को सहने के समर्थ नहीं हुं ॥

संजय मुझ को सब वृत्तान्त व्यौरे समेत बताओ कि महाबली कर्ण कैसे मारा गया क्या उस के घोड़े मारे गये थे अथवा रथ टूट गया था कि रथियों में श्रेष्ठ कर्ण मारा गया ॥

तीसरा अध्याय

—:०:—

दुर्योधन का अश्वत्थामा से सम्मति करना। कर्ण को सेनापति नियत करना। कर्ण को सेना का युद्ध के लिये प्रस्तुत करना ॥

संजय ने कहा कि हे राजन्! द्रोणाचार्य के मरने के पश्चात् जब अश्वत्थामा का संकल्प नष्ट हुआ, तो दुर्योधन कुच्छ काल तक आप पांडवों से लड़ता रहा। पश्चात् सन्ध्या प्रवृत्त हुई और दोनों सेना अपने २ विश्राम स्थान को आई।

दुर्योधन ने अपने साथियों से कहा कि हे राजाओं, हमारे मुख्य योधा तो मारे गये, अब क्या विचार करना चाहिये ॥

यह सुन कर अश्वत्थामा बोला कि हमारे उत्तम वीर तो मारे गये परन्तु हम को विजय से निराश होना उचित नहीं, विजय तो देवाधीन ही है परन्तु अच्छे कर्म से दैव को भी आधीन किया जाता है। मेरा विचार है कि कर्ण सब से अधिक शूरवीर और असह्य लड़ाई में शत्रुओं को विजय करने के समर्थ है, इस लिये कर्ण को सेनापति बना कर युद्ध करना चाहिये ॥

राजा दुर्योधन ने यह वचन सुन कर कर्ण को अपने पास बुलाया और कहा कि हे वीर कर्ण, अब मुझे केवल तुम्हार ही आश्रय है, हमारे नीतिमान, भक्तिमान और सावधानता के योग्य वीर तो मारे गये, अब केवल आपका ही भरोसा है ! मुझ पर जो आप की प्रीति है मैं उस को अच्छी रीति से जानता हुं, देखे भीष्म ने पाण्डवों को नहीं मारा क्योंकि वह पाण्डवों को अपने पौत्र समझता था अब केवल आप ही हमारे दुष्कर कार्य को करने में सामर्थ हो, इस लिये सेनापति पद पर नियुक्त होकर हमारा कार्य कीजिये, आप को देख कर पांडव युद्ध से ऐसा भागेंगे जैसेकि दानव लोग विष्णु को देख कर भागते हैं ॥

यह सुन कर कर्ण बोला कि हे गंधारी के पुत्र ! मैंने पहिले ही आप को कहा हुआ है कि मैं पुत्र पौत्र सहित श्री कृष्ण

जी और पांडवों को मारूंगा, हे महाराज ! आप तैयार हों और पाडवों को विजय किया हुआ ही समझें ॥

तब विधि पुर्वक कर्ण को सेना पति पद पर अभिषेक किया गया और वह स्वामी कार्तिक की भांति अपने पद पर शोभनीय होकर स्वस्ति वाचन आदि धर्म कर्म करके ब्राह्मणों को बहुत दान देने लगा ॥

तब कर्ण ने सेना को त्यारी की आज्ञा दी, शतघ्नी, किंकिणी, शक्ति, शूल तोमरो से युक्त रथ पताका से सजी हुई शूर वीरों का महा कठन शब्द करती हुई सेना को लेकर कर्ण युद्ध भूमि की ओर चल पड़ा, उस को देख कर कौरव भीष्म और द्रोणाचार्य के दुःखों को भूल गये, कर्ण ने आते ही मकर व्यूह रचा, उस के मुख पर तो आप नियत हुआ, नेत्रों के स्थान पर शकुनि और उलूक नियत हुये शिर पर अश्वत्थामा, ग्रीवा पर उस के अपने भाई और कटि पर सेना समेत राजा दुर्योधन नियत हूआ, वाम पद पर गोपाल और नारायण दलों समेत कृतवर्मा और दक्षिण पद पर कृपाचार्य, राजा शल्य मद्र देशियों समेत दक्षिण चरण के पीछे नियत हुआ और सुषेण हाथी दलों समेत वाम चरण के पृष्ठ भाग पर ठहरा सेना समेत राजा चित्र और चित्रसेन पूछ पर नियत हुय ॥

चौथा अध्याय

—:०:—

पाण्डवों की व्यूह रचना, दोनों सेनाओं का परस्पर युद्ध। क्षेमधूर्ति और भीमसेन की लड़ाई, क्षेमधूर्ति का मारा जाना॥

इधर पांडवों ने अर्द्धचन्द्र नाम व्यूह बनाया, उस के वाम भाग पर भीमसेन और दक्षिण भाग पर धृष्टद्युम्न नियत हुये राजा युधिष्ठर और अर्जुन मध्य में नियत हुए। नकुल और सहदेव युधिष्ठर के पीछे ठहिरे, उत्तमौजस और युधामन्यु रथ के पहियों के रक्षक हुये, शेष शूरवीर यथा स्थान अपनी अपनी सेना समेत व्यूह में इधर उधर खड़े हो गये॥

इस प्रकार दोनों व्यूहों का युद्ध आरंभ हुआ दोनों ओर के योधा एक दूसरे को बढ़ २ कर मारने लगे, फड़कती हुई देहों और टूटी हुई भुजाओं का बड़ा भयानक दृश्य दिखाई देने लगा॥

इतने में भीमसेन हाथी समेत आगे बढ़ा उधर से क्षेमधूर्ति उस के सामने आया। दोनों तोमरों से एक दूसरे को घायल करने लगे। फिर वह दोनों मंडलों में घूमे, क्षेमधूर्ति ने भीमसेन को तीक्ष्ण बाणों से घायल किया, भीमसेन ने भी उस को घायल किया और उस के हाथी को मार भगाया, क्षेमधूर्ति ने हाथी को बहुतेरा ठहराया परन्तु वह ठहर न सका फिर

प्रतापी क्षेप धूर्ति ने अच्छी प्रकार हाथी को रोका और शीघ्र ही शत्रु के हाथी को मार कर भगाया, वह हाथी लड़खड़ा कर गिरा, भीमसेन झट नीचे कूदा और क्षेम धूर्ति के हाथी पर गदा लेकर झपटा, वह हाथी मर कर नीचे गिरा, तब दोनों वीर गदा युद्ध में प्रवृत्त हुये, भीम ने गदा प्रहार से क्षेप धूर्ति को ऐसा गिराया कि वह फिर न उठ सका और वहीं चित्त हुआ, कौरवी सेना क्षेम धूर्ति की यह दशा देख कर भागी ॥

पांचवां अध्याय

—:०:—

रथियों का परस्पर युद्ध, केकयों का सात्यकी के हाथ से मारा जाना, श्रुतिकर्मा का चित्र सेन को मारना, प्राति विन्ध्या का राजा चित्र को मारना और कारवी सेना में हल चल ॥

कर्ण ने बड़े वेग से नाराचों को छोड़ा जिस से पाण्डवी सेना अत्यन्त घायल हुई, हाथी व्यथित होकर चिंघाड़ने लगे और दशों दिशाओं में घूमने लगे ॥

तब नकुल शीघ्र ही कर्ण के सन्मुख हुआ, भीम ने अश्वत्थामा को रोका, सात्यकी विन्द अनुविंद नाम केकयों

से युद्ध करने लगा, चित्रसेन और श्रुतिकर्मा का घोर युद्ध प्रवृत्त हुआ प्रतिविन्ध्य ने चित्रसेन को और राजा दुर्योधन ने धर्म पुत्र युधिष्ठर को आवाहन किया, यह देख कर अर्जुन संसप्तकों से जा जुटा, तब धृष्टद्युम्न कृपाचार्य से, शिखंडी कृतवर्मा से, श्रुतिकीर्ति शल्य से और सहदेव ने दुशासन को रोका इस प्रकार बड़े २ वीरों का आपस में महा घोर और भयंकर युद्ध प्रारम्भ हुआ ॥

दोनों केकयों ने सात्यकी को बाण वर्षा से ढक दिया, रुधिर से भरे हुए अंगो वाला सात्यकी ऐसा शोभायमान हुआ जैसे कि शुंक का वृक्ष अपने फूलों से लदा हुआ होता है, तब वह वीर अनेक मण्डलों में घुमे; फिर दाहिने और बायें किये, अन्त को सात्यकी ने विन्द का शिर काटा, अनुविन्द को बहुत क्रोध आया, वह सारी केकयी सेना लेकर सात्यकी पर टूट पड़ा, और साठ बाणों से उसको घायल करके पुकारने लगा कि ठहिर, ठहिर मैं तेरी अभी खबर लेता हूं ॥

परन्तु उस की खबर तो क्या ले सक्ता था, शीघ्र ही सात्यकी के बाणों से उसका शिर कट कर भूमि पर जा पड़ा, यह देख कर सारी केकयों की सेना तितर बितर हो गई, सात्यकी ने बढ़ २ कर तीर मारे और भागती हुई केकयी सेना का बहुत विध्वंस किया ॥

इस के उपरान्त श्रुतिकर्मा और राजा चित्रसेन का बड़ा भयंकर युद्ध हुआ, दोनों ओर से बहुत बाण वर्षा हुई, श्रुतिकर्मा ने पहिले तो शत्रु का धनुष काटा और उस के सौ

टुकड़े किये, पश्चात् भल्ल से उस के शिर को धड़ से काटा। यह देख कर कौरवी सेना चारों ओर भागने लगी ॥

फिर प्रति विन्ध्य और राजा चित्र दोनों भिड़ने लगे। प्रति विन्ध्य ने अग्नि के समान प्रकाशमान घण्टा रखने वाली शक्ती से राजा चित्र को मारा परन्तु उस ने शक्ती को हाथ से पकड़ कर उल्टा प्रतिविन्ध्य को मारा वह शक्ती प्रतिविन्ध्य की भुजा को घायल कर के भूमि में समागई। परन्तु प्रति-विन्ध्य को इस से बहुत क्रोध आया। उस ने सुनहरी तोमर ऐसा चलाया कि जो राजा चित्र के हृदय को विदीर्ण करके भूमि में ऐसा घुस गया जैसे सर्प अपने बिल में घुस जाता है यह तोमर खाकर चित्र पृथ्वी पर गिरा और मर गया ॥

चित्रसेन को मरा हुआ देख कर आप की सेना ने प्रति विन्ध्य को चारों ओर से घेर लिया, परन्तु प्रति विन्ध्य ने सब को ऐसा भगाया जैसे बलवान वायू भूमे के दल को बिखेड़ती है ॥

छठां अध्याय

—:०:—

भीमसेन और अश्वत्थामा का युद्ध। अश्व-त्थामा और भीमसेन दोनों की बराबरी। अर्जुन का संसप्तकों से युद्ध। अश्वत्थामा का अर्जुन से लड़ना और हार कर कर्ण की

सेना में चले जाना ॥

तब भीमसेन और अश्वत्थामा का घोर युद्ध हुआ दोनों वीर परस्पर प्रहार करने लगे। भीमसेन ने अश्वत्थामा को बाणों से ढक दिया, अश्वत्थामा ने भीमसेन को बहुत घायल किया बहुत काल तक दोनों का बड़ा कठिन युद्ध हुआ जिसको देख कर सिद्ध और चारण लोग धन्य २ कहने लगे अन्त को दोनों वीर परस्पर घात करते हुए ऐसे घायल हुए कि अपने रथों के बैठने के स्थान में गिर पड़े और अचेत हो गये, बुद्धिमान सारथी अपने २ वीरों की यह दशा देख कर युद्ध भूमि से बाहर दूर स्थान में ले गये ॥

इधर अर्जुन संसप्तकों से जा जुटा, रथों को तोड़ता, घोड़ों को मारता और योधाओं को घायल करता हुआ देर तक लड़ता रहा यहां तक कि उस ने अनेक सहस्र सेना को पृथ्वी पर सुला दिया अर्जुन की इस प्रकार नाशक शक्ति को देख कर अश्वत्थामा न रह सका, वह रथ दौड़ा कर शीघ्र रण भूमि में आया और अर्जुन का युद्ध के लिये बुलाने लगा अर्जुन ने श्री कृष्ण से पूछा कि कहिये अश्वत्थामा से लड़ूँ कि संसप्तकों का नाश करें, श्री कृष्ण शीघ्र ही रथ दौड़ा कर अश्वत्थामा के सन्मुख ले गये और कहने लगे कि हे ब्राह्मण ! घात करो और क्षमा करो, स्वामी के अन्न को सफल करने का यही अवसर है, ब्राह्मणों का सम्वाद बड़ा सूक्ष्म है और क्षत्रियें सम्बन्धि विजय और पराजय योग्य हैं, तुम अज्ञानता से अर्जुन के दिव्य गुणों की बराबरी करना चाहते हो, अब

उस के अभिलाषी हो अर्जुन के सामने आओ और युद्ध करो ॥

अश्वत्थामा ने इस चैलंज को स्वीकार किया और बहुत अच्छा कह कर सामने आया, उस ने श्रीकृष्ण और अर्जुन को बाणों से ढक दिया और बादलों के समान गर्जने लगा अर्जुन ने कहा कि हे श्रीकृष्ण ! देखो अश्वत्थामा हम को मृतक मानता है । देखो इस के बाणों को मैं अभी काटता हूं, तब अर्जुन ने उस के बाणों को काटा और बादलों से निकले हुये सूर्य की भांति प्रकाश मान हो कर संसप्तकों के दलों को दलन करने लगा, गांडीव धनुष से छोड़े हुये उस के तीर एक२ कोस पर घात करते थे, बहुत से हाथी और मनुष्य मर कर पृथ्वी पर ऐसे सोगये जैसे कि प्रलय के समय इन्द्रवज्र से गिरे हुये पर्वत, फिर उस ने अश्वत्थामा को घायल किया अश्वत्थामा फिर लड़ने आया । दोनों वीरों का फिर युद्ध होने लगा, अश्वत्थामा ने श्रीकृष्ण जी और अर्जुन दोनों को ढक दिया और बहुत घायल किया, अर्जुन ने शीघ्र ही उस के बाणों को काट कर उस से द्विगुणे बाणों से उसे आच्छादित किया और फिर संसप्तकों से लड़ने चला गया ॥

परंतु अश्वत्थामा ने उस का पीछा न छोड़ा और फिर लड़ने आया श्री कृष्ण बोले कि अर्जुन ! देखते क्या हो, भूल मत करो इस योधा को मारो नहीं तो यह अपूर्व दोष को उत्पन्न करेगा, तब अर्जुन ने तीक्ष्ण धार वाले तीरों से अश्वत्थामा को घायल किया और उस के सारथी और घोड़ों को भी व्यथित किया, अश्वत्थामा अचेत होकर रथ के

बैठने के स्थान में गिरा बाग डोरों से छुटे हुये घोड़े रथ को लेकर वायू वेग से दौड़े, अश्वत्थामा ने सचेत होकर अर्जुन से फिर लड़ने का विचार किया और कर्ण की सेना में चला गया ॥

सातवां अध्याय

—:o:—

भगदत्त और अर्जुन का युद्ध, भगदत्त का मारा जाना उस के भाई का क्रोध कर के लड़ना। अर्जुन का उसको पराजय करना और संसप्तकों को मारना, श्रीकृष्ण का अर्जुन की स्तुति करना

श्रीकृष्ण ने दूर से हाथियों का चिघांड़ और लोगों की चिल्लाहट को सुना और मन में विचारा कि राजा भगदत्त पाण्डवी सेना को मथन कर रहा है इस से वह अर्जुन का रथ उस ओर ले गया, जाकर देखा तो राजा भगदत्त अपने अपूर्व रूपी हाथी के द्वारा सब सेना को व्यथित कर रहा था। उस हाथी ने बड़े २ विचित्र कर्म किये, सेना को लताड़ा, हाथियों को मारा, रथों को तोड़ा और सब को ऐसा दुःख दिया कि पाण्डवी सेना घबरा कर भागने लगी। इतने में अर्जुन पहुंच किया। इसने जाते ही भगदत्त को बहुत घायल किया

और उसके हाथी को बाणों की प्रहारों से ऐसा दुःखित किया कि विचारे का नाक में दम हो गया, तब अर्जुन ने भगदत्त को मारा और उसके हाथी को भी गिरा दिया ॥

यह देख कर भगदत्त का भाई रोष में भर कर लड़ने आया और अर्जुन को बाणों से मारने लगा, परन्तु थोड़े ही काल में अर्जुन से पराजित हुआ। पांडवी सेना यह देख कर बड़ी प्रसन्न हुई और अर्जुन का धन्यवाद करने लगी और कहने लगी कि आपने हम को बड़ी आपत्ति से बचाया है ॥

इस के पश्चात् अर्जुन फिर संसप्तकों को मारने लगा, श्री कृष्ण ने कहा कि हे महाबाहु ! इन को शीघ्र मारो ताकि कर्ण को समय पर मार सको, अर्जुन ने फिर हस्तलाघवता दिखाई उस को तीर उठाते हुये, चढ़ाते हुये और मारते हुये, कोई न देख सक्ता था, बड़े २ योधा उस के चातुर्य को देख कर चकित थे, श्री कृष्ण ने उस की बड़ी प्रशंसा की और कहा कि मनुष्यों की इस प्रलय को देखो ॥

आठवां अध्याय

—:०:—

राजा पाराड्य का युद्ध, और अश्वत्थामा के हाथ से उस की मृत्यु ॥

राजा पाराड्य बड़े साहस और पराक्रम से कर्ण की सेना को पीड़ित करने लगा, चारों ओर से हाहा कार मचने

लगी, यह देख कर अश्वत्थामा आगे बढ़ा और पाण्ड्य को कहने लगा कि हे पाण्ड्य ! यह सेना तेरे बल पराक्रम की तुलना नहीं रखती, एक भी मनुष्य तेरे समान नहीं है, आओ मेरे साथ युद्ध करो, मैं तेरे अभिमान को तोड़ूंगा, यह सुन कर पाण्ड्य अश्वत्थामा से लड़ने लगा, अश्वत्थामा ने उस को बाण जालों से ढक दिया, पाण्ड्य ने क्रोध में आकर तोमरों को छोड़ा, अश्वत्थामा के चारों घोड़े मारे गये और वह शीघ्र ही नये रथ पर चढ़कर सामने आया ॥

तब दोनों में चिर काल तक समान युद्ध हुआ, अन्त को अश्वत्थामा ने उसके सारथी को मारा और धनुष को भी काटा, अश्वत्थामा चाहता तो उस को वहीं मार देता, परन्तु युद्धाभिलाषी अशस्त्र शत्रु को उसने मारना स्वीकार न किया, इसी अन्तर में कर्ण हाथियों की सेना में गया और हाथियों और घोड़ों को मार २ कर भगाने लगा, परन्तु अशस्त्र पांड्य को उस ने भी मारना उचित न समझा, इतने में पांड्य ने भागते हूये दुर्म्मद एक हाथी को जिसका स्वार कि मारा गया था देखा, वह झट उस पर स्वार हो कर और दूसरा धनुष लेकर लड़ने आया, अश्वत्थामा ने उस को रोका पाण्ड्य ने अश्वत्थामा के मुकुट को तोमरों से तोड़ा और चिल्लाने लगा कि मार लिया, मार लिया, यह देख कर अश्वत्थामा बहुत क्रोधित हुआ, उस ने अग्नि के समान बाणों को छोड़ा जिस से राजा के आगे पीछे के रक्षक मारे गये और हाथी चारों पाओं और सूंड में अत्यन्त घायल हुआ फिर उस ने राजा की भुजाओं

को काट कर नीचे गिराया और शिर को काट कर भूमि पर गिराया, सार यह कि हाथी छे भाग होकर मर गया और राजा चार भाग होकर स्वर्ग को प्राप्त हुआ, राजा दुर्योधन पाण्ड्य के वध से बड़ा प्रसन्न हुआ और गुरु पुत्र को धन्यवाद देने लगा ॥

नवां अध्याय

—:०:—

कौरवों और पाण्डवों का महा घोर युद्ध। अंगराज का मारा जाना। सहदेव और दुशासन का युद्ध, दुशासन का हार जाना।

तब पाण्डवी और कौरवी सेना में घोर युद्ध प्रवृत्त हुआ सब योधा बड़े उत्साह से लड़ने लगे कौरवी हाथियों के स्वार धृष्टद्युम्न के सन्मुख हुए अंग, बंग, पुण्ड, मागध, ताम्रलिप्तक, मेकल, कोशल, मद्र दशार्ण आदि अनेक देश वासी हाथियों की सहायता से तोमर और नाराचों की वृष्टि करते हुए पांचाल देशियों पर टूट पड़े धृष्टद्युम्न ने अनेक हाथी मारे और योधाओं को घायल किया धृष्टद्युम्न को हाथियों से घिरा हुआ देख कर नकुल, सहदेव, द्रौपदी के पुत्र, प्रभद्रक चेकितान और सात्यकी चारों ओर से बाण बरसाने लगे, बर्छों से भिदे हुए हाथियों ने मनुष्यों, घोड़ों और रथों को सुण्डों से पकड़ २ कर मर्दन किया, सहदेव ने पुण्ड्र के राजा के हाथी को घायल किया

अंग ने आठ सौ तोमरों को नकुल पर फेंका नकुल ने प्रत्येक तोमर के तीन २ खण्ड कर दिये फिर उस ने अर्द्धचन्द्र अंग के शिर को काटा ॥

फिर द्रौपदी के पुत्रों और प्रभद्रक नाम क्षत्रिय और शिखण्डी ने बाणों की वर्षा से बड़े बड़े हाथियों को व्यथित किया ॥

इस के पीछे दुशासन और सहदेव का अपूर्व युद्ध हुआ, पहिले दुशासन ने सहदेव को छाती पर घायल फिर सहदेव ने नाराचों को प्रयोग किया और दुशासन को छाती पर घायल किया, फिर दुशासन ने सहदेव की दोनों भुजाओं को घायल करके उस के धनुष को काटा, सहदेव ने घुमा कर खड्ग मारा दुशासन का धनुष कट कर पृथ्वी पर गिर पड़ा, फिर सहदेव और दुशासन का कुच्छ काल समान युद्ध हुआ, फिर क्रोध युक्त सहदेव ने काल दण्ड के समान घोर बाण को हाथ में लिया और धनुष पर चढ़ा कर ऐसा छोड़ा कि जिस से दुशासन का कवच कट कर भुमि पर जा पड़ा, दुशासन आप भी अचेत होकर गिर पड़ा, यह अवस्था देख कर सारथी उस को रण से बाहिर दूर ले गया, सहदेव इस विजय को पाकर दुर्योधन की सेना को मर्दन करता हुआ चारों ओर वेग से घूमने लगा ॥

दसवां अध्याय

—:०:—

कर्ण और नकुल का द्वंद युद्ध, नकुल का हार कर भागना, कर्ण का उस को छोड़ देना, युयुत्सु और उलूक का युद्ध, युयुत्सु का हारना सुतसोम और शकुनी का युद्ध सुतसोम का हार जाना ॥

तब सूर्य के पुत्र कर्ण ने नकुल को रोका, नकुल बोला कि मैं ईश्वर का धन्यवाद करता हुं. कि आज आप से भेट हुई, चिरकाल से मैं इस समय की प्रतीक्षा करता था, हे पापी! मेरी ओर देख। तूंही शत्रुता, उपद्रव और अनर्थों का मूल है, तेरे ही कारण कौरव परस्पर न्मुख होकर नाशवान होगये हैं अब मैं तुझ को मार कर सब को दुख से निवृत्त कराकर कृत कृत्य होता हूं ॥

यह वचन सुन कर कर्ण ने हंसते हुये उत्तर दिया, क्यों न हो, धनुष धारी राज कुमारों के यही बात योग्य है, हे वीर! पहिले मुझ पर प्रहार कर, मैं तेरी वीरता को देखूंगा। शूर वीर अपने शूर कर्म को करके फिर अपनी प्रशंसा करते हैं, तू अपनी सामर्थ्य मुझ को दिखा, फ मैं तेरे घमण्ड को दूर करूंगा, तब कर्ण और नकुल का घोर युद्ध आरम्भ हुआ एक ने दूसरे के धनुष को काटा और क्षुरप्र और तोमर आदि से मथन किया, कुछ काल तक दोनों का भयानक द्ध होता

रहा, फिर हंसते हुये कर्ण ने नकुल के धनुष को काट कर सारथी को रथ की नीड़ से गिराया फिर उस के चारों घोड़ों को मार कर यम पुर को भेजा, नकुल ने गदा हाथ में ली जिस को कर्ण ने शीघ्र ही काट दिया, फिर दिव्य रथ पताका और चक्र के रक्षकों को मारा और ढाल तलवार आदि अन्य अस्त्र शस्त्रों को भी काट डाला ॥

अब नकुल के पास कोई शस्त्र न रहा, विचारा विवश होकर और क्रोध से भर कर रथ चक्र को उठा कर दौड़ा, कर्ण ने तीक्ष्ण भार वाहक बाणों से उस को तोड़ा और अनेक बाणों से उस को बहुत पीड़ामान किया, परन्तु प्राण लेने की चेष्टा न की, तब शस्त्र हीन और व्यथा से पीड़ित नकुल अकस्मात भागा, कर्ण उस के पीछे दौड़ा और प्रत्यंचा समेत धनुष को उस के कण्ठ में डाल कर कहने लगा कि, हे तात! वह तुम्हारी प्रतिज्ञा कहां गई, अब प्रसन्न चित्त हो कर फिर कहो, हे वीर पाण्डव! कौरवों से मत लड़ो, अपने समान लोगों से लड़ो, हे वीर लज्जा मत करो, घर जाओ, अथवा जहां श्री कृष्ण और अर्जुन हैं वहां जाओ, यह कह कर कर्ण ने नकुल को छोड़ दिया, नकुल बहुत लज्जित होकर युधिष्ठ के पास चला गया ॥

कर्ण ने पाण्डवी सेना में प्रवेश करके उस का बड़ा नाश किया तब युयुत्सु सामने आया। उलूक उसके सन्मुख हुआ उलूक ने युयुत्सु के सारथी का शिर काट कर नीचे गिराया और उसके घोड़ों को भी मार डाला, युयुत्सु विचारा दूसरे रथ पर

चला गया, श्रुत कर्मा ने थोड़े ही काल में शतानीक को विरथ करके उसके सारथी को भी मारा, शतानीक ने भी उसको शीघ्र ही रथ रहित किया फिर दोनों स्थाल पर युद्ध करते रहे, तत्पश्चात् श्रुतकर्मा रथ पर स्वार हुआ और शतानीक प्रतिविन्ध्य के रथ पर चला गया ॥

इतने में सुत सोम और शकुनि लड़ने लगे, ककुनि ने सुत सोम के सारथी और घोड़ों को मार दिया, वह विचारा पृथ्वी पर खड़ा हो कर लड़ने लगा, उस ने शकुनि को बाण जालों से ढक दिया। इसको देख कर सब लोग सुत सोम की प्रशंसा करने लगे। इतने में और योधा शकुनि से लड़ने लगे उन्होंने उसके रथ को तोड़ डाला। शकुनि खडग से लड़ता हुआ फिर सुतसोम ने उसकी खडग को काटा। सुतसोम श्रुतकीर्ति के रथ पर चला गया और शकुनि ने दूसरा धनुष लिया। शकुनि चारों ओर पांडवी सेना में घूमने लगा और सब को मारने लगा ॥

ग्यारहवां अध्याय

—:-०-:—

कृपाचार्य और धृष्टद्युम्न का युद्ध, धृष्टद्युम्न का भागना शिखण्डी और कृतवर्मा का युद्ध, शिखण्डी का हारना, अर्जुन का कौरवी योधाओं को मारना ॥

तब कृपाचार्य ने धृष्टद्युम्न को रोका। यह बात देख कर जीवमात्र कहने लगे कि धृष्टद्युम्न का कल्याण हो, कृपाचार्य अत्यन्त क्रोध युक्त है। धृष्टद्युम्न उस ब्राह्मण को सन्मुख पाकर घबरा उठा। सारथी ने कहा कि हे महाराज! यदि आज्ञा हो तो रथ को यहां से दूर ले जाऊं. धृष्टद्युम्न बोला कि मैं वास्तव में अचेत हुआ जाता हूं, मुझ को अर्जुन अथवा भीमसेन के पास ले चलो, यह सुन कर सारथी धीरे २ घोड़ों को मोड़ और रथ को हटा कर भीमसेन की ओर ले चला॥

कृपाचार्य बाण बरसाता हुआ पीछे दौड़ा और शंख को बजाता रहा परन्तु भयभीत धृष्टद्युम्न ने मुड़ कर नहीं देखा, फिर कृतवर्मा ने शिखंडी को रोका, शिखंडी ने उसको शत्रुस्थान पर घायल किया, कृतवर्मा ने उसको मर्म स्थलों पर घायल किया, महूर्त भर दोनों का युद्ध हुआ फिर कृतवर्मा के बाणों से शिखंडी मूर्छा युक्त हो गया, और ध्वजा की यष्टि के आश्रय पर बैठ गया तब सारथी रथ को लेकर दूर ले गया। यह दशा देख कर पाण्डवी सेना भागी॥

तब अर्जुन कौरवी सेना को छिन्न भिन्न करने लगा त्रिगर्त, शिवी, शाल्व और संसप्तक दल उस के सन्मुख आये, तब सुतसेन ने तीन बाण से मित्रदेव ने तिरसठ बाण से चन्द्रसेन ने सात बाण से अर्जुन को घायल किया, फिर अर्जुन ने शत्रुञ्जय और सौश्रुति को मार कर यमपुरी में भेजा फिर श्रुतिसेन ने श्रीकृष्ण पर बड़ा तोमर फैंका जिस से उस

की भुजा को अत्यन्त पीड़ा हुई और घोड़ों की बाग डोर हाथ से छुट गई, अर्जुन रथ दौड़ा कर श्रुतिसेन के पास पहुंचा और तुरन्त ही उस के शिर को काट दिया, फिर उस ने सैकड़ों संसप्तक समूहों को मारा और रुधिर की नदियें बहाईं ॥

बारहवां अध्याय

—:o:—

दुर्योधन और युधिष्ठर का युद्ध दुर्योधन का हारना, अर्जुन का कौरवी सेना, को मारना। सूर्य का अस्त होना, दोनो सेनाओं का विश्रम करना ॥

तब दुर्योधन ने राजा युधिष्ठर को रोका, युधिष्ठर क्रोध युक्त हो कर बोला कि ठहिर ठहिर मैं तेरी खबर लेता हूं फिर उसने तीक्ष्ण नौ बाणों से उसको घायल किया, दुर्योधन ने भल्ल से उस के सारथी को घायल किया, युधिष्ठर ने पांच बाणों से उस के घोड़ों को मारा और छटे से उस के सारथी को भी मारा, दुर्योधन रथ को छोड़ कर भूमि पर नियत हुआ, इस प्रकार आपत्ति में फसे हुये दुर्योधन को देख कर अश्वत्थामा और कृपाचार्य तुरन्त पहुंचे और दुर्योधन को रथ पर चढ़ा कर दूर लेगये ॥

फिर महा घोर युद्ध वर्तमान हुआ, सहस्रों योधा हाथी और घोड़े मारे गये अनेक रथ टूटे और कितनों को हाथियों ने पाओं तले रौंदा दुर्योधन झट दूसरे रथ पर बैठ कर आया। युधिष्ठिर उसके सन्मुख हुआ दोनों राजा परस्पर बाण वर्षा से लड़ने लगे, दुर्योधन ने युधिष्ठिर के धनुष को काटा, युधिष्ठिर ने झट दूसरा धनुष लिया और उस ने दुर्योधन के धनुष और ध्वजा दोनों को काट दिया। फिर युधिष्ठिर ने गदा से कवच को तोड़ा और चाहता था कि मारे परतु भीमसेन ने झट रोक दिया कि आप इस को नहीं मार सकते युधिष्ठिर ने झट उस को छोड़ दिया फिर कृतवर्मादि कौरवी महारथी उसे दूर लेगये ॥

फिर कौरवों ने कर्ण को आगे करके युद्ध आरम्भ किया। सात्यकी सामने हुआ फिर धृष्टद्युम्न ने बड़ा नाश आरम्भ किया। एक पहिर तक बड़ा कठिन युद्ध जारी रहा। इतने में सन्ध्या हो गई और सब योधा विश्राम स्थान को आ गए पाण्डव बड़े आनन्द से बाजे गाजे बजाते हुए और श्री कृष्ण जी की प्रशंसा करते हुए अपने डेरे में आए ॥

तेहरवां अध्याय

—:०:—

धृतराष्ट्र और संजय की बात चीत । कर्ण और दुर्योधन का मन्त्रना करना । कर्ण और अर्जुन के अस्त्रों की प्रशंसा ॥

यह बात सुन कर राजा धृतराष्ट्र ने कहा कि निस्संदेह अर्जुन बड़ा बलवान है उस ने अकेले ही सुभद्रा का हरण किया अकेले ने ही अग्नि को शान्त किया अकेले ने ही किरात कवच दैत्यों को मारा और अकेले ने ही किरात रूप शिवजी से युद्ध किया उस अर्जुन से युद्ध करना बहुत कठिन है ऐसे शूरवीर से लड़ने में हमारे योधा भी निन्दा के योग्य नहीं हैं, हे संजय! उन के कर्मों का भी वर्णन करो ॥

संजय बोला कि हे राजन्! महा क्रोधी टूटी डाढ़ वाले विषैले सर्प के समान हाथों को मलता हुआ कर्ण कहने लगा कि आज तो हम अर्जुन से ठगे गए, परन्तु कल इस से दो हाथ अवश्य होंगे और सायंकाल को या वह न होगा या मैं मारा जाऊंगा ॥

तब राजा दुर्योधन ने सब राजाओं को सोने की आज्ञा दी, प्रातःकाल ही उठ कर युधिष्ठर के व्यूह को देख दुर्योधन ने कर्ण का स्मर्ण किया, कर्ण को पाकर दुर्योधन की वह अवस्था हुई जो शीत से पीड़ित मनुष्य की सूर्य को पाकर होती है, धृतराष्ट्र ने कहा कि कर्ण बड़ा बलवान है वह अकेला ही पाण्डवों को जीत सकता है और इसी लिये उस का आश्रय पाकर दुर्योधन मदोन्मत्त है तौ भी मुझे शोक है कि अभागा दुर्योधन उस के आश्रित होकर पाण्डवों को और श्री कृष्ण को जीतने का संकल्प करता है परन्तु नहीं जीत सकता यह केवल दैव की बलवत्ता है। यह द्यूत की निष्ठा है मैं दुर्यो-धन के चलाए हुए भाले को सह रहा हूं वह अभी तक शकुनि

को बड़ा नीतिज्ञ मानता है मैं ने आज तक अपने पुत्रों का वध सुना है निश्चिर पाण्डवों को रोकने वाला कोई नहीं वह सेना को नित्यं प्रति अबलाओं की भांति भगाते हैं ॥

संजय ने कहा कि हे राजन् ! मैंने आप को पूर्व समय में धर्म सम्बन्धी वार्ताओं को समझाया था परन्तु आप ने नहीं माना, इसी से दुःख पाया है, मैंने कहा था कि पाण्डवों के साथ युद्ध न करो परन्तु अज्ञानता से आप ने मेरा बचन स्वीकार न किया, हे राजन् ! आप ही के कारण सब राजाओं का नाश हुआ परन्तु अब शोच करने का कोई समय नहीं, अब अपने वीरों के नाश का वृत्तान्त सुनो ॥

प्रातःकाल ही कर्ण दुर्योधन के पास आया और कहने लगा कि आज या तो अर्जुन ही मारा जायगा या मैं मरजाऊंगा, मेरे और अर्जुन के अस्त्रों का पराक्रम समान है, शत्रु के बड़े कार्य का नाश हस्तलाघवता, बाणों का दूर फेंकना और अस्त्र गिराने में सावधानता में अर्जुन मेरे समान नहीं, इस के अतिरिक्त शारीरिकबल, मन के बल, अस्त्रों की शिक्षा और पराक्रम से लक्ष भेदन में भी अर्जुन मेरे समान नहीं, मेरे पास परशुराम का दिया हुआ वह घोर धनुष है जिस से उन्हों ने क्षत्रियों को विध्वंस किया था, इस से मैं निस्संदेह अर्जुन को मार कर आप को प्रसन्न करूंगा, हां मुझ से अर्जुन एक बात में बढ़ कर है और वह यह है कि उस के धनुष की प्रत्यंचा बहुत दिव्य है उस के दो तूणीर अक्षय हैं और उस के सारथी आप श्री कृष्ण हैं, मेरा सारथी ऐसा नहीं, उस का गाण्डीव धनुष दिव्य और

उत्तम होने से अजय है मेरा विजय धनुष भी दिव्य और उत्तम है, मैं धनुष में तो अर्जुन से भी अधिक हुं परंतु अग्नि का दिया हुआ स्वर्ण जटित रथ अर्जुन के पास है, उस के घोड़े भी चित्त के अनुसार शीघ्र गामी हैं और ध्वजा भी दिव्य प्रकाशमान है, उस में हनुमान जी की विराजमानता बड़ी उत्तम है श्री कृष्ण उस के रक्षक हैं, मैं चाहता हुं कि इन वस्तुओं से रहित होकर मैं अर्जुन से लड़ूं, हे भारत वंशियों में श्रेष्ठ मैं चाहता हुं कि राजा शल्य जो श्री कृष्ण के समान हैं और अश्व हृदय विद्या को वैसा ही जानते हैं मेरे सारथी हों और कंकपत्र वाले तीरों के छकड़े मेरे साथ २ चलें आप भी मेरे साथ २ रहें तब निःसंदेह मैं अर्जुन से अधिक होजाऊंगा, और आपका अभीष्ट करूंगा हे महाराज! यही मेरी प्रार्थना है आप इसको स्वीकार कीजिये ॥

यह वचन सुन कर दुर्योधन बहुत प्रसन्न हुआ और कहने लगा कि हे वीर! ऐसाही होगा ॥

चौदहवां अध्याय

—:o:—

दुर्योधन का शल्य के पास जाना और कर्ण का सारथी बनने की प्रार्थना करना, शल्य का क्रोध करना और युद्ध को छोड़ कर चल देना। दुर्योधन का नम्रता पूर्वक सम-

झाना, शल्य का मान जाना और कर्ण का सारथ्य करना ॥

यह कह कर दुर्योधन शल्य के पास गया और हाथ जोड़ कर बोला कि हे सत्यव्रत महाबाहु, मद्र देश के स्वामी शूर शत्रु की सना का भय उत्पन्न करने वाले राजा! आपने कर्ण का वचन सुना है, हे राजन्! मैं नम्रता पूर्वक आप को दण्डवत करता हू हे रथियों में श्रेष्ठ! आप अर्जुन के नाश के निमित्त कर्ण का सारथी बनना स्वीकार करें ॥

हे पुरुषोत्तम! मेरी सारी सेना मारी गई, भीष्म पितामह और द्रोणाचार्य छल से मारे गये, हे महाराज! ऐसा उपाय करो कि जिस से मेरी शेष सेना न मारी जाय, देखो अत्यन्त थोड़े पाण्डवों से मेरे बहुत से मनुष्य मारे गये अब मेरी वृद्धि चाहने वाले एक आप और दूसरा कर्ण है परन्तु कर्ण के पास अच्छा सारथी नहीं, इस लिये हे महाराज! आप मुझ पर दया करें और कर्ण का सारथी कर्म करें, सारी पृथ्वी भर में आपके समान कोई सारथी मिलिना असंभव है श्रीकृष्ण से रक्षित होकर अर्जुन जिन जिन कर्मों को करता है वह आप को विदित ही है, उसी प्रकार आप भी कर्ण की रक्षा कीजिये, आप के साथ कर्ण को देख कर पाण्डव ऐसा भागेंगे जैसे सूर्य उदय से अन्धकार। यह सूर्य का पुत्र कर्ण आप सारथी को पाकर देवताओं समेत इन्द्र को भी जीतने म सामर्थ होगा, हे महाराज! आप पिता के समान हैं, प्रसन्न हो कर मेरी प्रार्थना को स्वीकार कीजिये ॥

यह सुनते ही शल्य को बहुत क्रोध आया और कहने लगा

कि हे गान्धारी के पुत्र! तु मेरा अपमान करता है, तुझ को इस प्रकार के बचन कहिने उचित नहीं, ईश्वर ने ब्राह्मणों को मुख से क्षत्रिय को भुजा से, वैश्यों को जंघा से और शूद्रों को पाओं से, बनाया है उन का काम तीनों वर्णों की सेवा है कर्ण सूत होकर मुझ क्षत्रिय और मुर्द्धाभिषेक की बराबरी कर सकता है? परंतु तुम तो उस को मुझ से भी अधिक बताते हो यदि सेना में मेरा भाग नियत करो तो मैं उस को जीत कर बहुत शीघ्र जहां से आया हूं चला जाऊंगा, परंतु तू मुझे सूत का सूत बना कर मेरा निरादर करना चाहता है, देखो मेरी भुजायें बज्र के समान हैं, मेरे रथ को देखो, मैं सदैव शत्रुओं को विजय करने वाला मद्र देश का स्वामी क्या मैं सूत पुत्र कर्ण का सा थी बनने के योग्य हूं, मैं चाहूं तो सारी पृथ्वी को फोड़ दूं और पर्वतों को तोड़ दूं, अपने तेज से समुद्र को सुखादूं मेरी गदा को देखो, ऐसे सामर्थ्यवान को तू नीच जाती की सेवा में नियुक्त करना चाहता है, यह शब्द कहना तुम्हारे लिये सर्वदा अनुचित है, क्षत्री किसी दशा में भी सूतों का आज्ञा वर्ति नहीं होसकता, हे गान्धारी के पुत्र! मुझे आज्ञा दो अब मैं घर को जाता हुं, आप मेरी शूरता में संदेह करते हैं॥

यह कह कर शल्य ने अपने रथ को चलाया और घर की ओर चल पड़ा, दुर्योधन प्रतिष्ठा पूर्व.. आगे बढ़ा और शल्य के चर्ण पकड़ कर बोला कि हे महाराज! जो कुछ आप कहते हैं वह सर्वथा सत्य है, परंतु मेरे प्रयोजन की ओर ध्यान दें मैं आप की शूरता में तनिक भी अविश्वास नहीं करता किन्तु

मैं आप को सब पृथ्वी से सर्वोत्तम मान कर सारथ्य कर्म के लिये प्रार्थना करता हूं, मैं जानता हूं कि श्री कृष्ण गुणों में सब से अधिक हैं परन्तु आप उन से भी बढ़ कर हैं, इसी लिये मेरी यह प्रार्थना है कि यदि आप मेरा कहा मान कर कर्ण के रक्षक बनें तो कर्ण निश्चित अर्जुन से सब गुणों में अधिक होजायगा, आप के शत्रुओं के लिये शल्य रूप होने के कारण आप का यह नाम पृथ्वी पर विख्यात हुआ है आप से कोई भी अधिक पराक्रमी नहीं न कर्ण न मैं हम दोनों ही आप से बहुत कम हैं, इस लिये आप को कृष्ण से भी अधिक मान कर आप से सहायता मांगता हूं कर्ण अर्जुन से अस्त्र विद्या में अधिक है और आप अश्व हृदय विद्या में श्री कृष्ण से द्विगुण हैं, इस लिये आप कृपा करें और मेरे कथन के सार को समझें ॥

यह सुन कर शल्य का क्रोध शान्त हुआ और वह कहने लगा कि हे दुर्योधन ! यदि तुम सारी सेना के बीच मुझे सब से बढ़ कर मानते हो तो मैं आप का कार्य करूंगा। मैं यशस्वी कर्ण का सारथी बनूंगा, यह सुन कर दुर्योधन प्रसन्न हुआ ॥

पंद्रहवां अध्याय

—:०:—

दुर्योधन का देवासुर संग्राम का वर्णन करना

और शल्य को सुनाना ॥

तब दुर्योधन ने शल्य को कहा कि हे सामर्थ्य ! मार्कण्डेय जी ने जो कुछ देवासुर संग्राम का वर्णन किया है वह आप को सुनाता हूं आप ध्यान दे कर सुनों । हम ने दैत्यों के देवताओं को हराने का वृत्तान्त सुना है । कहते हैं कि तारक दैत्य के तीन पुत्र थे, ताराक्ष, कमलाक्ष और विद्युन्माली, तीनों ने बड़ी तपस्या करके ब्रह्मा जी को प्रसन्न किया और वरदान मांगा कि किसी जीव मात्र से हमारी मृत्यु न हो, ब्रह्मा जी ने कहा कि सब कोई अविनाशि नहीं हो सक्ता, इस लिये इस वर को मत मांगो ॥

तब उन्हों ने कहा कि हे प्रजापति ! हम लोग तीन पुरों में नियत होकर विचरें, सहस्र वर्ष के अनन्तर हम परस्पर में मिलें, यह पुर परस्पर एक ही रूप हो जायें और जो देवता इन तीनों पुरों को एक ही बाण से गिराने लगे उस के हाथ से हमारी मुक्ती हो, ब्रह्मा जी ने कहा बहुत अच्छा, तब दैत्यों के विश्वकर्मा मय ने तीन पुरों को बनाया स्वर्ण का पुर तो स्वर्ग में नियत किया, चांदि को अन्तरिक्ष में और लोहे का पृथ्वी पर । इन पुरों में सुन्दर मकान, बाजार और निवास स्थान बने, स्वर्ण के पुर का राजा ताराक्ष हुआ । रजतपुर का कमलाक्ष और लोहपुर का विद्युन्माली, तब दैत्यों की संख्या में बड़ी उन्नति हुई और करोड़ों दैत्य जहां तहां फिरने लगे, उनका त्रिपुर नाम गढ़ बड़ा विख्यात हुआ फिर मय ने उनकी सब कामनायें पूर्ण कीं ॥

फिर ताराक्ष के पुत्र हरि ने बहुत तपस्या करके ब्रह्मा

जी को प्रसन्न किया और यह वर मांगा कि हमारे पुर में एक ऐसी वापी हो जाय कि जिस में युद्ध में मरे हुए जीव डालने से फिर जी उठें ॥

ब्रह्मा ने कहा कि ऐसा ही हो, यह वर पाकर दैत्यों ने बड़ा उपद्रव परारम्भ किया । लोगों को दुःख देना, यज्ञों को विध्वंस करना, मांस भक्षण करना और इसी प्रकार के कई एक धर्म विरोधी काम उन के लिए साधारण बात हो गए थे देवताओं को बड़ा दुःख हुआ वह दैत्यों को जीतने में असमर्थ हुए और सब मिल कर ब्रह्मा जी के पास गए ॥

ब्रह्मा जी ने कहा कि हे देवताओ ! पापी को मारना मेरा पहिले से ही दृढ़ नियम है, दैत्य लोग बहुधा पाप करते हैं इस लिये मैं भी उनको मारना अच्छा समझता हुं परंतु शिवजी के बिना कोई उन पुरों को एक ही बाण से नहीं तोड़ सकता इस लिये आप लोग शिवजी के पास जायें । तब देवताओं ने ब्रह्मा जी को आगे किया और शिवजी के पास जाकर स्तुति करने लगे तब शिवजी प्रसन्न होकर बोले कि कहिये प्रसन्न तो हैं ? किस हेतु आप सब महाशयों ने मेरे पास आने का प्रयत्न किया है ?

सोलहवां अध्याय

—:०:—

देवताओं का दैत्यों का वृत्तान्त सुनाना और शिवजी के लिये रथ निर्माण करना ॥

देवताओं ने तारक के पुत्रों के दुराचार और जीवों को पीड़ा देने का वृत्तान्त सुनाया, शिवजी बोले कि तुम से शत्रुता रखने में वह सब लोग मारने के योग्य हैं, इस लिये आप मेरा आधा तेज लेजाओ और उन को मारो, देवता बोले कि हे भगवन् ! हम में से कोई भी इस काम करने को समर्थ नहीं, आपही हमारा आधा तेज लें और उन को मारें, शिवजी बोले तथास्तु मैं दैत्यों को मारूंगा, मेरे लिये उत्तम रथ निर्माण करो, तब देवताओं ने विश्वकर्मा से उत्तम रथ बनवाया, विष्णु, चन्द्रमा और अग्नि बाण में नियत हुये, अग्नि श्रृंग और चन्द्रमा भल्ल हुआ, विष्णु कुन्तल हुये और धरा पृथवी रथ बनी, मन्दराचल अक्ष हुआ और महानदी जंघा हुई ॥

दिशाविदशा रथ के परिवार हुये और नक्षत्रों के समूह ईशा हुये सत्युग जुआ बना और वासुकि कूबर बना हिमाचल और विन्ध्याचल पहियों के उपस्कर हुये और अस्ताचल पाये और सप्त ऋषि रथ का उपस्कर हुये, दिन रात्रि और काल काष्ठा नाम समय और ऋतुओं समेत नक्षत्र और ग्रह अनुकर्ष और वरूथ हुये, सवर्तक वाबलाहक जुये का चर्म बना, सर्प घोड़ों के वाल बन्धन और दिशा विदिशा घोड़ों के मार्ग हुये, मद्यजल और प्रेतों के स्वामी लोकेश्वर घोड़ा बने, संबत्सर धनुष बना मेरु ध्वजा की पाष्ठि बना, इतिहास और यजुर्वेद पृष्ठरक्षक हुये, वेगवान रुद्रजी काल रूप हुये, अपनी क्रोध अग्नि को बाण में लगाया इस प्रकार युद्ध की सामग्री ले कर शिवजी नियत हुये ॥

तब शिवजी ने देवताओं को कहा कि हे देवताओं ! मैं लड़ने को तय्यार हूं अब जो कोई तुम में मुझ से अधिक बलवान हो उसको मेरा सारथी बनाओ, देवता लोग तुरन्त ब्रह्मा जी के पास पहुंचे और हाथ जोड़ कर स्तुति करने लगे कि हे महाराज ! शिवजी राक्षसों के मारने के लिये उद्यत हैं आप कृपा करके उनके सारथी हूजिये, ब्रह्मा जी ने प्रसन्न हो कर घोड़ों की वाग डोर हाथ में ली और शिवजी का रथ चलाया शिवजी त्रिपुर की ओर गये और दैत्यों को मार कर उन के त्रिपुर का नाश किया ॥

हे महाराज शल्य जी ! जिस प्रकार आप ब्रह्मा जी ने शिवजी के रथ की वाग डोर हाथ में लेकर दैत्यों को मारा था। उसी प्रकार आप कर्ण के रथ को चलाईये और शत्रुओं का नाश कीजिये, हे राजाओं में श्रेष्ठ ! आप श्रीकृष्ण, कर्ण और अर्जुन से श्रेष्ठ हैं, कर्ण युद्ध में रुद्र रूप है आप नीति में ब्रह्माजी के समान हैं। आप मेरे शत्रुओं को मारें। आप ही के कारण हम को राज्य और जीवन मिलने की आशा है ॥

हे महात्मन् ! भृगुऋषि की कुल में परशुराम जी हुये हैं उन्होंने शिवजी की बहुत भक्ति की शिवजी ने प्रसन्न होकर वर दान दिया, परन्तु परशुराम ने दिव्यास्त्रों को मांगा, शिवजी ने कहा कि अपने आत्मा को पवित्र करो फिर आप को अस्त्र मिलेंगे। परशुराम ने कहा बहुत अच्छा। तब से परशुराम शिवजी के भक्ति नियम में तत्पर रहा। कुछ काल

पश्चात् शिवजी बड़े प्रसन्न हुये और पार्वती से उसके भक्ति भाव का वर्णन करने लगे।

इतने में देवताओं ने समाचार दिया कि दैत्य लोगों ने बहुत उपद्रव मचा रखा है, उनको ताड़ना करनी अवश्य है। तब शिवजी ने परशुराम को कहा कि तुम दानवों से युद्ध करो और मेरी आज्ञा से उनको मारो, परशुराम ने कहा कि हे प्रभो! बिना अस्त्रों के महा बली दानवों को मारना कैसे संभव है ? शिवजी बोले कि मेरी आज्ञा से तुम उन को मारोगे और फिर तुम को दिव्यास्त्रों की प्राप्ती होगी परशुराम ने कहा बहुत अच्छा ॥

तब परशुराम आज्ञा ले कर दानवों से लड़ने आया और देवेश्वर शिवजी की कृपा से सब का नाश किया तब शिवजी प्रसन्न हुये और परशुराम ने दिव्यास्त्र पाये। हे महाराज! कर्ण उन परशुराम जी का शिष्य है और इस ने उन के अस्त्रों को धारण किया है ॥

आप का यह विचार कि यह सूत है ठीक नहीं यह क्षत्रि कुल में उत्पन्न हुआ है। इसके कवच और कुंडलों को आपने सुना होगा मैं इस को क्षत्रि कुल में उत्पन्न देव कुमार जानता हूं केवल इस को आज्ञा है कि यह अपने वंश को गुप्त रखे। सूर्य के समान तेजस्वी सिंह को मृगि कैसे उत्पन्न कर सकती है। देखो हाथी के सूण्ड के समान इस की बड़ी २ भुजायें इस की चौड़ी छाती क्या यह कोई साधारण मनुष्य हो सकता है! हे महाराज! यह महात्मा परशुराम जी का शिष्य है ॥

सतारहवां अध्याय

—:०:—

दुर्योधन, कर्ण और शल्य का आपस में बात चीत करना ॥

इस प्रकार शल्य की अनेक प्रकार की प्रशंसा करके दुर्योधन ने उस को सारथी बनने पर प्रसन्न किया, शल्य ने कहा हे दुर्योधन! मैंने यह कथा पहिले भी सुनी है, इसी हेतु से श्री कृष्ण जी ने अर्जुन का सारथी बनना स्वीकार किया है परन्तु आप को विदित हो कि यदि अर्जुन मारा गया तो श्री कृष्ण जी आप युद्ध कर के आप की सेना को मारेंगे। आप की सेना में कोई भी उन से युद्ध न कर सकेगा, दुर्योधन ने कहा कि हे राजन्! आप कर्ण का अपमान न करें। देखो उस ने घटोत्कच को मारा, अर्जुन डरता हुआ उस के सामने भी न आया उसने नकुल और सहदेव को जीता और भीमसेन को धनुष की कोटि से प्रेरित किया फिर आप के समान कौन है? यदि कर्ण मारा भी गया तो आप भल्ल रूप होकर शत्रुओं को मारोगे, हे शत्रुहन्ता! आप वासुदेव से भी अधिक हैं फिर मुझे किस का भय है, मैं आप के द्वारा सब राजाओं और अपने भाईयों से अनृण हुआ चाहता हुं ॥

शल्य बोला कि चूंकि आप मुझ को सारी सेना के समक्ष में कृष्ण से भी अधिक कहते हैं, इस लिये मैं आप से प्रसन्न हूं आप के अभीष्ट को करने के लिये उद्यत हूं परन्तु

जो कुछ मैं चाहूं कर्ण से कह लूं मैं उस का किसी प्रकार का भी मान नहीं करूंगा, दुर्योधन और कर्ण ने इस बात को मान लिया, तब दुर्योधन प्रसन्न होकर कर्ण से कहने लगा कि हे यशस्वी ! अब पाण्डवी सेना को ऐसा मारो जैसे इन्द्र दानवों का मारता है ॥

इसके पश्चात् कर्ण ने दुर्योधन को कहा कि शल्य प्रसन्न चित्त होकर बात नहीं करता, इसलिये आप इसको समझावें तब दुर्योधन फिर शल्य के पास गया और कहने लगा कि हे हे राजन् ! अब कर्ण त्यार है आप उस को संभालिये, मैं आप से फिर प्रार्थना करता हूं कि आप उस की रक्षा करें, शल्य ने कहा कि हे राजन् ! मैं सर्वात्मा से तेरे काम को करूंगा परंतु जो बात मैं कहता हूं आप दोनों सुनो, कर्ण ने कहा कि हे राजन् ! जिस प्रकार ब्रह्मा जी शिवजी के सारथी बने, और श्री कृष्ण जी अर्जुन के सारथी हुए उसी प्रकार आप मेरे सारथी बनें, शल्य ने कहा कि अच्छे पुरुष अपनी निन्दा और दूसरों की निंदा और स्तुति नहीं करते परन्तु फिर भी आप के निश्चय के लिये अपनी प्रशंसा करता हूं कि मैं इंद्र के सारथी मातली के समान आप के घोड़ों को चलाऊंगा ॥

अठारहवां अध्याय

—:o:—

कर्ण का रथ पर चढ़ना, सब कौरवों का गर्जना और विजय के शब्द करना, कर्ण का

अपनी प्रशंसा करना, शल्य का उस को रोकना, कर्ण का अर्जुन के बतलाने वाले को दान देने का प्रण करना शल्य और कर्ण का आपस में विवाद॥

तब दुर्योधन ने शल्य को कहा कि हे मद्र राज! कर्ण के रथ को सम्भालो तब शल्य रथ पर चढ़ कर कर्ण को बोला कि विजय करो, तब कर्ण ने रथ की पूजा कराई फिर कर्ण रथ पर चढ़ा सारी कौरवी सेना बड़ी प्रसन्न हुई, तब शल्य ने कर्ण को कहा कि हे कर्ण! भीष्म और द्रोणाचार्य ने कठन कर्म को नहीं किया क्योंकि अर्जुन और भीमसेन नहीं मारे गये हे वीर! तुम सब धनुषधारियों के सामने इस त्रुटि को पूरा करो या युधिष्ठिर को बांधो या अर्जुन को ही मारो और पांडवों की सेना का नाश करो॥

तब कर्ण अत्यन्त सावधान शल्य से बोला कि हे महाबाहू! घोड़ों को तीक्ष्ण करो, मैं अर्जुन को मारूंगा, मैं भीम, नकुल और युधिष्ठर सहित सहदेव को भी मारूंगा, अब मैं बड़े तीक्ष्ण बाणों को पाण्डवों के नाश के लिये फेंकता हूं, आप मेरे भुज बल को देखें॥

शल्य बोला कि हे सूत पुत्र! तुम पाण्डवों का अपमान करते हो, पांडव अस्त्रों के ज्ञाता, अजेय और युद्ध से मुंह मोड़ने वाले नहीं हैं, जब तुम वज्र के समान गांडीव धनुष्य का

शब्द सुनोगे, तब ऐसा न कहोगे, कर्ण इन निन्दित बचनों को सुन कर चुपके से कहने लगा कि अच्छा अब रथ को चलाओ, रथ के अति वेग से चलने पर सब कौरवी सेना आनन्द से उछलने लगी और समझने लगी कि अब पांण्डव हार जायेंगे। भेरी दुन्दुभी आदि अनेक बाजे बजे और वीरों का घोर नाद प्रवृत्त हुआ॥

फिर कर्ण ने शल्य से कहा हे महाबाहू! भीष्म और द्रोण को शत्रुओं के हाथ से मरा हुआ देख कर मेरा पराक्रम नष्ट हुआ जाता है, किस कारण गुरु जी ने सब शत्रुओं को नहीं मारा! आपमें से मेरे बिना कौन सा वीर ऐसा है जो युद्ध में सन्मुख आये हुये अर्जुन को मारे! जब गुरु जी मारे गये तो किसी को उन की रक्षा का साहस नहीं हुआ, मैं देखता हूं कि दुर्योधन का उपाय नष्ट हुआ जाता है, इस लिये मुझ को कर्म करना उचित है, हे शल्य! इस हेतु आप शत्रु की सेना में मुझ को ले चलो मैं सब पाण्डवों को मारूंगा दुर्योधन ने मुझ पर कई प्रकार के उपकार किये हैं, उन उपकारों के बदले मैं अब अपने प्राणों तक छोड़ने को तैयार हूं, जय अजय तो दैवाधीन है परन्तु मैं अब दुर्योधन के अर्थ प्राणों की भी परवाह नहीं करूंगा, मैं मित्र द्रोही नहीं हूं मित्र द्रोह मुझ को बुरा प्रतीत होता है, इस मेरे शायक को देखो, मेरी खडग और उत्तम शंख को देखो॥

इस समय यदि काल भी अर्जुन की रक्षा करे तो अर्जुन बच नहीं सकता, मैं अर्जुन को अवश्य मारूंगा या आप ही

मर जाऊंगा। शल्य यह वचन सुन कर हंसा और कहने लगा कि अरे राधा के पुत्र! क्यों मुझ को गीदड़ भवकीयें दिखाता है, कहां पुरुषोत्तम अर्जुन और कहां नराधम तुम, अभी कल ही जब गंधर्वों ने दुर्योधन को पकड़ा था। किस प्रकार तुम सब दुम दबा कर भागे थे यदि अर्जुन न छुड़ाता तो दुर्योधन कहां होता॥

यह वचन सुन कर बहुत क्रोध में भरे हुये कर्ण ने कहा कि हे शल्य! यह ऐसा ही है गा, यह ऐसा ही होगा, देखो युद्ध वर्तमान है जब अर्जुन मुझ को जीत लेगा तब आपने ऐसा कहना, शल्य ने कहा बहुत अच्छा, कर्ण ने कहा अब सवाधान हो जाओ और रथ को वेग से चलाओ, तब कर्ण पांडवी सेना के पास गिया और कहने लगा कि अर्जुन कहां है मैं अर्जुन से युद्ध करना चाहता हूं इस समय जो पुरुष अर्जुन को दिखावे मैं उस को मूंह मांगा धन दूंगा और जो पुरुष अर्जुन को मुझ से थोड़ा जाने मैं उस को रत्नों से भरा हुआ छकड़ा दूंगा, यदि मेरे दिये हुये धन को अर्जुन का बतलाने वाला थोड़ा माने तो उस को और धन दूंगा, ग्राम दूंगा, हाथी घोड़े बैल दास दासी अपनी बेटी तक देने को उद्यत हूं, जो कोई अर्जुन का पता दे जो चाहे सो ले॥

तब कर्ण ने अपना शंख बजाया, दुर्योधन बड़ा प्रसन्न हुआ, सेना के लोगों ने बहुत शब्द किये, तब राजा मद्र हंस कर कहने लगा कि हे कर्ण! वृथा दान क्यों देते हो, तुम बिना उपाय के ही अर्जुन को देखोगे, तुम अज्ञानियों की भांति मोह

वश होकर अपात्र को दान देने का दोष नहीं समझता, यदि तुम दान करना चाहते हो तो यज्ञ करो, यदि तुम अज्ञानता से श्रीकृष्ण और अर्जुन को मारना चाहते हो तो यह व्यर्थ है, हमने शृगालों को सिंह को मारते कभी नहीं देखा मेरा विचार है कि तुम काल के फंदे में फंसे हो तभी इस प्रकार के निष्प्रयोजन वचन बतलाते हो यदि अपना कल्याण चाहते हो तो अपनी सारी सेना से अर्जुन से युद्ध करो ॥

कर्ण ने कहा कि मैं अपने ही भुजबल के आश्रित होकर युद्ध में अर्जुन को चाहता हूं। हे मित्र! तू शत्रु रूप होकर मुझ को डराता है! मैं इस विचार से छूट नहीं सकता। शल्य ने कहा कि जब अर्जुन के तीरों की नोकों से छेदा जायगा तो अपने इस प्रण को याद करेगा, खरगोशों में गीदड़ भी सिंह ही होते हैं, इसी प्रकार तुम भी अपने आप को सिंह मानते हो ॥

उन्नीसवां अध्याय

—.०: -

कर्ण का बहुत क्रोध करना और राजा शल्य को निन्दित वचन कहना ॥

यह सुन कर कर्ण बोला कि हे शल्य गुणवान ही जानते हैं, गुण हीन नहीं जान सकते, हे शल्य तुम गुण रहित हो इस से तुम को मेरे गुणों का क्या पता, मैं अर्जुन के बलाबल

को अच्छी प्रकार जानता हूं, मैं श्रीकृष्ण के गौरव और महत्त्व को भी जानता हूं. वैसा तुम नहीं जानते। मैं सब कुछ जान कर अर्जुन को युद्ध में बुलाता हूं॥

यह वचन कह कर कर्ण आग बगोला हो गया और शल्य को कहने लगा कि हे शल्य मेरे इन विषधर सर्पों के समान तीरों को देखो, यह मैंने केवल श्रीकृष्ण और अर्जुन के लिये ही रखे हैं, मैं चाहूं तो इन से पर्वतों को फोड़ डालूं अर्जुन और श्रीकृष्ण क्या है, परन्तु तुम इस बात को क्या जानो। तुम क्षत्रियों में नीच दुष्ट देश में उत्पन्न होने वाले मित्र बन कर शत्रु का काम करते हो, मद्र देशी सदैव ऐसे ही होते हैं तुम उन को कभी भी अच्छा नहीं समझते! मद्र देशियों के व्यभिचार की कथायें स्त्री और बालकों के गीतों में प्रसिद्ध हैं कि मद्र देशी सदैव मित्र से शत्रुता करने वाले हैं, यहां तक कि जो हम से शत्रुता करता है हम उस को मद्र देशी कहते हैं, मद्र देशीयों में मेलमिलाप नहीं होता। और आपस में क्षुद्र वचन बोला करते हैं, वह सदैव झूठे और कुटिल होते हैं, पिता, माता, पुत्र, सास, सुसर, मामा, जामात्र, लड़की, भाई पोते बांधव समानावस्था वाले, अभ्यागत, दास, दासी आदि सब मिल कर विषय भोग करते हैं, मत्स्य खादक गौ मांस भक्षी मद्यपान करने वाले, अयोग्य गीतों को गाते, हंसते और अनुचित कर्म करते हैं, ऐसे मद्र देशी धर्मात्मा कैसे बन सकते हैं॥

मद्र देशियों में स्नेह और प्रीति दोनों नहीं होते, वह

सदैव अपवित्र होते हैं, गन्धार देशियों में भी पवित्रता नष्ट होगई, जो इन में प्रीति करता है वह नष्टता को पाता है ॥

हे विषैले विच्छु ! मैं तेरे विष को अथर्वण वेद के मंत्र से शांत करूंगा, हे बुद्धिमान मौन हो ऐसा वचन सुनोगे जिन को तुम्हारे देश की स्त्रियां मद्य पीकर और गाकर नाचती हैं उन स्वेच्छाचारी पतिवंचक भोगों में अनियम स्त्रियों का पुत्र तू मद्रदेशी धर्म में कैसे तत्पर हो सकता है ? तुम्हारे देश की स्त्रियां ऊंटों और गदहों की भांति खड़ी होकर पेशाब करती हैं उन अधार्मिक और निर्लज्ज स्त्रियों का पुत्र तू मद्र देशी धर्म को क्या जान सकता है तुम्हारी स्त्रियां कांजी के मांगने पर कौंचों को खींचती हैं और कहती हैं कि कोई हम से कांजी न मांगे वह हमारी बड़ी प्रिय है बेटी को दें, पति को दें। परन्तु कांजी को न दें ॥

कन्या और वृद्ध स्त्री निर्लज्ज हैं, कम्बलों को धारण करने वाली बहुधा दुराचारणियें होती हैं, हमने बहुतों से सुना है कि मद्र सौवर और सिंधु देशी म्लेच्छ रूप हैं और क्षत्रिय धर्म को नहीं जानते इस लिये मैं समझता हूं कि तू भी पाण्डवों का भेजा हुआ दूत है मैं युद्ध के समय मुख न मोड़ने वाले उत्तम पुरुषों की जो गति परशुराम जी ने कही है उस का स्मरण करता हूं, मैं तीनों लोकों में किसी पुरुष को नहीं जानता जो मुझ को इस विचार से हटावे, हे मद्रदेशियों में नीच ! चुप रहो, भयभीत होकर क्यों बकवास करता है यदि तू फिर ऐसे वचनों को कहेगा तो मैं तेरे शिर को अपनी गदा से

काट कर पृथ्वी पर गिराऊंगा, हे राजा मद्र ! मत डरो और निर्भय होकर रक्षा करो ॥

बीसवां अध्याय

—:०:—

शल्य का कोपमा से कर्ण को अपनी प्रशंसा करने से रोकना ॥

तब शल्य ने कहा कि हे अधिरथी कर्ण ! मैं अपने में नियत यज्ञ करता युद्ध में मुख न मोड़ने वाला मूर्द्धाभिषेक क्षत्रिय वंश में उत्पन्न हुआ हूं तू मुझ को मदिरा से उन्नत प्रतीत होता है हे नीच कुलकुलंकी ! मेरी कही हुई काकोपमा को समझो, मैं नहीं समझता कि किस दोष के कारण तू मुझ को मारना चाहता है, मैं राजा का अभ्युदय चाहने वाला हूं और तुझ को युद्ध के ऊंच नीच शस्त्रों की रक्षा घोड़ों का क्लेश भालों की चिकित्सा आदि अनेक युद्ध सम्बन्धी कर्म बताने वाला हूं। हे कर्ण ! मैं तुझ को एक दृष्टान्त बताता हूं तू उस को सुन ॥

समुद्र के किनारे पर एक महाधनी बनिया रहता था वह बहुत से पुत्र पौत्रों से संयुक्त सब पर क्षमा करने वाला था रसोई के समय उच्छिष्ट भूत नाम कौआ भी नित्य प्रति उस के घर में आता था और उस के पुत्र पौत्र उस के जूठे अन्न, मांस आदि भोजनों से पालना करते थे, इस प्रकार खा २ कर वह कौआ बहुत मोटा हुआ और अपने समान किसी को न समझने लगा ॥

एक समय समुद्र के किनारे पर हंस आये, वैश्य के लड़के उन को देख कर अपने कौए से कहने लगे कि हमारा कौआ इन से अच्छा है तब तो कौआ बहुत अकड़ा और हंसों के पास जाकर कहने लगा कि हे हंसो ! तुम में से जो सब से उत्तम उड़ने वाला हो वह मेरे साथ उड़े, यह सुन कर हंस हंस पड़े और उन में से चक्राग नाम हंस ने कहा कि हे कर्ण (अर्थात कौए) हमारी उडान मन के समान है और सब पक्षियों से बढ़ कर है तु हमारे साथ कैसे उड़ सकता है ॥

कौआ बोला कि तुम मूर्ख मुझ को क्या जानो मैं सौ प्रकार की गती जानता हूं, कहो किस गती से उडूं हंस ने कहा कि हे कर्ण ! हम तो केवल एक ही गती जानते हैं; यह सुन कर सब कौओं ने हंस की बात पर अत्यन्त हंसी उड़ाई और कहने लगे कि हंस एक ही गति वाला होकर कौए से कैसे जीत सक्ता है ? तब काक और हंस दोनों उड़े। कौआ थोड़ा सा उड़कर एक वृक्ष पर जा बैठा, फिर उसकी दूसरी टहनी पर और हंसको कहने लगा कि इस प्रकार उड़ो, कौए उस की फुर्ती पर बड़े प्रसन्न हुये और हंस भी उसकी अभाग्यता को देख कर हंसे, तब हंस पश्चिम समुद्र की ओर उड़ चला कौआ भी उसके पीछे २ परों को फड़ फड़ता हुआ चला, जब बहुत दूर तक निकल गये तो कौआ शक्ति हीन होकर धीरे २ उड़ने लगा, चारों ओर उसको न कोई वृक्ष न द्वीप दिखाई देता था कि जहां ठहिर कर वह विश्राम करे अन्त को हार कर गिर पड़ा और पानी में डूबने लगा ॥

हंसने उसकी यह दशा देख कर कहा कि हे मित्र ! यह स्नान करने की जगह नहीं है। अभी किनारा सौ योजन दूर है, यहां क्यों ठहिरते हो, कौआ बोला कि हे मित्र ! मैंने मूर्खता से आप की गति का निरादर किया था, उस मेरे वचन को क्षमा करो और मुझ को इस आपत्ति से बचाओ, तब हंस ने कौए को चोंच में पकड़ा और समुद्र से बाहिर निकाला ॥

जिस प्रकार वह वैश्य के घर में उच्छिष्ट खा २ कर पला हुआ कौआ हंसों को अपने बराबर नहीं समझता था, इसी प्रकार तू भी धृतराष्ट्र के घर का अन्न खा २ कर बहुत मोटा हुआ है और अपने बराबर किसी को नहीं समझता। जब अर्जुन रूपी हंस के साथ युद्ध रूपी समुद्र में उड़ेगा तब तुझे अपने बल अबल का पता लगेगा। हे कर्ण हे बुद्धिमान सूतपुत्र ! अर्जुन और केशव जी का अपमान करता है ? वह दोनों नरोत्तम महात्मा हैं। मौन हो अपनी प्रशंसा मत कर ॥

इक्कीसवां अध्याय

—:-०-:—

कर्ण का प्रत्युत्तर। परशुराम का कर्ण को शाप देना। एक ब्राह्मण का भी कर्ण को शाप देना। शल्य और कर्ण का

विवाद रहना ॥

तब कर्ण ने कहा कि हे शल्य ! मैं श्रीकृष्ण और अर्जुन के बल अबल को जानता हूं, तुम उस को अच्छी प्रकार नहीं जानते, इसी से मैं यह कहता हूं कि मैं श्रीकृष्ण और अर्जुन दोनों को मारूंगा, हां मुझे एक बात का डर है, जिस को मैं अब स्मरण करता हुं वह यह है कि मैंने ब्राह्मण बन कर परशुराम से अस्त्र विद्या सीखी थी एक समय मार्ग पर परशुराम जी मेरी जङ्घा पर शिर धर कर सो रहे थे कि एक चींटी ने मेरी जंघा को काटा, इस से बहुत रुधिर जारी हुआ, परन्तु मैं ने चूं तक न की, जब परशुराम जी जागे तो उन्हों ने रुधिर को देखा और मेरे धीर्य को देख कर कहने लगे कि तू ब्राह्मण नहीं, सच बता तू कौन वर्ण है, तब मैं ने अपना सारा वृत्तान्त सुनाया, उन्हों ने कहा कि जिस कारण तू ने धोके से अस्त्र विद्या सीखी है, इस कारण युद्ध के समय यह अस्त्र विद्या तुझ को भूल जायगी ॥

इस लिये मुझे डर है कि युद्ध के समय मुझे वह विद्या कहीं भूल न जाय, नहीं तो मेरे बल और शक्ति को देखो, यह काल रूप युद्ध निश्चय बहुत से क्षत्रियों को संतप्त करेगा, परन्तु मैं उस उग्र धनुष धारी सत्य पराक्रम पाण्डव अर्जुन को मृत्यु के मुख में दूंगा, हे पापी शल्य ! तू मुझ को डराकर अर्जुन की स्तुति करता है, तू मित्र बन कर शत्रुता करता है, यदि मेरे रथ का चक्र किसी गढ़े में न गिरे तो मैं इन्द्र और कुबेर से भी नहीं डरता, अर्जुन और कृष्ण से तो मेरा युद्ध पर

लोक के निमित्त होगा, इस का हेतु यह है कि एक समय अस्त्रविद्या का अभ्यास करते हुये मैंने उग्र अस्त्रों को फेंका, वहां दुर्भाग्यता से एक ब्राह्मण की होम साधने वाले गौ का बछड़ा निर्जन बन में चर रहा था उन अस्त्रों के लगने से वह बछड़ा मर गिया इस से क्रोधित हो कर ब्राह्मण ने शाप दिया कि जब तुम युद्ध करोगे तो तुम्हारे रथ का पहिया पृथवी में घुस जायगा इस शाप से मैं बहुत डरता हूं मैंने ब्राह्मण को अनेक गौएं देनी चाही परन्तु उसने स्वीकार न की, और कहा कि मेरा वचन वृथा नहीं होगा ब्राह्मण झूठ नहीं बोलते मैंने अपना सर्वस्व देना चाहा परन्तु ब्राह्मण ने स्वीकार न किया ॥

तौ भी हे राजन! मैं नहीं डरता तुम्हारे वचनों को मैंने तीन कारणों से सहा है एक तो तुम सारथ्य कर्म करते हो, दूसरे मेरी प्रकृति क्षमा युक्त है, तीसरे अपने परम मित्र दुर्योधन का कार्य सिद्ध करना है, साथ ही मैं यह प्रण भी कर चुका हूं कि मैं शल्य के अप्रिय वचन सहूंगा, यदि तुम न भी हो तो भी मैं शत्रुओं को विजय कर सकता हुं, मैं अकेला हजार शल्य के समान हूं ॥

बाईसवां अध्याय

—:-०-:—

शल्य का कर्ण की बातों को वृथा कहना

कर्ण का उस को और भी निंदित वचन कहना ॥

शल्य ने कहा कि हे कर्ण ! यह सब कुछ तेरी बकवास है तू वृथा ही अपनी प्रसंशा करता है मैं अकेला हजार कर्ण के समान हूं। कर्ण ने कहा कि हे शल्य ! तू क्षत्रिय कुलकलंक है राजा धृतराष्ट्र की सभा में एक ब्राह्मण आया था उस ने कहा था कि मैं मद्र देश में सात दिन तक रहा हूं मैंने उस को बहुत निंदित पाया है स्त्रियें बहुत व्यभिचारणी हैं और लोग स्त्रियों समेत मद्य मांस खाते हैं, यह कह कर उस ने पहिले से भी द्विगुणित कठोर वचन कहे ॥

तब कर्ण ने कहा कि हमारे घर में एक ब्राह्मण आया था उस ने पंजाब, सिन्ध, सौवीर और मद्र देश को पाप ग्रस्त और निंदक कर्मों के करने वाला बताया था, फिर उस ने और ब्राह्मणों के वचन से मद्र देशीयों की निन्दा सुनाई और कहा कि हे शल्य ! तू उन देशों का अधिपति है इसी से तु धर्म को नहीं जानता ॥

शल्य ने कहा कि हे कर्ण ! तु भी अंग देश का राजा है वहां धर्म का नाम नहीं और व्यभिचार की बहुत प्रवृत्ति है, परन्तु हे कर्ण ! देशों पर क्या निर्भर है, प्रत्येक देश में अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के पुरुष और स्त्री होते हैं, प्रत्येक अपने आचार व्यवहार से जाने जाते हैं, जहां पापी और नीच पुरुष होते हैं वहां धर्मात्मा भी साथ ही होते हैं, व्यभिचारणी स्त्रियें भी होती

हैं और सुंदर पतिव्रता भी, फिर उन के कारण सारा देश पापी नहीं होता ॥

इतने में दुर्योधन आया और उस ने दोनों के आगे हाथ जोड़ कर दोनों को नम्र किया। तब कर्ण ने भी उत्तर न दिया और शल्य भी शत्रु के सन्मुख गिया ॥

तेईसवां अध्याय

—:o:—

कर्ण का पाण्डवों की सेना से लड़ना। दोनों ओर से व्यूह रचना, युधिष्ठर का अपने योधाओं को लड़ने के लिये नियत करना ॥

तब कर्ण ने शीघ्र ही पाण्डवी सेना को छिन्न भिन्न कर दिया। फिर उस ने वाहिस्पत व्यूह रचा और शंखों से पृथ्वी को कम्पायमान किया, सारद्वत कृपाचार्य मगध देशी कृतवर्मा दहिने पक्ष पर नियत हुये महारथी शकुनी और उल्लूक अपने स्वारों समेत पर पक्ष पर ठहिरे संसप्तक और गंधारी बायें पक्ष पर खड़े हुये, पर पक्ष में यवन कम्बोजी और शक जाती के लोग थे, जो सब अर्जुन और श्रीकृष्ण को पुकारते थे, कर्ण सेना के मुख पर स्थित हुआ, हाथी पर स्वार दुश्शासन व्यूह के पृष्ट भाग की रक्षा करने लगा, मतस्य और केकयों से रक्षित राजा दुर्योधन बीच में ठहिरा, अश्वत्थामा पास ही ठहिरे, इस प्रकार रथों और हाथियों से अलङ्कृत वह व्यूह बड़ा शोभायमान हुआ ॥

इस व्यूह को देख कर शत्रुओं को बहुत भय उत्पन्न हुआ राजा युधिष्ठिर इस को देख कर अर्जुन को कहने लगा कि हे वीर ! कर्ण के रचे हुये इस महा व्यूह को देखो जो शत्रु की सेना को ऐसा प्रकाशित करता है, ऐसा विचार करो कि जिस से यह हम को भयभीत न करें, अर्जुन बोला कि आप का कथन ठीक है परन्तु जिस प्रकार यह मारे जायें, मैं वही करूंगा, युधिष्ठिर ने कहा कि तुम कर्ण से लड़ो, भीमसेन दुर्योधन, नकुल वृषसेन से और सहदेव सौबल से लड़ेगा शतानीक दुशासन से और सात्यकी कृतवर्मा से लड़ेगा, पांड्य अश्वत्थामा के सन्मुख जाय और मैं कृपाचार्य से लड़ूंगा, द्रौपदी के पुत्र और शिखंडी धृष्टद्युम्न के शेष पुत्रों से लड़ें ॥

यह सुन कर अर्जुन ने सेना को आज्ञा दी और आप सेना मुख पर लड़ने गया, शल्य ने दूर से ही देख कर कहा कि हे कर्ण ! जिस से तुम लड़ना चाहते थे वह श्री कृष्ण समेत अर्जुन आता है, वह देखो उस का गम्भीर ध्वनी रथ उस को वानर चिन्ह रखने वाली पताका, वह श्री कृष्ण जी उस के रथ को हांकते हैं, वह देखो संसप्तकों के दलों को तोड़ता हुआ गर्जता हुआ अर्जुन, अब यदि तुम इस को मारोगे तो हमारे राजा बनोगे ॥

कर्ण ने कहा कि देखो संसप्तक कैसे इस को चारों ओर से घेरे हुये हैं और इस के साथ कैसा कठिन युद्ध करते हैं। शल्य ने कहा कि संसप्तक उस को कैसे मार सक्ते हैं, उसका पकड़ना ऐसा है जैसे महा समुद्र को पान करना और जैसे वायु को

रोकना, हां यदि तू चाहता है तो उस के साथ युद्ध कर के उस को मार ॥

चौवीसवां अध्याय

--:०:--

कर्ण का पांचालों को मारना, पांचालों का उस को घेरना । भीमसेन आदि का कर्ण से युद्ध । कर्ण के पुत्रों का पाण्डवों से युद्ध ॥

तब कर्ण पाण्डवों को सामने देख कर उन के दलों में घुस गिया । पांचाल शीघ्र ही उस के सन्मुख आये । कर्ण ने क्रोध युक्त हो कर अस्त्र को प्रकट किया । प्रभद्रकों के सतत्तर योधा मारे गये, फिर पच्चीस पांचालों को पृथ्वी पर सुलाया, फिर कर्ण ने दुस्सह पांच विशिखों को धनुष पर चढ़ाया । जिस से सेना विन्दु, चित्रसेन, भानुदेव, तपन और शूरसेन नाम पांच पंचाल मारे गये, पांचालों में बड़ा हाहा कार मचा फिर सुखेन और सत्यसेन ने कर्ण को त्याग कर के युद्ध किया वृषसेन ने पृष्ट से रक्षा की ॥

तब धृष्टद्युम्न, सात्यकी, द्रौपदी के पांचों पुत्र, भीमसेन जन्मेजय, शिखंडी और बड़े वीर प्रभद्रक चंदेरी, केकय, पांचाल देशी, नकुल, सहदेव और मत्स्य देशी सब कर्ण के सामने आये, कर्ण के पुत्रों ने सब को रोका सुषेन ने भल्ल से भीमसेन के धनुष को काटा और उस को छाती पर घायल करके गर्जा

भीमसेन ने दूसरा धनुष लिया और सुषन के धनुष को काट कर कर्ण को भी तिहत्तर बाणों से घायल किया, फिर उस ने कर्ण के पुत्र भानुसेन को गिराया और उस के शिर को काटा, फिर उसने कौरवी सेना को पीड़ामान करके कृपाचार्य और कृतवर्मा के धनुषों को काट कर शकुनी और दुशासन को भी पीड़ित किया ॥

फिर नकुल और सुषेन का परस्पर युद्ध हुआ, फिर चारों ओर से शूरवीर योधा जुट गये और बड़ा घोर युद्ध प्रवृत्त हुआ, कर्ण के अस्त्र बल और हस्तलाघवता को देख कर बड़ा आश्चर्य होता था, क्रोध से बाणों के लेते, चढ़ाते और मारते हुये उस को कोई देख न सका, तभी पता लगता था कि शत्रु मर गया जिस ने उन को एक बाण मारा कर्ण ने उस को तीन बाण मारे फिर तो सब लोग घायल होहो कर हट गये तब कर्ण हाथियों की सेना में प्रविष्ट हुआ वहां उस ने चंदेरियों के तीन सौ रथों को मार कर युधिष्ठर को पीड़ित किया, शिखंडी और सात्यकी ने युधिष्ठर की चारों ओर से रक्षा की फिर निर्भय पाण्डव और कौरव सन्मुख हुये और बड़ा घोर संग्राम प्रवृत हुआ ॥

पच्चीसवां अध्याय

—:o:—

कर्ण और युधिष्ठर का युद्ध, कर्ण का

युधिष्ठर को हरा देना। युधिष्ठर का युद्ध छोड़ कर भागना, दूसरे पाराडवों का कर्ण से युद्ध ॥

तब कर्ण सहस्रों पाण्डवी सेना के दलों को घायल करता हुआ और सेना समूहों को चीरता हुआ युधिष्ठर के सन्मुख गया, उस के बाणों से कट कर अनेक वीर पृथ्वी पर गिर पड़े तब द्राविड़ और निषाद सन्मुख आये परंतु ठहर न सके और एक साथ ही पृथ्वी पर ऐसे गिरे जैसे टूटा हुआ ताल का बन होता है तब पांचालों ने कर्ण को रोका फिर युधिष्ठर ने कहा कि हे कर्ण! तू सदैव वृथा बका करता है और अर्जुन से इर्षा किया करता है आज अपने बल को दिखा, यह कह कर युधिष्ठर ने दश बाणों से उस को घायल किया तब कर्ण ने विषदंत नाम बाण छोड़े और युधिष्ठर को घायल किया इस से युधिष्ठर का क्रोध भड़का और उस ने ऐसा बाण मारा कि कर्ण की बाईं कुक्षि विदीर्ण हुई, कर्ण अचेत होकर गिर पड़ा कौरव हाहाकार करने लगे और पाडवों ने सिंहनाद किये ॥

थोड़े ही काल में कर्ण फिर सुचेत हो कर सामने आया और युधिष्ठर से लड़ने लगा, पांचाल देशी चन्द्रदेव और गयड धार घायल हुये, युधिष्ठर ने फिर कर्ण और शल्य दोनों को छेदा, कर्ण ने उग्र बाणों से युधिष्ठर का कवच तोड़ा, युधिष्ठर ने लोहे की शक्ति कर्ण पर छोड़ी कर्ण ने उस को मार्ग में ही काटा युधिष्ठर ने तोमर फेंके परन्तु शीघ्र ही कर्ण से घायल हुआ रथ भी टूट गया और तूणीर भी कट गये तब युधिष्ठर

कृष्ण वर्ण दत्त नाम वाले घोड़ों पर चढ़ कर घर को चला, कर्ण ने कहा कि अब कहां जाते हो क्षत्रिय बनो और युद्ध करो, कर्ण शीघ्रता से आगे बढ़ा कि युधिष्ठिर को पकड़ले परन्तु कुन्ति के बचन को स्मरण करके उसे फिर हटना पड़ा शल्य ने भी कहा कि हे कर्ण ! इस उत्तम राजा को मत पकड़ो ऐसा न हो कि आप भी भस्म हो जाओ ॥

तब कर्ण ने पांडवी सेना को बहुत मारा युधिष्ठर को हटा हुआ देख कर चंदेरी देशी सात्यकी, द्रौपदी के पुत्र, नकुल और सहदेव इत्यादि उस के पीछे चले, उन को फिरा हुआ देख कर कर्ण पीछे हटा, कौरवों ने बाजे बजाये और सिंहनाद किये, तब अपनी सेना को छिन्न भिन्न हुआ देख कर युधिष्ठर बोला कि क्यों भागते हो ! जाओ लड़ो फिर सेना का बड़ा कठिन युद्ध हुआ, रुधिर की नदियां बहने लगीं, हाथी घोड़े और शूर वीर कट कर पृथ्वी को ढांपने लगे पांडवी सेना ने कौरवी सेना का बहुत नाश किया ॥

छब्बीसवां अध्याय

—:-o-:—

भीमसेन और कर्ण का युद्ध, कर्ण की पराजय भीमसेन का धृतराष्ट्र के पुत्रों को मारना ॥

जब कौरवी सेना भागने लगी तो दुर्योधन ने उन को साहस दिलाया तब शकुनी आगे बढ़ा, उधर से भीमसेन आया

सात्यकी युधिष्ठिर के पास ठहिरा, शल्य ने कर्ण का कहा कि महा क्रोध युक्त भीमसेन के रूप को देखो, कर्ण ने कहा कि वास्तव में आज भीमसेन बड़ा क्रोधी दिखाई देता है तुम मुझ को इस के सामने ले चलो यदि मैं इस को हराऊंगा तौ अर्जुन अवश्य ही मेरे सामने आवेगा फिर वही मारा जायगा अथवा मैं मारा जाऊंगा मेरे चित्त का संकल्प तो पूरा होगा ।।

शल्य ने कहा बहुत अच्छा मैं तुम्हारे रथ को उधर ले जाता हूं, कर्ण भीमसेन के सामने हुआ, भीमसेन ने कर्ण को बाणों से ढक दिया, फिर कर्ण ने उस को बाणों से काटा और उस के धनुष की प्रत्यंचा भी काटी तदनन्तर कर्ण ने ऐसे बाण खाये कि अचेत हो कर गिर पड़ा, शल्य उस की यह दशा देख कर रथ को दूर ले गिया, दुर्योधन ने अपने भाईयों को कर्ण की रक्षा के लिये भेजा कौरवी सेना की बहुत दुर्दशा हुई ॥

फिर भीमसेन आये हुये धृतराष्ट्र के पुत्र को मारने लगा। पन्द्रह रथ औ पचास हाथी तो वहीं चित्त हुये, फिर विवित्सु मारा गया, फिर भीमसेन ने विकट औ सह के प्राण लिये, क्राथ को भी यमपुर को भेजा, नन्द और उपनन्द भी स्वर्ग को गये ॥

यह देख कर परम दुःखित होकर कर्ण फिर सामने आये, दोनों वीर फिर परस्पर विषैले बाणों से घायल करने लगे, फिर कर्ण ने भल्ल से भीमसेन को पीड़ामान करके उसके धनुष को काटा, भीम ने दूसरा धनुष लेकर कर्ण को

बाणों से आच्छादित कर दिया, फिर दोनों का घोर युद्ध हुआ भीमसेन का सारथी मारा गया और धनुष कट कर शीघ्र ही विरथ हुआ ॥

तब भीमसेन गदा लेकर रथ से कूदा, उसने हाथियों के दलों को शीघ्र ही नष्ट किया, तब शकुनि के बावन हाथी मारे। फिर तीन सहस्र अश्वारूढ़ सामने आये और भीमसेन की गदा से मारे गये ॥

इधर कर्ण ने युधिष्ठर को पीड़ित किया उसके सारथी को गिराया, तब युधिष्ठर युद्ध से भागा। कर्ण उसके पीछे चला। भीमसेन यह देख कर फिर कर्ण के सामने आया, फिर सात्यकी उसके साथ लड़ने लगा। दोनों वीरों का अपूर्व युद्ध हुआ, पाण्डवी और कौरवी सेना प्राणों को छोड़ कर इस प्रकार लड़ी कि पहिले कभी इस प्रकार का युद्ध न हुआ था ॥

सताईसवां अध्याय

—:-o-:—

अर्जुन का संसप्तकों से युद्ध, संसप्तकों का मारा जाना, अन्य २ वीरों का परस्पर युद्ध ॥

अर्जुन संसप्तकों को पाकर पृथक लड़ रहा था, गोपाल और नारायण नाम दल उसको चारों ओर से घेरे हुये थे उन्हों ने आगे बढ़ २ कर अर्जुन को बहुत पीड़ित किया। अर्जुन अनेक वीरों को मारता था, परन्तु वह द्विगुणित वेग

से बार २ उसके सन्मुख आते थे और नहीं हटते थे, यहां तक कि उन्हों ने एक बार अर्जुन को रथ पर पकड़ ही लिया, तब तो श्रीकृष्ण को बहुत क्रोध आया और वह आप शस्त्र लेकर लड़ने लगे, युद्ध का सारा बल उन की ओर झुका संसप्तकों ने निरुत्साह होकर अर्जुन को छोड़ा और श्रीकृष्ण पर टूट पड़े, तब अर्जुन ने श्री कृष्ण को संसप्तकों से ग्रसा हुआ देख कर बाण छोड़ फिर उस ने नागास्त्र को प्रकट किया सारे संसप्तक नगो से बांधे गये और निश्चेष्ट होकर निर्जीव मूर्तियों के समान खड़े रहे, अर्जुन ने बहुतों को मारा ॥

यह देख कर सुधर्मा आगे बढ़ा, उस ने गरुड़ास्त्र को प्रकट किया, तब तो अनेक गरुड़ दिखाई दिये और सर्पों को मारने लगे, बहुत सर्प भय भीत हो कर भागे। इस प्रकार से मुक्त हुये २ बीर द्विगुणित बल से लड़े, तब सब महारथी एक दूसरे से जुट गये। बहुत सी पाण्डवी सेना हार कर भागी, अश्वत्थामा ने सात्यकी के सारथी को मारा, कृपाचार्य ने सुकेत को यम पुर में भेजा, युधिष्ठिर ने अश्वत्थामा पर बाण बरसाये, अश्वत्थामा के बाणों से सब पाण्डवी सेना व्यथित हुई ॥

तब युधिष्ठर ने कहा कि हे आचार्य पुत्र ! तुम ब्राह्मण हो कर मुझी को मारना चाहते हो, तुम में न तो स्नेह है न उपकार को स्मरण करते हो, ब्राह्मण हो कर न वेद पढ़ते हो न यज्ञ करते हो, देखो मैं तुम्हारे देखते ही सब कौरवी सेना को भस्म करूंगा, अश्वत्थामा ने कुछ उत्तर न दिया

और बाणों की वर्षा करता रहा, तब अश्वत्थामा के हाथ से तीरों से ढका हुआ युधिष्ठर दूर हट गिया, तब अश्वत्थामा भी लौटा युधिष्ठर कौरवी सेना के सुन्मुख गिया ॥

अठाईसवां अध्याय

—:०:—

पाण्डवों और कौरवों का घोर युद्ध । दुर्योधन का नकुल और सहदेव से युद्ध, धृष्टद्युम्न और दुर्योधन का युद्ध, दुर्योधन का हारना । कर्ण का पांडवी योधाओं को मारना । अर्जुन का वहां पहुंचना ॥

तब दुर्योधन अपनी सेना को इकट्ठा कर के फिर आया । कर्ण ने पाण्डवी सेना की प्रलय कर दी । भीमसेन ने कौरवी सेना को यमपुर भेजा, हजारों पांचाल कैकय और सृंजी मारे गये । इस के पीछे दुर्योधन ने सहदेव की ध्वजा को काटा फिर उस ने नकुल को घायल किया, दोनों पाण्डव दुर्योधन पर टूट पड़े । फिर दुर्योधन ने उन दोनों को रोका, महारथियों ने नकुल और सहदेव को मृत्यु के मुख में फंसा हुआ माना, धृष्टद्युम्न शीघ्र वहां पहुंचा, दुर्योधन और धृष्टद्युम्न खूब लड़े, धृष्टद्युम्न का धनुष काटा गिया । उस ने दूसरा लिया वह भी काटा गया फिर क्रोध युक्त धृष्टद्युम्न ने नया धनुष ले कर कौरव को घायल किया और उस को विरथ किया ॥

दुर्योधन के भाई यह देख कर शीघ्र उस के पास पहुंचे और उस को दूसरे रथ पर चढ़ा कर दूर ले गये, फिर कर्ण और धृष्टद्युम्न आपस में लड़े, पांचालों ने कर्ण को घेर लिया व्याघ्रकेतु, सुशर्मा, चित्र, उग्रायुध, जय, शुक्ल, रोचमान, सिंहसेन और दुर्जय ने उस को चारों ओर से घेरा, कर्ण के प्रहारों से अनेक पाण्डव वीर मारे गये, फिर उस ने जिष्णु, जिष्णुकर्मा देवापी, भद्र, दण्ड, चित्र, चित्रायुध, हरि, सिंहकेतु रोचमान् और शलभ आदि चंदेरी देश के महारीथयों को मारा, कहते हैं कि यह कर्म कर्ण का द्रोणाचार्य और भीष्म से भी बढ़ कर हुआ, उस ने पांडवों को ऐसे मारा जैसे कि सिंह वन में फिर कर मृगों को मारता है, पाडवी सेना में हाहाकार मचा ॥

यह देख कर अर्जुन ने श्री कृष्ण को कहा कि हे महाबाहो ! कर्ण हमारी सेना को नष्ट कर रहा है, मेरा विचार है कि मैं उस के सामने जाऊं, आप मेरे रथ को वहां ले चलिये तब श्री कृष्ण ने अर्जुन के रथ को आपकी सेना की ओर बढ़ाया, उस को देख कर कौरवी सेना भागी, तब सुदक्षिण का छोटा भाई अर्जुन से लड़ने लगा और अर्द्ध चन्द्रों से मारा गया, तब काम्बोज देशी यवन देशी और शक देशी अर्जुन से लड़े परंतु हार गये ॥

इस के पीछे अश्वत्थामा सामने आया उस ने श्री कृष्ण और अर्जुन को तीरों से ढक दिया, श्री कृष्ण ने अर्जुन की यह दशा देख कर पूछा कि हे अर्जुन तेरे धनुष को क्या हुआ तेरी मुट्ठी तो नहीं गिर गई ? क्या अश्वत्थामा इतना बलवान

है ? याद रखो यह समय बड़ा कठिन है ? गुरु पुत्र समझ कर अश्वत्थामा को छोड़ना ठीक नहीं, तब अर्जुन धनुष लेकर उठा उस ने अश्वत्थामा पर बहुत तीरों की बौछाड़ की अश्वत्थामा अचेत होकर ध्वजा की यष्ठि के आश्रय बैठ गया तब सारथी उस को दूर लेकर चला गया फिर कौरवी सेना का घोर नाश वर्तमान हुआ युधिष्ठिर हट कर एक कोस के अन्तर पर जा ठहिरा ॥

उनतीसवां अध्याय

—:०:—

दुर्योधन का अपनी सेना को उत्साह देना, अश्वत्थामा का धृष्टद्युम्न को मारने का प्रण करना, धृष्टद्युम्न की पराजय, अर्जुन का सहायता देकर धृष्टद्युम्न को छुड़ाना श्रीकृष्ण का युधिष्ठर की दुर्गति का वर्णन करना, अर्जुन का युधिष्ठर की सहायता करना ॥

इस के उपरान्त दुर्योधन ने शल्य आदि सब राजाओं समेत कर्ण को कहा कि हे वीरो! दैव इच्छा से स्वर्ग के द्वार की भांति यह युद्ध वर्तमान हुआ है, क्षत्रियों को यह युद्ध उत्तम भाग्य से प्राप्त हो सकता है, इस से लाभ उठाओ और शत्रुओं को मार कर पृथ्वी का राज्य भोगो अथवा मर कर इस स्वर्ग के खुले द्वार में प्रवेश करो ॥

सब श्रेष्ठ क्षत्रिय दुर्योधन के इस शब्द को सुन कर गजते हुये उछले और सिंह नाद करने लगे, अश्वत्थामा ने कहा कि धृष्टद्युम्न ने मेरे पिता को छल से मारा है मैं उस को मार कर पिता की ओर से अनृण हूंगा. आप सब के सामने प्रतिज्ञा करता हूं यदि यह प्रतिज्ञा पूरी न हो तो मैं स्वर्ग को भी नहीं पा सकता, जो कोई धृष्टद्युम्न का रक्षक होगा वह भी मुझ से मारने के योग्य है, यह सुन कर सब कौरवी सेना पाण्डवों के सन्मुख गई, उधर से पाण्डव भी बड़े वेग से आये और बड़ा भय कारी संग्राम प्रवृत्त हुआ बड़े २ योधा मारे गये और महा प्रलय प्रवृत्त हुई ॥

तब अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा कि हे महाबाहु ! मैं युधिष्ठर को नहीं देखता हूं, मुझे उसकी पताका दिखाई नहीं देती, देखो कर्ण पाण्डवी सेना को मार रहा है कौरव कैसे नाद कर रहे हैं आप मेरे रथ को युधिष्ठर के पास ले चलो श्रीकृष्ण बोले बहुत अच्छा, तब उन्हों ने रथ को युधिष्ठर की ओर चलाया और रास्ते में सेना की महाप्रलय के विषय में बातें की श्रीकृष्ण ने अर्जुन को योधाओं के महा संहार को बताया और इस प्रकार बातें करते हुये चले, और युधिष्ठर के पास पहुंचे, बड़े वीर कर्ण को देखा, भीमसेन क्रोध युक्त को भी देखा, धृष्टद्युम्न को भी जो युद्ध में शत्रुओं को भगा रहा था देखा ॥

संजय ने कहा कि हे राजन् ! आप के दुर्मन्त्र से फिर वहां सिंह नाद होने लगे और सब योधा तीरों से कट २ कर मरने लगे ॥

तब धृष्टद्युम्न और महारथी पांडव राजाओं समेत कर्ण के सन्मुख गये और रोम हर्षण युद्ध प्रवृत्त हुआ, धृष्टद्युम्न ने कर्ण को घायल किया, कर्ण ने नौ बाणों से धृष्टद्युम्न को पीड़ित किया और उस के धनुष को तोड़ा, धृष्टद्युम्न ने नया धनुष लिया और कर्ण को बाणों से ढक दिया, कर्ण ने उसके बाणों को फिर काट कर धृष्टद्युम्न पर बाण बरसाये, फिर सात्यकी धृष्टद्युम्न की सहायता को आया तब बड़ा घोर युद्ध जारी हुआ इतने में अश्वत्थामा भी आन पहुंचा और धृष्टद्युम्न को देख कर कहने लगा कि हे ब्राह्मण के मारने वाले! ठहिर, अब मुझ से बच कर कहां जायगा यह कह कह शीघ्रता से बाण छोड़ने लगा धृष्टद्युम्न ने अपनी मृत्यु को निकट माना और तीव्रता से अश्वत्थामा के सन्मुख गया, अश्वत्थामा ने कहा कि अब तुम्हारी मृत्यु आपहुंची तुम अर्जुन से अरक्षित हो और छूटते नहीं तुम अवश्य मारे जाओगे, धृष्टद्युम्न ने कहा कि मेरी खडग तेरे प्रश्न का उत्तर देगी, तुम्हारा पिता और तुम नाम मात्र ब्राह्मण थे तुम्हारा पिता तो मारा गया अब तुम इसी प्रकार शीघ्र ही उस के पास जाओगे ॥

तब धृष्टद्युम्न ने तीक्ष्ण शायकों से अश्वत्थामा को ढक दिया। फिर दोनों वीर आपस में रोमहर्षण युद्ध करने लगे अश्वात्थामा ने उस के रथ को तोड़ा उस के शस्त्रों को काटा और उस के सारथी को मार कर विरथ किया तब वह खड्ग लेकर रथ से उतरा, अश्वत्थामा उस पर झपटा और चाहता था कि उस को पकड़ले जब कि श्रीकृष्ण ने दूर

से उस की यह दशा देख कर अर्जुन को वहां पहुंचाया उनको आते देख कर अश्वत्थामा धृष्टद्युम्न को शीघ्रता से यम पुर भेजने लगा, परन्तु इतने में अर्जुन वहां पहुंच गया। अश्वत्थामा को अपने पिता का शत्रु छोड़ना पड़ा, वीर सहदेव उस को रथ पर बिठा कर युद्ध भूमि से बाहिर लेगया, अर्जुन और अश्वत्थामा आपस में लड़ते रहे, अन्त को अश्वत्थामा बाणों से पीड़ित होकर रथ पर गिर, पड़ा कर्ण उस को व्याकुल देख कर युद्ध भूमि से दूर लेगया॥

पाण्डवों ने प्रसन्नता के बाजे बजाये, तब अर्जुन श्रीकृष्ण को कह कर संसप्तकों की ओर चल पड़ा। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा कि हे अर्जुन धृतराष्ट्र के पुत्रों ने महाराज युधिष्ठर का बहुत पीछा किया है। देखा दुर्योधन उस के पीछे गया है। कौन दुर्योधन के शायकों को सह सकता है। उनको आशा है कि युधिष्ठर को पकड़ ले। मैं धर्मराज की कुशल नहीं देखता हूं मेरा विचार है कि वह मारे गये, उन के रथ की पताका दिखाई नहीं देती। वीर दुर्योधन, अश्वत्थामा, कृपाचार्य और कर्ण के बाणों के वेग पर्वतों को भी फोड़ने वाले हैं, विशेष कर के कौरव जानते हैं कि युधिष्ठर पराजय हो चुका है, और उसको प्रकृति धर्म नियम में अधिकतर है युद्ध में बहुत कम है, क्योंकि भीमसेन शत्रुओं सिंह नादों को सह रहा है, इस से मैं अनुमान करता हूं कि युधिष्ठर जीता नहीं, निश्चय सब पाण्डवों के देखते हुये युधिष्ठर मारा गया है। देखो कर्ण पाण्डवों की सेना का कैसे मार रहा है, हे पाण्डुनन्द

यह आप के रथी भागे हुये आते हैं। यह हाथी कर्ण से पीड़ित हो कर शब्द करते हैं, हे भारत! कर्ण की हाथि चिन्ह रखने वाली ध्वजा को देखो, यह कर्ण सहस्रों बाणों की वर्षा करता हुआ आप की सेना को मारता है, देखो इस ने सब सेना को कहा है कि सावधानी से पाण्डवों को मारो, हे अर्जुन! अपनी सेना की रक्षा करो और धर्म राज को बचाओ॥

यह सुन कर अर्जुन व्यथित चित हुआ, तब श्री कृष्ण ने कहा कि हे अर्जुन! मत डरो धर्म राज कुशल पुर्वक हैं, हमारी सब सेना कौरवों को मार रही है, भीम सेन ने हाथी दलों को मार डाला है सब कौरव व्यथित हो कर भाग रहे हैं, भीमसेन से पराजित महारथी धृतराष्ट्र के पुत्रों को देखो, वह निषाद का पुत्र मारा गिया, वह भीमसेन ने उस की दोनों भुजायें काटीं, वह उस का शिर कटा, वह दुर्योधन की तीन अक्षोहिणी सेना घायल और रोकी गई, तब अर्जुन ने संसप्तकों को मारा और दशों दिशा में भगाया तब उस ने टेढ़ पर्व वाले बाणों से कौरवों की चतुरंगिणी सेना को मारा॥

तीसवां अध्याय

कर्ण का शिखण्डी से युद्ध, धृष्टद्युम्न का दुशासन से युद्ध, उल्लूक और सहदेव का युद्ध, सात्यकी और शकुनी का युद्ध, युधामन्यु

और कृपाचार्य का युद्ध, दुर्योधन और कर्ण का युधिष्ठर को पकड़ने का विचार, युधिष्ठर का भागना ॥

कर्ण ने भागती हुई कौरवी सेना को ठहिराया और पाण्डवों के सन्मुख हुआ, भीमसेन, प्रभद्रक, सात्यकी, शिखंडी और जनमेजय उस के सन्मुख आये, धृष्टद्युम्न दुशासन को रोकने लगा, सहदेव उल्लूक से लड़ने लगा, अश्वत्थामा अर्जुन के सन्मुख गया, शिखण्डी ने निर्भयता से घूमने वाले कर्ण को रोका, कर्ण ने उस की भृकुटियों में बाण मारे, शिखण्डी ने नब्बे बाणों से कर्ण को घायल किया, कर्ण ने शिखंडी को विरथ किया शिखण्डी ने कर्ण पर शक्ति छोड़ी, कर्ण ने तीन बाणों से शक्ति को काट कर शिखण्डी को घायल किया, तब शिखण्डी युद्ध को छोड़ कर चला गया, कर्ण ने पांडवी सेना को बहुत मारा ॥

तब धृष्टद्युम्न ने बाण मारे और उस को छाती पर घायल किया दुशासन ने उस की बाईं भुजा को छेदा, धृष्टद्युम्न ने उस के धनुष को काटा, हंसते हुये दुशासन ने शीघ्र ही दूसरा धनुष लिया औ धृष्टद्युम्न की छाती और भुजाओं में घायल कर के चारों ओर से रोका, इस पर सब लोग बड़ा आश्चर्य करने लगे, तब पांडव महारथी अपने सेनापति की रक्षा को दौड़े, तब बड़ा युद्ध प्रवृत्त हुआ ॥

वृषसेन ने पांच लोहे के बाणों से नकुल को रोका, नकुल

ने नाराचों से उस का हृदय में पीड़ामान किया, वृषसेन ने बीस बाणों से नकुल को पीड़ामान किया तब उन पुरुषोत्तम का घोर युद्ध हुआ जिस से सब सेना छिन्न भिन्न होगई, कर्ण ने अपनी सेना को रोका, वृषसेन ने भी नकुल को छोड़ कर अपनी सेना को रक्षित किया, फिर उल्लूक और सहदेव भिड़ने लगे, सात्यकी ने शकुनि को छेदा, शकुनी के घोड़े मारे गये और वह उल्लूक के रथ पर सवार हुआ, तब सात्यकी ने कौरवी सेना को बहुत मथन किया, दुर्योधन और भीमसेन आपस में लड़े, कृतवर्मा ने उत्तमौजा को पीड़ामान किया और शीघ्र ही भाग गया दुशासन और शकुनी ने हाथियों की सेना से भीमसेन को घायल किया, भीमसेन दुर्योधन को छोड़ कर हाथियों पर आटूटा, इस प्रकार बहुत घोर युद्ध होता रहा ॥

इसी अवसर में अर्जुन वहां आया, दुर्योधन उस से लड़ने लगा और धर्मराज युधिष्ठर को देख कर उस की ओर झुका, दुर्योधन ने बीस भल्लों से युधिष्ठर को घायल किया, उस को पकड़ने की इच्छा से कौरव दौड़े, पाण्डवों ने कौरवों के दुष्ट विचार को जान लिया, सब महारथी युधिष्ठर की ओर भागे, नकुल सहदेव और धृष्टद्युम्न एक अक्षौहिणी सेना लेकर आये। कर्ण ने उन आते हुये महारथियों को रोका, सहदेव ने दुर्योधन को घायल किया, उस को रुधिर बहने लगा, यह देख कर कर्ण दौड़ा, उस ने शीघ्र ही अस्त्रों को प्रकट किया, जिस से युधिष्ठर की सेना भागी, युधिष्ठर ने आगे बढ़ कर रोका और जहां तहां कौरवों का नाश किया, क्रोध युक्त कर्ण

ने भल्ल अर्द्धचन्द्र और वत्सदन्त से युधिष्ठर को घायल किया, तब युधिष्ठर रथ पर बैठ कर युद्ध से चल निकला, फिर भीम और दुर्योधन परस्पर आमने सामने हुये ॥

कर्ण ने युधिष्ठर को देख कर उस का पीछा किया, नकुल और सहदेव उस की रक्षा को बढ़े परन्तु कर्ण से बहुत पीड़ित हुये, कर्ण ने युधिष्ठर को पकड़ना चाहा, परन्तु युधिष्टर भाग गिया, सहदेव और नकुल उस की रक्षा में भागे, कर्ण भी बाणों को फेंकता पीछे चला, नकुल के सारथी और घोड़े मारे गये, तब वह सहदेव के रथ में चला गिया, कर्ण तीर मारता और घायल करता पीछे से चला, युधिष्ठर के शरीर में तीक्ष्ण भल्लों ने प्रवेश किया, जब महा व्याकुल नकुल और सहदेव युधिष्ठर के साथ जारहे थे, तो शल्य को उन पर दया आई, अपने भानजों की यह दशा देख कर उस ने कर्ण से कहा कि विरथ हुये और भागते हुये शत्रुओं को क्यों मारता है ? चल अर्जुन से युद्ध कर, परन्तु कर्ण न हटा और युधिष्ठर को घायल करता रहा ॥

शल्य फिर न रह सका और कर्ण से कहने लगा कि हे यशस्वी, तेरी प्रतिज्ञा अर्जुन से युद्ध करने की है, तू वृथा युधिष्ठर को क्यों मारना चाहता है देखो भीमसेन दुर्योधन को पीड़ित कर रहा है चलो उस की सहायता करो। देखो भीमसेन से पीड़ित वह दुर्योधन की सेना भागी जाती है ॥

कर्ण को दुर्योधन की यह दशा सुन कर लौटना पड़ा, युधिष्ठर अपने डेरे में पहुंच कर शय्या पर लेट गया,

उस के बाण निकाले गये। और यथार्थ चकित्सा कीगई युधिष्ठर ने नकुल और सहदेव को कहा कि जाओ भीमसेन की रक्षा करो ॥

इकतीसवां अध्याय

—:o:—

अर्जुन और अश्वत्थामा का युद्ध. अश्वत्थामा की पराजय । कर्ण का भार्गवास्त्र प्रकट करना और पांचालों को मारना अर्जुन का युधिष्ठर को देखने के लिये डेरे पर जाना ॥

तब अर्जुन और अश्वत्थामा आपस में भिड़े, अश्वत्थामा ने महा क्रोधी होकर मुख फाड़े हुये महा काल के समान पांडवी सेना को छिन्न भिन्न कर अर्जुन को बाणों से ढक दिया, अर्जुन ने अस्त्रों को प्रकट किया, अश्वत्थामा ने उन्हीं अस्त्रों को रोका और वसुदेव को दाहनी भुजा पर छेदा, तब अर्जुन के बाणों से अश्वत्थामा के घोड़े मारे गये, अर्जुन ने बहुत रथियों को मारा, अवश्त्थामा ने परिघ चलाई, अर्जुन ने उस को रास्ते पर ही काटा, अश्वत्थामा ने इंद्र जाल फैलाया, अर्जुन ने उस जाल को काटा और शत्रु के घोड़ों की वाग भी काटी, तब घोड़े रथ को लेकर भागे, कौरवी सेना भागी, कर्ण ने बहुतेरा ठहिराया परन्तु न ठहिरी, तब दुर्योधन नें कर्ण को कहा कि हे वीर! तुम्हारी विद्य-

मानता मैं भी यह सेना क्यों भागती है, हे महा बाहू! उचित कर्म करो, कर्ण बोला कि हे राजन्! मेरे भुज बल को देखो, मैं पाण्डवों समेत सब पांचालों को मारता हूं॥

तब उस ने भार्गव अस्त्र को प्रकट किया जिस से लाखों तीर छुटे, पांचाल हाहाकार करने लगे, अकेला कर्ण पांडवी सेना का नाश करता हुआ, निर्धूम अग्नि के समान वर्तमान हुआ, भयभीत पांचाल इधर उधर भागने और शब्द करने लगे उन को देख कर पशु पक्षी भी भय से कांपने लगे॥

अर्जुन ने यह देख कर श्री कृष्ण से कहा कि हे महाबाहु! भार्गव अस्त्र के पराक्रम को देखो, कर्ण वार २ मेरी ओर देखता है, मैं इस से भागने वाला नहीं हुं क्यों मैं इस से युद्ध न करूं श्री कृष्ण बोले कि हे अर्जुन! धर्मराज युधिष्ठर कर्ण से अत्यन्त घायल किया गया है वह इस समय डेरे में पड़ा है, पहिले जाकर उस को देख कर पीछे आकर कर्ण से लड़ना, पहिले जाकर धर्मराज को आश्वासित करो॥

श्री कृष्ण का मत था कि जब कर्ण थका हुआ होगा। उस समय उस से लड़ना उचित है, इस लिये वह रथ को उड़ा कर धर्मराज की ओर चल पड़ा॥

बतीसवां अध्याय

—:०:—

अर्जुन का भीमसेन को युद्ध में नियत करके

धर्मराज का समाचार लेने जाना, युधिष्ठर का समझना कि कर्ण मारा गया है, अर्जुन के बतलाने पर युधिष्ठर का बहुत क्रोध करना और अर्जुन को झिड़कना ॥

तब अर्जुन भीमसेन के पास आये और कहने लगा कि हे महाबाहु राजा युधिष्ठर कहां है, भीम बोला कि कर्ण से पीड़ित होकर वह युद्ध से हट गया है और घावों को रखता हुआ डेरे में गया है, अर्जुन ने कहा अच्छा तुम जाकर उस की खबर लो मैं सेना को रोकता हूं, भीमसेन बोला कि यदि मैं चला गया तो लोग समझेंगे कि यह हार गया, इस लिये मेरा जाना ठीक नहीं आप चले जायें, अर्जुन बोला कि मैं संसप्तकों को कैसे छोड़ सकता हूं, भीम ने कहा कि मैं संसप्तकों को रोकूंगा, अर्जुन ने कहा कि बहुत अच्छा, अर्जुन भीमसेन को युद्ध में नियत करके युधिष्ठर के डेरे की ओर चला ॥

युधिष्ठर अर्जुन और श्रीकृष्ण को देख कर बड़ा प्रसन्न हुआ और समझा कि यह दोनों कर्ण को मार कर आये हैं अर्जुन ने पूछा कि कहिये क्या वृत्तान्त है, युधिष्ठर ने कहा कि हे वीर ! मुझको न द्रोणाचार्य ने भीष्म ने इतना दुःख दिया है, जितना कर्ण ने, बहुत अच्छा हुआ कि आपने उसको मार कर मेरे दुःख को दूर किया है, यह कर्ण धृतराष्ट्र के पुत्रों का सहायक सब कौरवी सेना का रक्षक और वृद्धि कर्ता, धनुष धारी घृणेया वा सुपेया से रक्षित परशुरामजी से अस्त्रों का

सीखने वाला, बड़ा पराक्रमी, दुर्जय संसार में अद्वितीय महारथी सेना के मुख पर जाने वाले शत्रुओं का मारने वाला, सब शस्त्रों में कुशल और हमारी सेना को मर्दन करने वाला था प्रारब्ध से ही तुम ने उसको मारा है, यम राज के समान उस कर्ण ने मेरे साथ घोर युद्ध किया है। मेरी ध्वजा काटी मेरे सारथी को मारा, सात्यकी के देखते हुये मेरे घोड़ों को मारा। फिर उसने बहुत कठोर और असभ्य वचन कहे ॥

हे अर्जुन ! जिस से भयभीत हो कर तेरह वर्ष तक मैं ने न रात्रि को निद्रा ली न दिन को सुख पाया, उसी की शत्रुता से भस्म हो रहा हूं। मैं जागते, सोते, उठते, बैठते कर्ण को ही देखता हूं। मैं उस यम रूप कर्ण से बहुत भयभीत हूं। उस के जीते मेरा जीना कठिन है। हे अर्जुन ! पराक्रम में यम राज और युद्ध में इन्द्र के समान वह कर्ण कैसे मारा गिया। मुझ को आद्योपान्त सब वृत्तान्त सुनाओ। दुर्योधन सदैव उसको तेरा मारने वाला मानता था, कहो वह कैसे मारा गिया। उस दुर्बुद्धि ने द्रौपदी का निरादर किया भीष्म पितामह की निन्दा की और हम सब को दुःख दिया कहो अर्जुन तूं ने उस के शिर को कैसे काटा ॥

यह सुन कर अर्जुन बोला कि अश्वत्थामा मुझ से लड़ने आया था, उस ने मुझ बहुत पीड़ित किया, आठ बैल रखने वाले आठ सौ छकड़े उस के तीरों को लिये फिरते थे। मैंने उस को तीस बाणों से पराजित किया और वह कर्ण की सेना में चला गिया फिर कर्ण अपनी सेना को पराजय देख

कर पचास रथी लेकर मेरे सामने आया मैंने उन रथियों को मारा और युद्ध का भार भीमसेन को सौंप कर आप का समाचार लेने आया हुं। मैंने सुना है कि कर्ण ने आप को बहुत पीड़ित किया है। हमारी सेना में वास्तव में अब कोई ऐसा योधा नहीं जो कर्ण का सामना कर सके, अब मैं कर्ण से लड़ूंगा। युधामन्यु और उत्तमौजा यह दोनों पृष्ठ से मेरी रक्षा करें। अब आप मेरा और कर्ण का युद्ध देखेंगे, यदि मैं न मारूं तो प्रतिज्ञा करने वालों की जो घोर गति होती है उस को पाऊं। मेरे आगे भीमसेन धृतराष्ट्र के पुत्रों को मारेगा, तब हे राजन्! मैं कर्ण को सेना समेत मारने में समर्थ हुंगा॥

यह सुन कर युधिष्ठर के क्रोध की अग्नि बड़ी प्रचण्ड हुई। उस ने अर्जुन को धिक्कार किया और कहा कि तू भी कर्ण से प्राण बचाने के लिये यहां भाग आया है, तेरी प्रतिज्ञा कहां गई? इसी हेतु से तुम ने भीमसेन को वहां छोड़ा है? तू ने द्वैत वन में कर्ण को मारने का प्रण किया था, परन्तु अब उस को रण में छोड़ कर कैसे भाग आया है? यदि तू ऐसी प्रतिज्ञा न करता तो हम भी समय के अनुसार जो देखते करते। इस प्रकार युद्ध भूमि रूपी शिला पर न पसे जाते। तुम ने हमारी सब आशाओं को निष्फल कर दिया है, हमारे तेरह वर्षों के दुःख निष्फल हुये तुम्हारे जन्म पर आकाश वाणी हुइ थी कि यह बालक शत्रुओं का नाश करेगा निश्चय से देवता लोग भी झूठ बोलते हैं॥

हे अर्जुन! हनुमान की ध्वजा रखने वाले शुभ रथ पर स्वार हो कर स्वर्ण मयी वेष्टन से अलंकृत खडग को और गांडीव धनुष को रख कर केशवजी के साथ रथ पर स्वार तुम कैसे डर कर भाग आये। यदि तुं उसको नहीं मार सक्ता तो यह धनुष किसी दूसरे को दे दे अब यह लोक हम को स्त्रियों और पुत्रों से रहित घोर नरक में पड़ा हुआ देखेगा। यदि तू कुन्ति के गर्भ में उत्पन्न होता, तो इस दुःख में क्यों पड़ता, गाण्डीव धनुष को और तेरे भुज बल को धिक्कार है! तेरे असंख्य बाणों को भी धिक्कार है!! तेरी वानर ध्वजा को भी धिक्कार है!!! और अग्नि के दिये हुये तेरे रथ को भी धिक्कार है!!!!

तेतीसवां अध्याय

—:o:—

अर्जुन का क्रोध से खडग उठाना और युधिष्ठर को मारने की आशा करना। श्री कृष्ण का रोकना॥

अपने भाई के इन वचनों को सुन कर अर्जुन को बहुत क्रोध आया। उस ने युधिष्ठर के मारने के लिये खडग उठाई यह देख कर श्री कृष्ण जी बोले कि हे अर्जुन! क्या बात है? तुझ से लड़ने वाला मैं यहां किसी को नहीं देखता हूं। भीमसेन ने कौरवों को घेर लिया है, तुम जो भाई को मिलना

उचित था । उस को तुम ने कुशल पूर्वक देखा है । यदि भूल से यह कर्म हो गया तो इस में क्या दोष है ? हे कुन्ति के पुत्र तुम को कौन मार सकता है ? तुम क्यों खडग को पकड़ते हो ? तुम क्या करना चाहते हो ॥

यह सुन कर अर्जुन ने कहा कि हे गोविन्द इस गांडीव धनुष को किसी और को देदो । जो ऐसा कहता है मैं उस के शिर को काटूंगा, यह मेरा अपंशुगुत है, इस लिये मैं इस राजा को मारूंगा । इसी लिये मैंने खडग पकड़ा है, अथवा जो आप आज्ञा दें वही करूं, यह सुन कर श्री कृष्ण ने बड़े धिकार देकर अर्जुन को कहा कि हे अर्जुन । मैं समझता हूं कि तुम ने वृद्धों की सेवा नहीं की नहीं ता ऐसी चेष्टा न करते, तुम्हारा इच्छा समय के अनुसार नहीं धर्म के प्रकारों को जानने वाले पुरूष ऐसा नहीं करते, उचित और अनुचित कर्म किसी प्रकार से भी आनन्द पूर्वक जानने के अयोग्य नहीं है । यह सब शास्त्र कहते हैं, तुम उस का विचार नहीं करते हो तुम धर्म के अभ्यासी हो कर भी पाप पुण्य कारी कर्म नहीं जानते हो हे तात ! जीवों का न मारना ही उत्तम धर्म है यह मेरा मत है, मिथ्या वाल हो परन्तु हिंसा कभी न करो ॥

देखो युद्ध न करने वाले, युद्ध से मुख मोड़ने वाले, भागने वाले, घर में आश्रय लेने वाले शत्रु, अथवा हाथ जोड़ने वाले शरणागत और मदोन्मत्तों के मारने को उत्तम लोग अच्छा नहीं समझते, तेरे बड़े भाई में यह सब गुण हैं, हे अर्जुन ! धर्म की कठिनता से मिलने वाली सूक्ष्म गति को अच्छे प्रकार से

धारण न कर के तू किस हेतु से अपने गुरु रूप भाई को मारने की चेष्टा करता है, आश्चर्य की बात है कि बड़ा ज्ञानी मनुष्य भी पुण्य को ऐसे प्राप्त करता है जैसे बलाक नाम बधिक ने व्याघ्र के मारडालने में पुण्य प्राप्त किया था । इसी प्रकार अज्ञानी और मूर्ख धर्म का अभिलाषी हो कर बहुत बड़े पाप को करता है जैसे कौशिक ने किया, अर्जुन ने पूछा कि बलाक और कौशिक का वृत्तान्त क्या है ॥

श्रीकृष्ण बोले कि बलाक नाम बधिक बड़ा ज्ञानी था वह केवल अपने कुटंब के लिये मृगों को मारता था, एक दिन बहुत फिरने पर भी उस को कोई मृग न मिला तब उस ने एक व्याघ्र देखा कि जिस की आंखे न थी । बलाक ने उसी को मारा, देवता बड़े प्रसन्न हुये और वह स्वर्ग को चला गिया. वास्तव में उस व्याघ्र ने सब जीवों के नाश के लिये वर दान लिया हुआ था और इसी लिये वह अन्धा हो गिया था बलाक ने उस को मार कर धर्म किया ॥

कौशक ब्राह्मण बड़ा तपस्वी और सत्यवक्ता था, जिस वन में वह रहता था, बहुत से लोग चोरों के भय से वहां जा रहे एक दिन रात को चोरों ने आकर पूछा कि हे ब्राह्मण ! सत्य २ कहिये कि आपने बहुत से मनुष्यों को देखा है कौशिक के बताने पर चोरों ने उन मनुष्यों को मार दिया, इस से कौशिक नरक का भागी हुआ ॥

इस लिये हे अर्जुन ! जो हिंसा से रहित होता है वही धर्म है हिंसा के न करने में यदि झूठ भी बोला जाये तो वह सत्य से बढ़

कर दें, हे अर्जुन ! अब कहो तुम्हारा क्या विचार है ? क्या युधिष्ठिर अब भी मारने के योग्य है ॥

अर्जुन बोला कि आप हमारे माता पिता और बांधव हैं, आप जिस प्रकार शिक्षा करें मैं वैसा ही करूंगा, आप मेरे कठिन व्रत को जानते हैं, मैंने प्रतिज्ञा की हुई है कि जो कोई मुझ को कहेगा कि तू यह धनुष किसी दूसरे को देदे मैं उस को हठ से मारूंगा, निष्पाप धर्मराज को मार कर मैं आप शरीर त्याग करूंगा, मैं उस के बिना थोड़ा समय भी जीव लोक में नहीं रह सकता, हे श्री कृष्ण ! आप मुझ को ऐसे उपदेश दें जिस से मेरी प्रतिज्ञा भी न टूटे और काम भी ठीक होजाये ॥

श्री कृष्ण बोले कि हे अर्जुन ! राजा युधिष्ठिर के गूढ़ अर्थ को तुम नहीं समझते हो, उन का अभिप्राय तुम को उत्तेजित करने का है, वह समझता है कि तुम्हारे सिवाय कोई कर्ण को मारने वाला नहीं, इसी से तुम्हारे क्रोध को बढ़ावा है इस लोक में प्रतिष्ठा पाकर प्रतिष्ठित पुरुष जीता है यदि प्रतिष्ठा न हो तो मृतक के समान होता है तुम भी युधिष्ठिर का बातों में अपमान करो वह जीता हुआ ही मृतक होजायगा, हे अर्जुन ! अब इस को प्रणाम करो और क्षमा छुओ, देखो कर्ण बढ़ रहा है, उस को चल कर मारो ॥

चौतीसवां अध्याय

—:०:—

अर्जुन का युधिष्ठिर को कठोर बचन कहना और फिर आप मरने को उद्यत होना श्री, कृष्ण का उपदेश, अर्जुन का अपनी स्तुति करना, युधिष्ठिर का मरने पर उद्यत होना श्री कृष्ण का समझाना, अर्जुन का क्षमा मांगना दोनों भाईयों का फिर शांत होकर एक दूसरे के दोषों को त्यागना, युधिष्ठर का अर्जुन को विजय के लिये आज्ञा देना ॥

तब अर्जुन अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करने के लिये युधिष्ठर को बहुत कठोर बचन बोलने लगा और कहने लगा कि हे राजन्! तुम युद्ध से एक कोश की दूरी पर हो, तुम मुझ को क्या कह सक्ते हो, भीमसेन जो चाहे मुझ को कहे, वह सब शत्रुओं को काल रूप हो कर मारता है, तुम केवल वचन के बली और कठोर हो, यहां शय्या पर आनन्द से लेट कर मेरा अपमान मत करो, मैं तेरे ही निमित्त महारथियों को मारता हूं और अपने प्राणा को संशय में डालता हूं आप महा निष्ठुर प्रकृति हो, आप से हम ने कभी सुख नहीं पाया, केवल पाशा खेल २ कर राज्य का सत्या नाश किया, तुम नीचों से बल पापों को

कर के हमारे द्वारा शत्रुओं का विजय करना चाहते हो, तुम अभी तक अपने दोषों को नहीं त्यागते दुःखों को उत्पन्न कर के अब हम को कठोर वचन सुनाते हो ॥

तुम्हारे ही लिये हमने बहुत निर्दय कर्म किये हैं, कौरवों का मरण तुम्हारे ही कारण उत्पन्न हुआ, तुम्हारे ही कारण हमारा दुःख उत्पन्न होता है, हे राजन्! फिर हम को ऐसा कठोर वचन कभी न कहना, यह कह कर महा दुःखी होकर अर्जुन ने खड्ग निकाली श्री कृष्ण ने फिर पूछा कि कहो अर्जुन अब क्या कारण है? अर्जुन बोला कि हे केशव! अपने बड़े भाई को अपशब्द सुना कर अब मैं जीना पसन्द नहीं करता अब मैं मरना चाहता हूं, श्री कृष्ण ने कहा कि हे अर्जुन! ज्ञानी हो कर मूर्खों की बातें क्यों करता है, तूने अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण की अब यदि तू मरना चाहता है तो अपनी प्रशंसा कर तू आप ही हतात्मा हो जायगा, अर्जुन ने कहा कि बहुत अच्छा ॥

तब अर्जुन ने फिर धर्मराज की ओर देख कर कहा कि हे राजन्! मैं वह वीर हूं कि जिस के समान महादेव के बिना दूसरा कोई नहीं, मैं क्षण भर में सब जगत को मार सक्ता हूं मैंने दिग्पालों समेत पृथ्वी को जीत कर आप से राजसूय यज्ञ कराया पूर्वी पश्चिमी राजा लोगों को मारा संसप्तकों का कुछ शेष रहा है, मैं चाहूं तो कर्ण को अभी मार दूं, मैं उस को मारे बिना कवच को नहीं उतारूंगा ॥

तब उस ने खड्ग को छोड़ कर शिर नीचा करके युधिष्ठिर

के चरणों पर हाथ रख कर कहा कि हे राजन्! प्रसन्न हूजिये मेरे वचनों को क्षमा कीजिये, अब मैं भीमसेन को छुड़ाने जाता हूं, हे राजन्! मेरा जीवन आप के ही निमित्त है, युधिष्ठर विस्तर से उठा और कहने लगा कि हे अर्जुन! मैंने निश्चय से बड़ा दुष्ट कर्म किया है जिस के कारण तुम को यह घोर दुख प्राप्त हूआ है, इस कारण मुझ कुल के नाशक आलसी वृद्धों के अपमान करने वाले अज्ञानी पापी के शिर को अभी काट डाल नहीं तो मैं वन को जाऊंगा, मेरा जीना ठीक नहीं भीमसेन को राज जीत दो, मेरे जीते वह यशस्वी राजा नहीं होसकता, इस से मैं प्राणों को त्याग कर आप लोगों को कष्ट से मुक्त करूंगा, यह कह कर युधिष्ठर विस्तर से उछला और वन को जाने लगा॥ तब श्री कृष्ण ने सारी बात समझाई, अर्जुन ने क्षमा मांगी और युधिष्ठर ने उस का अपराध क्षमा किया, फिर अर्जुन ने युधिष्ठर से विजय के लिये आज्ञा पाई और नया रथ सजवा कर युद्ध में कर्ण को मारने के लिये आया॥

पैंतीसवां अध्याय

—:-०-:—

कर्ण के विजय के निमित्त अर्जुन की यात्रा॥

श्री कृष्ण ने रथ दौड़ाया, घोड़े आंधी के वेग से चले जिस से कौरवी सेना को बड़ा भय उत्पन्न हुआ और सब के मन में यही विचार आया कि आज कर्ण का बचना बहुत

कठिन है। अर्जुन के रथ चलाने पर बहुत भयंकर शकुन हुये,मांस भाक्षक पक्षी रथ के आगे उड़ चले जाते थे, कृष्णजी ने कहा कि हे अर्जुन तुम्हारे समान योधा पृथ्वी पर कोई दिखाई नहीं देता, तिस पर वह गांडीव धनुष तुम्हारे हाथ में है जिसको सृष्टि के आदि में ब्रह्माजी ने उत्पन्न किया था, यह भी सत्य है कि कर्ण बड़ा वीर योधा है, उसके समान शस्त्रवेता और कोई दिखाई नहीं देता, ईश इच्छा से आज तुम्हारे हाथ से कर्ण की मृत्यु होगी, राजा युधिष्ठर का यश और कीर्ति संसार में फैलेगी, युद्ध आरंभ हुये आज सतरह दिन हो चुके। अधिक काल तक लड़ना व्यर्थ है। राजा युधिष्ठर शोक में निमग्न हैं, मैं रथ को कर्ण की ओर ले जाता हूं, तुम सावधान हो कर काम करो ॥

अर्जुन का रथ आगे बढ़ा, कर्ण ने बाण वर्षा आरंभ की, नकुल ने श्रुतवर्मा को घायल किया, धृष्टद्युम्न के तीरों ने कर्ण की कवच को फोड़ा, भीम सेन दुशसान के हाथ से घायल हुआ, उतमौजा ने कर्ण के पुत्र सुषेण को यमपुर भेजा, कर्ण ने उतमौजा ने के घोड़ों को मारा और उसकी ध्वजा को भी काटा, फिर उतमौजा ने कर्ण को घायल किया और आप शिखंडी के रथ पर चला गया ॥

तब कौरवी सेना भीमसेन पर टूट पड़ी, भीमसेन ने दुर्योधन का सामना किया और बहुत से राजाओं का नाश किया और कईयों को मार २ कर भगा दिया, इस समय घोर युद्ध वर्तमान हुआ कि भीमसेन अपनी और पराई सेना को

देखने में सर्वथा अत्यन्त निर्माई देने लगा ॥

तब भीमसेन ने सारथी से पूछा कि राजा युधिष्ठर कहां है, अर्जुन अभी तक क्यों नहीं आया मुझे डर है कि कहीं अर्जुन और युधिष्ठर दोनों मारे न गये हों, हे सारथी! मेरे सब तूणीरों को देख और यह जान कर कहो कि शरादि कितने बचे हैं, वह किस २ प्रकार के हैं और संख्या में कितने हैं ॥

विशोक ने उत्तर दिया कि हे वीर! मार्गण नाम बाणों की संख्या साठ हजार है। क्षुर और भल्ल दश सहस्र हैं। नाराच दो सहस्र, प्रदर तीन सहस्र हैं छः बैलों का छकड़ा इन को कठिनता से खींच रहा है, इन के अतिरिक्त गदा खड्ग और आप के भुजा का बल है जिन का कोई शत्रु पार नहीं पा सक्ता ॥

भीमसेन ने उत्तर दिया कि यदि इस समय अर्जुन आजाता तो बहुत अच्छा होता, मैं सब को मारता एक भी जीता न बचता सारथी ने यह सुन कर कहा कि हे वीर! वह शत्रु संहारी अर्जुन सामने आरहा है, हाथियों की गर्जना सुनिये, उसकी वानर ध्वजा देखिये, वह देखो देवदत्त और पांचजन्य शंखों की ध्वनि से भयभीत होकर कौरवी सेना कैसे भागती है? वह श्री कृष्ण जी का सुदर्शन चक्र हाथियों के शिरों को काट रहा है, इस समय श्री कृष्ण जी का रूप बड़ा शोभायमान है देखो उन के शिर पर जड़ाऊ मुकुट, गले में वैजयन्ति माला और वह स्वभाविक सौंदर्य, मानो साक्षात इन्द्र हैं जो राक्षसों के दलों को मार रहे हैं, थोड़े ही काल में अर्जुन चार सौ हाथियों

और तीन सौ सारथियों को मार चुके हैं दाहिये थोड़े और काल में क्या होता है भीमसेन ने कहा कि हे सारथी! तुम मुझे शुभ समाचार दिया है, इस से मैं तुम को चौदह गांव देता हूं ॥

छत्तीसवां अध्याय

—:०:—

भीमसेन की विजय। दुश्शासन का मारा जाना कौरवों की पराजय ॥

भीमसेन अभी सारथी से बातें कर ही रहा था कि अर्जुन शत्रुओं को मारता हाथी और घोड़ों को दलन करता हुआ उस के पास पहुंचा, भीमसेन मस्त हाथी के समान शत्रु सेना को मथन कर रहा था, अर्जुन ने पहुंच कर सहस्रों रथी और हाथियों को भस्म किया, भीम ने लाखों योधा, दश सहस्र हाथी और पांच सहस्र घोड़े मार कर रुधिर की नदी बहा दी, दुर्योधन अपनी सेना को सब योधाओं के आगे हाथ जोड़ता था और दीनता से प्रार्थना करता था कि भीमसेन को मारो। देखो उस ने सारी सेना को मथन कर डाला है ॥

यह सुन कर बहुत से राजा लोग कूद पड़े और भीमसेन पर टूट पड़े। भीमसेन के घोड़े और सारथी घायल हुये, शकुनी ने भीमसेन की बाईं भुजा पर बरछी मारी, कौरवों ने तीक्ष्ण बाणों की वर्षा की भीमसेन ने सब के घोड़े सारथी

मारे और घायल किये, शकुनि तीर खाकर पृथ्वी पर गिरा और अचेत होगया, दुर्योधन ने शीघ्रता से उठवाकर दूर पहुंचा दिया यदि ऐसा न होता तो शकुनि के जीने की कोई आशा न थी शकुनि की यह दशा देख कर कौरवी सेना भागालेकर भागी ॥

तब कर्ण सामने आया और पांचालों को मारता हुआ भीमसेन से लड़ने लगा, बहुत सी पाण्डवी सेना मारी गई, इधर अर्जुन भी मारता हुआ आता था, बहुत से अच्छे २ रथी और महारथी गाण्डीव धनुष से मारे गये, कर्ण युद्ध में नियत रहा, परन्तु सेना रोकने से भी न रुक सकी अर्जुन के भय से सब भयभीत हुये, पांचाल के बेटे कर्ण के हाथ से मारे गये, सात्यकी घायल हुआ और विशोक मारा गया, कर्ण ने सात्यकी पर भाला मारा, शिखंडी ने उस को मार्ग में ही काट दिया ॥

इसी अवसर में दुशासन ने भीमसेन पर बाण फैंके, भीमसेन बहुत घायल हुआ, सारथी और घोड़ों पर भी चोटें लगीं, तब क्रोध युक्त भीमसेन ने एक गदा उस के शिर पर ऐसी मारी कि उस का मस्तक फट गया, रुधिर के प्रवाह जारी होगये, दूसरी गदा से दुशासन अचेत हो कर भूमी पर गिरा, तब भीमसेन सिंह नाद से गर्जता हुआ उछल कर उस की छाती पर चढ़ गया और अश्वत्थामा, कृपाचार्य और दुर्योधन को देख कर कहने लगा कि देखो मैं इस का रुधिर पीकर अपनी उस प्रतिज्ञा को पूरा करता हूं जो मैने उस समय

की थी जब कि इस दुष्ट दुशासन ने महारानी द्रौपदी का निरादर किया था, और भरी सभा में उस के पति धर्म को दूषित करने के लिये बालों से घसीट कर लाया था यदि कोई इस का सहायक हो तो आवे और इस मृत्युवश दुष्ट कर्मी कौरव को बचाये यह कह कर उस ने कांपते हुये दुशासन को पृथ्वी पर डाल कर उस के कण्ठ को दबाया उस की छाती और जंघा को काटा और थोड़ा सा उष्ण रुधिर पिया, फिर उस रुधिर को पी कर बोला कि आहा इस रुधिर का स्वाद कैसा अच्छा है, यह अमृत से भी बढ़ कर है, यह सब रसों से उत्तम है ॥

तब दुशासन को तनिक सचेत देख कर बोला कि हे दुष्ट! जो प्रतिज्ञा मैंने की थी, अब उसको पूरा करता हूं, अब तुम को कौन सा शूरवीर बचा सक्ता है ॥

भीमसेन के इस वचन को सुन कर दुश्शासन ने उत्तर दिया कि हे वीर भीमसेन! हमने तुम को अनेक प्रकार की पीड़ा दी, तुम को तेरह वर्ष बनवास दिया और जंगलों में फिरने के दुःख दिखाये, तुम्हारी स्त्री का निरादर किया उस समय तन में बल न था, अब मैं रण भूमि में गिरा पड़ा हूं और तुम्हारे वश में हूं, जो तुम्हारी इच्छा हो करो, जो तुमने मेरा रुधिर पिया है. इस में मेरा कोई क्रोध नहीं हो सक्ता क्षात्र धर्म को पालते हुये शूरवीरों के समान मैं युद्ध में गिरा हूं। यदि तुम न, पियोगे तो थोड़े काल पीछे कौवे और शृगाल तो अवश्य ही पियेंगे ॥

यह सुन कर भीम को बहुत क्रोध आया और कौरवों को कह कर कि अब इस को बचाओ उस ने दुशासन की भुजा काटी और ग्रीष्म काल में पिपासार्त मनुष्य की भांति बड़ी प्रीति से दुशासन का रुधिर पीने लगा, फिर उस ने दुशासन का शिर काटा और दुर्योधन और कर्ण के समक्ष में रुधिर पी कर उस को यम पुर में भेजा ॥

जब वह निर्जीव होगया तो भीमसेन ने उस को छोड़ कर कहा कि शोक में तुम को अब कुछ नहीं कह सकता मृत्यु ने तेरी रक्षा की है यह देख कर कौरवी सेना बहुत भयभीत होकर भागी, युधामन्यु भागे हुये चित्रसेन पर टूटा परन्तु कर्ण ने उस की रक्षा की फिर सब लोगों को देख कर और अपने भोगे हुये दुखों को सुना कर भीमसेन ने कहा कि हे वीर लोगो ! मैंने अपनी एक प्रतिज्ञा तो पूरी की अब दूसरी प्रतिज्ञा दुर्योधन को मार कर करूंगा यह कह कर भीमसेन इन्द्र के समान गर्जा ॥

सैंतीसवां अध्याय

—:०:—

अर्जुन का कर्ण के पुत्र सुषेण को मारना अर्जुन और कर्ण का युद्ध, अश्वथामा का दुर्योधन को शान्ति की सम्मति देना, दुर्योधन का न मानना ॥

भीमसेन वहां रुधिर में भीगे हुये कपड़े पहिन कर कर्ण के सन्मुख गया, तब निषंगी, कवची पाशी दण्डधार, धनुर्द्धर अलोलुप सहखण्ड वातवेग और सुवर्चस अपने भाई के शोक से दुखित हो कर भीमसेन से लड़ने आये भीम ने तुरन्त ही सब को यमपुर में भेजा, भीमसेन के भय से सब कौरवी सेना कांप रही थी, कर्ण को भी बहुत भय हुआ और वह अचेत सा दिखाई देने लगा, शल्य ने उस के हृदय का भाव जाना और कहने लगा कि ॥

"हे महाबाहु! मत डरो, तुम अपूर्व पराक्रमी शूर और अस्त्र शस्त्र के वेत्ता हो, तुम्हें किस बात का भय है? मैं आप के साथ हूं, दुर्योधन ने अपनी विजय का भार केवल आप पर ही नियत किया है, देखो अपने भाई की मृत्यु पर राजा अचेत हो रहा है सेना की रक्षा का भार अब केवल आप पर है, अश्वत्थामा कृपाचार्य सब आप की सहायता करेंगे, चलो भीमसेन के साम्हने चलो और अपनी सेना की रक्षा करो ॥

कर्ण की चित वृत्ति म्लानता से ग्रस्त थी, उस ने भीम को देखा और उधर चलने की आज्ञा दी, इतने में उस के पुत्र वृषसेन ने नकुल को बहुत पीड़ित किया नकुल के घोड़े और सारथी मारे गये, नकुल सम्भला और वृषसेन पर बाण बरसाने लगा उस ने दो हज़ार कौरवों को मारा, परन्तु वृषसेन ने उस को बहुत ही पीड़ित किया और विरथ किया ॥

नकुल शीघ्र ही भीमसेन के रथ पर चला गया, भीमसेन ने अर्जुन को कहा कि तुम नकुल की सहायता करो, तब अर्जुन

आगे बढ़ा और कर्ण का उल्लंघन करके वृषसेन पर झपटा वृषसेन ने नकुल को छोड़ा और अर्जुन के सामने आया अर्जुन के हाथ से बचना कहां था फिर शीघ्र ही तीर खाकर अचेत होकर भूमि पर गिरा और मर गया ॥

वृषसेन को भूमि पर गिरा हुआ देख कर कर्ण को बहुत क्लेश हुआ। उसकी आंखों से अश्रु प्रवाह जारी हुआ और उसके सिर में चक्र आने लगे। शस्त्र हाथ से गिर पड़े और जगत धुंआधार दिखाई देने लगा। इतने में अर्जुन सामने आगया, तब कर्ण को चैतन्यता आई और वह शस्त्र लेकर शत्रु के सन्मुख हुआ ॥

जब दोनों वीर सामने हुये तो सब देवता और दानव युद्ध कौतक देखने के लिये चारों ओर से आये। देवता कहते थे कि अर्जुन की विजय होगी। दानव कहते थे कि कर्ण की विजय होगी। देवता लोग श्रीकृष्ण और अर्जुन पर फूल बरसाने लगे, कर्ण राजा शल्य से बोला कि हे राजा शल्य! यदि मैं मारा गया तो मेरे पीछे आप से क्या आशा हो सक्ती है, सत्य २ बताइये, शल्य ने कहा कि ईश्वर भली करें, यदि होनहार की बलवत्ता से आप के मारा गये तो मैं श्री कृष्ण और अर्जुन को आप भस्म करूंगा ॥

इधर अर्जुन ने भी श्रीकृष्ण जी से यही प्रश्न किया, श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया कि तुम्हारे मारने वाला उत्पन्न ही नहीं हुआ, तुम निस्सन्देह कर्ण को मार लोगे, यदि इस के अतिरिक्त हुआ तो मैं अपने हाथ से कर्ण को मारूंगा ॥

दोनों ओर से इस प्रकार की बातें हो चुकीं तो शंख बजे, धनुष से तीरों की वर्षा आरंभ हुई, दोनों वीरों ने अपने २ शत्रुओं की सेना के सहस्रों वीरों को मार कर यमपुरी में भेजा, लड़ाई की दशा देख २ कर दुर्योधन और कर्ण दोनो अपनी विजय से निराश हुये, अश्वत्थामा ने दृढ़ निश्चय कर लिया कि अर्जुन कर्ण को मारेगा, और दुर्योधन से कहने लगा, कि हे राजन् ! अब भी समय है दीर्घ दर्शिता से मेरा यही विचार है कि पाण्डवों से संधि की जाये, सारे वीर और विख्यात राजा और धनुर्धर क्षत्रिय मर कर भस्म हो गये, केवल हम चार पांच जीते बचे हैं, यदि आप उचित समझें तो मैं शांति करा देता हूं, राजा युधिष्ठर सर्व नाश युद्ध को अच्छा नहीं समझते, श्रीकृष्ण जी पहिले ही शांति चाहते हैं, अर्जुन संधि को अच्छा समझता है, नकुल सहदेव और भीमसेन भी मेरे वचन को स्वीकार करेंगे, उन को मनाने का सब भार मैं अपने ऊपर लेता हूं, केवल आप की आज्ञा की देर है, यदि मेरा मत स्वीकार करो तो आधा राज्य बांट दो ताकि सारा दुःख दूर हो जाय ॥

तुम आदि से ही भूल में रहे हो, न किसी का कहना माना, कर्ण तुम्हारा मित्र है, तुम उस को अपने जीवन से अधिक प्रिय समझते हो, जब यह भी मारा गिया तो तुम्हारा जीवन विफल प्रतीत होगा और तुम आयु भर पश्चाताप करोगे ॥

यह सुन कर दुर्योधन ने कहा कि आप का वचन सर्वथा

सत्य है, परन्तु मैं उस दृश्य को नहीं भूल सक्ता, जो अभी मेरे सामने हुआ है, जब कि भीमसेन ने दुशासन का रुधिर अञ्जलियों से पिया है, अर्जुन और कर्ण का परस्पर बहुत वैर है, कभी मेल जोल नहीं हो सक्ता, यदि मैं आप का कहना मान भी जाऊं तो पाण्डव कभी भी यह बात स्वीकार न करेंगे यदि कर्ण ऐसी बातें सुनेगा तो उस का मन बुरा हो जायगा, इस समय कार्य यह है कि हम कर्ण के उत्साह को उत्तेजित करें ताकि विजय प्राप्त हो ॥

अड़तीसवां अध्याय

—:o:—

कर्ण और अर्जुन का युद्ध, अश्वसेन नाग का कर्ण की सहायता करना और अर्जुन के हाथ से मारा जाना ॥

अर्जुन और कर्ण का घोर युद्ध परारंभ हुआ जिस में दोनों बहुत घायल हुये अर्जुन अग्न्यास्त्र को प्रकट किया जिस से चारों ओर से प्रचंड अग्नि की वर्षा होने लगी। कौरवी सेना को बहुत पीड़ा हुई। कर्ण ने तुरन्त वरुणास्त्र का प्रयोग किया जिस से चारों ओर बादल उमण्ड आये और सब अग्नि शांत हुई। मूसलाधार वर्षा होने लगी तब अर्जुन ने वायव्यास्त्र को मन्त्रों के द्वारा प्रकट किया जिस से बादल फट गये और वर्षा रुक गई तब उस ने गांडीव धनुष से सहस्रों बाण छोड़े ॥

कर्ण अर्जुन के बाणों से बहुत पीड़ामान था फिर उस ने भार्गवास्त्र को अभि मान्त्रित किया और पांचालों के शूर वीर योधों को यम पुर भेजा पांडवी सेना के अनेक हाथी और घोड़े मारे गये। सैकड़ों रथियों को मृत्यु वश किया यह देख कर कौरवों ने सिंह नाद बजाये ॥

यह देख कर भीमसेन को बहुत क्रोध आया वह श्रीकृष्ण और अर्जुन के पास जा कर कहने लगा कि हे अर्जुन! तुम को क्या होगया? क्या तुमहारे हाथ में गांडीव धनुष नहीं है, देखो! कर्ण कैसे सर्व नाशक अस्त्रों को छोड़ रहा है क्या तुम सोते हो कि जागते? तुम्हारे अस्त्रों को क्या होगया, तुम अपने तेरह वर्ष के बनवास को स्मरण नहीं करते, द्रौपदी के निरादर का कुछ ध्यान नहीं, तुम क्यों सामने आये शत्रु को जाने देते हो, हमारे सब दुःखों का कारण यही दुष्ट कर्ण है, देखो, वह शत्रु साह्मने खड़ा है, क्यों नहीं इस को शीघ्र मारते ॥

श्री कृष्ण ने भी अर्जुन को बहुत उत्तेजित किया और कहा कि इस का शिर काटो, तब अर्जुन ने विषैले बाणों को गांडीव धनुष से छोड़ा परन्तु कर्ण ने उन बाणों को शीघ्र विफल किया, फिर अर्जुन ने चक्र और फरसे से कर्ण को वार २ घायल किया और उस की सेना को भी बहुत पीड़ा दी कर्ण ने उन बाणों के प्रत्युत्तर से पांडवी सेना को बहुत मारा और उन के रथियों को मार २ कर चारों ओर भगाया, श्री कृष्ण ने अर्जुन को कहा कि हे अर्जुन सुदर्शन चक्र का प्रयोग करो ॥

तब अर्जुन ने सुदर्शन चक्र को फैंका कौरवी सेना उस

से भयभीत होकर भागने लगी, कौरव वीर हाय कर्ण ! हाय कर्ण ! रक्षा करो, रक्षा करो, कह कर पुकारने लगी, कर्ण ने चक्र के प्रचंड वेग को जब तक दूर किया तब तक अर्जुन ने दश हजार कौरवी वीरों और हाथियों को अत्यन्त घायल कर के यमपुर में भेजा, कर्ण ने अपना अस्त्र छोड़ा जिस से चक्र का वेग जाता रहा और पांडवी सेना में बहुत नाश उत्पन्न हुआ जब तब अर्जुन तीर मारता था तो कर्ण का रथ बाईस हाथ पीछे हट जाता था, परन्तु जब कर्ण तीर मारता था तो अर्जुन का रथ केवल तीन ही हाथ पीछे जाता था, तब कर्ण ने पांच अग्नि बाणों से श्री कृष्ण को छेदा, अर्जुन ने उन बाणों को अपने बाणों से काटा, तब वह बाण पृथ्वी में घुस गये जिस से तक्षक की सन्तान बहुत घायल होकर पृथ्वी से बाहिर आई ॥

अश्वसेन नाग जो अर्जुन का शत्रु था अग्नि से पीड़ा पाकर बाहिर निकला, उस ने इस समय को अर्जुन से बदला लेने के लिये बहुत अच्छा समझा, इस लिये बाण रूप धारण करके वह कर्ण के तूणीर में, प्रविष्ट हुआ, अश्वसेन वह नाग था जो अपनी माता के साथ खाण्डवन में रहिता था जब अर्जुन ने उस वन को जलाया अश्वसेन की माता मारी गई। इस लिये वह अब अपनी माता का बदला लेना चाहता था ॥

कर्ण के श्रीकृष्ण को छेदने पर अर्जुन को बहुत क्रोध आया उसने अभिमन्त्रित बाणों के बरसाने से कर्ण को अचेत

किया तब कर्ण ने क्रोध में आकर बाण निकाला तो अश्वसेन उसके हाथ में आगया। यह देख कर देवता हाहाकार करने लगे कि बस अब अर्जुन जीता नहीं बचेगा। शल्य बोला कि हे कर्ण! यह बाण अर्जुन को नहीं लगेगा, इस शिर के काटने वाले बाण को अच्छी रीति से देख कर चढ़ाओ, कर्ण ने कहा कि हे शल्य! कर्ण दूसरी बार बाण को नहीं चढ़ाता है। मेरे जैसे मनुष्य छल से युद्ध नहीं करते॥

यह कह कर कर्ण ने तीर चलाया और ऊंचे स्वर से कहने लगा कि वह अर्जुन मारा गया, बाण धनुष से निकल वायु मंडल में पहुंचा और अग्नि के समान प्रकाश युक्त हुआ श्री कृष्ण ने यह देख रथ को नीचे दबाया, रथ के पहिये पृथ्वी में घुस गये और घोड़ों को घुटने टेकने पड़े। फिर भी अर्जुन का किरीट शिर से गिर पड़ा यह किरीट विजय के निमित्त इन्द्र ने उसको दिया था, तब अर्जुन ने शिर पर श्वेत वस्त्र लपेट लिया॥

जब इस प्रकार अश्वसेन का प्रयत्न विफल हुआ तो वह कर्ण से कहने लगा कि हे वीर कर्ण! मैंने तो अर्जुन का नाश कर ही देना था परन्तु आपने लक्ष्य को ठीक न बान्धा, अब यदि मुझ को फिर धनुष में चढ़ाओ तो मैं अवश्य अर्जुन का शिर काटूंगा यह सुन कर कर्ण को बहुत आश्चर्य हुआ और वह पूछने लगा कि तू कौन है, अश्वसेन ने कहा कि मैं अर्जुन का घातक शत्रु हूं यदि मुझ को धनुष पर चढ़ा कर छोड़ें तो अर्जुन को यमराज भी नहीं बचा सक्ता॥

कर्ण बोला कि हे नाग ! मैं एक बार छोड़े हुये बाण को दूसरी बार नहीं चढ़ाता, मुझ को अपने शत्रु के मारने के लिये दूसरों की सहायता की उपेक्षा नहीं, अर्जुन क्या है ऐसे २ सैंकड़ों अर्जुन भी हों तो सब को क्षण में मार लूं, आप मेरे लिये श्रम न उठावें, नाग को कर्ण पर बहुत क्रोध आया तब उस ने अपने आकार को धारण किया और अर्जुन पर झपटा, अर्जुन यह देख कर श्री कृष्ण से पूछने लगा कि हे माधव जी ! यह क्या है ? श्री कृष्ण ने सब वृत्तान्त सुनाया और कहा कि अब इस को शीघ्र मारो, तब अर्जुन ने छः बाण मारे जिन से बीच में से कट कर वह नाग पृथ्वी पर गिरा, श्री कृष्ण ने दोनो हाथों से रथ उठा लिया, घोड़े उठ खड़े हुये, यह देख कर सब लोग श्री कृष्ण की प्रशंसा करने लगे ॥

उनतालीसवां अध्याय

—:०:—

अर्जुन और कर्ण का घोर युद्ध, अर्जुन के हाथ से कर्ण का मारा जाना ॥

कर्ण ने अर्जुन को बाण वर्षा से ढक दिया, अर्जुन ने भी तीक्ष्ण बाणों से कर्ण को घायल करके बहुत पीड़ित किये इस से कर्ण का क्रोध और भड़का, इस ने श्री कृष्ण और अर्जुन पर खड्ग पक्ष वाले बाणों को छोड़ा श्री कृष्ण की दुखित अवस्था को अर्जुन कैसे सहार सकता था उस ने कर्ण

के मुकुट को अपने बाणों से खंड २ करके उस की कवच को भी चूरा २ किया, तब कर्ण की कवच रहित देह पर सोलह बाण मारे कि जिन से उस के सब मर्मस्थल विदीर्ण हुये उस की आखों में अंधेरा आगया, अर्जुन चाहता तो वहीं एक और बाण से उस को मार देता परंतु उस की अचेत दशा में उस को मारना उचित न समझा ॥

राजा शल्य ने कर्ण को होश दिलाई और हिलाया, कर्ण उठा परंतु अर्जुन के बाण फिर बरसने लगे, तब कर्ण को ब्राह्मण का शाप स्मरण हूआ, उस ने समझा कि मेरे रथ के पाहिये भूमि में खुबे हुये हैं घोड़े बहुत यत्न करते हैं परंतू रथ नहीं हिलता, फिर परशुराम के शाप से उस को उग्र अस्त्रों का भी विस्मरण हुआ, तब कर्ण बहुत पीड़ित होकर घबराकर बोला कि मैं तो समझता था कि धर्म धार्मिक लोगों का सहायक होता है परंतू शोक है कि मेरा विचार उल्टा जान पड़ता है मेरा आयु भर धर्म पर कटिबध रहना इस समय कुच्छ सहायता नहीं देता ऐसे धर्म को धिक्कार है इस से तो अधर्म ही सहस्रों गुण अच्छा था, इस प्रकार धर्म की निंदा करते हूये और कुच्छ २ निराश होते हुये कर्ण ने ब्रह्मास्त्र को अर्जन पर छोड़ अर्जुनने मंत्रों के द्वारा उसको निष्फल किया फिर तीरों को छोड़ा कर्ण ने उन को सर्वथा निष्फल किया, फिर अर्जुन ने बार २ अस्त्र प्रयोग किया और बाण छोड़े परन्तू कर्ण ने सब को निष्फल ही किया ॥

इतने में कर्ण के रथ के पहिये पृथ्वी में घुस गये, शल्य

ने बहुतेरा यत्न किया परन्तु पहिये न निकले, तब कर्ण विवश होकर आप नीचे उतरा उसने रथ को उठाया तो पृथ्वी चार अंगल ऊंची उठ आई, परन्तु पहिये जूं के तूं ही रहे, तब कर्ण की आंखों में आंसू निकल आये और अर्जुन को देख कर कहने लगा कि हे वीर अर्जुन ! तुम शूरवीर हो, शूरता तुम से ही उत्पन्न होता है शूरवीर लोग अशस्त्र और शरणागतों पर वार नहीं करते, तुम धर्म को जानते हो, इस लिये गांडीव धनुष को हाथ से न छूओ, जब तक मेरा रथ पृथ्वी से न निकले तुम को बाण चलाना उचित नहीं, शूरवीर धर्म युद्ध करते हैं, यह कभी भी मन में न विचारो कि मैं तुम से और श्रीकृष्ण से डरता हूं ॥

यह सुन कर श्रीकृष्ण बोले कि धर्म २ क्यों वार २ कहते हो तुम और शकुनि धर्म को क्या जानते हो, भीमसेन को विषदेना, काले सर्पों से डसवाना, नदी में फेंकना, लाख के मन्दिर में भस्म करना, अधर्मद्यूत खेलना, द्रौपदी का निरादर करना, यदि यह धर्म के काम हैं तो अर्जुन का इस समय बाण चलाना भी धर्म ही समझो, विरथ अभिमन्यु को जब छः महारथियों ने मारा था तो उस समय तेरा धर्म कहां था ? जब अपनी वारी आई तो अब धर्म २ कह कर पुकारता है ? और अपना स्वार्थ सिद्ध करना चाहता है, पहिया पृथ्वी में घुस गया तो हम क्या करें ? वीर हो तो इस प्रकार युद्ध करो ॥

कर्ण को कुच्छ उत्तर न सूझा, उसने रथ पर खड़े हो

कर ऐसे तीर मारे कि श्रीकृष्ण और अर्जुन बहुत घायल हुये फिर अर्जुन ने ब्रह्म अस्त्र को फेंका, कर्ण ने वरुण अस्त्र से उस को शांत किया। चारों ओर बादल छागये, अर्जुन अचेत हो कर गिरा, कर्ण ने यह अवसर पा कर रथ से नीचे उतर कर फिर पहियों को निकालना प्रारंभ किया, श्रीकृष्ण ने झट अर्जुन को चैतन्यता दिलाई और कहा कि यही समय है, तुरन्त कर्ण के शिर को काटो॥

अर्जुन ने बाणों को अभिमन्त्रित करके लक्ष्य बांधा, कर्ण पहियों के निकालने में लगा था, वहीं उसका शिर कटकर दूर जा पड़ा। उस का शरीर अत्यन्त प्रकाश मान हो कर तुरन्त सूर्य लोक में जा मिला, सेना के लोग आश्चर्य करने लगे कि यह क्या बात है, थोड़े ही काल में अर्जुन ने एक तीर से उस को भी पृथ्वी पर लिटा दिया, पाण्डव बड़े आनन्द से सिंह नाद करने लगे, श्रीकृष्ण और अर्जुन के शंखों की ध्वनि आकाश को शब्दायमान करने लगी, रथ का पहिया आप ही पृथ्वी से निकल आया। शल्य ने रथ चलाया, दुर्योधन रोने और पीटने लगा, सारे दल में शोक और दुःख की सीमा न रही, कौरव और पांडव दोनों कर्ण की शूरता की प्रशंसा करने लगे शत्रु और मित्रों के अश्रुप्रवाह बहे कि कर्ण जैसा अपूर्व पराक्रमी शूरवीर स्वर्ग को सिधारा॥

चालीसवां अध्याय

—:o:—

दुर्योधन को कर्ण की मृत्यु पर शोक, धृताष्ट्र का दुःख और पाण्डवों के डेरों में आनन्द मंगला चार ॥

सूर्य अस्ताचल की चोटी पर पहुंचने वाला था कि कर्ण की मृत्यु हुई, राजा शल्य ने जाकर दुर्योधन को सारा समाचार दिया, विचारा दुर्योधन जो दुखों से पहिले ही परम आतुर था, अचेत होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा, शल्य ने उठाया और कहा कि कर्ण मर तोगया परंतु उस ने ऐसो वीरता के काम किये कि देवता भी उस की शूर वीरता को देख कर आश्चर्य करते थे, मृत्यु तो सब की होती है यह केवल काल की प्रबलता है जब समय पूरा होजाता है तो देवताओं के बनाये भी कुछ नहीं बनता, अब तक जो कुछ हुआ यह होनहार थी अब मेरा विचार है कि पाण्डवों से शांति काजाेय मैं शांति करा देने का भार अपने ऊपर लेता हूं ॥

दुर्योधन जो दुःख सागर में निमग्न हो कर पीड़ित था बोला कि हाय ! अब शान्ति कैसे हो सक्ती है ?

जब धृतराष्ट्र ने कर्ण की मृत्यु का समाचार सुना तो फूट २ कर रोने और सिर पीटने लगा । ऊर्ध्वश्वास से मृतक भाय के समान हो गिया और हा दैव ! हा दैव ! करने लगा । इतन में दुःख से अचेत हो गिया और बोला कि हे संजय ! तूने कैसा दारुण दुःखदायी समाचार दिया है । मैं तो जीता ही

मर गिया। कर्ण पर मेरे पुत्रों ने युद्ध का सारा भार नियत किया था, शोक है कि उस के मरने पर उन की रही सही आशा भी टूट गई, अब मेरे पुत्रों को जीवन की आशा कैसे हो सक्ती है भीमसेन और अर्जुन उन को मार कर अवश्य मेरे वंश का विध्वंस करेंगे। शोक है कि मैं नहीं मरता, दुःखों को भोगते २ मेरा मन पत्थर से भी अधिक कठोर हो गिया है जो नहीं फटता, देखो मेरा हृदय धड़क रहा है, हे संजय! यह तो बताओ कि दुर्योधन की क्या दशा है? कहीं वह तो नहीं मारा गिया। संजय! सच २ बताओ॥

संजय बोला कि हे महाराज! कर्ण के मरने पर शोकातुर दुर्योधन अधमुआ सा हो गिया, उस ने शिर को इधर उधर पटका, जब कुछ दुःख न्यून हुआ, तो उठा और शपथ खाई कि मैं अभी अर्जुन को मारूंगा, शल्य को कहा कि सेना को बढ़ाओ मैं आप अर्जुन से युद्ध करूंगा॥

उधर भीमसेन कर्ण के मृतक शरीर को देख कर आनन्द से गर्ज रहा था, उस के सिंह नादों से शत्रु सेना भयातुर होरही थी, दुर्योधन पच्चीस सहस्र पैदल शूरवीरों को लेकर दौड़ा भीमसेन ने रथ से कूद कर वज्र उठाया दोनों वीर सन्मुख हुये भीम ने सारी कौरवी सेना भस्म कर डाली, धृष्टद्युम्न ने शकुनी से युद्ध किया, दुर्योधन और भीमसेन लड़ते रहे इतने में अर्जुन आपंहुचा और गांडीव धनुष से सहस्रों योधाओं को मथन किया शकुनी धृष्टद्युम्न से परास्त हुआ। कौरवी सेना भयभीत होकर भागी, पाण्डवों ने शंख बजाये और सिंहनाद किये॥

दुर्योधन चिल्लाया कि हे कौरवी वीरो ! भाग कर कहां जाते हो, भागने से मृत्यु कभी नहीं छोड़ेगी, पाण्डवी योधा तुम्हारा पीछा करेंगे और एक २ को पकड़ कर मारेंगे, इस से यही अच्छा है कि अपने स्थान पर जमे रहो और एक वार और अपने शस्त्रों और भाग्य की परीक्षा करलो, यदि आप मेरे साथ रहे तो मैं सब पाण्डवों को मार कर भस्म कर दूंगा, श्रीकृष्ण और अर्जुन कर्ण के अस्त्रों से अत्यन्त घायल हैं, फिर इन को मारना कौनसा कठिन काम है, शूरवीर लोग युद्ध से मुख नहीं मोड़ते, मुख पर प्रहार खाने वाला क्षत्रिय सीधा स्वर्ग में जाता है ॥

दुर्योधन के वचन सुन कर सेना फिर लौटी, विचारा दुर्योधन फिर पाण्डवों से लड़ने लगा, मृतक शरीरों से पृथ्वी इतनी आच्छादित थी कि पाओं रखने को जगह न थी, न आगे जाने को मार्ग मिलता था, न इधर उधर चलने को, राजा शल्य मृतक शरीरों को देख कर घबरा गिया और हाय कर्ण ! आह कर्ण ! कहता हुआ दुर्योधन से बोला कि हे राजन् ! अब युद्ध को छोड़दो, सेना सर्वथा नाश युक्त है, शेष बचे हुए शूरों का व्यर्थ नाश न हो, दिन भी ढल गिया है चलो डेरे में चलें ॥

दुर्योधन का दिल भी टूटा हुआ था, शिर झुका कर शल्य के साथ चल पड़ा, अर्जुन और श्रीकृष्ण शंख बजाते हुये युधिष्ठर के पास आये, और कहा कि हे राजन् ! आप को विजय शुभ हो, अर्जुन ने कर्ण को मार लिया, आप का

अभ्युदय बहुत बलवान है, युधिष्ठर ने दौड़ कर श्रीकृष्ण के पद पर शिर धरा और अर्जुन को छाती से लगाया और धन्य २ कहा, शिर को सूंघा और श्रीकृष्ण से कहा कि हे महाबाहु! मैं क्षुद्रपराक्रम गजन्तु क्या हूं यह आप ही कि कृपा है। आप ही ने कर्ण की जान लेकर बड़ी आपत्ति से बचाया है। आह! वह दुष्ट कर्मी कर्ण मारा गया। इस नीच ने मुझ को बहुत घायल किया था। इस के प्रहारों को मैं अभी तक दुख से सह रहा हूं आज तक जो २ विजय हम को प्राप्त हुई वह केवल आप ही की कृपा से हुई सत्य यह है कि आप और अर्जुन नर और नारायण रूप से हो, नारद और व्यास ने जो २ कुछ कहा है वह सर्वथा सत्य ही है॥

यह कह कर राजा युधिष्ठर उस स्थान पर आये, जहां पर कर्ण मरा पड़ा था, उस मृतक शरीर को देख कर युधिष्ठर को प्रतीत हो गया कि अब राज्य मिलने में कोई विघ्न नहीं हो सक्ता, एक दो दिन में दुर्योधन भी मारा जायगा, बस फिर क्या है? हम को शत्रुओं से रहित राज्य प्राप्त होगा॥

तब सात्यकी धृष्टद्युम्न और शिखंडी ने राजा युधिष्ठर को बधाई दी और सब के सब श्रीकृष्ण की प्रशंसा करने लगे॥

यह शोक मय समाचार सुन कर धृतराष्ट्र फूट २ रोने लगा, राज भवन में बहुत कोलाहल मच गया, गांधारी और अन्य रानियें हाय कर्ण! हाय कर्ण! कह कर रोने लगीं, सब हस्तिनापुर में उदासी छागई और दुःखीयों के रुदन से आकाश शब्दायमान हुआ॥इति॥

———

महाभारत

शल्य पर्व

पहिला अध्याय

—:o:—

धृतराष्ट्र प्रमोह वर्णन ॥



जनमेजय ने वैशम्पायन से पूछा कि युद्ध में कर्ण के मरने पर कौरवी थोड़ी सी सेना ने क्या किया, दुर्योधन ने अपनी सेना को साहस रहित देख कर पाण्डवों से कैसा कर्म किया यह सब वर्णन करें। वैशम्पायन बोले। हे राजन्! कर्ण की मृत्यु पर दुर्योधन अतीव दुःखी हो हाय कर्ण! हाय कर्ण! करता हुआ सब के साथ डेरे को लौट आया और फिर शल्य को सेनापति बना बची हुई सेना को ले युद्ध के लिये चला कौरवों और पाण्डवों की सेना का देव और राक्षसों के समान

युद्ध हुआ। इस युद्ध में शल्य बहुत सी शत्रु सेना को मार कर अपनी सेना के मरने के पीछे धर्मराज के हाथ से मारा गया ॥

इस की मृत्यु पर दुर्योधन शत्रु के डर से एक ताल में छिप गया, परन्तु उसी दिन तीसरे पहिर भीमसेन ने योधाओं सहित ताल को घेर कर दुर्योधन को बाहर निकाल मार डाला। इस की मृत्यु के पीछे बचे हुये महारथियों ने पंचाल की सेना को रात्री के समय मार डाला ॥

प्रातः काल संजय दुःखित हो गांव को आया और बड़े शोक से ऊंचे हाथ किये राज मंदिर में पहुंचा और हाय राजा! हाय राजा! कहता हुआ बड़ा विलाप करने लगा, उस की इस दशा को देख नगर के सब लोग रुदन करने लगे, चारों ओर से हा हा कार मच गया ॥

मंदिर में पहुंच संजय रो कर बोला महाराज! मैं संजय हूं मेरा प्रणाम हो, महाराज! मद्र देश का राजा शल्य, शकुनी, कैतव्य, उलूक, कांबोज देशी और सुतप्तक आदि सब राजा मारे गये हैं साथ ही भीमसेन ने राजा दुर्योधन को भी मार दिया है धृष्टद्युम्न अपराजित शिखंडी आदि सब राजा युद्ध में काम आगये, आगे कहां तक कहूं थोड़े ही रह गये हैं, यह सुन कर धृतराष्ट्र मूर्छित हो पृथ्वी पर गिर पड़ा, विदुर जी भी अचेत हो गिर पड़े और गांधारी आदि सब स्त्रियां भी मूर्छित हो गिर पड़ीं ॥

इस के अनंतर सचेत हो राजा ने कांपते २ विदुर जी से

कहा, हे बुद्धिमान विदुर जी ! मुझ पुत्रों से हीन को आप ही का सहारा है, इतना कह कर वह फिर अचेत हो गिर पड़ा, राजा को इस दशा में देख संजय भी रुदन करने लगा तथा गांधारी आदि सब स्त्रियें भी रुदन करने लगीं, चिरकाल के अनंतर धृतराष्ट्र विदुर जी से कहने लगे कि स्त्रियों सहित सब लोग वहां से चले जायें, इन को देख मेरा चित व्याकुल होता है, यह सुन विदुर जी ने सब को बड़े धीर्य से विदा किया ॥

दूसरा अध्याय

--:०:—

धृतराष्ट्र का विलाप वर्णन ॥

स्त्रियों के चले जाने पर राजा धृतराष्ट्र ने बड़े दुःखी हो विलाप किया फिर सूत से बोला हे सूत ! मेरा हृदय कठोर, वज्र के समान है जो कि पुत्रों की मृत्यु और पांडवों की कुशलता सुन टुकड़े २ नहीं होजाता, मैं उन को बाल अवस्था से जवान हुये सुन प्रसन्न होता था, आज उन को विधवा छोड़ रणभूमि में लेटे हुए सुन कहीं शांति को नहीं पाता हूं हे राजेन्द्र पुत्र ! अब मुझ अनाथ के सन्मुख आओ। हे महाबाहो ! मैं तुम्हारे बिन किस प्रकार जी सकता हूं। हे पुत्र ! तुम मुझ अंधे वृद्ध को त्याग कर कहां चले गये हो। तुम

पाण्डवों के हाथ से कैसे मारे गये। प्रातःकाल उठ कर हे तात! हे लोक नाथ! हे महाराज! अब मुझे कौन कहेगा प्रीति पूर्वक तुम गले मिल कर मुझ से वही मीठे वचन कहो अर्द्ध पुत्र! तुम तो कहिते थे जैसे यह पृथ्वी मेरी है वैसे मेरे लिये कुन्ती के पुत्रों की नहीं हो सकती क्योंकि कृपाचार्य, शल्य, भीष्म पितामहा, द्रोणाचार्य प्रभृति सब राजा मेरे लिये युद्ध में प्राण देने को तय्यार हैं। मैं अकेला ही पाण्डवों को भगा सकता हूं। इस लिये मैं पाण्डवों से युद्ध करूंगा। उन का स्वामी वासुदेव है वह शस्त्र नहीं पकड़ेगा। उसने मेरे साथ यह प्रतिज्ञा करली है॥

निश्चय मनुष्य प्रारब्ध को साथ लेकर आता है और प्रारब्ध से ही सुख पाता है हे संजय! मैं अभागी पुत्रों से रहित शत्रुओं के अधीन रह कर किस प्रकार जीऊंगी, अब वन के सिवाय मेरे लिए कोई स्थान कल्याण कारी नहीं है, दुर्योधन आदि पुत्रों के मारने वाले भीमसेन के कठोर वचनों को कैसे सहूंगा॥

इस प्रकार पुत्रों की मृत्यु से दुःखी राजा धृतराष्ट्र बड़े काल तक विलाप करता रहा फिर लंबे स्वास भर संजय से कहा कि मुझे पहिले ही विदुर जी ने कहा था कि यह सृष्टी दुर्योधन के अपराध से नष्ट होगी, परंतु महात्माओं के वचनों पर अज्ञानी विश्वास नहीं करते, जैसे कि मैंने नहीं किया, जो कुच्छ विदुर जी ने कहा था वह सब वैसा ही हुआ,

मैंने उन की शिक्षा का पालन नहीं किया जिस का फल यह हुआ ॥

हे संजय ! अब बतलाओ कि कर्ण की मृत्यु के पीछे सेना पति कौन बना और सारथी बन कर अर्जुन और वसुदेव जी के सन्मुख कौन गया, यह भी कहो कि तुम लोगों के अकट्ठा खड़े होने पर मेरा पुत्र क्यों कर मारा गया और सब पांचाल, धृष्टद्युम्न, शिखंडी और द्रौपदी के पांचों पुत्र किस विध मारे गये और पांचों पांडव दोनों यादव, कृपाचार्य, कृतवर्मा और अश्वत्थामा युद्ध में से कैसे बचे ॥

तीसरा अध्याय

—:o:—

कौरव सैन्यापमान वर्णन कृपाचार्य का दुर्योधन को समझाना और दुःख से अचेत होना ॥

संजय ने कहा हे राजन् ! अर्जुन के हाथ से कर्ण की मृत्यु और भागती हुई सेना के बार २ बुलाने पर भी भागने पर पाडवों ने सिंह नाद किया जिस से आप के पुत्र डर गये । कर्ण की मृत्यु के पीछे आप के किसी शूर वीर ने सेन को संभाल धावा नहीं किया बरंच बाणों से घायल हम लोग अर्जुन के भय से भागते हुए सायं काल को डेरे में

आगये । डेरों में पहुंचने पर भी अर्जुन के बाणों से घायल आप के पुत्र इतने डरे हुये थे कि उन को यही प्रतीत हो रहा था कि अर्जुन के बाण हम पर बरस रहे हैं, कर्ण के मरने पर हाथी और घोड़ों के सवार इस प्रकार बिना आगा पीछा देख भागे कि विचारे कई पैदल सिपाही कुचल कर मर गये ॥

दुर्योधन अर्जुन के प्रहार से सेना को भागते देख कर अपने सारथी को कहने लगा, अर्जुन मुझ को सेना से वेष्टित देख मुझे उल्लंघन नहीं करेगा तुम मेरे घोड़ों को सेना की ओर हांक दो मैं अर्जुन को मार भगाऊंगा, राजा की आज्ञा पा सारथी ने घोड़ों को धीरे २ हांका और साथ ही हाथी घोड़ों और रथों से हीन पैदल पच्चीस हजार सिपाही धीरे २ चल युद्ध में पहुंच सब भीमसेन से युद्ध करने लगे, भीमसेन ने रथ से उतर गदा हाथ में ली और दीन सिपाहियों को छोड़ बड़े २ शूर वीरों पर चलाई जिस से वह वहीं चित हो गए, शेष सब वृथा जीवन से हाथ धो अत्यन्त क्रोध से भीमसेन की ओर दौड़े परन्तु सब के सब मारे गये, भीमसेन ने अपनी गदा और खडग से आपके पच्चीस हजार शूर वीरों को मार डाला, अर्जुन रथियों की सेना की ओर झुका तथा नकुल, सहदेव, महारथी सात्यकी सहित शकुनि के सन्मुख गये, घोर संग्राम हुआ, अर्जुन ने गांडीव धनुष को टंकारा, आप की सेना ने अर्जुन को घेर लिया और महावीर धृष्टद्युम्न ने पदाति सेना को मारा ॥

आप के शूरवीर नकुल, सहदेव और सात्यकी को देख थोड़ी देर में सन्मुख आ डटे। चेकितान, शिखंडी और द्रौपदी के पुत्रों ने आप की बड़ी सेना को मार कर फिर शंख बजाया और आप की सेना भाग निकली। यहां तक कि शूरवीर भयभीत होकर चारों ओर भागने लगे ॥

इस प्रकार सेना को भागते देख दुर्योधन ने इन को बुलाया और उन से कहने लगा कि मैं पृथ्वी और आकाश में ऐसा कोई स्थान नहीं देखता कि जहां पहुंचने पर तुम पाण्डवों से बच सको, इस समय उन की सेना भी बहुत थोड़ी है, श्री कृष्ण और अर्जुन भी घायल हैं यदि इस समय हम डट जायें तो निश्चय हमारी विजय होगी। यह पापी पाण्डव तुम को भागने पर भी नहीं छोड़ेंगे इस लिये हमारा युद्ध में मरना ही अच्छा है, क्षत्रियों का यही धर्म है, धर्म युद्ध से बढ़ कर स्वर्ग मार्ग कोई नहीं है, इन वचनों को सुन राजा की प्रशंसा करते हुये सब योधा पांडवों के सामने फिर डट गये और फिर बड़ा घोर युद्ध होने लगा ॥

कृपाचार्य जी अर्जुन की वीरता से रण भूमि में सारों वीरों को मरा और आप के पुत्र को व्याकुल देख और घायल सेना के रुदन को सुन कर क्रोध युक्त हो राजा दुर्योधन के पास जाकर कहने लगे कि अहो राजेंद्र ! जो कुच्छ मैं तुम को कहता हूं सुनो और यदि तुम्हें अच्छा मालूम हो तो करो इस में संदेह नहीं कि क्षत्रियों के लिये धर्म

युद्ध अतीव कल्याण दायक है इस लिये सम्पूर्ण क्षत्रिय अपने बेटा, पिता भाई, भानजे तथा अन्य संबन्धियों से युद्ध करते हैं परन्तु अब तुम्हारे हित के लिये कहिता हूं कि भीष्म जी द्रोणाचार्य तथा बहुत से भाई और बेटे मारे गये हैं। हे राजन्! आज यह संग्राम होते १७ दिन हो गये हैं। अर्जुन ने आप की सेना के बड़े को डबो दिया है आप का सेनापति कर्ण और द्रोणाचार्य कहांगये ? भाईयों सहित तेरा भाई दुशासन कहां है ? तेरे अन्य संबंधी कहां हैं ? किस २ को गिने, अब तनिक विचारो तो सही कि अब अर्जुन का सामना करने वाला कौन है उसे कौन जीत सकता है, उस महात्मा के अस्त्र और धनुष हमारे हृदय को कंपाते हैं॥

अय राजन्! भीमसेन ने सभा में जो २ वचन कहे थे सब सत्य कर दिखाये और आगे भी करेगा, उस के आधीन सेना भी तुम से और कर्ण से जीती नहीं जायेगी तुम ने जो कर्म किये हैं वह भद्र पुरुषों में नीच गिने जाते हैं, वह सब काम तुम ने व्यर्थ किये जिन का फल अब तुम भोग रहे हो अब हम बल प्राक्रम में पाण्डवों से न्यून हैं इस लिये अब संधि कर लेना ही उचित है क्योंकि जो कल्याण को नहीं जानता या कल्याण का अपमान करता है वह शीघ्र ही नष्ट होजाता है, यदि हम अब राजा के आगे झुक जायें तो हम कल्याण पाते हैं, दयावान! राजा युधिष्ठर गोविंद जी के कहने से तुम को राज्य देदेगा, कृष्ण जी धृतराष्ट्र जी के कहने को नहीं मोड़ेंगे, मैं अपने प्राणों की रक्षा के लिये यह नहीं

कहता किन्तू तेरे कल्याण के लिये कहता हुं अन्यथा तू युद्ध भूमि में पड़ा हुआ मेरे वचनों को स्मरण करेगा यह कह कर कृपाचार्य जी विलाप करते हुये अचेत होगये ॥

चौथा अध्याय

—:o:—

कौरवों की सेना का फिर लौटना और दुर्योधन का वाक्य वर्णन ॥

राजा दुर्योधन लंबा स्वास ले कर चुपके होगये और कुछ काल के पीछे कहने लगे कि जो कुछ शुभ चिंतकों को कहना योग्य है वह सब वातें मैंने सुनी हैं परन्तु आप के वचन मुझे प्रसन्नता दायक नहीं हैं अय ब्राह्मणों मे श्रेष्ठ ! द्यूत में हरा हुआ युधिष्ठर और कृष्ण अब हम पर कैसे विश्वास करेगा क्योंकि श्री कृष्ण जी एक तो अर्जुन के परम मित्र हैं दूसरे युद्ध में मैंने उन के भानजे को मारा है मैं उन का अपराधी हुं वह अब मेरी प्रार्थना को कैसे स्वीकार करेंगे और अर्जुन भी अभिमन्यु की मृत्यु से बहुत दुखी है वह भी मेरी प्रार्थना को नहीं मानेगा, मंझला पांडव भीमसेन बड़ा तीव्र है उस ने उग्र प्रतिज्ञा की है वह उस को नहीं छोड़ेगा तथा अन्य पांडव भी मेरे शत्रु हैं भला यह कभी मेरी वृद्धि को करेंगे, सभा के बीच रजस्वला द्रौपदी एक वस्त्र रखने वाली को नग्न करके दुशासन के क्रूर कर्म को इन सब लोगों ने देखा था वह

इस को कब भूलेंगे इस लिये मेरी सम्मति में पांडव युद्ध से नहीं हटेंगे ॥

जब द्रौपदी को दुःख दिया गया था तो उस महा दुःखी द्रौपदी ने मेरे नाश के लिये तीव्र तप आरम्भ किया था वह तब तक इस तप को नहीं छोड़ेगी जब तक कि हम सब का नाश नहीं होगा और यह भी आप समझ लें कि मैं स्वतंत्र राज्य करता हुआ अब युधिष्ठिर के पीछे २ सेवकों के समान किस प्रकार चलने को सह्यार सकता हूं, मैं आप के वचनों की निन्दा नहीं करता हूं परन्तु मैं किसी प्रकार भी संधि को अच्छा नहीं समझता, मेरी सम्मति में यह समय युद्ध करने का है, नपुंसक बनने का नहीं मैंने बहुत से यज्ञ किये और ब्राह्मणों को बड़ी २ दक्षिणाये दीं वेदों को सुना, शत्रुओं को भी मारा इस लिये अब मैं पाण्डवों की अधीनता कैसे कर सकता हूं, मैं अभी युद्ध करके परम गति पाने वाले वीरों के साथ जा मिलूंगा अर्थात् सदैव इन्द्र के पास ही स्वर्ग में रहूं गा ॥

यह निश्चय समझें कि शूरवीर युद्ध में पीठ न दिखाने वाले और बुद्धिमान सत्य संकल्प सब यज्ञों के करने वाले अप्सराओं के निवास स्थान स्वर्ग में जाते हैं, वृद्ध भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य आदि जिस मार्ग से स्वर्ग में पहुंचे हैं मैं भी उसी मार्ग में जाऊंगा। सम अवस्था वाले भाईयों और पितामहादि लोगों को रण भूमि में मरवा कर अब यदि मैं संधि करके राज्य पा भी लूं तो लोग मुझे क्या कहेंगे

इस लिये राज्य को लात मार कर युद्ध करके स्वर्ग को पाऊंगा यही मेरा निश्चय है इस से विपरीत नहीं होगा॥

यह सब वचन सुन कर क्षत्री लोग एक स्वर से बोल उठे कि आप धन्य हैं! धन्य हैं! महाराज दुर्योधन आप धन्य हैं! यह कह कर बहुत से सेना के लोग भी फिर नया जोश पाकर इस के पीछे मरने को उद्यत हो गये और वहां से सरस्वती नदी के किनारे जाकर स्नान और जल पान किया और फिर सब योधा वहां से लौटे मानो काल उन सब को घेर कर फिर मरने के लिये ले आया॥

पाण्डवों के भय से शल्य, कृपाचार्य प्रभृति हिमालय पर्वत पर एकांत में सलाह और सेनापति बनाने के लिये एकत्र हुये। तब दुर्योधन अश्वत्थामा से बोला कि हे गुरु पुत्र! हम किस को अग्रणी बना कर पाण्डवों को जीतें उस को आप बताइये क्योंकि आप गुरु जी के पुत्र हैं, आप की आज्ञा से इस बात का निर्णय होना चाहिये॥

अश्वत्थामा जी ने कहा कि मेरी सम्मति में वीर पराक्रमी कुलीन शल्य को सेनापति बनाया जाय, उस के सेनापति बनाने से वैसे ही विजय होगी जैसे कि स्वामी कार्तिक के सेनापति बनाने पर देवताओं को जय हुई थी। अश्वत्थामा के वचन सुन कर सब महारथी राजा चारों ओर से शल्य को घेर कर खड़े होगये और युद्ध के लिये दृढ़ निश्चय कर निवास स्थान को प्राप्त हुये॥

महाराज दुर्योधन भी रथ पर सवार हो शल्य को हाथ जोड़ कर कहने लगा, कि अय मित्रों के प्यारे! अब वह समय है जब बुद्धिमान् मित्र और शत्रु की परीक्षा करते हैं, सो हम आप को सेनापति बना पांडवों के साथ युद्ध कर विजय पाजायेंगे। यह सुन शल्य ने कहा हे राजन्! यदि आप मुझे इतनी प्रतिष्ठा देते हैं तो मुझे कोई उज़र नहीं क्योंकि मेरा तन, मन, धन सब आप के हैं। राजा ने कहा हे मामा जी! आप सेनापति बन कर हमारी ऐसी रक्षा करें और शत्रुओं को ऐसे मारें जैसे कि महेन्द्र दानवों को मारते हैं॥

पांचवां अध्याय

—:०:—

शल्य का सेनापति बनना॥

शल्य बोला कि हे श्रेष्ठ राजन्! आप जिन रथ सवार श्री कृष्ण को रथियों में श्रेष्ठ मानते हैं वह दोनों भुज बल में मेरे सदृश नहीं क्रोध युक्त होकर मैं देवता, मनुष्य और असुरों के सहित युद्ध में सन्नद्ध हो सब पृथ्वी के मनुष्यों से युद्ध कर सकता हुं फिर पांडव को अवश्य विजय करूंगा मैं आपका सेनापति बन ऐसे व्यूह रचूंगा जिन को शत्रु कदापि तोड़ नहीं सकेंगे यह सुन कर महाराज दुर्योधन ने शल्य को सेना में अभिषेक कर सेनापति बना दिया॥

हे राजन्! तब आप की सेना में बाजे बजे, मद्रदेशी महारथी बड़े प्रसन्न हुये और राजा शल्य की प्रशंसा करने लगे। राजा शल्य तेरी जय हो। तुम शत्रुओं को मारो जिस से धृतराष्ट्र के पुत्र महाराज दुर्योधन जय पा निष्कंटक राज्य करें, आप के आगे सोमक और पांडव क्या हैं इस प्रकार प्रशंसित होने पर शल्य बड़ा प्रसन्न हुआ और कहने लगा कि राजन्! अब मैं पांचालों को पांडवों सहित मारूंगा या आप स्वर्ग को पधारूंगा॥

राजा युधिष्ठिर उन के वचनों को सुन कर श्री कृष्ण जी से कहने लगे कि हे माधव जी! दुर्योधन ने शल्य को सेना पति बनाया है इस लिये अब आप जो कुछ उचित है करें क्योंकि आप हमारे स्वामी और रक्षक हैं इस में शीघ्रता करें। यह सुन श्री कृष्ण जी ने कहा कि हे राजन्! मैं शल्य को अच्छी तरह से जानता हूं, वह बड़ा पराक्रमी अपूर्व युद्ध करने वाला है यह भीष्म, द्रोण, कर्ण के तुल्य है वरंच उन से भी अधिक पराक्रमी है, मैं सोचता हुआ भी युद्ध में इस के साम्हने खड़ा होने वाला अपनी ओर से किसी को नहीं पाता क्योंकि वह मेरी सम्पति में शिखंडी, भीमसेन, सात्यकी और धृष्टद्युम्न से भी पराक्रम में अधिक है मैं तेरे सिवाय उन का साम्हना करने वाला किसी को नहीं सकता, मेरी सम्मति में आप के सिवाय शल्य को कोई नहीं मार सकता इस लिये तुम ही उस को मारो, इस के मरने पर दुर्योधन की बड़ी सेना मृतक समान है इस लिये हे राजन्! तुम सावधान होकर

इस महारथी शल्य के सन्मुख जाओ और इसे इस प्रकार पछाड़ो कि जिस प्रकार इन्द्र ने नमुची को पछाड़ा था, इस को अपना मामा जान दया न करना क्षत्रि धर्म पालन कर इस को मारो इतना कह कर पाण्डवों के पुज्य श्री कृष्ण जी अपने डेरे को गये और राजा युधिष्ठर ने सब राजाओं और सेना को विश्राम की आज्ञा दे आप भी कर्ण की मृत्यु से आनंद मनाते हुये पांचाल और पांडवों सहित सोगये ॥

सातवां अध्याय

—:०:—

घोर युद्ध वर्णन ॥

संजय बोले हे राजन् ! प्रातःकाल होते ही दुर्योधन आप के सब वीरों से बोला हे महारथियो ! अब तुम सब तय्यार हो जाओ, यह आज्ञा पाकर सब सेना तय्यार होने लगी और बाजों के शब्द होने लगे ॥

उधर कृपाचार्य, कृतवर्मा, अश्वत्थामा, शल्य, शकुनी और अन्य बचे हुए राजा अपनी २ सेना सहित राजा दुर्योधन से मिलकर यह सलाह करने लगे, कि अकेला कोई मनुष्य पांडवों के साथ युद्ध न करे जो करेगा वह पांच पापों का भागी होगा इतनी सम्मति कर शल्य को आगे कर वह सब सेनाध्यक्ष रण भूमि में जा खड़े हुये ॥

उधर से सब पांडव भी सज धज कर इन के सन्मुख आ

डटे, उस युद्ध में कवच धारी शस्त्रों से युक्त राजा शल्य कर्ण के पुत्रों सहित व्यूह का मुख हुआ और उत्तमोत्तम वीरों से सुरक्षित होकर महाराज दुर्योधन मध्य में खड़ा हुआ और त्रिगर्त देशियों वीरों सहित कृतवर्मा वाम मार्ग में खड़ा हुआ शक और यवनों सहित कृपाचार्य दक्षिण भाग पर नियत हुये, काम्बोज देशियों को साथ लेकर अश्वत्थामा पीछे को खड़ा हुआ और सवारों सहित महारथी शकुनि और कैतव्य आगे चले ॥

उधर से निर्दोष पाण्डव अपनी सेना को तीन भागों में बांट आप की सेना के सन्मुख दौड़े। महारथी धृष्टद्युम्न, शिखंडी और सात्यकि बड़ी शीघ्रता से शल्य की सेना के सन्मुख दौड़, सेना सहित महाराज युधिष्ठिर शल्य की ओर दौड़े और शत्रुओं को मारने वाला अर्जुन कृतवर्मा और संसप्तकों के सन्मुख गये ॥

राजा ने पूछा, हे संजय! दोनों पक्षों की कितनी २ सेना थी, संजय ने उत्तर दिया कि आप के पक्ष में रथों की संख्या ग्यारह हज़ार, हाथियों की दश हज़ार सात सौ और घोड़ों की पूरे दो हज़ार और पदाति बारह कोटी थी और पाण्डवों की सेना में छः हज़ार रथी हाथी दस हज़ार घोड़े और दो करोड़ पदाति थे ॥

आठवां अध्याय

—:०:--

कौरव सेना पराजय और राजा शल्य का युद्ध ॥

हे राजन्! कौरवों का यह भयानक युद्ध देवासुर संग्राम के तुल्य हुआ, चढ़ाई करने वाले हज़ारों पैदल घोड़ों के सवार और रथी आपस में भिड़े, गज सवारों ने गज आरूढ़ों को और रथ सवारों ने रथ अरुड़ों को शक्ति तोमर और नाराचों से मारा रथ हाथी और घोड़ों से पैदल सिपाही कुचले गये, महान् व्याकुलता फैल गई, उस समय धनुषों के टंकार प्रकाशित खडग कवचों के प्रकाशों से आंखे चुंध्याती थीं पृथ्वी पर गिरते हुये शिरों के ऐसे शब्द होते थे जैसे ताड़ के वृक्ष के फलों के गिरने से होते हैं ॥

निर्भयता से घूमने वाले शूर वीरों के रुधर लिप्त अंगों से वह बन प्रफुलित के शुपुष्प वाले बन के समान भासने लगा वीरों से घायल हुई गज सेना सब दिशाओं को ऐसी छिन्न भिन्न हो गई जैसे वायू से मेघ छिन्न भिन्न होते हैं, फिर युद्ध भूमि में परलोक की ओर बहिने वाली नदी बहिने लगी उस नदी में रुधर का जल रथ, भंवर, ध्वजा, वृक्ष अस्थियें कंकर, भुजा, नेत, धनुष, भिरने, हाथी, छत्र, गदा मानो बड़ पड़ी थे, यह नदी शूरों के हर्ष और कायरों के लिये भयानक थी ॥

हे राजन् ! यह घोर युद्ध पूर्व काल के देवासुर संग्राम से कम न था इस घोर संग्राम में एक को दूसरे की सुध न रही, इस समय अर्जुन और भीमसेन ने आपकी सेना को बड़ा घायल किया और उन के आघात से आप की सेना बहुत अचेत हो गई सेना के अचेत होने पर अर्जुन और भीमसेन ने आप शंखो को बजा कर सिंह नाद किया तब बड़े शब्दों को सुनते ही धृष्टद्युम्न और शिखंडी धर्म राज को आगे करके राजा मद्र के सन्मुख गये, वहां का दृश्य अतीव भयानक था, अंत में आप की सेना के पांव उखड़ गये और वह आप के पुत्रों के देखते २ ही भाग गई, तब आप के वीरों का बड़ा हाहाकार मच गया और युद्ध में विजयी महात्मा पांडवों की तथा अन्य क्षत्रियों का तिष्ठ २ का शब्द हुआ फिर तो आप की सेना के लोग निज संबंधी पिता पुत्र मामा भानजा वरंच सहोदर भाईयों की भी परवाह न कर अपनी २ जान बचाने के लिये भाग गए ॥

इस समय अपनी हारी हुई सेना को देख राजा मद्र अपने सारथी से कहने लगा कि मन के समान इन शीघ्र गामी घोड़ों को हांक कर तत्काल मुझे वहां पहुंचा जहां राजा युधिष्ठर खड़ा है और मेरे बल को देख, अब युद्ध में मेरे आगे कोई पांडव नहीं ठहर सकेगा, यह आज्ञा पा सारथी एक क्षण में उस को राजा युधिष्ठर के सन्मुख लेगया उधर से पांडवों की सेना भी उधर ही भागी परंतु उस को अकेले शल्य ने उसे वहां ही रोक दिया, इस युद्ध में द्रुपद नकुल का सामना चित्रसेन से हुआ, इन दोनों

वीरों ने बाणों की बहुत वर्षा की, फिर तो दोनों सेनाओं की ऐसी मढ़ भीड़ हुई कि वहां पांडवों और अन्य लोगों का अंतर न रहा, चित्रसेन ने नकुल के धनुष को अपनी तीक्ष्ण धार भल्ल से मूठ के स्थान से काटा और फिर उस ने उस के घोड़ों को सुनहरी पंख वाले बाणों से मार डाला और नकुल के मस्तक पर भी तीन बाण मारे ॥

तब नकुल ढाल तलवार लेकर रथ से कूद कर चित्रसेन पर जा झपटा और सब के देखते २ उस का सिर शरीर से पृथक कर दिया। चित्रसेन की मृत्यु पर पांडवों ने बड़े सिंहनाद किये कर्ण के पुत्र सुखेण और सत्सेन नकुल के वध की इच्छा से उस पर कूदे और बाण बरसाने लगे। बाणों से वेधित शरीर नकुल दूसरा धनुष ले अन्य रथ में चढ़ क्रोध युक्त काल के समान युद्ध में डटा। उन दोनों भाईयों ने टेढ़े बाणों से उस के रथ को खंड २ कर दिया ॥

उधर से हंस कर नकुल ने तीक्ष्ण धार चार बाणों से सत्सेन के चारों घोड़ों को मार दिया, तब अन्य रथ ले दूसरे पर स्वार हो सत्सेन और सुखेण नकुल की ओर दौड़े, इस प्रकार इन दोनों का आपस में घोर युद्ध हुआ, अन्त में नकुल ने शक्ति को सत्सेन के हृदय पर मारा जिस से वह निर्जीव होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। क्रोध से व्याकुल सुखेण अपने भाई को मरा देख नकुल पर बाणों की वर्षा करने लगा। इन का युद्ध भी अपूर्व वीरता दिखलाने वाला हुआ, परन्तु

सब सेना के देखते २ नकुल ने उस के शिर को काट लिया ॥

हे राजन्! आप की सेना कर्ण के पुत्रों की मृत्यु और नकुल की वीरता को देख कर फिर भागी, तब फिर मद्रराज ने उस सेना को सहास दे खड़ा किया और आप धनुष को टंकार बड़ा सिंहनाद कर निर्भय हो युद्ध में जा डटा, तब युद्ध कुशल वीर सेना ने उस को चारों ओर से घेर लिया, सात्यकी और पाण्डव युधिष्ठर को आगे करके चारों ओर से उस के मध्यवर्ती कर बड़े सिंहनाद करने लगे, तब आप के शूरवीरों और शत्रु पक्ष के वीरों का बड़ा घोर युद्ध हुआ ॥

वीर पाण्डवों की बाण वर्षा से बहुत सी कौरवी सेना मारी गई, इसी प्रकार पांडवों के भी हज़ारों वीर युद्ध में ढेर हुये, हे राजन्! इस युद्ध में आप के पुत्रों और पाण्डवों का बाड़ा नुकसान हुआ ॥

नावां अध्याय

—:o:—

घोर संग्राम ॥

उस समय परस्पर युद्ध करने वाली दोनों सेनायें छिन्न भिन्न और व्याकुल होगई, इस बड़े युद्ध में शूरवीरों के भागने गजों के चिंघारने, पदातियों और घोड़ों के दौड़ने से विनाश

के भय से सेना में बहुत व्याकुलता फैल गई, सूर्योदय के पीछे दिन के प्रथम भाग में युद्ध आरम्भ हुआ और आप की सेना ऐसी पीड़ित हुई जैसे कीचड़ में गौ होती है ॥

तब राजा मद्र युद्ध के लिये पाण्डवों के सन्मुख गये, पाण्डवों ने भी राजा मद्र को युद्ध में तीक्ष्ण धारवाले बाणों से घायल किया राजा मद्र ने भी धर्मराज के देखते ही उस की सेना को व्याकुल किया और ऐसा घोर युद्ध हुआ कि पर्वतों सहित पृथ्वी कम्पायमान हुई और समस्त कौरवों ने एका एक धावा किया शल्य युधिष्ठर पर बाण वर्षा करने लगा, दश बाणों से भीमसेन, नकुल, सहदेव, धृष्टद्युम्न, सात्यकी और शिखण्डी को भी शल्य ने घायल किया और ऐसी बाणों की वर्षा की जैसे वर्षा ऋतु में इन्द्र वर्षा करता है शल्य के बाणों से सोमक और प्रभद्रक नाम क्षत्री इस प्रकार गिरे जैसे मोरों के झुंड और टिड्डियें गिरती हैं, शल्य के बाणों से हाथी, घोड़े पदाति और रथी व्याकुल हो भागते हुए गिरने लगे, कालरूप धारी शल्य ने अपना भुज बल पूर्ण रूप से दिखाया और पाण्डवों के क्रोध युक्त राजा युधिष्ठर ने शल्य की सेना को ऐसे रोका जैसे कि अंकुशों से मतवाले हाथीको रोकते हैं शल्यने विषयुक्त बाण छोड़ा, वह बाण महात्मा युधिष्ठर को छोड़ कर बड़ी तीव्रता से पृथ्वी में जा घुसा इस के पीछे भीमसेन ने शल्य को ५ बाणों से घायल किया सहदेव ने ५ बाण और नकुल ने दश बाण शल्य को मारे शल्य पर ऐसी बाणों की वर्षा की जैसे मेघ पर्वतों पर जल की वर्षा करते हैं, इस प्रकार चारों ओर

से शल्य को घायल होता देख बड़े क्रोध से कृतवर्मा, कृपाचार्य, उलूक और शकुनी सन्मुख दौड़े और अश्वत्थामा तथा आप के सब पुत्रों ने बड़ी शीघ्रता से मिल कर शल्य की रक्षा की, कृतवर्मा ने शिली मुख नामक तीन बाणों से भीमसेन को वेध कर बाणों की बड़ी वर्षा से उसे रोका, फिर बाणों की वर्षा से धृष्टद्युम्न को पीड़ित किया, शकुनी द्रौपदी के पुत्रों के और अश्वत्थामा नकुल सहदेव के सन्मुख गया, और दुर्योधन युद्ध में अर्जुन और केशव जी के सन्मुख खड़ा होगया और बाणों से उन्हें घायल किया, हे राजन्! फिर तो शूर वीरों के सैंकड़ों द्वंद युद्ध होने लगे, सहदेव ने शल्य के पुत्र को खड़ग से मारा अश्वत्थामा ने दश २ बाण द्रौपदी के प्रत्येक पुत्र को मारे और फिर भीमसेन के घोड़ों को मारा घोड़ों के मारे जाने पर भीमसेन ने झट रथ से कूद कर गदा को उठा कृतवर्मा के रथ और घोड़ों को चूर्ण किया तब तो कृतवर्मा भी रथ से कूद पड़ा हे राजन्! अत्यन्त क्रोध युक्त शल्य ने तीक्ष्ण बाणों से युधिष्ठर को पीड़ित किया उधर क्रोध युक्त दांतों को पीस कर भीमसेन वज्र के समान महा भारी गदा को उठा शल्य के सन्मुख गया और शल्य के घोड़ों को मारा, तब गर्जते हुये शल्य ने भीमसेन की छाती पर तोमर का प्रहार किया और तोमर भी हाथ से गिर गया, पराक्रमी भीमसेन ने उसी तोमर को उठा कर शल्य के सारथी पर प्रहार किया जिस से वह दीन वहीं गिर पड़ा और शल्य हट गया धैर्य युक्त शल्य ने बदला लेने के लिये गदा को उठाया ॥

दसवां अध्याय

—:-०-:—

घोर युद्ध वर्णन

शल्य अपने सारथी को भग्न देख लोहमय गदा उठा पर्वत के समान सन्मुख खड़ा हो गया, युद्ध में शल्य और यदुनन्दन बलदेव के सिवाय अन्य कोई मनुष्य भीमसेन के वेग को सहार नहीं सकता था और न ही भीमसेन के सिवाय शल्य की गदा के वेग को कोई सह सकता था, शल्य की घुमाई हुई गदा संतप्त सुवर्ण के समान चमकी, भीमसेन की घुमाई हुई गदा बिजली के समान शोभायमान हुई। राजा मद्र की गदा से घायल भीमसेन की गदा से अग्नि के शोले उठे भीमसेन की गदा से घायल शल्य की गदा अंगारों की वर्षा करने लगी ॥

इन की गदा प्रहार के शब्दों से दशो दिशा गूंज उठीं हे राजन ! फिर इन दोनो ने गदाओं को छोड़ लोहदंड उठा लिये और दोनों ने अपने कर्तव दिखलाये, फिर वह दोनों परस्पर के प्रहार से इन्द्र ध्वजा के समान एक साथ ही गिर पड़े, तब दोनों सेनाओं के शूरवीर हाहा कार करने लगे, तब कृपाचार्य जी राजा मद्र को अपने रथ में डाल युद्ध भूमि से दूर ले गये। भीमसेन क्षण भर में सचेत हो उठा और फिर गदा हाथ में ले राजा मद्र को बुलाने लगा ॥

फिर पांडुनन्दन सिंह नाद करते हुये दुर्योधन के सन्मुख

गये पांडवी सेना विजय चाहती हुई आप की सेना में घूसने लगी ॥

बड़े पराक्रमी कृपाचार्य, कृतवर्मा, शल्य और शकुनि ने धर्म राज से युद्ध किया, आप के पुत्र की आज्ञा से अश्वत्थामा ने अर्जुन से युद्ध किया, विजय चाहने वाली आप की सेना पाण्डवी सेना पर कूदी फिर दोनों पक्षों के योधाओं का घोर संग्राम हुआ महा घोर युद्ध होने पर भी आपके और पाण्डवों के योधाओं ने मुख नहीं मोड़ा वरंच विजय की इच्छा अथवा ब्रह्मलोक की प्राप्ती की आशा से टूट टूट कर लड़ने लगे, उस समय आप की और उन की सेना में मारो! पकड़ो! काटो! यही शब्द सुनाई देने लगे, फिर महारथी शल्य ने युधिष्ठर को बाणों से घायल किया, उधर से मर्म वेत्ता हंसते हुये युधिष्ठर ने मर्मों को लक्ष करके १४ बाण शल्य को मारे तब क्रोध युक्त शल्य ने बहुत से बाणों से युधिष्ठर को ढाप कर घायल किया, महाराज धर्मपुत्र ने भी तेज बाणों से राजा मद्र को घायल किया ॥

उस समय युधिष्ठर की छाती पर बाणों का जाल बन गया वरंच क्रोधयुक्त शल्य के बाणों ने उस की चारों दिशाओं को ढांप दिया जिस से युधिष्ठर पराक्रम से ऐसा रहित होगया जैसे कि इन्द्र के हाथ से जंभ असुर हुआ था ॥

ग्यारहवां अध्याय

—:०:—

शल्य युद्ध वर्णन ॥

इस प्रकार राजा मद्र के हाथ से धर्मराज के पीड़ित होने पर सात्यकी भीमसेन और नकुल ने रथों से शल्य को घेर कर पीड़ित किया इन्हों ने शल्य को बाणों से ढांप दिया शल्य ने भी सब पर बाणों की वर्षा की ॥

हे राजन्! उन महारथियों के हाथ से घायल शल्य ने अपने अंगों से ऐसे रुधिर बहाया जैसे पर्वत धातु बहाते हैं, धर्म पुत्र के बाणों से ढके हुये शल्य ने तेज धारा बाणों से उन्हें घायल किया, इस के बाणों से धर्म पुत्र के घायल होने पर क्रोध युक्त सात्यकी ने मद्र राज को बाण समूहों से हटाया परन्तु शल्य ने भी सात्यकी के बड़े धनुष को काट दिया ॥

हे महाराज! फिर सात्यकी ने तोमर को, भीमसेन ने नाराच को, नकुल ने शक्ति और सहदेव ने शुभ गदा को शल्य पर चलाया, शल्य के वध इच्छा से धर्मराज ने शतघ्नी को चलाया, परन्तु इन पाचों के छोड़े हुये अस्त्रों को राज मद्र ने रोक लिया, तब भीमसेन ने चित्त से जीवन को त्याग राजा मद्र से युद्ध किया, नकुल सहदेव और सात्यकी ने बाणों से इसे आच्छादित कर दिया, परन्तु शल्य ने सब का खूब सामना किया ॥

यह देख राजा युधिष्ठर ने सोचा कि श्री कृष्ण जी का यह कथन कि क्रोध युक्त राजा शल्य पांडव सेना का नाश

नहीं करेगा, " कैसे सत्य होगा, तब शल्य के बाणों से ढके हुये पांडव योधा उस के सन्मुख जाने को समर्थ न हुये, फिर भी युधिष्ठर ने इस का पीछा नहीं छोड़ा ॥

बारहवां अध्याय

—:o:—

सफुल्ल युद्ध वर्णान ॥

युद्ध में अश्वत्थामा तथा उस के आश्रित लड़ने वाले वीरों के बाणों से घायल अर्जुन ने तीन शिह्नी मुख बाणों से अश्वत्थामा को घायल किया और आप की सेना भी घायल होगई फिर भी आप की सेना ने अर्जुन को पीठ नहीं दिखाई वरंच आप के महारथियों ने अर्जुन को घेर कर महा युद्ध किया और बाणों की इतनी वर्षा कि अर्जुन का रथ को बाणों से भरपूर होगय ॥

इस प्रकार श्रीकृष्ण और अर्जुन को घालय देख युद्ध में दुर्मद शूरवीर प्रसन्न हुये उस समय जो दशा अर्जुन की आप के वीरों ने की इस से पहिले न देखी न सुनी थी। फिर अर्जुन की क्रोध रूप अग्नि ने सेना रूप इंधन को भस्म कर दिया। हे भरतषर्भ ! लोथों के ढेरों से ढका हुआ मार्ग शूर वीरों के लिये प्रसन्नता दायक और भीरुओं के लिये भय जनक हो गया, फिर अशवत्थामा ने अर्जुन को रोका और दोनों की मुठ भेड़ हुई दोनों ने मेघों के समान परस्पर बाणा

वर्षा की, इन का घोर संग्राम देर तक होता रहा, अश्वत्थामा ने १२ बाणों से अर्जुन को और १० बाणों से श्रीकृष्ण जी को घायल किया, तब अर्जुन ने उसे गुरु का पुत्र जान कर पहिले उसे घोड़ों, सारथी और ध्वजा से रहित किया फिर तीन बाणों से उसे घायल किया । तब मुसकराते हुए अश्वत्थामा ने अपने मूशल को उस पर फैंका जिस को मार्ग में ही अर्जुन ने काट दिया । मूशल को टूटे हुए देख अश्वत्थामा ने घोर परिघ को उठा कर अर्जुन पर बड़े क्रोध से फैंका परंतु वीर अर्जुन ने उसे पांच बाणों से खंड २ कर दिया ॥

तब अर्जुन ने अपने तीन बाण अश्वत्थामा पर छोड़े जिससे वह अत्यन्त घायल हो गया फिर अश्वत्थामा ने क्रोधमें आकर अर्जुन पर बाण छोड़े जिस से इन दोनों का आपस में बड़ा घोर युद्ध हुआ ॥

संजय बोला हे राजन्! दुर्योधन और धृष्टद्युम्न ने भी बाणों और शक्तियों से घोर युद्ध किया, उन दोनों ने एक दूसरे पर बाणों की वर्षा की फिर राजा दुर्योधन ने बड़े वेग वाले ५ बाणों से धृष्टद्युम्न को घायल किया उधर से धृष्टद्युम्न ने दुर्योधन को खूब घायल किया, तब उस के सगे भाईयों ने राजा को पीड़ित देख बड़ी सेना सहित उसे घेर लिया इस प्रकार सब से घिरा हुआ वह शूर अस्त्रों की तीव्रता दिखाता हुआ सिंह के समान घूमने लगा ॥

सभद्रक नामक क्षत्रियों सहित शिखंडी ने कृतवर्मा और कृपाचार्य से घोर युद्ध किया, शल्य ने पाडवों को सात्यकी सहित घायल किया, इस के अनंतर महाराज युधिष्ठर, भीम-

सेन सात्यकी और सहदेव ने राजा मद्र पर बाण बरसाये शल्य ने तीन बाणों से युधिष्ठर को, पांच से भीमसेन को १०० बाणों से सात्यकी को और तीन बाणों से सहदेव को घायल किया, फिर युधिष्ठर और सहदेव ने राजा मद्र की छाती पर दस २ बाण मारे और भीमसेन ने कंकपत्र नामी ६० बाण तथा सात्यकी ने १० बाण चलाये, तब राजा मद्र ने टेढ़े पर्व वाले ७० बाणों से सात्यकी को घायल किया, इस समय हम ने राजा मद्र के अपूर्व पराक्रम को देखा कि सब पांडव मिल कर भी राजा मद्र का सामना न कर सके ॥

हे राजन् ! यह ऐसा घोर युद्ध हुआ जैसा पूर्व काल में सम्बर और देवराज का हुआ था, फिर सात्यकी ने राजा मद्र को तिष्ठ तिष्ठ शब्दों से ललकारा और इन दोनों ने अपूर्व द्वन्द्व युद्ध किया, इस के पीछे बड़े धनुष धारी पांचों पांडव और यादव रथों पर चढ़ मामा को मारने की इच्छा से उस के सन्मुख गये इन का आपस में घोर युद्ध होने लगा, इस युद्ध में शल्य का घूमता हुआ रथ इस प्रकार दिखाई देने लगा जैसे कि असुरों के नाश के समय इन्द्र का रथ घूमता था ॥

तेरवां अध्याय

—:०:—

घोर युद्ध वर्णन ॥

संजय बोला कि हे राजन् ! आप की सेना के लोग

जिन के सेनापति राजा मद्र थे बड़ी तीव्रता से लड़ने को पांडवों के सन्मुख गये, युद्ध में मतवाले आप के वीरों ने क्षण भर में पांडव सेना को छिन्न भिन्न कर दिया, कौरवों से घायल पांडवी सेना श्रीकृष्ण और महाराज अर्जुन के रोकने पर भी युद्ध में नियत नहीं हुई इस के पीछे क्रोध युक्त अर्जुन ने कृपाचार्य और कृतवर्मा को उन के सारथियों सहित बाणों से ढक दिया, सहदेव ने शकुनी को उस की सेना सहित हराया, नकुल ने एक भाग में हो कर राजा मद्र को देखा, और द्रौपदी के पुत्रों ने भी बहुत से राजाओं को रोका पांचालदेशीय शिखंडी ने अश्वत्थामा को रोका और गदा धारी भीमसेन ने राजा दुर्योधन और शल्य को रोका ॥

हे राजन्! इन सब ने घोर संग्राम किये इस युद्ध में घायल शल्य से पांडव महाराज युधिष्ठिर को पुकारते हुए मद्र को छोड़ भागे। फिर महाराज युधिष्ठिर श्रीकृष्ण और अपने भाईयों को बुला कर कहने लगे कि आप लोगों ने अपने भाग के भीष्म द्रोण और कर्ण जो कि कौरवों के लिये लड़ते थे उन को पछाड़ा अब यह अकेला शल्य युद्ध करने वाला मेरा भाग है इस लिये अब मैं राजा मद्र को युद्ध में पछाड़ना चाहता हूं, और आप से प्रार्थना करता हूं कि नकुल और सहदेव मेरे चक्र के रक्षक हों सात्यकी दक्षिण की ओर, धृष्टद्युम्न उत्तर की ओर, अर्जुन और भीमसेन आगे को ठहर मेरी सहायता करें, शल्य युद्ध में मुझे मारेगा या मैं उसे मारे बिना पीछे नहीं हटूंगा, अर्द क्षत्री वर्ग! तुम मेरे इन वचनों

को सत्य सत्य मानो मैं क्षत्री धर्म को नहीं छोड़ूंगा, यह सुन सब लोगों ने वैसा ही किया ॥

इस प्रकार जब महाराज युधिष्ठर शल्य के सन्मुख गये तो पांचालों ने सैकड़ों शंख और उत्तम भेरियों को बजाया। और सिंहनाद किये और बड़े क्रोध से राजा मद्र के सन्मुख दौड़े। उधर से श्रेष्ठ कौरव भी हाथियों को घेरे और शंखों के शब्द करते हुए बड़ी प्रसन्नता से आगे बढ़े, फिर शल्य ने युधिष्ठर पर बादलों से वर्षा के समान बाण बरसाये, उसी प्रकार कौरव राज ने भी द्रोणाचार्य की अपूर्व शिक्षाओं को दिखलाया और बाणों की वर्षा की, हे राजन्! यह ऐसा युद्ध हुआ कि जिसका वर्णन नहीं हो सकता ॥

राजा ने आपके पुत्र पर रथ शक्ति प्रहार किया जो कि आप के पुत्र को छाती पर लगी और रथ के बैठने के स्थान वह गिर पड़ा और अचेत हो गया उस के अचेत होने पर भीम ने उस के सारथी के शिर को क्षुरप्र से काटा, सारथी के मरने से रथ के घोड़े रथ को लेकर दिशाओं को भागे और सेना में हा हा कार मच गया, तभी अश्वत्थामा, कृपाचार्य, कृतवर्मा दुर्योधन की रक्षा के लिये उस की ओर भागे और आप की सेना के पांओं उखड़ गए ॥

फिर महाराज युधिष्ठर अपने घोड़ों को दौड़ा कर राजा मद्र की ओर भागा वहां हम ने युधिष्ठर के अपूर्व बल को देखा क्रोध से इस ने कंपायमान होकर तीक्ष्ण धार भल्लों से लाखों वीरों को मारा जिस २ सेना के सन्मुख गया उस २ सेना को ऐसा

गिराया जैसे घोर वज्र पर्वतों को गिराता है फिर महाराज ने राजा मद्र की ओर जाकर तिष्ठ २ शब्द से ललकारा, शल्य राजा के सन्मुख गया तब वह दोनों शंखों को बजा एक दूसरे को घुड़कते हुए सन्मुख हुए उन को परस्पर घोर युद्ध करते हुए देख कर विजय किस की होगी यह कोई भी निवारण न कर सका, वरञ्च सब को यह संदेह हुआ कि देखो अब शल्य अर्जुन को मार कर राज्य पाता है या पाण्डु शल्य को वध कर राज छत्र पाता है ॥

अन्त में राजा युधिष्ठर ने शल्य की ध्वजा घोड़ों सारथी को मार उसे भी घायल किया, तब तो दुर्योधन की सेना छिन्न भिन्न हो गई, अश्वत्थामा घायल शल्य को अपने रथ पर चढ़ा शीघ्रता से चल दिये परन्तु महाराज युधिष्ठर के गर्जने पर खड़े हो गये, राजा शल्य दूसरे रथ पर जो कि विधि पूर्वक शस्त्रों से अलंकृत था जा चढ़ा ॥

चौदहवां अध्याय

—:o:—

शल्य वध वर्णन ॥

इस के अनंतर पराक्रमी राजा शल्य बड़े वेगवान् दूसरे रथ पर चढ़ युधिष्ठर के सामने सिंह के समान गर्जा और फिर शल्य सात्यकी भीमसेन आदि पर बाणों की वर्षा करने लगा और रण भूमि को लोथों से आच्छादित कर दिया

तब अत्यन्त क्रोध युक्त पाण्डव पांचाल और सामकों ने इस प्रकार शत्रु वध करने वाले शल्य को घेर लिया ॥

महाराज युधिष्ठर ने बाणों से शल्य को घायल किया शल्य ने भी राजा को घायल किया, राजा के बाणों से शल्य मूर्छित होगया, परंतु एक महुर्त में फिर सचेत हो उस ने १०० बाणों से पांडव को घायल किया और राजा के धनुष को भी काट दिया फिर युधिष्ठर ने दूसरा धनुष ले इस तरह से उसे बाणों से घायल किया जिस तरह महेंद्र ने नमुचि असुर को घायल किया था, कृपाचार्य ने छे बाणों से उस के सारथी को मारा वह सारथी संमुख गिर पड़ा, राजा मद्र ने भी युधिष्ठर के चारों घोड़ों को मार कर उस के शूर बीरों का भी बड़ा नाश किया, यह देख भीमसेन ने बढ़ी राजा मद्र के धनुष को काट दो बाणों से राजा को कठिन घायल किया और फिर इस के सारथी को मार घोड़ों को भी मार गिराया, राजा शल्य रथ और धनुष के टूट जाने पर ढाल तलवार को लेकर रथ से कूद कुंती पुत्र के सन्मुख दौड़ा, भीमसेन ने उस की अनुपम ढाल तलवार को काट दिया फिर आप की सेना के समूह व्याकुल हो अचेत होकर नाश होने लगी, घायल राजा मद्र तीव्रता से युधिष्ठर के सन्मुख ऐसे गया जैसे मृग के पकड़ने को सिंह जाता है ॥

राजा युधिष्ठर ने अमोघ शक्ती शल्य पर छोड़ी जो राजा शल्य की छाती को फाड़ कर राजा के यश को बढ़ाती हुई पृथ्वी पर गिरी, राजा के नाक, आंख, कान और मुख

से रुधिर बहने लगा और शल्य भुजाओं को पसार रथ से ऐसे गिरा जैसे घोर वज्राघात से पर्वत की चोटी गिरती है ॥

फिर राजा युधिष्ठर ने धनुष को लेकर शत्रुओं को ऐसे छिन्न भिन्न किया जैसे गरुड़ सर्पों को करता है। शल्य के गिरने पर उस का छोटा भाई अपने भाई के सब गुणों वाला महाराज युधिष्ठर के सन्मुख गया युधिष्ठर ने उस का भी शिर काट दिया उस को भी मरा देख कौरव सेना में हाहाकार मच गया और सेना के पांव उखड़ गये। इतने में इन को ढाढ़स देता हुआ कृतवर्मा साह्मने गया जिस को बड़े धनुष धारी सात्यकी ने रोका और दोनों का घोर युद्ध होने लगा ॥

कृतवर्मा ने दशवाणों से सात्यकी को और तीन बाणों से उस के घोड़ों को घायल किया, और टेढ़े पर्व वाले एक बाण से उस के धनुष को काटा, सात्यकी ने उस टूटे धनुष को त्याग नया दृढ़ उत्तम धनुष को ले दश बाणों से कृतवर्मा को छाती पर घायल किया और रथ को भी तोड़ दिया॥

हे राजन्! राजा मद्र के मरने और कृतवर्मा के विरथ होने पर दुर्योधन की सब सेना फिर भागने को उद्यत हुई, उस समय दुर्योधन ने पांडवों को अपने सन्मुख आते देख बड़ी धीरता और पराक्रम से अकेले ने ही सामना किया इतने में कृतवर्मा रथ पर चढ़ फिर आगया परंतु कृतवर्मा के घोड़ों को मार कृपाचार्य को भी छः बाणों से युधिष्ठर ने घायल किया ॥

हे राजन्! समस्त ... [illegible]

युधिष्ठर की प्रशंसा की और पृथ्वी को चारों ओर से शब्दाय मान करके बाजों को बजाया ॥

पंद्रहवां अध्याय

—:०:—

कौरव सेना पलायन ॥

संजय बोले कि हे राजन्! शल्य की मृत्यु का समाचार पा राजा मद्र के सात सौ योधा युधिष्ठर को जीता नहीं छोड़ेंगे निश्चय कर पाडवों पर आटूटे, उधर युधिष्ठर को सेना से पीड़ित सुन महाराज अर्जुन सिंह के समान गर्जता और गांडीव धनुष को टंकारता हुआ रण में आगर्जा, तब पांडव अर्जुन, भीमसेन, नकल, सहदेव, सात्यकी द्रौपदी के सब पुत्रों, धृष्टद्युम्न शिखंडी और सोमकों सहित पांचालों ने युधिष्ठर की मध्यवर्ती शत्रु सेना को क्षण भर में छिन्न भिन कर दिय और आप के पुत्रों को ऐसा कंपायमान किया जैसे महा तीव्र वायु वृक्षों को कंपायमान करता है, राजा मद्र के योधा मारे हूये चारों ओर गिरते दिखाई देने लगे ॥

इस के पीछे गंधार देश के राजा का पुत्र और शकुनी दुर्योधन से कहिने लगे कि ऐ भारत वंशी! यह क्या बात है कि हमारे देखते हुये भी मद्र देशी सेना मारी जारही है युद्ध में आप के विद्यमान होने पर यह बात उचित नहीं इन के साथ होकर युद्ध करना चाहिये शीघ्र त्यार होकर चलो उन की

रक्षा करें, यह सुन दुर्योधनादि सब वहां पहुंचे वहां पर सिंह के समान गर्जते हूये आप के पुत्र को आता देखि आप की सेना ने बड़े साहस से मारो! पकड़ो! प्रहार करो! शिरों को काटो! अब पाडव जाने न पावें की अवाजें आने लगीं, पाराडव राजा मद्र की सेना को इस प्रकार उद्यत देख साह्मने निकले, हमारे पहुंचने से पहिले ही उस सेना का पाराडवों ने नाश कर दिया ॥

फिर पाराडव हम लोगों को आता देख बड़े वेग से हमारे सन्मुख गर्जते हूये आडटे परंतु राजा मद्र की वीर सेना को मरा देख और राजा मद्र की मृत्यु को सुन दुर्योधन की सब सेना फिर मुख फेरने को उद्यत हुई और भाग निकली ॥

हे राजन्! शल्य की मृत्यु के अनंतर आप के किसी शूर वीर को साहस न हुआ कि फिर सेना एकत्र कर सामना कर सके। भीष्म, द्रोण और कर्ण के मरने पर आप के लोगों को जो दुःख और भय हुआ था वही अब हुआ, शल्य के मरने पर हम लोगों की जय की आशा निर्मूल होगई ॥

पाण्डवों के बाणों से घायल हाय हाय करती हुई आप की सेना चारों दिशाओं को भागी, विजय भिलाषी पांचाल और पाराडव पराजित छिन्न भिन्न भागते हुए आप के वीरों के पीछे बाणों को मारते हुए भागे उन ो भागते देख कर पांचाल और पांडव आपस में यह कहने लगे, कि "अब महाराज युधिष्ठिर के शत्रु मर चुके हैं दुर्योधन राज्य और लक्ष्मी से व हीन हो गया अब राजा धृतराष्ट्र पुत्र की मृत्यु को सुन कर छित हो पृथ्वी पर गिरेगा, अब अर्जुन को सब धनुष

धारियों में श्रेष्ठ जानो अब पाप बुद्धि दुर्योधन पछतायेगा, पाडवों की विजय कैसे नहीं हो सकती, सब जगत के स्वामी श्री कृष्णचन्द्र जी नाथ हैं और धर्म जिन का आश्रय है इस प्रकार बातें करते हुए प्रसन्नता और हर्ष से आप की सेना के पीछे भागे और पराक्रमी अर्जुन रथ की सेना के सन्मुख हुआ, महारथी सात्यकी नकुल और सहदेव शकुनि के सन्मुख हुए, तब दुर्योधन उन सब को भीमसेन के भय से पीड़ित और भागते हुए देख आश्चर्य हो अपने सारथी से बोला कि "धनुष हाथ से लिये सन्मुख स्थित अर्जुन मुझ को उल्लंघन करता है सब सेनाओं के मध्य में मुझे ले चलो, अर्द्ध सूत वहां मेरे पहुंचने और पांडवों को रोकने से मेरी सेना शीघ्र ही लौटेगी" यह आज्ञा पा सारथी ने रथ को धीरे २ हांका और साथ ही इक्कीस हज़ार पदाति युद्ध करने को उद्यत चले और उन का घोर युद्ध होना आरम्भ हुआ, हे राजन! तब भीमसेन और धृष्टद्युम्न ने चतुरंगा सेना सहित उन नाना देश निवासियों को रोका फिर सिंहनाद करते हुए अन्य पदाति भीमसेन के सन्मुख गए, क्रोध युक्त युद्ध दुर्मद धृतराष्ट्र के पुत्र भीमसेन को देख गर्जने लगे उन सब ने भीमसेन को घेर कर चारों ओर से घायल किया इस प्रकार पीड़ित भीमसेन पर्वत के समान अचल रहा ॥

तब भीमसेन चारों ओर पदातियों से घिर क्रोधित हो गदा हाथ में ले रथ से कूद खड़ा हो गया और आप के पदातियों को नाश करने लगा। इस युद्ध में इक्कीस हजारों को ही मार आप भी रुधिर से लिथड़ पिथड़ हो गया, फिर धृष्टद्युम्न के

सामने जा डटा, फिर युधिष्ठर की सना के महावीर पदाति और रथी आप के पुत्र दुर्योधन की ओर आये तब आप की सेना के लोगों के पांव उखड़ गये, उस समय आप के पुत्र ने भी अपूर्व वीरता दिखाई और महाराज दुर्योधन ने अपनी भागती हुई सेना के भागो को पुकार कर कहा कि मैं पृथ्वी और आकाश में भी ऐसा कोई स्थान नहीं देखता जहां पहुंच कर तुम पाण्डवों से बच सको इस लिये तुम्हारा भागना व्यर्थ है इस समय उन की सेना थोड़ी है श्री कृष्ण सहित अर्जुन भी अत्यन्त घायल है इस लिये यदि अब सब डट गये तो निश्चय हमारी विजय होगी यह हृदय को हिलाने और ढाड़स के बढ़ाने वाले वचन सुन कर धीर्य्य धार, शस्त्रों को हाथ में ले, वह सब लोग फिर पाण्डवों के सन्मुख खड़े हुए, महाराज अर्जुन भी रथ में बैठ गांडीव धनुष को टंकारता हुआ आया ॥

सोलवां अध्याय

—:-०-:—

राज शल्व और पाण्डवों का युद्ध और शल्व की मृत्यु ॥

इस प्रकार सेना के फिर एकत्र होने पर म्लेछों का राजा महा क्रोध युक्त शल्व पाण्डवों की बड़ी सेना के सन्मुख हुआ और उस ने इंद्र के वज्र के समान महा घोर रूपकों से पाण्डवों

को घायल किया पाण्डवी सेना चारों ओर को भागती नज़र पड़ी, पांडवी सेना को पराजित हो आते देख आप के वीरों ने इस राजा की बड़ी बड़ाई की और चन्द्रवर्ण श्वेत शङ्खों को बजाया जिस को पाण्डवों और संजियों का सेनापति धृष्टद्युम्न सुन शाल्व के साम्हने आया, इस को आते देख शाल्व ने भी अपने हाथी को आगे किया, धृष्टद्युम्न ने चमकते हुये तीव्र बाणों से और पांच सौ नाराचों से हाथी को घायल किया घायल हाथी घूम कर तीव्रता से भागा, तब शाल्व ने बड़ी तीव्रता से अङ्कुशों और चाबकों से हाथी को धृष्टद्युम्न के रथ की ओर हांका इस प्रकार रथ की ओर आते हुये हाथी को देख तत्काल गदा हाथ में ले वह रथ से कूद पड़ा, मत्त हाथी ने सुवर्ण जड़ित रथ को घोड़ों सहित अपनी सूंड से उठा पृथ्वी पर दे मारा और चूर्ण कर दिया ॥

इस प्रकार धृष्टद्युम्न को पीड़ित देख भीमसेन सात्यकी और शिखंडी वह तीनों बड़ी तेज़ी से उस की ओर दौड़े उन्हों ने आते हुये हाथी के वेग को रोका वह हाथी महा रथियों से घिरा हुआ कम्पायमान हुआ तब राजा शाल्व चारों ओर बाणों की वर्षा करने लगा जिस से शीघ्र गामी रथी इधर उधर भागे ॥

हे राजन् ! हाहाकार करते हुऐ सब पांचाल, मत्स्य और संजय देशीयों ने उस राजा को चारों ओर से रोका । द्रुपद का पुत्र वीर गदा लेकर हाथी पर लपटा और अपनी गदा से उसे तीव्र घायल किया, जिस से वह पर्वताकार गज मुख से

रुधिर बहाता हुआ पृथ्वी पर गिर पड़ा और मलोक सिधार गया तब गजराज के गिराने के पीछे शिनियों में बड़े वीर सात्यकी ने राजा शाल्व के शिर को भल्ल से काट डाला और वह भी पृथ्वी पर गिर पड़ा ॥

सतारहवां अध्याय

—:o:—

कृतवर्मा का रथ विहीन होना ॥

संजय बोले कि हे राजन् ! शूर शाल्व के मरने पर आप की तितर बितर होती हुई सेना को महारथी कृतवर्मा ने युद्ध में ही रोका, फिर कौरवों का युद्ध पाण्डवों से हुआ, फिर शिनी के पुत्र सात्यकी ने राजा क्षेम कीर्ति को यमलोक में पहुंचाया, तब बुद्धिमान् कृतवर्मा तीव्रता से बाण वर्षा करता हुआ उसकी ओर दौड़ा उसे आता देख सिंह के समान गर्जता हुआ वह भी सन्मुख आया, कृतवर्मा ने अकेले सत्य कर्मी को देख चार बाणों से उस के घोड़ों को घायल किया तब तेज धार तीन बाणों से कृतवर्मा ने सात्यकी को घायल कर एक बाण से उसके धनुष को काट डाला उस धनुष को टूटा देख क्रोध युक्त अतिरथी सात्यकी एक नये धनुष को चढ़ा कर शीघ्र ही कृतवर्मा के सन्मुख गया, और जाते ही दश बाणों से उसके सारथी और घोड़ा को ध्वजा सहित गिरा दिया ॥

हे राजन् ! सारथी को मरा और रथ को टूटा देख सात्य-

को के मारने की इच्छा से कौरव उसके सन्मुख दौड़े और सब के देखते ही उस महा बाहु को रथ में बैठा कर युद्ध भूमि से दूर ले गये ॥

हे राजन्! सात्यकी के नियत होने और कृतवर्मा के विरथ होने से दुर्योधन की सेना के पांव उखड़ गये यह देख दुर्योधन अकेले ने ही उस सेना को रोका और बड़े क्रोध से पाण्डव धृष्टद्युम्न द्रौपदी के पुत्र और पांचालों को तीक्ष्ण बाणों से रोका यहां तक कि पाण्डवों की सेना उन के सामने ठहर न सकी इतने में कृतवर्मा दूसरे रथ पर सवार हो युद्ध में फिर आगया ॥

अठारहवां अध्याय

—:०:—

अपूर्व युद्ध वर्णन ॥

हे राजन्! इस समय आप के पुत्र ने बाणों की इतनी वर्षा की कि उन से पृथ्वी आच्छादित हो गई, पाण्डव पक्ष का कोई हाथी, घोड़ा और मनुष्य ऐसा न रहा जिस को उस का बाण न लगा हो आपके और शत्रु दल के मध्य में अकेला दुर्योधन सिंह के समान गर्जता था उस समय आप के पुत्र ने ऐसे हाथ दिखलाये कि सब पाण्डव मिल कर भी उस का साम्हना न कर सके ॥

इस युद्ध में युधिष्ठिर के रथ को भी आप के पुत्र ने चूर्ण किया वरंच राजा को भी घायल किया ॥

तब सहदेव राजा को रथ में चढ़ा दूर ले गया फिर महाराज युधिष्ठिर दूसरे रथ पर चढ़ युद्ध में आ गर्जा, बड़ा साहसी उल्लूक बाणों की वृष्टि करता हुआ नकुल के सन्मुख गया, शकुनी के पुत्र को नकुल ने बाणों से रोका, सात्यकी ने कृतवर्मा से युद्ध किया इस के पीछे दुर्योधन ने धृष्टद्युम्न के धनुष को काट उसे घायल किया तब वह भी राजा से युद्ध करने लगा इस समय एसा युद्ध हुआ जैसे दो मदोन्मत्त हाथियों का होता है इस के अनन्तर क्रोध युक्त वीर कृपाचार्य ने द्रौपदी के पुत्रों को गुप्त ग्रंथी वाले बाणों से घायल किया पैदल पैदलों के साथ, हाथी हाथीयों के साथ, घोड़े घोड़ों के साथ और रथी रथीयों के साथ डट गये ॥

हे राजन्! यह भी महा घोर युद्ध हुआ सूर्य आकाश से रहित होगया, चारों ओर से अंधकार छागया परन्तु यह अंधकार एक महूर्त में ही शांत हो गया क्योंकि वीरों के रुधिर से वहां कीचड़ हो गया ॥

उन्नीसवां अध्याय

—:०:—

शकुनि का पराजय हो पीठ दिखाना ॥

इस प्रकार आपके पुत्रों का पाण्डवों से घोर युद्ध होने पर आपकी सेना छिन्न भिन्न हो गई जिस को बड़ी कठिनता से आप के पुत्र ने रोका और फिर युद्ध होने लगा, दोनों

सेनाओं के वीरों में से किसी ने मुख न मोड़ा बड़ी वीरता से लड़े ॥

इस के अनंतर विजयाभिलाषी युधिष्ठिर ने आप के पुत्रों के वीर कृपाचार्य को घायल कर चार नाराचों से कृतवर्मा के घोड़ों को मार डाला, अश्वत्थामा जी उस को रण से बाहर लेगये फिर कृपाचार्य ने आठ बाणों से युधिष्ठिर को घायल किया, तब महाराज दुर्योधन ने सात सौ रथियों को वहां भेजा जहां पर राजा युधिष्ठिर था वह वायू वेग के समान भागते हुये युधिष्ठिर के रथ की ओर गये और बाणों से उसे ऐसे ढांप दिया जैसे सूर्य बादल को छिपा देता है ॥

इस प्रकार राजा को शत्रुओं से घिरे हुऐ देख कर शिखंडी आदि क रथी सह न सके और रथों पर चढ़ तत्काल वहां आगजें, आते ही इन्हों ने चारों ओर से राजा युधिष्ठिर को आवेष्टत कर लिया तब ऐसा युद्ध हुआ जो कि यमराज के लोक को बढ़ाने वाला था, पांचालों सहित पाण्डवों ने सात सौ रथियों को मार कर कौरवों की सेना को रोका वहां पर कौरवों पाण्डवों का ऐसा युद्ध हूआ जो न कभी देखा और न सुना था पाण्डवों ने इन सब को बाणों से फिर आच्छादित कर दिया, हे राजन्! अब देशी सेना क. मरे देख दुर्योधन की सेना फिर मुख फरे चली तब गंधार के राजा शकुनी ने कहा हे धर्म के न जानने वाले वीरो! लौटे, युद्ध करो तुम को भागने से क्या प्रयोजन है ॥

उस के इन वचनों को सुन दश हजार सवार डट गये और पांडवी सेना पर इतनी बाण वर्षा की कि जिस से वह

सेना छिन्न भिन्न हो गई, यह देख महाराज युधिष्ठर ने सहदेव को कहा यह सौबल का पुत्र हमारी सेना को पीड़त करता हुआ खड़ा है और वीरों को मार रहा है तुम द्रौपदी के पुत्रों के हित जाकर शकुनी को मारो, मैं धृष्टद्युम्न को संग लेजा कर रथ की सेना का नाश करूंगा। सब हाथी घोड़े और तीन हज़ार पदाते तेरे साथ जायें यह आज्ञा पा सहदेव ने शकुनी को पीछे की ओर से जा घेरा और क्रोध युक्त अश्व सवार शकुनी की सेना पर जाटूटे, और वहां पहुंचते ही इन्हों ने उस की सेना को बाणों से ढक दिया ॥

घोर युद्ध होने से फिर धूली स घोर अंधकार होगया सब कई मनुष्य वहां से हट रुधिर का वमन करते हुये पृथ्वी पर गिर पड़े, सवारों सहित मृतक अश्वें से पृथ्वी ढकी गई यहां तक कि वहां पर चलना भी कठिन होगया इस प्रकार बहुत सी सेना के मर जाने पर शकुनी बचे हुये छः हज़ार घोड़ों सहित हट गया ॥

बीसवां अध्याय

—:०:—

महा घोर युद्ध वर्णन ॥

इस प्रकार चढ़ाई होने पर प्राणों को हाथ की हथेली पर रख शत्रुओं को मारने वाले आप के और प्रतिपक्षियों के शूरवीरों का घोर युद्ध आरम्भ हुआ। तब वीरों के गिरने

का ऐसा शब्द होने लगा जैसा ताल फलों के गिरने का होता है। तीक्ष्ण धार शस्त्रों से भाई पिता और पुत्रों को मारते शूर वीर चारों ओर से ऐसे दौड़े जैसे मांस पर पक्षी दौड़ते हैं क्रोध युक्त, प्यासे और थकी सवारी वाले तेज बाणों से अतीव घायल आप के वीर बराबर युद्ध में डटे रहे, आप के पुत्र के देखते हुये सेना का घोर नाश हुआ, हे राजन्! पृथ्वी मनुष्यों और घोड़ों की लोथों से ढक गई और वीरों के रुधिर प्रवाहों से वहां कीचड़ हो गया जब तक माया छूट न गये सामर्थ्यानुसार सब युद्ध करते रहे॥

हे राजन्! इस के अनन्तर उस रुधिर की गंध से शूरवीर मूर्छित होने लगे॥

फिर घोड़ बचे हुये अश्वसवारों को ले शकुनी पंचाल देश की बड़ी सेना के सन्मुख हुआ और पाण्डव भी झट वहीं आ पहुंचे! गजारूढ़ और अश्वसवारों ने उस को चारों ओर से घेर नाना प्रकार के शस्त्रों से घायल किया॥

इक्कीसवां अध्याय

—:o:—

दुर्योधन सेना विनाश॥

पाण्डवों के हाथ से बहुत सी सेना के मर जाने पर शकुनी बचे हुये सात सौ घोड़ों सहित युद्ध में शीघ्रता से पहुंच कहिने लगा "हे प्रसन्न चित्त शत्रु परजाय के चाहने

वालो युद्ध करो"

फिर दुर्योधन के पास जाकर कहिने लगा कि आप रथ सवारों से युद्ध करें मैं अश्वसवारों को रोकता हूं पीछे पैदल सेना का संहार करेंगे, यह सुन प्रसन्न चित्त आप का पुत्र शीघ्र ही रथ सवारों की ओर गया, महाराज अर्जुन इस प्रकार से उद्यत इन को देख कर श्रीकृष्ण जी से कहिने लगे कि आप सचेत हो रथ को हांकें और सेना समुद्र में चलें अब मैं तेज धार वाले बाणों से शत्रु वध करूंगा ॥

हे महाराज! इस प्रकार घोर युद्ध होते आज अठारह दिन हो गये हैं और लाखों वीर युद्ध में काम आचुके हैं हे माधव जी! भीष्म के कहिने पर यदि यह संधी कर लेता तो इतने वीरों का वध न होता, परन्तु मूर्ख दुर्योधन ने उन को नहीं माना ॥

हे महाराज! परम हितकारी अपनी माताओं के कथनों का जिस ने अनादर किया वह दूसरे के वचनों को कब सुनता था मानो विधाता ने मूर्ख दुर्योधन को कुल के नाश के लिये ही उत्पन्न किया था आप को याद होगा कि महात्मा विदुर ने मुझ से कहा था कि दुर्योधन कभी अपने जीते जी राज्य का भाग तुम को नहीं देगा वह जीवन पर्यन्त हम निष्पापीयों को दुख देगा और पाप कर्म करेगा वह युद्ध के विना किसी प्रकार भी विजय नहीं होगा, अब हे महाराज! वह विदुर का कथन ठीक २ प्रतीत होता है ॥

इस लिये आप उस सेना में चलें मैं अब तेज बाणों से

इस दुरात्मा दुर्योधन को और इस की सेना का मारूंगा ॥

संजय बोले कि अर्जुन के इन बचनों को श्रवण कर श्री कृष्ण जी ने वैसे ही किया ॥

वहां पहुंचते ही अर्जुन ने बाणों का जाल फैला दिया युद्ध में अर्जुन के बाणों से ढके हुये शूर वीर और टेढ़े बाणों से उठे हुये बड़े शब्द सुनाई देने लगे, गांडीव से छोड़े हुये और कवचों पर लगे हुये बाण गिरने लगे और हाथी घोड़ों को मारते हुये पृथ्वी पर गिरने लगे इन बाणों से पृथ्वी चारों ओर से आच्छादित होगई ॥

क्रोध युक्त अर्जुन ने नाराचों से आप के पुत्र की सब सेना का बिनाश करदिया ॥

बाईसवां अध्याय

—.०: –

युद्ध भूमि से दुर्योधन का भागना ॥

हे राजन् ! वीर अर्जुन ने बड़े धनुष धारी रण से मुख न मोड़ने वाले बीरों के संकल्पों को निष्फल कर दिया, वह तेज बाणों को छोड़ता हुआ इस प्रकार भासता थ जैसे वर्षा करता हुआ इन्द्र प्रतीत होता है, हे राजन् ! आप के पुत्र के देखते ही आप की सेना युद्ध से भाग निकली कई महारथी वहीं अर्जुन के बाणों से घायल हो मूर्छित होगये ॥

फिर भी बहुत से महारथी वहां पहुंच धृष्टद्युम्न से युद्ध

करने लगे, पांचाल देशीय धृष्टद्युम्न, शिखंडी और नकुल के पुत्र सतानीक ने रथकी सेना से युद्ध किया इस के अनन्तर क्रोध युक्त मारने को उद्यत धृष्टद्युम्न आप के पुत्रों के सन्मुख गया, उसके आने पर आप के पुत्र दुर्योधन ने बाणों के समूहों को चलाया ॥

हे राजन्! इस के पीछे आप के पुत्र से घायल हुये २ धृष्टद्युम्न ने नाराच, अर्द्धनाराच और वत्सदन्त नामक बाणों से आप के पुत्र के चारों घोड़ों को मार छाती और भुजाओं पर उसे भी घायल किया, पांडवों ने बाणों से उस के चारों घोड़ों को मार भल्ल से सारथी के शिर को काट गिराया, फिर दुर्योधन रथ के टूट जाने पर घोड़े पर ही सवार हो थोड़ी दूर पीछे हट गया और सेना को पराक्रम हीन देख कर शकुनी से जा मिला, उधर अर्जुन, भीम और युधिष्ठर ने हाथी, घोड़ों और गजों की सेना का महा नाश किया ॥

इस प्रकार सेना का नाश देख और शत्रु विजयी दुर्योधन को वहां पहुंच सुन बड़ा पराक्रमी अश्वत्थामा, कृपाचार्य और कृतवर्मा यह तीनों सेना को चीर औरतं शूर वीरों को मारते हुये वहां आपहुंचे जहां शकुनी था उधर से पाण्डवी वीर भी आये उन वीरों के आने पर आप के वीर जीवन से निराश हो व्याकुल होगये, हे राजन्! तब मैं उन नाशवान और चारो ओर से घिरे हुओं को देख वहां पहुंचा जहां पर कृपाचार्य थे, वहां पहुंच सहदेव की सेना से युद्ध करने

लगा, अर्जुन के बाणों से हम पांचों पीड़ित हुये, वहां धृष्टद्युम्न से हमारा घोर युद्ध हुआ और हम सब वहां से पराजय होकर पीछे हट आये, इतने में मैंने सात्यकी को साम्हने आते देखा वह वीर चार सौ रथियों सहित मेरे साम्हने आया। वहां पर एक मुहूर्त घोर युद्ध हुआ फिर महारथी सात्यकी ने मेरे घोड़ों को मार मुझे मुर्छित कर पकड़ लिया, एक मुहूर्त में ही भीमसेन की गदा और अर्जुन के बाणों से हमारी सेना का नाश होगया॥

तेईसवां अध्याय

—:०:—

भीमसेन के हाथ से दुर्मर्षण आदि का मारा जाना॥

इस प्रकार सेना के नाश होने पर दुर्मर्षण, श्रुतान्त, जयत्‌ आदि आप के पुत्र भीमसेन के सन्मुख आखड़े हुये, बाणों की वर्षा करते हुये भीमसेन को आप के पुत्रों ने चारों ओर से घेर लिया, तदनंतर भीमसेन ने पहिले छुरप से दुर्मर्षण का शिर काटा फिर भल्ल से महारथी श्रुतान्त को मारा और नाराच से जयत्सेन को घायल कर रथ से गिरा दिया॥

तब बड़े क्रोध में आप के पुत्र श्रुतर्वा ने गृध्रपक्ष जटित टेढ़े पर्व वाले सौ बाणों से भीमसेन को घायल किया, फिर क्रोध युक्त भीमसेन ने अपने अग्नि स्वरूप तीन बाणों से

कठिन प्रहार किया जिस से वह श्वास लेता हुआ रथ के बीच ही लेट गिया, थोड़ी देर में सचेत हो उस ने तीक्ष्ण बाणों से दुर्योधन को घायल किया अर्जुन ने आप के सवारों को मार भगाया इन सब का घोर युद्ध हुआ ॥

अर्जुन ने सुशर्मा को हृदय में बाण मारा जिस से वह भी वहीं मारा गिया फिर उस के महारथी ४५ पुत्रों को मारा उधर भीमसेन ने आप के बहुत से वीरों का नाश किया ॥

पच्चीसवां अध्याय

—:०:—

शकुनी और उल्लूक का मरना ॥

हे राजन् ! इस युद्ध के प्रारम्भ में सर्वस्व नाशक शकुनी सहदेव के सन्मुख गया उस के जाते ही सहदेव ने अपने बाणों के समूहों से उसको ढक दिया ॥

उधर उल्लूक ने दश बाणों से भीमसेन को घायल किया हे राजन ! इन्हों ने इतने अस्त्र चलाये कि आप की सेना बाणों से आच्छादित होगई, आकाश में अंधकार छागया, भूमी वीरों और घोड़ों की लोथों से तथा टूटे कवच, प्रास, शक्ति आदि से ढक गई, फिर शकुनी ने सहदेव के शिर पर प्रास का कठिन प्रहार किया जिस से वह व्याकुल हो रथ के बैठने के स्थान में गिर गया, भीमसेन ने यह देख अति क्रोध में

आप के वीरों को नाराचों से मारा और फिर सिंह के समान गर्जा जिस से डर कर शकुनी के सब हाथी घोड़े सवारों सहित पृथ्वी पर गिर पड़े और भयभीत होभागे फिर राजा दुर्योधन ने भागत वीरों से कहा, हे धर्म के न जानने वाले शूर वीरो! लौटो, युद्ध करो, युद्ध में से भागने से क्या सिद्धि है जो वीर छाती ताने युद्ध में लड़ता है वह इस लोक में शुभ कीर्ति और मर कर शुभ लोक को जाता है, राजा के यह वचन सुन शकुनी के वह साथी मृत्यू के लिये पांडवों के सन्मुख हूये, हे राजन्! फिर तो ऐसा घोर युद्ध हुआ कि जिस का वर्णन कठिन है इस युद्ध में भीमसेन ने उल्लूक के शिर को भल्ल से काट दिया ॥

तब शकुनी पुत्र वध को देख विदुर जी के कथनों को स्मरण करता हुआ रोने लगा, फिर रोते २ शकुनी ने सहदेव पर तीन बाण छोड़े जिन्हें उस ने अपने बाणों से काट राजा के धनुष को काट दिया ॥

तब शकुनी ने खडग उठा उस पर वार किया परंतु उस ने उस के भी टुकडे २ कर दिये फिर शकुनी ने अपनी गदा बड़े वेग से उस पर छोड़ी परंतु वह भी निष्फल होकर नीचे गिर पड़ी तब शकुनी ने घोर शक्ति को इस पर चलाया परंतु सहदेव ने उस के भी तीन टुकड़े कर दिये शकुनी की सेना भाग निकली परंतु शकुनी गंधार देशीय सवारों को एकत्र कर युद्ध में प्रस्तुत हुआ फिर सहदेव ने उसे रोक कर कहा कि अरे वंश को भस्म करने वाले अग्नि रूप दुर्योधन! अब तुम ही शेष रहे हो अब इस शस्त्र से तुम्हारे शिर को भी काटूंगा ॥

जयत्त भूरिवल और रवि को मार गिराया , फिर भीमसेन ने अपने शस्त्रों से दुर्विमोचन को और दुर्वश को भी मार गिराया, युद्ध में एक के हाथ से मरे हुये बहुत से भाईयों को देख क्रोध से तर ने बाणों से पहिले भीमसेन के धनुष को काटा और फिर बीस बाणों से उसे भी घायल किया, तब भीमसेन ने दूसरा धनुष उठा उसे भी घायल किया और फिर तिष्ठ तिष्ठ कहा, इन का महा घोर संग्राम हुआ, उन के बाणों से पृथ्वी, आकाश और सब दिशायें ढक गईं फिर भीमसेन ने बाणों से आप के पुत्र के सारथी और घोड़ों को मार दिया, रथ वहीन आप का पुत्र ढाल तलवार ले भीमसेन पर टूटा परन्तु भीमसेन ने छुरम से उस का शिर धड़ से जुदा कर दिया ॥

यह देख भयभीत आप की सेना के लोग भीमसेन के सन्मुख गये, परन्तु उस समुद्र के समान शीघ्र आने वाली सेना में से भीमसेन ने पांच सौ कवच धारियों को ७०० गजारूढ़ों को, दश हज़ार पैदलों को और आठ सौ घोड़ों के सवारों को मार डाला ॥

चौबिसवां अध्याय

—:o:—

अर्जुन का राजा सुशर्मा और ४५ महा रथियों को मारना ॥

हे राजन् ! मरने से बचे हुये आप के पुत्र बचे कुचे

सवारों को संग ले दुर्योधन और सुदर्शन युद्ध को निकले तब श्रीकृष्ण जी अर्जुन से बोले, तुम्हारे बहुत शत्रु मारे गये हैं सात्यकी संजय को पकड़ लाया है और नकुल सहदेव सेना से लड़ते २ थक गये हैं ॥

दुर्योधन घोड़ों के सवारों को ले कर युद्धभूमि में निकला है यह आपकी सेना को मार कर कृत कृत्य हो जायेगा आप किसी को धृष्टद्युम्न की ओर बुलाने के लिये भेजदो वह जबतक नहीं आता तब तक तुम वहां चलो यह सुन कर अर्जुन ने श्रीकृष्ण जी से कहा कि धृतराष्ट्र के सब पुत्र भीमसेन ने मार दिये हैं और यह दोनों भी मारे जायेंगे भीष्म, द्रोणाचार्य आदि सब मर चुके हैं, अश्वत्थामा, कृपाचार्य, राजा त्रिगर्त, उल्लूक, शकुनी और कृतवर्मा कौरव सेना के शेष हैं, हे कृष्ण ! आज मेरे हाथ से इन में से कोई बच कर नहीं जायेगा, यदि दुर्योधन भी आज मेरे सन्मुख युद्ध में आगया तो राज्य सहित प्राणों को देगा ॥

यह सुन श्रीकृष्ण जी ने घोड़ों को हांका इन को चलते देख भीमसेन, अर्जुन और सहदेव सिंहनाद करते हुये दुर्योधन के मारने की इच्छा से चले, उधर से शकुनी मारने की इच्छा से पांडवों के सन्मुख गया, आप का पुत्र सुदर्शन भीमसेन के सन्मुख गया, सुशर्मा और शकुनी अर्जुन के साथ युद्ध करने लगे ॥

घोड़े पर सवार आप का पुत्र दुर्योधन सहदेव के सामने गया और जाते ही उस ने प्रास से सहदेव के शिर पर

कठिन प्रहार किया जिस से वह श्वास लेता हुआ रथ के बीच ही लेट गया, थोड़ी देर में सचेत हो उस ने तीक्ष्ण बाणों से दुर्योधन को घायल किया अर्जुन ने आप के सवारों को मार भगाया इन सब का घोर युद्ध हुआ ॥

अर्जुन ने सुशर्मा को हृदय में बाण मारा जिस से वह भी वहीं मारा गया फिर उस के महारथी ४५ पुत्रों को मारा उधर भीमसेन ने आप के बहुत से वीरों का नाश किया ॥

पच्चीसवां अध्याय

—:०:—

शकुनी और उल्लूक का मरना ॥

हे राजन्! इस युद्ध के प्रारम्भ में सर्वस्य नाशक शकुनी सहदेव के सन्मुख गया उस के जाते ही सहदेव ने अपने बाणों के समूहों से उसको ढक दिया ॥

उधर उल्लूक ने दश बाणों से भीमसेन को घायल किया हे राजन! इन्हों ने इतने अस्त्र चलाये कि आप की सेना बाणों से आच्छादित होगई, आकाश में अंधकार छागया, भूमी वीरों और घोड़ों की लोथों से तथा टूटे कवच, प्रास, शक्ति आदि से ढक गई, फिर शकुनी ने सहदेव के शिर पर प्रास का कठिन प्रहार किया जिस से वह व्याकुल हो रथ के बैठने के स्थान में गिर गया, भीमसेन ने यह देख अति क्रोध में

आप के वीरों को नाराचों से मारा और फिर सिंह के समान गर्जा जिस से डर कर शकुनी के सब हाथी घोड़े सवारों सहित पृथ्वी पर गिर पड़े और भयभीत होभागे फिर राजा दुर्योधन ने भागत वीरों से कहा, हे धर्म के न जानने वाले शूर वीरो ! लौटो, युद्ध करो, युद्ध में से भागने से क्या सिद्धि है जो वीर छाती ताने युद्ध में लड़ता है वह इस लोक में शुभ कीर्ति और मर कर शुभ लोक को जाता है, राजा के यह वचन सुन शकुनी के वह साथी मृत्यू के लिये पांडवों के सन्मुख हूये, हे राजन् ! फिर तो ऐसा घोर युद्ध हुआ कि जिस का वर्णन कठिन है इस युद्ध में भीमसेन ने उल्लूक के शिर को भल्ल से काट दिया ॥

तब शकुनी पुत्र वध को देख विदुर जी के कथनों को स्मरण करता हुआ रोने लगा, फिर रोते २ शकुनी ने सहदेव पर तीन बाण छोड़े जिन्हें उस ने अपने बाणों से काट राजा के धनुष को काट दिया ॥

तब शकुनी ने खडग उठा उस पर वार किया परंतु उस ने उस के भी टुकड़े २ कर दिये फिर शकुनी ने अपनी गदा बड़े वेग से उस पर छोड़ी परंतु वह भी निष्फल होकर नीचे गिर पड़ी तब शकुनी ने घोर शक्ति को इस पर चलाया परंतु सहदेव ने उस के भी तीन टुकड़े कर दिये शकुनी की सेना भाग निकली परंतु शकुनी गंधार देशीय सवारों को एकत्र कर युद्ध में प्रस्तुत हुआ फिर सहदेव ने उसे रोक कर कहा कि अरे वंश को भस्म करने वाले अग्नि रूप दुर्योधन ! अब तुम ही शेष रहे हो। अब इस शस्त्र से तुम्हारे शिर को भी काटूंगा ॥

हे राजन्! सहदेव इस प्रकार कह कर दश बाणों से शकुनी को और पांच बाणों से उस के घोड़ों को घायल कर उस के ध्वजा, छत्र और धनुष को भी काट सिंह के समान गर्जा और बाणों से उसे चारों ओर से ढक दिया तब अत्यन्त क्रोध से प्रास उठा सहदेव के मारने के लिये अकेला शकुनी आगे बढ़ा परन्तु सहदेव ने भल्ल को बड़ी तीव्रता से चला शकुनी के शिर को धड़ से जुदा कर दिया यह देख आप की सेना के लोग दुर्योधन सहित पदाती होकर भाग गये, पाण्डवों ने प्रसन्न होकर शंखों को बजाया ॥

छब्बीसवां अध्याय

—:०:—

दुर्योधन का हृद में प्रवेश ॥

संजय बोला हे राजन्! शकुनी के बचे कुचे सारथीयों ने जीवन की आशा त्याग पांडवों को चारों ओर से आ घेरा परंतु अर्जुन के हाथ से वह सब मारे गये, इस के अनंतर आप का पुत्र दुर्योधन अपनी सेन का नाश देख मरने से शेष सेना को एकत्र कर उन से बोला कि युद्ध में जा कर मित्रों सहित पांडवों और धृष्टद्युम्न को मार कर शीघ्र लौटो राजा की आज्ञा पा वह सब युद्ध में पाण्डवों के सन्मुख जा डटे परंतु एक महूर्त में ही वह सब पाण्डवों के हाथ से मारे गये ॥

हे राजन्! आप की ११ अक्षोहिणी सेना में से केवल

अकेला राजा दुर्योधन अत्यन्त घायल बचा रहा ॥

धृतराष्ट्र बोला कि हे सूत ! पाण्डवों की कितनी सेना शेष रही और यह भी बताओ कि मेरे अभागे पुत्र दुर्योधन ने क्या किया ! संजय ने उत्तर दिया कि दो हज़ार सात सौ हाथी, पांच हज़ार घोड़े और दश हज़ार पदाती पाण्डवों के शेष रहे। हे राजन् ! आप का पुत्र दुर्योधन पैदल ही पूर्व की ओर भागा फिर धृष्टद्युम्न मुझे देख हंस कर सात्यकी से बोला कि इसके पकड़ने से क्या सिद्धि है महारथी सात्यकी मेरे मारने के लिये उद्यत हुआ तब बड़े ज्ञानी व्यास जी ने मुझे छुड़ा दिया तब मैं कवच और शस्त्रों का त्याग ग्राम की ओर लौटा, आते हुये एक कोस की दूरी पर अत्यन्त घायल गदा हाथ में लिये हुये दुर्योधन को रोते देखा उसे देख सब व्योरा पकड़े जाने का और व्यास जी के छुड़ाने का कहा और यह भी कहा कि अब आप के केवल तीन रथी बाकी हैं यह सुन अतीव दुखित हो आप के पुत्र ने मेरा हाथ पकड़ कर कहा कि संजय ! आप ने मेरे पिता जी को युद्ध का सब वृत्तान्त सुनाना और यह भी कह देना कि बंधु बहीन दुर्भागी दुर्योधन ह्रद में प्रवेश कर गया है ॥

हे राजन् ! इतना कह कर वह ह्रद में कूद पड़ा और उसने वहां अपनी माया से दुर्ग बना लिया, आगे कृपाचार्य, अश्वत्थामा और कृतवर्मा मुझे मिले और राजा का समाचार मुझ से पूछा मैं ने वह ह्रद भी बतला दिया जिस में राजा छिपा था यह सुन कर फिर तीनों रथी मुझे रथ में चढ़ा निवास स्थान में ले

गये इतने में सायं काल हो गया वहां पर मैं ने देखा कि युद्ध भूमि से बूढ़ों, बच्चों और स्त्रियों को रथों में चढ़ा युधिष्ठर महाराज उन को नगर में पुहुंचाने का प्रबंध कर रहे हैं। युयुत्सु इन की रक्षा के लिये साथ किया है और यह सब लोग हस्तिनापुर में आपहुंचे, इन के पहुंचने पर पुरवासियों ने बड़े दुःख से हाहाकार किया, महात्मा विदुर जी भी बड़े दुःख से लंबी श्वास लेते हुये नगर में पहुंचे ॥

गदापर्व

प्रथम अध्याय

—:o:—

दुर्योधन अन्वेषण वर्णन ॥

धृतराष्ट्र बोले कि हे संजय! पाण्डवों के हाथ से सब सेना के मारे जाने पर शेष बची सेना कृतवर्मा, कृपाचार्य, अश्वत्थामा और दुर्योधन ने क्या किया ॥

महाराज युधिष्ठर अपने भाईयों सहित दुर्योधन के मारने की इच्छा से उस की खोज करने लगा, परन्तु उन्हें कुच्छ पता न मिला पांडवों को वापस आते देख कृपाचार्य और अश्वत्थामा छिप कर उस तालाब के पास जा राजा दुर्योधन को बुला कर कहने लगे कि हे राजन्! अब आप बाहिर आयें और हमारे साथ मिल कर युधिष्ठर से युद्ध करें क्योंकि आपने उन की सेना

मार दी है और जो कुछ शेष है वह भी अत्यन्त घायल है अब वह आप का वेग सहने के समर्थ नहीं हैं। यह सुन राजा दुर्योधन बोला कि मैं भी अत्यन्त घायल और थका हुआ हूं इस लिये एक रात्रि यहीं विश्राम कर कल आप को साथ ले कर शत्रुओं से लडूंगा, यह सुन कर अश्वत्थामा ने उत्तर दिया कि हे राजन्! मैं शपथ करके कहता हूं कि सोमकों को जीते नहीं छोडूंगा, वरंच शत्रु दलन किये बिना कवच नहीं उतारूं गा॥

इन के ऐसे वार्तालाप करते हुये माही गीरों ने इन वीरों के युद्ध करने के हठ को और दुर्योधन के इनकार का सुना॥

हे राजन्! अपने डेरे में मांस को रख माही गीर शीघ्रता से पाण्डवों के डेरे को आये और राजा दुर्योधन का समाचार देने की इच्छा से रोके हुये भी भीमसेन को देखते ही अंदर चले गये और वहां जाकर हृद का सब वृत्तान्त जो वहां सुना था भीमसेन से कह दिया, तब भीमसेन ने इन को बहुत सा धन दिया और महाराज युधिष्ठर को यह सब वृत्तान्त कह सुनाया, महाराज युधिष्ठर यह समाचार सुन कर भाईयों सहित अतीव प्रसन्न हुये और श्रीकृष्ण जी को आगे कर उस हृद पर सेना सहित चल दिये॥

महारथी कृतवर्मा, कृपाचार्य और अश्वत्थामा युधिष्ठर की सेना को देख बोले कि हे राजन्! पाण्डव सेना आगई है यदि आप आज्ञा दें तो हम यहां से हट जायें, तब

दुर्योधन ने बहुत अच्छा कह कर माया से उस जल को रोक दिया ॥

दूसरा अध्याय

—:०:—

जल में सोने वाले राजा दुर्योधन से युधिष्ठर का वार्तालाप ॥

संजय बोला कि हे राजन ! इन तीनों महारथियों के चले जाने पर पाण्डव वहां पहुंचे, श्रीकृष्ण जी से युधिष्ठर ने कहा कि "महाराज ! दुर्योधन की इस माया को देखो यह किस प्रकार यहां छिपा है परन्तु मैं इसको अब मारे विना कदापि नहीं छोड़ूंगा।" तब श्रीकृष्ण जी बोले कि तुम भी इस छली को छल ही से मारो ॥

हे राजन् ! इस प्रकार श्री कृष्ण के समझाने पर युधिष्ठर ने जल में छिपे आप के पुत्र से कहा ॥

"हे दुर्योधन तुम जल में क्यों छिप गये हो तुम ने अपनी कुल और अन्य क्षत्रिय कुलों का नाश किया है और अब अपने जीवन को चाहता हुआ जल में छिप कर बैठा है, हे दुर्योधन ! उठो और हमारे साथ युद्ध करो वह तेरा अभिमान कहां गया सब लोग तुम को सभा में शूर वीर कहते हैं युद्ध से भागना नीचों का कर्म है, युद्ध को विना निबटाये तुम किस प्रकार जाना चाहते हो और तेरा गर्जना कहां गया

अब तड़ाग में छिप कर क्यों सोता है उठो युद्ध करो हमें जीत पृथ्वी पर राज्य करो या हम से मर कर स्वर्ग में निवास करो ईश्वर ने तेरा यही उत्तम धर्म बताया है इस की पालना करो ॥

संजय बोला कि महाराज के इन वचनों को सुन जल में बैठे हुये आप के पुत्र ने यह उत्तर दिया कि हे महाराज ! मैं जान बचाने के लिये छिप कर नहीं बैठा, मैं मृतक सारथी और सेना वाला केवल विश्राम के लिये सेना से अलग हो यहां आया हूं, हे राजन् ! आप और आप के साथी भी विश्राम कर लें मैं इस जल से निकल कर आप से युद्ध करूंगा ॥

युधिष्ठिर बोला कि हम विश्राम कर चुके हैं और देर से तुझे तलाश कर रहे हैं उठो युद्ध करो । यह सुन दुर्योधन बोला कि हे राजन् ! मैं जिन कौरवों के लिये राज्य चाहता था वह तो परलोक सिधार गये यह पृथ्वी सब आप की है आप निश्चिंत हो राज्य करो ॥

युधिष्ठिर दुर्योधन से फिर कहने लगा हे भाई ! जल में बैठे २ दुखड़ा न रोवो, हे दुर्योधन ! मैं आप की दी हुई पृथ्वी पर राज्य करना नहीं चाहता, अब आप पृथ्वी के स्वामी नहीं हो जब तुम इस के स्वामी थे उस समय सूई के अग्रभाग के बराबर भी भूमी नहीं दी अब समस्त पृथ्वी किस प्रकार देना चाहते हो तुमने हमारे नाश के बड़े २ उपाय किये तब हमारी ईश्वर ने रक्षा की अए नीच अब तू उठ कर युद्ध कर इसी से तेरा कल्याण होजायगा ॥

तीसरा अध्याय

—:०:—

दुर्योधन का जल से निकल कर युद्ध के लिये उद्यत होना॥

संजय बोला कि हे राजन्! पांडवों से घुरका हुआ निस्सहाय परम दुःखी आप का पुत्र लंबी सांस लेता हुआ युधिष्ठर से बोला हे पांडव लोगो! तुम रथ, घोड़े और मित्रों सहित हो तुम सब से मैं अकेला शस्त्र वहीन स्वारी रहि। थका हुआ किस प्रकार युद्ध कर सकता हूं, अये पांडव लोगो! तुम तयार हो जाओ मैं अकेला तुम सब का नाश करूंगा॥

राजा युधिष्ठर ने कहा कि हे सुयोधन! तुम छत्री धर्म को जानते हो और युद्ध के लिये तयार हो कर अकेले ही हम सब से लड़ना चाहते हो, जो शस्त्र तुम चाहते हो वही लेलो और तुम जिस के साथ युद्ध करना चाहते हो उसी के साथ युद्ध करो और सब तमाशा दखेन को खड़े रहेंगे हे वीर! लो तुझ को और सुवहिता देता हूं हम पांचों में एक के मारने पर तेरा राज्य होगा। जिस को चाहे मांगले। दुर्योधन ने उत्तर दिया अगर तुम युद्ध में एक शूर लड़ने को देते हो तो गदा हाथ में ले। जिस का जी चाहे पैदल मेरे सामने आजावे॥

युधिष्ठर बोले कि हे सुयोधन! उठो और मुझ से युद्ध करो गदा ले कर आओ और वीरता दिखाओ अब चाहे तेरे साथ

इंद्र भी क्यों न आ जाये तू जीता नहीं बचेगा हे राजन्! तब दुर्योधन अपनी गदा को कन्धे पर रख जल से इस प्रकार बाहर आया जैसे प्रातःकाल सूर्य्य निकलता है। जल से निकले हुये वीर को देख सब लोग प्रसन्न हुये और पांचालों ने ताली बजाई इस ताली के बजने को अपनी उपहास्य समझ परम क्रोध से युक्त लाल आंखे निकाले दांतों को पीसते हुये आप के पुत्र दुर्योधन ने कहा ॥

हे पांडव लोगो! तुम इस हास्य का बदला अभी पाओगे अरे युधिष्ठर! तुम युद्ध में एक २ मेरे सामने आते जाओ क्योंकि बहुतों का एक के साथ लड़ना न्याय नहीं है ॥

युधिष्ठर बोले कि हे अर्द्ध राजन्! अब तुझे यह सुध आई है जब अकेले अभिमन्यु को बहुत से महारथियों ने मिलकर मारा था तब किधा हुआ था ॥

जिस वस्तु की आवश्यकता है मांग लो हम देंगे और फिर मैं तुझ को तेरे हित की जता देता हूं कि हम पांचों में से जिस को चाहो मांग लो उस के मारने पर राज्य तेरा होगा या उस से मरा हुआ तू स्वर्ग पायेगा ॥

हे राजन! तब आप के पुत्र ने सुनहरी कवच और शिर स्वर्ण लेकर पहिर लिये और गदा हाथ में ले आप का पुत्र बोला कि हे राजन्! बस अब तुम पांचों में से वही मनुष्य गदा हाथ में ले जो मुझ से लड़ना चाहता है ॥

———

चौथा अध्याय

भीमसेन का दुर्योधन से गदा युद्ध करना

—:०:—

हे राजन्! इस प्रकार वीरता से दुर्योधन के गर्जने पर श्रीकृष्ण जी युधिष्ठर पर क्रोधित हो कर बोले कि हे राजन्! अब यदि यह युद्ध में सहदेव अर्जुन या नकुल को ही बुलाले तो क्या होगा, क्या तुम इस की गदा के प्रभाव को नहीं जानते, गदा युद्ध में तुम में से कोई भी इस का सामना नहीं कर सकता और आप ने यह भी कह दिया कि तुम एक को ही मार कर कौरव राज्य पाओगे तुम ने दया से यह सब कह दिया अब क्या बन सकता है, भीमसेन के सिवाय गदा युद्ध में उस के साह्मने कोई ठहर नहीं सकता वरंच भीमसेन भी इतना अभ्यासी नहीं है, हे राजन्! आपने फिर यह द्यूत ही आरम्भ कर दिया है जैसे पहिले किया था॥

हे राजन्! अब कौरव और पाण्डव राज्य करने के योग्य नहीं यह बन में रहने या भिक्षा मांगने के योग्य हैं॥

यह सुन भीमसेन हाथ जोड़ कर बोला कि हे मधूसूदन जी! आप क्रोध न करें अभी शत्रु के अन्त को आप देखेंगे अब मैं युद्ध में दुर्योधन को मारूंगा, महाराज! आप इस में संदेह न समझें अवश्य धर्म राज की जय होगी॥

भीमसेन के इन वचनों को सुन कर श्रीकृष्ण जी भीमसेन की प्रशंसा करते हुये कहने लगे कि हे भीमसेन निःसंदेह आप

धर्म पुत्र की जय होगी आगे आप के कहे से ही सब योधा मारे गये अब तुम दुर्योधन को अवश्य मारोगे, और उस की जंघाओं को तोड़कर अपनी प्रतिज्ञा का पालन करोगे ॥

यह सुन गदा हाथ में ले भीमसेन उठ खड़ा हुआ और युद्ध के लिये आप के पुत्र को ऐसे ललकारा जैसे इन्द्र ने वृत्रासुर को बुलाया था ॥

दुर्योधन इस के ललकारने पर सिंह के समान खड़ा होगया ॥

तब भीमसेन ने दुर्योधन से कहा जो पाप कर्म तुम ने निर्दोष पाण्डवों से किये हैं याद कर लो, क्योंकि उन के पाप कर्म के फल भोग का समय आगया है अब मैं तेरे अहंकार को चूर्ण कर तेरे दुष्ट कर्पों को दूर करूंगा ॥

दुर्योधन ने कहा अधिक वार्तालाप से क्या लाभ है अब तू मेरे साथ युद्ध कर मैं तेरे युद्ध करने के उत्साह को दूर करूंगा हे पापी! तूं मेरी गदा के प्रभाव को नहीं जानता ॥

संजय बोले कि हे महाराज ! उस बड़े भारी युद्ध के लिये दोनों वीरों का नियत होना सुन बलदेव जी भी वहां आपहुंचे, केशव सहित उन को आते देख सब ने उन का पूजन किया और सब ने प्रार्थना की कि हे बलदेव जी आप अपने इन दोनों शिष्यों की वीरता को देखें ॥

बलदेव जी बोले कि आज तीर्थ यात्रा में गये ४२ दिन हुये हैं पुष्य नक्षत्र में गया था और आज श्रवण नक्षत्र पित्रों का नक्षत्र है आज के दिन जो मरेगा उस को दिव्य शरीर और स्वर्ग मिलेगा ॥

फिर दोनों वीरों का अतीव विस्मय कारक युद्ध आरम्भ हुआ ॥

छटा अध्याय

—:o:—

बलदेव जी की तीर्थ यात्रा ॥

तब जनमेजय ने कहा कि हे ब्रह्मण ! आप फिर बलदेव जी के जाने का कारण युद्ध के न देखने का सविस्तर वर्णन करें ॥

वैशम्पायन जी बोले कि उपप्लवी स्थान पर पाण्डवों के निवास करने पर जब मधुसूदन जी समस्त जीवों के हित के लिये संधि कराने की इच्छा से फिर धृतराष्ट्र के पास भेजे गये, तब श्रीकृष्ण जी ने हस्तिना पुर में जाकर धृतराष्ट्र को बहुत कुच्छ समझाया, परन्तु उस ने एक न मानी, फिर तो कृष्ण जी उपप्लवी स्थानपर लौट आये और पांडवों को कहने लगे कि काल से प्रेरित यह कौरव मेरे वचनों को नहीं मानते, हे पांडवो ! तुम युद्ध के लिये तय्यार हो जाओ ॥

उस समय बलदेव जी ने कहा कि हे मधुसूदन जी ! आप उन की भी सहायता करें परन्तु उन्हों ने न माना तब बलदेव जी सेवकों को सामग्री के लिये कह आप सरस्वती के तीर्थ की यात्रा को चले गये ॥

कृतवर्मा दुर्योधन से आमिले और सात्यकी सहित वसुदेव जी पाण्डवों से आमिले और उन को आगे कर के कौरवों के सन्मुख गये ॥

बलदेव जी की आज्ञा से उन के सेवक ऋत्विज, मित्रवर्ग, श्रेष्ठ २ ब्राह्मण और नाना प्रकार की समस्त यात्रा की सामग्री दान के पदार्थ आदि लेकर दूसरे दिन ही उन से जा मिले, हे राजा! नियम में दृढ़ प्रतिज्ञ बलदेव जी ने धर्म की वृद्धि के लिये तीर्थ पर यज्ञ किये और ब्राह्मणों को बड़ी २ दक्षिणायें दीं इस प्रकार सब तीर्थों से होते हुए बलदेव जी कुरुक्षेत्र में पहुंचे ॥

तब जनमेजय ने कहा हे वैशम्पायन जी! आप सरस्वती के तीर्थों की उत्पत्ति, फल और विधि का भी वर्णन करें ॥

वैशम्पायन जी बोले हे राजन्! पहिले बलदेव जी प्रभास क्षेत्र नाम उत्तम तीर्थ को गये जहां पर चन्द्रमा यक्ष्मा रोग से दुःखी होकर गया था और शाप से मुक्त हो तृतियों के सब जगत को प्रकाशित करने लगा था इस लिये इस का नाम प्रभासक्षेत्र है, फिर जनमेजय के चन्द्रमा को यक्ष्म के रोग का कारण पूछने पर वैशम्पायन जी ने कहा कि दक्ष ने अपनी २७ कन्या चन्द्रमा को दीं उन में से रोहिणी सर्वोत्तमा थी उसी से चन्द्रमा को अधिक प्रेम था, शेष स्त्रियें क्रोध युक्त हो अपने पिता दक्ष से जाकर कहने लगीं कि चन्द्रमा रोहिणी के पास रहते हैं हमारे पास कभी नहीं आते इस लिये हम आप के पास व्रत धारण कर तपस्या करेंगी, फिर दक्ष जी ने चन्द्रमा से कहा

कि तुम सब स्त्रियों से एक सा वर्ताव करो, चन्द्रमा को यह कह कर सब कन्याओं को उन के साथ भेज दिया, परन्तु चंद्रमा ने दक्ष की आज्ञा का पालन नहीं किया तब उन सब ने फिर अपने पिता के पास जाकर कहा कि चंद्रमा ने आप की आज्ञा का पालन नहीं किया। तब दक्ष ने फिर चंद्रमा से समभाव होने को कहा और यह भी कह दिया कि यदि अब भी तुम मेरी आज्ञा को न मानोगे तो मैं तुम्हें शाप दूंगा परंतु चन्द्रमा ने फिर भी दक्ष के कथन का अनादर किया फिर दक्ष जी ने क्रुद्ध होकर यक्ष्मा नामक रोग को चंद्रमा पर छोड़ जिस से वह नित्य क्षीण होने लगा ॥

हे राजन्! चन्द्रमा ने अनेक उपाय किये परन्तु शाप से न छूटे, चन्द्रमा के क्षीण हो जाने पर पृथ्वी पर औषधियों का उत्पन्न होना बन्द हो गया और औषधियों के न होने से लोग दुःखी हुये। तब देवताओं ने शाप मोचने के लिये दक्ष से प्रार्थना की दक्ष जी ने देवताओं को उत्तर दिया कि यदि वह अपनी सब स्त्रियों से एक सा वर्तेगा और सरस्वती तीर्थ के जल में स्नान करेगा तो एक पक्ष में क्षीण और दूसरे में बढ़ता रहेगा ॥

तब देवताओं की आज्ञा से चन्द्रमा सरस्वती तीर्थ पर गये और प्रभास क्षेत्र में अमावस के दिन स्नान कर के प्रकाश और कान्ति को प्राप्त हुये, इस के अनंतर बलदेवजी जमस्तोद्भेद तीर्थ को गये जिस को लोग चमसोद्भेद कहते हैं, वहां दान और स्नान कर उदपान नाम तीर्थ को गये, वहां

भी इन्हों ने बहुत सा दान किया, यहीं पर कूप से अमृत पान करने वाला त्रित तपस्वी सिद्ध हुआ था ॥

जनमेजय ने पूछा कि वह कूप कैसा था त्रित ने कैसे अमृत पान किया यदि आप उचित समझें तो सविस्तार वर्णन करें ॥

वैशम्पायन बोले हे राजन् ! सतयुग में महात्मा गौतम के एक, द्वित और त्रित नामक तीन पुत्र बड़े तेजस्वी और ब्रह्मवादी हुये हैं महात्मा गौतम की मृत्यु के पीछे सब यजमान इन के पुत्रों को मानने लगे उन में से त्रित अधिक प्रतिष्ठित था, एक बार एक और द्वित ने यज्ञ करने की इच्छा से त्रित को साथ ले संपूर्ण यजमानोंको एकत्र कर यज्ञ सामग्री गौवें प्रभृति उन से लीं और विधि पूर्वक यज्ञ किया यजमानों ने इन्हें बहुत सा धन और गौवें दीं जिन को लेकर वह अपने घर को लौटे ॥

रास्ते में एक और द्वित लोभ के वश में हो उस से मिला वह आपस में कहिने लगे कि त्रित हम से अधिक विद्वान है इस लिये यह हम से अधिक धन लेगा यदि हम इस को रास्ते में ही अलग करदें तो क्या अच्छा है यह विचार कर उन दोनों ने विचारे त्रित को रास्ते ही में अलग कर दिया ॥

रात्रि के समय बिचारा त्रित अकेला जा रहा था कि मार्ग में उसे एक सिंह दिखाई पड़ा सिंह के भय से पीछे २ हटता गिया परन्तु पीछे हटता २ एक कूयें में गिर पड़ा, कूप में गिरने से त्रित बहुत चिल्लाया परन्तु उस के भाई सिंह के भय से और धन के लोभ से त्रित की परवाह न करते हुये उसे

कूयें में ही छोड़ चले गये ॥

तब त्रित ने उस कूप की धूलि को जल, अपने को होता विरुद्ध को अमृत कल्पना करके यजुर्वेद और सामवेद की ऋचाओं का अध्ययन किया, मानो मानसिक यज्ञ रच कर देवताओं का वहीं आवाहन किया, तब सब देवता वहीं कूप में आ मंत्रों से युक्त यज्ञ भाग को ले बड़े प्रसन्न हुये और त्रित को मनोवांछित वर दिये, त्रित ने प्रार्थना की कि आज से जो इस कूप में स्नान या आचमन करे उसे अमृत पान का फल हो, तथास्तु वर दे देवता स्वर्ग को और त्रित अमृत पान कर अपने घर को आगये, घर में पहुंच तपस्वी त्रित ने भाईयों को शाप दिया कि तुम लोभ से पशुओं को लेकर चले आये हो इस लिये वगलों के समान रूप धार मारे २ फिरेंगे ॥

सातवां अध्याय

—:०:—

हे राजन् ! इस के अनंतर बलदेव जी विनशन गांधर्व तीर्थ पर क्रमशः पहुंचे इन तीर्थों पर बलदेव जी ने गौ, बकरी आदि पशु संकल्प कर ब्राह्मणों को बहुत सी दक्षिणायें दीं और फिर गर्ग तीर्थ पर पहुंचे, यहां पर तपस्वी गर्ग जी ने त्रिकाल ज्ञान गति द्वारा नक्षत्रों को गति क्रम और इन के शुभाशुभ फल को जाना था यहां पर बहुत से ऋषि लोग ज्ञान प्राप्त के लिये आते थे, इस स्थान पर स्नान कर ब्राह्मणों को

भोजन करा बड़ा प्रसन्नता से बलदेव जी शंख तीर्थ पर पहुंचे यहां पर भी इन्हों ने बहुत से दान दि किये ॥

फिर बलदेव जी ने द्वैत वन नामक पवित्र सरोवर पर पहुंच मनोवांछित दान ब्राह्मणों को दिये वहां से बलदेव जी सरस्वती के दक्षिण की ओर चले और थोड़ी दूर चल कर नाग धन्वा नाम तीर्थ पर पहुंचे यहां पर देवताओं ने सर्प राज वासुकी को अभिषेक कराया था यहां पर भी बहुत से रत्न ब्राह्मणों को दान दिये, फिर पूर्व की ओर चल कर मार्ग में अनेक तीर्थों को देखते हुये ऋषियों के कथनानुसार स्नान, दानादि और उपवास व्रतादि करते हुये बलदेव जी पूर्व की ओर नैमिष तीर्थ पर गये वहां पर पूर्व गामिनी सरस्वती को देख बलदेव जी आश्चर्य हुये ॥

संजय ने पूछा कि यहां सरस्वती पूर्व की ओर क्यों वहती है। वैशंपायन जी बोले यहां पर उपवास व्रत धारी, ऋषी, मुनी नाना प्रकार के नियम वृद्ध मुनि अग्नी होत्र करते हुये उन दिनों में रहते थे तब सरस्वती ने उन मुनियों को साक्षात् दर्शण दिये और इन्ही की इच्छानुसार पूर्व की ओर से हो कर फिर पश्चिमाभि मुखी हुई इन तीर्थों पर भी बलदेव जी ने स्नान कर नाना प्रकार के दान दे ब्राह्मणों को प्रसन्न किया ॥

फिर वहां से बलदेव जी सप्त सारस्वततीर्थ को गये जहां पर महा मुनि सिद्ध मंकणुक ने तपस्या की थी ॥

आठवां अध्याय

—:o:—

यहां पर ब्रह्मा जी ने यत्न कर सरस्वती को प्रकट किया था फिर सब ऋषि मुनियों ने एकट्ठे होकर सरस्वती को स्मरण किया तो काचणाक्षी सरस्वती ऋषियों की सहायता के लिये वहां आपहुंचा, इसी प्रकार राजा गय के यज्ञ में विशाल नाम की महात्मा औद्दालक से ध्यान की हुई सरस्वती प्रकट हुई ॥

हे राजन् ! मंकणक ऋषि ने यहीं पर बड़ी तपस्या की थी यहां तक कि शिवजी प्रसन्न होकर बोले कि हे ऋषि ! तेरा तप हजार गुणा होगा और मैं तेरे साथ इस आश्रम में निवास करूंगा जो मनुष्य यहां मेरी पूजा करेगा इस की मनो कामना पूर्ण होगी और सारस्वत लोक में जायेगा, इस आश्रम में बलदेव जी ने आश्रम वासियों की पूजा की और रात को वहीं रहे, प्रातःकाल फिर स्नान आचमन ब्राह्मण पूजन और दान करके आगे चल दिये ॥

वहां से चल कर बलदेव जी शुक्र जी के कपाल मोचन नाम तीर्थ पर पहुंचे हे राजन् ! यह वही तीर्थ है जहां पर शुक्र जी ने तप किया था और यहीं शुक्र जी ने नीति प्रकट की थी और यहीं पर राजा बलि ने ब्राह्मणों को बड़े २ दान दिये थे फिर बलदेव जी उस आश्रम पर गये जहां पर आर्ष्टिषेण ने बड़ी घोर तपस्या की थी और विश्वामित्र जी ने ब्राह्मण वर्ण

को पाया था वहां पर भी स्नान आचमनादि कर बलदेव जी ने ब्राह्मणों को बहुत सा दान दिया ॥

फिर बलदेव जी ने वहां जा कर स्नान दानादि किये जहां परलोक पितामहा ने लोकों को उत्पन्न किया, आर्ष्टिषेण, सिन्धु द्वीप, देवापी और विश्वामित्र मुनि ब्राह्मण वर्ण में आये थे ॥

नवां अध्याय

—:०:—

राजा जनमेजय ने पूछा कि भगवान् आर्ष्टिषेण ने किस प्रकार बड़ी तपस्या की और सिन्धु द्वीप, देवापी और विश्वामित्र ने किस प्रकार ब्राह्मण वर्ण को पाया ॥

वैशम्पायन ने उत्तर दिया कि पूर्व काल में द्विजों में श्रेष्ठ आर्ष्टिषेण सदैव वेद पाठ करता हुआ गुरुकुल में ही निवास करता रहा। गुरुकुल में रहते हुये भी उसने विद्या और वेदों के मर्म को न पाया। तब उसने व्याकुल हो तप करना आरंभ किया और वेदों को पूर्णता से जान सिद्धि प्राप्त की और वर दिया कि इस तीर्थ में स्नान करने वाला अश्वमेध यज्ञ के फल को पायगा, सर्प से उस को भय नहीं होगा और थोड़े काल में उत्तम फल को पावेगा ॥

हे राजन्! तब उस तीर्थ में सिन्धु द्वीप और देवापी ने ब्राह्मण भाव को पाया और विश्वामित्र जी ने भी यहीं पर उग्र

तप किया और ब्रह्मण बने, बलदेव जी ने यहां भी विधि पूर्वक स्नानादि कर दान दिये फिर वहां से समीप वर्ती उस बक के आश्रम पर गये जहां पर दाल्भ्यबक ने कठिन तपस्या की थी ॥

दसवां अध्याय

—:०:—

फिर यदुनंदन बलदेव जी उस तीर्थ पर गये जहां पर दाल्भ्यबक तपस्वी ने विचित्र वीर्य के पुत्र के धृतराष्ट्र के देश को हवन किया था और निज शरीर को तपोबल से दुर्बल किया था, हे महाराज ! इसी तीर्थ पर बृहस्पति जी ने असुरों के नाश के लिये मांस की आहुतियें दी थीं और असुरों का नाश किया था ॥

यहां भी बलदेव जी ने नाना प्रकार से सुसज्जित रथ, रत्न आदि ब्राह्मणों को दिये और फिर ययाति तीर्थ पर गये हे महाबाहु ! उस स्थान पर नहुष राजा के पुत्र ययाति के यज्ञ में सरस्वती ने दूध और घृत बहाया था, वहां से महावीर धर्मात्मा बलदेव जी विशिष्ठ जी के भयानक वेग वाले तीर्थ पर गये ॥

जनमेजय बोले कि विशिष्ट जी का तीर्थ कैसे बना ॥

वैशम्पायन जी बोले कि ब्रह्मर्षि विशिष्ट और विश्वामित्र की तप की ईर्षा से शत्रुता हुई इन दोनों के आश्रम सरस्वती

के स्थानु नाम स्थान पर थे, शिव जी महाराज ने यहां पर यज्ञ कर सरस्वती को पुन यह तीर्थ बनाया था, इस तीर्थ पर देवताओं ने दैत्यों के मारने के लिये स्वामि कार्तिक जी को अभिषेक कराया था। इसी तीर्थ पर विश्वामित्र जी ने उग्र तप कर विशिष्ठ जी को चलायमान किया था इसी लिये इस का नाम विशिष्ठ प्रवाह पड़ गया था यहां पर बलदेव जी ने बड़े २ दान ब्राह्मणों को दिये ॥

ग्यारवां अध्याय

—:o:—

हे राजन्! विश्वामित्र के शाप से जब सरस्वती में जल के स्थान रुधिर बहने लगा तो राक्षस लोग वहां आये और सुख से रुधिर पान करने लगे। इस के अनंतर तपोधन ऋषि लोग तीर्थ यात्रा करते हुये वहां पहुंचे और रुधिर युक्त राक्षसों से सेवित तट को देख बड़े दुःखी हुये और सरस्वती के इस क्लेश को दूर करने के लिये उपाय सोचने लगे ॥

तब उन सब ऋषियों ने बड़े भारी उग्र तप से महादेव को प्रसन्न किया और सरस्वती को पाप से मुक्त किया सरस्वती पूर्ववत ही उज्वल रूप धार बहने लगी ॥

इस प्रकार शुद्ध जल वाहिनी सरस्वती को देख क्षुधा से पीड़ित हो वह सब राक्षस हाथ जोड़ ऋषियों की शरण में आ कहने लगे कि हम क्षुधा से दुःखी हैं ॥

फिर उन तपस्वियों ने इस तीर्थ को पवित्र करके, राक्षसों के मोक्ष के लिये चलायमान किया जिस से सब राक्षस स्नान करके राक्षस शरीर को त्याग स्वर्ग को गये, हे राजन्! वह तीर्थ ब्रह्म हत्या को दूर करने वाला है, देवताओं के राजा इन्द्र ने भी इस तीर्थ में स्नान कर अपने पापों का विनाश किया था॥

जनमेजय जी ने पूछा कि इन्द्र देवता को कैसे पाप लगा और इस तीर्थ में स्नान कर वह कैसे मुक्त हुआ॥

वैशम्पायन बोले कि पूर्व काल में इन्द्र ने नमुचि से मित्रता कर प्रतिज्ञा की कि मैं जल, थल, दिन और रात्री में भी तुम को कभी नहीं मारूंगा हे मित्र! मैं सत्यता से शपथ खाता हूं हे राजन्! इस प्रकार प्रतिज्ञा करके भी इन्द्र ने सायं काल को जल के फेन से इस के शिर को काटा, तब नमुचि का कटा शिर इन्द्र के पीछे भागता हुआ बोला कि अय मित्र घाती पापी! अब तू कहां जाता है॥

तब व्याकुल इन्द्र ने ब्रह्मा जी की शरण में जाकर उन से सब व्योरा सुनाया, तब ब्रह्मा जी ने कहा कि तुम विधि पूर्वक पापों के नाश करने वाले अरुण तीर्थ पर यज्ञ कर के स्नान करो॥

हे राजन्! तब यहां पर इन्द्र यज्ञ और स्नान कर पापों से विमुक्त हुआ और स्वर्ग को गया और नमुचि के शिर ने भी उस तीर्थ में स्नान कर अभिष्ट लोक को पाया, यहां पर भी बलदेव जी ने विधि पूर्वक स्नान और दानादि किये फिर

पुत्र राम राज तीर्थ पर गए, पूर्व काल में चन्द्रमा ने राजसूय यज्ञ महात्मा अत्रि ऋषि से कराया था और राक्षसों के वध के लिये स्वामि कार्तिक को देवताओं ने सेनापति बनाया था ॥

बारहवां अध्याय

—:o:—

जनमेजय ने फिर प्रार्थना की कि हे विप्रवर, ! अब आप स्वामी कार्तिक की उत्पत्ति का वर्णन करें ॥

वैशम्पायन जी ने कहा पूर्वकाल में शिवजी का तेज रूप वीर्य अग्नि में गिरा, अग्नि देव उस को भस्म न कर सके, तब उन्हों ने ब्रह्मा जी की आज्ञा से उसे गंगा जी में स्थापित किया गंगा जी ने हिमालय पर्वत पर उसे फैंक दिया, वहां पर कृत्तकाओं ने तेज जनित बालक को अपना पुत्र मान कर उस का पालन किया, तब स्वामि कार्तिक जी ने उन का यह भाव जान छः मुख धारण किये और उन कृत्तका माताओं का दूध पान किया ॥

इस कुमार के जात कर्मादि संस्कार वृहस्पति जी ने कराये और वेद, धनुर्वेद अस्त्रों शस्त्रों सहित सब विद्यायें शीघ्र ही इस बालक ने पूर्ण रूप से ग्रहण कर लीं, एक दिन पार्वती सहित शिवजी महाराज समस्त देवताओं सहित वहां कुमार के दर्शन को आये तब योग बल से युक्त वह बालक शिवजी के पास गया इस के आते ही शिवजी ने विचारा कि देखें यह बालक

पार्वती, गंगा और अग्नि इन तीनों में से किस के पास जाता है और मेरे पास भी आता है या नहीं ॥

वह कुमार योग बल से यह आशा जान कर अपने चार रूप धार चारों से एक समय जा मिले, यह देख सब को बड़ा आश्चर्य हुआ, तब उन सब ने ब्रह्मा जी से प्रणाम कर प्रार्थना की कि हे जगत पिता! आप इस बालक को इस के योग्य अधिकार दें ॥

यह सुन तब ब्रह्मा जी ने इसे सेनापति बना सब को इस की आज्ञा पालन की आज्ञा दी ॥

तेरहवां अध्याय

—:o:—

वैशम्पायन बोले कि इस के अनंतर बृहस्पति जी ने अभिषेक की सब सामग्री एकत्र कर विधि पूर्वक मंत्रों से इन्द्र सूर्य आदि देवताओं के समक्ष कार्तिक को सुवर्ण के कलशों से स्नान करा उस को सेनापति बनाया ब्रह्मा जी ने महा बलवान नंदिसेन, लोहिताक्ष घंटाकर्ण और कुमद माली नाम पार्षद दिये, फिर शिवजी ने असुर संहारी काम नाद महा पार्षद स्वामी कार्तिक को दिया इसी प्रकार सब देवताओं ने असुरों के नाश करने वाले अजेय और नैऋत आदि पार्षद दिये ॥

यह सब अनुचर बड़े बुद्धिमान योग्य शूर वीर थे इन्हों ने देवासुर संग्राम में बड़ी २ वीरता दिखलाई, इन के सिवाय

सहस्र वीर शंकू इन के अतिरिक्त निकुम्भ, पद्म, कुमुद, द्वादश भुज कुन्द उपकुन्दमक आदि सैंकड़ों प्रधान वीर स्वामी कार्तिक के अनुचर नियत हुये और इन के सिवाय वर्णी प्रभृति एकत्र हुये, यह सब नाना रूप अनेक अस्त्रों के धारण करने वाले थे ॥

ऊपरोक्त वीरों के अतिरिक्त प्रभावती विशालाक्षी, पलिता, गोस्तनी आदि महा वीर देवियें वर्तमान हुईं। इन के सिवाय और हज़ारों मातायें नाना रूप वाली लंबे २ दांत लंबे २ मुख लंबे २ नख धारण करने वाली, इन की आज्ञा पालन को वहां आपुहुंची ॥

इन में से बहुत सी इच्छानुसार रूप के धारण करने वाली चलने में वायु के समान निर्जन वन में निवास करने वाली गुफा शमशान और पर्वतों पर निवास करने वाली थीं ॥

इन के अतिरिक्त और भी बहुत से शत्रुओं को वध करने वाली मातायें इन्द्र की आज्ञा से स्वामि कार्तिक के पीछे चलने वाली आगई फिर भगवान इन्द्र ने शक्ति अस्त्र पशुपति जी ने एक बड़ी सेना शत्रु विनाश के लिये दी और अन्य देवताओं ने भी अनेक अस्त्र और भूषण स्वामि कार्तिक जी को दिये, तब स्वामि कार्तिक जी ने सेना सहित युद्ध में दैत्यों के मारने और देवताओं की रक्षा के लिये यात्रा की ॥

हे राजन्! धर्म सिद्धि लक्ष्मी धृति और स्मृति यह सब सेना के आगे चलीं, स्वामि कार्तिक जी भयानक शूल

मुद्गर, ज्वलित, शस्त्रधारी, गदा, मूशल, नाराच, शक्ति जड़ाऊ भूषण और कवच धारण कर सिंह के समान गर्जते हुये सेना के संग चले ॥

यह देख भय से व्याकुल सब दैत्य दानव अनेक शस्त्र हाथ में ले देवताओं के सन्मुख गये तब क्रोध युक्त स्वामी कार्तिक जी ने भयानक रूप शक्तियों को छोड़ा जिस से करोड़ों शक्तियें उत्पन्न होगईं जिन से लाखों दैत्य मारे गये ॥

हे राजन्! फिर महाराज ने एक लाख दैत्यों सहित महिषासुर को मारा ॥

इस प्रकार कुमार जी ने असंख दैत्यों का वध किया ॥

इस के अनंतर बलि के पुत्र वाण नाम दैत्य ने क्रौंच पर्वत पर देवताओं को पीड़ित किया तब स्वामी कार्तिक जी देवताओं के शत्रुवाण की ओर गये इन को देख वह क्रौंच पर्वत में छुप गया तब कुमार जी ने उस पर्वत को ही अग्नि की दी हुई शक्ति से घायल किया, जिस से हज़ारों दैत्य जलते हुये उस पहाड़ से बाहिर दौड़े जिन को कुमार की सेना ने मार दिया और क्रोध युक्त कुमार जी ने दैत्य राज के पुत्रों को उस के भाइयों सहित मार गिराया ॥

वैशम्पायन बोले कि हे राजन्! फिर स्वामि कार्तिक जी ने तीनों लोकों का राज्य देवताओं को दिया हे राजन्! कुमार के अभिषेक स्थान जैतस तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध हैं ॥

महाराज बलदेव जी ने उस तीर्थ पर बहुत कुछ ब्राह्मणों को दान दिया और रात्रि को वहीं रहे प्रातःकाल स्नान

आचमन और प्रणाम करके आगे चल दिये ॥

चौदहवां अध्याय

जनमेजय बोले कि हे राजन्! अब आप वरुण देवता के अभिषेक का वर्णन सुनायें ॥

वैशम्पायन जी बोले हे राजन्! सत्युग के आरम्भ में सब देवता वरुण से मिल कर बोले कि हे वरुण देव! जैसे इन्द्र हमारी रक्षा करता है वैसे आप भी करें क्योंकि आप भी सब नदियों के स्वामी हैं। वरुण नें कहा बहुत अच्छा। तब सब देवताओं ने वरुण को वेदोक्त कर्म द्वारा इसी तीर्थ पर अभिषिक्त कर जलों का स्वामी किया ॥

हे राजन्! इस तीर्थ पर भी बलदेव जी ने स्नान आचमन करके विधि पूर्वक दान दिये, फिर अग्नि तीर्थ को गये, यह वही तीर्थ है जहां पर देवताओं ने ब्रह्मा जी के पास जाकर पूछा था कि हे भगवन्! अग्नि के गुप्त होने के कारण को हम नहीं जानते आप कृपा पूर्वक उस को उत्पन्न करें क्योंकि अग्नि के गुप्त होने से सब जीवों का नाश हो रहा है ॥

तब ब्रह्मा जी की सहायता से भृगु जी के शाप से अग्नि तीर्थ पर शमी गर्भ स्थित अग्नि को पा सब देवता विधि पूर्वक उस को पूज अपने अपने २ स्थान को चले गये, आना

बलदेव जी यहां भी स्नान करके ब्रह्मयोनि तीर्थ को गये, यह वह तीर्थ है जहां पर ब्रह्मा जी ने स्नान करके विधि पूर्वक देवताओं के तीर्थ को उत्पन्न किया था बलदेव जी वहां भी स्नान कर कुबेर तीर्थ को गये जहां पर तपस्वी कुबेर जी ने बड़ी तपस्या की थी बलदेव जी ने यहां पर भी बहुत से दान किये ॥

फिर बलदेव जी तपस्वी और सिद्ध लोगों से सेवित बदर पाचन नाम तीर्थ पर गये, जहां पर भरद्वाज की कन्या श्रुतावति ने इन्द्र देव को अपना पति बनाने के लिये घोर तप किया था इन्द्र परीक्षा के लिये वशिष्ठ के रूप में पांच बेर पकाने की आज्ञा दे गये और थोड़ी दूर जाकर वह भी तपस्या में लगे जिस से वह स्थान इन्द्र तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध है ॥

इस देवी ने बदर फल चढ़ाये परन्तु इन्द्र ने एक मात्र परीक्षा के लिये इन का पकना बंद कर दिया, इस ने बराबर अग्नि जलाये रखी यहां तक कि सायंकाल होगई और आश्रम में जितनी लकड़ीयां थीं सब समाप्त होगई तब इस ने अपने शरीर को जोकि तप से सूका हुआ था लकड़ी के स्थान जलाना आरम्भ किया, पहिले इस ने अपने चरणों को आग में डाला और फिर धीरे २ आगे होती गई, पैरों के जल जाने पर भी वह शान्त चित रही ॥

इस की इस प्रकार आज्ञा पालन और भक्ति देख महाराज इन्द्र प्रसन्न हुये और अपना मुख्य रूप दिखलाया और कहने लगे कि मैं तेरे व्रत नियम तप से प्रसन्न हूं, अब तेरी मनो-

कामना पूर्ण होगी, हे महाभागे ! तू इस शरीर को त्याग मेरे साथ सुख पूर्वक स्वर्ग में रहेगी और यह आश्रम बदरपाचन नाम से लोक प्रसिद्ध होगा और ऋषि मुनियों से पूजनीय होगा, जो मनुष्य एक रात्रि यहां निवास कर स्नानादि करेगा वह परम पद को पायेगा ॥

अरूंधती ने भी इसी आश्रम पर तप कर शिवजी को प्रसन्न किया था, शिवजी ने प्रसन्न हो वर दे कर कहा था उस तीर्थ में जो मनुष्य ३ दिन निवास करेगा उस १२ वर्ष के तप का फल होगा। बलदेव जी यहां भी स्नान कर अतीव प्रसन्न हुये॥

पंद्रहवां अध्याय

—:०:—

इस के अनन्तर बलदेव जी इन्द्र तीर्थ पर जहां देवराज इन्द्र ने बृहस्पति जी से सौ यज्ञ किये थे गये, इन्हीं यज्ञों के करने से इन्द्र का नाम शतक्रतु प्रसिद्ध हुआ था, वहां पर बलदेव जी ने वस्त्रादि दान कर राम तीर्थ की यात्रा की, यह वही तीर्थ है जहां पर परशुराम जी ने कश्यप जी से सौ अश्वमेध यज्ञ किये थे और समुद्र सहित सब पृथ्वी को दक्षिणा में दिया था। इस उत्तम तीर्थ पर मुनियों को प्रसन्न कर बलदेव जी यमुना तीर्थ को गये ॥

हे राजन् ! यमुना तीर्थ पर अदिति के पुत्र वरुण ने राजसूय यज्ञ किया था यहां भी बलदेव जी अनेक प्रकार के

दान ब्राह्मणों को दे आदित्य तीर्थ को गये। आदित्य तीर्थ पर सूर्य भगवान् ने पूजन कर के प्रकाशित पदार्थों और भाव को पाया था और जहां पर देवता विश्वदेवा, मरुद्गण, गंधर्व, अप्सरा, श्री कृष्ण तथा व्यासादि मुनी और अन्य सहस्रों पुरुष योग सिद्ध हुये ॥

पूर्व काल में असित और देवल नाम महा तपस्वियों ने भी यहीं पर तप कर परम सिद्धि, सम दर्शता और महा तेज को पाया था, महा तपस्वी जैगीषव्य नाम मुनि भी इसी तीर्थ पर आ देवल के आश्रम में रहे थे, देवल जी ने इन का अतिथि सत्कार भली भान्ति किया था, देवल मुनि ने एक दिन विचारा कि इस भिक्षुक को यहां रहते कई वर्ष हो गये हैं परन्तु इस ने आज तक कोई बात नहीं की, इस प्रकार सोचते हुये वह समुद्र को जा रहे थे कि मार्ग में इन को जैगीषव्य मिले, वहां से स्नान कर जब आश्रम में आये तो आगे जैगीषव्य को आश्रम में बैठा देखा, यह देख देवल जी बड़े चकित हुये कि यह कैसे हुआ मैं तो इस को समुद्र पर छोड़ आया था अब यह मुझ से पहिले किस प्रकार यहां आगया, फिर महात्मा देवल जी इस की परीक्षा के लिये आकाश में उछले और अंतरिक्ष चारी और सिद्धों से मिले तो वहां भी उन सिद्धों से पूजित जैगीषव्य को देखा, वहां से देवलजी पितृ लोक, यमलोक और चन्द्रलोक आदि लोकों में गये तो सब जगह इस को आगे ही बैठे देखा ॥

हे राजन्! यह इन्हीं दोनों उत्तम योगी राज तपोधनों का

आश्रम है यहां पर भी महात्मा बलदेव जी ब्राह्मणों को पूज चन्द्रमा के तीर्थ को गये ॥

सोहलवां अध्याय

—:o:—

वैशम्पायन जी ने कहा, जहां पर चन्द्रमा ने तारका सुर दैत्य से युद्ध कर राजसूय यज्ञ किया था उसी को चन्द्रमा तीर्थ कहते हैं। यहां पर बलदेव जी स्नान कर सारस्वत मुनि के आश्रम में गये ॥

वैशम्पायन जी बोले हे राजन्! पूर्व काल में दधिचि नाम ब्रह्म चारी ने यहां पर तप किया था, उस के तप से इन्द्र भय खाता था, इस के तप को भंग करने के लिये इन्द्र ने सुंदरी अलंबुषा नाम अप्सरा को भेजा, जिसे देख उस का वीर्य पात हो सरस्वती में गिरा, जिस से एक पुत्र उत्पन्न हुआ। पुत्र को लेकर सरस्वती उस ऋषि के पास गई और कहने लगी कि हे महार्षि! यह आप का पुत्र है, मैंने आप की भक्ति से इसे पाला है। यह सुन पुत्र को ले ऋषि बहुत प्रसन्न हुये और सरस्वती से बोले कि हे देवी! तेरे जल से देव, पितृ, गंधर्वादि भी तृप्ति पावेंगे और यह तेरा पुत्र तेरे ही नाम से (सारस्वत) प्रसिद्ध होगा और बारह वर्ष के दुर्भिक्ष में उत्तमोत्तम ब्राह्मण कुमारों को वेद पढ़ायेगा ॥

हे राजन्! इस के पीछे बारह वर्ष का दुर्भिक्ष पड़ गया

जिस से क्षुधा से व्याकुल हो ऋषी मुनी आहार की तालाश में चारों ओर को निकल गये, क्षुधा से व्याकुल १२ वर्ष ऋषियों के रहने के कारण उन को वेद भूल गये, फिर दुर्भिक्ष के दूर होने पर वह सब एकठे हुये तो अपनी यह अवस्था देख शोकातुर हुये और वेद पाठी की तालाश करने लगे एक ऋषि को सारस्वत का वेद वक्ता होना विदित था उस के कहने से सब मिल कर उस के पास आये और कहने लगे कि आप हम सब को वेद पढ़ायें ॥

सारस्वत ने कहा कि आप मेरे यथोचित शिष्य बन जाओ, मुनीयों ने उत्तर दिया कि तुम अभी बालक हो, वह बोला सत्य है परन्तु विना शिष्य किये वेद पढ़ाना निष्फल और पाप है, वरंच अध्यापक शिष्य में शत्रुता का बीज बोना है, यह सुन सब ने विचारा कि शिक्षा आदि छः अंगों सहित वेद वेत्ता यह कुमार हम से बड़ा है यह सोच सब उस के शिष्य बन गये ॥

इसी सारस्वत आश्रम पर बलदेव जी ने स्नान दानादि किये ॥

इस के पीछे बलदेव जी उस आश्रम पर गये जहां पर एक ब्रह्मचारणी कन्या ने तप किया था पूर्वकाल में एक बड़े यशमान कुणिगर्ग नाम ऋषि हुये इन्हों ने तपो बल से मन से एक सुंदरी बेटी उत्पन्न की अभी वह छोटी ही अवस्था की थी कि ऋषि जी स्वर्ग को पधार गये ॥

तब वह सुंदरी बड़े २ नियमों को धार देवता और पितरों

के पूजन में लग गई और इसी प्रकार बहुत समय व्यतीत कर दिया और योग्य पति के न मिलने से अव्यवाहित ही रही और निर्जन वन में रह कर तप से ही इस ने अपने शरीर को सुखा दिया और ऐसा तप किया कि चलने फिरने के योग्य भी न रही, तब परलोक में जाने को उद्यत होगई ॥

इतने में नारद जी वहां आपहुंचे और इस से कहने लगे कि हे कुमारिका ! हमने देव लोक में सुना है कि कुमारिका संसार रहित सद्गति को नहीं पा सकती, यह सुन कुमारिका ने प्रार्थना की कि हे तपोधनो ! मैं अपने तप का आधा फल अपने पति को दूंगी, यह सुन गालव के पुत्र शृंगवान ने उस का पानी ग्रहण किया और यह कहा कि मैं तेरा हाथ इस नियम से ग्रहण करता हुं कि तु एक रात्रि मेरे साथ निवास कर, उस ने कहा तथास्तु । यह सुन मुनि ने उस का हाथ पकड़ा और वेदोक्त रीति से अग्नि में हवन कर उस से विवाह किया ॥

उस स्त्री ने तरुण अवस्था धार उत्तमोत्तम भूषण वस्त्र पहिन एक रात्रि स्वामी के पास निवास किया और प्रातःकाल उठ कर कहने लगी कि हे तपोधनो ! मेरी प्रतिज्ञा पूर्ण हुई मुझे चलने की आज्ञा दें। ऋषियों से आज्ञा पाकर चलती हुई उस कन्या ने चलते समय कहा कि जो मनुष्य इस क्षेत्र में स्नान और एक रात्रि निवास करेगा उसे वह फल मिलेगा जो अठावन वर्ष पूर्ण ब्रह्मचर्य से मिलता है । यहां पर बलदेव जी ने शल्य की मृत्यु को सुना और दान स्नानादि कर समन्त

पंचक से निकल कुरुक्षेत्र के फल को ऋषियों से पूछा। ऋषियों ने कुरुक्षेत्र का पूर्ण फल वर्णन किया ॥

सतारहवां अध्याय

—:०:—

ऋषि बोले हे बलदेव जी! यह समन्त पंचक कुरुक्षेत्र ब्रह्माजी की सनातन उत्तर वेदी है। पूर्व काल में राजर्षियों में श्रेष्ठ महाराज कुरु ने इस क्षेत्र को जोता था जिस से इस का नाम कुरुक्षेत्र प्रसिद्ध हुआ, बलदेव जी बोले हे ऋषि वर! कुरु ने इस क्षेत्र को क्यों जोता यह सविस्तार वर्णन करें ॥

ऋषि बोले हे बलदेव जी! यही प्रश्न कुरु जी से इन्द्र ने किया था उस समय जो कुरु ने उत्तर दिया था वही हम वर्णन करते हैं ॥

कुरु ने उत्तर दिया कि हे देव! मैं इस लिये इस पृथ्वी को जोत रहा हूं कि जो पुरुष इस क्षेत्र में प्राण त्यागेंगे, वह इसी पुण्य के प्रभाव से निष्पाप लोकों को जायंगे। यह सुन कर इन्द्र हंस कर स्वर्ग धाम को चले गये, राजा बड़े परिश्रम से इस क्षेत्र को नित्य जोता करता था और इन्द्र इसी प्रकार बारंबार पूछ कर हंस कर चले जाते थे ॥

अन्त को इन्द्र ने देवताओं से यह सब वृत्तान्त कहा, तब देवताओं ने प्रार्थना की कि हे देव! यदि हो सके तो राजर्षि को वर से लुभाना चाहिये, क्योंकि मनुष्य मर्त्य लोक में यज्ञ

के किये बिना केवल इस स्थान में मर कर स्वर्ग में आयेंगे, तो हमारे लिये यहां रहने की जगह भी न रहेगी, तब राजा इन्द्र ने फिर कुरु के पास आकर कहा कि हे कुरु जी ! आप को इतना कष्ट उठाना योग्य नहीं । जो कुछ मैं कहता हुं वह आप को करना उचित है, हे राजन् ! जो सावधान मनुष्य यहां निराहार व्रत धार या युद्ध में अच्छी प्रकार से प्राण देगा वह स्वर्ग गामी होगा ॥

राजा कुरु ने इन्द्र के यह वचन सुन कर कहा कि हे देवेन्द्र ! ऐसा ही हो। तब राजा इन्द्र अत्यन्त प्रसन्न हो स्वर्ग को चले गये । हे बलदेव जी ! इसी प्रकार देवताओं और ब्रह्मा जी ने वर दिया कि पृथ्वी पर इस स्थान से उत्तम और कोई स्थान नहीं होगा। जो मनुष्य यहां पर तपस्या करके प्राण त्यागेंगें वह ब्रह्म लोक को जायेंगे और जो मनुष्य यहां पर दान करेंगे उन्हें सहस्र गुणां अधिक फल होगा और जो राजा यहां पर यज्ञ करेंगे वह तब तक स्वर्ग में रहेंगे जब तक यह पृथ्वी रहेगी ॥

इस कुरुक्षेत्र की वायु से उड़ाई धूलि भी पापी मनुष्य को परम गति देती है, हे बलदेव जी ! विष्णु जी ने भी यह सब स्वीकार किया था ॥

इस के पीछे बलदेव जी ने कुरुक्षेत्र में दान आदि किये और वहां से पूर्व आश्रम में पहुंचे और पूछा कि यह अत्युत्तम आश्रम किस का है, उन्हों ने उत्तर दिया कि पूर्व समय में यहां विष्णु जी ने उत्तम तप किया था और यहीं पर कुमार ब्रह्मचारणी शांडिल्य ऋषि की कन्या ने तप और

योग से स्वर्ग को पाया था, फिर वहां से चल कर बलदेव जी सरस्वती के फिरने को देख आश्चर्य हुये, वहां से बढ़ कर आगे कारप वन नाम अत्यंत उत्तम तीर्थ को गये, रात्रि को यहीं निवास कर प्रातःकाल मित्रा वरुण के पवित्र आश्रम पर गये फिर यमुना देश को गये, जहां इंद्र अग्नि और अर्य्यमा नाम देवताओं ने परम प्रीति को पाया था ॥

इस तीर्थ पर बैठ बलदेव जी ऋषियों से कथायें सुनने लगे, इतने में नारद जी वीणा बजाते हुये वहां आपहुंचे, नारद जी को आते देख बलदेव जी ने खड़े हो कर उन्हें पूजा और कौरवों का वृत्तान्त पूछा। नारद जी ने कौरवों के नाश और अन्य राजाओं की मृत्यु को वर्णन किया और कहा कि दुर्योधन की सेना में से केवल तीन वीर कृपाचार्य, कृतवर्मा और अश्वत्थामा बचे हैं परन्तु यह भी भयभीत हो कर भागे हुये हैं, दुर्योधन दुःखी हो व्यास जी के ह्रद में जा छुपा था परन्तु पांडवों ने वचनों से उसे पीड़ित किया, जिन्हें सुन गदा हाथ में ले वह बाहिर निकला और भीमसेन से लड़ने को गया, अब इन दोनों का बड़ा भयंकर युद्ध होगा, हे बलदेव जी! यदि आप यह युद्ध देखना चाहते हैं तो शीघ्र जायें ॥

बलदेव जी ने उन ब्राह्मणों को जो साथ आये थे पूजन कर धनादि दे विदा किया और अन्य साथियों को द्वारका में जाने की आज्ञा दे कर कहा कि सरस्वती सब तीर्थों में उत्तम तीर्थ है, तब बलदेव जी रथ पर स्वार हो शिष्यों का युद्ध देखने की इच्छा से वहां से चले और शीघ्र वहां आ

पहुंचे जहां भीमसेन और दुर्योधन का युद्ध हो रहा था ॥

अठारहवां अध्याय

—:o:—

संजय बोला कि आप के पुत्र ने बलदेव जी को देख अतीव प्रसन्नता से उन का बड़ा सत्कार किया और कुशल मंगल पूछा। तब बलदेव जी ने दुर्योधन से कहा कि हे श्रेष्ठ! मैंने ऋषियों और मुनियों से सुना है कि समन्त पंचक क्षेत्र में युद्ध करके प्राण देने से वीर स्वर्ग में इंद्र के साथ रहता है, इस लिये यहां से समंत पंचक को चलो वहां पर ब्रह्मा जी की उत्तर वेदी है वहां मरने से निश्चय स्वर्ग होगा ॥

तब दुर्योधन बहुत अच्छा कह कर वहीं जा पहुंचा और साथ ही पाण्डव भी वहां गये फिर आप के पुत्र ने शिर त्राण और स्वर्ण का कवच पहिन गदा हाथ में उठाली और भीमसेन भी गदा उठा आडटे यह दोनों भाई युद्ध भूमि में सूर्य और चंद्रमा के समान शोभायमान हुये ॥

इस के अनंतर दुर्योधन ने महात्मा कृष्ण, पराक्रमी बलदेव और भाईयों सहित युधिष्ठर से बड़े अहंकार से यह वचन कहा कि जो पांचाल, सृंजी और केकय देश वालों से अपने को बड़ा बली मानता था आज उसी भीमसेन से मेरा युद्ध होगा। हे युधिष्ठर! अब तुम मेरी वीरता को देखो। यह सुन सब राजा लोग बलदेव जी सहित वहीं बैठ गये,

उन में बलदेव जी तारा मंडल में चन्द्रमा के समान शोभायमान हुये॥

दुर्योधन और भीमसेन गदा हाथों में ले परस्पर एक दूसरे को कठोर वचनो से घायल करने लगे। फिर बादल के समान गर्ज कर दुर्योधन ने भीमसेन को युद्ध के लिये बुलाया उस समय नाना प्रकार के घोर उत्पात जारी हुये, पृथ्वी पर बड़े शब्दों को करती हुई उल्कायें गिरने लगीं, अंधेरी चलने लगी, भीमसेन ऐसे उल्कापातों को देख कर महाराज युधिष्ठर से कहने लगा कि यह अभागा दुर्योधन युद्ध में मुझ को जीतने के समर्थ नहीं अब मैं अपने चिरकाल के संचित क्रोध को इस पर निकालूंगा, अब मैं कौरवों की कुल में महा नीच दुर्योधन को मार विजय माला आप को पहिराऊंगा॥

हे राजन! अपने भाई से इतना कह कर पराक्रमी भीमसेन ने गदा को उठा कर दुर्योधन को ललकारा, हे दुर्योधन! अब तुम धृतराष्ट्र सहित अपने उन कर्मों को याद करलो जो वारणावत नगर में तुम ने किये थे और सभा में रजस्वला द्रौपदी को दुःख दिया था, अब मैं उन सब कामों का बदला लेता हूं, हे दुष्ट! तेरे ही कारण से भीष्म पितामह बाण शय्या पर सोते हैं और द्रोणाचार्य, कर्ण और शल्य जैसे बीर मारे गये तथा लाखों वीरों का नाश हुआ अब मैं निस्संदेह इस गदा से तुम को मारूंगा।

यह सुन दुर्योधन बड़े उच्च स्वर से कहने लगा हे नीच! बहुत बातें करने से क्या प्रयोजन, तुम युद्ध करो अब मैं

तुम्हारे युद्ध के उत्साह को भंग करूंगा, हे नीच ! मैं दुर्योधन हूं मैं तुम्हारी इन भवकियों से डरने का नहीं हूं, मेरी बहुत काल से इच्छा थी कि तुम्हारे पर अपनी गदा को साफ करूं, अब वह समय आगया है, हे दुर्बुद्धि बहुत वार्तालाप और अपनी श्लाघा करने से क्या लाभ है ॥

दुर्योधन के इन वचनों को सुन सब राजाओं और सोमकों ने दुर्योधन की बड़ी श्लाघा की ॥

उन्नीसवां अध्याय

—:०:—

संजय बोले इस के पीछे बड़ा साहसी दुर्योधन गर्जता हुआ भीमसेन के सन्मुख गया. तब इन दोनों का घोर युद्ध आरंभ हुआ, थोड़े ही काल में दोनों का शरीर रुधिर से लिथड़ पिथड़ हो गया, इस प्रकार कठिनतर युद्ध के वर्तमान होने पर वह दोनों शूर थक गये और एक महुर्त मात्र के लिये गदाओं को थाम कर खड़े हो गये ॥

तदनंतर मतवाले हाथियों के समान गदा उठा वह दोनों युद्ध करने लगे, फिर इन दोनों ने युद्ध के बड़े २ कर्तब दिखलाये, दाहिने, बायें प्रहार स्थानों का छोड़ना, बचाना, दाहिने बायें करना, तीव्रता से सन्मुख जाना, गिराना, अचल होना, शत्रु के उठने पर फिर युद्ध करना, शत्रु के मारने को चारों ओर घूमना, शत्रु के छूट जाने के स्थान को रोकना, प्रहार से

बचने के लिये झुक कर हट जाना आदि २ कर्तव किये, इन सब कर्तवों से घूम कर उन दोनों ने परस्पर एक दूसरे को घायल किया ॥

फिर वह दोनों महाबली गदा हाथ में ले मंडलों में प्रवृत हुये, दुर्योधन दाहिने मंडल पर खड़ा हुआ और भीमसेन बायें मंडल पर डटा। इस प्रकार मंडलों में घूमने पर दुर्योधन ने भीमसेन की कुक्षी में गदा प्रहार किया परन्तु भीमसेन ने उस प्रहार की तनिक परवा न कर अपनी गदा को घुमाया। आप के पुत्र ने उस गदा को ताड़ित किया, उन गदाओं के आपस में टकराने से बड़ा घोरं शब्द हुआ। फिर भीमसेन ने दुर्योधन की गदा को रोका ॥

इस प्रकार देखने वालों को चकित करते हुये वह दोनों वीर गदाओं से परस्पर वार करने लगे, इसी प्रकार युद्ध होते होते सांयकाल हो गया, परन्तु यह दोनों बराबर युद्ध के लिये डटे रहे, फिर भीमसेन की गदा को दुर्योधन ने गिरा दिया, जिस के गिरने से पृथ्वी अत्यन्त कंपायमान हुई, फिर राजा ने बायें मंडल को घूम कर भीमसेन के मस्तक पर अपनी गदा का प्रहार किया परन्तु इस प्रहार से भीमसेन कंपायमान नहीं हुआ, यह देख सब देखने वालों ने भीमसने की बड़ी प्रशंसा की। तब भीमसेन ने अपनी अपुर्व वेग वाली गदा को छोड़ा जिस को दुर्योधन ने अपनी हस्त लाघवता से निष्फल किया और वह गदा मेघों के समान गर्जती हुई पृथ्वी को कंपायमान करती हुई कौशक मार्ग में बारंबार उछली ॥

फिर अत्यन्त क्रोध युक्त दुर्योधन ने भीमसेन को गदा से छाती पर घायल किया, जिस से भीमसेन के होश उड़ गये, यह देख सोमक और पाण्डव चित्त से अत्यंत दुःखी हुये। फिर क्रोधित हाथी के समान भीमसेन दुर्योधन के सामने गया और उस ने अपनी गदा को वेग से घुमा आप के पुत्र को वक्षी में मारी, उस प्रहार से व्याकुल हो कर आप का पुत्र जंघा के तल पृथ्वी पर गिर पड़ा, उसे गिरा देख सृंजी गर्जे, जिस को सुन कर आप का पुत्र अशांति से क्रोध युक्त हो बड़े सांप के समान श्वास ले नेत्रों से भस्म करने वाली दृष्टि से भीमसेन को उठ कर देखने लगा और गदा उठा कर भीमसेन की ओर गया और उस के शिर पर गदा का प्रहार किया, परन्तु वह पर्वताकार कम्पायमान नहीं हुआ, वैसे ही डटा रहा, फिर भीमसेन ने लोहे की गदा को पकड़ बड़े बल से शत्रु को घायल किया जिस से आप का पुत्र पृथ्वी पर गिर पड़ा॥

फिर आप का पुत्र सचेत हो कर उछला फिर चारों ओर घूमते हुये आप के पुत्र ने भीमसेन को घायल किया जिस से वह व्याकुल हो पृथ्वी पर गिरा। दुर्योधन बड़े जोर से गर्जा और गदा से उस के कवच को तोड़ दिया। फिर दुर्योधन को भीमसेन ने गिरा दिया। दुर्योधन महूर्त के अनंतर उठा और रुधिर लिप्त मुख को पोंछ कर अपने को बड़े बल से थाम खड़ा हो गया॥

बीसवां अध्याय

—:०:—

संजय बोले इस के पीछे भीमसेन और दुर्योधन के इस प्रकार के युद्ध को देख अर्जुन श्री कृष्ण जी से बोले हे जनार्दन जी! इन दोनों वीरों में से आप के विचार में कौन विशेष है। अर्थात किस में कौन सा गुण अधिक है॥

वासुदेव जी ने कहा कि दोनों की शिक्षा बराबर है, भीमसेन अधिक बलवान है परन्तु दुर्योधन भीम से अधिक अभ्यासी और दाव पेच करने वाला है भीमसेन धर्म युद्ध में इस को जीत नहीं सकता, हां यदि अन्याय से लड़ेगा तो अवश्य इसे जीतेगा, भीमसेन ने पहिले प्रतिज्ञा की थी कि युद्ध में तेरी जंघाओं को गदा से तोडूंगा, इस लिये यह वीर भीमसेन अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण करे और छल से ही इस छली राजा को मारे। यदि भीमसेन अन्याय से नहीं मारेगा तो यह कौरव दुर्योधन तुम्हारा राजा होगा॥

अर्जुन ने केशव जी के इस वचन को सुन कर भीमसेन के देखते हुये अपनी बाईं जंघा को ठोका, भीमसेन उस संकेत को समझ कर युद्ध में गदा के द्वारा यमक आदिक बहुत से मंडलों को घुमा भीमसेन शत्रु को अचेत और मोहित करता हुआ गोमूत्रक नामक मंडलों पर घूमा और दुर्योधन भी भीमसेन के मारने की इच्छा से अपूर्व मार्गों पर चला, फिर परस्पर

विजय अभिलाषी वीर इस प्रकार युद्ध करने लगे जैसे कि सर्प मांस की लालसा से दो गरुड़ युद्ध करते हैं ॥

हे राजा ! इन दोनों की गदाओं से अग्नि की ज्वाला प्रकट हुई, गदाओं के संघट्टन से घोर शब्द होने लगे, तब भयानक युद्ध में लड़ते हुये वह दोनों वीर थक गये ॥

एक महूर्त तक गदाओं को थाम कर फिर विश्राम युक्त हुये, विश्राम के अनंतर भीमसेन ने अकस्मात दुर्योधन पर गदा प्रहार किया। जिस को आते देख दुर्योधन आगे से हट गया जिस से गदा का वह प्रहार निष्फल हुआ, गदा पृथ्वी पर गिर पड़ी, तब आप के पुत्र ने बड़ी व्याकुलता से भीमसेन को गदा मारी जिस से रुधिर के बहिने से वह वीर मूर्छित हो गया, दुर्योधन ने फिर उस पर प्रहार नहीं किया ॥

इस के अनंतर एक महूर्त मात्र विश्राम करके भीमसेन साह्मने खड़े दुर्योधन पर दौड़ा ॥

उस क्रोधी के प्रहार से बचने के लिये आप के पुत्र ने उछलना चाहा भीमसेन ने इस की इस क्रिया को समझ लिया और सन्मुख जा सिंह के सदृश गर्ज बड़ी तीव्रता से उस उछलने वाले दुर्योधन की जंघाओं पर गदा प्रहार किया जिस से दुर्योधन की जंघा टूट गईं तब वह आप का पुत्र जंघाओं के टूटने से पृथ्वी को शब्दायमान करता हुआ गिर पड़ा ॥

उस समय इस के गिरने से संघट्टन करती पृथ्वी कांप उठी पृथ्वी नाथ दुर्योधन के गिरने पर बहुत उल्का गिरीं ॥

बड़ी शीघ्रगामी नदियें उलटीं, स्त्रियें पुरुषों के समान और

पुरुष स्त्री के समान होगये इन उत्पातों को देख पांचालों सहित पांडव भी व्याकुल होगये ॥

इक्कीसवां अध्याय

—:०:—

संजय बोले कि इस प्रकार दुर्योधन को गिरे हुये देख पाण्डवादि सब अतीव प्रसन्न हुये ॥

भीमसेन कौरवेन्द्र दुर्योधन के पास जाकर कहने लगा कि हे दुर्मति आभोग! पूर्व काल में सभा में द्रौपदी से जो हैगो हैगो कह कर हमारा उपहास्य किया था उसका फल अब तुम ने पाया है, यह कह कर हे राजेन्द्र! उसने अपने वाम चरण से उस के मुकट को छूआ और उसके सिर को पाओं से ठुकराया और फिर कहने लगा कि हैगो हैगो कह कर तुम हमारे साह्मने नाचे थे। अब हम तुम्हारे सन्मुख नाचते हैं ॥

फिर उस ने दुर्योधन के कंधों पर गदा रख पाओं से उस के सिर को अच्छी तरह से कुचला ॥

यह देख हे राजन्! सोमक आदि श्रेष्ठ राजाओं को क्षोभ हुआ और इस प्रकार नाना प्रकार से नाचते हुये भीमसेन को देख कर राजा युधिष्ठिर ने कहा कि तुम ने शत्रुता का बदला ले लिया और अपनी प्रतिज्ञा को पूर्ण किया अब पाओं से इस के शिर को मर्दन मत करो यह पाप है ॥

हे भीमसेन ! ग्यारह अक्षौहिणी के स्वामी कौरवों के राजा अपने भाई को पाओं से ठोकर न मारो, मृतक भाई सेना और मंत्री वाला यह राजा दुर्योधन युद्ध में मारा गया है यह शोक का समय है उपहास्य का नहीं ॥

हे भीमसेन ! तुम धर्मज्ञ होकर इस के शिर को चर्णों से क्यों ठुकराते हो ॥

फिर रुदन करते हुये राजा युधिष्ठर ने मृत्यु शय्या पर पड़े हुये भाई दुर्योधन के पास जाकर कहा ॥

हे तात ! तुझ को क्रोध और अपना शोच नहीं करना चाहिये, निश्चय करके अपने किये घोर कर्मों का फल अवश्य मिलता है, हे भाई ! यह कर्मों की गति है ॥

हे राजन् ! यह उन्हीं कर्मों का फल है जो अहंकार या लोभ ने तुझ से कराये थे ॥

हे राजन् ! निश्चय तुम को स्वर्ग मिलेंगे और हम लोग निश्चय नरक में जायेंगे और बड़े कठिन दुःखों को भोगेंगे ॥

संजय बोला कि हे राजन् ! दुःख से पीड़ित धर्म का पुत्र राजा युधिष्ठर इस प्रकार कह कर लंबी श्वासों को भरता हुआ अतीव दुःखी हुआ ॥

बाईसवां अध्याय

—:०:—

धृतराष्ट्र बोले कि हे सूत ! बलदेव जी ने इस प्रकार अधर्म

से मारे हुये राजा को देख क्या किया ॥ बलवान बलदेव जी भीमसेन को ठोकरें लगाते देख क्रोध युक्त हुये और राजाओं के मध्य में ही ऊंचे स्वर से कहने लगे हे भीमसेन! धिक्कार है! धिक्कार है! धिक्कार है! जो युद्ध में तुम ने धर्म के विरुध नाभि के नीचे प्रहार किया ऐसा धर्म युद्ध में कभी नहीं हुआ और फिर हल को उठा कर भीम के सन्मुख गये, तब बलदेव जी को नम्रता पूर्वक बड़े बल से श्री कृष्ण जी ने पकड़ लिया और बड़े मधुर वचनों से उन को ठंडा किया ॥

तब धर्मात्मा बलदेव जी ने श्रीकृष्ण जी से कहा कि धर्म का नाश कर भीमसेन ने यह कर्म किया है इस लिये हे कृष्ण जी! आप ने जो कहा है यह धर्मानुसार नहीं है, श्रीकृष्ण जी ने उत्तर दिया कि आप इस लोक में क्रोध रहित धर्मात्मा और धर्म वत्सल प्रसिद्ध हैं इस लिये आप शान्त हो क्रोध को त्यागें अब आप कलियुग को वर्तमान हुआ जानिये, पांडवों की प्रतिज्ञा की ओर भी दृष्टि दें अब यह शत्रुता और प्रतिज्ञा के ऋण से छूटे हैं ॥

फिर बलदेव जी ने सब के सामने यह वचन कहा कि भीमसेन धर्मात्मा दुर्योधन को अधर्म से मार कर इस लोक में अधर्म युद्ध करने वाला प्रसिद्ध होगा और महात्मा दुर्योधन उत्तम गति को पावेगा, क्योंकि इस ने युद्ध यज्ञ में दीक्षित हो शत्रु रूपी अग्नि में अपना होम कर शुभ कीर्ति रूप यज्ञ स्नान किया है ॥

यह कह कर बलदेव जी रथ पर चढ़ कर द्वारका को चले

गये इन के चले जाने से पांडव और पांचाल प्रसन्न नहीं हुये ॥

हे राजन् ! इस के पीछे वासुदेव जी ने युधिष्ठर के पास जा कर यह वचन कहा कि हे धर्मराज ! आप धर्मात्मा हो कर किस लिये अधर्म्म को देख रहे हैं, आप गिरे हुये दुर्योधन के शिर को भीमसेन के पांओं में रुंधा हुआ देख कर इसे हटाते नहीं इस का क्या कारण है ? युधिष्ठर ने उत्तर दिया कि हे श्री कृष्ण ! मैं भीमसेन के इस कार्य्य को अच्छा नहीं समझता । इन्हों ने हम सब को बड़े २ कठोर वचन कह कर वनों को भेजा था वह कठिन दुःख भीमसेन को याद है इस लिये अब भीम सेन इस निर्बुद्धि, लोभी, कोमी दुर्योधन को मार धर्म्माधर्म्म से काम ले सकता है ॥

हे राजन् ! विजय से प्रसन्न चित महातेजस्वी भीमसेन हाथ जोड़ दण्डवत कर धर्मराज से कहने लगा कि हे राजन् ! अब निष्कंटक यह सब पृथ्वी आप की है इस पर राज्य करें और धर्म पालन करें । क्योंकि छल से राज्य करने वाला वह मरा हुआ पृथ्वी पर पड़ा है और आप को कठोर वचन कहिने वाले कर्ण, शकुनी और दुशासनादि आप के शत्रु भी मारे गये है ॥

तेईसवां अध्याय

—:o:—

धृतराष्ट्र बोले कि हे संजय ! दुर्योधन को भीमसेन के हाथ

से मरा देख पांडवों और संजय ने क्या किया ॥

संजय बोले कि हे महाराज! इस को मरा देख कृष्ण सहित पांडवों, सृंजियों और पांचालों ने दुवरों को घुमा २ कर सिंह नाद किये, शंख और दुंदुभियों को बजा बहुत ही प्रसन्न हुये और भीमसेन से बोले कि हे वीर! युद्ध में दुर्योधन को मारना आप ही का काम था। आप के सिवाय जिस ने धर्म पुत्र राजा युधिष्ठर का अपमान किया था उस से और कौन बदला ले सकता था इस से आप का बड़ा यश हुआ है ॥

इन की यह बातें सुन मधुसूदन जी ने कहा कि हे राजाओ! मरे शत्रु को फिर मारना नीति के विपरीत है इस का हास्य करना योग्य नहीं, अब आप को भी शीघ्र रथों पर सवार हो यहां से चलना चाहिये ॥

श्री कृष्ण जी के वचनों को सुन दुर्योधन अति क्रोध से दोनों हाथों के बल कटी के सहारे से उठ कर बैठ गया और बड़े कठोर वचनों से वासुदेव जी से बोला कि हे कंस के दास के पुत्र! तुझे लज्जा नहीं आती कि गदा युद्ध में तुम ने ही भीमसेन को जितलाया कि इसे जंघाओं पर प्रहार करो और मैं अधर्म से मारा गया, भीष्म पितामह जी को तुम ने ही शिखंडी को आगे करके मरवाया ॥

हे दुर्बुद्धि! अश्वत्थामा नामक हाथी को मरवा कर आचार्य जी को तुम ने मरवा दिया ॥

हे पापात्मन! तुम ही ने महात्मा सात्यकी के हाथ से पराक्रमी भूरिश्रवा का वध कराया यदि ऐसे अधर्म न करते तो

तुम्हारी विजय कभी नहीं होसकती थी तुम्हारे उन कर्मों से अपने धर्म पर आरूढ़ राजा लोग मारे गये ॥

यह सुन कृष्ण जी बोले कि हे गांधारी के पुत्र पापात्मन् ! तेरे ही पाप कर्मों से शूर वीर भीष्म, द्रोणाचार्य आदि मारे गये तुम ने लोभ और शकुनी के कहने में आकर पाण्डवों के बाप दादा के राज्य के भाग को न दिया, तुम ने भीमसेन को विष दिया और माता सहित पाण्डवों को लाक्षागृह में दग्ध किया और द्यूत में छल कर सभा में रजस्वला द्रौपदी को दुख दिया अये कठोर चित्त ! उसी समय तुम मार देने के योग्य थे जब कि तुम ने द्यूत विद्या के छल को जानने वाले शकुनी द्वारा धर्मात्मा, निश्छल, महात्मा युधिष्ठिर को छला था हे पापाधम ! इन कारणों से तेरा नाश हुआ है ॥

अये पापी ! तु इन्हीं अपने पापों से मारा गया है और हमारे दुष्कर्म जो तु गिनता है वह सब भी तेरे ही दुराचार से किये गये हैं तुम ने हितकारियों के हितकर वचनों को ईर्षा और लोभ के आधीन हो न सुना इसी से तुम्हारी यह दशा हुई है ॥

दुर्योधन बोला कि मैंने वेदों को पढ़ा, दान दिये और सब पृथ्वी का राज्य किया मुझ से बढ़ कर और सत्यकर्मी कौन है, क्षत्रियों को सौभाग्य से प्राप्त मृत्यू को मैंने पाया है, मैं अपने भाईयों और मित्रों सहित स्वर्ग को जाऊंगा मेरे जैसा सत्यकर्मी कौन है ॥

फिर श्री कृष्ण जी पांडवों को दुःखी और चिंतायुक्त देख कर बोले कि दुर्योधन और वह सब पराक्रमी युद्ध में धर्म्म युद्ध

से कभी नहीं मारे जाते थे इस लिये बहुत से उपायों से उन को मरवाया है यदि मैं ऐसा न करता तो तुम्हें विजय, राज्य, और धन न मिलते तुम को इन के मारने की चिंता नहीं करनी चाहिये यह सुन कर पांडव सृंजियों सहित सिंहों के समान गर्जे ॥

चौबीसवां अध्याय

—०—

रथ का भस्म होना और श्रीकृष्ण जी का इस का हेतु कहना ॥

संजय बोले इस के पीछे वहां प्रसन्नता से शंख बजाते हुये वह सब डेरे में पहुंचे श्रीकृष्ण जी ने अर्जुन से कहा हे अर्जुन! पहिले तुम गांडीव धनुष और दोनों तूणीरों को लेकर उतरो पीछे मैं उतरूंगा, यह सुन कर उस वीर अर्जुन ने वैसे ही किया। फिर केशव जी घोड़ों की बाग डोरों को छोड़ कर रथ से उतरे, इनके उतरते ही अर्जुन की दिव्य ध्वजा और हनुमान जी अन्तरध्यान हो गये और वह रथ बिना अग्नि के ही भस्म हो कर पृथ्वी पर गिर पड़ा और घोड़े भी भस्म हो गये ॥

यह देख पांडव लोग चकित हो गये, अर्जुन ने बड़ी नम्रता से हाथ जोड़ कर श्रीकृष्णजी से इस का हेतु पूछा, वासुदेव जी ने उत्तर दिया कि हे अर्जुन! यह रथ पहिले ही बहुत

से शस्त्रास्त्रों से भस्म हो चुका था, केवल मेरे बैठने से यह खड़ा था, अब तेरे कृत कृत्य होने और मेरे उतरने पर यह गिर पड़ा है ॥

फिर राजा युधिष्ठिर से केशव जी बोले कि हे राजन्! तुम और तुम्हारे सब भाई प्रारब्ध से ही शत्रु दमन कर बच गये हो और युद्ध से भी अब निवृत्त होगये हो अब जो आगे को कर्तव्य है वह करो ॥

यह सुन बड़े हर्ष से युधिष्ठिर ने कहा कि हे माधव जी! द्रोणाचार्य और कर्ण के छोड़े हुये ब्रह्मास्त्र को आप के सिवाय कौन सहने के योग्य था। यह सब विजय आप ही की कृपा से हुई है ॥

इस के अनंतर हे राजन्! आप के डेरे में पहुंच कर पाण्डवों ने रत्न, धन, चांदी, सोने, मनि और मोतियों के हार बहुमूल दुशाले और अन्यान्य नाना प्रकार की राज्य सामग्री पा वह सब बड़े प्रसन्न हुए ॥

फिर श्री कृष्ण जी बोले कि हम लोगों को डेरों से बाहिर ठहरना चाहिये ॥

यह सुन पाण्डव सात्यकी और कृष्ण जी सहित डेरों से बाहिर अमोघवती नदी के किनारे रात्रि को रहे, इस के अनंतर श्री कृष्ण जी प्रातःकाल हस्तिनापुर को गये ॥

वैशम्पायन बोले कि हे राजन्! इस घोर युद्ध में अन्याय से वीर दुर्योधन के मारने से राजा युधिष्ठिर को बड़ा भय हुआ भय का कारण यह था कि गांधारी अपने कोप से तीनों लोकों

को भी भस्म कर सकती है कहीं वह हम को भी शाप न दे इसी भय से युधिष्ठर ने श्री कृष्ण जी से प्रार्थना की कि हे कृष्ण जी ! हमारे लिये आपने गदा, परिघ, शक्ति और वज्र आदि के तुल्य कठोर वचनों को तथा घोर शस्त्रों के अघातों को भी सहन किया आप ही की कृपा से यह शत्रु मारे गये हैं और हमें विजय मिली है ॥

हे नाथ ! जैसे आपने वह सब उपकार किये हैं जिन को हम इस जन्म में क्या सहस्र जन्मों में भी नहीं भूल सकते एक और भी उपकार करें । श्रीमान् ! आप गांधारी के तपो बल को जानते हैं हमें भय है कि यह तपस्वनी अपने पुत्रों के विनाश को सुन कर तपो बल से हम सब को भस्म न करदे हे देव ! उस के कोप को शांत करना नीति है और मुझ को आप के सिवाय इस काम के करने वाला और कोई नजर नहीं आता इस लिये उस के क्रोध की शांति के लिये आप का जाना ही उचित है क्योंकि आप ही सृष्टि के उत्पत्ती कर्ता, पालन करता और संहार करता हैं आप ही उस के क्रोध को शांत कर सकते हैं हमारे पितामह भगवान व्यास जी भी वहीं होंगे ॥

श्री कृष्ण जी युधिष्ठर की प्रार्थना को सुन रथ पर सवार हो हस्तिना पुर में पहुंचे और धृतराष्ट्र के मंदिर के निकट रथ से उतर राज मंदिर में पधारे ॥

यहां पर आगे व्यास जी भी बैठे थे श्रीकृष्ण जी ने धृतराष्ट्र और व्यास जी के चरणों पर सीस निवाया और गांधारी जी को भी दंडवत की और फिर महाराज धृतराष्ट्र

को हाथ से पकड़ कर बड़ा भारी विलाप किया और एक मुहूर्त इसी प्रकार रुदन कर आंखें पुछीं और धृतराष्ट्र से बोले हे भारत वंशी ! आप तीनों काल के वृत्तान्त को जानते हैं पांडवों से यह जो कुल का नाश हुआ है वह कैसे न होता आवश्य होना ही था, क्योंकि यह भावी थी आप जानते हैं कि आप के पुत्रों ने पांडवों से क्या २ नहीं किया, मैं ने भी युद्ध से पहिले उन के लिये केवल पांच गाम मांगे परंतु भावी से प्रेरित आप के पुत्रों ने एक न मानी । भीष्म, सोमदत्त, कृपाचार्य और द्रोणाचार्यादि ने भी संधी के लिये आप से वारंवार प्रार्थना की परन्तु काल से घायल चित्त आप ने एक की न सुनी हे ज्ञानी ! आप इस में पांडवों का दोष न समझें उन्हों ने तनिक भी अमर्य्यदा नहीं की ॥

कुल वंश और पिंड दान यह जो पुत्रों के होने का फल है वह सब आपके और माता गांधारी के लिये पाण्डवों में विद्यमान है। इस लिये आप और माता गांधारी उन के अपराधों को न विचारो वरंच अपने कल्याण बचनों से उन की रक्षा करो धर्म पुत्र युधिष्ठर की जिस प्रकार आप के चरणों में भक्ति है वह आप अच्छी तरह से जानते हैं वह आप के और माता गांधारी के दुःख से दुःखित हैं और लज्जा के मारे आप के सन्मुख भी नहीं आते ॥

फिर गांधारी से बोले कि हे शुभे ! मुझे पूर्ण रूप से विदित है कि अब आप के तुल्य संसार में कोई स्त्री नहीं है। आप ने दुर्योधन से स्पष्ट कहा था कि हे अज्ञानी ! यह निश्चय जानो

कि जिधर धर्म्म है उधर ही जय है। हे राज पुत्री! वह आप का कहिना सत्य हुआ, इस लिये अब शोक से अपने मन को न जलाओ ॥

हे गांधारी! आप अपने तपो बल से त्रैलोकी को भस्म कर सकती हो, आप पाण्डवों के नाश के लिये कभी संकल्प न करें, यह सब सुन कर गांधारी ने उत्तर दिया कि आप ने जो कुछ कहा है सब सत्य है, हे जनार्दन जी! अब वीर पाण्डवों सहित आप इस अन्धे संतान रहित वृद्ध राजा का सहारा हैं। इतना कह कर गांधारी पुत्र शोक से दुःखित हो रुदन करने लगी, फिर केशव जी ने शोक पिड़ित गांधारी को कई प्रकार युक्ति से युक्त वचनों से तसल्ली दी ॥

अश्वत्थामा के हृदय के भाव को जान व्यासजी के चरणों में प्रणाम कर धृतराष्ट्र से श्रीकृष्ण जी ने कहा हे राजन्! अश्वत्थामा ने आज रात्रि को ही पाण्डवों के मारने का विचार कर लिया है इस लिये आप मुझे आज्ञा दें मैं फिर आप से मिलूंगा यह सुन कर महाराज धृतराष्ट्र और गांधारी ने कहा कि शीघ्र जायें और पाण्डवों की रक्षा करें ॥

केशवजी के जाने के पीछे व्यास जी ने भी राजा को विश्वास दिलाया ॥

पच्चीसवां अध्याय

—:०:—

धृतराष्ट्र बोले कि हे संजय! भीमसेन के पांव से मस्तक

दबाने पर टूटी जंघां पृथ्वी पर गिरे हुये मेरे पुत्र अहंकारी ने क्या कहा ?

संजय बोले कि हे राजन्! टूटी जंघां, धूलि से लिप्त शिर आप के पुत्र ने दशों दिशाओं को देख क्रोध और अश्रुपूरित नेत्रों से मुझे देखा और युधीष्ठर की निन्दा करके बोला कि भीष्म, कर्ण, द्रोणाचार्य आदि के मर जाने से मेरी यह दशा हुई, भावी बड़ा बलवान् है, ग्यारह अक्षौहिणी के मुझ स्वामी की यह दशा हुई, छल से विजय पाकर पराक्रमी पुरुष कब प्रसन्न होते हैं। कौन ऐसा पंडित है जो अधर्म से विजय पाकर प्रसन्न होता है, जैसे कि भीमसेन प्रसन्न हो रहा है और मुझ टूटी जंघां वाले के शिर को चरणों में मर्दन कर रहा है ॥

हे संजय! मेरे माता पिता भी धर्म युद्ध को अच्छी तरह से जानते हैं। तुम ने उनको मेरी ओर से हाथ जोड़ कर प्रार्थना करनी कि मैंने यज्ञादि किये, प्रजा पालन किया और समुद्र पर्य्यन्त पृथ्वी पर राज्य किया, जीते शत्रुओं के सिरों पर पांओं दिये, समर्थ के अनुसार दान दिये, मित्रों का हित किया, मुझ से अधिक सुकर्म्मी कौन है मैं प्रारब्ध से हार गया हूं और प्रारब्ध से शत्रुओं ने मेरी लक्ष्मी को प्राप्त किया है और मैंने क्षत्रियों की मृत्यु को पाया है। धर्म को छोड़ भीमसेन ने मुझे मारा है ॥

महाभाग अश्वत्थामा, कृतवर्मा और कृपाचार्य जी से कह देना कि अनेक प्रकार के अधर्म करने वाले नियम को

त्यागने वाले पाण्डवों पर आप ने विश्वास न करना ॥

हाय ! मेरी बहिन दुशीला भाईयों सहित अपने पति को मरे सुन रोती हुई कैसी दुःखी हुई होगी । मेरे वृद्ध पिता धृतराष्ट्र मेरे पुत्र पौत्रों की स्त्रियें और माता गांधरी किस दशा को पहुंचे होंगे । मुझे पूर्ण विश्वास है कि मृतक पुत्र और पति लक्ष्मण की माता शीघ्र ही प्राण त्याग कर देगी ॥

हृदय विदारक दुर्योधन के विलाप को सुन सहस्रों मनुष्य रोते हुये दशों दिशाओं को भागे ॥

इन लोगों ने अश्वत्थामा से मिल कर भीमसेन के अधर्म और दुर्योधन के विलाप को सविस्तार सुना दिया ॥

छब्बीसवां अध्याय

—:०:—

हे राजन् ! कौरवों के बचे हुये तीनों योधा अश्वत्थामा कृपाचार्य और कृतवर्मा दूतों के मुख से राजा का रण में गिरना सुन घोड़ों पर स्वार हो रण भूमि में पहुंचे और वहां पर गदा, तोमर आदि से अत्यन्त घायल गिराये हुये राजा दुर्योधन को देख परम दुःखी हो रोने लगे ॥

इस के अनंतर अश्रुओं से पूर्ण नेत्र ठंडी सांस भरते हुए अश्वत्यामा जी दुर्योधन से बोले । हे महाराज ! निश्चय इस संसार में जहां आप सरीखे भी धूलि से लिप्त हो कर सोते हैं कोई स्थाई नहीं ॥

हाय देव! तेरी गति अपार है, हे राजन्! तेरी वह बड़ी भारी सेना और वीर भाई कहां गये, हे राजन्! आप इन्द्र से स्पर्द्धा करने वाले थे हाय! आप की भी आज यह दशा है॥

संजय बोला कि हे राजन्! आप का पुत्र दुर्योधन अश्वत्थामा के वचनों को सुन कर अपने हाथों से दोनों नेत्रों को पुंछ रूखी स्वर से कृपाचार्य आदि वीरों से कहने लगा, काल भगवान ने किसी को नहीं छोड़ा मैंने लाखों आपत्तियों को झेला परंतु युद्ध में पीठ नहीं दिखलाई आज मैं पापीयों के छल से मारा गया हूं॥

मैं आप को भी प्रारब्ध से बचा देखता हूं मैं मरने को अब कल्याणकारी देखता हूं यदि आप वेदानुयाई हैं तो मेरे मरने का दुःख न करना मैंने अविनाशी लोक पाया है हे राजन्! इतना कह कर वह राजा दुर्योधन रोता हुआ चुप होगया॥

राजा को इस प्रकार रोता और दुःखी देख अश्वत्थामा जी क्रोध से ऐसे प्रज्वलत हूये जैसे कि पृथ्वी के नाश करने के लिये अग्नि प्रज्वलित होती है, अश्रुओं से नेत्रों को भर कर बड़े व्याकुल वचनों से बोले कि नीचों के अत्यन्त निर्दय कर्म से मेरा पिता मारा गया उस से मैं इतना दुःखी नहीं हुआ जैसेकि आज आप की इस दशा को देख कर दुःखी हुआ हूं, मैं अपने यज्ञ दान और धर्मादि की शपथ खाकर कहता हुं कि अब मैं उपाओं से कृष्ण के देखते ही संपूर्ण पाण्डवों को यमलोक में पहुंचाऊंगा, आप मुझे आज्ञा दीजिये॥

कौरवराज दुर्योधन अश्वत्थामा के इस वचन को सुन कर कृपाचार्य से बोले हे आचार्य्य जी! आप शीघ्र पूरित कलश लायें। तब राजा जी के अभिप्राय को समझ आचार्य्य जी तत्काल कलश भर कर ले आये। आप के पुत्र ने फिर कहा कि अःसमय देव आप यदि मेरा हित चाहते हैं तो शीघ्र ही अश्वत्थामा को सेनापति के पद के लिये अभिषेक करादो॥

यह सुन कर कृपाचार्य्य ने अश्वत्थामा को सेनापति के अधिकार पर अभिषेक कराया, हे महाराज! इस प्रकार अभिषिक्त हो अश्वत्थामा सिंहनाद से चारों दिशाओं को शब्दायमान् करता हुआ वहां से चला गया और वह दोनों महारथी भी अश्वत्थाम के साथ ही चले गये॥

महाभारत

सौप्तिक पर्व

प्रथम अध्याय

अश्वत्थामा का सलाह करना ॥

नारायण नरों में उत्तम नर को और सरस्वती अर्थात जीव ईश्वर को प्रकट करने वाली देवी को नमस्कार करके जय नाम महाभारत इतिहास को वर्णन करता हूं ॥

दुर्योधन से वार्तालाप कर अश्वत्थामा प्रभृति एक साथ ही दक्षिण की ओर चले गये और सूर्यास्त के समय डेरों के पास रथ से उतर गुप्त रूप से घने जंगल में बैठ गये और लंबे २ स्वास लेकर सोचने लगे, फिर विजय अभिलाषी पाण्डवों के घोर शब्दों को

सुन कर डर के मारा भय से वहां से पूर्व की ओर चल दिये ॥

धृतराष्ट्र जी बोले कि हे संजय ! भीमसेन ने यह बड़ा बुरा कर्म किया जो दश हजार हाथी के बल रखने वाले मेरे पुत्र को मारा, हे संजय ! हाय ! यह मेरा पुत्र वज्र के समान शरीर वाला पाण्डवों के हाथ से मारा गया, निश्चय प्रारब्ध बड़ी बलवान है, मेरा हृदय पत्थर है जो कि सौ पुत्रों की मृत्यु को सुन कर भी फट नहीं जाता, मैं पांडवों के देश में अब रहना नहीं चाहता, हे संजय ! मैं राजाओं का पिता और आप भी राजा था अब पांडवों का आज्ञा वर्ती होकर सेवकों के समान मैं किस प्रकार काम करूंगा ?

हे संजय ! अधर्म से मेरे पुत्र दुर्योधन के मरने पर कृतवर्मा, कृपाचार्य और अश्वत्थामा ने क्या किया ॥

संजय ने उत्तर दिया कि हे राजन् ! आप के वीरों ने थोड़ी दूर चल कर अपने घोड़ों को जल पिलाया और एक महूर्त विश्राम कर निकट वर्ती वन की ओर चल दिये और सायंकाल को एक गहर वन में पहुंच रथों से उतर अपने घोड़ों को खोल कर नियमानुसार संध्या वंदन करने लगे ॥

इतने में बहुत रात्री चली गई तब वह सब कृपाचार्यादि अति पास २ बैठ गये, कृपाचार्य और कृतवर्मा तो थकावट और शोक से व्याकुल सो गये, परन्तु चिंतातुर अश्वत्थामा को नींद न आई और सोचने लगा कि मैं धर्म युद्ध से तो पाण्डवों को मार नहीं सकता इस लिये चाहे मैं नरक ही में क्यों न जाऊं, सोये

हुए पाण्डवों को मारूंगा। यह निश्चय कर मामा और कृतवर्मा को जगा उन से यह सब कह दिया और पूछा कि इस में आप की क्या सम्मति है॥

दूसरा अध्याय

—:०:—

कृपाचार्य का प्रारब्ध और उद्यम पर विचार॥

कृपाचार्य बोले कि हे समर्थ! जो आपने कहा वह सब मैंने सुना मेरी सम्मति में प्रारब्ध और उद्यम में सब बंधे हुये हैं, परन्तु प्रारब्ध उद्यम से बलवान है, केवल भाग्य से भी संसार के काम नहीं चलते और न केवल उद्योग से ही सफलता होती है। दोनों के मिलने से ही कार्य सिद्धि होती है॥

आप यह निश्चय समझो कि उद्योग प्रारब्ध के आधीन है। इस में सब को निश्चय है परन्तु उद्योग को बुरा कहिने वालों को बुद्धिमान अच्छा नहीं समझते क्योंकि सावधान निरालस्य मनुष्य सुख से रहता है और आलसी सुख से जीवन धारण नहीं कर सकता। इस में यह ही निश्चय होता है कि आलस्य को त्याग साहस और उद्यम से मनुष्य कर्म करे परन्तु उत्साह और उद्यम उपाय से रहित न हो॥

कर्म में लगने से पूर्व वृद्धों की सम्मति लेना भी आवश्यक है क्योंकि जो मनुष्य वृद्धों की सम्मति लेकर उपाय करता है वह थोड़े ही काल में उस के फल को पाता है। जो मनुष्य राग

द्वेष, क्रोध, भय, लोभ व अभिमान से अभिष्ट चाहता है वह शीघ्र ही अपमानित हो लक्ष्मी से विहीन हो कर नष्ट हो जाता है ठक इसी प्रकार अदूर दर्शी दुर्योधन ने वृद्धों के वचनों को न मान कर नीचों की सम्मति से बिना विचारे बैर बुद्धिमान पाण्डवों स युद्ध आरम्भ किया जिस का फल पाया, मैं भी अपने मित्रों के कथन को न मान कर उस पापी पुरुष के पीछे चला, जिस का फल यह हुआ कि अब तक चिन्ता और दुख उठा रहा हूं और अनेक प्रकार से विचार करने पर भी अपनी कल्याण का कोई मार्ग नहीं देखता इस लिय अब सुहृद जनों से सम्मान करना उचित है और जैसे वह आज्ञा दें वैसे ही करना उचित है ॥

इस प्रकार विचार और निश्चय करके हम सब लोग धृतराष्ट्र, गंधारी और विदुर जी से सम्मति लें जो सम्मति वह दें उसी में हमारा कल्याण है यह मेरा दृढ़ निश्चय है ॥

तीसरा अध्याय

—:o:—

अश्वत्थामा का न्याय विरुद्ध रात्रि में सोये हुये पाण्डवों और पाण्डवों के पुत्रों को मारने के लिये विचार करना ॥

संजय बोले कि हे महाराज, कृपाचार्य के इस वचन को

सुन कर दुख और शोक से संयुक्त हो अश्वत्थामा जी उन दोनों से बोले, पुरुष में जो बुद्धि होती है वह उसी से प्रसन्न रहता है और अपने आप को बड़ा बुद्धिमान समझता है और दूसरों को प्रायः बुद्धि हीन समझता है, जो मनुष्य निज कार्य में सफलता पालेता है वह फूला नहीं समाता ॥

एक मनुष्य अपनी बुद्धि के अनुसार एक काम आरम्भ करता है, दूसरा अपनी बुद्धि से उसे बुरा समझता है, मनुष्य की बाल्य अवस्था में और बुद्धि होती है जवानी में और, वृद्ध अवस्था में और ही बुद्धि होती है, मनुष्य की बुद्धि दुःख में और और ऐश्वर्य में और ही होती है ॥

इस समय मैंने निश्चय किया है कि ब्रह्मा जी ने सृष्टि उत्पन्न कर के हर एक वर्ण का एक २ विशेष धर्म नियत किया है। ब्राह्मणों के लिये श्रेष्ठ वेद, क्षत्रियों के लिये पराक्रम, वैश्यों में सावधानी और शूद्रों के लिये आज्ञा पालन नियत किया है। मैं ब्राह्मण कुल में जन्म पा क्षत्रिय धर्म का पालन करने वाला बना हुं, अब यदि मैं क्षत्रिय धर्म पर लात मार ब्राह्मणों के शमदमादि गुणों का सेवन करता हुं तो साधूओं को अंगीकृत नहीं है, अब मैं क्षत्रिय धर्म का सेवन कर राजा दुर्योधन और अपने पिता के पीछे जाऊंगा, अब मैं उन युद्ध से थकित सुख से निश्चित सोने वाले पांचालों के डेरे में जाऊंगा और सब का नाश करूंगा और उन सोये हुओं को ऐसे मारूंगा जैसे इन्द्र ने दैत्यों को मारा था, फिर मैं शान्ति पाऊंगा और पिता के ऋण

से अत्र्युण हुंगा मैं पाण्डवों के सोये पुत्रों का खड्ग से शिर काट दूंगा वरंच पाण्डवों की सेना को मार कर सुखी हूंगा ॥

चौथा अध्याय

—:०:—

कृतवर्मा का अश्वत्थामा को समझाना ॥

कृपाचार्य बोले कि हे अश्वत्थामन् ! पिता और राजा का बदला लेने के लिये तुम्हारी अविनाशी बुद्धि उत्पन्न हुई है, अब इन्द्र भी उस को जीत नहीं सकता, हम दोनों प्रातः काल तुम्हारे साथ चलेंगे, अब कवच और ध्वजा को उतार कर विश्राम करो और सो जाओ, क्योंकि तुम को जागते बहुत दिन हो गये हैं ॥

तुम्हारे और मेरे दिव्य अस्त्र हैं और धनुष धारी कृतवर्मा भी युद्ध में बड़े सवाधान हैं हम तीनों मिल कर शत्रुओं का नाश करेंगे, अब आप निश्चिंत हो कर सो जायें प्रातः काल हम दोनों तुम्हारे पीछा चलेंगे और अपना २ नाम सुना कर उन से युद्ध करें गे और तुम शत्रुओं को मार कर ऐसे विचरोगे जैसे कि दैत्यों को मार कर इन्द्र विचरा था ॥

हे तात ! मैं और कृतवर्मा युद्ध में विजय किये विना कभी लौट कर नहीं आयें गे हम सब पाण्डवों को मार कर लौटें गे या वहीं मर कर स्वर्ग को पधारें गे ॥

हे राजन् ! मामा जी के इन हितकारी वचनों को सुन क्रोध में भर अश्वत्थामा ने उत्तर दिया कि रोगी, क्रोधी, धनादि के लिये शोच करने वाले और कामी को निद्रा कहां, अब यह मेरा क्रोध चौथाई उत्पन्न हुआ है पिता की मृत्यु को सुन मेरा हृदय कब शांति पा सकता है मेरा पिता जिस प्रकार इन पापियों के हाथ से मारा गया है आप ने देखा है वह मेरे मर्मों को काटता है जब मुझे विचार आता है कि द्रोणाचार्य मारा गया तो धृष्टद्युम्न के मारे विना मैं जीने का उत्साह नहीं कर सकता ॥

जब से मैंने टूटी जंघा वाले राजा दुर्योधन का विलाप सुना मेरा हृदय टुकड़े २ हो रहा है हाय ! मेरे जीते जी मेरे मित्र को पांडवों ने जीत लिया यह मेरे क्रोध को ऐसे बढ़ाता है जैसे जल का वेग समुद्र को बढ़ाता है । मेरा यह क्रोध अब शांत नहीं हो सकता मैं संसार में किसी को नहीं देखता जो मेरे क्रोध को शांत कर सके या मेरे इस विचार को हटा सकता हो । मेरे मित्रों की पराजय और पांडवों की विजय मेरे हृदय को जला रही है इस लिये मैं आज रात्रि को ही शत्रु वध कर क्रोध अग्नि को उन के रुधिरों से बुझा विश्राम करके शयन करूंगा ॥

———

पांचवां अध्याय

—:-०-:—

अश्वत्थामा के शस्त्रों का नाश ॥

कृपाचार्य बोले कि दुर्बुद्धि और अजितेन्द्रिय मनुष्य सुन कर भी धर्म और अर्थ पूर्ण रीति से नहीं जान सकता, तथा षट् शास्त्रों का वक्ता भी बिना नीति सीखे धर्म अर्थ का निश्चय नहीं कर सकता। मूर्ख बहुत समय तक पंडितों के पास रह कर और उन की सेवा करके भी धर्म को नहीं जान सकता और ज्ञानी मनुष्य एक महूर्त ही पंडित के पास बैठ कर धर्म को जान जाता है। दुर्बुद्धि और पापी का सत्पथ पर चलाना कठिन है चाहे उसे लाख उपदेश किये जायें परन्तु वह पापों को नहीं छोड़ता॥

जो पुरुष शुभ चिंतक मित्र के समझाने पर भी नहीं समझता वह दुःख पाता है इसी प्रकार ज्ञानी लोग पाप करने वाले बुद्धिमान को बारंबार हटाते हैं, जो इन्द्रियों का दमन कर मन और बुद्धि को समझा इस पर आचरण करता है वह पीछे दुःखी नहीं होता, सोते को, अशस्त्र को, पैदल को और शरणागत को मारना महा पाप है खुले केश वाले और मृतक सवारी वाले को मारना भी बड़ा पाप है॥

हे सौम्य! इस समय कवच शस्त्रों से हीन निश्चिन्तता से पांडव लोग सोते हैं जो इन को ऐसी दशा में मारेगा वह

घोर नरक का भागी होगा तुम सम्पूर्ण अस्त्रज्ञों में श्रेष्ठ माने गये हो तुम से छोटे से छोटा पाप भी आज तक नहीं हुआ तुम प्रातःकाल रण भूमि में गर्जन कर सब के सन्मुख शत्रुओं का नाश कर सकते हो। इस लिये तुम से ऐसा घोर पाप कर्म कभी नहीं होना चाहिये ॥

अश्वत्थामा बोले हे मामा जी! जो आप कहते हैं वह सब सत्य है परन्तु पहिले पाण्डवों ने ही धर्म रूप सेतु को तोड़ा है शस्त्र के त्यागने वाला मेरा पिता राजाओं और तुम्हारे समक्ष धृष्टद्युम्न के हाथ से गिराया गया और महारथी कर्ण रथ चक्र के पृथ्वी में घुस जाने पर अर्जुन के हाथ से मारा गया अशस्त्र भीष्म जी भी शिखंडी को आगे करके अर्जुन के हाथ से मारे गये, युद्ध में शरीर त्यागन के निमित्त बैठा हुआ भूरिश्रवा राजाओं के पुकारते हुये सात्यकी के हाथ से मारा गया, दुर्योधन भीमसेन से अधर्म से गिराया गया, इन कारणों से पांचाल देशी अधर्मी और पापी हैं इन्हों ने धर्म के पुल को तोड़ दिया है ॥

अब मैं उन के प्राण रात्रि को ही लूंगा चाहे मैं मर कर कीट पतंगादि योनी में ही जन्म लूं मैंने यही निश्चय कर लिया है, मुझे निद्रा और चैन कैसे हो सकती है संसार में न कोई ऐसा उत्पन्न हुआ है न होगा जो मुझे इस कर्म से रोक सके ॥

संजय बोले कि हे राजन्! अश्वत्थामा जी इतना कह कर चुपके से रथ को जोड़ने लगे, तब कृपाचार्य और कृतवर्मा उन से पूछने लगे कि आप यह क्या कर रहे हैं, हे नरोत्तम!

प्रातः काल हम दोनों आप के साथ जायेंगे, क्या हमारे कहने पर आप को विश्वास नहीं ? पिता की मृत्यु के शोक से व्याकुल अश्वत्थामा ने अपने हृदय का सब भाव उन से कह दिया और यह भी कह दिया कि मैं पांचाल के पुत्र धृष्टद्युम्न को इसी प्रकार पाप कर्म से मारूंगा, और मेरे हाथ से पशु के समान मरा हुआ धृष्टद्युम्न वीर लोगों से प्राप्त स्वर्ग को भी नहीं जाये गा ॥

आप दोनों अपने रथों को त्यार कर मेरी बाट देखो, हे राजा ! अश्वत्थामा यह कह कर रथ पर सवार हो कर पांडवों के डेरे में चला गया, कृपाचार्य और कृतवर्मा भी इस के पीछे २ चले, यह तीनों वहां पहुंचे जहां पांडव लोग निश्चंत सोये पड़े थे ॥

छटा अध्याय

अश्वत्थामा का द्वारपाल रुप महादेव से पीड़ित हो शिवजी की शरण लेना और शिवजी का प्रसन्न हो उसको दिव्य खड्ग देना ॥

—:०:—

हे राजन् ! द्वार पर पहुंच कर अश्वत्थामा ने एक लंबे कद चन्द्र सूर्य के समान प्रकाशित कृदमचर्म ओढ़े नागों का यज्ञोपवीत पहिरे हाथों में कई शस्त्र पकड़े एक बड़े बली मनुष्य

को खड़े देखा, उस के मुख, नाक और कानों से हज़ारों ज्वाला निकलती थीं उस बड़े भयकारी को देखते ही अश्वत्थामा ने अस्त्रों की वर्षा से उसे ढक दिया, उन शस्त्रों को उस ने इस प्रकार भक्षण किया जिस प्रकार बड़वाग्नि समुद्र जल का भक्षण कर जाती है, फिर अश्वत्थामा ने अपने सम्पूर्ण शस्त्र क्रमशः अपने पूर्ण बल से छोड़े जिन सब को भी वह पुरुष क्षण भर में भक्षण कर गया ॥

इस प्रकार सब शस्त्रों के नाश को देख अश्वत्थामा ने आकाश को श्रीकृष्ण जी से पूर्ण देखा, तब शस्त्रों से रहित अश्वत्थामा ने उस चमत्कार को देख कर अनयन्त दुःखी हो कृपाचार्य के वचनों का स्मरण किया और कहने लगा कि जो प्रिय हितकारी परिणाम में शुभदायक मित्रों के वचनों को नहीं सुनता वह अवश्य दुःख पाता है ॥

गौ, ब्राह्मण, राजा, स्त्री, मित्र, गुरू, निर्बल, विक्षिप्त अंधे, सोने वाले, भयभीत, मदोन्मत्त, रोगादिकों से अचेत मनुष्य पर शस्त्र न चलावे, यह पूर्व काल में सत्य पुरुषों के शास्त्राज्ञ रूप उपदेश दे रहे थे, मैंने शास्त्र को उल्लंघन कर पाप कर्म करना चाहा और घोर अपत्ति को पाया, परन्तु जो बड़े कर्म आरम्भ कर मुख फेरता है उस की निंदा होती है और वह धर्म से भी पतित हो जाता है ॥

ज्ञानी मनुष्य प्रतिज्ञान को अविज्ञान कहते हैं। जो काम को आरम्भ कर फिर भय से छोड़ देता है उस की महा

निन्दा होती है, इस लिये अब मैं इस के सिवाय और कोई उपाय नहीं देखता कि महादेव की शरण लूं। वही मेरे इस घोर दैव दंड का नाश करेंगे क्योंकि वह देवताओं के भी देव हैं अब मैं उन्हीं की शरण लेता हूं॥

सातवां अध्याय

—:०:—

अश्वत्थामा का शिवजी की आराधना करना और शिवजी से खडग प्राप्त कर फिर युद्ध के लिये शत्रुओं के डेरे में जाना॥

संजय बोले हे राजन्! इस प्रकार निश्चय कर रथ से उतर अश्वत्थामा नम्रता पूर्वक देवश के सन्मुख स्थित हुआ और कहने लगा कि अब मैं अत्यन्त शुद्ध चित्त अज्ञानियों के कठिन कर्मों भेट से उस शिवजी महाराज की पूजन करता हूं। जो कि उग्र स्थान शिव, रुद्र, शर्व ईशान ईश्वर, गिरिश, नील कंठ, त्रिनेत्र आदि २ अनेक नामों से सुशोभित हैं वही मुझे इस घोर आपत्ति से निकालेंगे। अब मैं सब भूत बला से उन का पूजन करूंगा॥

इस प्रकार अश्वत्थामा के निश्चय को देख आगे से सुवर्ण मयी वेदी प्रकट हुई जिस में से अग्नि देवता प्रकट हुये उन्हों ने अपनी ज्वाला से दशों दिशाओं और आकाश को

भी पूर्ण कर दिया। तब अनेक शस्त्रास्त्रों को हाथ में लिये अनेक रूपधारी शिवजी के पार्षद भी आ उपस्थित हुये इन के शंख, मृदंगादि बाजों की ध्वनि से आकाश गूंज उठा। इन को देख अश्वत्थामा जी भयभीत नहीं हुये ॥

अश्वत्थामा जी ने आप अपनी आत्मा को भेंट किया और सोम देवता से संबन्ध रखने वाले मंत्र द्वारा शरीर रूप भेंट को अर्पण किया और बहुत सी स्तुति करके प्रार्थना की कि हे भगवन् ! अब मैं अंगिरा वंश में उत्पन्न होने वाले इस शरीर को आत्म रूप अग्नि में हवन करता हूं। मुझ बली रूप को आप अंगीकार कीजिये हे भगवन् ! इस घोर आपत्ति में आप ही की भक्ति और परम समाधि से आप के आगे अर्पण करता हूं। सब जीवों में आप और सब जीव आप में हैं और आप में प्रधान गुणों की ऐकाग्रता भी है, हे सर्व रक्षक ! मुझ हव्य रूप को स्वीकार करें ॥

हे राजन् ! इस प्रकार प्रार्थना कर अश्वत्थामा जी उस वेदी पर जिस पर अग्नि प्रकाश थी चढ़ कर अग्नि में प्रवेश कर गये। तब महाराज शिवजी चेष्टा रहित हव्य रूप अश्वत्थामा को नियत देख कर बोले कि हे पुत्र ! मैं सुगम कर्मी श्रीकृष्ण जी की सत्यता, पवित्रता, सरलता, त्याग, तप, नियम, शांति और भक्ति आदि से प्रसन्न हूं, जैसे वह मेरे प्यारे हैं वैसा और कोई नहीं, हे तात ! अब यह पांचाल देशी काल से पराजय हुये हैं अब इन का जीवन शेष नहीं ॥

भगवान् ने ऐसे कह कर उस अग्नि में प्रवेश कर एक निर्मल उत्तम खड्ग अश्वत्थामा को दी, जिस को पाकर अश्वत्थामा जी तेज से ज्वलित अग्नि रूप पाण्डवों के डेरों पर फिर आपहुंचे और इन के पीछे २ गुप्त रूप से राक्षस चारों ओर से चले ॥

आठवां अध्याय

—:०—

अश्वत्थामा का सोये हुये पंचालों और पांडव आदिकों की सेना को बड़ी निर्दयता से मारना ॥

अश्वत्थामा के पांडवों के डेरे में जाने पर कृपाचार्य और कृतवर्मा डेरे के द्वार पर खड़े रहे। जाते समय अश्वत्थामा ने कहा कि मैं डेरे में प्रवेश कर काल के समान घूमूंगा। आप यहीं खड़े रहें कोई मनुष्य यहां से जाने न पावे अर्थात् यहीं उस का वध कर देना यह कह कर अश्वत्थामा दूसरे द्वार के रास्ते पांडवों के डेरे में अपने जीवन की आशा छोड़ घुस गया और शीघ्र ही धृष्टद्युम्न के डेरे को जहां पर थक कर धृष्टद्युम्न सोया पड़ा था पहुंचा जिस पलंग पर वह निश्चिन्त सोया था वह नाना प्रकार के रत्नों से जड़ित अनेक सुगंधित पदार्थों से सुशोभित था ॥

इस प्रकार अचेत सोय हुए को अश्वत्थामा ने लात मार कर जगाया। उस के चरण प्रहार से जाग कर अश्वत्थामा को पहिचान कर वह पलंग से उछला परन्तु अश्वत्थामा ने बालों से पकड़ कर उसे पृथ्वी पर दे मारा और उसे खूब रगड़ा, रगड़े जाने पर वह कुच्छ चेष्टा न कर सका अश्वत्थामा ने उस की छाती और कंठ पर पाओं धर पशु की भांति उसे दबाया, धृष्टद्युम्न ने धीरे २ अश्वत्थामा से कहा कि हे आचार्य पुत्र! मुझे शस्त्र से मारो देर न करो मैं आप के हाथ से मरा हुआ वैकुंठ को जाऊंगा। वीर अश्वत्थामा ने गले से अधिक दबाया वह इतना कहते ही चुप होगया। फिर अश्वत्थामा ने कहा कि कुल कलंकी! गुरु के मारने वाले को लोक नहीं है अये निर्दयी तुम ने गुरु भक्ति को त्याग अपने गुरु मेरे पिता को मारा है, तुम शस्त्र से मारने के योग्य नहीं हो॥

हे राजन्! इतना कह कर अश्वत्थामा ने एड़ियों से उस को मार दिया उस मरने वाले वीर के शब्दों से वहां की स्त्रियें जाग उठीं परन्तु वह अश्वत्थामा को भूत जान कर भय से बोल न सकीं॥

इस प्रकार अश्वत्थामा धृष्टद्युम्न को मार कर अपने सुन्दर रथ में स्वार हो शत्रुओं के मारने के लिये उनके डेरों में गया। इसके चले जाने पर सब स्त्रियें धृष्टद्युम्न को मरा देख नौकरों सहित चिल्ला उठीं, उन के शब्दों से आस पास

के सब क्षत्रिय जाग उठे और वहां पहुंच कर बोले हैं यह क्या हुआ ॥

हे राजन् ! वह सब भय से व्याकुल स्त्रियां रोती हुई बोलीं कि न जाने मनुष्य है, भूत है, या राक्षस, राजा को मार कर रथ पर सवार हो चला गया है ! यह सुनते ही सब ने उस रथ को घेर लिया, अश्वत्थामा ने रुद्र अस्त्र से इन सब को मार कर सोये हुये उतमौजस को छाती और कंठ से दबा कर मार डाला ॥

युधामन्यु ने उसे राक्षस जान वेग से गदा से अश्वत्थामा को हृदय पर प्रहार किया, गदा से घायल होकर भी वह कम्पायमान नहीं हुआ परंच कूदकर उसे जा पकड़ा और पृथ्वी पर पटक पशु के समान उसे भी मार डाला । फिर समीप वर्ती पांचलकों को इस शेर ने जा दबाया और उन को इस प्रकार मारा जैसे हिंसक यज्ञ में पशुओं को मारता है । इस के पीछे अश्वत्थामा ने खड्ग को लेकर अपने २ डेरों में अचेत सोतों को क्रमशः मार कर हाथी घोड़ों का भी मार डाला ॥

इस के अनंतर डेरों में काल के समान घूमते हुये अश्वत्थामा ने सोमकों और द्रौपदी के पुत्रों का देखा, हे राजन् ! धनुष हाथ में ले द्रौपदी के पुत्रों ने बाणों से अश्वत्थामा को ढक दिया, इतने में प्रभद्रक नाम क्षत्री जाग उठे, शिखंडी ने भी बाणों से अश्वत्थामा को घायल किया, इस प्रकार इन से घायल हो अश्वत्थामा शत्रुओं पर सिंह के समान झपटा और

जाते ही पहिले द्रौपदी के पुत्रों को खड्ग से मार दिया, फिर शिखंडी को मार गिराया फिर सुतसोम सामने आया उसे भी अश्वत्थामा ने मार दिया, फिर नकुल के पुत्र शतानीक ने रथ के चक्र को दोनों हाथों से पकड़ बल से घुमा अश्वत्थामा को छाती पर मारा, अश्वत्थामा ने उसे भी घायल किया और वह भी पृथ्वी पर गिर पड़ा, फिर श्रु कर्मा परिघ उठा अश्वत्थामा पर झपटा परन्तु उसे भी इस ने मार गिराया, फिर महारथी श्रुत कीर्ति ने बाणों की वर्षा की परंतु उस का शिर भी उस ने काट डाला ॥

हे राजन् ! उन डेरों में जो जीव थे और जो पहिले ही दैव से वध हो चुके थे अश्वत्थामा ने सब को मार गिराया ॥

इस के अनंतर अश्वत्थामा जी ने रथ पर स्वार हो धनुष बाण हाथ में ले बाणों की वर्षा से सहस्त्रों का वध किया, हे राजन् ! इस युद्ध में दुर्मद अश्वत्थामा ने डेरों को ऐसे छिन्न भिन्न किया जैसे हाथी बड़े ह्रद को कर देता है, फिर तो डेरों के लोग व्याकुल हो इधर उधर भागने लगे और भागते हुये भी बहुत से गिर पड़े बहुतों के भय से ही मल मूत्र निकल गये, हाथी घोड़े रथों को तोड़ चारों ओर भागे जिन के भागने से पृथ्वी पर भय से गिरे हुये बहुत से लोग कुचल कर मारे गये ॥

हे पुरुषोत्तम ! इस प्रकार नाश के होने पर राक्षस लोग प्रसन्न हो बड़े शब्दों से गरजे, इस गरज से सब दिशायें गूंज उठीं और घोड़े तथा हाथियों के भागने से उठी धूल ने रात्रि

के अंधकार को दुगना कर दिया, इस अंधकार के होने पर पुत्रों ने पिता को नहीं पहिचाना, भाईयों ने भाईयों को नहीं जाना।

भयभीत हो जो लोग दूर के रासते बाहर भागने को निकले उन का वध कृतवर्मा और कृपाचार्य करते गये, हे राजन्! कृपाचार्य और कृतवर्मा ने डेरों के तीनों ओर अग्नि लगादी, डेरों के प्रज्वलित होने पर अश्वत्थामा खड्ग हाथ में ले घुमाने लगा और इधर उधर दौड़ने वाले वीरों के सिर काटने लगा॥

इस के अनंतर एक महूर्त म ही मनुष्यों के चिल्लाने, रोने और पुकारने के शब्द बंद हो गये, रुधर के बहने से पृथ्वी अच्छी तरह से तर हो गई, तब फिर अश्वत्थामा ने पृथ्वी पर लेटे, भागते और गुप्त युद्ध करने वालों को तीक्ष्ण धार खडग से टुकड़े २ कर दिया॥

हे राजन! वहां पर अनेक राक्षस मनुष्यों के मांस खाते रुधर पीते दिखाई पड़े, यह राक्षस लोग मज्जा मांस भक्षण करने वाले और रुधर के पीने वाले बड़े प्रसन्न हुये॥

हे राजन्! इतने में प्रातःकाल का समय हो गया तब अश्वत्थामा बाहर आकर कृपाचार्य और कृतवर्मा से प्रसन्नता से मिला और उन को सब वृत्तांत कह सुनाया, तब उन दोनों ने कहा हे समर्थ! हम ने भी बाहर निकलने वाले हज़ारों पांचालों और पाण्डवों का वध किया है॥

हे राजन्! फिर तो वह तीनों बड़ी प्रसन्नता से हंसे और हाथों की तालियें बजाने लगे ॥

धृतराष्ट्र बोले कि मेरे पुत्र के प्रिय कारी अश्वत्थामा ने पहिले ही ऐसा काम क्यों न किया? संजय बोले कि हे कुरु नन्दन! पहिले केशव और सात्यकी के भय से नहीं कर सका। उन के समक्ष कोई मनुष्य तो क्या इन्द्र भी इन का बाल बींगा नहीं कर सकता था ॥

हे राजन्! यह परस्पर बधाइयें देने लगे। अश्वत्थामा ने कहा कि चलो यदि राजा दुर्योधन जीते हैं तो उन को यह सब कह सुनायें ॥

नवां अध्याय

—:०:—

मरण प्राय राजा दुर्योधन के पास जाकर कृपाचार्य, कृतवर्मा और अश्वत्थामा का विलाप और शत्रु वध की सूचना देना ॥

संजय बोले कि वह तीनों इस प्रकार सेना का नाश कर दुर्योधन के पास पहुंचे और देखा कि राजा के मुख से रुधिर बह रहा है, मानो कंठ गत प्राण पड़ा है। कृतवर्मा, कृपाचार्य और अश्वत्थामा यह देख बड़े दुःखी हो अपने हाथ से रुधिर

को पूंछा और कहने लगे। अश्वत्थामा बोला कि हाय! यह ग्यारह अक्षौहिणियों का स्वामी मरने लगा है। विधाता कैसा बलवान है, एक दिन वह था कि बड़े २ राजा महाराजा भी इस के चरणों को स्पर्श नहीं कर सकते थे, आज इस का शिर धूली से आच्छादित हो रहा है। हज़ारों महारथी और राजा जिस के आगे झुकते थे आज वह वन के हिंसक पशुओं से घिरा पड़ा है॥

हे राजन्! तुम को भीमसेन ने किस प्रकार घायल किया? हाय! काल बड़ा बलवान है, हे नाथ! मुझे अधिक शोच आप के माता पिता की है कि वह राजाधिराज अब पाण्डवों के आधीन भिक्षुकों के समान किस प्रकार जीवन व्यतीत करेंगे, कृतवर्मा, मुझ को और कृपाचार्य को धिक्कार है जो हम आप को आगे करके स्वर्ग को नहीं गये, हे कौरव राज! निश्चय कर के अब हम परम दुःखी हो कर पृथ्वी पर विचरेंगे। आप के बिना हमें सुख और शांति कहां॥

हे राजन्! तुम ने स्वर्ग में जाकर सब महारथियों और मेरे पिता को प्रणाम कर के कहना कि धृष्टद्युम्न मेरे हाथ से मारा गया है, तथा राजा बाह्लीक, सोमदत्त और जयद्रथ आदि को मिल कर मेरी ओर से क्षेम कुशल पूछना॥

हे दुर्योधन! आप यह सुखदायी वचन भी सुनो कि पाण्डवों के सात और कौरवों के हम तीन अब शेष रह गये हैं, शत्रु सेना में से पांचों भाई कृष्ण और सात्यकी और कौरवी

सेना में से मैं, कृतवर्मा और कृपाचार्य बचे हैं। हे राजन्! आज रात्रि के युद्ध में पाण्डवों के पांचों पुत्रों को धृष्टद्युम्न व उस के पुत्रों को मैंने मार कर इन के सब वीरों को भी मार मुकाया है और यह भी सुन ले कि मैंने पापी धृष्टद्युम्न को पशु के समान मारा है॥

यह सुन कर दुर्योधन सचेत हो कर बोला कि मेरा वह काम जो आप ने किया है भीष्म, कर्ण और आप के पिता से भी नहीं हो सका। उस नीच को शिखंडी सहित तुम ने मारा इस लिये मैं आप को इन्द्र के समान मानता हूं। आप का कल्याण हो। भला हो। लो अब स्वर्ग में आप का और मेरा मेल होगा यह कह कर राजा चुप हो गया और प्राण दे दिये इस प्रकार राजा के प्राण छूट जाने पर वह तीनों अपने २ रथों पर सवार हो नगर को चले गये॥

वैशंपायन बोले कि इस प्रकार पुत्र की मृत्यु को सुन राजा धृतराष्ट्र परम दुःखी हुआ॥

दशवां अध्याय

—:०—

इस महा घोर नाश को सुन कर महाराजा युधिष्ठर का विलाप और युद्ध क्षेत्र में जा

कर मूर्छा पाना ॥

वैशंपायन बोले कि इस रात्रि के व्यतीत होने पर धृष्टद्युम्न के सारथी ने धर्मराज से वर्णन किया कि हे राजन्! रात्रि काल में निश्चिन्त सोते हुये द्रौपदी के पुत्र, द्रुपद के पुत्रों सहित मारे गये, निर्दयी कृतवर्मा, कृपाचार्य और पापी अश्वत्थामा ने आप के सब डेरों का नाश कर दिया, इन तीनों ने पाप के समस्त वीरों को भी मार दिया, मैं अकेला ही इस सेना में से बचा हूं॥

यह सुन पुत्र शोक से महाराज युधिष्ठर पृथ्वी पर गिर पड़ा। सात्यकी, अर्जुन, भीमसेन, नकुल और सहदेव ने उन को थाम लिया,. फिर महाराज युधिष्ठर दुःख और शोक से व्याकुल हो विलाप करने लगे हाय! जीते हुये हम मारे गये, हाय! यह हमारी विजय पराजय रूप है। हाय! महान पराक्रमी शूरवीर नरोत्तम कर्ण के हाथ से घोर युद्ध में बचे हुये यह सोये मारे गये, सब वन को क्षण में भस्म करने वाली दावानल रूपी भीष्म की क्रोध रूपी अग्नी को जिन वीरों ने बड़े युद्ध में सहन किया वह राज कुमार आज सोये हुये मारे गये। विधाता ही बड़ी बलवान है॥

हाय! राजकुमारों के स्वर्ग गमन को सुन कर अब द्रौपदी किस प्रकार शोक रूपी समुद्र से पार होगी, भाई पुत्र और पिता पांचाल की मृत्यु को सुन कर वह अवश्य मूर्छित हो पृथ्वी पर गिरेगी। इस प्रकार विलाप कर

कौरव राज युधिष्ठर नकुल से बोले कि जाओ उस मंदभागनी राज पुत्री को यहां ले आओ ॥

राजा की आज्ञा पाकर नकुल तो रथ पर सवार हो द्रौपदी के उस भवन को गया जहां द्रौपदी अपने पितृ पक्ष की स्त्रियों सहित बैठी थीं और राजा युधिष्ठर अपने भाईयों सहित पुत्रों की मृतक भूमि को चल पड़े, वहां पर पुत्र, सुहृद और मित्रों को मरे पड़े देख राजा की शोकाग्नि इतनी बढ़ी कि वह अपने साथियों सहित मूर्छित हो गिर पड़े ॥

ग्यारहवां अध्याय

—:०:—

उप्लव क्षेत्र में जाकर दौपदी का विलाप अश्वत्थामा को मारने की प्रेरणा और भीमसेन का उस के वध के लिये जाना ॥

वैशम्पायन बोले कि हे राजन्! महाराज युधिष्ठर पुत्र, मित्र और बंधुओं को मरा देख अत्यन्त दुःखी हुये, इतने में बड़ी पीड़ामान द्रौपदी सहित नकुल भी वहां आपहुंचा ॥

उप्लवी भूमि में मरे पुत्रों को देख द्रौपदी की शोकाग्नि भड़क उठी और वह अचेत हो पृथ्वी पर गिर पड़ी, तब क्रोध युक्त भीमसेन ने दौड़ कर उसे पकड़ लिया और धैर्य दिलाया तब द्रौपदी ने भाईयों सहित युधिष्ठर से यह वचन कहा हे राजन!

अश्वत्थामा के हाथ से पुत्रों की मृत्यु मुझे अग्नि के समान भस्म कर रही है, यदि आप अश्वत्थामा का नाश नहीं करेंगे तो मैं यहीं पर अपने आप को चिता में भस्म कर दूंगी ॥

इसी प्रकार द्रौपदी की प्रिय पुत्री यशवती ने पिता को कहा, तब धर्मात्मा राजर्षि पाण्डव ने शरीर त्याग के लिये आसन पर बैठीं इन दोनों को देख कर कहा, हे धर्मों के जानने वाली ! तुम्हारे पुत्र स्वर्ग में पधारे हैं, उन के लिये शोक करना तुम को योग्य नहीं, हे कल्याणी ! अश्वत्थामा यहां से भाग कर वन में छिप गया है, तुम इस के वध को कैसे सुनेगी ॥

द्रौपदी बोली मैंने सुना है कि उस के मस्तक में मणि है उसे मार कर वह मणि ले आओ वह मैं आप के शिर पर धारण करूंगी ॥

भीमसेन द्रौपदी के विलाप को सुन कर सह न सका रथ पर सवार हो अश्वत्थामा के मारने के लिये निकला और वायू वेग से चलने वाले घोड़े दौड़ा उस डेरे से निकलने वाले रथ के पहियों के चिन्हों का आश्रय ले चल दिया ॥

बारहवां अध्याय

—:o—

श्रीकृष्ण जी का युधिष्ठर से यह कह कर भीमसेन

की सहायता के लिये अर्जुन को भेजना ॥

वैशंपायन बोले कि भीमसेन के जाने पर श्रीकृष्ण जी युधिष्ठर से बोले हे पाण्डव ! भीमसेन अश्वत्थामा के मारने के लिये अकेला दौड़ा है, हे भरतर्षभ ! द्रोणाचार्य ने अश्वत्थामा को ब्रह्मशर अस्त्र सिखाया है जिस से वह समस्त पृथ्वी का नाश कर सकता है। आचार्य जी ने वह अस्त्र अर्जुन को भी बतलाया हुआ है ॥

अश्वत्थामा को बतला तो दिया परन्तु साथ ही यह भी आज्ञादी कि आपत्ति के पड़ने पर उसे चलाना, यदि कहीं ऐसे ही चला दोगे तो तुम सत्पुरुषों के मार्ग में स्थित नहीं रहोगे यह सुन बड़े क्रोध से अश्वत्थामा द्वारका को चला गया, एक दिन मुझ से अश्वत्थामा ने कहा हे कृष्ण जी ! मेरे पिता ने अगस्त्य जी से ब्रह्मशर नाम अस्त्र जो कि देवता और गन्धर्वों से ॰ पूजित है सीखा था वह मैं जानता हूं आप मुझे चक्र अस्त्र सिखला कर वह मुझ से सीख लो, अश्वत्थामा की बड़ी नम्रता देख मैंने उस से कहा कि मेरे पास धनुष, शक्ति, चक्र और गदा है इन में से जो चाहो सीख लो और वह अस्त्र मुझे दे दो ॥

तब उस ने हज़ार आरा रखने वाले चक्र को मुझ से मांगा, मैंने उसी समय दे दिया उस ने बायें हाथ से चक्र को पकड़ लिया परन्तु उसे हिला न सका और थक कर पीछे हट गया, फिर मैंने कहा कि हे आचार्य पुत्र ! इस के लिये मेरे परम मित्र महा योधा अर्जुन ने तथा मेरे पुत्र पूर्ण ब्रह्मचारी प्रद्युम्न ने और मेरे बड़े भाई बलदेव जी ने भी इस के लिये

कभी कामना नहीं की, आप इस को पाकर किस से युद्ध करेंगे ॥

अश्वत्थामा ने उत्तर दिया कि हे श्री कृष्ण ! मैं आप ही से लडूंगा आप मुझे यह प्रदान करें मैं यह लेकर चला जाऊंगा तब वह मुझ से बहुत सा धन और घोड़े लेकर चला गया ॥

हे राजन् ! वह दुर्बुद्धि ब्रह्मशर अस्त्र को जानता है और निर्दयी है इस लिये भीमसेन की रक्षा तुम को अवश्य करनी चाहिये ॥

तेरहवां अध्याय

—:०:—

अश्वत्थामा का व्यास आश्रम पर मिलना ।

वैशंपायन बोले कि श्री कृष्ण जी ने यह कहकर बड़े घोड़ों वाले रथ में सवार हो और अनेक प्रकार के अस्त्र भीउ रख और युधिष्ठिर और अर्जुन को रथ में बैठा घोड़ों को मा मारी और थोड़े काल में ही भीमसेन से जा मिले ॥

इतने में भीमसेन ने महात्मा व्यास जी के आश्रम ऋषियों में उस निर्दय कर्मी अश्वत्थामा को बैठे देखा कुन्ती भीम धनुष ले उस के सन्मुख दौड़ा और तिष्ठ २ वः कहा ॥

अश्वत्थामा ने काल रूप धनुषधारी भीमसेन और रः में श्री कृष्ण सहित युधिष्ठिर और अर्जुन को देख व्याकुल चि

दो मृत्यु को निकट वर्ती जाना और बायें हाथ से दिव्य अस्त्र को पकड़ मुख से बोला कि यह अस्त्र मैं पांडवों के नाश के लिये छोड़ता हूं। हे राजन्! तब उस अस्त्र से तीनों लोकों को दाह करने वाली अग्नि उत्पन्न हुई॥

चौदहवां अध्याय

—:-o-:—

अश्वत्थामा के अस्त्र को काटने के लिये अर्जुन का अस्त्र को छोड़ना॥

वैशंपायन बोले। श्री कृष्ण जी ने पहिले ही अर्जुन से कह रखा था कि यह दुर्बुद्धि ब्रह्मशर अस्त्र को चलावेगा तुम ने भी उस के रोकने के लिये त्यार रहना॥

हे राजन्! अश्वत्थामा के दिव्यास्त्र के छोड़ते ही अर्जुन रथ से कूदा और धनुष पकड़ यह कहने लगा कि गुरू पुत्र को तपाने और अपने भाईयों की रक्षा के लिये मैं तुम को छोड़ता हुं, यह कह कर अपने गुरू तथा शिवजी का ध्यान धर अर्जुन ने अस्त्र को छोड़ा और कहा कि अस्त्र से शांत हो॥

हे राजन्! तब इन अस्त्रों की दोनों अग्नियों से [illegible] ज्वालाओं से पूरित होगया और पृथ्वी कांप उठी, हे रा[illegible] तब नारद और पूज्य व्यास जी इन दोनों की क्रोध शांति लिये उठे और कहने लगे कि आज तक इस अस्त्र के

न नहीं छोड़ा तो फिर तुम ने इस विनाश कारी कर्म को क्यों किया ॥

पंदरहवां अध्याय

—:०:—

अश्वत्थामा के ब्रह्मशर के अर्जुन का अपने दिव्यास्त्र से रोकना ॥

वैशम्पायन जी बोले हे राजन् ! ऋषियों के इस प्रकार ोच में आकर कहने पर महाराज अर्जुन ने तत्काल अपने दिव्य बाण को संहार कर लिया और ऋषियों से प्रार्थना की कि मैंने एक मात्र अश्वत्थामा के अस्त्र की अग्नि को जो इस लोक अ को दग्ध करने वाली थी रोकने के लिये इस शस्त्र को वैं छोड़ा था, हे तपोधनो ! इस के लौट आने पर अश्वत्थामा घोड़ों हम को भस्म कर देगा, अब अश्वत्थामा के इस अस्त्र से आप रख हमारी तथा अन्य लोगों की रक्षा करें ॥

मारी फिर अश्वत्थामा ने भी अपने दिव्य अस्त्र को रोकना इतने ा परन्तु हज़ारों यत्न करने पर भी अपने दिव्य अस्त्र ऋषियों में न रोक सका, तब उस ने व्यासजी से प्रार्थना की कि भीम धनुष ोधन ! मैंने अन्याय से दुर्योधन के मारने वाले भीमसेन कहा ॥ डर कर अपनी रक्षा के लिये यह दिव्य अस्त्र छोड़ा था, अश्वत्था इसको रोक नहीं सकता, यह पाण्डवों के नाश के लिये में भी कृष्ण छोड़ा था अब यह पांडवों को अवश्य भस्म करेगा ॥

व्यास जी बोले कि अर्जुन ने केवल तेरे अस्त्र को रोकने के लिये यह अस्त्र चलाया था तेरे वध के लिये नहीं चलाया और अब उस ने उस को वापस भी कर लिया है फिर तुम इस धैर्यवान् साधू अर्जुन का भाईयों सहित क्यों नाश करना चाहते हो ॥

जिस देश में ब्रह्मशर परम शस्त्र से दूर किया जाता है वहां बारह वर्ष की अनावृष्टि होती है और दुर्भिक्ष पड़ता है इस लिये तुम इस को शीघ्र लौटाओ। हे ब्रह्म तेज रखने वाले अश्वत्थामा! तेरा क्रोध दूर हो और पाण्डवों की कुशल हो यह धर्मात्मा अर्जुन अधर्म से तुझे मारना नहीं चाहता तुम अपने मस्तक की मणि इसे देओ पाण्डव यह लेकर तुम को प्राण दान देंगे ॥

अश्वत्थामा ने कहा मैं आप की आज्ञा से यह मणि देता हूं परन्तु यह मेरा अमोघ अस्त्र पाण्डवों के गर्भों पर गिरेगा यह किसी भांति भी रुक नहीं सकता। व्यास जी ने कहा ऐसा ही करो परन्तु युद्ध से हटजाओ, तब अश्वत्थामा ने वैसा ही किया ॥

सोलहवां अध्याय

—:o:—

अश्वत्थामा के शिर की मणि को लाकर द्रौपदी को देना और उस का वहां से उठना ॥

वैशम्पायन बोले कि तब श्रीकृष्ण जी प्रसन्न हो अश्वत्थामा से बोले कि पूर्वकाल में एक तपस्वनी ने विराट की पुत्री अर्जुन की पुत्र वधु को यह वर दिया था कि पाण्डवों के नाश होने पर तेरे पुत्र होगा जिस का नाम परीक्षत होगा उसी से फिर यह वंश चलेगा उन का यह वचन सत्य होगा ॥

अश्वत्थामा ने उत्तर दिया कि यह इस प्रकार नहीं हैं मेरा अस्त्र उतरा के गर्भ पर गिरेगा जिस की आप रक्षा करना चाहते हैं, श्रीकृष्ण जी ने कहा कि निस्संदेह यह अस्त्र अपना काम करेगा और मरा हुआ बालक उत्पन्न होगा परन्तु वह [illegible]र जी कर बड़ा होगा तुम को सब लोग पापी, नीच कर्मी [illegible]ंगे तुम तीन हज़ार वर्ष तक ऐकाकी दुर्गंधी युक्त वन में भ्रमो गे, अरे पापी! तू सब व्याधियों से पीड़ित रहेगा और [illegible]र परीक्षत धर्मात्मा कौरव राज हो राज्य करेगा, हे नीच! [illegible]रे अस्त्र से मृतक को मैं अपने तेज और बल से सजीव करूंगा ॥

व्यास जी ने कहा कि अये अश्वत्थामा! तू ने घोर पाप किया है इस लिये निस्संदेह तेरी यही दशा होगी, महात्मा कृष्ण जी का कहना सत्य होगा, यह सुन अश्वत्थामा उदास हो वन को चला गया और पांडव श्री कृष्ण सहित घोड़ों को उड़ाते हुये द्रौपदी के पास पहुंचे ॥

राजा की आज्ञा से भीमसेन ने उस मणि को द्रौपदी के आगे रख कर कहा कि यह वह मणि है, अश्वत्थामा पराजय होगया, अब आप उठें क्योंकि आप ने यही प्रतिज्ञा की थी ॥

यह सुन द्रौपदी ने वह मणि ले महाराज को उसे शिर पर धारण करने के लिये प्रार्थना की और युधिष्ठर ने गुरु पुत्र की मणि को शिर पर बांध लिया, तब द्रौपदी उठी।

सतारहवां अयाय

—:०:—

युधिष्ठर का श्री कृष्ण जी से अश्वत्थामा के सब के वध करने का कारण पूछना ॥

वैशंपायन बोले हे राजन्! युधिष्ठर ने श्री कृष्ण जी से पूछा कि उस रात्रि में अश्वत्थामा ने मेरे महारथी पुत्रों, द्रुपद आदि के पुत्रों तथा धृष्टद्युम्न आदि को कैसे मार दिया॥

श्री कृष्ण जी बोले कि अश्वत्थामा ने शिवजी की स्तुति अराधना कर दिव्य अस्त्र को प्राप्त किया। शिवजी योगी राज हैं वह अपनी कृपा से त्रैलोकी विजय की सामर्थ दें सकते हैं॥

पूर्वकाल में सृष्टि की उत्पत्ति के लिये महादेव जल में बैठे पीछे, ब्रह्मा जी ने प्रजापतियों को रच सृष्टि को उत्पन्न कर दिया जब महादेव जल से बाहर आये तो सृष्टि को रचा देखा त्रिम से क्रोधित होकर बोले कि यह नव सृष्टि उत्पन्न हो चुकी है, अब मैं यहां रहकर क्या करूंगा॥

अठाहरवां अध्याय

देवताओं का यज्ञ, शिवजी का कोप और फिर सात्विक यज्ञ से प्रसन्न हो शिवजी का पृथ्वी को स्थिर करना ॥

श्री भगवान बोले कि सत्युग के अन्त में देवताओं ने यज्ञ आरम्भ किया जिस में सब देवताओं के भाग निकले परन्तु भूल से रुद्र जी का उस यज्ञ में भाग न निकला, तब यज्ञ में भाग न निकलने से क्रुद्ध हो शिवजी ने धनुष बाण को रचा फिर लोप यज्ञ, क्रिया यज्ञ, गृह यज्ञ और पांच भूत नर यज्ञ को निर्माण किया और क्रोध में धनुष को ले यज्ञ शाला की ओर चले, तब पृथ्वी पीड़ित हुई, पर्वत कांप उठे, वायु और अग्नि ने अपना २ धर्म छोड़ दिया, देवता भी व्याकुल हो शिवजी की शरण में गये और सात्विक यज्ञ किया जिससे शांति हुई ॥

हे युधिष्ठिर ! उस शिवजी के क्रोध से सब जगत् व्याकुल और उस के प्रसन्न होने से सब जगत् स्थिर होता है उन्हीं शिवजी महाराज की कृपा से अश्वत्थामा ने आप के पुत्रों और धृष्टद्युम्न आदि का वध किया ॥

हे राजन् ! इन को अश्वत्थामा ने नहीं मारा यह सब ईश्वर के आधीन है, शोक को त्यागो और महादेव जी की प्रसन्नता से शीघ्रता पूर्वक करने के योग्य कर्मों को करो ॥

—०:—

महाभारत

स्त्री पर्व

पहिला अध्याय

राजा धृतराष्ट्र का विलाप और संजय का समझाना ॥

जनमेजय बोले कि अश्वत्थामा का वृत्तान्त तो सुन लिया अब आप कृपाचार्यादि का वृत्तान्त भी कहें ॥

वैशंपायन बोले कि पुत्र शोक से व्याकुल महा चिन्तातुर महाराजा धृतराष्ट्र के पास जाकर संजय ने कहा कि हे राजन् ! यह पृथ्वी आप के पुत्र पौत्रों और ग्यारह अक्षौहिणी और अनेक देशों से आये हुए राजाओं सहित युद्ध में मारे जाने से

वीरगति को प्राप्त हो गई हैं, अब शोक से क्या लाभ है अब आप अपने पुत्र, पौत्रों और सब कौरवों का क्रिया कर्म करायें ॥

यह बचन सुन राजा शोक से व्याकुल हो पृथ्वी पर गिर पड़ा और फिर सुचेत हो कहने लगा कि हाय ! मैं नेत्र हीन अभागा, वंश वहीन सुहृद् बांधवों से रहित होगया हूं अब मेरा जीने से क्या प्रयोजन है। हाय ! मैं ने परशुराम, व्यास, नारद और श्रीकृष्ण जी के संधि करने वाले वचनों को सुन अपने पुत्रों को न रोका और भीष्म जी के वचनों का भी निरादर किया हाय ! अब मेरा हृदय दुर्योधन, दुशासन और कर्णादि की मृत्यु को सुन कर फट रहा है। निश्चय मैंने पूर्व जन्मों में घोर पाप किये हैं जिन के फल से अब मेरी यह दशा हुई है। हाय ! आज मेरे जैसा दुःखी कौन है ॥

हे राजन् ! इस प्रकार बलाप करते हुये धृतराष्ट्र को संजय ने फिर कहा कि हे राजन् ! आप चिन्ता को छोड़ शोक का त्याग करें क्योंकि आप के पुत्र दुर्योधन ने शकुनि आदि दुष्टात्मा मंत्रियों की सलाह से भीष्मपितामह आदि वृद्धों तथा श्रीकृष्ण आदि महात्माओं के वचनों को त्याग कर युद्ध किया जिस का फल उस ने पाया आप बुद्धिमान, धर्मज्ञ और विचार वान हैं आप को शोक नहीं करना चाहिये क्योंकि शोक शरीर तक को भी नाश कर देता है ॥

हे राजन्! आप जो अश्रुपात करते हैं यह शास्त्र के विपरीत है इस लिये और बुद्धि से शोक को त्याग अपने चित्त को स्वाधीन करें ॥

दूसरा अध्याय

—:o:—

महात्मा विदुर जी का धृतराष्ट्र को समझाना॥

फिर विदुर जी ने राजा धृतराष्ट्र से कहा कि हे राजन्! सब सृष्टी नाश होने वाली है, सब उदय होने वाले गिरते हैं, सब मिलने वाले जुदा होते हैं और सब जीव धारी नाशवान हैं काल ही सब का संहार करता है, सब जीव प्रारम्भ में प्रभाव रूप हैं मध्य में भाव रूप हैं और अंत में अभाव रूप हैं. फिर आप शोच क्यों करते हैं ॥

बड़े २ वेदज्ञ और कठिन २ व्रतधारी भी काल से नहीं बचे, फिर इन के नाश से जो कि युद्ध में मर कर स्वर्ग को पधारे हैं आप को शोच करना उचित नहीं ॥

वह सब अदृष्ट ब्रह्म से निकले और उसी में लीन हो गये वह न आप के हैं न आप उन के हैं फिर शोक क्यों करते हैं ॥

हे राजन्! काल ही जीव मात्रों को उत्पन्न करता है, काल ही सृष्टी को मारता है, काल ही सोने वालों के मध्य में जागता है, काल किसी से भी नहीं जीता गया ॥

हे राजन्! शोक ग्रस्त मनुष्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का नाश करता है, दुःखी सदा असंतुष्ट रहता है और मोह को प्राप्त होता है, संतोषी पुरुष चित्त के दुःख को ज्ञान से और शरीर के दुःख को औषधियों से दूर करते हैं॥

पूर्व जन्म में किये कर्म सर्वदा मनुष्य के संग रहते हैं, जिस २ शरीर में जीव शुभ २ कर्म करता है उसी २ शरीर में अपने किये कर्मों के फल को भोगता है, आत्मा ही आत्मा का बंधु है और आत्मा ही आत्मा का शत्रु है, आत्मा ही आत्मा के कर्मों का साक्षी है, शुभ कर्म से सुख और अशुभ कर्म से मनुष्य दुःख पाता है॥

हे राजन! आप सरीखे बुद्धिमान पुरुष उन कर्मों में प्रवृत्त नहीं होते जो कि ज्ञान के विपरीत और मोक्ष के नाश करने वाले होते हैं॥

तीसरा अध्याय

—:०:—

विदुर जी का धृतराष्ट्र को यह कह कर तसल्ली देना कि यह संसार असार है और जो बनता है वह टूटता है॥

धृतराष्ट्र बोले कि हे विदुर जी! आप के इन वचनों से मेरा शोक दूर होगया है। परन्तु अब मैं आप से यह सुनना

चाहता हूं कि पंडित लोग प्यारों के वियोग होने पर जगत दुखों से कैसे छूटते हैं ॥

विदुर जी ने कहा कि जिस २ उपाय से दुःख व सुख से भी मनुष्य निवृत होता है बुद्धिमान उसी उपाय से इस चित को स्वाधीन करके शान्ति को पाते हैं ॥

हे नरोत्तम ! यह सब दृश्य नाशवान् है, यह संसार असार है, काल को पंडितों ने शरीर धारियों के देहों का नाशक कहा है, शरीर नष्ट होते हैं केवल एक जीव आत्मा ही अविनाशी है, जिस प्रकार मनुष्य पुराने कपड़ों को त्याग नवीन वस्त्र पहिरता है इसी प्रकार शरीर धारियों के शरीर हैं सब मनुष्य अपने किये कर्मों के फल रूप सुख दुःख को पाते हैं, जैसे घटिका पांच रूप को पाकर टूटता है, कोई बनता २ कोई सूखा ही, कोई आवे पर चढ़ा हुआ, कोई गीला ही और कोई काम में लाया हुआ टूट जाता है इसी प्रकार शरीर धारियों के शरीर हैं, गर्भस्थित, जन्म लेने वाला, थोड़ी अवस्था में और कोई युवा अवस्था में और कोई वृद्ध अवस्था में मर जाता है ॥

हे राजन् ! जब यह शरीर अवश्य नाशवान है तो फिर आप किस लिये शोक करते हैं ॥

चौथा अध्याय

—:o:—

शरीर की अवस्था और सद्गति का वर्णन ॥

धृतराष्ट्र जी बोले कि हे विदुर जी ! यह संसार रूपी वन किस प्रकार जाना जा सकता है ॥

विदुर जी बोले कि जीवात्मा प्रथम रात्रि में चैतन्य की सत्ता मात्र होता है और क्रमशः बढ़ते २ पांचवें मास में उस का पूर्ण आदुर्भाव हो जाता है और वही मास रुधिर से लिप्त अपवित्र स्थान में बढ़ता हुआ ऊंचे पैर नीचे शिर वाला योनि द्वार से घोर कष्टों को सहिता हुआ जन्म लेता है। जन्म लेकर संसार के नाना क्लेशों और रोग शोकादि से दबाया जाता है और अपने कर्मों से पीड़ावान् होता है॥

फिर इन्द्रियों के पाश रूप बंधनों में फस कर नाना प्रकार के व्यसनों में जीव पड़ जाता है और अनेक प्रकार के पाप कर्म करने लगता है ॥

विषयों में फसा हुआ जीव अपने को गिरा हुआ नहीं समझता, वरंच लोभ, मोह, क्रोध और धन के मद में अचेत होकर आत्मा को भी भूल जाता है। दूसरों की निंदा अपनी स्तुति, दूसरों को मूर्ख और अपने को विद्वान कहता है, दूसरों को शिक्षा देता है परन्तु आप शिक्षा लेना नहीं चाहता ॥

हे राजन् ! जब ज्ञानी, अज्ञानी, धनी, निर्धन, कुलीन,

अकुलीन, अहंकारी और निरहंकारी भी मर जाते हैं तो फिर निर्बुद्धि लोग इस लोक में क्यों छल करते हैं। शास्त्र में लिखा है जो जन्म से लेकर मरण तक शुभ कर्म करता है और ब्रह्म की उपासना करता है वह परम गति को पाता है॥

पांचवां अध्याय

—:०:—

संसार सागर में फस कर जीव धन संपत्ति और संतान के लालच से वैराग्य को नहीं पाता॥

विदुर जी बोले कि हे राजन्! अब मैं इस संसार रूपी सागर के तरने के उन उपायों को कहता हूं जो महर्षि लोगों ने कहे हैं॥

हे राजन्! जीव रूप द्विज भयानक संसार वन में पहुंचा और वहां पर भय से पीड़ित हो अपनी रक्षा के उपाय सोचता हुआ विषय वासना रूपी फांई में फंस कर स्त्री की भुजाओं से पकड़ा गया और लोभ मोह, अहंकार, रूप, कूप में जो कि संसार आदि हर्ष रूप वाल्लियों से ढका हुआ था गिर पड़ा और उसी कूप को अपना निवास स्थान समझने लगा॥

तब बाल्य, तरुण और वृद्धावस्था रूप तीन शाखाओं में लटकता हुआ द्विज संतान रूप बंधन से और भी जकड़ा गया

यहां भंवरों (नाना इच्छा) की शोभा को देखता है, इस प्रकार इन में फसा हुआ जीव सदा जीना चाहता है परन्तु श्वेतकृष्ण रूप वाले (रात्रि और दिन) चूहे उस को जड़ों (आयू) को काटते हैं । उस दुर्गम्य बन में बहुत से सर्प (रोग) और बड़ी स्त्री (वृद्धावस्था) नाग, मृत्यु, गज (पूर्ण वर्ष) आदि का भय रहता है ॥

उस प्रकार संसार सागर में फंसा हुआ यह जीव वर्त्तमान होता है और जीवन की आशा को नहीं छोड़ता ॥

छटा अध्याय

—:-o-:—

पूर्व अध्याय के रुपक का साविस्तार वर्णन ॥

धृतराष्ट्र बोले कि हे भगवन् ! ऊपर जो आप ने अलंकार रूप वर्णन किया है उसे साविस्तार पूर्व वर्णन करें जिस से वह सब की समझ में आजावे ॥

विदुर जी बोले हे राजन् ! मोक्ष अभिलाषी पुरुषों ने यह रुपक वर्णन किया है जिस मे मनुष्य परलोक में परम गति को पाता है, उस दृष्टांत में बड़ा बन संसार, दुर्गम्य बन संसार धन, सर्व रोग, बड़े शरीर वाली स्त्री वृद्धावस्था, कूप शरीर धारियों का तनु कूप का बड़ा सर्प काल है, कूप बल्ली जीव नाश है, छ मुख वाला हाथी वर्ष, उस के छ मुख

षट् ऋतु, बारह चन्या महीने और चूहे जो वृक्ष को काटते हैं वह दिन रात्री है उस में जो भौरें कहे हैं वह नाना इच्छा हैं ॥

शहद को काम रस के नाम से वर्णन किया है जिन्हों ने इस प्रकार संसार चक्र की गति को जाना है निश्चय करके यह मनुष्य संसारी चक्र के पाश को काट देता है ॥

सातवां अध्याय

—:०:—

ज्ञान प्राप्ति का सविस्तार वर्णन ॥

धृतराष्ट्र बोले कि आप कृपया इस विषय को सविस्तार वर्णन करें क्योंकि यह विषय अति कठिन है ॥

विदुर जी ने कहा हे राजन्! अज्ञानी पुरुष बारंबार जन्म लेते हैं और ज्ञानी शीघ्र ही मुक्त पाजाते हैं इसी लिये शास्त्रज्ञ लोगों ने इसे मार्ग कहा है, स्थावर जंगम जीवों के चलायमान चक्र को ज्ञानियों ने घन वन कहा है बुद्धिमान इस की चाह नहीं करो शरीर धारियों के चित्त और शरीर से संबंध रखने वाले रोग हैं इन को ज्ञानी लोगों ने गुप्त और प्रकट रूप सर्प कहा है ॥

हे राजन! जब मनुष्य उन रोगों से छूटता है तो उसे जरावस्था दवा लेती है, शब्द रूप रस स्पर्श और गंध रूप

कीचड़ में मनुष्य डूबा हुआ है, वर्ष, ऋतु, महीने, पक्ष, दिन, रात यह सब मनुष्य की आयु को क्षीण करते हैं ॥

अज्ञानी यह नहीं जानते कि शरीर धारियों का देह एक रथ है जिस की चिंता सारथी, इन्द्रिय, घोड़े और कर्म बुद्धि बाग डोर हैं, जो मनुष्य इन के पीछे दौड़ता है वह संसार चक्र (आवागमन) में चक्र के समान घूमता है जो इन को अपने वश में कर लेता है वह आवागमन से छूट जाता है ॥

हे राजन्! जो मनुष्य जितेन्द्रिय, क्रोध, लाभ, और मोह से रहित संतोषी और सत्य कर्त्ता है वह शांति को पाता है दूसरा यह भी कहा है कि पश्चाताप दुःखों का मूल है जिस की औषधि एक मात्र ज्ञान मानी है, घोर दुःखों से छूटने के लिये ज्ञान के सिवाये अन्य कोई उपाय नहीं ॥

आठवां अध्याय

राजा धृतराष्ट्र का पुत्र वलाप और व्यास जी का तसल्ली देना ॥

—:o:—

वैशंपायन बोले कि राजा धृतराष्ट्र पुत्र शोक से मूर्छित हो फिर गिर पड़ा सब शीतल जल के छींटे और पंखा करने लगे और कई चरण दबाने लगे, जिस से राजा को सुध आई परन्तु फिर बहुत देर तक वलाप करता रहा और कहने लगा कि

मैं ने प्रारब्ध से यह दुःख पाया है, मृत्यु के बिना मैं इस दुःख से छूट नहीं सकता ॥

तब व्यास जी बोले हे राजन्! तुम शास्त्र वेत्ता, धर्म और अर्थ में कुशल हो, तुम से कोई बात छिपी नहीं, तुम मृत्यु को अवश्य होने वाला जानते हो ॥

हे राजन्! आप का पुत्र दुष्ट प्रकृति था इस बात की साक्षी नारद आदि ऋषि दे रहे हैं, वास्तव में तेरे पुत्र पांडव हैं ॥

हे राजन्! राजसूय यज्ञ के पूर्व ही नारद जी ने युधिष्ठर से कहा था कि पांडव व कौरव घोर युद्ध करके नष्ट होंगे जो कुछ तुम ने करना है शीघ्र करलो, देव ने यह सब ऐसे ही रचा था इस बात को सोच कर तुम अपने प्राणों पर दया और पांडवों पर प्रति करो ॥

हे राजन्! तुम्हारे इस प्रकार बारंबार शोक को सुन कहीं धर्म पुत्र युधिष्ठर प्राणों को न छोड़ दे। युधिष्ठर आदि पांडवों से प्रीति करने से आप की संसार में बड़ी कीर्ति होगी। अग्नी रूप शोक को ज्ञान रूप जल से आप शांत करें ॥

राजा धृतराष्ट्र व्यास जी के इन वचनों को सुन एक महूर्त तक सोचता हुआ बोला कि मेरा मन इस शोक से बारंबार व्याकुल होता है, अब मैं भावी जान कर धीर्य को धारण करूंगा और प्राणों को नहीं छोडूंगा ॥

नवां अध्याय

—:•:—

राजा धृतराष्ट्र को अंतेष्टि कर्म के लिये संजय और विदुर जी का कथन और उस का रोती पीटती स्त्रियों को साथ ले नगर से बाहर जाना ॥

राजा जनमेजय बोले कि हे ऋषिवर भगवन्! व्यास जी के जाने पर धृतराष्ट्र ने क्या किया, युधिष्ठर, कृपाचार्य तथा अश्वत्थामा ने क्या किया यह सब कहें ॥

हे राजन्! आप दुर्योधन तथा अन्य राजाओं के अंतेष्टि कर्म करें यह सुन राजा धृतराष्ट्र अचेत हो पृथ्वी पर गिर पड़े इस प्रकार शोक ग्रस्त राजा को विदुर जी ने फिर उपदेश किया और कहा कि हे राजन्! शोक को छोड़ आप इन के अंतेष्टी कर्म करें ॥

वैशंपायन बोले कि महाराज धृतराष्ट्र विदुर जी की इस आज्ञा को सुन कर बोले कि रथ तय्यार करो, हे विदुरजी! आप कुन्ती आदि सब स्त्रियों को रथ पर चढ़ा कर ले आवें, यह कह कर धृतराष्ट्र रथ में बैठ गये। उधर से गांधारी कुन्ती आदि सब स्त्रियें रोती पीटती आगईं ॥

विदुर जी ने इन्हें भी बहुत कुछ समझाया और पाल-कियों में चढ़ा कर ले चले, उस समय सब नगर में हाहा

कार मच गया, यह सब अनाथ विधवायें ऐसी चिल्लाईं कि इन के विलाप से पशु पक्षी भी विलाप करने लगे। यह स्त्रियें विलाप से ऐसी मूर्छित हो गईं कि इन्हों ने कर्त्तव्या कर्त्तव्य को भी नहीं जाना। वह राजांगना जिन के चरणों को सूर्य की किरणें भी नहीं छूती थीं आज वह अनाथ चिल्लाती हुई सब देखी जा रही थीं। इस प्रकार इन रोने वाली सहस्रों स्त्रियों के पीछे २ सब प्रजा के लोग रोते पीटते निकले ॥

दशवां अध्याय

—:-०-:—

मार्ग में अश्वत्थामा, कृपाचार्य और कृतवर्मा का राजा धृतराष्ट्र से मिलना ॥

वैशंपायन बोले इस प्रकार रोते पीटते इन के थोड़ी दूर जाने पर कृपाचार्य, कृतवर्मा और अश्वत्थामा इन को देख बोले कि हे महाराज ! आप का वीर पुत्र बड़ा घोर संग्राम कर साथियों सहित इन्द्र लोक को पधारा है, आप की सेना में से केवल हम तीनों रथी बचे हैं और सब नाश हो गये हैं ॥

पाण्डवों के जीतने का हाल भी आप ने सुन ही लिया होगा, हे राजन् ? अधर्म से दुर्योधन को भीमसेन के मारने की

खबर सुन हम तीनों ने सोती हुई पाण्डवी सब सेना का नाश कर दिया है, धृष्टद्युम्न और द्रुपद उन के पुत्रों सहित तथा द्रौपदी के पुत्रों को भी मार कर हम यहां भाग आये हैं ॥

अब हम यहां पर भी ठहर नहीं सकते क्योंकि पाण्डव बदला लेने के लिये हमारी खोज कर रहे हैं, हे विदुषी ! हम को आज्ञा दो और भावीवश यह सर्व नाश समझ कर शोक को छोड़ दो ॥

हे राजन् ! इतना कह कर राजा की प्रदक्षिणा कर वह तीनों अपने घोड़ों पर चढ़ कर गंगा की ओर दौड़ गये, आगे बढ़ कर यह तीनों बिछड़ गये, कृपाचार्य हस्तिनापुर को, कृतवर्मा अपने देश को और अश्वत्थामा व्यास जी के आश्रम को चले गये ॥

ग्यारहवां अध्याय

—:-०-:—

पाण्डवों का राजा धृतराष्ट्र से मिलाप और भीमसेन की लोहे की मूर्ती को राजा का तोड़ना ॥

वैशम्पायन बोले महाराज युधिष्ठर हस्तिना पुर से अपने वृद्ध ताया जी का निकलना सुन भाईयों, श्री कृष्ण जी, सात्यकी और युयुत्सु, द्रौपदी तथा अन्य पंचाल की स्त्रियों को साथ लेकर ग्राम से चले ॥

यह स्त्रियें ऐसे विलाप कर रही थीं कि जिस को सुन कर पत्थर हृदय भी मोम होरहे थे, इन स्त्रियों ने चिल्ला कर युधिष्ठर से कहा कि हे धर्म पुत्र! आप को द्रोणाचार्य, भीष्म पितामह तथा अभिमन्यू की मृत्यु होने पर राज्य से क्या प्रयोजन है इस प्रकार चिल्लाती हुई स्त्रियों के बीच में से निकल कर युधिष्ठर अपने ताया जी के चरणों पर जा गिरा और नमस्कार कर अपना नाम पुकारा और फिर अन्य पाण्डवों ने भी ऐसा ही किया ॥

पुत्र शोक से व्याकुल राजा धृतराष्ट्र पुत्रों के नाश करने वाले युधिष्ठर से स्नेह पूर्वक मिले, फिर भीमसेन को मिलना चाहा उस की शोकाग्नि भीमसेन रूप बन को जलाने वाली दीख पड़ी ॥

हे राजन्! कृष्ण जी ने पहिले ही भीमसेन के विषय में धृतराष्ट्र के अशुभ संकल्प को जान कर उस की लोहमय मूर्ति जोकि पुर्वकाल में राजा दुर्योधन ने बनवाई थी मंगवा रखी थी श्री कृष्ण जी ने भीमसेन को हाथ से हटा वह लोहे की भीम की मूर्ति धृतराष्ट्र के हाथ के आगे करदी ॥

राजा ने उसे भीमसेन जानकर हाथोंसे दबा बड़ी वीरता से तोड़ दिया, राजा धृतराष्ट्र थोड़ी देर में क्रोध से रहित हो शोक को छोड़ हाय भीमसेन! हाय भीमसेन! कह कर रोने लगा, तब राजा को क्रोध रहित भीमसेन के मारने से पीड़ावान् देख बसुदेव जी बोले ॥

हे राजन्! आप शोक न करें भीमसेन आप के हाथ से नहीं मरा आपने लोहे की मूर्ति को तोड़ा है, हे राजन्! आप को क्रोध में देख भीमसेन को छुटा कर लोहे का भीमसेन मैंने आप के आगे किया था क्योंकि मैं जानता हूं कि आप के हाथों में आकर कोई मनुष्य जीता नहीं रह सकता ॥

हे राजन्! काल की गति से आप के पुत्रों का वध हुआ है इस लिये आप को भीमसेन के मारने की आशा नहीं करनी चाहिये थी, हम लोगों ने तो पहिले ही संधि की प्रार्थना की थी इस लिये आप शोक को छोड़ें ॥

बारहवां अध्याय

—:०:—

श्रीकृष्ण जी का राजा धृतराष्ट्र को समझाना, राजा का भीमसेन आदि को प्रेम से मिलना और आशर्वाद देना ॥

वैशम्पायन बोले इस के अनंतर नौकरों ने राजा को स्नान कराया, राजा के स्नान कर लेने पर श्रीकृष्ण जी ने धृतराष्ट्र से कहा कि हे राजन्! आप वेद शास्त्र के ज्ञाता पुराणों के श्रोता और पूर्वापर के विचारने वाले हो कर इस आत्म अपराध से ऐसा क्रोध क्यों करते हैं, भीष्म, द्रोण

और मैंने पहिले ही आप से प्रार्थना की थी जिस का आप ने स्वीकार न किया ॥

हे राजन्! जिस नीच ने द्रौपदी जैसी पतिव्रता स्त्री को सभा में बुलाया और निरापराधी पांडवों को उनका भाग नहीं दिया उस से बदला लेने के लिये भीमसेन ने दुर्योधन का वध किया है। आप को पांडवों पर क्रोध नहीं करना चाहिये ॥

इस प्रकार श्रीकृष्ण जी के सत्य २ वचनों को सुन राजा ने श्रीकृष्ण जी से कहा, हे माधव जी! जो आप कहते हैं यह सब सत्य है परन्तु क्या करूं पुत्र के मोह ने मुझे अधीर कर दिया है। हे कृष्ण जी! अब मैं क्रोध रहित हो भीमसेन को मिलना चाहता हूं क्योंकि अब मेरा सहारा पांडव ही हैं ॥

हे राजन्! तब धृतराष्ट्र जी ने भीमसेन, नकुल और सहदेव को हाथ से छूआ और उन को आशीर्वाद दी ॥

तेरहवां अध्याय

—:०:—

पांडवों पर गांधारी का कोप और व्यास जी का उस को समझाना ॥

इस के अनंतर धृतराष्ट्र जी से आज्ञा ले कर पांडव केशव जी सहित गांधारी के पास गये। गांधारी ने युधिष्टर को पास आते देख कर शाप देना चाहा, व्यास ऋषि जी ने

पहिले ही योग बल से सब जीवों के चित्त के भावों को जान लिया था। यह देख वह झट बोल उठे हे गांधारी! पांडवों पर क्रोध न करो, दुर्योधन के बार बार पूछने पर आप ने कहा था, कि जिधर धर्म्म है उधर जय है, हे गांधारी आप का कहा हुआ वचन व्यर्थ नहीं हो सकता, आप निश्चय समझें कि पांडवा में धर्म अधिक है इस लिये वह जीते हैं ॥

गांधारी ने उत्तर दिया कि मैं गुणा में दोष नहीं लगाती और पाण्डवों का नाश नहीं चाहती, जैसे यह कुंति के प्यारे हैं वैसे ही मेरे भी हैं, मैं जानती हुं कि दुर्योधन, शकुनि, कर्ण और दुशाशन के अपराध से कौरवों का नाश हुआ है, इस में पाराडवों का कोई अपराध नहीं है परन्तु भीमसेन ने नाभी के नीच गदा का प्रहार किया इस बात को सुन कर मुझे क्रोध आया है क्योंकि धर्मात्मा पुरुष प्राणों के लिये धर्म को नहीं छोड़ते ॥

चौदहवां अध्याय

—:०:—

पांचों पाराडवों का गांधारी से मिलाप, गांधारी का उन्हें कोप से देखना, कुंति का पुत्रों से मिलाप और सब का मिल कर गाधरी के

पास जाना ॥

वैशंपायन बोले कि तब भीमसेन गांधारी के यह वचन सुन कर बड़ी नम्रता से बोली हे माता ! धर्म हो या अधर्म मैंने अपनी रक्षा के लिये भय से यह काम किया, आप मेरे इस अपराध को क्षमा करें, हे माता ! धर्म युद्ध से वह बली किसी से विजय नहीं किया जा सकता था और पुर्वकाल में दुर्योधन ने भी अधर्म से ही राजा युधिष्ठर को विजय किया था और हम सब को भी ठग लिया था, आप को विदित है कि पतिव्रता रजस्वला द्रौपदी को अपनी वाम जंघा दिखला हमारे दिलों को दुखाया था उसी समय हम ने उसे मार डालना था परन्तु उस समय हम को धर्म पुत्र ने रोक लिया था, हे माता ! इसी लिये मुझ से यह कर्म हुआ है आप मेरे इस अपराध को क्षमा करें ॥

गांधारी बोली हे तात ! तूने केवल इतना ही नहीं किया बरंच तूने दुशासन के रुधिर को भी पिया था ॥

भीमसेन ने उत्तर दिया कि माता ! जब दूसरे का रुधिर पीना निन्दित कर्म है तो फिर अपना रुधिर मैं कैसे पी सकता था। भाई और भाई में क्या भेद है, हे माता ! केवल रुधिर से मेरे हाथ भरे थे। खून के कारण द्रौपदी के शिर के बाल पकड़े जाने पर मैंने जो प्रतिज्ञा की थी उस को पूरा करने के लिये मैंने दुशासन के रुधिर से हाथ भरे थे ॥

गांधारी बोली तुमने मेरे सौ पुत्रों में से एक को भी नहीं

छोड़ा हां यदि तुम दुर्योधन को धर्म से मारते तो मुझे इतना दुःख न होता फिर गांधारी ने पूछा कि युधिष्ठर कहां है ? कम्पायमान हाथ जोड़ आगे हो कर युधिष्ठर बोला कि हे माता ! मैं युधिष्ठर आप के पुत्रों को मारने वाला संसार के नाश का कारण शाप के योग्य हूं आप मुझे शाप दें, मुझ अज्ञानी सुहृदों के मारने वाले को राज्य और जीवन से क्या प्रयोजन है ॥

लंबे स्वास लेती हुई गांधारी युधिष्ठर को इस प्रकार भयभीत देख कुच्छ न बोली और पटांतर के बीच से ही युधिष्ठर के हाथ की अंगुलियों के नखों को क्रोध से देखा जिस से राजा के नख बिगड़ गये। यह देख अर्जुन वासुदेव जी के पीछे जा छुपा ॥

हे राजन् ! इस प्रकार भय से इधर उधर पाण्डवों को जाते देख गांधारी ने विश्वास दिलाया कि अब मेरा क्रोध शांत हो गया है, अब मैं कुन्ती के समान तुम्हारे हित को चाहूंगी । तब पांचो भाई उस की आज्ञा से कुन्ती माता के पास गये, बहुत काल के पीछे अपने पुत्रों को देख कुन्ती रुदन करने लगी । उस को रोते देख पाण्डवों के भी आंसू चल निकले ॥

फिर कुन्ती ने रोती हुई गांधारी और पृथ्वी पर पड़ी हुई द्रौपदी को देखा, द्रौपदी ने कुन्ती से कहा कि हे आर्य्या ! तेरे अभिमन्यु आदि सब पुत्र कहां गये, मुझ पुत्र हीन को राज्य से क्या लाभ है, इस प्रकार विलाप करती हुई द्रौपदी

को कुन्ती ने धीर्य दिलाया और अपने पुत्रों सहित द्रौपदी को संग ले गांधारी के पास गई ॥

गांधारी ने उन सब को आते देख कुन्ती से कहा कि बेटी ! इस प्रकार विलाप न कर तू मुझ पुत्र विहीन की ओर देख यह सब ऐसा ही होना था, युद्ध में मरने वाले वीर स्वर्ग में गये हैं इस लिये उन के अर्थ शोक नहीं करना चाहिये ॥

पंद्रहवां अध्याय

—:o—

रण भूमि में स्त्रियें का घोर विलाप ॥

वैशंपायन बोले कि वहीं बैठी हुई गांधारी ने दिव्य नेत्रों से रण भूमि का ध्यान किया और वहां पर अस्थी और मज्जा से युक्त रुधिर से लिप्त हज़ारों लोथों को देखा और उन लोथों पर अनेक शृगाल काक आदि हिंसक पशुओं को मांस को नेचते और मांस भक्षी रुधिर प्रिय राक्षसों को भी मांस खाते देखा ॥

हे राजन्! इस के अनंतर व्यास जी की आज्ञा से सब पांडव स्त्रियों सहित युद्ध भूमि में गये, वहां पर स्त्रियों ने अपने मृतक पति पुत्र और भाईयों की लोथों पर कच्चा मांस खाने वाले शृगाल, काक तथा भूत प्रेतादि से खाई हुई लोथों को देखा, उन को देख कर वह बड़ी बुरी तरह से

रोने पीटने लगीं कई तो उन में से लोथों पर गिरीं और कई मूर्छित हो पृथ्वी पर पटकीं ॥

इन दुःखी स्त्रियों की यह दशा देख कर गांधारी श्रीकृष्ण जी से बोली हे माधव जी ! आप मेरी बहुओं को देखो, यह दीना कैसी व्याकुल हो रही हैं, इन में से कोई पुत्र, कोई पति, कोई भ्राता और कोई अन्य बांधवों की तालाश में किस प्रकार घूम रही हैं, हाय ! यह रण भूमी किस प्रकार की भयानक है, इस रण भूमी को देख मेरा हृदय फटता जाता है, हाय ! यहां पर जयद्रथ, कर्ण, द्रोणाचार्य और अभिमन्यु सरीखे बड़े २ पर्य्यङ्कों पर सोने वाले कैसे पृथ्वी पर पड़े हैं, हाय ! इन के मांसों को गीदड़ आदि तथा भूत प्रेत आदि भक्षण कर रहे हैं, हाय ! जो सदैव बंधी जनों से स्तुति किये जाते थे आज वह शृगालादिकों के अशुभ और भयकारी शब्द सुन रहे हैं ॥

हे श्रीकृष्ण जी ! बड़े दुःख का स्थान है कि यह सब मर कर अपने २ भर्ताओं के पीछे जाने को उद्यत हो रही हैं । यह अपने २ सम्बन्धियों को पहिचान रही हैं परन्तु उन की पहिचान में नहीं आते और जिन स्त्रियों ने पहिचाना है वह तो पीट २ कर घायल हो रही हैं । हाय ! इस से बढ़ कर क्या कोई दुःख किसी ने देखा है । निश्चय मैं अभागनी हूं, पूर्व जन्म में मैं ने घोर पाप किये हैं जिस से मैं अपने पुत्र पौत्रों तथा अन्य बांधवों को मरा देख रही हूं ॥

सोहलवां अध्याय

—:०:—

गांधारी का दुर्योधन को मृत्यु शय्या पर पड़े देख विलाप करना ॥

वैशम्पायन बोले कि गांधारी अपने वीर पुत्र दुर्योधन की लोथ देख अचेत हो गिर पड़ी और बड़ी कठिनता से सचेत हुई, भय जनक विलाप करती हुई गांधारी ने शव को हृदय से लगाया और शोक से व्याकुल हो हाय पुत्र ! हाय पुत्र ! कह कर महा विलाप करने लगी, फिर रोती हुई गांधारी श्री कृष्ण से कहने लगी कि जब मैंने दुर्योधन से कहा था कि जिधर धर्म है उधर जय है, उस समय भी इस आने वाले दुख को नहीं जानती थी ॥

हे प्रभो ! यह मेरा पुत्र सदा छत्र धारी राजाओं से सेवित होता था, आज गिद्ध उस की हाजरी दे रहे हैं। हे केशव जी ! यह ग्यारह अक्षौहिणी सेना को एकत्र कर युद्ध को निकला था अब वह भीमसेन से मरा हुआ पड़ा है, यह अभागा विदुर प्रभृति महात्माओं के कथन को न मान कर इस दुख में पड़ा है, हे राजन् ! इस की मृत्यु से मेरी दशा और इस की स्त्री की दशा देखो ॥

हे राजन् ! अन्य स्त्रियों की दशा को भी देखो जो मृतक पति,

पुत्र और भ्राताओं की लोथों पर गिरती हुई विलाप कर रही हैं, हाय ! इन सब को देख कर मेरा हृदय फटता जाता है ॥

——

सतारहवां अध्याय

—:o:—

गांधारी का विलाप ॥

गांधारी बोली हे कृष्ण जी ! भीमसेन के हाथ से मरे हुये मेरे सौ पुत्रों की स्त्रियें युद्ध भूमि में घूमती हुई मेरी ओर आरही हैं, यह रूप रोक शब्दों से महलों को सुशोभित करने वाली स्त्रियें आज रुधिर से लिप्त पृथ्वी पर चलती हुई कठिनता से लोथों पर से गिद्धों को उड़ाती फिरती हैं ॥

हे महाबाहो ! लक्ष्मण की माता को देख मेरा हृदय खण्ड २ हुआ जाता है, यह दीना अपने पति, पिता और भ्राता की लाथों पर कैसे गिर रही हैं, हाय ! तरुण थोड़े वर्ष की आयु वाली स्त्रियों का विलाप कैसा हृदय को कम्पायमान कर रहा है, किस किस की ओर देखूं एक से एक अधिक शोक को बढ़ा रही हैं ॥

हे श्री कृष्ण जी ! हाय ! वह वीर दुशासन की लोथ है, इस दुशासन ने द्रौपदी को द्यूत में जीत कर यह वचन कहा था कि हे द्रौपदी ! तू और यह नकुल तथा सहदेव अर्जुन सहित हमारे दास बन गये है तुम शीघ्र हमारे घरों में चलो, तब मैंने दुर्योधन से कहा था कि यह शकुनि महा नाश का बीज बो रहा

है, इसे दूर करो, द्यूत के व्यसनों को छोड़ पाण्डवों से संधि कर लो, हे पुत्र! तू भीमसेन के बल को नहीं जानता, इस को वज्र सरीखे वचनों से घायल न करो, हाय! मेरे कहने को न मानने वाला यह दुशासन पाओं फैलाये भीमसेन को अपना रुधिर पिलाता हुआ मरा पड़ा है॥

अठारवां अध्याय

—:०:—

गाधारी का विकर्णादि पुत्रों को मरा देख कर शोक करना और उतरा का वर्लाप॥

फिर गांधारी बोली कि हे श्रीकृष्ण जी! आप इस वीर विकर्ण को देखो, हाय! इस के निकट इस की भार्या कैसे विलाप कर रही है और उस के हाथ पाओं से गिद्धों को हटाती है परन्तु वह उड़ कर फिर उस के हाथ के मांस को खा रहे हैं। हाय! इस के मुख को भी श्वापदों ने आधा खा लिया है। हाय! यह दुर्मुख भी अपने शस्त्रों को सरहाने धर कर सो गया है। चित्रसेन की इधर उधर रोती हुई रानियों के विलाप को सुनो। उधर त्रिविंशती भी गिद्धों से खाया जा रहा है, वह दुस्सह भी बाणों से विंधा मरा पड़ा है, हाय! इन वीरों के मुख का तेज अब भी दूर नहीं हुआ॥

गांधारी बोली हे माधव! हाय! यह अहंकारी वीर अभि-

मन्यु जो कि बल पराक्रम में अर्जुन से वरंच आप से भी ड्योढ़ा था, जो बड़ी कठिनता से चीरे जाने वाली सेना को चीर कर निकल गया था, हाय ! वह वीर कैसे मारा गया है । हे श्रीकृष्ण जी ! इस के पास उसकी स्त्री विराट की पुत्री बैठी हुई अपने हाथों से उसके रुधिर को साफ कर रही है हाय ! यह उस के मुख को चूमती हुई कैसा विलाप कर रही है और कहती है कि हे नाथ ! मैंने तो आप का कोई अपराध नहीं किया फिर आप मुझ से क्यों नहीं बोलते, हाय ! क्या तुम मुझ अभागिनी को अनाथ कर अपने माता पिता को आपत्ति में डाल चले गये हो । हाय ! क्या कर्ण, कृपाचार्य, जयद्रथ और अश्वत्थामा ने मुझे विधवा कर दिया है, धिक्कार है ! धिक्कार है ! हे वीर ! आप के न होते हुये यह विजय और राज्य पाण्डवों को सुखदायी नहीं हो सकता । हे स्वामिन् मैं भी आप के पीछे २ शीघ्र आना चाहती हूं, मुझे आने की आज्ञा दें और कुछ काल मेरी प्रतीक्षा करें । हे स्वामी ! स्वर्ग में पहुंच कर आपने मुझे न भूल जाना, हाय ! क्या इस लोक में विधाता ने मेरा आप से संबंध छः मास के लिये ही रचा था ॥

हे श्रीकृष्ण ! वह देखो उत्तरा को विराट की स्त्रियें कैसे हटा रही हैं और आप भी विराट की मृत्यु पर विलाप कर रही हैं, हाय ! विराट के अंग भी गिद्धों और शृगालों से खाये जा रहे हैं, हाय ! यह दुःख इन स्त्रियों के हटाने पर भी नहीं हटते ॥

हाय! क्या यह बालक अभिमन्यु, काम्बोज और सुदक्षा की लोथें हैं। हाय! यह भी रण भूमि में सोये पड़े हैं॥

उन्नीसवां अध्याय

—:०:—

वृष सेन की माता और दुश्शीला का बलाप॥

गांधारी बोली कि यह धनुषधारी वीर कर्ण अर्जुन की तेज अग्नी से भस्म किया गया है, हाय! इसे तो युद्ध की विजय की इच्छा से अपना सेनापति बनाया था इस के चारों ओर स्त्रियें कैसा विलाप कर रही हैं। हाय! इस के भय से तो व्याकुल हो धर्म राज १३ वर्ष तक नहीं सोया था। यह वीर मेरे पुत्रों का रक्षक भी मरा पड़ा है॥

हे श्रीकृष्ण जी! आप कर्ण की स्त्री वृषसेन की माता को देखो किस प्रकार पृथ्वी पर लेट रही है और कह रही है कि निश्चय करके गुरु के शाप से पृथ्वी ने तेरे रथ चक्र को दबा लिया और अर्जुन ने बाणों से तुझे मार गिराया, हाय! वह शूर सेन की माता कर्ण को मरा देख अचेत पड़ी है। हाय! इस के शरीर पर तो श्वापदों ने मांस को नहीं छोड़ा यह महारानी कर्ण के मुख को सूंघती हुई पुत्र के शोक से व्याकुल हो रही है॥

गांधारी बोली अवन्ति के राजा की लोथ को गिद्ध

शृगाल चट किये जा रहे हैं हाय ! यह भी भीमसेन के बाणों से गिराया गया था ॥

अर्जुन से गिराया हुआ वह जयद्रथ पड़ा है, यह सिंधु देश का अहंकारी महाराजा भी किस प्रकार कुत्तों और शृगालों से खाया जा रहा है, देखो इसे तो मांस भक्षी पशु खींचे फिरते हैं । हाय ! उधर से शोक पीड़ित स्त्रियें खींच रही हैं, अर्थात् छुड़ाने का यत्न करती हैं परंतु यह दीन अबला छुड़ा नहीं सकतीं ॥

हे जनार्दन जी ! यह वही वीर है जो द्रौपदी को पकड़ कर भागा था, इसी लिये पाण्डवों ने इसे मारा है, हे कृष्ण जी ! उस मेरी पुत्री को देखो किस प्रकार विलाप कर रही है, इस से बढ़ कर मेरे लिये और कौनसा दुःख होगा कि मेरी प्यारी पुत्री विधवा हो गई हाय वह दुशाला अपने पति के शिर को तलाश करती हुई कैसी व्याकुलता से घूम रही है और कैसे विलाप कर रही है ॥

बीसवां अध्याय

—:०:—

कर्ण की मृत्यु, भीष्म का शयन और द्रोणाचार्य का संस्कार ॥

गांधारी बोली कि यह नकुल और सहदेव का मामा

धर्मराज के हाथ से मरा हुआ शल्य सोता है, हे पुरुषोत्तम ! यह सदैव आप से इर्षा करने वाला पराक्रमी युद्ध में कर्ण के रथ को रोकने वाला पड़ा है, आज उस के मुख को काकों ने नोच खाया है, इस के चारों ओर स्त्रियें कैसा विलाप कर रही हैं ॥

हे केशव जी ! इस सूर्य के समान प्रतापी भीष्म जी को देखो कि बाणों की शय्या पर कैसे पड़ा है, इस ब्रह्मचारी ने ब्रह्म ज्ञान के बल से देवताओं के समान प्राणों को धारण किया है, पाण्डवों के पूछने पर आप इन्हों ने अपनी मृत्यु को बता दिया था इस ने हारी हुई कौरवों सेना को फिर विजय प्राप्त करा दी थी, हाय ! अब यह मरे हुये के समान पड़ा है, हाय ! इन के स्वर्ग धाम में जाने पर धर्म विषय को कौन प्रति पादन करे गा ॥

हाय ! द्रोणाचार्य पृथ्वी पर लेटा है, यह इन्द्र और परशु-राम के समान चारों प्रकार की अस्त्र विद्या को जानता था, हाय ! खेद, गुरु जी के चरणों को भी शृगाल नोच रहे हैं, हाय यह वही चरण हैं जिन्हें अर्जुन प्रभृति योधा बड़ी श्रद्धा से पूजते थे ॥

हे श्री कृष्ण जी ! धृष्टद्युम्न के हाथ से मरे हुये द्रोणाचार्य के निकट कृपी खड़ी है और अपने परम पूज्य पति की क्रिया कर्म करने का उपाय कर रही है और साथ ब्राह्मण चिता को प्रज्वलित कर साम वेद के मंत्र गायन करते हुये द्रोणाचार्य जी की लोथ को अग्नि में स्थापित कर रहे हैं, इन्हों ने यह

चिता धनुष, शक्ति और रथों की नीड़ों से बनाई है, हाय! यह कैसा रुदन करते हुये द्रोणाचार्य का संस्कार कर कृपी को साथ लिये गंगा तट पर जा रहे हैं ॥

—————

इक्कीसवां अध्याय

—:o:—

भूरीश्रवा की माता का विलाप और गांधारी का श्रीकृष्ण जी को शाप ॥

गांधारी बोली कि हे कृष्ण जी! सोमदत्त के पुत्र की ओर देखो इस को किस प्रकार पक्षी नोच रहे हैं, और उस की स्त्री भूरीश्रवा की माता इन को कह रही है कि हे महाराज! आप भारत वंशियों के घोर नाश, कौरवों के क्षय, और अपने मृतक पुत्र को नहीं देखते हो, क्या आप इन पुत्र वंधुओं के हृदय विदारक विलाप को नहीं सुनते, हे स्वामिन्! बड़ा आश्चर्य है कि पुत्र वधु दुःख का विलाप कर पृथ्वी पर गिर रही है और आप सुख की नींद में सोये पड़े हैं ॥

हे अर्जुन! आप तो दीनों के रक्षक हैं फिर आपने मुझ दीना के पुत्र की भुजा को क्यों काट डाला, हे सात्यकी! तू घोर पाप कर्मी है, तूने तो मेरे हृदय के टुकड़े का शिर ही

काट दिया, भूरीश्रवा की स्त्री अपने स्वामी की भुजा को बगल में दबा कह रही है, कि क्या यह वही हाथ हैं जिन से शत्रुओं को भय और मित्रों को आनंद मिलता था और जिन्हों ने सहस्रों गो दान किये थे, हाय! आज तो यह मिट्टी के समान हो रहे हैं, हाय! जिस के ऊपर छत्र और चमर झुलाये जाते थे आज उस पर पक्षी अपने पक्षों को झुला रहे हैं, यह अपनी माया से सैकड़ों रुप बदल लेता था आज पांडवों के हाथ से गिरा पड़ा है॥

गांधारी ने कहा कि हे कृष्ण जी! आप कांबोज देशीय राजाओं को देखो इन की भार्या किस प्रकार विलाप कर रही हैं, वह कह रही हैं हे राजन्! यह वह हाथ हैं जिन से पूर्व काल में मुझ को कभी नहीं त्यागा था, अब मैं आप से जुदा हो कर किस दशा को पाऊंगी॥

हे कृष्ण जी! आप कलिंग देश के राजा की कटी भुजा को देखो जोकि जड़ाऊ बाजू बन्दों से अलंकृत है, हे कृष्ण जी इस जयत्सेन मगध के राजा को घेर कर यह स्त्रियें किस प्रकार विलाप कर रही हैं, हाय! यह बड़े २ उत्तम वस्त्र भूषण धारण करने वाली सुंदरियें आज कैसे शोक जनक वस्त्र पहिर कर पृथ्वी पर धूलि में लेट रही हैं, यह स्त्रियें अभिमन्यु के मारे हुये बाणों को अपने हाथों से निकाल रही हैं॥

धृष्टद्युम्न के सब पुत्र द्रोणाचार्य के हाथ से मरे पड़े हैं। हे कृष्ण जी! वह राजा द्रुपद भी द्रोणाचार्य के हाथ से मरा पड़ा

है, राजा द्रुपद की स्त्री उस का संस्कार करना चाहती है। वह स्त्रियें चंदेरी के राजा धृष्टद्युम्न को ढूंढती फिरती हैं और घोर विलाप कर रही हैं, यह देखो इन में से एक ने अपने पौत्र को गोदी में ले लिया है, यह इतना वीर है कि इस ने द्रोणाचार्य के शस्त्रों से घायल होने पर भी पिता के साथ को नहीं छोड़ा था और अब भी पिता की सेवा के लिये उन के पास ही पड़ा है ॥

हे श्री कृष्ण जी! इसी प्रकार मेरा पौत्र लक्ष्मण भी अपने मृतक पिता दुर्योधन के पास लेटा है, अवंति के राजा विन्द और अनुविन्द भी गिरे पड़े हैं ॥

हे श्री कृष्ण जी! आप के सहित सब पाण्डव मारने के अयोग्य हैं जिन्हें कि द्रोणाचार्य, भीष्म पितामह और दुर्योधन तथा अश्वत्थामा भी नहीं मार सके, वरंच वह सब घोर युद्ध में इन के हाथों मारे गये हैं मैं इस में समय की विपरीतता को ही समझती हूं ॥

हे यादव! मेरे पुत्र तो उसी समय मारे गये थे जब आप उपप्लवी को लौट कर गये थे, उसी समय भीष्म पितामह और ज्ञानी विदुर जी ने मुझे कह दिया था कि अपने पुत्रों से प्रीति छोड़ दो, उन का कहना विपरीत कब होसकता था ॥

गांधारी इतना कह कर शोक से मूर्छित दुःख से घायल बुद्धि धैर्य को त्याग कर पृथ्वी पर गिर पड़ी और फिर बोली हे कृष्ण जी! तुम ने कौरव नाश जान बूझ कर होने दिया इस

लिये तुम भी अपने फल को पावोगे, मैं अपने तपोबल से शाप देती हूं कि तुम भी अपने जाति वालों को मारोगे और आज से ३६ वर्ष पीछे निन्दित उपाय से परलोक में सिधारो गे और आप की स्त्रियां भी पुत्रों और बांधवों के मारे जाने से इन्हीं स्त्रियों के समान रोयें गी ॥

यह सुन कर मंद मुसकराते हुये कृष्ण जी बोले हे क्षत्र-याणी ! मैं जानता हूं कि यादव लोग दैव से ही नष्ट होंगे, मेरे सिवाय यादव सेना को मारने वाला कोई नहीं, इन को दैव भी नहीं मार सकता यह सुन कर पाण्डव लोग भय भीत हो अतयन्त व्याकुल हो जीवन से भी हाथ धो बैठे ॥

बाईसवां अध्याय

—:०:—

महाराजा धृतराष्ट्र की आज्ञा से राजा युधिष्ठर का रण भूमि में मृतक लोथों का दाह कराना

श्री भगवन् बोले कि गांधारी उठो शोक मत करो तुम्हारे अपराध से कौरवों का नाश हुआ क्योंकि तुम ने ही उस दुर्बुद्धि अतयन्त अहंकारी पुत्र को आगे कर दुष्ट कर्म को किया है तुम अपने अपराध को मुझ पर कैसे लगाती हो ॥

ब्राह्मणी तप के लिये, गौ भार उठाने के लिये, शूद्र सेवा के

लिये, वैश्य पशु पालन के लिये और क्षत्राणि युद्ध में प्राण देने के लिये पुत्र को उत्पन्न करती है फिर तू शोक क्यों नहीं छोड़ती गांधारी कृष्ण जी के इन कठोर बचनों को सुन चुप हो गई॥

राजा धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर से पूछा यदि आप जीती हुई तथा मृतक सेना की संख्या जानते हो तो मुझे सुना दो और यह भी कहो कि मरने वाले किस गति को प्राप्त हुये हैं॥

युधिष्ठिर ने उत्तर दिया कि इस युद्ध में एक अर्ब छिया सठ करोड़ बीस हजार योधा मारे गये हैं और भागे हुये वीरों की संख्या चौबीस हज़ार एक सौ पैंसठ है, जिन लोगों ने प्रसन्नता से युद्ध कर प्राण दिये हैं वह तो इन्द्रादिलोकों को गये हैं, प्रसन्न चित्त लड़ने वाले गंधर्व लोक को और जो रण में पीठ दिखा कर मरे हैं वह गुह्यकों के लोकों को गये हैं और जो परस्पर बड़ी वीरता से शस्त्रों से कट गये हैं वह ब्रह्म लोक को अवश्य पधारे हैं॥

धृतराष्ट्र बोले कि हे पुत्र! यह तुम को किस प्रकार विदित हुआ, युधिष्ठर बोले पूर्व काल में जब मैं आप की आज्ञा से तीर्थ यात्रा को गया था तो मैंने लोमश ऋषि से यह ज्ञान प्राप्त किया था॥

धृतराष्ट्र नें फिर कहा कि अय पुत्र! क्या तुम मृतकों का दाह कर्म करोगे॥

राजा युधिष्ठर ने कहा कि अवश्य करूंगा यह कह कर युधिष्ठर ने धौम्य ऋषि, संजय, विदुर तथा सेवकों को आज्ञा दी कि आप इन सब का संस्कार करें, वहां कोई न पड़ा रहे,

यह आज्ञा पा उन सब ने तत्काल चंदन घृतादि सामग्री एकत्र कर चितायें बना मुख्य २ राजाओं का वेद विहित रीति अनुसार दाह किया ॥

फिर अन्य अनाथों की केवल लकड़ियों ही की चितायें बना विदुर जी ने उन को दाह किया इन सब के भस्म होने पर कौरव राज युधिष्ठर और अन्य सब लोग गंगा जी के तट पर चले गिये ॥

तेईसवां अध्याय

मृतक बंधुओं को तिलांजली देना ॥

वैशपायन बोले गंगा तट पर पहुंच कर सब ने गंगा में स्नान किया और अपने मृतक संबन्धियों को तिलांजलियें दीं। हे महाराज ! इस के अनंतर धीरे २ रोती हुई कुन्ती ने अपने पुत्रों से कहा कि जिस को आप सूत का पुत्र मानते हैं उस सुगमी कर्म अपने भाई कर्ण को भी जलदान करो वह तुम्हारा बड़ा भाई सूर्य्य देव से मुझ से उत्पन्न हुआ था ॥

यह सुन कर युधिष्ठर और अर्जुन ने पूछा कि कर्ण किस प्रकार आप से उत्पन्न हुआ। आप ने इस भेद को पहिले क्यों छिपाय रक्खा था। बड़ा खेद का विषयं है कि आप के गुप्त रखने से हम मारे गये। आप शीघ्र बतायें क्यों

कि हम पहिले से भी अधिक दुःख में पड़ गये हैं ॥

माता ने कहा पहिले तुम जल दान करलो फिर मैं तुम को सब सुना दूंगी यह सुन कर धर्मराज ने बहुत विलाप किया और उस के अर्थ भी जल दिया इस समय वहां सबके रोने का बड़ा कोलाहल हुआ ॥

इति शुभम् ॥

ॐ

महाभारत

शान्तिपर्व

❀ पूर्वार्द्ध ❀

प्रथम अध्याय

—:o:—

धर्म राज राजा युधिष्ठर का कर्ण की मृत्यु पर शोक प्रकट करना ॥

वैशम्पायन जीने राजा जन्मेजय से कहा कि राजा युधिष्ठर ने युद्ध में मरे हुये वीरों का क्रिया कर्म करके अपने भाई बन्धुओं और विधवा स्त्रियों के साथ हस्तिना पुर के बाहिर उस स्थान पर निवास किया कि जहां व्यास देव और नारद जी के आश्रम थे। वहां पर प्रसिद्ध ऋषि, महर्षि और तपस्वी ब्राह्मण अपने शिष्यों को साथ ले कर

उन के पास आये। युधिष्ठर ने सब का यथोचित सत्कार किया और विधि के अनुसार भेंट पूजा दी ॥

तब कृष्ण द्वैपायण और नारद जी कहने लगे कि हे राजन्! इस घोर युद्ध में विजय पाकर आप ने समुद्र पर्यन्त सब पृथ्वी का राज्य पाया, श्री कृष्ण महाराज का धन्यवाद कीजिये और अपने प्रारब्ध को उत्तम मानिये, मेरे विचार में अब आप को कोई भय नहीं है, शास्त्र की आज्ञा है कि जब क्षत्रियों को विजय की प्राप्ति हो तो उस के पश्चात् आनंदोत्सव करना चाहिये, शोक और चिन्ता दूर करने चाहियें यदि यह विचार न हो तो लड़ाई झगड़े क्यों मोल लिये जायें, आपने वर्षों तक दुःख सहे परंतु धर्म का कभी विस्मरण न किया आप के शत्रु हठधर्मी होकर आप के धर्म के वचनों को भी स्वीकार न करते थे, विवश होकर आप को युद्ध करना पड़ा, तुम्हारा खेद करना क्षत्रिय धर्म के विपरीत है ॥

युधिष्ठर बोला कि हे नारद जी ! मैने ब्राह्मणों और श्री कृष्ण जी की कृपा से विजय तो प्राप्त की परंतु मेरे सब बांधव मारे, गये द्रौपदी के पांचो पुत्र, सुभद्रा का पुत्र अभिमन्यु, धृतराष्ट्र के पुत्र और बहुत से द्रौपदी के भाई और द्रुपद सब युद्ध की भेट हुये, इस के अतिरिक्त सब वृद्ध ज्ञानी और गुरू मारे गये, इन सब की मृत्यू पर मुझे बड़ा शोक है, विधवा स्त्रियों का दुःख मेरे प्राणों को बहुत पीड़ित करता है, कर्ण मेरे लोभ के कारण मारा गया वह महारथी बड़ा शूर बीर, दृढ़ पराक्रमी, दानी और धर्मपरायण मेरा भाई था, मुझे यह

वृत्तान्त अब अपनी माता ने सुनाया है, वह दुर्योधन का सहायक होकर सदैव हम को कटु वचन कहा करता था परन्तु जब मैं उस के पाओं की ओर देखता था तो मेरा क्रोध शांत होजाया करता था क्योंकि उस के चरणों की बनावट ठीक कुन्ति के चरणों जैसी थी ॥

यदि मैं पहिले जानता कि कर्ण मेरा भाई है तो न मेरा कौरवों से बिगाड़ होता और न आज मेरे ज्ञाति के लोग मारे जाते, हे नारद जी ! मुझे यह शोच बड़ा पीड़ामान करता है, आप यह तो बताईये कि उस महारथी कर्ण के रथ का पहिया भूमि में क्यों फंस गया ? इस का क्या कारण था ॥

दूसरा अध्याय

—:०:—

नारद जी का कर्ण के शाप का वृत्तान्त कहना और उसकी वीरता के कामों का वर्णन करना ॥

नारद जी बोले कि हे राजा युधिष्ठिर ! वह तेरा भाई कर्ण वास्तव में बड़ा पराक्रमी था जब देवताओं ने पृथ्वी पर क्षत्रियों की अधिकता देखी तो उन्हों ने उनके नाश के लिये कर्ण को कन्या में उत्पन्न किया, कर्ण कुछ काल गुप्त रहा फिर सूत पुत्र और राधा का पुत्र कहलाया फिर उसकी

मित्रता दुर्योधन से हुई। अर्जुन की शस्त्रज्ञता देख कर उससे ईर्षा करने लगा और एक दिन गुरु द्रोणाचार्य के पास जाकर ब्रह्मास्त्र मांगने लगा, गुरु जी उस के अभिप्राय को जान कर कहने लगें कि तू अल्पवुद्ध अर्जुन के साथ बरावरी नहीं कर सकता, तब कर्ण वहां से चल कर परशुराम जी के पास पहुंचा और भार्गव ब्राह्मण बन कर अस्त्र विद्या सीखने लगा। वहां पर एक समय उस ने एक ब्राह्मण की गौ को मृग समझ कर मारा, ब्राह्मण ने शाप दिया हे पापी! जिस कारण तू शस्त्र विद्या सीखता है वह कारण तेरा सफल न होगा, जब तू अपने शत्रु से युद्ध करेगा तो तेरे रथ का पहिया पृथ्वी ग्रस लेगी। कर्ण ने ब्राह्मण को वहुतेरा प्रसन्न करना चाहा परन्तु न कर सका, तव कर्ण परशुराम जी के पास फिर चला गया और उस से सव विद्या सीखी, परशुराम जी का उस पर इतना विश्वास होगया कि वह सदैव कर्ण को अपने साथ रखता था एक समय परशुराम उस की जंघा पर शिर धर कर सोरहे थे कि कर्ण को एक कीड़े ने काटा जिस से उस की जंघा से वहुत रुधिर जारी हुआ परन्तू कर्ण ने गुरु जी को जगाना न चाहा जब परशुराम जी उठे तो कर्ण की यह दशा देख कर कहने लगे कि हे कर्ण! तुमने वहुत धीरज दिखाया है तु निस्संदेह क्षत्रिय है ब्राह्मणों में यह धीरज किसी प्रकार भी नहीं होसकता सच वता तु कौन है॥

तव कर्ण ने कहा मैं न ब्राह्मण हूं न क्षत्रिय, वरन सूत हूं, मैं अस्त्रों का लोभी हो कर आप के पास धनुर्विद्या सीखने

आया हूं, परशुराम ने क्रोध में आकर शाप दिया कि हे मिथ्या वादि तेरा यहां स्थान नहीं यहां से चलाजा और जो अस्त्र तू ने छल से लिया है, वह तुझ को समय पर विस्मरण होगा, तू क्षत्रियों में अद्वीतीय होगा तब कर्ण दण्डवत कर के दुर्योधन के पास आया और उस के साथ रहिता हुआ बल और अस्त्रज्ञता, में अपने आप को अद्वितीय मानने लगा ॥

एक समय कलिंग देश के राजा चित्रांगद की कन्या का स्वयम्बर था सब राजा वहां गये, कर्ण समेत दुर्योधन भी वहां गया, जब स्वयम्बर का समय हुआ तो राज कन्या अपनी दासियों समेत जयमाल हाथ में लिये हुये निकली, राजाओं की पंक्ति में आकर सब को देखती जाती थी और सब के गुणों को सुनती जाती थी, जब वह इस प्रकार दुर्योधन का नाम सुन कर उस को भी छोड़ कर चली तो दुर्योधन इस तिरस्कार को न सह सका, उस ने तुरन्त उस राज कन्या का हाथ पकड़ कर रथ में विठा लिया और कर्ण समेत सब राजाओं के देखते २ ले चला ॥

तब तो क्रोध युक्त राजाओं ने बड़ा युद्ध आरंभ किया और दुर्योधन और कर्ण को तीरों से ढक दिया। उस समय कर्ण ने बड़ा पराक्रम दिखाया और क्षण भर में सब राजाओं के मुख मोड़ दिये, कर्ण की सहायता से दुर्योधन उस राज कन्या को घर में लाया ॥

कर्ण की वीरता के और भी वृत्तान्त हैं, एक समय चक्र वर्ति मगध देश के राजा जरासन्ध ने उसको द्वैरथ युद्ध में

बुलाया, बहुत काल तक दोनों लड़े, कर्ण जरासन्ध की संधी को उखाड़ने लगा तब कर्ण जरासन्ध ने उस को छोड़ा और कहा कि हे कर्ण ! मैं तेरे पराक्रम से प्रसन्न हूं तब जरासंध ने उस को अंग देश का राजा किया और मालिनी नगरी भी दी, तब से कर्ण अंग देश का राजा कहलाने लगा उस ने चम्पा नगरी की भी रचा की ॥

हे राजन् ! तुम्हारे ही लिये इन्द्र ने उस की कवच और दोनों कुण्डल हरण किये, नहीं तो कर्ण को कौन जीत सकता था ? इस के अतिरिक्त भीष्म ने उस को अर्द्धरथी कह कर अपमान किया, राजा शल्य ने तेज बल को घटाया, देवताओं ने अर्जुन को बढ़ाया और कई कारणों से हीन बल होकर आप का भाई कर्ण ठगा गया ॥

तीसरा अध्याय

—:o:—

युधिष्ठर का उदास होकर वनों को जाने के लिये कहना अर्जुन का उपदेश ॥

यह वृत्तान्त सुन कर भी युधिष्ठर को शांति न आई और वह कर्ण के शोक में बहुत आतुर होकर श्वास लेने लगा तब कुंति बोली कि हे युधिष्ठर ! तुम कर्ण का शोच क्यों करते हो मैंने उस को बड़ा समझाया था, परन्तु बहुत हठी था, सूर्य ने भी उस को बहुत कहा, परंतु उस ने एक न मानी ॥

इस लिये वह अपने कर्मों से मारा गया । युधिष्ठर

बोला कि हे माता ! यदि तू कर्ण का वृत्तान्त गुप्त न रखती तो हम को यह दुःख कभी न मिलता इस लिये मैं अब शाप देता हूं कि कोई स्त्री मन्त्र और गुप्त भेद को न छुपा सके। यह कह कर युधिष्ठर शांत हो गया परन्तु कर्ण का शोच फिर भी प्रबल रहा। युधिष्ठर अश्रुपातों से मुख को मलान करता हुआ कहने लगा कि ॥

यदि हम अन्धक क्षत्रियों के पुरों में भिक्षा मांग कर निर्वाह करते तो यह दशा हम को कभी भी प्राप्त न होती। क्षात्रिय धर्म को धिक्कार है, जिसके कारण हमारे सब बांधव मारे गये। हमारे माननीय गुरुजन और प्रतिष्ठत पितामह यमपुर को सिधारे, हम सब लोभ और भूल से दंभी हो कर ऐश्वर्य पूर्वक राज्य भोगने की इच्छा से इस महा घोर दुःख मयी अवस्था को प्राप्त हुये हैं। भाईयों को मार कर त्रिलोकी के राज्य पाने पर भी धिक्कार है, हम पृथ्वी पर बन्धु घाती प्रसिद्ध हुये हैं जैसे कुत्ता हड्डी को पाकर करता है इस प्रकार राज्य लेकर वही दशा हमारी है, मित्रों और सम्बधियों के होने पर ही राज्य भी अच्छा लगता है, जब वह नहीं रहे तो राज्य किस काम का ॥

जो लोग वासना में फंस कर युद्ध में मारे गये हैं, वह सचमुच घात हुये हैं, केवल वही स्वर्ग को जायेंगे जो निष्काम युद्ध करते थे। यह सब कुछ दुर्योधन की मन्द मति के कारण हुआ यदि वह समझ जाता तो इतना विध्वंस क्यों होता। न उसने राज्य मांगा, न जीवन के सुखों को देखा,

न पितामाता की सेवा की और न बांधवों से मेल ही रखा। इस का पिता धृतराष्ट्र भी राज्य के लोभ से अपने भाई के पुत्रों को न समझसका जिससे यह अनर्थ उत्पन्न हुये। जिन को देख कर मैं बहुत शोक करता हूं॥

हे अर्जुन! तुम राज्य को भोगो। मैं तो वन को जाऊंगा और शेष आयु धर्म चिन्तन में व्यतीत करूंगा। यह सुन कर अर्जुन बोला कि हे महा बाहू! आप की यह मति ठीक प्रतीत नहीं होती अपने क्षत्रिय धर्म का पालन करके राज्य पाया है इस में कौनसा पाप किया, शत्रुओं ने तो अवश्य ही मरना था, परारब्ध से वह आप के कारण मारे गये इस में कौनसा दोष है? आप क्यों व्यर्थ शोच करते हैं! आप को ईश्वर ने समस्त पृथ्वी का राज्य दिया है उस को धर्म से भोगों, आनन्द प्राप्त करो, जो राजा भिक्षा मांग कर निर्वाह करता है वह निन्दित कर्म करने से नरक का भागी होता है, दरिद्रता पाप का मूल है, दरिद्री पुरुष धर्म नहीं कर सकता, आप क्यों दरिद्रता का आश्रय लेते हैं, धन ही स्वर्ग का मूल है, यदि राजा लोग दूसरों से धन न लें तो संसार के धर्म की वृद्धि नहीं हो सक्ती, राजा लोग प्रजाओं से धन लेकर यज्ञ करते हैं, पात्रों को देते हैं, संसार की रक्षा में उस को व्यय कर देते हैं जैसे महा समुद्र पानी के कणों को सब पृथ्वी पर फैला देता है, इस लिये आप को उचित है कि राज्य धन लेकर यज्ञ करें, यदि ऐसा न करोगे तो पाप के भागी बनोगे, यह जीव धारियों का दाशरथनाम महा मार्ग है, हे राजन्! कुमार्गी मतबनो॥

चौथा अध्याय

—:o:—

युधिष्ठिर का वैराग्य की बातें करना, भाईयों का उस को उपदेश देना ॥

तब युधिष्ठिर बोला कि हे अर्जुन ! मेरी बात को चित से विचार कर सुन, तब तू मेरे वचन की सत्यता को अवश्य मानेगा, मैं संसारी बातों को छोड़ कर साधूओं के चलाये हुये मार्गों पर चलूंगा, वन में जाकर पशु पक्षियों के आनन्द युक्त शब्दों को सुनूंगा, बन के फल मूलों से पेट पालूंगा, मुझे राज्य की इच्छा नहीं, मैं वानप्रस्थ में नियत होकर तपस्या करूंगा और संसार से प्रीति छोड़कर परमात्मा परमज्योति स्वरूप में चित्त लगा कर अनादि और अव्यय सुख की प्राप्ति के लिये यत्न करूंगा ॥

यह सुन कर भीमसेन बोला कि हे राजन् ! आप ऐसे वचन कहते हो कि जिन को बुद्धिमान कभी नहीं कहते, यदि अन्त को यही करना था तो अठारह अक्षौहिणी क्षत्रियों का व्यर्थ नाश क्यों कराया, हम भी बहुत मूर्ख हैं कि इतने विद्या बल और पराक्रम से युक्त हो कर आप जैसे नपुंसक का कहा मानते हैं, आप का कर्म दुर्भाग्यता से युक्त है, जैसे कोई पुरुष मधु के लिये ताल वृक्ष पर चढ़े, मक्खीयों को छेड़े, परन्तु मधु को मुंह न लगाये, अथवा सहस्रों कोस चल कर अभीष्ट नगर के पास पहुंचे और उस में प्रवेश न करे, आप

कहते हैं कि क्षत्रिय धर्म में हिंसा है, सो यह बात ठीक नहीं, जो पुरुष जिस धर्म में उत्पन्न हुआ है, उसी में उस की मोक्ष होती है ॥

क्षत्रि धर्म के विपरीत जो धर्म क्षत्रिय लोक करते हैं, वह नीचों के बनाये हुये नास्तिक धर्म पर चलते हैं, आप सरीखे मनुष्य शरी को अनाशवान समझते हैं और धर्म कपट में प्रवृत्त होकर मर जाते हैं, पुत्र, पौत्र, देव ऋषि और पितरों को पालन किये बना बन के आहार से केवल अपनी ही रक्षा करना भी आप जैसों का ही काम है. यदि राजाओं की सन्यास धर्म से मुक्ती हो, तो पशु पक्षि और वृक्ष भी मुक्त होजायें, क्योंकि वह भी कोई कर्म नहीं करते, जलेक जीव जो केवल अपना ही उदर भरना जानते हैं, वह भी सिद्धि को पाजायें, हे राजन् ! जिस प्रकार सब संसार अपने २ कर्मों को करता है उसी प्रकार इप को भी अपना निज का धर्म पालन करना चाहिये ॥

अर्जुन बोला कि हे राजन् ! एक समय कुछ ब्राह्मण अपने माता पिता आदि सम्बन्धियों को छोड़ कर और घर से निकल कर बन में चले गये और तपस्या करने लगे । यह देख कर इन्द्र प्रसन्न हुये और स्वर्ण का पक्षि बन कर उन के पास आये, तब उन तपस्वी ब्राह्मणों को देख कर कहने लगे कि यज्ञ के पश्चात् भोजन करने वाले लोगों का जो कर्म है वह बहुत कठिन है, ब्राह्मण यह देख कर आश्चर्य करने लगे और कहने लगे कि हे पक्षिवर तुम भीख मागने वालों की

प्रशंसा करते हो, हम भी भिक्षा खाने वाले हैं, पक्षी बोला कि मैं तुम्हारे जैसे पापीयों की प्रशंसा नहीं करता, प्रशंसा के योग्य वह लोग हैं जो वृक्षों के पत्ते और उच्छिष्ट फलों को शुद्ध कर के खाते हैं, तब ब्राह्मणों ने अपने बड़े कल्याण को सुन कर उस से धर्म के वचन सुने, पक्षी ने बताया कि गृहस्थाश्रम का धर्म धारण करना सब से उत्तम और कठिन धर्म है, प्रातः और सायंकाल के समय को विभाग करके यज्ञ करने से शेष अन्न को कुटुम्ब समेत भोजन करने वाले पुरुष अचल पदवी को पाते हैं, तब वह ब्राह्मण अपने घरों को आये, इस लिये हे राजन ! वनवास का विचार छोड़ कर अपने धर्म में प्रवृत्ति कीजिये और पृथ्वी का निष्कण्टक राज्य भोगिये ॥

नकुल ने कहा कि हे राजन् ! जो पुरुष गृहस्थ के सुखों को न भोग कर सन्यासी होकर घर को छोड़ कर वन में निवास करता है वह तापसी त्यागी कहाता है, ऋषियों ने तुला पर चढ़ा कर सब आश्रमों की तुलना की तो गृहस्थ आश्रम तीनों शेष आश्रमों के समुदाय से बढ़ कर निकला इसी आश्रम में रह कर मनुष्य अन्य जीवों का उपकार कर सक्ता है, धर्म का संचय कर सकता है, यज्ञ और धर्म के कामों में कटिबद्ध हो सकता है इस लिये पांच महा यज्ञों को करते हुये आप और प्रजाओं का पालन करें और इस वृथा विचार को जो मोह के कारण तुम्हारे चित में उत्पन्न हुआ है दूर कर प्रजा का यथावत पालन करते हुये आप स्वर्ग से भी बढ़ कर ब्रह्म लोक में वास करेंगे ॥

सहदेव बोले कि हे युधिष्ठर! मैं आप का छोटा भाई हूं मेरे कहे सुने को क्षमा करें, मैं जानता हूं कि द्रव्यों के त्यागने से सिद्धि नहीं होती, हां शरीर के द्रव्यों को त्यागने से सिद्धि अवश्य है, जो मनुष्य दो अक्षर में प्रेम करता है उस की सिद्धि नहीं जो तीन में करता है उस की सिद्धि है, अर्थात जो मेरा ".वा मेरी " कहता है उस की सिद्धि नहीं, परन्तु जो न मेरा " वा न मेरी " कहता है उस की सिद्धि है, जो राजा इन बातों को समझ कर राज्य करता है उस की सिद्धि है परन्तु जो सब पदार्थों को अपने सुख के लिये ही समझता है उस को दुःख प्राप्त होता है इस लिये आप राज्य को पाकर प्रजा का पालन करें, इसी में आप का कल्याण है वन में जाने से सर्वथा नहीं ॥

भाईयों के यह वचन सुन कर युधिष्ठर चुप हो गया। तब द्रौपदी बोली कि कुरुनन्दन! यह तुम्हारे भाई चातकों की भान्ति तुम्हारे मुख को देख रहे हैं, क्यों नहीं तुम अपने वचनों से इन को प्रसन्न करते, देखो तुम्हारे कारण कैसे बड़े २ योधा म्लान चित होरहे हैं तुम ने द्वैत वन में वात शीत के दुःख सहे और अपने को भाइयों कहा था कि शत्रु को मार कर संपूर्ण राज्य के सुखों को भोगेंगे, वह तुम्हारी प्रतिज्ञा क्या हुई ॥

तुमने सहस्रों योधाओं को मारा और हाथी घोड़ों को मार कर शत्रुओं का हनन किया, अब तुम को नाना प्रकार के यज्ञ करने चाहियें, ताकि तुम्हारे वन के दुःख सुखदाई हों, हे धर्मात्मन् अपनी प्रतिज्ञा का स्मरण करो क्यों इन के चित्तों को

उदास करते हो, नपुंसक पृथ्वी और धन को नहीं भोगते न उन के पुत्र उत्पन्न होते हैं, वैसे ही क्षत्रिय दण्ड के बिना तेज से हीन होजाता है ॥

हे राजन् ! तुम ने मांग कर अथवा यज्ञ के द्वारा पृथ्वी नहीं ली वरन प्रबल शत्रुओं को मार कर अपने भुज बल से जीती है, इस लिये तुम इस का निष्कण्टक राज्य भोगो, हे राजन ! तुम ने पूर्व पश्चिम के सब राजाओं को परास्त किया, तुमने शक द्वीप, क्रौंच द्वीप और भद्राश्व द्वीपों को जीता, तुम ने सागर से परदेशों को विजय किया और ब्राह्मणों से प्रशंसा पाई, आप के भाई सब पृथ्वी को जीतने के सामर्थ हैं, मेरी सास ने कहा था कि हे पांचाली ! युधिष्ठर सब राजाओं को मार कर तुम्हें सुख देगा, वह बचन निष्फल नहीं हो सकता परंतु आप के कारण निष्फल हुआ जाता है यदि यह आप के भाई सावधान हों तो आप को नपुंसकों के साथ बांध कर यह आप राज्य भोगें, इस प्रकार के उन्मत मार्ग पर चलने वालों की चिकित्सा करनी अवश्य है, याद रखो तुम स्त्री से भी निकृष्ट हो जाओगे ॥

हे राजन् ! मेरा बचन मानो, अपने सब भाईयों समेत पृथ्वी देवी का पालन करो और राज्य भोगो, ईश्वर पूजन करो और ब्राह्मणों को दान दो ॥

तब अर्जुन बोले कि हे राजन ! तुम दण्ड को धारण करो, दण्ड का इस संसार में प्रभाव है, स्त्रियें दण्ड के भय से सत्याचरण करती हैं, दुष्ट लोग दण्ड के भय से अपने कुकर्मों का

त्याग करते हैं, साधु, सन्यासी ब्राह्मण, तपस्वी सब लोग दण्ड के भय से अपने २ कर्मों में वर्तमान हैं, हे राजन्! यदि दण्ड न हो तो कन्या विवाह करना छोड़दें और संसार मर्य्यादा रहित हो जाये, इस लिये दण्ड धारण करने से भय करना योग्य नहीं, देखो इन्द्र वृत्रासुर को मार कर महेन्द्र बना, दण्ड के कारण रुद्र, इन्द्र, स्वामी कार्तिक, अग्नि, वरुण, यम, काल, मृत्यु, कुबेर आदि लोक में आदर पाते हैं, ब्रह्मा जी और पूषा आदि देवता को कोई नहीं पूजता। संसार की गति ही ऐसी है, देखो नयोला चूहों को खाता है, बिल्ला न्योले को खाता है, कुत्ता बिल्ले को और व्याघ्र आदि पशू कुत्ते को, यहां तक कि छोटी मछलियों को बड़ी मछलियां समुद्र में खाजाती हैं, मनुष्य कुआं लगाते, बावली खोदते और तालाब बनवाते हैं, इन कर्मों में अनेक प्रकार के जीवों का हनन होता है परंतु यदि न किया जाये तो मनुष्यों को सुख कैसे हो, इस लिये हे राजन्! दण्डधारण करने से सदैव पुण्य होता है, जीवों का हनन जो दंड के कारण होता है वह दोष युक्त नहीं॥

फिर भीमसेन बोले कि हे राजन्! आप के बड़े मोह से सब को संदेह होता है और विकल होकर निर्बलता होती है देखो व्याधि दो प्रकार की होती है एक देहिक दूसरी मानसिक परंतु उन की उत्पत्ति परस्पर होती है जो निर्द्वन्द होकर देह और मन को आत्मा से भिन्न मानता है वह इन से बचा रहता है, देह के रोगों से मन की व्याधि उत्पन होती है और उसी प्रकार मन

के रोगों से देह में रोग उत्पन्न होते हैं, जो पुरुष गत दुखों को शोचता है वह दुखों से दुखों को पाता है ॥

शरीर से तीन प्रकार के गुण होते हैं शीतता, उष्णता और वायुत्व तीनों गुणों की एकता को स्वस्थता कहते हैं, इन्हीं को वात, पित्त और कफ कहते हैं समता को निरोगता कहते हैं जब इन में कोई गुण अधिक हो तो चिकित्सा की जाती है, इसी प्रकार मन के तीन गुण हैं, सत्य, रज और तम, जब यह तीनों समान होते हैं तो मन की स्वस्थता होती है परंतु यदि कोई गुण अधिक हो तो मानसी व्यथा उत्पन्न होती है कोई भी ज्ञानी सुख को पाकर गत दुखों को स्मरण नहीं करता इस लिये आप शोक करने के योग्य नहीं यदि आप शोक करते हैं तो द्रौपदी के दुखों को स्मरण करो बन के दुखों को याद करो, जटासुर और जयद्रथ के दुखों को सोचो, फिर आप को राज्य की उन्मता का बोध होगा इस लिये यदि पापी दुर्योधन देव इच्छा से मारा गया तो इस में क्या दोष है आप अश्वमेध यज्ञ करें और ईश्वर की अराधना करें ॥

पांचवां अध्याय

—:o:—

चरवेक के मुख से महाभारत के युद्ध का वृत्तान्त ॥

राजा युधिष्ठर को इस प्रकार उसके भाईयों ने और श्री मति महारानी द्रौपदी और माता कुन्ति ने बहुत ही समझाया और युद्ध विजय पर आशीर्वाद करने के लिये बहुत से सेठ साहूकार और ऋषि महर्षि व्यास और नारद आदि दूर २ स्थानों से आये। राजा युधिष्ठर ने सब का विधि पूर्वक आदर किया और बैठने को उत्तम २ आसन दिये, किसी ने राजा के भाईयों भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव की बीरता की प्रशंसा की, किसी ने भीष्मपितामह, द्रोणाचार्य, कर्ण और शल्य को विजय करने मे अहोभाग्य कहा, परन्तु राजा युधिष्ठर ने सारी सभा में भगवान कृष्ण चन्द्र की प्रशंसा करने के अतिरिक्त कुच्छ न कहा और जब कहा यही कहा कि यदि श्री कृष्ण चन्द्र न होते तो हमारी विजय कभी न होती। किस की सामर्थ्य थी कि भीष्म पितामह और द्रोणाचार्य जैसे दल तोड़ने वाले शूर वीरों को रण में जीत सकता, माना कि मेरे भाई युद्ध में पूर्ण बल रखते हैं परन्तु कौरवों के इस भयंकर युद्ध में बड़े २ शूर वीरों को मारना श्री कृष्ण के बिना और किसी का काम न था॥

यह सुन कर सब भाई बहुत क्रोध युक्त होकर आपस में कहने लगे कि हम ने तो युद्ध में प्रहार सहे, चोटें उठाई बड़े २ कठिन कार्य किये, देवताओं से अस्त्र लिये, भीष्म और द्रोण जैसे शूर वीरों से सामना करने पर भी रण से मूहं न मोड़ा और बिना मारे किसी का पीछा न छोड़ा। परन्तु शोक है कि हमारे भाई राजा युधिष्ठर हमारी प्रशंसा नहीं करते

इस से हमारी निन्दा होती है। यह एक शब्द भी हमारी वीरता की प्रशंसा में नहीं कहते। जब देखो श्रीकृष्ण जी को ही सराहते हैं इन्हीं को सब योधाओं में वीर बतलाते हैं, उन्हीं का यश गाते हैं, इन्हीं की सहायता से विजय हुई, मानों कि हम सब ने कुछ किया ही नहीं। हमारे तो प्राण भी न रहे, परन्तु यहां किसी को परवाह ही नहीं। कैसा शोक है! भ्राता जी को क्या हो गया॥

जब श्रीकृष्ण ने राजा युधिष्ठर के भाईयों को यह बातें करते सुना, और ऊर्ध्वश्वास लेते देखा तो समझ गये कि बात क्या है, यह हमारी स्तुति को सुनना पसन्द नहीं करते। आप ने राजा युधिष्ठर को समझाया कि भाईयों का अपमान करना ठीक नहीं। इन की वीरता और कठिन कर्मों की अवश्य प्रशंसा करो॥

युधिष्ठर बोले कि आप का कहना युक्त है। परन्तु यह तो बताईये कि मैं किस २ की श्लाघा करूं? यह सब लोग अपनी बड़ाई आप ही करते हैं और अपने गुणों की प्रशंसा करते हैं, अर्जुन अपने शौर्य और वीरता को देवताओं से बढ़ कर बताता है और कहता है कि मैंने बड़े २ योधाओं को मारा है, भीम को घमण्ड है कि मैंने दुर्योधन और इस के सौ भाईयों और लाखों शूरवीरों को मार कर यम लोक में पहुंचाया है, मेरे ही कारण से विजय प्राप्त हुई, मैं कहता हूं कि मैं ने ही शल्य जैसे शूर वीर को मार कर सहस्रों वीरों को भूमि पर सुलाया, जिस से विजय प्राप्त हुई, फिर यह निश्चय

क्यों कर हो सके ॥

श्रीकृष्ण जी बोले कि निश्चिन्त आपके भाईयों से शूरता कर यह कठिन कार्य हो सके जिन की कि बराबरी नहीं हो सकती है, यह कह कर श्रीकृष्ण जी बोले कि अच्छा चलो राजा बरबरेक से इन सब शूरों के कठिन कार्यों का वर्णन सुनो ॥

राजा युधिष्ठर श्रीकृष्ण और अपने भाईयों समेत एक बेरी के वृक्ष के नीचे आये जो कुरुक्षेत्र की युद्ध भूमि में स्थित थी उस पर एक सिर लटका हुआ था, यह शिर राजा बरबरेक का था जो बड़ा शूरवीर था, श्रीकृष्ण ने उस शिर से पूछा कि हे राजन्! यह अपने महाभारत का युद्ध देखा है तो बताइये कि किस शूर वीर ने क्या रूपा किया है ॥

शिर ने उत्तर दिया कि हां मैंने ठीक २ युद्ध की घटनायें देखी हैं मैंने सारा युद्ध अपनी आखों से देखा है, जो कुछ मैंने देखा है वह यह है कि आप का सुदर्शन चक्र एक ही प्रहार से सब का शिर काटता हुआ चला जाता था और महारानी द्रौपदी योगिनी बन कर खप्पर हाथ में लिये सब का रुधिर पी रही थी, राजा भगदत्त ने युद्ध में अपूर्व बल दिखाया अर्जुन के तीरों से उस के हाथी के दो टुकड़े होगये, परन्तु भगदत्त ने अपने जानुओं से घायल हाथी को ऐसा दबाया कि चिरकाल तक उसी हाथी पर लड़ता रहा और हाथी जीता रहा, तब अर्जुन के बाणों से राजा भगदत्त मर गया तो इस

का घायल हाथी भी गिर पड़ा और रुधिर से आच्छादित हुआ। द्रौपदी ने एक विन्दु रुधिर भी पृथ्वी पर गिरने न दिया और सब चाट गई, सार यह कि आप के ही सुदर्शन चक्र ने सारी सेना का हनन किया, मैं आप ही की प्रशंसा कर सकता हूं ॥

जब राजा के कटे हुये शिर ने यह वृत्तान्त सुनाया तो अर्जुन भीम आदि श्री कृष्ण जी के पाओं पर गिर पड़े, राजा युधिष्ठर और सब ऋषियों ने श्री कृष्ण जी पर फूल बरसाये तब श्री कृष्ण जी ने उस शिर को तीन वाणों समेत भूमि पर गिराया कल्प वृक्ष की पत्ति को जो उस के मुंह में रखी हुई थी निकाला, शिर चुप हो गया तब उस को आग जला कर भस्म कर दिया ॥

छटा अध्याय

—:०:—

राजा बरबरेक का वृत्तान्त ॥

जनमेजय ने पूछा कि हे वैशंपायन जी। यह कटा हुआ शिर किस राजा का था, और तीन तीरों से इस को बैरी के वृक्ष पर किस ने रख दिया था कृपा करके सारा वृत्तान्त सुनाइये ॥

वैशम्पायण जी ने उत्तर दिया कि इस राजा का नाम बरबरेक था जो बंग देश का राजा था, जब इस ने यहां भारत के युद्ध का परारम्भ सुना तो यह भी इस अपूर्व युद्ध को देखने

के लिये केवल तीन वाण और थोड़ी सी सेना लेकर आया इस की अवस्था केवल चौदह पंद्रह वर्ष की थी परन्तु उस को वर दान था कि वह अपने दो ही तीरों से लाखों और करोड़ों मनुष्यों को विजय करेगा। सार यह कि उसके बराबर कोई शूरवीर सारी पृथ्वी भर में न था जब यह राजा कुरु क्षेत्र में पहुंचा तो श्रीकृष्ण जी महाराज ने उस का यह हाल जान कर विचार किया कि यदि यह राजा कौरवों का सहायक हो गया तो फिर उन को विजय करना बहुत कठिन क्या असंभव हो जायगा, इस लिये आप युधिष्ठर की सहायता के निमित्त ब्राह्मण का रूप बना कर उस के पास पहुंचे॥

तब श्रीकृष्ण ने बरबरेक से पूछा कि आप कौन हैं, कहां से आये हैं और यहां आने का क्या कारण है? बरबरेक ने प्रणाम किया और उत्तर दिया कि मैं ने दूरदेशों से कौरवों और पाण्डवों के युद्ध का समाचार सुना है उसको देखने की मेरी बड़ी भारी उत्कण्ठा है क्योंकि उन के कठिन कार्यों की प्रसिद्धि सारे भूगोल में विख्यात है॥

श्रीकृष्ण ने पूछा कि महाराज आप किसकी ओर होंगे? राजा ने उत्तर दिया जो कि कोई न्यून प्रतीत होगा॥

श्रीकृष्ण—महाराज आप के पास केवल तीन ही तीर हैं, और अत्यन्त थोड़ी सेना है फिर आप सहायता क्या दे सकेंगे?

राजा—आप का कहना ठीक है, परन्तु इन्हीं तीरों की सहायता से मैं लाखों और करोड़ों वीरों को विजय कर सक्ता हूं। मेरा एक तीर उस स्थान को चिन्हित करेगा जहां जिस

की मृत्यु होगी, दूसरा बाण उसी लक्ष्य को भेदन करेगा, बस दोनों तीर अपना अपना काम करेंगे और सब को मृत्यु वश करगे, इन दोनों ही तीरों से मैं सबको जीत लूंगा। तीसरा तीर तो केवल इस निमित्त लिया है कि कदाचित् इस की भी अवश्यकता पड़ जाय। मेरा विचार है कि यह केवल वृथा है॥

श्रीकृष्ण—महाराज अभी आप बालक हैं, आप की आयु बहुत थोड़ी है, परन्तु आप में ऐसे ऐसे गुण हैं कि देवताओं को भी कठिनता से प्राप्त होने योग्य हैं, परन्तु जब तक परीक्षा न हो तब तक यह बात कैसे मानी जाये॥

राजा—अच्छा यदि आप परीक्षा चाहें, तो लीजिये। राजा बरबरेक ने थोड़ा सा सिंदूर लिया, और तीरों के पर्वों पर लगाया, तब बाण को धनुष पर चढा कर यूंही छोड़ा कि उन तीरों से सब के शरीरों पर मृत्यु का चिन्ह हो गया और बाण फिर तूणीर में आकर ऐसा समा गिया जैसे सर्प अपनी बिल में घुस जाता है, जब श्रीकृष्ण ने अपने शरीर को देखा तो कहीं मृत्यु का चिन्ह न पाया, परन्तु दायें पाओं के तलवे पर सिंदूर का चिन्ह दिखाई दिया॥

श्रीकृष्ण—हे राजन्! आप धन्य हो, आपने बड़ा आश्चर्य युक्त कर्म किया है, यह वीरता इन्द्र में भी दिखाई नहीं देती। यदि आप में ऐसा अपूर्व बल है तो अवश्य है कि आप ज्ञानी भी बहुत होंगे, आप के समान कोई दूसरा पुरुष नहीं है॥

राजा— हे महाराज! मांगने वाला जो कुछ मुझ से मांगे, मैं उसको अवश्य दूंगा ॥

श्रीकृष्ण—आप महादानी हैं, मुझ को भी भिक्षा दीजिये और यश की प्राप्ति कीजिये ॥

राजा—कहिये आप क्या मांगते हैं ॥

श्रीकृष्ण—महाराज आप का शिर लेने की आशा है ॥

राजा—शोक ऐसा धोका, युद्ध को देखने की इच्छा थी, परन्तु तुम शिर मांगते हो, अब तो वचन दे दिया, अच्छा अपना नाम तो बताईये ॥

श्रीकृष्ण—महाराज! मेरा नाम कृष्ण है ॥

राजा—अहा, आप ही श्रीकृष्ण हैं मुझे क्षमा करें मैंने आप को पहिचाना नहीं था। मैं आप को प्रणाम करता हूं, आप निस्सन्देह मेरा शिर ले सक्ते हैं, सुदर्शन चक्र चलाईये और मेरा शिर काट लीजिये ॥

श्री कृष्ण—आप युद्ध को अवश्य देखेंगे। तब श्री कृष्ण ने सुदर्शन चक्र से उस का शिर काटा और उन्हीं तीरों पर रख कर रस्सी से बांधा और बांध कर बेरी वृक्ष पर लटका दिया और मुंह में कल्प वृक्ष की पत्ती रख दी और कहने लगे कि यहां पर बैठे हुये आप महाभारत का सारा युद्ध देखेंगे यह युद्ध अठारह दिन तक रहेगा, समाप्त होने पर सब वृत्तान्त आप से पूछूंगा ॥

वैशम्पायन बोले कि हे राजा जन्मेजय! वह शिर राजा बरबरीक का था ॥

सातवां अध्याय

—:o:—

गृहस्थाश्रम का धर्म, व्यास जी का उपदेश ॥

जब श्री कृष्ण जी बलदेव का अन्त्येष्टि कर्म कर चुके तो पाण्डवों और ऋषियों को साथ लिये हुये अपने स्थान पर आये, इतने में व्यास जी भी आगये श्री कृष्ण ने प्रतिष्ठा पूर्वक उन को आसन पर बिठाया और विधिवत पूजा की, राजा युधिष्ठिर को उदास देख कर व्यास जी कहने लगे, कि हे राजा। अपने भाई बंधुओं और सम्बंधियों के मारे जाने पर इतना शोक क्यों करते हो ? तुम ने बनवास में अनेक प्रकार के कष्ट पाये हैं अब वह दुख का समय आपका दूर हो चुका है। आप को सुख की प्राप्ति होगी ॥

राजा युधिष्ठिर ने कहा कि हे राज आप सत्य कहते हैं परंतु तौ भी मेरा मन राज्यसिंहासन पर पाओं रखने को नहीं चाहता मैं चाहता हूं कि आप के मुखार विंद से धर्म का उपदेश सुनूं, व्यास जी बोले कि हे राजन! आप के भाईबंधु जो युद्ध में मारे गये हैं, उन की आयु का अंत समय आपहुंचा था आप के हाथ से उन्हों ने मुक्ति पाई है, अर्जुन, भीम, नकुल और सहदेव के हाथ से जो शूर बीर मारे गये सब का काल आपहुंचा था। आप के हाथ से मरने का तो केवल बहाना ही हुआ दैव ने ऐसा ही रचा था कि तुम्हारे हाथ से ही उन की मृत्यु होगी सो वही हुआ, इस के अतिरिक्त दुर्योधन की अज्ञानता से यह युद्ध आप का बलात्कार करना पड़ा तुम्हारा

अभिप्राय यह नहीं था कि युद्ध हो, तुम्हारा कोई दोष नहीं इस लिये अब तुम अपने भाईयों को धर्य्य दो और राज्य सिंहासन पर बैठो इस युद्ध में जिस २ देश के राजे मारे गये उन २ का राज्य अपने राजा भाईयों को दो और उन का राज्य तिलक अपने हाथ से करवा कर अश्वमेध यज्ञ करके चक्रवर्ति राजा बनो ॥

देखो जो कोई इस संसार में उत्पन्न हुआ है वह एक दिन अवश्य नाश होगा श्री रामचंद्र जी ने महाप्रतापी परब्रह्म का अवतार लेकर भी संसार का त्याग नहीं किया उन्हों ने ग्यारह सहस्र वर्ष तक चक्र वर्ति राज्य किया वह भी आयु को विता कर वैकुण्ठ वासी हुए और अयोध्या वासियों को लेकर स्वर्ग में चल गये जब राजा जनक जैसे ज्ञानी, राजा सगर, राजा भरत और राजा भगीरथ आदि जिन्हों ने बड़े २ यज्ञ कर डाले इस संसार में नहीं रहे और समय के बीत जाने पर अधिक काल नहीं ठहिर सके तो और किसी का क्या समर्थ है, यहां पर न कोई कभी ठहिरा है और न ही अब भी ठहरेगा यदि आप को विधवाओं के दुखी और आरत शब्दों से पीड़ा होती है तो उन को समझाओ और कहो कि बिना शान्ति किये कुच्छ चारा नहीं, वह एक दिन इस संसार को त्याग करेंगी, जो रानियां विधवा हो चुकी हैं इन के बाल बच्चों को पालो और उन के कंवारे बेटे बेटियों के विवाह करो, अब तुम्हारे अतिरिक्त उनका कोई मित्र और संरक्षक नहीं है ॥

युधिष्ठिर ने पूछा कि महाराज मुझे किन २ पाप कर्मों का प्रायश्चित करना अवश्यक है, व्यास जी बोले कि जो मनुष्य अपने धर्म का विरोधी और कपटी है, जो सन्ध्या और तर्पण छोड़ देता है, जो सन्यासी हो कर सूर्योदय और सूर्यास्त के समय पर सोता रहता है, जो अपने बड़े भाई से पहिले अपना विवाह कर लेता है, जो अपनी बड़ी बहिन से पहिले अपनी छोटी बहिन को व्याह देता है, जो अपने व्रत का तोड़ता, जो कुलीन और विद्वान ब्राह्मण को छोड़ कर अनपढ़ ब्राह्मण को दान देता है, जो विष खिलाता है, जो धन लेकर वेदों को पढ़ाता है, जो गुरु की स्त्री को मार डालता है, जो पशु पक्षियों का अकारण हनन करता है, जो अग्नि को प्रदीप्त करे जो गुरु की निन्दा करे और झूठ बोले, यह सब पापात्मा नरक गामी होते हैं जो मनुष्य अपने कर्मों को छोड़ कर दूसरे के कर्म करने लगे, जो विद्या हीन ब्राह्मण से यज्ञ करावे, जो अपने शरणागत की रक्षा न करे, जो अपने सेवकों की खबर न रखता हो, जो गुड़ और रसों को बेचता हो, जो सदैव गौ ग्रास न रखता हो, जो कुल घातक हो, जो प्रण कर के फिर दान न दे, जो ब्राह्मण का धन हर ले अथवा बाप बेटे में द्वेष करवावे, जो गुरु की स्त्री से संभोग करे अथवा अपनी ऋतु-स्नाता स्त्री का त्याग करे, वह पापी होकर नरक गामी होता है ॥

आठवां अध्याय

—:०:—

व्यास जी का प्रायश्चित्त विधि का वर्णन ॥

व्यास जी बोले कि हे राजन्! अब उन दोषों का नाम सुनो जिन के लिये प्रायश्चित करना आवश्य है और जो प्रायश्चित से दूर होते हैं, यदि कोई वेदज्ञ ब्राह्मण किसी के मारने के लिये शस्त्र उठाये, तो उस ब्राह्मण का मारना ही अवश्य है ऐसा करने में ब्रह्महत्या नहीं व्यापती, जो ब्राह्मण गुरु सेवा से चित मोड़े उस को मारना भी उचित है, यदि झूठ बोलने से किसी के प्राण बच जायें, तो उस झूठ का पाप नहीं होता वरन वह झूठ भी पुण्य ही होजाता है, स्त्रियों और विवाह के सम्बंध में झूठ बोलने का कोई दोष नहीं, बड़ा भाई सन्यास ले और छोटा विवाह करे, तो कोई दोष नहीं यदि अज्ञानता से कोई पाप किया जाये, तो आगे को सावधानी करने से उस पाप का दोष पीड़ा नहीं देता ॥

देवस्थानों पर गायत्री का जाप करने से गत पापों से छूट जाता है, प्रति दिन दान पुण्य करने वाला सब दुःखों से छूट जाता है, छूत छात रखना अवश्यक है, मनु जी ने ऋषियों को आज्ञा दी है कि सदैव विष्णु और शिवजी के देवालयों पर भोजन करें, वेद पढ़ने वाले सदैव पवित्रात्मा होते हैं, परन्तु गंगादिक तीर्थों पर स्नान करना, तप करना हिंसा का परित्याग करना, सच बोलना, क्रोध रोकना, यज्ञ

करना इत्यादि धर्म के अंग हैं, जो लोग देव पूजन करते हैं, वह पिछले पापों का प्रायश्चित करते हैं, मनकी कामनाओं, क्रोध, लोभ और मोह को रोकने से, देव पूजन से शुद्धि हो रही है, जिस प्रकार रोग औषधी से दूर होता है उसी प्राकार मन्त्र, जप और तीर्थ यात्रा पापों को दूर करते हैं ॥

यदि राजा अन्याय करे तो उस को एक दिन व्रत करना अवश्यक है, पुत्र अथवा कोई अन्य सम्बन्धि शस्त्र से न मरे तो दिन दो तीन दिन व्रत रखना चाहिये, श्रुति धर्म और जाति मर्यादा को तोड़ना भी पाप कर्म है, मछली, कछुये, मेडिक, गिद्ध, उल्लूक, गोह, और श्यन जैसे मांसाहारी पक्षियों को खाना, चार डाढ के चौपाये अर्थात् भेड़ी, बकरी, घोड़ी, गधी और ऊंटनी का दूध पीना भी उचित नहीं, जो भोजन किसी की मृत्यु पर पकाया जाये उसको खाना उचित नहीं, बछड़ा दश दिन का हो जाये, तो गाय का दूध पीना उचित है, शूद्र और वैश्या का भोजन पाप का मूल है, कुसीद लेने वाले का अन्न शुद्ध नहीं होता, चमार, धोबी, बढ़ई, दुष्टा स्त्री, विधवा, वैद्य, चौकीदार, भाट, धुरकर्मी, और व्यभिचारि पुरुष को हाथ के अन्न खाना ठीक नहीं ॥

जो लड़के वालों को खिलाये बिना आप खाये वह पापी है गृहस्थों को उचित है कि पहिले देवताओं को भोग लगावें ऋषियों, पितरों और सब घर वालों को खिलालें, और जो शेष बचे उस को आप खालें, अपनी भार्या के होते हुये दूसरी स्त्री में मन लगाने वाला पापी है, जो ईश्वर के निमित्त दान

करते हैं परन्तु अपने मित्रों की सहायता नहीं करते, उन का दान पुण्य निष्फल होता है, दान वही है जो शुद्ध मन से किया जाये न भय से हो और न ही लोगों में यश प्राप्ति के लिये किया जाये, बुरे पुरुषों की संगति पाप का मूल है, गूंगे और अपाहजों को दान देना उचित है, यदि ब्राह्मण वेद पाठी न हो तो दान लेने के योग्य नहीं ऐसे ब्राह्मण काठ का हाथी या चमड़े का मृग समझना चाहिये ऐसों को जो दान देता है वह आप भी मूर्ख है अज्ञानी ब्राह्मण को अन्धा कुंआ समझना चाहिये, जिस का पेट कूड़े कर्कट से भरना उचित है ॥

यह बातें सुन कर युधिष्ठिर प्रसन्न हुये और कहने लगे कि हे महाराज! चारों वर्णों के धर्मों का वर्णन मुझ से कीजिये व्यास जी बोले कि हे राजा! भीष्म पितामह जी आप के इस अभिप्राय को पूरा करेंगे, वह गंगा जी के पुत्र हैं और इन्द्र आदिक देवताओं से उन का सम्बन्ध रहा है, नीति में वह बृहस्पति जी और शुक्र के समान हैं, वेदों की उन्हों ने ब्रह्मा जी से शिक्षा पाई है, सन्यास धर्म उन्हों ने मारकण्डेय जी से और शस्त्र विद्या राजा इन्द्र से प्राप्त की है, देवता तक उन के गुणों की प्रशंसा करते हैं, मृत्यु उन के वश में है, वृद्ध ऋषि उन के पास आते जाते हैं, उन्हों ने सौ अश्वमेध यज्ञ किये हैं, ज्ञान के सब विषयों को अच्छी प्रकार समझते हैं, उन की कहां तक प्रशंसा की जाय, हम और आप लोग उन के सामने बच्चों के समान हैं, इस लिये यदि उन से पूछो तो आप को वह

बातें बतायें, जिन का विचार हम को कभी स्वप्न में भी न आया हो ॥

नवां अध्याय

—:०:—

राजा युधिष्ठर के राज सिंहासन पर बैठने की तैयारी ॥

जब व्यास जी यह उपदेश कर चुके तो युधिष्ठर बड़े प्रसन्न हुये तब श्री कृष्ण बोले कि हे राजन्! अब तुम शोक को छोड़ दो और श्रीयुत व्यास जी के वचनों को मानो, राजा युधिष्ठर प्रसन्नता पूर्वक उठे और दुःख और शोक के विचारों से चित्त को शुद्ध करके श्री कृष्ण जी के कथनानुसार राजधानी हस्तना पुर की ओर चले, बहुत से राजा महाराजा साथ हुये, महाराज धृतराष्ट्र को आगे करके युधिष्ठर ने सब नगर में भ्रमन किया ब्राह्मणों को दान दिया, दरिद्रियों को भोजन कराया फिर सोलह बैलों के रथ पर बैठ कर बड़े ठाठ बाठ से नगर को अवलोकिन किया, भीमसेन सारथी बने, अर्जुन ने छत्र लिया, नकुल और सहदेव भी चमरी हाथ मे ले कर रथ के पीछे खड़े हुये ॥

उस समय बड़ा गौर्व का दृश्य था, धृतराष्ट्र और महारानी गांधारी पालकियों पर स्वार थे आगे पीछे योधा और वीर क्षत्रिय पंक्ति बांधे जाते थे बाजे गाजे का बड़ा सामान था।

शंखो की ध्वनी से सब पृथ्वी शब्दायमान हो रही थी, सब लोग विजय के शब्द कहते हुये अपने मन के उत्साह को प्रकट करते थे, सोने चांदी की वर्षा चारों ओर हो रही थी, प्रत्येक नगर वासी युधिष्ठर के राजा होने पर आनंदत होता था, और कहता था कि महाराज युधिष्ठर की जय हो ॥

नगर वासियों ने अपने घरों और दुकानों को भलि प्रकार सजाया, फूलों के हार और झंडियां सब स्थानों में गाड़ी गईं, चन्दन, अगर और अन्य सुगंधित पदार्थों का सब स्थानों में प्रयोग किया गया। छत्र, कलश और पताका सब स्थानों पर स्थापन किये गये। बड़े २ आकाश स्पर्शि फाटक बनाये गये, नगर की कन्यायें उत्तम २ वस्त्र और भूषण पहिन कर गलियों में आनन्द दायक गीत गाती फिरती थीं, प्रत्येक घर में बधाई बजती थी और नाना प्रकार के गायन मनोहर ध्वनि से मन को प्रसन्न करते थे ॥

सड़कों पर तमाशा देखने वालों का बड़ा मेला था, स्त्रियें अपने २ घरों की छतों पर महाराजाधिराज पर फूल बरसाने के लिये बैठी थीं, जब युधिष्ठर की स्वारी नीचे से निकली तब सब स्त्रियों ने पांचों भाईयों पर आरती उतारी, द्रौपदी के पाओं छुये, आशीष दी और प्रशंसा पूर्वक कहने लगीं ॥

हे महारानी ! आप के समान भाग्यवान कौन है, महार्षियों में गौतमी जी और पाण्डवों के रनिवास में आप की जो प्रतिष्ठा है, वह किसी और की नहीं हो सक्ती ॥

इतन में राज कीयसवारी बड़ी भीड़ भाड़ के साथ राज भवन के निकट आई। रानों और महाराजों ने जय कारे बुलाये और स्तुति करने लगे॥

हे सब राजाओं के महाराज धर्ममूर्ति राज शिरोमणि! आप को राज्य, श्री और ऐश्वर्य मंगल दायक हों। ईश्वर का कोटानुकोट धन्यवाद है कि आज फिर हस्तिनापुर के भाग्य उदय हुये, सहस्रों वर्षों तक यह राज छत्र आप को शुभ हो। आप की राजधानी अमरावती से बढ़ चढ़ कर हो॥

ऋषियों, महर्षियों और चारों वर्णों ने भी इसी प्रकार आशीर्वाद दिये। राजा युधिष्ठर वन्दि गणों और मागधों से पूजित हो कर राज भवन में प्रविष्ट हुये और कुल के देवताओं की पूजा की। बहुत सा सोना और धन ब्राह्मणों में दान दिया, भोजन, वस्त्र, गौ, घोड़े दान से सब याचक प्रसन्न हुये। सामवेद गायण और मधुर ध्वनि वादित्रों से पूर्णानन्द के शब्द पृथ्वी और आकाश को शब्दायमान करने लगा। जिधर देखो आनंद ही आनन्द दिखाई दता था॥

दसवां अध्याय

—:०:—

युधिष्ठर के राजतिलक का उत्सव॥

राजा युधिष्ठर सब ब्राह्मणों को यथा काल दान से सन्तुष्ट कर के राज भवन में प्रविष्ट हुये। सब भाई आप के साथ थे। तब श्री कृष्ण जी बोले॥

हे राजन्! ब्राह्मण लोग पृथ्वी पर घूमने वाले देवता हैं जो आशीर्वाद भी कहते हैं और शाप भी देते हैं इन के वचनों में विष और अमृत दोनों हैं। सतयुग के समय में चार वाक राक्षस ने बदरिका आश्रम में चिरकाल तक तपस्या की और ब्रह्मा जी को प्रसन्न कर के वर मांगा कि मुझ को किसी से भय न हो। ब्रह्मा जी बोले कि ब्राह्मण के अतिरिक्त तुम को किसी से भय न होगा। ऐसा वर पाकर वह राक्षस देवताओं को दुःख देने लगा। तब तो देवता ब्रह्मा जी के पास गये और कहने लगे कि हे महाराज यह! राक्षस किस प्रकार मारा जाये ताकि हम सब का दुःख निवृत्त हो॥

ब्रह्मा जी बोले कि अब इस को मरा ही समझो। यह राक्षस दुर्योधन का मित्र होगा और ब्राह्मणों की निन्दा करने से आप ही मारा जायगा। घबराओ नहीं, सार यह कि वह राक्षस शीघ्र ही मारा गया। युधिष्ठर सुन कर बड़े प्रसन्न हुये भाईयों ने राजतिलक की सामग्री एकत्र की, युधिष्ठर सब से पूजित हो कर स्वर्णासन पर विराजमान हुये, उसी सिंहासन पर एक ओर श्री जनारदन जी बैठे, साथ ही सात्यकी भी विराजमान हुये॥

भीम सेन और अर्जुन अपने २ आसनों पर बैठे, कुन्ति,नकुल और सहदेव को साथ ले कर हाथी दान्त के एक सिंहासन पर बैठी, धौम्य ऋषि विदुर जी और धृतराष्ट्र अपने २ आसनों पर बैठे, सभा भवन उत्तम २ वस्त्रों, फूलों के हारों और सजावट की अन्य वस्तुओं से बहुत शोभायमान न हुआ,

सोने के कलश गंगा जल से भरे हुये हाथों में ले कर जय कारे बुलाते हुये ब्राह्मण लोग चारों ओर खड़े हुये वेदि रची गई ॥

तब धर्म राज युधिष्ठर और महारानी द्रौपदी श्रीकृष्ण भगवान की आज्ञा से वेदी पर बैठे, वेद मन्त्रों के उच्चारण और स्वस्ति वाचन से राज मन्दिर शब्दायमान होने लगा तब श्रीकृष्ण ने पांच जन्य शंख को ध्माया और धर्मराज का राज तिलक किया, धौम्य ऋषि और अन्य ब्रह्म ऋषियों ने भी राजा को तिलक दे कर भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव को भी तिलक लगाया चारों ओर से जयकारों के शब्द उठे और सब ने पांडवों को शुभ वचन कहे, फूलों की वर्षा होने लगी ॥

तब युधिष्ठर ने श्रीकृष्ण जी और धौम्य ऋषि की आज्ञा पा कर ब्राह्मणों को बहुत सा धन दिया, फिर धृतराष्ट्र के पुत्र युयुत्सु को बहुत सा उत्तम परितोषक दिये, जरासन्ध के पुत्र सुखदेव जी विदुर और संजय को भी नाना प्रकार के उत्तम पदार्थ दिये ॥

श्रीकृष्ण जी को सहस्त्रों घोड़े और रथादि भेंट दिये, राजाओं को यथापद बहुत सी भेंट पूजा दी, सेवकों, दासों और निर्धनों को बहुत सा धन दिया, परन्तु व्यास जी ने केवल एक माणि ग्रहण की, इस प्रकार यह उत्सव समाप्त हुआ सब लोग राजा की प्रशंसा करते थे, ब्राह्मण आशीर्वाद के वचन कह कर अपने अपने घरों को सिधारे, घरों में आनन्द उत्सव होने लगे, गाने बजाने की धूम मची, [illegible]

में दीप माला हुई, नृत्य हुई, मंगलोत्सव हुये और पुरवासियों के आनन्द की सीमा न रही ॥

ग्यारहवां अध्याय

—:०:—

भीम सेन का युवराज पद ॥

तब युधिष्ठर ने हाथ जोड़ कर सब ब्राह्मणों से कहा कि हे महाराज ! आप लोगों की ही कृपा से मुझ को राज्य मिला है, और मेरी मनों कामना पूरी हुई है, फिर बड़ी लज्जा से धृतराष्ट्र को कहने लगा कि आप मेरे पिता रूप हैं, आप ही की आज्ञा से मैं ने राज्य पाया है, आप की जो आज्ञा हो मैं उस का पालन करूंगा, मैं वही आप का पुत्र हूं जिस को आप ने पालन पोषण करके और अपनी गोद में खिला कर बड़ा किया है, मैं सदैव आप की आज्ञा में वर्तमान हूं, जो आज्ञा हो उस को पूरा करके कृतकृत्य होना चाहता हूं ॥

यह सुन कर राजा धृतराष्ट्र की आखों में आंसू भर आये और कहने लगे कि हे पुत्र ! तुम चिरंजीव हो, तुम्हारे बिना मेरा कौन है, तुम ने मेरी बहुत सेवा की है। ईश्वर तुम को चिरंजीव रक्खे, तुम कुरुवंश के यश और कीर्ति हो ॥

यह सुन कर युधिष्ठर सब सभ सदों से कहने लगे कि महाराज धृतराष्ट्र हम सब के शिरोमणि हमारी कुल से बढ़ कर मान के योग्य हैं, तब सब लोग अपने २ घरों को

गये, युधिष्ठर ने आज्ञा दी कि आज सब नगर को सजाया जाये आज भीमसेन को युवराज पदवी दी जायगी। संजय कोशाध्यक्ष नियत हुये और विदुर जी मुख्य मन्त्रि के पद पर स्थापन किये गये, नकुल को सेना के विभाग करने और उन के मासिक वेतनादि के देने लेने के पद का अधिकार मिला, अर्जुन सेनानिपद पर नियत हुआ सार यह कि जो काम जिस के योग्य था वह उसी के लिये नियत किया गया, धौम्य ऋषि जो सब ब्राह्मणों में उत्तम गिने जाते थे और जिन का गोत्र सब ब्राह्मणों से उत्तम समझा जाता था देव पूजा के लिये चुने गये, सहदेव कोतवाल बना, विदुर जी और युयुत्सु को आज्ञा मिली कि महाराज धृतराष्ट्र की आज्ञा के विरुद्ध कोई काम न किया जाय और इन्हीं की आज्ञा मानी जाये ॥

तब राजा युधिष्ठर ने युद्ध में मरे हुये सब क्षत्रियों के श्राद्ध किये और उन के निमित बहुत से गोदान ब्राह्मणों को दिये। फिर कर्ण, धृष्टद्युम्न, अभिमन्यु, घटोत्कच, राजा विराट, शल्य, द्रुपद और द्रौपदी के पित्रों के श्राद्ध भी आप ही किये, लाखों राजों के नाम पर जो युद्ध में मारे गये थे और जिन का नाम लेवा कोई भी न रहा था, आप श्राद्ध किये और बावली, कुयें, तालाब आदि लगवाये, सब मरे हुये सम्बन्धियों के नाम पर धर्मशाला बनवाईं ॥

धृतराष्ट्र ने अपने पुत्रों का श्राद्ध आप किया, अन्धों और बहिरों के मासिक नियत कर दिये, इस प्रकार राजा युधिष्ठर सुख पूर्वक राज्य पाकर चक्रवर्ति राजा हो गये ॥

बारहवां अध्याय

—:०:—

श्रीकृष्ण भगवान की स्तुति, राज भवनों को वांटना ॥

राजा युधिष्ठर ने मृतकों का श्राद्ध तर्पण कर के श्री कृष्ण की बहुत स्तुति की और कहा कि हे भगवन ! आपके ही अनुग्रह से यह राज्य हम को प्राप्त हुआ, मैं आप को प्रणाम करता हूं, हे दीनानाथ, पुरषोत्तम, हे नारायण, हे हरी हे विष्णु रूप भगवान ! आप की माया का कुच्छ पार नहीं, मैं आप के चरण कमलों को नमस्कार करता हूं ब्रह्मा विष्णु और महेश सब आप के ही रूप हैं, आप सगुण रूप होकर दुष्टों की ताड़ना करते हैं, आप का विराट रूप चिन्ता में भी नहीं आसक्ता आप ही विष्णु रूप से जगत को उत्पन्न करते हैं और शिवरूप से फिर उस का संहार करते हैं, हे यदुपति! आप को वारम्वार नमस्कार है ॥

तब श्रीकृष्ण ने युधिष्ठर से आज्ञा मांगी और अपने घर को चल पड़े उन को भेज कर युधिष्ठर ने भाइयों से कहा कि हे वीरो ! आपने युद्ध भूमि में बहुत से प्रशंसनीय और वीरत के काम किये हैं मेरी जिह्वा उन की प्रशंसा करने की सामर्थ नहीं रखती । इतने वीर योधाओं से युद्ध कोई छोटी सी बात न थी, इस के अतिरिक्त वन वास के समय में भी आप ने

बहुत उत्तम २ काम किये हैं। परन्तु अब दुःख का काल हो चुका, अब आनन्द मंगलाचार का समय है जाओ सुख भोगो, महाराज धृतराष्ट्र से आज्ञा पाकर दुर्योधन का सुनहरी रत्न जड़ित भवन सब दास दासियों के समेत भीमसेन को मिला, दुशासन का जड़ाऊ महल अर्जुन को मिला, नकुल को अभिशन का वह घर जो दुशासन के घर से भी बढ़ कर था मिला, सुन्दर का बहुत उत्तमता से सजा हुआ घर सहदेव को मिला, चारों भाई युधिष्ठर के इस काम से बड़े प्रसन्न हुए। युयुत्सु, विदुर, संजय और धौम्यऋषि ने दुर्योधन के भाइयों के बड़े २ महलों को पाया और बड़े प्रसन्न हुये॥

तब श्री कृष्ण जी अर्जुन के राज भवन में निवास करने लगे, सन्ध्या वंदन के पश्चात् सब लोग फिर युधिष्ठर के पास आये और प्रणाम कर के बैठ गये। युधिष्ठर ने सब को विधि पूर्वक आसन दिये और ब्राह्मणों की बहुत पूजा की॥

श्री कृष्ण ने राजा युधिष्ठर से कहा कि हे राजन्! तुम्हारे गुरु कृपाचार्य जो कौरवों की ओर से तुम्हारे साथ लड़े थे क्षमा मांगते हुये आये हैं, आप उन के अपराध को क्षमा करें, युधिष्ठर बोला कि अश्वत्थामा ने मेरे पुत्रों और मित्रों को धोके से मारा है मैंने उन का अपराध भी क्षमा किया अब कृपाचार्य को भी क्षमा करता हूं॥

यूंही कृपाचार्य अंदर आया युधिष्ठर ने उठ कर गुरुओं का सा आदर किया, फिर विदुर और युयुत्सु ने भी वैसा किया इस प्रकार राज्य करते २ युधिष्ठर ने धृतराष्ट्र को सब राज्य सौंप दिया और अपने भाइयों समेत वासुदेव के दर्शन करने

के लिये चल पड़ा, श्री कृष्ण जी अपनी सुन्दर शय्या पर विराजमान थे जब कि युधिष्ठर पहुंचा, राजा युधिष्ठर ने सत्कार पूर्वक प्रणाम किया और दण्डवत की और कहा कि कृपा सिंधु मैं आप को बार २ नमस्कार करता हुं कि आप की कृपा से मैंने राज्य पाया है ॥

श्री कृष्ण जी चुप रहे और कुछ उत्तर न दिया, पहिले समय में जब राजा युधिष्ठर जाते थे तो श्री कृष्ण जी प्रतिष्ठा पूर्वक अपने पास बिठाया करते थे, परन्तु उस दिन इस के अतिरिक्त देख कर फिर युधिष्ठर ने कहा कि हे महाराज ! मैंने क्या अपराध किया है कि मेरी प्रार्थना स्वीकार नहीं होती आप मेरी ओर आंख उठाकर देखते भी नहीं, जो मेरा अपराध हो तो मुझे उस से सूचित भी कीजिये ॥

श्रीकृष्ण ने आंख उठा कर देखा तो कहा कि हे राजन् ! मुझे इस समय भीष्म जी ने स्मरण किया है । मेरी चित्त वृति उन की ओर लगी हुई थी, वह इस समय शरशय्या पर लेटे हुये मेरा ध्यान कर रहे हैं, इस लिये मैं उन के पास जाना चाहता हुं, यदि आप की इच्छा हो तो आप भी मेरे साथ चलें और अपने सब संशयों को निवृत करें ॥

युधिष्ठर यह सुन कर बड़े प्रसन्न हुये और कहने लगे कि हे वासुदेव ! आप मुझ को भी अवश्य अपने साथ ले चलें अपने वृद्ध पितामह का दर्शन करके जीवन को सुफल करूंगा मैं उन से धर्माचर्या सीखूंगा, यदि अब न मिले तो फिर उन का दर्शन कहां ॥

श्री कृष्ण जी ने सात्यकी को आज्ञा दी कि रथ जोता जाय तब आज्ञा पाकर दारुक तुरन्त रथ ले आया ॥

तेरहवां अध्याय

—:०:—

भीष्म के कृष्ण भगवान को स्मर्ण करना, और बहुत व्याकुल होना ॥

तब युधिष्ठर संजय और युयुत्सु आदिक दूसरे रथों पर चढ़ कर साथ हुये, श्री कृष्ण बोले कि हे युधिष्ठर भीष्म जी बड़े धर्मात्मा और शूर वीर हैं, उन्हों ने क्षत्रियों के नाश करने वाले परशुराम जी से तेईस दिन तक युद्ध किया था, युधिष्ठर बोले कि हे श्री कृष्ण जी ! मुझे यह तो बताओ कि परशुराम जी ने किस प्रकार क्षत्रियों का नाश किया और यदि इक्कीस वार पृथ्वी निःक्षत्र होगई, तो फिर क्षत्रिय कहां से आगये ॥

श्री कृष्ण जी ने परशुराम का सब इतिहास सुनाया और बताया कि जिस समय उस ने सब क्षत्रियों का नाश कर दिया और सब पृथ्वी को कश्यप जी को दक्षिणा में दे चुका तो कश्यप जी ने उस को दक्षिण समुद्र की ओर भेज दिया । सैंकड़ों क्षत्रियों की स्त्रियें गर्भ वती रह गईं और उन से क्षत्रिय पुत्र उत्पन्न हुये, फिर वैश्यों और शूद्रों ने क्षत्रिय स्त्रियों से कुकर्म किया और जीव लोक के राजाओं का नाश

होने के कारण सब बेमर्यादा होगये ब्राह्मणों की कहीं भी प्रतिष्ठा न रही, फिर पृथ्वी नष्ट बुद्धियों के प्रभाव से महा पीड़ित हुई और रसातल को पहुंची, कश्यप जी ने उस को जंघा पर धारण किया, जिस से पृथ्वी का नाम उर्व्वी हुआ, तब पृथ्वी ने प्रसन्न होकर कश्यप से प्रार्थना की कि हे राजा! मेरी रक्षा करो, हे मुनीवर! हैहय की कुल की स्त्रियों में मुझ से रक्षित क्षत्रिय पुत्र हैं, वह मेरी रक्षा करें, उन में विदूर्थ का वेद पाठी पुत्र वर्तमान है, पराशर जी ने राजा सुदास के बेटे की रक्षा की है, वह आज कल शूद्र भृत्यु के समान काम करता है, वह मेरी रक्षा करे, शिवि का पुत्र गोपित नाम गौओं के दूध से रक्षा किया गया है, वह मेरी रक्षा करे, प्रतर्दन का पुत्र वत्सनाम गौ शाला में बछड़ों के संग रक्षा किया गया है वह राजा मेरी रक्षा करे ॥

दधि वाहन का पुत्र दिविरथ का बेटा गंगा जी के तट पर गौतम ऋषि से रक्षित किया गया है। महा राज वृहद्रथ वानरों से रक्षा किया गया है! मरुत के वंश में जो क्षत्रियों के लड़के रक्षा किये गये हैं वह इन्द्र के समान पराक्रमी समुद्र से रक्षा किये गये हैं! वह क्षत्रियों के पुत्र मेमार सुनार आदि की जाती में रक्षा किये गये हैं? वह मेरी रक्षा करते ही अचल हो गये उन के बाप दादे मेरे ही निमित परशुराम जी से मारें गये इस लिये मुझे उन से अनृण होने के लिये उन का पूजन करना चाहिये! मैं अधर्मी पुरुषों से रक्षा कभी नहीं चाहती ॥

तब कश्यप जी नें क्षत्रियों को बुला कर अभिषेक किया। और फिर क्षत्रियों के वंश चले। इस प्रकार बातें करते हुये श्री कृष्णाजी भीष्म पितामहा की ओर चले। राजा जनमेजय ने पुछा कि हे महाराज! भीष्म जी ने शर शय्या पर किस प्रकार श्रीकृष्णाजी का ध्यान किया॥

वैशम्पायणजी ने उत्तर दिया कि हे राजन्! आप सावधान हो कर भीष्मजी के देह त्याग का वर्णन सुनो। जब सूर्य उत्तरायण को हुआ तो भीष्मजी ने योग बल से आत्मा को परमात्मा में लगाया, समाधि में स्थित हुये। ब्राह्मण लोग आप के चारों ओर बैठे थे। व्यास, नारद देवस्थान, वात्स्यायण, अश्मक, सुमन्त. जैमिनि, पैल, शांडिल्य, देवेल, मतेय, असित, वशिष्ठ, कौशिक हारीत लोमश अत्रि, बृहस्पति, शुक, च्यवन, च्यवन सनत्कुमार, कपिल, बाल्मीकि तुम्बुरु, कुरु मौद्गल्य, परशुराम मुनि, पियल, पुलह, संवर्त, कच, कश्यप, पुलस्ति, च त, दक्ष, पराशर, मरीचि, आंगिरस, गौतम, गालव, धौम्य, विभाण्डव, माण्डव, धौम्य, कृष्णानुभौतिक, उलूक, मार्कण्डेय, भास्कर, पुरण, कृष्णसूत आदि महात्मा अपने २ अधिकार युक्त सुन्दर आसनों पर विराजमान थे॥

तब भीष्मजी ने श्रीकृष्ण का ध्यान किया। और स्तुति पूर्वक कहा कि अब मेरी चित्तवृति उस परब्रह्म परमेश्वर जगदीश आदि पुरुष भगवान में लगी है जिसकी माया को देवता भी नहीं जान सके। वह नारायण एक ही अद्वितीय है,

इसके कामों में कोई रोक टोक नहीं कर सक्ता, देवता, किन्नर, गन्धर्व, यक्ष और दैत्य उस महात्मा के रूप को नहीं पासक्ते उस पुरुषोत्तम, वैकुण्ठ नाथ को मेरी वारम्वार नमस्कार हो, उसी का प्रकाश सब पृथ्वी और आकाश में वर्तमान है, जिस भक्त वत्सल ने प्रेमके वस हो कर भक्तों की इच्छा पूर्ण करने के लिये अपनी इच्छा से अवतार लिया; और पृथ्वी के भार को उतारा, मैं उसी के रूप का ध्यान करता हूं, वही इसी द्वापरयुग में श्रीकृष्ण का रूप धारण करते है, उन्हीं ने कंस और शिशुपाल आदिक दैत्यों से पृथ्वी की रक्षा की है, हे दीन दयालु भक्त हितकारी ! आप सारे जगत को उत्पन्न और पालन करते हैं, आप ही नाश भी करते है आप की महिमा वेद भी नहीं कर सकते ॥

इस प्रकार स्तुति करने पर श्री कृष्ण जी बहुत प्रसन्न हुये और तुरन्त पाण्डवों को साथ ले कर भीष्मजी के पास पहुंचे। और महर्षि व्यास आदि को दण्डवत कर के भीष्म जी के पास खड़े हो गये। भीष्म जी ने आंख खोली। श्रीकृष्ण जी बोले कि हे शूरवीर, हे योधा, हे क्षत्रिय कुलावतंस, आप सहस्रों शरों की शय्या पर विराज मान हो, क्या आप के शरीर को कष्ट तो नहीं, आप के पिता महात्मा ने जैसा वर आप को दिया, वैसा वर मुझ को भी नहीं मिला, अर्थात आप जब तक चाहें, अपने शरीर को जीवित रख सक्ते हैं, हे वीर ! तुम्हारे सच्चे प्रेम और विश्वास ने जो प्रभाव मेरे मन पर डाला है, उस को मैं ही समझता हूं आप को इस प्रकार लेटे हुये देख कर

मेरा मन कष्ट हो रहा है, तपो बल से तुम अपने शरीर को जब तक चाहो स्थिर रख सके हो राजा युधिष्ठर को जो विचार इस समय क्षत्रियों के विषय में उत्पन्न हुए हैं, उन को भी यथोचित रीति से वर्णन कर सकते हो. आप के बिना न मनुष्य न देवताओं में कोई इस प्रश्न का उत्तर दे सकता है ॥

श्री कृष्ण जी के इन बचनों को सुन कर भीष्म जी ने प्रणाम किया। फिर श्री कृष्ण जी बोले हे भीष्म जी ! आप के हार्दिक प्रेम ने मुझे ऐसा वश किया है कि मैं आपको यहां देखने आया हूं। हे राजन् ! जिन लोगों में प्रेम और विश्वास नहीं मैं उन को कभी दर्शन नहीं देता, आप सब प्रकार से योग्य हैं वरन आप के दर्शन अवश्य करने चाहिये, देखो गुप्तरूव सु-देवता विमानों पर बैठ कर आप के उत्तरायण सूर्य होने की प्रतीक्षा कर रहे हैं, आप को उच्चतम स्थान अवश्य प्राप्त होगा, जहां से पुनावृति न होगी, देखो राजा युधिष्ठ आप के पास आये हैं, आप इन को क्षत्रिय वंश के नाश होने का वृत्तान्त सुनावें ॥

चौदहवां अध्याय

भीष्म जी को श्रीकृष्ण का दान ॥

यह बात सुन कर भीष्म पितामह बोले कि हे नारायण ! आप के प्रेम से भरे हुये और कृपालुता के वचनों ने मेरे हृदय को बहुत आनन्दित किया है। हे पुरुषोत्तम आप की मनोहर

पदया के सन्मुख मेरी क्या सामर्थ्य है कि मैं अपना मूंह खोल सकूं, सब संसार आप के तेज से उत्तेजित होता है, जो कुछ होता है आप ही की प्रेरणा से होता है, हे मधुसूदन ! मेरा मन ठिकाने नहीं, बाणों के घावों से सारा शरीर छलनी हो रहा है, व्यथा न्यून कभी नहीं होती, अंग शिथिल हो रहे हैं, अपनी पीड़ा को बयान करना भी अत्यन्त कठिन है, मेरी चित वृत्ति स्थिर नहीं, इस लिये मैं कुछ नहीं कह सकता, यही चाहता हूं कि इस शरीर रूप पाश को शीघ्र तोड़ कर स्वतन्त्र हो जाऊं निर्बलता के कारण जिह्वा शिथिल हुई जाती है, परन्तु आप दयालु हैं, आप की कृपादृष्टि से मुझ में यह सामर्थ्य आगई है कि मैं इस समय आप की आज्ञा का पालन कर सकता हूं, कहिये युधिष्ठिर क्या चाहते हैं ! आप सब शास्त्रों के जानने वाले हैं, आप का वचन प्रमाण है, मैं आप के सन्मुख क्या कह सकता हूं, मुझ में और आप में शिष्य और गुरु का अन्तर है, आप गुरु के सामने मुझ शिष्य की क्या सामर्थ्य है कि कोई शब्द कह सकूं ॥

यह सुन कर श्री कृष्ण बोले कि हे पितामह ! आप सत्यवादी, जगद्दृष्टा और सब ऊंच नीच के जानने वाले हैं, आप जो कुछ कहते हैं, इस से बाल भर का अन्तर नहीं, मैं आप को वर देता हूं कि आप को कोई पीड़ा न हो और कोई रोग आप को व्याप्त न होगा, भूख और प्यास का दुःख आप को बाधा नहीं करेगा जो कुछ ज्ञान में है वह सूर्य की भांति प्रकाशमान होगा जिस बात की कामना होगी वह सब

पूरी होगी जिस प्रकार मछली को पानी में कोई पदार्थ देखने में कठिनता नहीं होती उसी प्रकार आप का ध्यान सब बातों को जान लेगा ॥

यह वरदान सुन कर सब ऋषि प्रसन्न हुये,और सब के सब श्रीकृष्ण भगवान की स्तुति करने लगे, आकाश से फूल बरसे गन्धर्व, किन्नर और अप्सराओं ने गीत गाये, इतने में सूर्य पश्चिम की ओर जाता हुआ दिखाई दिया, ऋषियों और श्री कृष्ण जी ने भीष्म जी से आज्ञा चाही और कहा कि अब सूर्य अस्त हुआ चाहता है, हम को जाने की आज्ञा दीजिये आप भी विश्राम करें कल प्रातःकाल ही आप के दर्शन करेंगे ॥

यह कह कर भीष्म जी की प्रदक्षिणा की और सब के सब अपने २ स्थान को चले आये ॥

पंद्रहवां अध्याय

—:०:—

भीष्म पितामह का श्री कृष्ण की स्तुति करना ॥

प्रातःकाल ही श्री कृष्ण जी उठ और सन्ध्यातर्पण में लग गये उधर युधिष्ठर भी अपने महलों में उठे और ईश्वर का भजन करने लगे, सुरीले बाजों का मनोहर नाद सुनते वह कृष्ण भगवान ने स्नान पूजा करके हवन किया और सहस्र गौओं

का दान किया, सात्यकी को आज्ञा मिली कि रथ को तैयार करके लावे और राजा युधिष्ठर को समाचार दे कि भीष्म जी के पास चलने में क्या देरी है बहुत शीघ्र चलने का उद्यम करें ॥

राजा युधिष्ठर ने अपने भाईयों से कहा कि नित्य कर्म से शीघ्र ही निपट लो और मेरे साथ पितामह जी के दर्शनों को चलो, सब ने शीघ्रता से नित्य विधि को समाप्त किया और युधिष्ठर की सेवा में उपस्थित हुये तब युधिष्ठर ने अपने चचा धृतराष्ट्र को आगे किया और भाईयों समेत पितामह जी के दर्शनों को चल पड़े पहिले श्री कृष्ण जी को दण्डवत प्रणाम किया फिर उन को रथ पर स्वार किया फिर अपने भाईयों समेत कुरुक्षेत्र की ओर चल पड़े ॥

जब भीष्म जी के पास पहुंचे तो पहिले सब ऋषि मुनियों को दण्डवत की, पश्चात पितामह जी की प्रदक्षिणा की और फिर उन के चारों ओर बैठ गये बृद्ध शर शय्या पर पड़े हुये पितामह को देख कर शोक करने लगे कि हाय! हमारे कारण यह वीर इतना दुःख उठा रहे हैं इस अवस्था में शर शया पर लेट हुये हैं देखो इन्हों ने इन्द्रियों को कैसा जीता है सारी आयू भर ब्रह्मचारी रहे और धर्म व्रत करते रहे! हाय ऐसे महात्मा का पुण्य शरीर हमारे हाथ से इतना कष्ट पावे अब यह शीघ्र ही स्वर्ग को जायेंगे ॥

नारद जी यह देख कर बोले कि हे धर्म पुत्र राजा युधिष्ठर! भारतवंश भर में भीष्म जी के समान तीनों लोक में दूसरा कोई

नहीं, आपने इन्द्रियों को वश में किया, आप गंगा के पुत्र हैं और बड़े तेजस्वी हैं, परशुराम जी भी आप का शौर्य देख चुके हैं, कौन मनुष्य है जो इस प्रकार बाण शय्या पर पड़ा रहे और अपनी जान न निकलने दे, आप सूर्य के उत्तरायण होने को देख रहे हैं, जब सूर्य उत्तरायण को होगा तो आप प्राण छोड़ेंगे वह समय निकट ही है, इस लिये यदि कुछ आपने पूछना हो तो पूछ लें फिर यह समय हाथ नहीं आयेगा ॥

युधिष्ठर ने श्रीकृष्ण जी से कहा कि पहिले आप इन से कुशल प्रश्न तो कर लें पीछे मैं बात चीत करूंगा, श्री कृष्ण ने आगे बढ़ कर पूछा कि हे गंगा के पुत्र ! आप कुशल हैं, रात को पीड़ा तो नहीं पहुंची, कोई चिन्ता तो नहीं बाधती । आप की व्यथा की क्या दशा है ॥

भीष्मजी ने आंखें खोलीं, और श्रीकृष्णजी की ओर देख कर कहने लगे कि हे पुरुषोत्तम ! आप को दण्डवत करता हूं, आप की दयालुता से मेरे शरीर का दुःख जाता रहा । अब कोई पीड़ा नहीं है । इस समय मुझ को सारे ब्रह्माण्ड के पदार्थ दिखाई देते हैं अब मुझ में ऐसी शक्ति आगई है कि जो कुछ आप पूछना चाहें मैं बता सकता हूं । हे दीनानाथ आप अन्तर्यामी हैं । जगत के पालन करने वाले हैं, आप अपने मुखारविन्द से क्यों पाण्डवों को उपदेश नहीं करते । आप अपनी दयालुता से हमारा हित करने के लिये पृथ्वी पर आये हैं । और पृथ्वी का भार आपने उतारा है ॥

श्रीकृष्ण बोले कि हे भीष्मजी ! निस्संदेह मैं जगत को मोक्ष

देने वाला हूं जब तक मेरी इच्छा नहीं होती कोई काम नहीं होता। मैं सब कुछ कर सकता हूं। परन्तु मैं चाहता हूं कि आप का यश संसार में फैले। इस लिये अपने मुंह से धर्म का उपदेश करें। संसार में आप का यश सदैव स्थित रहेगा लोग आप के नाम पर तर्पण करेंगे, जो उपदेश आप की वाणी से निकलेगा राजा युधिष्ठर उसके अनुकूल चलेंगे, बहुत से राजे महाराजे जिनकी जान इस युद्ध में खप रही है, आप के शब्दों के सुनने के बहुत अभिलाषी हैं, संसार में उसी का जीना सुफल है जिस का यश और कीर्ति है, मैंने आप की वाणी में जो शक्ति दान की है, उस से लोगों के हृदयों को प्रसन्न करें और धर्मराज का संशय दूर करें॥

भीष्म पितामहा बोले कि हे दया के सागर! आप की दयालुता से मेरा कष्ट दूर हो गिया अब मैं सब धर्मों को वर्णन करसकता हूं प्रश्न करें तो उत्तर दूंगा।

श्री कृष्ण जी बोले कि हे गंगा के पुत्र! धर्मराज युधिष्ठर आप के पास आने से लज्जित होते हैं, मेरे और व्यास जी के कहने पर आप के पास आये हैं जो कुछ वह पुछें उन का उत्तर दो राजा युधिष्ठर ने उठ कर पाओं छुये और हाथ जोड़ कर खड़े हो गये, भीष्म जी ने प्रेम दृष्टि से देखा और अपने पास बुलाया और माथे को चूम कर अपने पास बैठने की आज्ञा दी फिर कहने लगे कि हे धर्मराज! आप क्यों लज्जा करते हैं, तुम धर्म पुत्र और सत्य वादी हो झूठ बोलना तुम्हारा धर्म नहीं है। तुम सदैव सत्य बोलते हो। जो

तुम्हारी इच्छा हो मुझ से पूछो; तुम वेद शास्त्र की आज्ञाओं से पूरे २ अभिज्ञ हो ॥

सोलहवां अध्याय

भीष्म पितामह का राज नीति वर्णन करना ॥

युधिष्ठर ने पूछा कि हे पितामह! राजाओं का जो उत्तम धर्म है, जिस से मुक्ति भी मिलती है, और प्रजा का पालन भी होता है उस को वर्णन कीजिये ॥

सब ऋषियों, मुनियों और श्री कृष्ण जी को दण्डवत करके भीष्म जी बोले कि राजाओं का धर्म है कि ब्राह्म मुहूर्त में उठे सब से पहिले ईश्वर का ध्यान करें, फिर और राज्य के कामों को करें। अपने समय को वृथा खोना ठीक नहीं, युक्ति और दैव से राजाओं के सब काम होते हैं, युक्ति को पूरा करना तो ईश्वर के हाथ है, दैव भी मनोकामना को पूरा होने नहीं देता। इस लिये युक्ति और दैव दोनों को ठीक २ प्रकार से जानना अवश्य है। सच्चाई को सदैव मन में रखना चाहिये ॥

अपने दोषों का छुपाना शत्रुओं का सामना करना, अपने भेद और गोप मन्त्रों को गुप्त रखना चाहिये, अधिक नम्रता से राजा में निर्बलता आती है, अधिक दंड से प्रजा को पीड़ा

होता है, इस से नम्रता और दंड दोनों का यथोचित प्रयोग करना चाहिये ताकि राज्य प्रबन्ध में विघ्न न पड़े, ब्राह्मणों को पीड़ा देनी ठीक नहीं स्वायम्भूमनु जी ने दो श्लोक लिखे हैं। जिन का तात्पर्य यह है कि पानी से आग ब्राह्मण से क्षत्रिय और पत्थर में लोहा उत्पन्न हुआ है जब लोहा पत्थर को पानी, आग को और क्षत्रि ब्राह्मण को मारता है तो तीनों को दुःख होता है। इस लिये ब्राह्मण कृपा के योग्य हैं क्योंकि वह वेद जानने वाले ईश्वर रूप हैं। उन की संगति से मनुष्य सुख को पाता है॥

जो ब्राह्मण पर स्त्री गामी और गुरु की स्त्री से कुकर्म करता है उस को नगर से बाहिर निकाल देना चाहिये, कोई और दंड न देना चाहिये राजा को चाहिये कि अपना दुर्ग बनावे, दुर्ग के चारों ओर या तो भूमि हो या पानी अर्थात ऊंचा ली जंगल हो वा पर्वत ताकि शत्रु सुगमता से दुर्ग पर न आसके दुर्ग की रक्षा के लिये सेना को नियत करना ही उचित है॥

राजा को बुद्धिमान और चतुर पुरुष अपने मन्त्रि रखने चाहिये दूतों को दण्ड देना अथवा मारना धर्म के विरुद्ध है परन्तु यदि कोई मूर्ख दूत अपने स्वमी की प्रशंसा और दुसरे की निन्दा करे तो उस को अवश्य दंड देना चाहिये, क्योंकि यह इस का दोष है विद्वान शास्त्रज्ञ और वृद्ध लोग सदैव राजा के पास रहें॥

दुसरों के छिद्र देखने वाले और स्वार्थ साधक लोग

राजा के पास बैठने के योग्य नहीं, कमीने दुष्ट स्वभाव वाले, और दुराचारी मित्रों के विरोधी भी कुमन्त्र देने के योग्य नहीं होते, प्रजा को सन्तान के बराबर जानना चाहिये, उस की पीड़ा और सुखों को देखना चाहिये, राजा को अपनी इच्छाओं को वश में कर के बुद्धिमत्ता से न्याय करना चाहिये, मर्दन स्थानों को ठीक रखना और उन को कभी २ देखना उचित है उद्यानों की उपज और फल मूल ऋषि मुनियों ब्रह्मचारियों और साधुओं की भेट करनी चाहिये, क्योंकि यही उन का भोजन है, जो उन से बचे उसे अपने मित्रों, सम्बन्धियों और सन्तान में बांटना चाहिये और अपने काम में लाना चाहिये ॥

जो पुरुष कुलीन और अपने धर्म में दृढ़ हों उन को अपने कर्म चारियों में भरती करना चाहिये, जो लोग विना जीविका के हों, अपने वंश का पालन न कर सके हों, अथवा राज सेवा को अपने कुलगौरवका विरोधी समझते हों उनको गुप्तरीति से सहायता करनी उचित है, विधवाओं की पालना भी बड़ा धर्म है क्योंकि ऐसा न हो कि भूख प्यास के दुःखों से वह कुकर्म में प्रवृत्त हो जायें ॥

सतारहवां अध्याय

—:०:—

राज धर्म का वर्णन ॥

जो राजा धर्मात्मा है वह प्रजा को प्रसन्न रखता है, जो सब पर दयालु रहता है और किसी को दण्ड नहीं देता उस से कोई भी नहीं डरता, इस लिये राजा को मर्य्यादापालन अवश्य करनी चाहिये, मृगया खेलना, जूआ, विषय सम्भोग, व्यभिचार आदि से राजा सदैव बचा रहे, मद्यपान, नाच और अन्य मादिक वस्तुओं का वर्ताव राजा के लिये हानि कारक है और धर्म के विरुद्ध है, कटुवचन, आय से बढ़ कर व्यय और अत्याचार क्रोध से उत्पन्न होते हैं और क्रोध इन से होता है, जिस राजा में यह व्यसन होते हैं उस की विद्वता जाती रहती है ॥

अपनी पटरानी से प्रेम करने, अपने सुख को छोड़ कर संसार की भलाई की ओर ध्यान देना, सन्तोष करना, सेना को दृढ़ करना और हाथी घोड़ों की सहायता रख कर भय को दूर करना चाहिये, राजा को अपने भृत्यों से हंसी ठट्ठा न करना चाहिये, क्योंकि वह निडर और घमण्डी हो जाते हैं और भेद को प्रकट कर के धोके और छल से प्रजा को लूटते हैं ॥

राजा के सामने थूकना, नाक साफ़ करना, डकार लेना निर्लज्जता के शब्द बोलना, एक जैसे वस्त्र पहिनना, भड़वों से मेलजोल, भेद को प्रकट करना और इसी प्रकार के और काम न करना चाहिये ॥

राजा को बिलकुल नम्र भाव भी न रखना चाहिये, क्योंकि जब तक राजा का भय नहीं होता कोई काम भी समय पर

पूरा नहीं होते क्योंकि सब हंसी ठट्ठा करने लग जाते हैं। बुरा स्वभाव रखने लग जाते हैं निडर हो जाते हैं धन चुराते हैं और अपने नियमों पर दृढ़ नहीं रहते और राजा को कुदृष्टि से देखने लगते हैं॥

राजा को विना सोचे और विना समझे कोई काम न करना चाहिये क्योंकि स्त्रियें ऐसा करती हैं, शुक्राचार्य कहते हैं कि जिस प्रकार सांप बिल में रहने वाले जन्तुओं को निगल जाता है उसी प्रकार यह पृथ्वी उन लोगों का नाश करती है जो अपराधियों को दण्ड नहीं देते, वेद पढ़ने के अभिलाषियों को परदेश गमन से रोकते हैं और तीर्थ यात्रा में विघ्न डालते हैं, सार यह कि जो काम करो सो सोच समझ कर युक्ति पूर्वक करो, जो लोग दण्ड के योग्य हैं उन को अवश्य दण्ड दो, जो लोग नीति के विरोधी हैं वह अपराधी हैं, चाहे वह बड़े हों चाहे मित्र हों॥

बृहस्पति जी ने कहा है कि अयोग्य काम करने वाले गुरु भी दण्ड के योग्य हैं, देखो राजा सगर ने अपनी प्रजा की रक्षा के निमित्त अपने पुत्र का त्याग किया, इस दुष्ट कुमार ने अपनी प्रजा के बच्चों को सर्यू नदी में डबोया था उद्दालिक ऋषि ने अपने पुत्र श्वेतकेतु को ब्राह्मणों के साथ बुरा वर्ताव करने से त्याग दिया था॥

राजा को देशकाल के अनुसार सब से वर्ताव करना चाहिये समय पर सहायता करना, दयालु और दानी होना आवश्यक है, क्रोध को मारना, न्यायकारी होना और धर्म के कामों में

साथ देना राजा का कर्तव्य है, राजा को प्रातः काल धर्म कर्म करना चाहिये, दो पहर को विश्राम करना चाहिये, तीसरे पहर राज्य कार्य करना चाहिये और रात्रि को शुभाशुभ का चिन्तन रखना आवश्यक है॥

राजा का चारों वर्णों और चारों आश्रमों की रक्षा करना मुख्य धर्म है, अच्छे लोगों पर विश्वास करना चाहिये, परन्तु ऐसा विश्वास भी न करना चाहिये जिस से पीछे दुःख उठाना पड़े॥

जो राजा विरोधियों के विरोध को विचारता है, दूतों को धन से संतुष्ट करके शत्रुओं के मित्रों से भेद लेता है, दरिद्रों की पालना करता है, वह प्रशंसा के योग्य है, जो राजा भृत्यों से यथोचित सेवा लेने वाला, वृद्धों की सेवा करने वाला, आलस्य और लालच को त्यागने वाला, दृढ़भाव, अच्छे और सत्यवादी मनुष्यों से दण्ड न लेने वाला, समय पर दान करने वाला, शूरवीरों, भक्तों और उत्तम वंशियों की प्रतिष्ठा करने वाला, विद्वान दीर्घदर्शी हो वह भी प्रशंसा के योग्य है॥

जो राजा किसी का विश्वास नहीं करता और मूर्ख और लालची है, वह अपने ही मनुष्यों के हाथ से मारा जाता है। जिस राजा के राज्य में प्रजा निर्भय और स्वतन्त्र रहती है जिस प्रकार पिता के घर में पुत्र वह राजा सब का प्रिय होता है, जिस राज्य की प्रजा समृद्धि युक्त और अच्छे बुरे के जानने वाली होती है वह राजा बड़ा भाग्यवान होता है, जिस राजधानी में कपट रहित और सन्तुष्ट लोग बसते हों वहां का

राजा भी उत्तम होता है जो राजा साधुओं और धर्माभ्यासीओं का आदर करने वाला, धर्म मार्ग पर चलने वाला हो उस के राज्य को धन्य है॥

मनु जी ने छः पदार्थ त्यागने के योग्य कहे हैं :—

(१) उपदेश न करने वाला गुरु (२) निरात्तर यज्ञ करने वाला (३) प्रजा की रक्षा न करने वाला राजा ४ अप्रियवादिनी भार्या (५) कानों का चाहने वाला गवालिया (६) वन का चाहने वाला नाई॥

हे राजन्! जो कुछ मैंने कहा है, शास्त्रकार, वेद ब्राह्मण के जानने वाले और जगत के पालने वाले बृहस्पति भी, शुक्राचार्य्य और भरद्वाज ऋषि और देवराज इन्द्र का भी यही वचन है। धोका और कपट से शत्रुओं और उनके मित्रों को भेदना, प्राचीन राजा के स्थानों को बनाना, साधुओं से मिलाप, अच्छे लोगों की प्रतिष्ठा अन्न इकट्ठा करना, धर्मिष्ठों को मानना, अपनी सेना को प्रसन्न रखना, प्रजा के सुख दुःख में हिस्सा लेना, जगत के कामों पर शोक न करना, मित्रों को बढ़ाना और शत्रुओं से बचाना। जो धोके से प्रजा को दुःख दे उसको वश में करना, शत्रुओं ने जिन कर्मचारियों को अपनी ओर कर लिया हो उनको दृष्टि के नीचे रखना, भृत्यों पर पूर्ण विश्वास न करना, और अपने राज्य को अच्छी प्रकार देखना, सब काम नियमानुसार करना। शत्रुओं को कभी निर्बल न समझना, बुरा काम न करना, यही सब से बढ़ कर धर्म है॥

बृहस्पति जी कहते हैं कि देवताओं ने युक्ति से ही अमृत को पाया और राक्षसों को मारा। लोक और परलोक में प्रसिद्ध है कि जो मनुष्य युक्ति प्रबल है वह विद्वानों से भी बढ़ कर है जो राजा दीर्घ सूत्रता करता है, वह शत्रुओं से पराजय पाता है। थोड़ी सी आग भी जला देती है और थोड़ासा विष भी मार देता है। राज्य करना भी सुगम नहीं अपने राज्य को अद्वितीय बनाने के लिये धर्म करना अवश्य है। नम्रभाव से राज्य करना कठिन है इस लिये नम्रता और कठिनता दोनों मर्यादा पूर्वक होनी चाहियें ॥

भीष्म जी की बातें सुन कर श्री कृष्ण जी, देवर्षि नारद जी, व्यास जी, देव स्थान ऋषि, संजय, कृपाचार्य, सात्यकी और पाण्डव बहुत प्रसन्न हुये, भीष्म जी बोले कि हे युधिष्ठर ! मैं ने पूरी २ राज नीती वर्णन की है, फिर भी जो कुच्छ पूछना हो, पूछलो। राजा युधिष्ठर ने दण्डवत की और हाथ जोड़ कर कहा कि हे पितामह ! अब सूर्य्यास्त हो चला है, आप विश्राम करें, कल प्रातः काल आप के फिर दर्शन करेंगे, तब पाण्डव भीष्म जी से आज्ञा पा कर अपने २ घरों को आये ॥

अठारवां अध्याय

—:o:—

राजा शब्द के अर्थ और राज नीती के नियम ॥

यथा पूर्व श्रीकृष्ण जी प्रातः काल उठ और सन्ध्या तर्पण समाप्त करके राजा युधिष्ठिर और उस के भाईयों को साथ ले कर भीष्म जी के पास गये। वहां देव ऋषि नारद और महर्षि व्यास जी जप तप करने में लगे हुये थे, सब ने भीष्म जी की प्रदक्षिणा की और ऋषियों को प्रणाम दण्डवत किया और भीष्म जी के इर्द गिरद बैठ गये॥

भीष्म जी ने आशीर्वाद कहा और पूछा कि हे धर्मराज! अब क्या पूछना चाहते हो? युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह! राजा शब्द का क्या अर्थ है, मैं देखता हूं की शारीरक बनावट में कोई विचित्र बात नहीं, जिस प्रकार प्रजा के नाक, हाथ, मुंह होते हैं, राजा के भी वैसे ही होते हैं, खाना पीना भी एक ही जैसा होता है, फिर क्या कारण है कि राजा तो आज्ञा करे परन्तु प्रजा उस आज्ञा को माने, राजा के दुःख से प्रजा को दुःख राजा के सुख से प्रजा को भी सुख॥

भीष्म जी ने उत्तर दिया कि इस द्वापर और त्रेता के पूर्व सत्युग में कोई राजा न था न कोई आज्ञा करने वाला और न आज्ञा मानने वाले, वरन सब के सब धर्म के अनुयायी थे, धर्म ही के करने से उन की कार्य सफलता होती थी, जब सत्युग व्यतीत हुआ तो त्रेता में कुछ २ अज्ञानता फैली, लोगों में झगड़ा झपाड़ा होने लगा, राजा तो था नहीं जो लोगों को दण्ड देता, बुद्धि में न्यूनता होगई इस लिये धर्म को हानी पहुंचने लगी, यज्ञ और हवन के न होने से देवताओं में खिल बिली मची क्योंकि यज्ञ और हवन के न होने से उन को

अमृत नहीं मिलता था और उन की भूख प्यास तृप्त नहीं होती थी, वेद पाठ एक साथ ही बंद होगया, धर्म की बातें छुप गई ॥

तब देवता ब्रह्मा जी के पास पहुंचे और कहने लगे कि हे महाराज ! जगत में धर्म नाश हुआ जाता है, लोग संकर वर्ण हो रहे हैं, न कोई किसी को डराता है और न किसी को किसी का डर है, न यज्ञ होता है, न हवन, हम लोग तो भूखे मर रहे हैं ॥

ब्रह्मा बोले बहुत अच्छा ऐसी बातें सोची जायेंगी, जिन में तुम्हारा कल्याण हो, फिर उन्हों ने अर्थ और काम पर एक लाख अध्याय बनाये और बड़ी स्पष्टता से तीनों गुणों को वर्णन किया फिर मोक्ष धर्म पर कुछ श्लोक कहे, मोक्ष मनुषी कामनाओं से पृथक है, चारों गुणों में भेद के कारण सतो गुण, रजो गुण, तमो गुण में तपस्वियों की उन्नति, बुरे कामों का दण्ड, बुरे नगर से अच्छे नगर में स्थान प्राप्ति, इत्यादि कई बातों का निर्णय किया, इन्हीं एक लाख श्लोकों में कर्म काण्ड, ज्ञान काण्ड कृषि कर्म, बयोपार और दण्ड नीति का भी वर्णन है राज मित्रों की सहायता और कर्म चारियों को नियत करने की विधि भी है ॥

राजा के मन्त्रि बड़े गूढ़, बुद्धिमान और सुशील होने चाहिये, राजा को कई प्रकार के वेष धारण कर के अपनी प्रजा के सुख दुःख का वृत्तान्त प्रतीत करना चाहिये, शत्रुओं के साथ साम, दाम दण्ड और भेद से काम लेना चाहिये।

देश के सब भागों के समाचार मंगाने के निमित्त गुप्त दूत और समाचार देने वाले नियत करने चाहिये। जिस युद्ध में कर लेकर सन्धि की जाय वह भारी विजय समझनी चाहिये, जिस में केवल परस्पर मेल से काम निकले और सन्धि हो, वह मध्यम प्रकार की विजय समझो, परन्तु जिस में कर देना पड़े, वह निकृष्ट है ॥

यात्रा के नियमों को विचारना अवश्यक है, कि किस समय यात्रा करना लाभदायक और किस समय हानि कारक है। अपनी विजय का शत्रुओं के मन पर अच्छी प्रकार बोध कराना चाहिये युद्ध के नियमों को अच्छी प्रकार देखना चाहिये कभी तो शत्रु के सन्मुख जाकर लड़ना पड़ता है कभी सेना के विभागों को गुप्त करके कुछ भाग सन्मुख आकर लड़ते हैं और छुपकर समय पर निकलते हैं, जो सेना सन्मुख होती है उसके आठ विभाग होते हैं रथ, हाथी, घोड़े पदाति, भारवाहक जन्तु, शस्त्रअस्त्र, गुप्त दूत और युद्ध मन्त्रि। विषैले बाणों का प्रयोग, शत्रु को छिपे देकर मारना, गुप्तसेना से युद्ध, धोके से शत्रु को हराना शास्त्र के अनुसार निषिद्ध है, वीरता और बल से विजय पाना सब से उत्तम है ॥

ब्रह्माजी ने अपने शास्त्र में युद्ध के सम्बन्ध में सब प्रकार के नियम बांधे हैं, और राज धर्म के सब अंगों का उपदेश किया है तब ब्रह्माजी ने श्रीनारायणजी से कहा कि संसार में बिना राजा के काम नहीं चलता ॥

तब विष्णुजी ने रजो गुण से रहित तेजस नाम मानसी

पुत्र उत्पन्न किया परन्तु उस पद्दा भाग ने राज्य लेना स्वीकार न किया और सन्यासी होकर वनों को चला गया उस का पुत्र कीर्तिमान हुआ वह भी जीवन मुक्त हुआ उस का पुत्र कर्दम हुआ वह भी तपस्वी कर्म में प्रवृत्त हुआ उस का पुत्र अनंग साधु रक्षक हुआ, अनंग का पुत्र बड़ा नीति का जानने वाला हो कर बड़े राज्य को प्राप्त हुआ उस का पुत्र सुनेथा और सुनेथा का वेणु नाम राजा हुआ वेणु राग द्वेष के वशी भूत होकर प्रजा पर अधर्म करने लगा, तब ऋषियों ने उस को अभिमंत्रित कुशाओं से मार और उस की वाम जंघा को मथ कर एक ऐसा पुरुष उत्पन्न किया जिस का छोटा देह, काल, वर्ण, रक्त नेत्र और काले केश थे उस से सैंकड़ों निषाद उत्पन्न हुये जो निर्दय चित होकर विन्ध्याचल में रहते हैं फिर ऋषियों ने उस की दाहनी जंघा को मथा उस से एक ऐसा पुरुष उत्पन्न हुआ जो रूप में दूसरे इन्द्र के समान था वह हाथ जोड़ कर कहने लगा कि धर्म अर्थ के जानने वाली सूक्ष्म बुद्धि मुझ में उत्पन्न हुई है मुझे आज्ञा दो कि मैं क्या करूं, ऋषि बोले कि जो बात धर्म के अनुकूल हो उस को करो, सब में सम दृष्टि रहो प्रिय अप्रिय को त्याग कर काम क्रोध लोभ को दूर से त्यागो, जो मनुष्य धर्म के विमुख हो उस को दण्ड दो ॥

चित्त से, कर्म से, वतन से शपथ करो कि मैं ब्राह्मणों का पालन करूंगा, नीती धर्म का पालन करूंगा और इन्द्रियों के वशीभूत कभी न हूंगा यह भी कहो कि ब्राह्मण मुझ से अदण्ड हैं, मैं सब संसार की रक्षा करूंगा, वेणु पुत्र ने इन

उस को पहिले अपने वंश वालों और भृत्यों को देना उचित है सब पर कृपा दृष्टि रखनी चाहिये जो अपराध किसी से अज्ञानता से होगया हो उस को क्षमा करना चाहिये, सेवक और साथी शूर वीर रखने चाहिये, राज्य कार्य को सब से मुख्य समझना चाहिये, पूजा के दुख सुख से आप भी दुखी और सुखी हो कृषाण लोगों से छटा भाग उपज का कर में लेना चाहिये, अधिक लेने से कृषि कर्म में विघ्न होगा, खाने और पहिनने के पदार्थों पर कर नहीं लेना चाहिये यदि आवश्यका हो तो बहुत थोड़ा कर लगवे उपज की वृद्धि राजा की वृद्धि का कारण है, यदि राजा पूजा को संतान के समान प्रिय जाने तो समय पर पूजा भी उस पर प्राण देने को तैयार होजाये वरन दूसरे राजा की पूजा भी उस के पास चली आवेगी ॥

राजा को अपने देश बढ़ाने का यत्न करना उचित है, चोरों और डाकुओं को सदा दृष्टिगोचर रखना चाहिये, जान बूझ कर अधर्म की आय कोश में डालनी ठीक नहीं; दण्ड के धन को कोश से पृथक रखना चाहिये और उस को धर्मार्थ में व्यय करना चाहिये, दंड धन इतना न हो कि देने वाला निर्धन हो जाये और अपने बाल बच्चों की रक्षा न कर सके, राज्य को दृढ़ करना, पुष्ट दुर्ग बनाना और खाने पीने के पदार्थों से भर पूर रखना चाहिये ॥

मन्त्रि और कर्मचारी विश्वास के योग्य पुरुष होने चाहियें और उन के विश्वास पात्र होने की परीक्षा हो चुकी हो। आज्ञा न पालन का दण्ड अवश्य देना चाहिये ताकि गौरव नष्ट न हो।

जो अधर्म से चोरी कर, उस के दोष को निरूपण करके उसे दण्ड देना चाहिये और कभी उस को धन सम्बन्धि अधिकार पर नियुक्त न करना चाहिये। भृत्यों से अधिक बात चीत न करें और थोड़ा ही उत्तर लेना उचित समझे, अधिकारियों का मान करना चाहिये, परन्तु किसी के भरोसे पर आलसी न हो जाये। क्योंकि विश्वास योग्य मनुष्य बहुत कम हैं। उन्मार्ग गामी, निर्लज्ज, मद्य पीने वाले को अधिक तर मुंह न लगायें क्योंकि यह लोग अच्छे नहीं समझे जाते ॥

बीसवां अध्याय

—:०:—

चारों वर्णों के धर्म ॥

युधिष्ठिर ने पूछा कि हे महाराज ! राजा को अपने पास कैसा ब्राह्मण रखना चाहिये ॥ भीष्म जी ने उत्तर दिया कि जो इन्द्रियों को वश में रखता हो ब्रह्म को पहिचानता हो और ऋषियों की बताई हुई विद्या, अर्थात वेद शास्त्र का पढ़ने वाला हो। ब्राह्मण का काम वेदों को अंगों सहित पढ़ना और पढ़ाना है, सत्य वादी होना, दूसरों को सत्य का उपदेश करना, अन्य वर्णों के कर्म न करना और एसे काम न करने जिन से निन्दा हो। ब्राह्मण धन ले कर विवाह करे, संतान उत्पत्ति करें, जो धन उसे मिले उस के छे भाग करे, एक भाग देवताओं का, दूसरा दान के लिये, तीसरा मां बाप के लिये,

सब बातों को माना तब शुक्राचार्य उस के पुरोहित बने बालखिल्य ऋषि और सारस्वत ब्राह्मण मन्त्रि बने। गर्ग मुनि ज्योतिषी हुये। उस राजा का नाम पृथु हुआ। वह सब संसार में विख्यात महा पुरुष हुआ उस के दो पुत्र सूत्र और मागध नाम वाले हुये॥

सूत्र तो अनूप देश का राजा हुआ और मागध मगध देश का स्वामी बना। पृथु ने असम भूमि को सम करवाया और बाणों की कोटी से सब ऊंच नीच को समान कराया। कुबेर ने उसे बहुत सा धन दिया. हिमाचल और समुद्र ने उसे उत्तम रत्न प्रदान किये। उस का राज्य शान्ति युक्त था चोर और डाकू का नाम न था, इसी राजा पृथु के कारण पृथ्वी का यह नाम हुआ॥

राजा वेणु के समय में बड़ा अकाल पड़ गया था, जिस से लोगों को बहुत पीड़ा हुई थी, परन्तु पृथु के समय में १७ प्रकार का अन्न भूमि से उत्पन्न हुआ। नाना प्रकार के वस्त्र राजा पृथु के समय में वर्ताव में आये। शस्त्रागार बनाये गये और लोग धनुष विद्या सीखने लगे। इस राजा के शरीर में विष्णु जी ने प्रवेश किया, जिस से मनुष्य देवताओं के समान कहलाने लगे और राजाओं के सन्मुख लोग दन्डवत और प्रणाम करने लगे, देवताओं को छोड़ कर सब जगत राजाओं के आधीन हुआ॥

किसी समय में विष्णु जी के मस्तक पर स्वर्ण का कमल उत्पन्न हुआ, उस से लक्ष्मी उत्पन्न हुई, लक्ष्मी से अर्थ और

अर्थ से धर्म उत्पन्न हुआ, इसी प्रकार पृथु के मस्तक पर कमल का चिन्ह हुआ जिस से राजा विष्णु के समान गिना जाता है क्योंकि जैसी बुद्धि राजा की होती है वैसी किसी की नहीं होती, न ऐसा तेज किसी में होता है, न किसी में उस तेज के देखने की शक्ति होती है प्रत्येक को उस की आज्ञा माननी पड़ती है मुनि लोग तपस्या करके स्वर्ग को जाते हैं और तपस्या के फल भोग कर फिर राज कुल मे जन्म लेते हैं और राजा बनते हैं इस लिये राजाओं की प्रतिष्ठा किसी से कम नहीं जो मनुष्य राजा के दर्शन कर वह सर्वत्र आनन्द से रहे, जो इस से द्वेष करे उस पर ईश्वर को कोप हो जो राजा का विरोधी है, मानो वह ईश्वर का विरोधी है ॥

उन्नीसवां अध्याय

—:०:—

राज्य धर्म के नियम ॥

यह कह कर भीष्म पितामह फिर बोले कि हे युधिष्ठिर! राजाओं के गुण तो तुम ने सुन लिये अब और क्या सुनना चाहते हो ॥

युधिष्ठिर ने कहा कि हे पितामह! राज्य और प्रजा के सुख बढ़ाने के कौन २ से उपाय हैं दण्ड किस प्रकार देना चाहिये और किन २ लोगों को मंत्रि बनाना चाहिये ॥

भीष्म जी बोले कि राजा को क्रोध के वश न होना चाहिये विशेष करके सत्यवादी होना चाहिये, जो भोजन प्रजा को

पहुंचे, राजा ने बड़ी प्रतिष्ठा की और दंडवत प्रणाम जो कुछ कि उस के योग्य था यथोचित रीति से किया और अपने पास बिठाया, राज सभासद बड़ा आश्चर्य करने लगे कि ऋषि वर कौवे को क्यों सभा में ले आये, जब पूजा सत्कार के पश्चात् ऋषि अपने आसन पर विराजमान हुये तो कहने लगे कि हे राजन् ! यह कौवा प्रत्येक बात का ठीक २ उत्तर देता है इस लिये इस को आप के पास लाया हूं, राजा ने पूछा कि हे महर्षि ! मेरे सामने इस से कुछ प्रश्न करें, ऋषि ने कौवे से पूछा कि हे कागराज ! तुम भी कुछ सभा में कहो कौवा बोला कि राज सभा में जो कोई आता है किसी न किसी अर्थ सिद्धि के लिये आता है ॥

राजा यह शब्द सुन कर मुसकरा उठे परंतु अन्य साधु जो कह चुके थे कि हम बिना किसी अर्थ की सिद्धि के इस सभा में आये हैं और केवल महाराज के दर्शनों की ही अभिलाषा रखते थे वह कौवे के कटु वचनों को सुनकर बहुत अप्रसन्न हुये यहां तक कि राजा के भृत्यों से सांठ करके रात्रि को उन्हों ने कौवे को मार डाला ॥

तब वह ऋषि से कौवे की मृत्यु का शोक करने लगे। ऋषि बोले कि हे राजा! कौवा फिर भी पक्षी ही था। उस ने बिना सोचे समझे एक बात ऐसी कही कि जिस के कारण वह मारा गया, यदि वही बात चुपके से आप के कान में कह देता, तो कभी मारा न जाता और आप भी प्रसन्न होते ॥

बुद्धिमानों का वचन है कि राजा का क्रोध बड़ा भयंकर होता

है, दर्बारियों को राजा से बड़ी २ आशायें होती हैं। परन्तु जीवन की चिन्ता भी साथ ही लगी रहती है। राजा लोग कभी तो अपने शुभ चिंतकों पर अप्रसन्न हो जाते हैं और कभी दुष्टों को पारितोषक देते हैं, मस्त हाथी से एक सौ पद पर सिंह से एक कोश पर और राजा से एक सौ कोश पर ठहिरने को बुद्धिमानों से अच्छा कहा है। राजा को अपना वर्ताव ऐसा ही रखना चाहिये जिस से सब डरते रहें। राजा को ऐसे नियम बनाने चाहिय कि जिन से राजा और व्योपारियों को लाभ हो। न्याय के लिये जो अधिकारी नियुक्त हों उन की आलोचना भी करनी चाहिये, ताकि किसी पर अनुचित व्यवहार न हो, जो राजा ऐसा नहीं करता, उस की प्रजा को सदैव पीड़ा रहती है और प्रार्थना करने पर भी कोई उस की बात नहीं सुनता॥

राजा कौवे की मृत्यु पर बहुत शोक करने लगा और भृत्यों पर बहुत क्रोध युक्त हुआ भप्पर ऋषि कहने लगे कि हे राजन्! कौवा तो मारा गया अब आप अपने भृत्यों पर क्रोध न करें ऐसा न हो कि कोई और झगड़ा उठ खड़ा हो, क्योंकि आप की सभा में सब प्रकार मनुष्य हैं, दुष्ट अपने दुष्ट भाव को नहीं छोड़ेंगे और श्रेष्ट अपनी श्रेष्ठता को, हां कौवे के मारने वाले को दंड अवश्य देना चाहये हम लोग तपस्वी हैं न किसी से शत्रुता रखते हैं न मित्रता, परंतु आप राज हैं आप को न्याय करना अवश्य है यह कह कर ऋषि चले गये॥

इस सब का तात्पर्य यह कि राज में प्रभा विना सोचे

चौथा देने वाले के लिये, पांचवां अपने लिये और छटा अपनी स्त्री, बाल बच्चों और भृत्यों के लिये ॥

ब्राह्मण किसी से शत्रुता न करे, सबका मित्र बना रहे। प्रियवादी हो, भिक्षा का स्वभाव न डाले, पहिना हुआ वस्त्र दान में न ले, सन्तान उत्पत्ति पर सन्यासाश्रम धारण करे। वन में रह कर किसी से कुछ न मांगे, दिन भर में एक बार जो कुछ हाथ आवे खाले, ब्राह्मण को शस्त्र धारण करना, शत्रु को मारना, अपनी रक्षा न करना, शिल्पविद्या का प्रयोग करना, चाकरी करना, गाना बजाना, नाचना, लड़ाई और दुर्वचन बोलना सर्वथा निषिद्ध है ॥

क्षत्रिय को ब्राह्मण का मान करना चाहिये, दान करना चाहिये, किसी से कुछ न मांगना चाहिये, पूजा का पालन करना चाहिये, शत्रुओं को मारना और युद्ध में प्राण छोड़ना चाहिये, रण में मरा हुआ क्षत्रि सीधा स्वर्ग को जाता है, अपने राज्य को बढ़ाना चाहिये, गुप्त दूतों को चारों ओर के समाचार लाने के लिये नियुक्त करना चाहिये, सेना को ठीक तैयार रखना चाहिये, आप विजय करने के लिये सेना के साथ जाना चाहिये और प्राणों को तुच्छ समझना चाहिये ॥

जब राजा का पुत्र राज्य करने के योग्य हो तो उस को राज्य देकर आप वनों को चला जाना चाहिये, वनवास में फल मूल खाकर जीना चाहिये अथवा घर से भोजन मंगा लेना चाहिये परन्तु किसी से मांगना ठीक नहीं यदि कोई समृद्ध ब्राह्मण हो तो उसी से अवश्यका के अनुसार मांग लेना भी

दोष नहीं होता, राजा को न्याय करने से वही पदवी मिलती है जो धर्मात्मा ब्राह्मण को तपस्या से मिलती है, योगी सैंकड़ों वर्ष तपस्या करते हैं परन्तु राजा एक वार न्याय कर के उतना फल पालेता है। इस लिये राजनीति के अनुसार चलना बड़ा श्रेष्ठ है॥

वैश्य को वेद पढ़ना चाहिये, उत्तम जीविका करनी चाहिये, धन इकट्ठा करना चाहिये चौपाय और पशु पालने चाहिये, यदि वैश्य के पास छः गौवें हों तो साल में एक राजा को भेंट दे, एक ब्राह्मण को दे शेष अपने पास रखे। व्योपार का लाभ सातवां भागले इसी प्रकार खेती का भाग भी ले, जब बूढ़ा हो तो बनवास करे॥

शूद्र को चारों वर्णों की सेवा करनी चाहिये और दुःख में कभी न छोड़ना चाहिये, धन इकट्ठा करना उचित नहीं क्यों यदि वह धनवान हो गिया तो दूसरे वर्णों को दुःख देगा। ज्ञानी शूद्र को बढ़ापे में बनवास करना चाहिये॥

उच्च वर्णों को चाहिये कि वह शूद्रों की पालना करें॥

इक्कीसवां अध्याय

—:०:—

राज्य नीति के नियमों का पालन करना।

भीष्म जी बोले कि हे धर्म पुत्र युधिष्ठर! काल प्रचेन ऋषि एक कौवे को पिंजरे में बंद करके राजा कौशल की सभा में

समझे कोई बात नहीं करनी चाहिये नहीं तो भायों पर आ बनती है जो कोई झगड़ा सामने आवे, तो उसका अच्छी प्रकार निश्चय करना चाहिये, नीच लोगों की साक्षी को अच्छा नहीं समझना चाहिये, अपने कर्मचारियों से अच्छी प्रकार निश्चय कराना चाहिये, दण्ड देने में बड़ा सोच विचार चाहिये क्योंकि ऐसा न हो कि अन्याय किया जाय, सेना में शूरवीर लोग भरती करने चाहिये । शिल्पियों के धन दौलत की रक्षा करनी चाहिये, कृषिकों को धन से सहायता देनी चाहिये, हे राजन् ! तुम ने राजा बलि का हाल सुना है, जो अब पाताल में भेजा गया है, राजा युधिष्ठर ने कहा कृपा करके राजा बलिका वृत्तान्त सुनाइये ॥

बाईसवां अध्याय

—:०:—

राज धर्म का वर्णन और राजा बलि और मान्धाता की कथा ॥

राजा बलि बड़ा बलवान और शूर वीर था, वह बड़े २ पर्वतों को गेंद की भांति उठा कर फेंक देता था, परन्तु ब्राह्मणों से शत्रुता रखता था और उन का सदा निरादर करता था, अन्त को ब्राह्मणों के शाप से पाताल में पहुंचा ॥

हे राजन ! राजाओं को स्त्रियों की संगति में सदैव नहीं

रहना चाहिये, जहां जाये वहां से लौटने की पहिले चिंता करेत, ईश्वर के विना किसी में चित्त न लगाये क्योंकि और सब पदार्थ अवश्य नाश होंगे, वैशया और नपुंसकों की संगति अच्छी नहीं जो स्त्री अधिक बातें करने वाली हो और लज्जा रहित हो उस से विवाह न करे क्योंकि उस की संतान भी वैसी ही होगी ॥

जो राजा प्रजा को दुखी रखता है उस के राज्य में वर्षा नहीं होती, जब राजा मान्धाता उत्पन्न हुये तो इंद्र ने पूछा कि आप की क्या इछा है ? मान्धाता ने हा कि मेरी इछा है कि मैं परब्रह्मपरमेश्वर के दर्शन करूं और उस के दर्शन पाकर अपना जन्म सुफल करूं, इन्द्र ने कहा कि जो क्षत्रिय राजा नहीं और केवल धर्म पर ही निर्भर हैं वह मुक्ति नहीं पासके क्योंकि क्षत्रिय धर्म देवताओं ने बनाया है और बहुत से धर्म सन्यास धर्म के साथ क्षत्रिय धर्म से पृथक फल के देने वाले उत्पन्न हुये है जिनका फल कर्म करने वाले पाते है, यह सब धर्म राज धर्म के साथ हैं, इस लिये राजधर्म सब से उत्तम है प्राचीन काल में विष्णु जी जो क्षत्रिय धर्म रखते थे, शत्रुओं को हरा कर देवताओं के रक्षक बने थे, इनहीं के कारण ब्राह्मणों का धर्म और राजधर्म नियत रहा, यदि वह ऐसा न करते तो ब्राह्मणों का बीज नाश हो जाता जब सतयुग हुआ तो धर्म की वृद्धि के लिये ब्रह्माजी ने क्षत्रियों को उत्पन्न किया इस प्रकार की बातें करके और राजा मान्धाता को समझा कर इन्द्र लोक को चल गये ॥

हे धर्मराज! मैं आप को क्या समझाऊं, आप सब प्रकार से योग्य हैं। आप ब्राह्मणों और ऋषियों को आदर पूर्वक मिलते हैं॥

युधिष्ठर ने पूछा कि पितामह जी सब से श्रेष्ठ धर्म कौन है?

भीष्मजी बोले कि सब से श्रेष्ठ राजधर्म है क्योंकि राजा के बिना देश में शान्ति नहीं रहती, बलवान निर्बलों को सताते हैं, देश की अवस्था बुरी हो जाती है बड़े छोटों पर अत्याचार करते हैं, किसी से नहीं डरते, बिना राजा के प्रजा पीड़ित रहती है, जहां राजा न हो वहां घोर फैलता है व्यभिचार राजा को इन्द्र के समान समझते हैं ब्रह्मा जी ने मनुजी को पृथ्वी का राज देकर राजा बनाया, उन्हों ने यह समझ कर कि प्रजा के अवगुणों से राजा भी दूषित हो जाता है, धर्मशास्त्र बनाया और बड़े न्याय से चिरकाल तक राज्य किया॥

राजा को अपना मन सदैव वश में रखना चाहिये, जो ऐसा न करे तो रण भूमि में शत्रु को जीत कर कभी विजयी नहीं हो सकता, श्रेष्ठों का वर्द्धन और दुष्टों का ताड़न करना राजा का धर्म है शत्रु को बल से, छल से और जिस प्रकार हो सके वश में करना चाहिये, शत्रु पर दया करना सांप को दूध पिलाने के समान है। हां जो शरणागत हो उस पर कृपा करनी चाहिये॥

तेईसवां अध्याय

—:०:—

दुर्गों की रक्षा और कोश के बढ़ाने के उपाय ॥

यदि शत्रु बलवान हो तो दुर्ग की रक्षा करले, सेना शस्त्र धारी होकर रहे, दुर्ग के इरद गिरद गहरी खाई बनाई जाय वह पानी से भरी रहे उस में मकर, मत्स्य और अन्य घातिक जंतुओं को छोड़ देना चाहिये शत्रु को भेदन करना भी जाती धर्म है सेना के खाने पीने के सामान भी अंदर इकठे करले सपाहियों के मकान सब से पृथक हों और गुप्त हों युद्ध विशारद मनुष्य सेना में भरती हों, ग्रीष्म ऋतु में आग से बचाओ रखे, राजा को सात पदार्थों की रक्षा आवशक है १ अपने शरीर की २ मंत्रियों की ३ कोशकी ४ सहायक मित्रों की ५ अपनी प्रतिज्ञा की ६ देशकी ७ राजधानी की ॥

धर्म से राज्य करने में छः बातें अवश्यक समझनी चाहियें १संधि करना २ चढ़ाई करना ३ शत्रुता करना ४ शत्रु पर चढ़ाई कर के सेना शिविर में स्थान करना ५ विपक्ष से सहमत होकर शांति करना ६ दुर्गों में खान पान की सामग्री एकत्र करना ॥

इन बातों से राज्य में सदैव शांति रहेगी । जहां धर्म्म होगा वहां किसी प्रकार के रोग बाधा नहीं रहेंगे, अन्न अधिकता से उत्पन्न होगा, जब धर्म होता ही नहीं तो कलियुग आजाता है शुद्र भीख मांग २ कर पेट पालते हैं ब्राह्मण सेवा धर्म स्वीकार

करते हैं, वेद का पढ़ना पढ़ाना नष्ट होजाता है, वैश्य सूद लेना मुख्य धर्म समझते हैं, कोई ऋतु ऐसी नहीं होती जिस में रोग न हो, आधि व्याधियों से प्रजा को पीड़ा होती है मन में क्लेश और शरीर दुर्बल होजाता है आयु छोटी होती है और अकाल मृत्यु होती है. स्त्रियें व्यभिचारणी होजाती हैं प्रति दिन दुर्भिक्ष और महामारी देश को बाधा करते हैं, खेती बाड़ी बहुत दुर्दशा को प्राप्त होती है, इस लिये राजा को सदैव उत्तम कर्म करने चाहियें हे राजन्! तुम अपनी प्रजा को न्याय पूर्वक पालो, प्रजा सदैव तुम से प्रसन्न रहती है इस से तुम स्वर्ग को प्राप्त होगे ॥

चौबीसवां अध्याय

—:o:—

कर लेने की विधि और राज मन्त्रि के लक्षण ॥

राजा युधिष्ठर ने पूछा हे पितामह! राजा किन २ बातों से सुख पाता है? जिस से प्रजा की ठीक २ प्रकार से रक्षा हो इस से राज्य की वृद्धि और राजा को सुख होता है, यदि कर अधिक हो तो प्रजा को दुःख होता है, इस लिये प्रजा के बोझ को हलका करना उचित है, राजा को सब के दुःखों का विचार करना चाहिये, कर लेने में किसी पर अत्याचार न करे, जो राजा धर्मात्मा है उस के राज्य में खेती उत्तम और [illegible] भी होती है, जिस प्रकार पानी से वृक्ष बढ़ता है

उसी प्रकार राजा प्रजा की रक्षा करता है, ब्राह्मणों को प्रसन्न रखना राजा का धर्म है, ताकि इस लोक और परलोक में भलाई हो, जो राजा प्रजा को प्रसन्न रखता है उस को एक दिन के तप और दान का फल सहस्र वर्ष पर्यन्त वैकुंठ में अच्छा फल मिलता है, प्रजा के पुण्य का चौथा भाग राजा और राज परोहित को मिलता है, जो ब्राह्मण धर्म नीति का जानने वाला हो राजा उसी को अपना परोहित बनाये ॥

भीष्म जी बोले कि हे राजन्! अब ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैशय और शुद्र की उत्पत्ति का वृत्तान्त सुनो, ब्रह्मा जी के मुंह से ब्राह्मण, भुजाओं से क्षत्रिय, जंघा से वैशय और पाओं से शुद्र बने, ब्राह्मणों का धर्म विद्या पढ़ना, शुभ कर्म करना, वेद पढ़ना और पढ़ाना और मोक्ष मार्ग बताना है, राज धर्म को जानना, प्रजा का पालन करना अच्छे पुरुषों की पालना करना क्षत्रिय का धर्म समझा गया, वैश्य का काम व्योपार और पशुपालन रहा, शुद्र का काम तीनों वर्णों की धर्म पूर्वक सेवा लिखा गया ॥

ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों उत्तम जातिये पृथ्वी का राज्य भोगने के लिये नियत हुई। परन्तु पृथ्वी वास्तव में वेद पाठी ब्राह्मण ही है, क्योंकि वह जाति का शिक्षक माना गया है इस लिये सब से उत्तम है जो राजा ब्राह्मणों के वचनों के अनुसार चलता है, संसार में उस के समान कोई नहीं। वह न्यायकारी, दानी और धर्मात्मा के नाम से प्रसिद्ध होता है, जितना धर्म कर्म राजा करता है, उस का आधा भाग राज

पुरोहित को जाता है। जिस राजा से अधर्म होते हैं और प्रजा को पीड़ा पहुंचती है, वह आप नष्ट हो जाता है और उस की आपत्ति का भाग उस के पुरोहित को भी मिलता है॥

ब्राह्मणों की निन्दा करने वाला राजा म्लेच्छ हो जाता है। उस के धन और संपत्ति की वृद्धि नहीं होती। उस की सन्तान योग्य नहीं होती, इस लिये उस का राज्य स्थिर नहीं रहता, ब्राह्मण राजा को निन्दित कर्मों से रोकते हैं। राजा ब्राह्मणों की रक्षा करे और उन को वेदाध्ययन करने के लिये सदैव चेष्टित करता रहे, यदि राजा और ब्राह्मण एक सम्मति न हों तो संकर वर्ण फैल जाता है और धर्म कर्म सब नष्ट हो जाता है जिस राज में ऋषि और विद्वान ब्राह्मणों की शिक्षा और उपदेश का विचार नहीं होता, वहां दुर्भिक्ष और अनावृष्टि सदैव बाधा करते हैं और प्रजा दुखी और दरिद्री होजाती है, नये २ रोग सदैव उत्पन्न होंगे महामारी और सन्निपात रोग सहस्रों प्राणों का नाश करेंगे॥

पच्चीसवां अध्याय

—:o:—

कुवेर जी से राजा मुचुकुन्द का वार्तालाप॥

तब भीष्म जी ने राजा युधिष्ठिर को राजा मुचुकुन्द की कथा सुनाई और कहा कि पूर्वकाल में राजा मुचुकुन्द बड़ा

बलवान चक्रवर्ति राजा हुआ' है सारे भूमण्डल के देशों को विजय करके उस ने कुवेर जी पर चढ़ाई की। कुवेर जी ने दैत्यों और गंधर्वों की सेना उस के सन्मुख भेजी तब तो गंधर्वों ने राजा मुचुकुंद की सब सेना भस्म कर डाली, राजा मुचुकुंद को बहुत क्रोध आया। उस ने अपने पुरोहित वशिष्ठ जी की बहुत निंदा की : वशिष्ठ जी वेद पाठी और तपस्वी ब्राह्मण थे, अपनी निंदा सुन कर उन को बहुत क्रोध आया और तेज को प्रकट कर के सब राक्षसों को भस्म करने लगे, यहां तक कि उन्हों ने कुवेर जी की सारी सेना को भस्म कर डाला॥

अपनी सेना के नष्ट होजाने पर कुवेर जी राजा मुचुकुन्द के पास आये और कहने लगे कि पुरोहितों के ही कारण राजाओं का ऐश्वर्य बना रहता है, नारायण ने कोश का अध्यक्ष नियत करके सुख दुःख देने का काम मेरे लिये नियत किया है, इस लिये सब राजा मेरी स्तुति करते हैं, मैं तुम्हारे बल और पराक्रम को देखना चाहता हूं। क्या तुम में ब्राह्मणों से अधिक बल है ?

राजा मुचुकुन्द क्रोध में आकर बोला कि हे कुवेर जी! ब्रह्मा जी ने एक ही स्थान पर ब्राह्मण और क्षत्रियों को उत्पन्न किया है ब्राह्मण तप और अध्ययन में सब वर्णों से बड़ा गिना जाता है परन्तु क्षत्रियों को अपने बाहूबल का घमण्ड है आप मेरी निन्दा क्यों करते हैं॥

तब कुवेर जी वशिष्ठ जी से बोले कि मैं राज्य देने की सामर्थ्य रखता हूं, परन्तु नारायण भगवान की इच्छा के बिना

न किसी को राज्य दे सकता हूं और न ही छीन सकता हूं॥

राजा मुचुकुन्द बोले कि मैं आप के दिये हुये राज्य में राज्य करना नहीं चाहता, आप का राज्य आप ही को शुभ हो यदि मैं क्षत्रिय हूं तो अपने भुज बल से जीते हुये राज्य को ही पाऊंगा॥

यह कह कर राजा वहां से चला आया और अपने विजय किये हुये देशों पर राज्य करने लगा॥

भीष्म जी बोले कि हे युधिष्ठिर! ब्राह्मणों की पदवी बड़ी है जो राजा ब्राह्मणों की प्रतिष्ठा और मान करता है उस का राज्य सदा नियत रहता है ब्राह्मण गुप्त बातों को जान कर राजा को सूचित करते हैं और उस के दुखों को दूर करते हैं राजा बताई हुई कठिनताओं को दूर करने के उपाय करता है॥

युधिष्ठिर ने कहा कि हे पितामह! राज्य को छोड़ कर वनवास करने की मेरी बड़ी आशा थी, मेरे सब मित्र और भाई बन्धु मारे गये मेरा मन राज्य करने को नहीं चाहता था परंतु भाईयों ने बलात्कार मुझ को राज्य गद्दी पर बिठला दिया॥

भीष्म जी बोले कि हां मैं सब कुछ समझता हूं, तुम वेद के अर्थों को भलि प्रकार जानते हो तुम्हारे पिता पाण्डु जी तुम्हारी सदा प्रशंसा करते रहे। ईश्वर ने तुम्हारा जन्म इसी लिये किया है कि तुम प्रजा का पालन करो, यह बात समझ लो कि जो काम किसी के लिये नियत होता है, वह उस को अवश्य करना पड़ता है, मनुष्य को चाहिये कि निरुत्साही न

है, ईश्वर उस की सहायता करेगा अब तुम कटिबंध होकर राज्य कार्य करो और न्यायकारी होकर प्रजा की रक्षा करते रहो ॥

छब्बीसवां अध्याय

—:०:—

राजा कैकेय का वृत्तांत ॥

युधिष्ठर ने पूछा कि हे पितामह ! राजा को किस प्रकार बर्ताव करना चाहिये, राजा किस २ का धन हर सकता है ॥

भीष्म पितामह बोले कि ब्राह्मण को छोड़ कर राजा सब का माल हर सकता है, दुराचारी ब्राह्मण को राजा दण्ड भी देसकता है और उस का धन भी हर सकता है जिस राज्य में ब्राह्मण चोर होता है उस के पाप और पुण्य को लोग राजा ही से युक्त करते हैं, इस विषय में राजा कैकेय का वृत्तांत सुनाता हूं ॥

यह राजा यज्ञ और कर्म के का नित्य करने वाला और बड़ा धर्मात्मा था एक दिन वन में उसे किसी राक्षस ने पकड़ लिया, राजा ने कहा कि हे राक्षस ! मैं तुम से नहीं डरता, मेरे देश में धर्म का प्रचार है, ब्राह्मण लोग धर्म कर्म करते हैं । सदैव यज्ञ करते और कराते हैं । कोई मनुष्य पाप कर्म नहीं करता, ब्राह्मण नाम को दुराचारी नहीं, न कोई विधवा स्त्री मेरे देश में है ॥ सब लोग अपने धर्म में रत हैं, चारों वर्ण अपने २ धर्मों को करते हैं, मैंने कभी ब्राह्मणों का निरादर नहीं किया,

न रूपी पर स्त्री को कुदृष्टी से देखा है, इस लिये मैं आप से कैसे डर सक्ता हूं ॥

राक्षस ने कहा कि हे केकेय ! तुम निस्संदेह चले जाओ, तुम्हें किसी प्रकार का कष्ठ हम से नहीं पहुंच सकता ॥

फिर युधिष्ठर ने पूछा कि हे पितामहा ! आपात्तिकाल में ब्राह्मण अपना निर्वाह क्योंकर करें ?

भीष्म जी बोले कि हे राजन् ! अत्यन्त दुःखी होकर भी ब्राह्मण क्षत्रिय धर्म को ग्रहण नहीं करता । हां वैश्य वृत्ति करने का अधिकार रखता है । खेती वाड़ी से अपना और अपने बाल बच्चों का पेट पाले । परन्तु घोड़ा बेचना कदापि उचित नहीं ऐसा करने वाला संसार में दुःख पाता है और मर कर नरक में जाता है, प्रिय वादी होना बड़ा भारी गुण है जो प्रिय वादी है वह सर्व प्रिय है ॥

सताईसवां अध्याय

—:०:—

अच्छे और निन्दित कर्मों की पहिचान और उन से हटना ॥

भीष्म जी बोले कि हे धर्मराज ! मनुष्य को उचित है कि सूर्योदय से पूर्व बिस्तर पर से उठे, पहिले आवश्यक क्रियाओं को करे फिर नदी अथवा कूप पर स्नान करके देवार्चन करे

पितरों का तर्पण करे, फिर सूर्य अस्त होने पर सन्ध्या करे पुर्वाभिमुख बैठ कर खाना खाये परन्तु खाते समय किसी से बात चीत न करे, किसी खाने में दोषारोपण न करे, जो २ अपने आश्रित भूत हों उन को पहिले खिलावे, फिर आप खावे। चाहे परदेश में हो चाहे घर में, यदि खाना खाते समय अतिथी अभ्यागत आवे तो उस को पहिले खिलावे। अंग हीन अपाहजों को घर से बिना खाये न जाने दे। जिस के घर से अतिथी निराश हो कर बिना खाये चले जाते हैं, वह उस घर का पुण्य ले कर और अपना पाप दे कर चले जाते हैं॥

सन्ध्या के समय भोजन करना उचित नहीं। हवन करके पहिले ब्राह्मण को खिलाना उचित है, इस के पश्चात् जो आप खाये वह उत्तम अन्न है, मांस न आप खाये न दूसरों को खिलाये क्योंकि किसी का जीवन लेना बड़ा पाप है, रात को हाथ पाओं धो कर सोये, प्रातः काल उठ कर माता पिता और गुरुओं को नमस्कार करे, क्योंकि उन के अशीर्वाद से सुख मिलता है। सूर्योदय के समय और दिन को स्त्री से गमन न करे, सिर मुंडवाते समय और खाते समय ब्राह्मण को नमस्कार करना दुःखों का मूल है॥

सूर्य्य की ओर मूत्र अथवा विष्टा करना पाप है, उनको देखना भी पाप है अवश्यक क्रियाओं के पश्चात् स्नान करना उचित है, बड़ों का सत्कार करना उचित है उनका नाम लेना उनकी प्रतिष्ठा को कम करना है, बड़ों से अपने दोषों को छुपाना

पाप है क्योंकि ईश्वर उनको देखता है, पापों के छुपाने से पाप नहीं छुपता, जो अनन्त चिन्ताओं से धन इकट्ठा होता है उस में दुःख भी होता है, इस लिये बुद्धिमानों ने उसको अच्छा नहीं कहा, धर्म वही है जो मन से किया जाय, जब तक मन वश में न हो, चित्त प्रसन्न नहीं रहता, जहां तक हो सके चित्त को वश में करना चाहिये, जो कुछ हाथ आवे उसी पर सन्तोष करे, जो उपाय ठीक हो उसी में ईश्वर की सहायता समझे, अपनी बुद्धिमत्ता का घमण्ड न करे ॥

अठाईसवां अध्याय

—:०:—

गृहस्थ आश्रम की अधिक्यता ॥

गृहस्थ आश्रम से बढ़ कर कोई धर्म नहीं, परन्तु इस में मोह के फंदे में फंस कर मनुष्य नाना प्रकार के दुःख सहता है, इसी कारण गृहस्थी आवागमन से मुक्ति नहीं पाता, मन का मारना और इंद्रियों का वश में करना भी गृहस्थ का तप है जो लोग अपने सम्बंधियों के वश में मग्न हो जाते हैं वह नाना प्रकार के कष्ट पाते हैं। बुद्धिमान लोग इसी से संसार को तुच्छ समझते हैं और सब कुछ नाशमान मानते हैं। मृत्यु के पश्चात् मां, बाप, भाई, बन्धु कोई काम नहीं आता, सब अपने अपने सुखों को रोते हैं। केवल धर्म ही सहायता देता है, यही साथ जाता है इस लिये जगत को छोड़ कर और सब के

मोह को छोड़ कर अपना धर्म ही करने से इस जगत में सुख मिलता है और अगले जन्म में आनन्द प्राप्त होता है जो ऐसा नहीं करता उस का इस लोक और परलोक दोनों में भला नहीं होता ॥

सुख दुःख देवेच्छा जन्म मृत्यू को जो जानता है और संसार को तुच्छ समझता है, वही ईश्वर को पहिचानता है, दूसरा तो संसार के भ्रमजाल में भ्रमन करता है हे राजन्! तुम भी संसार के मोह को छोड़ कर दुख से परे हो, मृत्यु वश सम्बन्धियों पर शोक न करो, बिछड़े हुये भाईयों से मिलना कठिन है, इस लिये चिन्ता व्यर्थ है यह लोग तुम्हारे काम नहीं आयेंगे, वरन उन के दुःख में मग्न होने के कारण धर्म के सब कामों को तुम छोड़ दोगे, जो होनहार है वह अवश्य होगी उस प्रमात्मा सर्व शक्तिमान का विचार करो जो सब का है। स्वामी संसार मिथ्या है और संसार के पदार्थ इस से भी मिथ्या हैं जो कुच्छ दिखाई देता है केवल भ्रम जाल है, एक दिन सब का नाश होगा जो मनुष्य इस नीति को सुनेगा अथवा वर्ताव करेगा उस को इस लोक और परलोक दोनों में सुख होगा ॥

प्रथम भाग समाप्तः

दूसरा भाग

पहिला अध्याय

राजाओं का आपद्धर्म ॥

राजा युधिष्ठिर ने भीष्म जी से पूछा कि जब राजा का कोश शत्रु ने हर लिया हो, खान पान के पदार्थ और युद्ध की सामग्री कम हो और शत्रु ने चारों ओर से घेर लिया हो और कुछ देश और ग्राम भी उस के पास से निकल गये हों उस समय उस को क्या उपाय करना चाहिये ॥

भीष्म जी बोले कि ऐसे समय में राजा को उचित है कि शत्रु से संधि कर ले। यदि शत्रु संधि न करे, तो उस को कुछ ग्राम देकर भी संधि करनी चाहिये, अथवा कुछ धन दे देना चाहिये परन्तु धर्म का त्याग कभी न करे, सेना एकत्र करने और कोश के बढ़ाने में यत्न करना चाहिये, यदि वह उपाय करने के समर्थ न हो तो शूरवीरों की भांति युद्ध में कट मरे। ऐसे वीरों को अवश्य स्वर्ग प्राप्त होता है ॥

बुद्धिमान वही है जो बलवान शत्रु को कुछ ग्राम दे कर अथवा धन दे कर टाल दे, अथवा दुर्ग और राजधानी से निकल कर गुप्त रह कर धन और सेना के एकत्र करने में यत्न करे, प्रजा के पालन करने और विजय के भाव कभी भी

उस के मन से दूर न हों। जो लोग अपने भुज बल से और पराक्रम से तृप्ति पाते हैं, वह धर्मात्मा और रूप से श्रेष्ठ होते हैं। अधर्म वृत्ति ठीक नहीं। धर्म के विपरीत जाने वाले मूर्ख लोगों की संगति से पृथक होना उचित है। ऐसे लोगों को नगर से बाहिर कर देना चाहिये, इन को बंदिगृह में डाल देना चाहिये, इन को दण्ड देना चाहिये, अथवा उन का धन और घर छीन लेना चाहिये॥

जो ब्राह्मण दण्डनीय हों उनको प्राणों से मारना उचित नहीं, परन्तु राज्य से बाहिर निकाल देना चाहिये, निन्दा करना सब पापों से बढ़ कर पाप है बुद्धिमान रूपी किसी की निन्दा नहीं करते वरन निन्दा करने वाले को दण्ड देते हैं, गुरु से बढ़ कर कोई बड़ा नहीं होता यदि यह भी निन्दा करने वाला है तो उसको दण्ड देना क्षत्रियों और राजाओं का धर्म है॥

शत्रुओं के हाथ से मुक्ति पाना और मन्त्रियों से मन्त्र लेना राजधर्म के नियमानुकूल है, प्रिय वाणी और अपनी इन्द्रियों को वश में रखना, दुःख और आपत्ति में बहुत सहायता देता है वीर और बलवान योधा वही है जो आपत्ति काल में भी राजा के साथ रहता है और राजा की सहायता में प्राणों को भी त्याग देता है, राजा का कर्तव्य है कि सेना का दल सदैव अपने साथ रखे, रण भूमि में प्रत्येक वीर के कर्तव्यों को देख कर, उसके निमित्त प्रशंसा के वचन कहता रहे ताकि सेना का उत्साह बढ़े॥

पराजय काल में भायों से निधड़क हो कर शत्रुओं से युद्ध करने में विजय प्राप्त हो सक्ती है, सेना की रक्षा राजा का धर्म है, कोश का मुंह खुला रहे, जो धन अपने देश अथवा अन्य देशों से इकट्ठा हुआ हो उस को सेना में विभक्त करे, क्योंकि धन से सेना प्रसन्न होती है और सेना से राज्य प्राप्ति होती है, निर्दयता और अन्याय से इकट्ठा किया हुआ धन शुभ नहीं होता, राज नीति से एकत्र धन को मंत्रियों और राजाधिकारियों की वृद्धि में व्यय कर के उन के मंत्र और विचार से उन्नति शिखर पर पहुंच कर शत्रु से मुक्ति का उपाय करना राजा का परम धर्म है ॥

जो राजा अपने कोश की वृद्धि नहीं करता वह सदैव शत्रुओं की चढ़ाई से दुःखी और चिंता ग्रस्त रहेगा, थोड़ी वेतन पाने वाले कर्मचारियों को देश रक्षा के उत्तम अधिकारों पर नियुक्त करना केवल मूर्खता है, थोड़ा वेतन पाने वाले प्रसन्नता से और अच्छा काम नहीं करते, धन से राज बढ़ता है, इस के दोष छिपे रहते हैं, जो राजा प्रजा को दुःखी रखता है प्रजा उस की शत्रु हो जाती है उस का घमण्ड और अविनितता प्रजा की आंखों में खड़कता है, लोग इस के भायों के शत्रु हो जाते हैं और उस के मारने अथवा निरादर करने के उपाय सोचते हैं, ऐसे राजा को सुख नहीं मिल सक्ता ॥

बुद्धिमान, नीतिज्ञ और कुशाग्र बुद्धि मन्त्रियों से राज्य कार्यों में मंत्र लेना उचित है किसी काम में दीर्घ सूत्रता करनी उचित नहीं नीति ही से राज्य और धर्म नियत रहते हैं यदि

शत्रु को मारना कठिन हो तो भाग जाना ही उचित है, बन में जाकर मृगों के साथ वास करना उचित है, कुसंग से सदैव बचता रहे, दुराचारियों की संगति से केवल अपमान ही प्राप्त होता है, मीठा बोलने से मनुष्य दूसरे के मन को वश में कर लेता है ॥

ख्याति को उपलब्ध करने से इस लोक और परलोक दोनों में सुख की प्राप्ती होती है नास्तिक लोग जो ईश्वर में भी विश्वास नहीं करते कहा करते हैं कि न यह लोक है न परलोक और न पाप है न पुराय है, ऐसे लोग सामर्थ्यहीन होते हैं, नास्तिक और भयभीत मनुष्य इस प्रकार विश्वास नहीं कर सकते जैसे सत्पुरुष चोरों पर विश्वास नहीं करते, युद्ध से भागने वाले को मारना दोष युक्त नहीं, किसी की प्रतिष्ठा की ईर्षा करना, कृतघ्नता, ब्राह्मण का धन हरना, कन्या का भाग लेजाना, पर स्त्री से सम्भोग करना यह सब बड़े पाप कर्म हैं ॥

दुराचारी चोरों की संगति सदैव हानी कारक है । इस से धन का नाश होता है, इस लिये हे राजन् ! दुराचारी मनुष्यों को सदैव नगर से वाहिर कर देने से ही धर्म की निष्ठा बनी रहती है ॥

यदि चोर डाकू अपने वश में आजायें तो उन को छोड़ना धर्म नहीं, उन के विना दण्ड छोड़े जाने जाने से प्रजा को अत्यन्त पीड़ा और दुःख होता है ॥

दूसरा अध्याय

—:०:—

शिष्टा चार के गुण और कायव्य व्याध का वृत्तांत ॥

भीष्म जी बोले कि हे भारत वंश के शिरोमणि राजा युधिष्ठिर! यह बात तो सिद्ध ही है कि धर्म ही इस संसार में सब से बढ़ कर है इस लिये धर्म का कभी भी त्याग न करे यह लोक उद्यम और पुरुषार्थ के आधीन है, नित्य पराक्रमी राजा लोग अपने बल और उत्साह से सेना को बढ़ाने और शास्त्रों के सजाने में धन को व्यय करने में यत्न करते हैं दुराचारी दुष्टों पर राजा का क्रोध ऐसा होजाता है कि वह अपने दुगुणों को छोड़ कर नियम के विपरीत कोई कर्म नहीं करते, धर्म का महत्व शूर वीरता से बना रहता है धर्म वीरता और पराक्रम के आधीन है, भाग्यवान राजा लोग धर्म ही के कारण आनन्द सम्भोग करते हैं ॥

जिस राजा का राज्य शत्रु ने हर लिया हो और वह राज्य से भ्रष्ट होगया हो उस को सब प्रकार के दुःख उठाने पड़ते हैं जो मनुष्य दुराचार के कारण अपने स्थान से भ्रष्ट हो जाता है वह निंदा के बाणों से पीड़ित होता है परंतु यह बात वेदपाठी ब्राह्मणों और वृद्धों की सेवा करने से दूर होजाती है ॥

उदारता, कठोरता, वृद्धों की प्रतिष्ठा और मीठा बोलना यह विशेष गुण है जिनसे मनुष्य सर्व प्रिय हो जाता है अपने लाभ का विचार न करे, जो राजा दूसरों के लाभ का विचार

अपने हृदय में धारण करते हैं, वह प्रजा की दृष्टि में उत्तम गिने जाते हैं ॥

हे राजन् ! मर्य्यादा युक्त चोर भी नरक को नहीं पाता, इस स्थान पर मैं तुम को एक प्राचीन इतिहास सुनाता हूं, शिकार करने वाला बुद्धिमान शूरवीर शास्त्रज्ञ, वेद ब्राह्मणों का रक्षक आश्रमियों के धर्म की रक्षा करने वाला, क्षत्रियों का रक्षक एक कायव्य नाम निषाद का पुत्र था, उसकी माता निषादी थी और पिता क्षत्रिय, इस लिये वह निषाद जाती में ही उत्पन्न हुआ और इसी में प्रसिद्धी को प्राप्त हुआ वह धर्म और शास्त्र का जानने वाला होकर सब कार्य धर्मानुकूल ही करता था, माता, पिता और गुरू की सेवा करता था और उन को भोजन आदि से सदैव तृप्त रखता था । लोगों के घरों में चुप के से भोजन आदि पदार्थ घर लाता था । चोरों ने उस के धर्म अर्थ युक्त वृत्तान्त को देख कर उस को अपना राजा बनाने की अभिलाषा की और कहा कि हे निषाद ! आप हमारे राजा हूजिये, निषाद ने कहा कि तुम लोग निर्बलों का सताना छोड़ दो, ब्राह्मण और स्त्री अवध्य समझो, ब्राह्मणों का धन कभी न हरो, स्त्रियें मनुष्यों से सदैव अवध्य हैं जिस प्रकार सूर्योदय से अन्धकार नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार ब्राह्मण का धन हरने वाला नष्ट हो जाता है, इस प्रकार उपदेश देकर कायव्य ने अपने अनुयायियों को बुरे कामों से रोका और वह सब के सब धर्मात्मा बुद्धिमान और शुद्धाचारी होगये ॥

हे युधिष्ठिर ! जो इस प्रकार इस अध्याय का इतिहास सुनता है वह पाप कर्म से निवृत्त हो जाता है ॥

तीसरा अध्याय

—:०:—

कोश की पड़ताल और धन संचय करने के उपाय ॥

भीष्म जी बोले कि जो लोग धन वान हैं और समृद्धि युक्त हैं, परन्तु यज्ञ हवन नहीं करते और जो मनुष्य डरा धमका कर दूसरों को दुःख देते हैं । अथवा बलात्कार उन का धन हर लेते हैं । ऐसे लोगों से कर लेना राजा का परम धर्म है ! इस प्रकार कर से धन प्राप्त करके अपने कोश को भरे और सेना को वेतन देने और यज्ञ हवन में व्यय कर दे । ऐसा धन खाने पीने और निज के कामों में वर्तना ठीक नहीं ॥

जो धन दुराचारी पुरुषों को दण्ड दे कर एकत्र किया जावे वह साधुओं को दे देना चाहिये यही उत्तम धर्म है धर्म के बल से और बाहु बल से जगत वश में आसकता है ॥

जिस प्रकार चींटे मच्छर मक्खी आदि जो स्वयं उत्पन्न होते हैं उन के मारने के उपाय सोचे जाते हैं इसी प्रकार यज्ञ न करने वाले मनुष्यों से भी बचना उचित है जो यज्ञ करते हैं वह मर कर मनुष्य योनी में जाते हैं जो राजा यज्ञ करते हैं वह सदैव प्रसन्न रहते हैं उन को कोई दुख बाधा नहीं करता इस स्थान पर एक इतिहास याद आता है ॥

किसी तालाब में तीन मछ रहते थे एक तो अनागत विधाता था दूसरा प्रत्युत्पन्न मति और तीसरा दीर्घ सूत्री था एक दिन मछली पकड़ने वालों ने मछली पकड़ने के निमित्त तालाब के निकट एक बड़ा गढ़ा खोदा और तालाब का पानी उस मे डालना परारम्भ किया अनागत विधाता मछ अपने साथियों से बोला कि हुश्यार रहना किसी आपत्ति के आने का भय दिखाई देता है ऐसा न हो कि प्राणों का संशय हो, अच्छा हो कि यहां से भाग चलें दीर्घ सूत्री बोला कि अभी जल्दी क्या है सोच समझ कर चले जायँगे प्रत्युत्पन्न मति बोला कि कोई शंका मत करो समय पर आप को ऐसी मति बताऊंगा कि जिस से आप की और मेरी जान भी बच जायेगी ॥

परन्तु अनागत विधाता को इन की बातों पर विश्वास न हुआ यह नालियों के मार्ग से दूसरे तालाब में चला गया इधर मछली पकड़ने वालों ने तालाब में जाल डाला, मछलियों के साथ दीर्घ सूत्री और प्रत्युत्पन्न मति भी फंस गये, मछली वालों ने जल खैंचना आरम्भ किया, प्रत्युत्पन्न मति ने कुछ ऐसा विचार किया कि जिस से वह जाल से छूट गया और किसी दूसरे तालाब में चला गया परन्तु दीर्घ सूत्री वहीं पकड़ा रहा और दूसरी मछलियों के साथ मारा गया, इसी प्रकार हे राजन्! प्रत्येक मनुष्य को अनागत विधाता होना चाहिये समय पर देखा जायगा यह कहना बुद्धिमत्ता नहीं, देखो ईश्वर ने काल को मास, ऋतु, वर्ष, घड़ी, पल, रात्रि दिन आदि में इस

लिये विभक्त किया है कि मनुष्य प्रत्येक पल को देखता रहे और समय पर सब काम करे यदि समय टल जाये तो कुछ हाथ नहीं आता मूर्ख लोग समय की परवाह नहीं करते ॥

चौथा अध्याय

देश की रक्षा और शत्रुओं से बचने का उपाय॥

तब राजा युधिष्ठिर ने भीष्म से पूछा कि हे पितामह ! जब राजा शत्रु से घिरा हुआ हो और उस के अधिकारी और कर्मचारी उस का साथ छोड़े हुये हों न उस का कोई साथी हो न कोई शुभ चिन्तक, तो उस समय वह शत्रुओं से कैसे मुक्ति पासकता है ॥

भीष्म जी बोले कि हे सत्यवादी राजा ! तुम जानते हो कि आपत्ति में कोई किसी का साथ नहीं देता, मित्र भी शत्रु होजाते, हैं मैं पहिले कह चुका हूं कि शत्रु से मुक्ति पाने की विधि सन्धि है यदि उस का कोई मित्र ऐसा हो कि वह मूर्ख न हो तो उस के द्वारा सन्धि का संदेशा भेजे क्योंकि मूर्ख मित्र से बुद्धिमान शत्रु अच्छा होता है यदि वह मित्र बुद्धिमान है तो अपने गुण प्रभाव से शत्रु को वश में कर लेगा और इस आई हुई विपत्ति को अपने मित्र राजा के सिर से टालेगा, मैं इस स्थान पर एक बिल्ली और चूहे की कहानी सुनाता हूं ॥

किसी घने वन में बरगद का एक बड़ा भारी वृक्ष था उस की शाखा बड़ी लम्बी चौड़ी और दूर तक फैली हुई थीं उस

का तना बहुत मोटा था और लताएं उस को चारों ओर से घेरे हुये थीं उस वृक्ष की जड़ में सर्प आदि के अनेक विषैले जन्तु रहते थे और उस की शाखा पर अनेक प्रकार के पक्षी। एक चूहा पलित नाम वाला सौ द्वार की बिल बना कर उस वृक्ष में रहता था और एक बिल्ला भी वहीं रहता था, उस का नाम लोमश था एक व्याध रात्रि को आता और जाल बिछा जाता, प्रातःकाल जाल को आकर देखता तो उस में अनेक पक्षि फसे जाते इन्हें बेच कर वह व्याध अपना पेट पाला करता॥

दैव योग से लोमश बिल्ला जाल में फंस गया, पलित चूहा बाहिर निकला और बिना डर के इधर उधर फिरने लगा, इतने में एक नयोला और एक उल्लू भी वहां आ गये और चूहे पर ताक लगा कर किसी स्थान पर बैठ गये और सोचने लगे कि कब चूहा पहुंच में आवे और हम पकड़ें, चूहा बड़ी चिन्ता करने लगा कि यदि मैं भगूं तो उल्लू पकड़ लेगा यदि ठहरा रहूं तो न्योला खा जाता है विवश होकर बिल्ली के पास गया और कहने लगा कि हे मित्र ! इस समय आप भी दुःख में हैं, और मैं भी आपत्ति में हूं क्या कोई ऐसी युक्ति बना सकते हैं कि जिस से आप की और मेरी दोनों की जान बच सकती है ? हां एक बात मेरे स्मरण में आई है सुनिये तो बताता हूं॥

बिल्ली बोली कि हे मित्र ! शीघ्र कहो मैं तो प्राणों के भय में हूं, प्रातःकाल होते ही व्याध पकड़ लेगा और नहीं

जानता कि मेरा वध कर चूहे ने कहा कि यदि आप मेरे प्राणों की रक्षा करें तो मैं अपने दांतों से आप जाल को काटूं और आप जाल से छूट जायें। बिल्ली बोली कि हे महात्मन्! तुम धन्य हो आप के शब्दों से अमृत टपकता है आप मेरा उपकार चाहते हैं उपकारी जीव नारायण का प्यारा होता है यदि इस आपत्ति से मैं बच गया तो आयु भर आपका कृतज्ञ रहूंगा, चूहा बोला कि आप का छुटकारा तो जाल ही से हो जायगा, परन्तु मुझे इस बात का भय दीजिये कि छूटने के पश्चात् आप मेरी रक्षा करेंगे, न्योला और उलूक तो मेरी ताक में हैं कहीं आप भी जाल से निकल कर मुझे भक्षण करने का ही विचार न करें, आप का और मेरा स्थान तो एक ही है इसलिये आप और मैं मित्र हो सकते हैं। पडोसियों का सम्बंध कुच्छ थोड़ा नहीं होता॥

बिल्ला बोला कि यदि मेरा जाल काट कर मेरी प्राण रक्षा कर दो तो मेरी और आप की मित्रता सदैव बनी रहेगी, तब चूहा अपने काम में लग गया और शनैः २ जाल काटने लगा, बिल्ले ने कहा कि हे मित्र! कृपा करके शीघ्र कीजिये यदि व्याध आगया तो फिर प्राणों की कोई आशा न रहेगी, चूहेने कहा कि आप न डरें मैं व्याध के आने से पहिले ही आप के जाल को काट डालूंगा परन्तु डर है तो यह है कि ऐसा न हो कि मैं तो आप के नीचे जाल काटने आऊं और आप को छुड़ाऊं और आप मुझ को चट कर जायें। बिल्ले ने कहा कि हे मित्र! आप भय न करें, काम

किये जायँ, मैं आप की रक्षा के निमित्त शपथ खाता हूं ॥

चूहा निर्भय हो कर बिल्ले के पेट के नीचे गया और नीचे होकर शनैः शनैः जाल काटने लगा। बिल्ले और चूहे की मैत्री देख कर न्योला उल्लू निराश होगये और इस लिये अपने २ स्थानों को चले गये, इधर सूर्य भगवान अन्धकार के दलों को तोड़ फोड़ कर उदयाचल के शिखर पर प्रकट हुये। जगत प्रकाशमान हुआ। व्याधचार कुत्तों के समेत आता दिखाई दिया यह देख कर बिल्ला बहुत घबराया और चूहे को नम्रता पूर्वक कहने लगा कि बस अब मेरे प्राण थोड़े काल की ही प्रतीक्षा करते हैं, वह मृत्यु मेरे सामने आरही है। आप ने भी अभी तक पूरा काम नहीं किया, यदि जाल कट जाता तो जान बचा लेता, चूहे ने उस की निराशता देख कर शीघ्रता से दांत चलाये और थोड़े ही क्षण में इतना जाल काट डाला कि बिल्ला उस से निकल सके बिल्ले ने जाल से सिर निकाला और अकस्मात भागा। चूहा भी उछलता कूदता अपनी बिल में जाघुसा ॥

यमरूप व्याध यह दशा देख कर अपने जाल को उठा कर अपनी अभाग्यता को शोचता हुआ जंगल को चला गया। लोमश चूहे के इस उपकार का बहुत धन्यवाद करने लगा और बिल के पास जाकर कहने लगा कि हे मित्र, हे प्राण रक्षक तनिक बाहर तो आओ मैं अपने प्राणों को तुम पर न्योछावर करता हूं भय को छोड़ दो, मैं तुम से कभी कपट न करूंगा आप के उपकार के बोझ से मेरी ग्रीवा नीचे झुक रही है।

मैं आप से कभी कपट न करूंगा, हे मित्र! मेरे सब मित्र और सम्बन्धि आप का धन्यवाद करते हैं, तुम ने मेरे प्राणों की रक्षा की, इस का फल ईश्वर देगा ॥

यह सुन कर पलित चूहे ने उत्तर दिया कि आप बलवान हैं और मैं निर्बल हूं, आप की और मेरी मैत्री कैसे निभ सकती है, सब पर विश्वास करना बुद्धिमानों का काम नहीं, क्षण भर में कुछ का कुछ हो जाता है यद्यपि आप प्रेम से वर्ताव करें परन्तु मुझे विश्वास नहीं, जगत की प्रणाली बड़ी विचित्र है जब तक किसी का किसी से काम है, वह उस का अनुचर है, जब काम निकल गया तो फिर तू कौन और मैं कौन, आप अपने घर में प्रसन्न और मैं अपने घर में प्रसन्न भक्ष्य और भक्षक की प्रीति क्या हो सकती है आप क्यों मुझ को बुलाते हैं? आप का प्रयोजन ही क्या है यह तो प्रकट ही है कि सारी रात आप की जाल में फंसे हुये व्यतीत हुई अब दिन निकल आया। भूख लग रही है। क्या अब मुझ पर ही अपनी प्राण घात करने का विचार रखते हो? बुद्धिमानों का वचन है कि भक्ष्य और भक्षक की प्रीति बड़ी आपत्ति का कारण है! इस लिये मैं धोका खाना नहीं चाहता। बलवान को दूर ही नमस्कार है हे मित्र! बुद्धिमानों का वचन है कि प्राण लाखों रूपयों से भी अधिकतर प्रिय हैं यदि प्राण गये और धन हाथ आया तो उस धन से क्या प्रयोजन है। इस लिये इस संसार में प्राणों से अधिक प्रिय कुछ नहीं ॥

लोमश बोला कि हे मित्र! इस बात को तो मैं जानता हूं

कि आप बुद्धिमान मित्र हैं, मूर्ख नहीं, परन्तु मैं भी बुद्धिमान शत्रु हूं, बुद्धिमान शत्रु कभी दुःख नहीं देता, इस लिये भय क्यों करते हो क्या यह कभी हो सकता है कि अपने से भलाई करने वाले के साथ धोका किया जाय मैं तुम को अपना गुरू समझता हूं आप के धर्म युक्त वचन सुन कर मेरा जीवन सफल हो जायगा तुम को किसी का भय न करना चाहिये। जितने तुम्हारे शत्रु हैं कोई तुम्हें तिरछी दृष्टि से न देख सकेगा ॥

चूहा बोला कि आप लाखों यत्न करें मैं आप के फंदे में नहीं आसकता मैं शास्त्रों को जानता हूं शुक्राचार्य ने कहा कि शत्रु चाहे वृद्ध भी हो तो भी उस के साथ मैत्री करने में केवल हानी ही है शत्रु पर विश्वास करना बुद्धिमानों का काम नहीं। वरन दूसरों को नीती के वचनों से अपने ऊपर विश्वास करायें, न कि दूसरों पर विश्वासित हो जाये जीव की रक्षा धन और पुत्र की उत्पत्ति यह बातें कुछ अपने से ही बन पड़ती हैं दूसरों की सहायता कुछ काम नहीं देती इस लिय मैं आप से क्षमा मांगता हूं यदि आप मेरा हित चाहते हैं तो दूर से ही कुशल क्षेम पूछ लिया करेंगे ॥

चूहे की इस नीति युक्त वक्ता से लोमश बड़ा प्रसन्न हुआ और उस की बुद्धिमत्ता की प्रशंसा करते हुये वृक्ष पर चढ़ गया ॥

यह कह कर भीष्म जी बोले कि हे धर्म पुत्र युधिष्ठर ! जिस प्रकार चूहे ने अपने शत्रु के माया बचाये और अपने

जीवन की भी रक्षा की इसी प्रकार आपद्ग्रस्त राजा भी बलवान शत्रु को वश मे कर सकता है समय पर शत्रु से संधि करले मूर्ख मित्रों की बातों में आजाना बुद्धिमानों का मत नहीं, जो लोग बुद्धिमान और उद्यमी हैं वह आने वाले दुःखों का पहिले ही उपाय करते हैं जितना सोचोगे उतनी ही सूक्ष्म बातें समझ में आयगी बुद्धिमान आपत्ति काल में विचार और बुद्धि से काम लेकर आपत्ति को दूर करते हैं शत्रु उन को वश नहीं कर सकता, इस लिये जो काम करो सोच समझ कर करो जिन पर जितना भरोसा करना उचित है उन पर उतना ही विश्वास करो, ऐसा न हो कि हानी कारक हो ॥

पांचवां अध्याय

—:o:—

बुद्धिमान शत्रु और मूर्ख मित्र का परस्पर भेद ॥

राजा युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह ! आप के वचनों से प्रकट है कि मित्रों पर विश्वास करना उचित नहीं परन्तु राज्य कार्य बिना विश्वास के हो नहीं सकते फिर किस प्रकार राज्य प्रबंध होसके यह मुझ को बड़ा सन्देह उत्पन्न हुआ है इसे दूर कीजिये ॥

भीष्म जी बोले कि हे युधिष्ठर तुम ने राजा ब्रह्म दत्त का इतिहास सुना है यह राजा कांपिल्य नगर का राजा था इस के महल में पूजनी नाम पक्षिणी रहा करती थी उस के घर की छत पर उसका घोंसला था जब ब्रह्म दत्त के घर में पुत्र उत्पन्न

हुआ तो उस समय पक्षिणी के यहां भी एक पुत्र उत्पन्न हुआ, वह पक्षिणी सब जीवों की भाषा समझती थी एक समय पूजनी समुद्र के तट पर गई और वहां से दो अमृत फल लाई एक तो उस ने अपने बच्चे को दिया और दूसरा राज कुमार को खिलाया एक समय राज पुत्र खेल रहा था और अपनी धात्री की गोद में बैठा हुआ था पूजनी का बच्चा भी इधर उधर भूमि पर फिर रहा था राज कुमार के हाथ में लकड़ी थी जिस से उस ने पुजनी के बच्चे को मारा छोटा पक्षी लकड़ी की चोट को न सहार सका और वहीं मर गया ॥

जब पुजनी आई तो अपने बच्चे को मरा हुआ देख कर बहुत शोक करने लगी, अश्रुपातों से उसका मुंह आच्छादित हो गया, सोचने लगी कि क्षत्रियों पर विश्वास करना केवल भूल है, यद्यपि वह प्राणों के रक्षक कहाते हैं तो भी क्षत्रिय क्षत्रिय ही हैं। बात २ पर क्रोध करते हैं। मैंने बड़ी मूर्खता की कि इन पर विश्वास किया, अच्छा मैं इस अपराध का बदला अवश्य लूंगी और राज कुमार को मारूंगी, यह विचार कर झट उड़ी और राज कुमार की आंखें अपने पंजों से निकाल लाई और उड़ कर बोली कि जैसा करोगे वैसा पाओगे, राजा ब्रह्मदत्त यह सुन कर घर में आये और राज कुमार की यह दशा देख कर बड़ा शोक करने लगे। जब वृत्तान्त पुछा तो प्रतीत हुआ कि राजकुमार की चोट से पुजनी का बच्चा मारा गया और पुजनी ने राजकुमार की आंखें फोड़दी हैं ॥

राजा ब्रह्मदत्त ने पुजनी से कहा कि निस्संदेह राजकुमार

ने तेरा अपराध किया था, तूने उसे अपराध का दण्ड दे दिया है, इसलिये तुम क्षमा के योग्य हो, मैं तुम्हारे अपराध को क्षमा करता हूं. परन्तु राज भवन छोड़ कर कहीं मत भागो ॥

पूजनी बोली कि मैंने तेरा अप्रिय किया है, मैं तेरे समक्ष में क्या हूं एक मुट्ठी भर हूं, यदि मैं तेरे भवन में रहूंगी तो तू जब चाहेगा मुझे मार देगा। तुम्हारे वचन पर विश्वास करना मूर्खों का काम है। तुम्हारे घर में रहिना आपत्ति का भय है जो कोई शत्रुओं के मीठे २ वचन सुन कर मोहित हो जाता है, वह शीघ्र ही नष्ट होता है। क्योंकि क्रोध और ईर्षा की अग्नि अंदर ही अंदर सुलगती है। शत्रुओं के हाथ से पुत्र पौत्र का परलोक भी नष्ट होता है। शत्रु की बात पर कभी विश्वास न करे। इस के अतिरिक्त शत्रुओं को मीठे वचनों से वश में करे। यही बुद्धिमानों का कथन है। मैं अपनी और अपने बच्चों की रक्षा समझती हुई यहां रहती थी परन्तु वह बात अब नहीं। यह कह कर पूजनी दीवार पर जा बैठी ॥

ब्रह्मदत्त बोला कि हे पूजनी! तूने मेरा कोई अपराध नहीं किया, राजकुमार ने अपने पापों का परिणाम पाया है। तू वृथा भय करती है। मैं कभी तुझे दुःख न दूंगा, न तेरे बच्चों को सताऊंगा। तूं प्रसन्नता पूर्वक मेरे स्थान पर बस ॥

पूजनी बोली कि हे राजन्! आप की इन बातों पर मैं कैसे विश्वास करूं जब राज कुमार सामने आयेगा तो आप के

हृदय में शोक उत्पन्न होगा। उस समय तुम मेरे मारने का उपाय करोगे। मैं एक मुट्ठी भर और आप एक बलवान राजा आप जब चाहें मुझे मार सकते हैं। शास्त्र में लिखा है कि पांच पदार्थों से शत्रुता बढ़ती जाती हैः—स्त्री, भूमि, कटुवचन, दुष्ट स्वभाव और दाप। जो निर्बल हो वह बलवानों से दूर ही भागे। शत्रु पर विश्वास करना शास्त्र के विरुद्ध है, इस लिये यहां से चला जाना ही अच्छा है, यहां के स्थान से अपनी और बच्चों की जान का भय है॥

ब्रह्मदत्त बोला कि तू क्यों होकर ऐसी बातें करती है एक न एक दिन मृत्यु सब को खायगी, कोई किसी का नाश नहीं करता न कोई किसी के प्राण लेता है। जीवन और मृत्यु दैवाधीन हैं बहुतों के मारे लिये जाते हैं और बहुत अपना जीवन बचा लेते हैं, आग का काम जलाना है जो वस्तु आग में गिरेगी जल कर राख होजायगी. इसी प्रकार मृत्यु सब के साथ है आग में सब को जलना है हमारे और तुम्हारे वश में कुछ नहीं॥

यह सुन कर पूजनी बोली कि तुम्हारे वचनों से मृत्यु सब से बलिष्ट है जब मृत्यु सब से मुख्य है तो एक को एक से शत्रुता क्यों होती है भाई का भाई शत्रु क्यों होता है? जब यह समझ लिया जाय कि एक दिन मरना आवश्य है तो संसार के व्यवहार क्यों कर चलें, देवताओं और राक्षसों में संग्राम क्योंकर हुआ? रोगियों की चिकित्सा व्यर्थ है वैद्यों की औषधियों से क्या प्रयोजन, किसी का शोक करना निरर्थक है

मनुष्य अन्य जन्तुओं और पक्षियों का मांस खाता है परन्तु जो मनुष्य शास्त्र के नियमों से अभिज्ञ है वह ऐसा कभी नहीं करते। अपने और इतर प्राणियों के प्राणों में कोई अन्तर नहीं देखते। प्राण सब को अभीष्ट है, सन्तान से अधिक कोई पदार्थ प्रिय नहीं। दुःख से सब भागते हैं सुख सब को प्रिय है, आये हुये धन का चले जाना और यौवन से जरा अवस्था में प्रवेश करना इन दो बातों से शोक प्रभाव होता है और मानसिक व्यथा बढ़ती है॥

दुष्ट स्वभाव और दुराचारी पुरुष से चित्त न लगाना चाहिये, स्त्री की प्रीति में फसना बुद्धिमानों का काम नहीं, कौन ऐसा पुरुष है जो इन बातों को न जानता हो परन्तु कौन है जो इन के अनुकूल आचरण करता है, सब लोग अपने दुख को दुख समझते हैं, पराये दुख का कुच्छ भी विचार नहीं करते कोई पुरुष यह नहीं समझता कि मृत्यु पर सन्तोष करके संसार के कार्यों से हाथ उठाले, ईश्वर न करे कि किसी का मन किसी से फट जाये लाख यत्न करो परन्तु फटे हुये हृदयों का मेल मिलाप असम्भव है बुद्धिमानों ने कहा है कि—

मन मोती और दूध रस इन को यही स्वभाव।
फाटे से भरता नहीं कोटों करो उपाय॥

मिट्टी का बासन टूटा हुआ जुड़ नहीं सकता, इसी प्रकार टूटे हुये मन का जोड़ना कठिन है, राक्षसों के गुरु शुक्राचार्य जी कहते हैं कि जो शत्रुओं की सचाई अथवा असत्य वचनों पर विश्वास करते हैं वह शीघ्र ही मारे जाते हैं, बुराई करने वाले

और निन्दक की दिखावे की बातों पर न जाना चाहिये नहीं तो अवश्य दुःख मिलेगा ॥

हे राजन्! दैव के साथ उपाय भी है। दैव पर भरोसा करना और उपाय को छोड़ देना बुद्धि के विरुद्ध है। उपाय करना भी युक्त है। युक्ति के विना भोजन मुंह तक नहीं पहुंच सकता। परिश्रमी पुरुष सदैव प्रसन्न रहते हैं और दैव पर विश्वास करने वाले अपाहिज और आलस्यी देखे जाते हैं। उपाय को मनुष्य विस्मरण न करे, चाहे कठिन काम हो, चाहे सुगम, दैवाधीन रहिने वालों की आयु रोते कटती है, मनुष्य को योग्य है कि वह विद्या, शूरता, बुद्धिमत्ता, और उत्तमगुण सीखे ताकि संसार में यश पावे, समय पर सहायता करने वाले धन, स्त्री, भूमि और प्रिय मित्र ही होते हैं, बुद्धिमान सदैव प्रसन्न रह कर किसी शोच को अपने पास आने नहीं देते। प्रिय वचन कहना ऐसा गुण है कि लोग आप ही उस की प्रशंसा करना आरंभ कर देते हैं, लक्ष्मी बुद्धिमानों के घरों में वास करती है और निर्बुद्धि मूर्खों की दुर्गति प्रति दिन बढ़ती जाती है ॥

व्यभिचारिनी स्त्री, दुष्ट पुत्र, अन्याय कारी स्वामी, दिखावे का मित्र और दुष्ट स्वामी से बचना ही अवश्यक है। पतिव्रता स्त्री, वश्य पुत्र, प्रजा हितकारी राजा और अनुरक्त मित्र जीवन को सुफल करते हैं। वह राज्य त्यागने के योग्य है जहां पर खेती बाड़ी के कर के अतिरिक्त चुंगी, कपड़ों पर टिकस, नमक आदि खान पीन की वस्तुओं पर वार और जहां चोरियें और

डकैतियें होतीं हैं जहां की प्रजा दुखी और निर्धन है अच्छे कुलीन पुरुषों की कोई पूछ नहीं, अत्याचारी और घूंस लेने वालों को उत्तम २ पद दिये जाते हैं, ऐसे राज्य को दूर से ही त्यागना वर है, हे धर्म पुत्र! राजा प्रजा पालन तुम्हारा कर्तव्य है ॥

प्रजा में परस्पर विरोध कराना, राज्याधिकारियों का एक दूसरे का पक्ष करके लोगों पर अत्याचार करना, यह दूषित कर्म हैं राजा इन की देख भाल करता रहे ॥

हे राजन् ब्रह्म दत्त! ऐसी २ बातें करो जिस से प्रजा का आनन्द बढ़े, देश में उपद्रव का मचना उत्तम नहीं, अत्याचारियो को निर्बलों पर अत्याचार करने से रोको, प्रजा के दुखों को विचारो इन के दुखड़े सुनो और उन को मिटाने का यत्न करो यदि ऐसा न करोगे तो तुम्हारा राज्य नष्ट होजायगा और तुम को नरक की प्रचण्ड अग्नि जला कर भस्म भूत कर देगी, जो राजा प्रजा के दुख सुख का अन्दोलना नहीं करते और राज नीति के अनुकूल आचार व्यवहार नहीं करते, उन की सेना युद्ध में मारी जाती है, प्रजा नष्ट होती है, ऐसे राजा अधर्मी कहला कर अपमान पाते हैं, नारायण जी का कोप उन पर प्रकट होता है, मनु जी का वचन है कि राजा भूखों को अन्न दान से माता पिता, लोगों को ऐश्वर्य की ओर लाने से गुरू, प्रजा पालन से रक्षक, शत्रुओं का मथन करने से अग्नि, दानी होने से कुबेर और दण्ड देने से यमराज की तुलना पा सकता है ॥

पूजनी इसी प्रकार के अनेक उपदेशों से राजा ब्रह्मदत्त को समझाती रही राजा ने बड़ा यत्न किया कि वह उस के राजभवन में रहे, परन्तु उस ने न माना और अन्त को वहां से चली ही गई ॥

यह कह कर भीष्म जी बोले कि हे युधिष्ठिर ! जो अपना शत्रु हो उस पर विश्वास करना मूर्खता है। जब राजा शत्रुओं के वश में पड़ गया हो तो प्रार्थना पूर्वक नम्रता के वचन बोले और अपने अर्थ से प्रयोजन रखे, करुणा का अभिलाषी बने जिस से आशा है कि वह शत्रु के पत्थर हृदय को भी कोमल कर सकेगा और उस के प्राण बच जाएँ गे ॥

बुद्धिमानों का वचन है कि धोके से, छल से, कपट से और जिस किसी उपाय से संभव हो अपने शत्रु से छुटकारा पावे, कैसा ही पुष्ट तनु व्यूढोरसक और विशाल बाहू शूरवीर क्यों न हो, आपत्ति के समय अत्यन्त शिथिलांग, निर्बल और क्षीण तनु होना पड़ता है, बधिर और गुंगा बन कर अपना स्वार्थ सिद्ध करे, आधीन और आज्ञाकारी होकर शत्रु के सामने शिर झुकाये, कुशल पूछे और प्रिय बातों से शत्रु का मन वश कर, बाहिर से मीठ और अन्दर से विष के समान हो समय का विचार रखे और कभी न चूके, जब अवसर पावे शत्रु को नाश कर दे, बगुले की भान्ति ताक लगाये और समय की प्रतीक्षा करे, और मछली की भान्ति शत्रु को निगल जाये ॥

उत्साह छोड़ना शूरवीरों का काम नहीं, आशा से संसार

के काम निकलते हैं, पहिले सोच लेना चाहिये कि या तो मरे या मारा, यदि शत्रु पर वार चल गया और वह मारा गया तो उसके पास देर तक ठहिरना ठीक नहीं, तुरन्त और स्थान को चले जाना चाहिये, ऐसा न हो कि और कोई आपत्ति सिर पर आजाय, मद्यपान, द्यूत खेलना, व्यभिचार, विषय भोग में पड़ कर राज्य कार्यों को न देखना यह राजाओं के व्यसन हैं ॥

छटा अध्याय

—:०:—

शत्रु से बचने के उपाय ॥

भीष्म जी बोले कि बलवान शत्रु निर्बल राजा को बहुत शीघ्र घेर कर दुःख देता है इस समय जो राजा अपनी बुद्धि को स्थिर रखता है, वह अपने बचने के उपाय सोचता है, वह अत्यन्त बुद्धिमान और उत्साही है इस विषय पर नारदजी का वृत्तान्त सुनाता हूं ॥

एक समय नारदजी हिमालय पर्वत पर घूम रहे थे कि उनको एक शाल्मलि का वृक्ष दिखाई दिया, नाना प्रकार के पक्षी वृक्ष पर बैठे हुये स्वतन्त्रता के सुरीले राग गा रहे थे, पक्षियों की बोलियां अत्यन्त मनोहर थीं, छाया युक्त वृक्ष के नीचे स्वतन्त्र वन्य पशु सूर्य तप से बचने के लिये ठण्डी वायु से शान्त हो रहे थे, नारदजी यह देख कर शाल्मलि से पूछने

लगे कि हे तरुवर! क्या कारण है कि आंधियों के झोके तुम को हानि नहीं पहुंचा सक्ते? तुम सदैव हरे भरे बने रहते हो ॥

शाल्मलि ने उत्तर दिया कि हे ऋषि वर! मुझ को आंधि का भय नहीं, न वायु देवता का प्रचण्ड वेग मुझ को सता सक्ता है। नारदजी बोले कि पृथ्वी पर कोई ऐसा वृक्ष नहीं और कोई ऐसा पर्वत नहीं जो वायु देवता से भय न खाता हो, परन्तु तुम इन की निन्दा करते हो, अच्छा मैं पवन देवता को तुम्हारा यह गौर्व से भरा हुआ उत्तर जाकर सुनाता हूं ऐसा कह कर नारदजी वा के पास आये और शल्मलि के घमण्ड से भरे हुये उत्तर को उन्हें सुनाया, वायु बहुत क्रोध युक्त हुआ और कहने लगा कि मैं अभी जाकर शल्मलि के घमण्ड को तोड़ता हूं ॥

वायु शाल्मलि के पास आकर बोले कि मैंने तेरे अपमान युक्त वचन सुने हैं तु अपने बराबर किसी को नहीं समझता अब सावधान होजा, मैं तेरे गौरव को अभी तोड़ता हूं शाल्मलि बोला कि हे देव! मैं आप की समानता नहीं करता। आप देवता हैं। आप का बल मैं अच्छी प्रकार जानता हूं परन्तु आप मेरा कुच्छ बिगाड़ नहीं सकते ॥

वायु बोला कि जिस बात पर तु फूला हुआ है मैं उस को जानता हूं। ब्रह्मा जी ने तेरे साये में विश्राम किया था और तूने उन को सुख दिया था, इस कारण तुं अपने समान किसी को नहीं समझता, आज अपना बल दिखा ताकि तुम्हारा घमण्ड दूर हो। मैं अभी आता हूं ॥

वायु अपने क्रोध युक्त वचनों से डरा कर किसी ओर को चले गये, परन्तु शाल्मलि उस के क्रोध से कांप उठा और सोचने लगा कि मैंने निस्संदेह वायु देवता का बड़ा अपराध किया है अच्छा अब यदि आवें तो मैं उन से क्षमा मांगूंगा। यह सोच कर उस ने सब फूल पत्ते और छोटी २ शाखाओं को झाड़ दिया और रुंड मुण्ड होकर वायु देवता की प्रतीक्षा करने लगा, दूसरे दिन जब वायु देवता अपने प्रचण्ड वेग से वृक्षों को मूल से गिराते हुये इधर आये तो शाल्मलि की यह दशा देख कर हंसने लगे और कहने लगे कि अरे शाल्मलि! तूने अपने प्राण बचा लिये, तुम्हारी यही दशा होने वाली थी जो तूने आप अपनी बनाली॥

शाल्मलि हाथ जोड़ कर कहने लगा कि महाराज! आप के बल की कौन तुलना कर सकता है। राजा इन्द्र, यमराज, अग्नि, वरुण आदिक देवताओं में कहां शक्ती है कि आप से तुलना कर सकें। फिर मेरा क्या शक्ति है। महाराज मैं क्षमा मांगता हूं। शाल्मलि का नम्रता से भरा हुआ वचन सुन कर वायु देवता का क्रोध जाता रहा। इस लिये राजा यदि शत्रु को बलवान देखे और उस के साथ युद्ध करने की सामर्थ न रखता हो तो उस के साथ नम्र वचन बोले। नम्रता से युक्त वचन सुन कर शत्रु भी कोमल हृदय होजायेगा और अवश्यमेव शत्रुता का त्याग करेगा॥

सातवां अध्याय

—:o:—

लोभ पाप का मूल है। तप का महत्व॥

युधिष्ठर ने भीष्म जी से पूछा कि पाप की उत्पत्ति क्या है? और पाप किस प्रकार उत्पन्न होता है॥

भीष्म जी बोले कि सब प्रकार के पाप लोभ से उत्पन्न होते हैं, यदि लोभ न होता तो क्रोध न आता, मनुष्य की कामनायें न बढ़तीं, निर्लज्जता, भीख मांगना, चोरी करना, दूसरों की ओर देखना और नाना प्रकार की चिन्ता में पड़ना केवल लोभ से ही होते हैं। विद्या का घमण्ड, पर स्त्री गमन, अपनी प्रशंसा करना, दूसरों को कुदृष्टि से देखना, पर धन हरण, कुवचन बोलना, कामनाओं के पीछे जाना, बिना सोचे काम करना यह सब बातें लोभ से उत्पन्न होती हैं, मनुष्य बचपन से ले कर यौवन तक लोभ में फंसा रहता है, परन्तु वृद्धावस्था में उस के आधीन होजाता है, इस लिये सब से पहिले लोभ को त्यागना चाहिये, जिस राजा को लोभ ने जीत लिया हो उस का राज नष्ट होजाता है, अज्ञानी लोग लोभ के वश होकर धन का घमण्ड करते हैं परंतु बुद्धिमान बुरी कामनाओं को निकट आने नहीं देते॥

युधिष्ठर ने पूछा कि हे पितामह! अज्ञान और काल का क्या कारण है? भीष्म जी बोले कि मित्रता, शत्रुता, ईर्षा

द्वेष, आलस्य, दीर्घ सूत्रता यह सब अज्ञान के स्वरूप हैं, इसके अज्ञानी और स्वार्थी मनुष्य का स्वभाव है, अज्ञानी लोगों की बुद्धि पर माया का ऐसा परदा एसा पड़ा होता है, कि अच्छे बुरे की पहिचान नहीं कर सक्ते। जो मनुष्य काल को व्यर्थ खोते हैं, उन के काम भी बिगड़ जाते हैं। इस लिये काल को व्यर्थ खोना पाप है। मृत्यु सब को वश करती है और इस से कोई बच नहीं सक्ता योगीश्वर और मुनीश्वर मृत्यु को बलवान समझते हैं, परन्तु लालसा और लोभ से बचने वाले मनुष्य को काल का भय नहीं होता। देह त्यागने पर उस को कोई पीड़ा नहीं होती जनकादिक राजा लोग लोभ को जीत कर वैकुण्ठ में वास करते हैं॥

फिर युधिष्ठर ने पुछा कि हे पितामह! जो वेद पाठ करने और तप करने का क्या फल है॥

भीष्म जी बोले कि हे युधिष्ठर! क्षत्रिय और ब्राह्मण का धर्म वेद पाठ है ऋषि और मुनि लोग कहते हैं कि ब्राह्मण सदैव शांत चित रहे, जिन की कामनाएं बढ़ी रहती हैं, वह संसार के दुःखों से नहीं छूटते, शान्त चित मनुष्य संसार में यश पाता है उन का मन प्रसन्न रहता है और जगत की चिन्ता से उस को दुःख नहीं देती, देह त्याग पर उस की मोक्ष हो जाती है। अर्थात आवागवन से छूट कर वह ब्रह्म में मिल जाता है॥

जो लोग संसार के बन्धनों में पड़े हैं और जिन का मन डांवा डोल है वह आनन्द को नहीं पाते, ऋषियों ने शांत

चित को ही आनन्द कहा है, इंद्रियों को वश में करना, सत्य बोलना, बुद्धिमता नम्रभाव, धैर्य लज्जा पुद्रा ता, सन्तोष, मीठा वचन, दूसरे के अवगुणों को प्रकट न करना, गुरु की वार्तो पर ध्यान देना, दुराचारियों से वार्तालाप करना, निन्दा का त्याग, अच्छे मनुष्यों के लक्षण हैं, जिन लोगों में यह वातें हैं, वहीं योगी और मुनीश्वर होजाते हैं जो क्रोध लोभ और द्वेष को त्याग करके केवल नारायण में चित वृति लगा कर केवल भगवान को ही कर्ता धर्ता समझते हैं उन को कोई दुख नहीं होता और न उन को पाप पुण्य अथवा धर्मा धर्म का विचार ही होता है, उन का विचार केवल परमात्मा पर होता है उन के लिये वन और नगर एक से हैं वैराग्य वन में होता है परन्तु शांत चित के लिये वन में जाने की अवश्क्ता नहीं॥

यह सुन कर युधिष्ठर बोला कि महाराज फिर तो तप करना निरर्थक ठहिरा, भीष्म जी ने उत्तर दिया कि तप के अर्थ योगाभ्यास के हैं, योगी बहुत कष्ट उठाते हैं अर्थात एक पाओं से खड़े होकर नारायण का जप करते हैं पंच अग्नि तापाते हैं शीतोष्ण के दुःख सहते हैं जल के अन्दर वास कर के ईश्वर का नाम लेते हैं, तप की महिमा बड़ी है, ब्रह्मा जी ने तप के कारण सारी सृष्टि को उत्पन्न किया, ऋषियों ने तप से ही चारों वेदों को प्रकट किया सब रोगों की औषधियें तप से ही उत्पन्न हुई, तप से इन्द्र देवताओं का राजा हुआ इस लिये तप करने वाला शुद्ध होजाता है और जो चाहे करता है॥

आठवां अध्याय

—:०:—

सत्य धर्म का महत्त्व ॥

राजा युधिष्ठर ने भीष्म जी से पूछा कि सत्य धर्म किस को कहते हैं यह किस प्रकार उत्पन्न होता है इस की महिमा क्या है ?

भीष्म जी बोले कि सत्य धर्म सब धर्मों से बढ़ कर परम धर्म है सत्य ही सनातन धर्म है, तप और योग सत्य से ही उत्पन्न होते हैं सत्य धर्म में सब धर्म युक्त हैं सत्य बोलना, सब प्राणियों को एक जैसा समझना, इंद्रियों को वश में करना, ईर्षा द्वेष से आत्मा को शुद्ध रखना, क्षमा, शीलता, लज्जा, किसी को सताना न मारना, दुर्गुणों से हटे रहना, ईश्वर की आराधना करना, मन को शुद्ध रखना, धैर्य, विद्या यह तेरह सत्य धर्म के लक्षण हैं, शान्त चित होकर दान करना चाहिये, साधुओं में मत्सर नाम को नहीं होता, राग द्वेष को छोड़ना अर्थात तितिक्षा धर्म का मूल है, वेदों की श्रुतियें सत्य ही सत्य पुकारती है, सहस्र अश्वमेध यज्ञों का फल सत्य के समान होता है ॥

शत्रु ऋण और आग इन को कभी कम न समझें, दिन रात इन की वृद्धि होती है, इस लिये इन को कम करना चाहिये, नहीं तो केवल दुख ही होगा, रोग का भी यही हाल है देश रीति के प्रति कूल करना उचित नहीं मनुष्य का घात करना, प्रजा को पीड़ा देना, उत्तम २ स्थानों को गिराना और

राज्य कार्य से घृना करना, राज धर्म के प्रति कूल है, गिद्धों की सी तीक्ष्ण दृष्टि रखना, शत्रु की खोजना में बगले के समान उद्यत रहना, कुत्ते की भांति चौकन्ना रहिना सिंह के समान निर्भय होना, साप के समान दुर्ग में प्रवेश करना, प्रकार विकार की विद्या जान कर चोरों और दुराचारियों को पहिचानना, बहादुरों और शूर वीर मनुष्यों की संगति करना, यह राजा के विशेष गुण हैं, उग्र भाषण के स्थान पर उग्र वचन और नम्रता के स्थान पर मृदुभाषण बोलने वाले बुद्धिमान समझे जाते हैं शरण गतों की रक्षा करे जिस वृक्ष को लगाया हो उस को काटना महा पाप है ॥

नावां अध्याय

—:०:—

दुर्भिक्ष और महा भारी रोगों के समय धर्माचरण ॥

युधिष्ठर जी बोले कि हे पितामह अनावृष्टि ! और दुर्भिक्ष की भयंकर दशा देख कर किस प्रकार ब्राह्मण अपनी प्रतिष्ठा और मान स्थिर रख सकता है, किन उपायों से वह इन आपत्तियों से छूट सकता है राजा को अपनी जा से क्या बर्ताव रखना उचित है, कि जिस से उस की प्रजा सुखी रहे ॥

भीष्म पितामह बोले कि ऐसे समय में राज्य के प्रधान पुरुषों की सभा करनी चाहिये और उन की सम्मति से ऐसे उपाये सोचने चाहिये कि जिस से देश की आपत्ति के निवृत होने की सम्भावना होसके ॥

इस स्थान पर मैं विश्वामित्र ऋषि और एक चाण्डाल का पुराना इतिहास वर्णन करता हूं। इस को ध्यान पूर्वक सुनो। त्रेता और द्वापर की सन्धि पर एक बहुत बड़ा दुर्भिक्ष पड़ा, यह दुर्भिक्ष बारह वर्ष रहा, इतना काल वर्षा न हुई। कूएं और तालाब शुष्क हो गये, बड़ी २ नदियां सूख गईं, अन्न उत्पन्न न हुआ, प्रजा दुःखी और क्लिष्ट हो गई, नगरों के नगर उजड़ गये यहां तक कि मनुष्य मनुष्य को खा २ कर पेट भरने लगे। ऋषि मुनि भी अपने २ स्थान को छोड़ कर भूख से पीड़ित हो कर इधर उधर फिरने लगे। इस काल में विश्वामित्र ऋषि ने स्त्री और पुत्रों को किसी ग्राम में छोड़ कर भीख मांगने के लिये नगर २ और ग्राम २ भ्रमन करना आरंभ किया जब कई दिन उपवास से व्यतीत हुये और चुटकी भर अन्न न मिला तो प्राण ओंठों पर आ गये और एक चाण्डाल स्थान पर पहुंचा देखता क्या है कि चाण्डाल ने कुत्ते का वध किया है और उस की त्वचा को उतार कर उस के मांस को पत्तों पर ढेर लगा रहा है॥

विश्वामित्र भूख से ऐसे व्याकुल थे कि उन्हों ने कुत्ते के मांस लेने का विचार किया और चाण्डाल को कहने लगे कि थोड़ा सा मांस मुझ को भी दे दो मैं क्षुधा से बहुत पीड़ित हूं चाण्डाल ने सूखा उत्तर दिया और कहा कि महं कहीं और स्थान पर भोजन मांगो मैं तो आप भूख से बहुत पीड़ित हूं वह दुखित होकर वहां से लौटे और सारी बस्ती में फिरे परन्तु कहीं से कुच्छ प्राप्त न हुआ॥

विश्वामित्र फिर चाण्डाल के पास आये, उस के घर के चारों ओर हड्डियां और कूड़ा इकठा था, विश्वामित्र ने कई दिन से अन्न पानी न खाया था, फल फूल न मिले थे, उपवास से प्राणों को पीड़ा पहुंच रही थी, सोचने लगे कि किसी न किसी भांति मांस का एक टुकड़ा मिल जाये, परन्तु कोई युक्ति काम न आई, इतने में सूर्य अस्त हुआ और रात पड़ गई, जब दो घड़ी रात बीत गई तो चुपके २ चाण्डाल के झोंपड़े में पहुंचे और मांस पर हाथ डालने लगे कि चांडाल की नींद खुल गई, वह डांट कर बोला कि तू कौन है?

विश्वामित्र लज्जित होकर बोला कि भूख से मेरे प्राण निकल रहे हैं मुझे थोड़ा सा मांस देदे, क्या तू मुझे नहीं जानता कि मैं विश्वामित्र हूं, दिन को भी तेरे द्वार पर आया था, परन्तु तूने टाल दिया, अब तो कुच्छ मुझ को दे चाण्डाल विश्वामित्र का नाम सुनते ही हाथ जोड़ कर बोला कि आप ऋषि हैं। आप चोरी करते हैं और चोरी भी कुत्ते के मांस की। ब्राह्मणों को कुत्ते का मांस खाना उचित नहीं विश्वामित्र बोला कि भूख बुरी बला है, भूख से प्राण निकल रहे हैं, भूखा मनुष्य कौनसा पाप नहीं करता, शास्त्र में प्राणों की रक्षा करना मुख्य धर्म लिखा है। यदि प्रा बच गये तो प्रायश्चित कर लूंगा ॥

चाण्डाल बोला कि आप मह मुनि हो कर ऐसी बातें करते हो। आश्चर्य है कुत्ते का मांस खाना कहां लिखा है। आप ज्ञानी हो कर ऐसी बात क्यों मुंह से निकालते हैं, विश्वा-

मित्र बोले कि अग्नि में डाली हुई सब वस्तु पवित्र हो जाती हैं ब्राह्मण का मुंह अग्नि है, जब भूख से जान बच गई तो वेदाध्ययन से और यज्ञ हवन से इस दोष को दूर करूंगा, भूख से दुःखी हो कर चोरी की सूझी, इस लिये मेरे प्राणों की रक्षा करो ॥

चाण्डाल बोला कि इस अपवित्र मांस के खाने से सारे जन्म का तप मट्टी में मिल जायगा, सारी तपस्या निष्फल जायगी, बुद्धिमान वही है जो आपत्ति काल में भी अपना धर्म न छोड़े, आप धर्मात्मा हैं, फिर ब्राह्मण हैं आप को ऐसे मांस से घृणा करनी चाहिये ॥

विश्वमित्र ने उत्तर दिया कि अब मैं भूख से दुःखित हूं चलने फिरने की शक्ति नहीं रखता, सारा दिन भीख मांगने में व्यतीत हुआ परन्तु कहीं से कुछ प्राप्त नहीं हुआ, विवश हो कर तेरे पास आया हूं। यदि अब मांस देदे तो मेरी जान बच जायगी नहीं तो आज परलोक सिधारूंगा, देखो क्षत्रिय धर्म राजा इन्द्र के समान होता है. ब्राह्मणों का धर्म अग्नि है मैं ब्राह्मण हूं और मेरा धर्म अग्नि है, यदि तुम ने मांस दे दिया तो इसको अग्नि पर पका कर खाऊंगा, देवता और पितरों को भोग लगाऊंगा और अग्नि में आहुति दूंगा। शेष से अपना पेट भरूंगा। इसके पश्चात् जप तप करके उस दोष को दूर कर दूंगा ॥

चाण्डाल बोला कि मांसाहारियों की आयु थोड़ी होती है, विशेष करके कुत्ते के मांस खाने वालों की, इसलिये आप

का जीवन कठिन हो जायगा, वह मांस खाना चाहिये जिस में कुछ लाभ हो; अगर ऐसा न करें, विश्वामित्र ने उत्तर दिया कि हे मित्र चाण्डाल ! मैं भूख से बहुत दुःखी हूं, इस समय कुत्ते के मांस को छोड़ कर कुछ दिखाई नहीं देता, सारा नगर घूमता रहा हूं। बकरी, भेड़ी के मांस का लेश भी दिखाई नहीं दिया, न कहीं फल फूल ही दृष्टि आया, केवल तेरे स्थान पर कुत्ते का मांस दिखाई दिया है, जिस को देख कर मेरा चित्त ठिकाने नहीं रहा मैं विवश हूं अब तू मुझ को कुछ थोड़ासा देदे ॥

चाण्डाल बोला कि हे ब्राह्मण ! पांच नखों वाले जन्तुओं का मांस खाना शास्त्र में निषिद्ध है, क्योंकि आप धर्म शास्त्र को मानते हैं इस लिये आप से प्रार्थना है कि आप इस मांस का त्याग कीजिये विश्वामित्र ने उत्तर दिया कि हे चाण्डाल ! क्या तुम नहीं जानते कि अगस्त्य ऋषि वातापि असुर को खागये थे मैं भी वैसे ही भूख से व्याकुल हूं इस लिये मांस खाकर प्राणों की रक्षा करूंगा फिर प्रायश्चित भी करूंगा, मैं वसुओं से हूं मुझे कुत्ता बकरी सब समान हैं मेरे शरीर की जगत में प्रशंसा होती है इस लिये मैं भी इस का प्रिय समझता हूं इस की पालना के लिये इस समय कुत्ते का मांस ही अच्छा है चांडाल बोला कि जितने ऋषि मुनि हैं सत्य धर्म को नहीं छोड़ते इंद्रियों को वश में करते हैं और प्राणों की चिंता नहीं करते परंतु त्याज्य वस्तुओं को कभी ग्रहण नहीं करते ॥

विश्वामित्र बोला कि अरे चाण्डाल शास्त्र के वचन को

क्या तु नहीं जानता ! प्राणों की रक्षा करना सब का परम धर्म है। मुझ में बात करने की शक्ति नहीं, प्राण होंटों पर आते हैं, बकवास मत कर और थोड़ा मांस देदे, चाण्डाल बोला कि अये ऋषि शोक कि मेरी आंख खुल गई नहीं तो आप मांस उठा ले जाते मैं यह देखना उचित नहीं समझता कि आप ऋषि हो कर कुत्ते का मांस खायें मैं समझता हूं परन्तु आप नहीं समझते मैं डरता हूं कि कहीं आप शाप न देंदें एक तो पहले ही चान्डाल हूं अब न जानि क्या गति हो आप से क्षमा मागता हूं अधर्म की बाते बुरी प्रतीत होती है ॥

विश्वामित्र के कहा कि नदि जल से भरी होती है मेंडक आदि डराते हैं परन्तु गौ जल पी ही जाती है, इस लिये अपनी प्रशंसा आप मत करो ॥

चाण्डाल बोला कि जितनी बुद्धि थी उतना तो समझाया कि भूख को वश में कीजिये,लाभ को मारिये ताकि आपका धर्म भ्रष्ट न हो परन्तु आप ध्यान ही नहीं देते ऐसा करने से आप का धर्म अवश्य नष्ट होगा ॥

विश्वामित्र बोले कि तु जन्म से तो चाण्डाल है परन्तु धर्मात्माओं के लक्षण रखता है अच्छा यदि मांस नहीं तो कोई और वस्तु ही दे जिस से क्षुधा की जलन दूर हो और तृप्ति आवे चाण्डाल बोला कि और कोई वस्तु मेरे पास नहीं केवल मांस ही है जो मैं दे नहीं सक्ता। ऐसा न हो कि आप और मैं दोनों नरक में जायें। विश्वामित्र बोले कि यदि क्षुधा से प्राण बच गये तो धर्म का रहिना कोई कठिन कार्य

नहीं, हिंसा सब से बड़ कर पाप है हिंसा के कारण मांस उचित अहार नहीं, परन्तु इस मांस में कोई दोष नहीं क्यों कि इस में मैंने किसी को आप नहीं मारा ॥

चाण्डाल बोला कि इस अपवित्र मांस के खाने से धर्म नहीं रह सकता। यदि रह सकता हो तो निषिध्य और अनिषिध्य पदार्थों में कोई दोष नहीं, दोनों ठीक हैं। एक को खाना और दूसरी को न खाना इस का क्या प्रयोजन है ॥

विश्वामित्र बोले कि यह बात नहीं, जो मांस हिंसा कर के खाया जाय, वह निषिध्य है, जो बना हुआ मिल जाय तो इसके खाने से वैसा पाप नहीं होता जैसा कि हिंसा कर के खाने से होता है माद्य पान, व्यभिचार आदि से पाप तो अवश्य होता है परन्तु इनको घोर पाप कर्म नहीं कर सक्ते। इसलिये यदि मैं थोड़ा पाप करूंगा, तो इस से पुण्य में हानि नहीं हो सक्ती। इसी प्रकार मांस के खाने से धर्म नहीं जा सक्ता, मैं प्रायश्चित्त भी कर ही लूंगा ॥

चाण्डाल बोला कि यदि आप मेरी इच्छा के प्रतिकूल मांस उठा लेजायें, तो मुझे कुछ दोष नहीं विश्वामित्र ने कहा कि आप को पाप नहीं लगगा ॥

यह कह कर विश्वामित्र ने मांस का लोथड़ा उठाया और अपनी स्त्री के पास ले गया, और कहने लगा कि आओ हम दोनों इस का भोजन करें, यह कह कर आग जलाई, और मांस के टुकड़ों से आहुतियां दी और देवताओं और पितरों को प्रसन्न किया, इन्द्र को विश्वामित्र की दुर्गति पर बड़ा शोक

आया उसने उसी समय अपने वज्र का प्रहार करके बादलों को फोड़ा और वर्षा आरंभ की, अनावृष्टि दूर हुई और जगत में सुख संचार होने लगा तब प्राणियों को शांति आई, अन्न बहुत उत्पन्न हुआ और लोग प्रसन्न चित्त दिखाई देने लगे, न विश्वमित्र ने मांस खाया और न ही उसकी स्त्री ने मुंह में डाला, फिर तपो बल मांस चुराने की संभावना का जो पाप था उस को भस्म कर दिया देवता और पितर सब तृप्त हो गये ॥

इसालिये हे युधिष्ठर ! जो मनुष्य आपत्ति में भी धर्म पर दृढ़ रहिता है । उसका कभी नाश नहीं होता और अन्त को वह स्वर्ग पाता है ॥

दशवां अध्याय

—:o:—

शरणागतों की सहायता और एक व्याध की कथा ॥

भीष्म जी बोले कि केवल राज्य को बल से जीतने और प्रजा को दंड देने से भी राज्य नहीं होसकता, राज्य के लिये नीति का जानना अवश्य है राज्य की योग्यता और भले बुरे की पहिचान यदि न हो तो इस से क्या प्रयोजन है और वह राज्य भी चिरं स्थायी नहीं होसकता, प्रतिज्ञा पालन और शरणागतों की सहायता राजा का परम धर्म है राजा शिवि का इतिहास स्मरण करो कि किस प्रकार कबूतर की रक्षा करके

उस ने इंद्र को प्रसन्न किया था, वह कबूतर नहीं था * इंद्र देवता था और अग्नि देवता श्येन पक्षी बन कर उस को मारना चाहता था ॥

इसी प्रकार भार्गव जी ने राजा मुचुकुंद का फल और कपोत का वृत्तान्त सुनाया था इसके सुनने से धर्म लाभ होता है यह भी सुनो। किसी वन में एक व्याध रहा करता था जिस का भयंकर रूप देख कर शरीर रोम चित हो जाता था काला वर्ण, रक्त नेत्र, भयानक मुख, बड़े २ तीक्ष्ण नख, मोटे २ बाल जिन को देख कर चित्त में भय उत्पन्न होता था सदैव वन में पशु पक्षियों को पकड़ना यही उसका काम था उस के इस पाप कर्म के कारण उस के सब सम्बंधि उस से पृथक रहते थे ॥

एक दिन व्याध पक्षियों के पकड़ने में लगा हुआ था कि बड़े वेग की आंधि आई और इतना अंधकार छागया कि हाथ से हाथ देखना कठिन होगया, वर्षा भी बहुत आई कि जिस से जल थल एक होगया, ओले पड़े, सहस्रों वृक्ष गिर गये, कड़ाके की सरदी पड़ी विचारे व्याध के हाथ पाओं ठिठरने लगे, शरीर पर थोड़ा भी वस्त्र न था, चारों ओर फिरा परन्तु कहीं स्थान न मिला कि जहां ठहिर कर विश्राम ले, पानी के चढ़ाओ से मार्ग भी बन्ध था और वह वन को भी नही जा सकता था, दिन को ही इतना अंधेरा था तो रात को कैसे प्रतीत हो सकता था व्याध इस प्रकार शीत से आतर इधर उधर डांवां डोल फिर रहा था कि उस को एक कबूतरी शीतार्त हुई २ वृक्ष के नीचे सुकड़

* यह इतिहास वन पर्व में वर्णन होचुका है।

कर बैठी हुई दिखाई दी, व्याध ने तुरंत उस को पकड़ कर पिंजरे में डाल लिया और रात काटने के विचार में एक वृक्ष के नीचे बैठ गया और हाथ जोड़ कर कहने लगा कि हे वृक्ष के स्वामी मैं इस समय आप की शरण में हूं आप मेरी रक्षा कीजिये। मैं आप को नमस्कार करता हूं मुझ पर दया की दृष्टि रखिये ॥

ग्यारहवां अध्याय

—:०:—

व्याद की शेष कथा ॥

व्याध चारों ओर देखने लगा कि कहीं से थोड़ी सी आग भी मिल जाय तो शीत से बचाओ हो बैठा २ चारों ओर आंखें फाड़ २ कर देखता रहा अन्त को रह न सका और उठ खड़ा हुआ वन में चारों ओर घूमने लगा कि कहीं से आग मिल जाय परन्तु उस वन में आग कहां उस की लालसा वृथा थी। वहीं बैठ गया, फिर उठ कर वृक्ष की जड़ को टटोलने लगा, उस वृक्ष में एक भारी खोड़ थी उस का हाथ उस खोड़ पर पड़ा जब देखा तो वह भारी खोड़ प्रतीत हुई झट उस के अन्दर चला गया कि शीत और वायु से तो मुक्ति हो ॥

उस वृक्ष पर एक कबूतर रहा करता था। जब रात अधिक हो गई और उस की कबूतरी घर न आई तो वह विलाप करने लगा कि हे प्रिये तुम कहां हो इतनी रात व्यतीत

हो गई और तुम अभी तक नहीं आइ, तुम्हारे विना यह घर मुझ को फाटने को दौड़ता है, भाई बेटे, नाते पोते सब हैं परन्तु एक तेरे न होने से सब घर सुन्ना दिखाई देता है, हाय! वह तेरा प्रेम आज कहां गया! क्या तूं तनिक भी विचार नहीं करती कि मैंने अभी तक भोजन नहीं किया है जब तक मैं कुछ न खेता था तब तक तूं भी न खाती थी पहिले सो जाता था फिर तूं सोती थी जब कभी मुझे शोक ग्रस्त देखती थी तो अपनी मीठी वाणी से मुझे प्रसन्न करने का यत्न किया करती थी हाय! अब मेरे प्राण जायेंगे ऐसी स्त्री का वियोग मैं क्यों कर सह सकूंगा, ऐसी पतिव्रता को खो कर मर जाना ही श्रेष्ठ है, संसार में स्त्री के बिना दुःख सुख का साथी कौन हो सक्ता है, आपत्ति में उस के बिना कोई सहायक नहीं होता, भाई, बहिन, बन्धु, मित्र सब सुख के साथी, परन्तु यह स्त्री ही केवल पति के दुःख से दुःख और सुख से सुख समझती है, सुन्दर वदन और प्रियचारिणी स्त्रियें ही अपने पति को ईश्वर का रूप मानती हैं, पतिव्रता स्त्री लक्ष्मी का रूप होती है, जब तक स्त्री न हो मनुष्य निन्दित समझा जाता है, ऐ प्यारी शीघ्र आओ मैं तुम्हारे दुःख में पीड़ित हो रहा हूं ॥

कबूतर इस प्रकार विलाप करके रोरहा था और ठंडे श्वास लेकर पीड़ित हो रहा था, कबूतरी जो पिंजरे में बंद थी उस का यह विलाप सुन कर रह न सकी और बोली कि हे प्यारे इतना विलाप क्यों करते हो, कर्म वश मैं पिंजरे में फंस गई हूं इस का शोक मत करो, हां एक बात कहती हूं यदि सम्भव है

तो धर्म से हमारा तुम्हारा काम बनेगा यह व्याध शीत से कांप रहा है यदि कुछ हो सके तो इस को शीत से बचाओ यही तुम्हारा धर्म है ॥

कबूतरी के यह वचन सुन कर कबूतर नीचे आया और व्याध को कहने लगा कि हे मित्र ! तुम क्या चाहते हो मुझ को कहो यदि सम्भव होगा तो मैं आप की सहायता करूंगा, इस स्थान को अपना ही घर समझो तुम मेरी शरण में आये हो यथा शक्ति मैं आप की सहायता करूंगा, हमारा कर्तव्य है कि जो थका हुआ यात्री आजाये उस की सहायता करें और खाने पीने से सेवा करें चिन्ता मत करो, अपना सब वृत्तांत मुझ से कहो ॥

व्याध बोला कि शीत बहुत सताती है, पानी से भीगा हुआ हूं, रात पड़ गई है अपने स्थान को नहीं जा सकता, पानी ने रास्ता बन्द कर दिया है तालाब और नदियां सब भरपुर हैं, यदि थोड़ी सी आग भी मिल जाती तो सूखी साखी लकड़िया जो इकठी कर रखी थी। जला कर हाथ पाओं सेंकता ॥

कबूतर झट उड़ा और दूर से जलते हुये तिनके उठा लाया व्याध ने लकड़ी जलाई और हाथ पाओं सेकने आरंभ किये, तब कबूतर से कहने लगा कि आपने बहुत काम किया, आप की कृपा से मेरी जान बच गई भूख से जान निकली जाती है। सारा दिन एक दाना भी मेरे अन्दर नहीं गया ॥

कबूतर बोला कि मैं भी सारा दिन उड़ता रहता हूं,

और जहां कहीं दाना दुनका मिल जाता है, उठा कर खाता हूं कोई पदार्थ इकट्ठा तो मेरे पास नहीं रहता इस लिये अन्न से आप की सेवा कठिन है, हां प्राणों से आप के दुःख को दूर कर सक्ता हूं। यह कह कर कबूतर ने सोचा कि यदि अभ्यागत के अर्थ प्राण भी चले जायें, तो इस से बढ़ कर और क्या धर्म हो सकता है, इस लिये वह चार बार अग्नि के गिरद घूमा और फिर फड़क कर उस में गिरा और जल भुन कर मर गिया॥

व्याध को उसकी आतिथि सेवा का भाव बहुत अच्छा लगा और उस को धर्म का बोध हो गया वह सोचने लगा कि मेरे निमित्त इस पक्षी ने प्राण दिये अपने कर्तव्य पर धिक्कार करने लगा और कहने लगा कि जीव धारियों को मारना किसी धर्म में भी उचित नहीं परन्तु मैं दिन रात जीव जन्तुओं को पकड़ कर अपनी जीविका करता हूं और मार कर औरों को खिलाता हूं धिक्कार है मेरे इस जीवन पर मुझ से तो यह पक्षी ही अच्छे हैं इसी लिये मुझ को सब भाई बन्धुओं ने त्याग दिया है॥

शोक कि मैंने कबूतर से खाने को मांगा और इस ने अपनी जान मेरे लिये खोदी, क्या अब नरक की आग मुझ को छोड़ेगी, कभी नहीं। इस प्रकार के विचार करता हुआ व्याध उठ खड़ा हुआ उस ने कबुतरी को छोड़ दिया और ज्ञान हो जाने के कारण किसी पर्वत की कंदिरा में चला गया और तपस्या करने लगा कबुतरी अपने पति को जलता हुआ देख कर बड़ी प्रशंसा करने लगी और कहने लगी कि हे पति जो

कि तुम ने किया है वह मैं मान गई और सम्बंधियों से भी होना कठिन है, ठहरो प्यारे मैं भी तुम्हारे साथ सती होती हूं यह कह कर आग में कूद पड़ी और जल कर भस्म होगई ॥

उसी समय स्वर्ग से एक विमान उतरा कबूतर और कबूतरी उस में चढ़े और स्वर्ग में चले गये ॥

व्याध ने कबूतर और कबूतरी को स्वर्ग में जाते देखा। उन को इस प्रकार देख उस ने भी उग्र तपस्या आरंभ की और वायु भक्षी होकर वह भी नारायण का भजन करने लगा। दैव योग से उस वन में दावानल उत्पन्न हुई जिस से वन के सब वृक्ष और पशु पक्षी जल कर भस्म हुये व्याध भी उसी प्रचण्ड अग्नि में जल गया और सीधा स्वर्ग को चला गया ॥

भीष्म जी बोले कि हे धर्मराज! जो मनुष्य शरणागत को सताते और दुख देते हैं, उन का दोष प्रायश्चित करने से भी दूर नहीं होता, जो शरणागतों की रक्षा करते हैं वह इस कबूतर और कबूतरी की भांति स्वर्ग में आनन्द भोगते हैं ॥

बारहवां अध्याय

—:o:—

राजा युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह! अज्ञानता से जो पाप होजाये उस से किस प्रकार छुटकारा होता है। भीष्म जी बोले, आर्यो और धर्म शास्त्रों मे बहुत से उपाय लिखे हैं, एक समय राजा जनमेजय से ब्रह्महत्या होगई थी इस लिये लोगों ने उसे

त्याग दिया, राजा बिचारा जंगलों और बनों में फिरने लगा ॥

एक दिन वह शौनक ऋषि के आश्रम में जा निकला, ऋषि पुत्र इन्द्रौत कुटियों के आगे भ्रमन कर रहे, थे जनमेजय ने दण्डवत प्रणाम की, इन्द्रौत बोला कि हे राजन्! तुम्हारा मुख भ्रष्ट होरहा है, दुर्गंधि बहुत आती है तुमने ब्रह्महत्या की है इस लिये यहां से चले जाओ, राजा बोला कि आप को छोड़ कर मैं कहां जा सकता हूं, मुझ पर कृपा करें और मेरे पाप को दूर करें, इन्द्रौत ने कहा कि अच्छा आर यह प्रतिज्ञा करें कि हम ब्राह्मणों को कभी दुःख न देंगे किन्तु आयु भर उन की पूजा करेंगे ॥

राजा ने शपथ खाई कि मैं आयु भर ब्राह्मणों को दुःख न दूंगा और सदैव धर्म से प्रजा पालन करूंगा। तब इन्द्रौत ने उसे कहा कि हे राजन्! अज्ञानता से जो पाप हो जाय उस से छुटकारा जप तप से होता है तुम तीर्थों में स्नान करो ईश्वर की अराधना करो और सच्चे हृदय से प्रतिज्ञा करो कि अधर्म कभी न करेंगे इसी में आप का कल्याण है ॥

तब जनमेजय तीर्थों पर गये और सत्य भाव से ब्राह्मणों का सन्मान और पूजा करने लगे वेद पाठ भी किया और ईश्वर की अराधना भी की जिस से ब्रह्म हत्या का पाप उस से छूटा और राजा प्रसन्नता पूर्वक अपने राज्य की ओर लौटा, प्रजा उस को बड़ी प्रसन्नता से मिली और वह आनन्द पूर्वक रहिने लगा ॥

भीष्म जी बोले कि हे युधिष्ठर! जो मनुष्य अज्ञानता से

पाप करता है उस के लिये यही उचित है कि आगे के पापों से क्षमा मांगे. ईश्वर की प्रार्थना करे और पश्चाताप करें, परमेश्वर सर्वान्तरयामी उस के अज्ञानता से किये हुये पापों को अवश्य क्षमा करेंगे ।

तेरहवां अध्याय

—:०:—

मृतक का जी उठना ॥

युधिष्ठिर जी बोले कि हे पितामह ! आपने कभी मृतक मनुष्यों को भी पुनः जीवित होते देखा है । भीष्म जी बोले कि हे युधिष्ठिर ! नैमिषित देश में एक ब्राह्मण का बालक अत्यन्त रूप वान था वह एकलौता लड़का किसी रोग से पीड़ित होकर मृत्यु वश हुआ । मांबाप इत्यादि रोने पीटने लगे और मृतक शरीर को उठा कर श्मशान में लेगये वहां और विचारे बच्चे के दुख से तड़प २ कर रोने लगे । एक गिद्ध उन की यह दशा देख कर पास आया और कहने लगा कि तुम लोग अज्ञानी हो इस प्रकार रोने से क्या बनता है क्या यह बालक जी उठेगा ? जाओ अपने २ स्थानों को जाओ । मृत्यु सब की अवश्य होगी । इस पर शोक करना वृथा है । बुद्धिमान मृत्यु को नहीं शोचते । यह शरीर का धर्म है जाओ शोच को त्यागो और अपने अपने घरों को जाओ ॥

ब्राह्मण विचारे गिद्ध की बातें सुन और निराश हो

उठ खड़े हुये और अपने घरों को चल पड़े। इतने में एक गीदड़ आया और कहने लगा कि तुम भी बड़े मूर्ख हो तुम्हारे घर का एक ही बच्चा और उस को इस प्रकार श्मशान में अकेले छोड़ कर तुम घर को जा रहे हो। यह तुम्हारे लिये अच्छी बात नहीं। कोई उपाय करो कि जिस से यह बालक जी उठे तुम्हारे जाने की ही देर है कि यह गिद्ध और कौवे इस के मांस को नोच कर खायेंगे॥

यह सुन कर ब्राह्मण फिर लौटे और वहीं बैठ कर रोने लगे, गिद्ध बोला कि अपने समय को यूंही वृथा खोरहे हो तुम भी बहुत मूर्ख हो कि गीदड़ की बातों पर विश्वास कर के फिर लौट आये हो, कभी मृतक भी जिया करते हैं मेरी सहस्र वर्ष की आयु है, मैंने आज तक कभी नहीं देखा कि एक मृतक जी उठा हो, जाओ काम काज करो, यह सुन कर ब्राह्मण फिर चलने लगे॥

गीदड़ बोला कि तुम्हारे जैसे मूर्ख और कठोर हृदय माता पिता मैंने कभी नहीं देखे, भाई जब तक यह शरीर तुम्हारे सामने वर्तमान है तब तक तुम इस को जिलाने का उपाय कर सकते हो परन्तु जब गिद्ध ने इस को खा कर इस की हड्डियां भी पृथक कर दीं तो उस समय कुच्छ नहीं बनेगा, तुम इसके माता पिता हो तुम्हारा प्रेम इस बालक के निमित्त कुछ दिखाई नहीं देता क्यों नहीं किसी ऋषि मुनि से प्रार्थना करते? वह लोग सब बातों में समर्थ होते हैं, आश्चर्य नहीं कि वह लोग इस में फिर प्राण फूंके दें, यह सुन कर ब्राह्मण

फिर लौटे, परन्तु गिद्ध फिर बोला कि अरे मूर्ख ! यह मूर्ख शृगाल तुम को भटका रहा है, तुम इसकी बातों में आकर सम्भावना का भी विचार नहीं करते कभी मृतक भी जी उठे हैं, देखो रात होने लगी है, इस समय श्मशान में ठहरना उचित नहीं, तुम सबकी भी एक समय यही दशा होगी, काल बड़ा प्रबल है और मृत्यु अटल है, सब को मृत्यु वश अवश्य होना है, जाओ शोक को छोड़ कर अपने २ घरों में विश्राम करो॥

गिद्ध का वचन सुन कर ब्राह्मण फिर उठे, परन्तु शृगाल ने फिर कहा कि हे निर्दयी माता पिताओ ! मांस के लोभी गिद्ध की बातों में न आओ, लड़के को सचेत करने का उपाय करो किसी ऋषिश्वर की खोजना करो जो तुम्हारे मनोर्थ को सिद्धि करे यह सुन कर ब्राह्मण फिर लौट और शृगाल क वचन के अनुसार किसी ऋषि की चिन्ता करने लगे॥

गिद्ध बोला कि तुम ब्राह्मण हो कर भी मूर्ख ही हो जो जन्मता है उस का मरण तो अवश्य है फिर तुम गीदड़ की बात पर क्यों कर विश्वास करते हो जीव तो मरता नहीं, संभव है कि इस देह के आत्मा ने किसी और देह में प्रवेश कर लिया हो, फिर इस देह में वापस आना कैसे हो सकता है, यह सुन कर ब्राह्मण फिर उठ खरे हुए और कहने लगे कि चलो घर को लौटें, परन्तु गीदड़ ने फिर पलड़ा पकड़ा और कहने लगे कि तुम लोग बड़े कठोर हृदय हो जो अपने आत्मज को इस प्रकार गिद्धों को सौंप चले हो क्या तुम्हारे हृदय में दया का लेश नही जो तुम मेरी बात पर कान नहीं

करते ! अच्छा मेरे साथ आओ मृतक को देखें और उस के पुनर् जीवित होने के उपाय सोचें कदाचित् तुम्हारा बालक जी उठे ॥

यह कह कर गीदड़ आगे हो लिया और उन को मृतक के पास लाया और उस के मुंह से कपड़ा उठा कर कहने लगा कि हा शोक ! तुम लोग कैसे निर्दय हो, तुमे तनिक भी स्नेह नहीं तुम्हारे वंश का यही नाम लेवा और पानी देवा है जो पृथ्वी पर इस प्रकार अचेत पड़ा है तुम लोग कुच्छ भी उपाय नहीं करते तुम्हारे घर में दिया कौन जलायगा पितरों को पिण्ड कौन देगा और श्राद्ध कौन करेगा तुम नहीं जानते कि रामचन्द्र ने ब्राह्मण शूद्र के बच्चे को पुनर्जीवित कर दिया था। महर्षि श्वेत जी ने भी अपने बालक को फिर जीवन दिलाया था आश्चर्य नहीं कि किसी आप मुनि को तुम्हारी करुणा दशा देख कर दया आजाय और तुम्हारे बालक जी उठे ॥

यह सुन कर और बालक को देख सब के मन भर आये और बालक का शिर गोद में रख कर रोने लगे और ईश्वर से प्रार्थना करने लगे, गिद्ध फिर बोला कि अरे मूर्खो ! तुम क्या कर रहे हो कहीं मृतक भी जी उठे हैं जब प्राण निकल गये तो देह मिट्टी के समान है बालक भी इस बात को समझता है परन्तु तुम नहीं समझते, रोने धोने से कोई कार्य सिद्ध न होगा। गिद्ध की बातें सुन कर सब लोग उठ खड़े हुये और घर की ओर चले, गीदड़ फिर बोला कि तुम लोगों का चित बड़ा ही एकाग्र

नहीं होता तुम मेरे कहे को नहीं मानते, बड़ी स्थूल बुद्धि रखते हो ॥

गीदड़ और गिद्ध की परस्पर विरोधी बातों से वह लोग बड़ा आश्चर्य करने लगे, नहीं जानते थे कि क्या करें, इतने में महादेव जी ने दर्शन दिये, सब ने दण्डवत प्रणाम किये, शिवजी बोले कि मैं तुम्हारे शोकातुर वचनों को सुन कर आया हूं, ब्राह्मण बोले कि महाराज हमारे घर में यही बालक श्राद्ध करने वाला और पितरों को पानी देने वाला था जो इस प्रकार इस शमशान भूमि में पड़ा है, शिवजी ने झट लड़के को उठाया और कहा कि जाओ अपने माता पिता के साथ जाओ ॥

तब शिवजी अन्तर्धान होगये और ब्राह्मण अपने पुत्र को लेकर घर आये ॥

चौदहवां अध्याय

—:०:—

राजा मुचुकुन्द और जमदग्नि का संवाद शस्त्रों की उत्पत्ति ॥

युधिष्ठर ने पूछा कि हे पितामह ! मुझे यज्ञ माहेश्वर के सुनने की अभिलाषा है कृपा करके सारांश कहिये । भीष्मजी बोले कि यज्ञ और दान करना राजाओं का कर्तव्य है । ब्राह्मणों के लिये पठन पाठन का प्रबन्ध करना भी उचित है, जिस ब्राह्मण के पास बहुत सा धन हो राजा उसको लेकर

यज्ञ में व्यय कर सकता है क्षत्रिय और वैश्य के धन को भी यज्ञ में लगा सकता है, परन्तु शूद्र का धन यज्ञ में न लगावे यदि वेद पढ़ने वाला ब्राह्मण निर्धन हो तो राजा उसकी सहायता करे, यदि वेद के जानने वाला ब्राह्मण भूखा रहे पाप होगा, ब्राह्मण के समक्ष में दिल दुःखाने वाले शब्द न कहे क्योंकि वह देवता है, दुष्कुल से उत्तम स्त्री लेने में कोई दोष नहीं, स्वर्ण और ब्राह्मण का धन चुराना महा पाप है मद्यपान करने के पाप को दूर करने के लिये मद्य को उष्ण करके पिये और यदि मृत्यु को प्राप्त हो, तो दोष से बच सक्ता है, जो उत्तम कुल स्त्री अपने पति को छोड़ कर नीच पुरुष को ग्रहण करे तो उसको कुत्तों से नुचवाना चाहिये, इस के जार को मरमलों पर सुला २ कर मारना चाहिये, प्रायश्चित केवल उस पाप का होता है जो अज्ञानता से किया जाय ॥

तब नकुल ने भीष्म जी से पूछा कि हे पितामह ! सब शास्त्रों में खड्ग को बड़ा माना गया है, मेरी खड्ग बड़ी तीव्रता से चलती है और धनुष बाण तो केवल दूर से ही वार करते हैं, जहां चारों ओर से शत्रु युद्ध करता हो, वहां खड्ग से विजय करना कठिन है, बाण, गदा, शक्ति, त्रिशूल आदि के समक्ष में खड्ग धारी कैसे खड़ा होसकता है ॥

भीष्म जी बोले कि हे माद्री के पुत्र ! तुम ने बहुत अच्छा प्रश्न किया है। शस्त्र धारियों को सब शस्त्रों के गुण अच्छी प्रकार जानना चाहिये और समझना चाहिये कि कौन शस्त्र किस काम आता है और कब उस का वर्तना अवश्य है। पूर्व काल

कि तुम ने किया है वह मैं जान गई और सम्बंधियों से भी होना कठिन है, हे प्यारे मैं भी तुम्हारे साथ सती होती हूं यह कह कर आग में कूद पड़ी और जल कर भस्म होगई ॥

उसी समय स्वर्ग से एक विमान उतरा कबूतर और कबूतरी उस में चढ़े और स्वर्ग में चले गये ॥

व्याध ने कबूतर और कबूतरी को स्वर्ग में जाते देखा। उन को इस प्रकार देख उस ने भी उग्र तपस्या आरंभ की और वायु भक्षी होकर वह भी नारायण का भजन करने लगा। दैव योग से उस वन में दावानल उत्पन्न हुई जिस से वन के सब वृक्ष और पशु पक्षी जल कर भस्म हुये व्याध भी उसी प्रचण्ड अग्नि में जल गया और सीधा स्वर्ग को चला गया ॥

भीष्म जी बोले कि हे धर्मराज ! जो मनुष्य शरणागत को सताते और दुख देते हैं, उन का दोष प्रायश्चित करने से भी दूर नहीं होता, जो शरणागतों की रक्षा करते हैं वह इस कबूतर और कबूतरी की भांति स्वर्ग में आनन्द भोगते हैं ॥

बारहवां अध्याय

—:o:—

राजा युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह ! अज्ञानता से जो पाप होजावे उस से किस प्रकार छुटकारा होता है। भीष्म जी बोले महर्षियों और धर्म शास्त्रों मे बहुत से उपाय लिखे हैं, एक समय राजा जनमेजय से ब्रह्महत्या होगई थी इस लिये लोगों ने उसे

त्याग किया, राजा विचारा जंगलों और वनों में फिरने लगा ॥

एक दिन वह शौनक ऋषि के आश्रम में जा निकला, ऋषि पुत्र इन्द्रौत कुटियों के आगे भ्रमन कर रहे थे, जनमेजय ने दण्डवत प्रणाम की, इन्द्रौत बोला कि हे राजन् ! तुम्हारा मुंह भ्रष्ट होरहा है, दुर्गंधि बहुत आती है तुमने ब्रह्महत्या की है इस लिये यहां से चले जाओ, राजा बोला कि आप को छोड़ कर मैं कहां जा सकता हूं, मुझ पर कृपा करें और मेरे पाप को दूर करें, इन्द्रौत ने कहा कि अच्छा आप यह प्रतिज्ञा करें कि हम ब्राह्मणों को कभी दुःख न देंगे किन्तु आयु भर उन की पूजा करेंगे ॥

राजा ने शपथ खाई कि मैं आयु भर ब्राह्मणों को दुःख न दूंगा और सदैव धर्म से प्रजा पालन करूंगा । तब इन्द्रौत ने उसे कहा कि हे राजन् ! अज्ञानता से जो पाप हो जाय उस से छुटकारा जप तप से होता है तुम तीर्थों में स्नान करो ईश्वर की अराधना करो और सच्चे हृदय से प्रतिज्ञा करो कि अधर्म कभी न करेंगे इसी में आप का कल्याण है ॥

तब जनमेजय तीर्थों पर गये और सत्य भाव से ब्राह्मणों का सन्मान और पूजा करने लगे वेद पाठ भी किया और ईश्वर की अराधना भी की जिस से ब्रह्म हत्या का पाप उस से छूटा और राजा प्रसन्नता पूर्वक अपने राज्य की ओर लौटा, प्रजा उस को बड़ी प्रसन्नता से मिली और वह आनन्द पूर्वक राज्य करने लगा ॥

भीष्म जी बोले कि हे युधिष्ठर ! जो मनुष्य अज्ञानता

पाप करता है उस के लिये यही उचित है कि आगे के पापों से क्षमा मांगे, ईश्वर की प्रार्थना करे और पश्चाताप करें, परमेश्वर सर्वान्तरयामी उस के अज्ञानता से किये हुये पापों को अवश्य क्षमा करेंगे ॥

तेरहवां अध्याय

—:०:—

मृतक का जी उठना ॥

युधिष्ठर जी बोले कि हे पितामह! आपने कभी मृतक मनुष्यों को भी पुनः जीवित होते देखा है। भीष्म जी बोले कि हे युधिष्ठर! नैमिषित देश में एक ब्राह्मण का बालक अत्यन्त रूपवान था यह एकलौता लड़का किसी रोग से पीड़ित होकर मृत्यु वश हुआ। मांबाप इत्यादि रोने पीटने लगे और मृतक शरीर को उठा कर श्मशान में लेगये वहां और विचारे बच्चे के पूप से तड़प २ कर रोने लगे। एक गिद्ध उन की यह दशा देख कर पास आया और कहने लगा कि तुम लोग अज्ञानी हो इस प्रकार रोने से क्या बनता है क्या यह बालक जी उठेगा? जाओ अपने २ स्थानों को जाओ। मृत्यु सब की अवश्य होगी। इस पर शोक करना वृथा है। बुद्धिमान मृत्यु को नहीं शोचते। यह शरीर का धर्म है जाओ शोच को त्यागो और अपने अपने घरों को जाओ ॥

ब्राह्मण विचारे गिद्ध की बातें सुन और निराश हो

उठ खड़े हुए और अपने घरों को चल दिए। इतने में एक गीदड़ आया और कहने लगा कि तुम भी बड़े मूर्ख हो तुम्हारे घर का एक ही बच्चा और उस को तुम एकाकी श्मशान में अकेले छोड़ कर तुम घर को जा रहे हो। यह तुम्हारे लिये अच्छी बात नहीं। कोई उपाय करो कि जिस में यह बालक जी उठे तुम्हारे जाने की ही देर है कि यह गिद्ध और कौवे इस के मांस को नोच कर खायेंगे॥

यह सुन कर ब्राह्मण फिर लौटे और वहीं बैठ कर रोने लगे, गिद्ध बोला कि अपने समय को यूंही वृथा खो रहे हो तुम भी बहुत मूर्ख हो कि गीदड़ की बातों पर विश्वास कर के फिर लौट आये हो, कभी मृतक भी जिया करते हैं मेरी सहस्र वर्ष की आयु है, मैंने आज तक कभी नहीं देखा कि एक मृतक जी उठा हो, जाओ काम काज करो, यह सुन कर ब्राह्मण फिर चलने लगे॥

गीदड़ बोला कि तुम्हारे जैसे मूर्ख और कठोर हृदय माता पिता मैंने कभी नहीं देखे, भाई जब तक यह शरीर तुम्हारे सामने वर्तमान है तब तक तुम इस को जिलाने का उपाय कर सकते हो परन्तु जब गिद्ध ने इस को खा कर इस की हड्डियां भी पृथक कर दीं तो उस समय कुच्छ नहीं बनेगा, तुम इसके माता पिता हो तुम्हारा प्रेम इस बालक के निमित्त कुछ दिखाई नहीं देता क्यों नहीं किसी ऋषि मुनि से प्रार्थना करते? वह लोग सब बातों में समर्थ होते हैं, आश्चर्य नहीं कि वह लोग इस में फिर प्राण फूंके दें, यह सुन कर ब्राह्मण

फिर लौटे, परन्तु गिद्ध फिर बोला कि अरे मूर्ख ! यह मूर्ख शृगाल तुम को भटका रहा है, तुम इसकी बातों में आकर सम्भावना का भी विचार नहीं करते कभी मृतक भी जी उठे हैं देखो रात होने लगी है, इस समय श्मशान में ठहरना उचित नहीं, तुम सबकी भी एक समय यही दशा होगी, काल बड़ा प्रबल है और मृत्यु अटल है, सब को मृत्यु वश अवश्य होना है, आओ शोक को छोड़ कर अपने २ घरों में विश्राम करो ॥

गिद्ध का वचन सुन कर ब्राह्मण फिर उठे, परन्तु शृगाल ने फिर कहा कि हे निर्दयी माता पिताओ ! मांस के लोभी गिद्ध की बातों में न आओ, लड़के को सचेत करने का उपाय करो किसी ऋषीश्वर की खोजना करो जो तुम्हारे मनोर्थ को सिद्धि करे यह सुन कर ब्राह्मण फिर लौटे और शृगाल के वचन के अनुसार किसी ऋषि की चिन्ता करने लगे ॥

गिद्ध बोला कि तुम ब्राह्मण हो कर भी मूर्ख ही हो जो जन्मता है उस का मरण तो अवश्य है फिर तुम गीदड़ की बात पर क्यों कर विश्वास करते हो जीव तो मरता नहीं, संभव है कि इस देह के आत्मा ने किसी और देह में प्रवेश कर लिया हो, फिर इस देह में वापस आना कैसे हो सकता है, यह सुन कर ब्राह्मण फिर उठ खड़े हुए और कहने लगे कि चलो घर को लौटें, परन्तु गीदड़ ने फिर पलड़ा पकड़ा और कहने लगे कि तुम लोग बड़े कठोर हृदय हो जो अपने आत्मज को इस प्रकार गिद्धों को सौंप चले हो क्या तुम्हारे हृदय में दया का लेश नहीं जो तुम मेरी बात पर कान नहीं

धरते ? अच्छा मेरे साथ आओ मृतक को देखें और उस के पुनर जीवित होने के उपाय सोचें कदाचित् तुम्हारा बालक जी उठे ॥

यह कह कर गीदड़ आगे हो लिया और उन को मृतक के पास लाया और उस के मुंह से कपड़ा उठा कर कहने लगा कि हा शोक! तुम लोक कैसे निर्दय हो, तुमे बालक भी स्नेह नहीं तुम्हारे वंश का यही नाम लेवा और पानी देवा है जो पृथ्वी पर इस प्रकार अचेत पड़ा है तुम लोग कुच्छ भी उपाय नहीं करते तुम्हारे घर में दिया कौन जलायगा पितरों को पिण्ड कौन देगा और श्राद्ध कौन करेगा तुम नहीं जानते कि रामचन्द्र ने सम्भूक शूद्र के बच्चे को पुनर्जीवित कर दिया था। महर्षि श्वेत जी ने भी अपने बालक को फिर जीवित दिखाया था आश्चर्य नहीं कि किसी ऋषि मुनि को तुम्हारी करूणा दशा देख कर दया आजाय और तुम्हारे बालक जी उठे ॥

यह सुन कर और बालक को देख सब के मन भर आये और बालक का शिर गोद में रख कर रोने लगे और ईश्वर से प्रार्थना करने लगे, गिद्ध फिर बोला कि अरे मूर्खों! तुम क्या कर रहे हो कहीं मृतक भी जी उठे हैं जब प्राण निकल गये तो देह मिट्टी के समान है बालक भी इस बात को समझता है परन्तु तुम नहीं समझते, रोने धोने से कोई कार्य सिद्ध न होगा। गिद्ध की बातें सुन कर सब लोग उठ खड़े हुये और घर की ओर चले, गीदड़ फिर बोला कि तुम लोगों का चित बाची एकाग्र

नहीं होता तुम मेरे कहे को नहीं मानते बड़ी स्थूल बुद्धि रखते हो ॥

गीदड़ और गिद्ध की परस्पर विरोधी बातों से वह लोग बड़ा आश्चर्य करने लगे, नहीं जानते थे कि क्या करें, इतने में महादेव जी ने दर्शन दिये, सब ने दण्डवत प्रणाम किये, शिवजी बोले कि मैं तुम्हारे शोकातुर वचनों को सुन कर आया हूं, ब्राह्मण बोले कि महाराज हमारे घर में यही बालक श्राद्ध करने वाला और पितरों को पानी देने वाला था जो इस प्रकार इस श्मशान भूमि में पड़ा है, शिवजी ने झट लड़के को उठाया और कहा कि जाओ अपने माता पिता के साथ जाओ ॥

तब शिवजी अन्तर्धान होगये और ब्राह्मण अपने पुत्र को लेकर घर आये ॥

चौदहवां अध्याय

—:०:—

राजा मुचुकुन्द और जमदग्नि का संवाद शस्त्रों की उत्पत्ति ॥

युधिष्ठर ने पूछा कि हे पितामह ! मुझे यह सारांश के सुनने की अभिलाषा है कृपा करके सारांश कहिये । भीष्मजी बोले कि यज्ञ, और दान करना राजाओं का कर्त्तव्य है । ब्राह्मणों के लिये पठन पाठन का प्रबन्ध करना भी उचित है, जिस ब्राह्मण के पास बहुत सा धन हो राजा उसको लेकर

यज्ञ में व्यय कर सकता है क्षत्रिय और वैश्य के धन को भी यज्ञ में लगा सकता है, परन्तु शूद्र का धन यज्ञ में न लगावे यदि वेद पढ़ने वाला ब्राह्मण निर्धन हो तो राजा उसकी सहायता करे, यदि वेद के जानने वाला ब्राह्मण भूखा रहे पाप होगा, ब्राह्मण के समक्ष में दिल दुःखाने वाले शब्द न कहे क्योंकि वह देवता है, दुष्कुल से उत्तम स्त्री लेने में कोई दोष नहीं, स्वर्ण और ब्राह्मण का धन चुराना महा पाप है मद्यपान करने के पाप को दूर करने के लिये मद्य को उष्ण करके पिये और यदि मृत्यु को प्राप्त हो, तो दोष से बच सकता है, जो उत्तम कुल स्त्री अपने पति को छोड़ कर नीच पुरुष को ग्रहण करे तो उसको कुत्तों से नुचवाना चाहिये, इस के जार को मरमलों पर सुला २ कर मारना चाहिये, प्रायश्चित केवल उस पाप का होता है जो अज्ञानता से किया जाय ॥

तब नकुल ने भीष्म जी से पूछा कि हे पितामह! सब शास्त्रों में खड्ग को बड़ा माना गया है, मेरी खड्ग बड़ी शीघ्रता से चलती है और धनुष बाण तो केवल दूर से ही वार करते हैं, जहां चारों ओर से शत्रु युद्ध करता हो, वहां खड्ग से विजय करना कठिन है, बाण, गदा, शक्ति, त्रिशूल आदि के समक्ष में खड्ग धारी कैसे खड़ा हो सकता है ॥

भीष्म जी बोले कि हे माद्री के पुत्र! तुम ने बहुत अच्छा प्रश्न किया है। शस्त्र धारियों को सब शस्त्रों के गुण अच्छी प्रकार जानना चाहिये और समझना चाहिये कि कौन शस्त्र किस काम आता है और कब उस का वर्तना अवश्य है। पूर्व काल

सतारहवां अध्याय

—:-०-:—

गौतम ब्राह्मण और सत्यधर्मा का पुनर्जन्म ॥

भीष्म जी बोले कि हे अर्जुन ! राजा विरूपाक्ष ने बगुला के मांस को चिता पर रख कर सुगन्धित जलों को उस पर छिड़का और काम धेनु का आवाहन किया मन्त्रों का पाठ होने लगा, काम धेनु के स्तनों से जो दूध निकला उस को बगुले पर छिड़का गया बगुला तुरन्त जी उठा ॥

सत्य धर्मा ने इन्द्र से प्रार्थना की हे भगवन ! मुझे ब्रह्मा जी ने शाप दिया था कि क्योंकि तू मेरे पास नहीं आता इस लिये मारा जायगा परन्तु अपने मित्र के कारण जी उठेगा सो ऐसा ही हुआ गौतम मेरा वधक हुआ और विरूपाक्ष जीवन दाता हुआ अब मेरी प्रार्थना यह है कि यह ब्राह्मण भी जी उठे ! पक्षि के कहने पर इन्द्र ने गौतम पर भी अमृत छिड़का जिस से गौतम भी जी उठा, राजा ने उस का सब धन देकर उस को उस के देश में पहुंचा दिया परन्तु गौतम की दुष्टता उस के साथ गई। वहां दासी उस के साथ रही और उस से कई पुत्र उत्पन्न हुये उन के दुष्ट गुणों को देख कर ब्राह्मणों ने शाप दिया कि तू कुत्ते की योनि में जायगा और वहीं अपने पापों के फल को भोगे गा ॥

गौतम ब्राह्मण शाप पाकर कुत्ते के जन्म में गया और उस

की दुर्गति ... बगुला ...

पास गिया और कहने लगा कि हे भगवन ! आप के शाप को मैंने पाया अब मैं आप की सेवा में हूं और सदैव आप से धर्म लाभ करूंगा ॥

यह कह कर भीष्म जी बोले कि हे राजन् ! मित्र द्रोही मनुष्यों को यही गति होती है जो सब का भला चाहते हैं उन की गति बगुले के समान होती है जो सदैव ब्रह्म लोक में वास करते हैं ॥

तीसरा भाग

पहिला अध्याय

—:०:—

मोक्ष धर्म का वर्णन और राजा सेनजित की कथा ॥

राजा युधिष्ठिर ने पूछा कि आप ने राज धर्म और आपद्धर्म बताया अब मोक्ष धर्म भी बताईये, भीष्म जी बोले कि हे युधिष्ठिर ! मोक्षधर्म कुल धर्मों से बढ़ कर है, जिह्वा से उस के गुणों को वर्णन करना बहुत कठिन है । जिस रास्ते जाओ परिणाम अच्छा ही होगा ॥

यदि इस जन्म में कोई अच्छा परिणाम न निकले तो भी परलोक में अच्छा होगा जिस धर्म के लिये संसार में धर्म किया

जाये उस का फल यहां ही मिल जाता है, लोग समझते हैं कि धर्म ज्ञान के बिना नहीं होता इस लिये धर्म करना ठीक नहीं मेरे विचार में यह संभावना ठीक नहीं धर्म ज्ञान की प्राप्ती के लिये प्रथम साधन है, धर्म लाभ के लिये, किया जाता है, इस से जगत में लाभ होता है। तपस्या कभी निष्फल नहीं जाती यह ऋषि मुनियों का सिद्धान्त है। कोई सन्तान के लिये धर्म करता है। कोई मोक्ष के लिये, कोई वैराग्य सीखने के लिये, जो कुछ कोई कामना करता है वैसा ही फल उस को मिलता है, धर्म से यह बात स्पष्ट होती है कि जगत क्षन भंगुर है सब जीव एक न एक दिन इस जगत को अवश्य छोड़ देंगे जब यह बात निश्चित हो जाती है तो आप ही ज्ञान और वैराग्य उत्पन्न होते हैं जब ज्ञान हो गिया तो मोक्ष का मिलना असंभव नहीं ॥

युधिष्ठर जी बोले कि हे पितामह! माता, पिता, भाई बन्धु, पुत्र, कलत्र सब नाशवान हैं, सब लोग जानते हैं परन्तु फिर उन की मृत्यु पर सब शोक करते हैं हृदय में अस्थायिता आती है इस लिये इस चिन्ता से किस प्रकार मुक्ति हो ॥

भीष्म जी ने उत्तर दिया कि माता, पिता, पुत्र, कलत्र, स्त्री लोक के साथी होते हैं परलोक में साथ नहीं जाते जब सब को मरना अवश्य है तो फिर मृत्यु पर शोक करना वृथा है बुद्धिमान कभी मृत्यु का शोक नहीं करते इस लिये शोक और मोह को दूर करना अवश्य है मैं राजा सेनजित का इतिहास

तुम को सुनाता हूं ! उस को सुन कर तुम किसी मृत्यु पर शोक न करोगे ॥

राजा सेनजित का पुत्र मर गिया तो राजा को बहुत दुःख हुआ दिन रात राजा उसी के शोक में रहता था, राज्य कर्मचारी भी राजा की यह अवस्था देख कर दुःखी और उदास रहते थे एक दिन एक ब्राह्मण राजा के पास आया और कहने लगा कि हे राजन् ! तुम अज्ञानियों के समान ऐसे मोह के वश में क्यों हो तुम्हारा राज्य कार्य सब नष्ट हुआ जाता है तुम्हारे राज्य कर्मचारी तुम्हारी इस अवस्था पर रो रहे हैं क्या तुम यह नहीं जानते कि मृत्यु अटल है, यमराज सब से प्रबल है और सब को अपने वश करता है जीव अविनाशी है और शरीर यहीं पड़ा रह जाता आत्मा किसी और स्थान को चली जाती है, मन को ढारस दो, शांति करो, दुख और शोक से कोई लाभ नहीं ॥

सेनजित ने कहा कि आप कहते तो सत्य हैं परन्तु मन में शांति नहीं आती, किन उपायों से मन को शांत किया जाय ॥

ब्राह्मण बोला कि संसार सब दुःखों से भरा पड़ा है, परंतु ज्ञानी लोग दुख सुख का कभी विचार नहीं करते, उन को दुख से शोक नहीं होता और सुख से आनंद भी नहीं जीवात्मा अविनाशी जीने मरने से रहित है, वह किसी के वश में नहीं, इस लिये भाई बंधु पुत्र कलत्र भी साथ नहीं देसकते और हमारा उन से सम्बन्ध ही क्या होसकता है एक

न एक दिन अवश्य हम से पृथक होंगे, इस लिये तुम्हारा शोक वृथा है तुम किस की खोजना करते हो, जीव की अथवा शरीर की, यदि शरीर की तो वह तो तुम्हारे सन्मुख में भस्म होगया, यदि जीव का तो उस का मिलना कठिन ही नहीं किंतु असम्भव है, संसार में मोह और तृष्णा से दुख दूर होता है, माया मोह का जाल सब प्राणियों को बांधे हुये है ॥

हे राजन्! दुख के उपरान्त सुख और सुख के उपरांत दुख होता है दोनों में किसी की स्थिरता नहीं, कर्म जीव के साथ जाता है, जो जैसा करेगा वैसा ही फल पावेगा, लोग स्त्री और पुत्र के लिये धन एकत्र करते हैं और धर्म अधर्म का किंचित विचार भी नहीं करते परंतु अधर्म का फल तो केवल करने वाले को ही होगा, हे राजन! तृष्णा और मोह से दुख होता है इस को दूर करना चाहिये, पिंगला नाम एक वेश्या किसी पुरुष से मित्रता रखती थी दोनों का परस्पर बड़ा प्रेम था एक दिन उस का यार न आया तो वह वेश्या सारी रात उस की प्रतीक्षा में तड़पती रही दिन को उसे ज्ञान होगया और वह सोचने लगी कि मोह से मुझे इस प्रकार दुख हुआ. क्यों न मैं उस परमात्मा का ध्यान करूं कि जो सब का अन्तर्यामी है और सर्व व्यापक है इस लिये वह पिंगला ईश्वर की अराधना मे ऐसी तत्पर हुई कि मोक्ष को प्राप्त हुई ॥

राजा सेनजित का दुख इस इतिहास को सुन कर जाता रहा, भीष्म जी कहने लगे कि हे युधिष्ठिर! तुम भी भाई बंधुओं का शोक न करो ॥

दूसरा अध्याय

—:०:—

सुख भाव और अच्छे गुणों को प्राप्त करना ॥

युधिष्ठर ने पूछा कि हे पितामह ! वृद्धावस्था में मनुष्य के अंग शिथिल हो जाते हैं नाना प्रकार के रोगों से निर्बलता बढ़ती जाती है मृत्यु प्राण लेने के लिय प्रतिक्षण उपस्थित रहती है, मरण के समय मनुष्य कौन से उपाय करे कि उसको प्राणों के त्याग का दुःख न हो ॥

भीष्मजी बोले कि यही प्रश्न मेघावी नाम ब्राह्मण ने अपने पिता से किया था, पिता ने उत्तर दिया था कि जो मनुष्य ब्रह्मचर्य्याश्रम में वेद पढ़े, हवन करके पितरों का आवाहन करे, यज्ञ करे, वनवास करे, फिर मरण के दुःख नहीं व्यापेंगे, मेघावी बोला कि हे पिता ! इतने कामों के लिये आयु चाहिये वानप्रस्थाश्रम में तो बुढ़ापा आजायेगा, सब अंग शिथिल पड़ जायंगे और उसकी शक्ति वानप्रस्थ के दुःखों को सहारने के असमर्थ होगी ॥

पिता ने कहा कि यह बात सत्य है कि प्रतिश्वास आयु न्यून होती जाती है इसलिये जो काम करना हो आज ही करें कल पर कदापि न छोड़े, मैं इसी नियम पर काम करता हूं कदाचित् कल मर जाऊं इसलिये आज का काम कल पर नहीं छोड़ता मूर्ख लोग आज के काम को छोड़ देते हैं और दुःख पाते हैं हे पुत्र ! जो कुच्छ करना हो उस को आज

हा समाप्त करो क्योंकि मृत्यु काल रूपी मुख खोले हूये सदैव सामने खड़ी है प्रतीत नहीं कि कब मुंह में ग्रस कर भस्म कर डाले, एक दिन सब को मरना है, जगत में सत्य बोलना, धर्म करना, वेद पढ़ना और उपकार करना भी उन के साथ है धर्मात्मा और उत्तम स्वभाव मनुष्य सीधा स्वर्ग को जाता है विद्या से शक्ता जाती रहती है, सचाई से मान होता है। ममता और मोह से दुःख बढ़ता है कभी सुख नहीं होता ॥

हे राजन्! शरीर तो मिट्टी के समान है, इस का आज ठिकाना है कल कुच्छ भी नहीं, जगत में मन लगाना केवल मूर्खता है, ऐसा बर्ताव रखना चाहिये कि जगत के मोह में न फंसे, जगत नाशवान है इस पर विश्वास ही क्या है। जब जगत को तुच्छ समझ लिया तो मुक्ति को प्राप्त करने में क्या देरी है देखो मनुष्य धन इकठा करने की कामना से कितना दुख उठाता है, नाना प्रकार की संसारिक चिन्तायें ग्रस्त करती है, मरण पर्यन्त इन जंजालों से छुटकारा नहीं होता मनुष्य परमात्मा को भूल जाता है उस के मित्र और प्रिय पुत्र आदिक ही उस के शत्रु होजाते हैं और सदैव प्रार्थना करते हैं कि यह बूढ़ा मरे और हम दुखों से छूटें ॥

यदि मर भी जाये, तो उसका धन पदार्थ औरों के हाथ आता है, जो मद्यपान, व्यभिचार और द्युतादिक कर्मों पर व्यय करते हैं यदि किसी धर्म अर्थ के काम पर लगावे तो मृतक को भी परलोक में सुख होता। परन्तु ऐसे कर्मों से तो उसको सुख के स्थान पर दुःख होता है, धर्म को तो

स्थिति नहीं हो सकती। जो धन धर्म से उपार्जन किया जाये वह ही चिरकाल रहता है। बुद्धिमान उसको धर्म युक्त कामों में लगा दे। जो लोग ऐसा करते हैं, वह परलोक के लिये सुख उपार्जन करते हैं॥

युधिष्ठर ने पूछा कि हे पितामह! यज्ञ बिना धन के नहीं हो सक्ता, इस लिये क्या निर्धन मनुष्य यज्ञ न करे?

भीष्मजी बोले कि सम्वादक ऋषि ने कहा है कि धनवानों के लिये यज्ञ करना सुगम है परन्तु निर्धन पुरुष सत्य धर्म से यज्ञ कर सकते हैं, ऋषि मुनियों के पास पैसा नहीं होता, परन्तु वह भी तो यज्ञ करते ही हैं, जंगल से लकड़ियां इकट्ठी कर लाते हैं और हवन यज्ञ करते हैं, कन्द मूल और फल फूल से दक्षिणा देते हैं वेद पाठी ब्राह्मणों को कन्द मूल से भोजन कराते हैं यही उनका यज्ञ है हे राजन्! धनवानों को यह विचार नहीं होता कि हमारा धन धर्म के कामों में लगे, वह धन इकट्ठा करने के अतिरिक्त और किसी धर्म के कार्य की ओर दृष्टि नहीं करते, इसलिये निर्धन लोग ही ईश्वर के प्यारे हैं वह अच्छे कामों का ध्यान रखते हैं सच बोलते हैं, परोपकारी हैं, बाल बच्चें और स्त्री के मोह में नहीं फंसते, ऐसे मनुष्य सदैव मोक्ष पद को पाते हैं॥

तीसरा अध्याय

—:o:—

मनुष्य जन्म की प्रतिष्ठा और सृष्टि की उत्पत्ति॥

युधिष्टर ने पूछा कि हे पितामह ! वेद पाठी विद्वान क्या क्या काम करते हैं कृपा पूर्वक वर्णन कीजिये ॥

भीष्म जी बोले कि इस प्रश्न पर मुझे प्रह्लाद की कथा स्मरण हुई है वह मैं तुम को सुनाता हूं चित लगा कर सुनो, प्रह्लाद जी ने एक वेद पाठी ब्राह्मण से पूछा कि आप सदैव आनन्द में मग्न रहते हैं, इस का क्या कारण है न आप को कोई चिन्ता न दुःख और न रोग है, सदैव सत्यवादी और झूठ न बोलने वाले हैं इस का क्या कारण है ?

ब्राह्मण ने उत्तर दिया कि मैं पुण्य और पाप को ईश्वर के आधीन समझता हूं, जीवधारियों वनस्पतियों और धातुओं को नाशवान जानता हूं इन्हीं बातों से मनुष्य इन्द्रियों को वश में करता है जब यह बातें समझ लोगे तो ज्ञानी होजाओगे और परमात्मा के प्रकाश से आविर्भूत होकर ब्रह्म में लीन होजाओगे सब पदार्थों को नाश युक्त समझ कर अंतरो जगत् से तुम्हारा मन स्नेह बद्ध न रहेगा इस लिये मनुष्य जन्म धन्य है, इसको बुद्धि दी गई है कि वह ईश्वर से प्रेम करे, ज्ञानी लोग शरीर को पाकर शुभ कर्म करते हैं ॥

युधिष्टर बोले कि हे पितामह ! जीवधारियों और वनस्पति की उत्पत्ति कैसे हुई, प्रलय काल में उन की क्या दशा होगी वर्णों को विभाग किस ने किया, और धर्म अधर्म के मार्ग क्या हैं ?

भीष्म जी ने उत्तर दिया कि किसी समय भृगु ऋषि कैलाश पर्वत पर तपस्या कर रहे थे। भरद्वाज ऋषि वहां

पहुंचे। आप ने यही प्रश्न भृगु जी से किया। उस ने उत्तर दिया कि सृष्टि के आदि में परमेश्वर ने पहिले महातत्त्व को उत्पन्न किया उस से अहंकार और अहंकार से आकाश उत्पन्न हुआ आकाश से वायु वायु, से अग्नि, अग्नि से जल और जल से पृथ्वी उत्पन्न हुई यही पांच तत्त्व हैं जिन से सृष्टि उत्पन्न हुई, इन्हीं पांच तत्त्वों से ब्रह्मा, शिव, इन्द्र, गन्धर्व, किन्नर, पशु, पक्षी और मनुष्य आदि सब उत्पन्न हुये। जहां तक दृष्टि पहुंच सक्ती है आकाश ही आकाश दिखाई देता है, इस का आदि है न अन्त जहां पर सूर्य की किर्णें नहीं पहुंच सकतीं, न चन्द्रमा की चन्द्रिका प्रवेश कर सक्ती है। यही देवताओं का निवास स्थान है। पृथ्वी के चारों ओर समुद्र, समुद्र के नीचे अन्धेरा, अन्धेरे के नीचे आग है, रसातल के अन्त में जल और जल के नीचे शेषनाग है। उन के नीचे फिर आकाश और आकाश के नीचे फिर जल। जब प्रलय होती है तो वसुरूप भगवान योग निद्रा से सब पदार्थों को नाश कर देते हैं। वह सब उस में मिल जाते हैं कोई प्रकट नहीं रहिता जब वह जागते हैं तो फिर सृष्टि उत्पन्न होती है और सब पदार्थ पहिले की भान्ति प्रकट होते हैं॥

वह पर ब्रह्म एक है, उस का कोई दूसरा प्रतिरूप नहीं, शेष पर विराजमान हैं, उन की नाभी से कमल उत्पन्न होता है, कमल से ब्रह्मा जी और ब्रह्मा जी से सरस्वती उत्पन्न होती है। ब्रह्मा जी आज्ञा पाकर सुमेरू पर्वत पर सौ वर्ष तपस्या करते हैं, तपस्या करने के समय ही उन के हृदय से सरस्वती

प्रकट होती है फिर ब्रह्मा जी के मुख से वेद निकलते हैं। पृथ्वी, वायु, अप, अग्नि, आकाश यह पांच तत्व हैं जिन से सृष्टि उत्पन्न की गई, यह शरीर पांच तत्वों से बनता है। अन्य पदार्थ वृक्ष, पत्थर आदि भी इन्हीं से उत्पन्न हुये॥

भरद्वाज बोले कि वृक्ष तो अन्दर से ठोस हैं इन में आकाश कैसे हो सक्ता है, न इन में श्रवण, त्वच, स्वाद, स्पर्श और सूंघने की इन्द्रिय है॥

भृगुजी बोले कि वृक्षों में भी आकाश है आकाश ही के कारण से रस फल फूल उत्पन्न होते हैं क्योंकि सूर्य की आतप से उनके पत्ते फल फूल मुरझा जाते हैं, यही उन में त्वच शक्ति है बिजली की कड़क से बहुधा वह भी गिर जाते हैं, यही उन में श्रवण शक्ति है। बहुत से वृक्षों की टहनियां दूसरों में चिमट जाती हैं इन से प्रतीत होता है कि उन में देखने की शक्ति भी है, सुगन्ध और दुर्गन्ध से वृक्ष हरे भरे रहते हैं और फलते फूलते हैं, इससे सूंघने की शक्ति भी इन में पाई जाती है। जड़ से पानी पीना, दूसरे वृक्ष को देख कर रङ्ग पकड़ना यही इन में स्वाद की शक्ति है। क्योंकि वृक्ष सूखते और मुरझा जाते हैं इसलिये उन में जान भी है॥

चौथा अध्याय

—:०:—

श्रीकृष्ण भगवान की स्तुति और आग्रह

अवतार का वर्णन और समय की गणना ॥

युधिष्ठर बोले कि हे पितामह ! मैं श्रीकृष्ण की स्तुति सुनना चाहता हूं इन्हों ने पूर्व जन्म में जो बातें की उन को वर्णन कीजिये ॥

भीष्मजी बोले कि श्रीकृष्ण भगवान के पूर्व कृत बहुत प्रशंसनीय हैं, एक दिन मैं घूमता २ मारकण्डेय जी के स्थान पर पहुंचा, वहां बहुत से ऋषि मुनि वार्तालाप कर रहे थे, मुझे देखते ही सब ने पूजा की और आसन पर बिठलाया, मैंने प्रार्थना की कि जो कथा होरही थी उस को करते रहिये, कश्यप जी बोले कि हम लोग वाराह अवतार की कथा कर रहे थे॥

फिर कश्यप जी कथा को दोबारा सुनाने लगे और कहने लगे कि जब पृथ्वी पर अधर्म होता है तो परमेश्वर आप अवतार धारण करता है, आज कल भी नारायण ने कृष्ण अवतार लिया है और नन्द के हां उत्पन्न हुये हैं पूर्व काल में नरकासुर दैत्य के साथ और भी बहुत से दुष्ट राक्षस थे जो लोगों को बहुत दुख देते थे इस लिये देवता और मनुष्य ब्रह्मा जी की शरण में गये, तब ब्रह्मा जी बोले कि नारायण तुम्हारी रक्षा करेंगे, नारायण जी ने वाराह का अवतार लिया और दैत्यों के निवास भूमि के नीचे जाकर भयंकर शब्द करने लगे उस एक ही गर्जना से दैत्यों का सब घमण्ड दूर हुआ, वाराह ने पृथ्वी को दांतों पर ऊपर उठाया देवता भी डर कर ब्रह्मा जी के पास आये, ब्रह्मा जी बोले कि तुम मत डरो यह तुम्हारे

ही निमित्त नारायण जी ने अवतार लिया है वह देखो राक्षसों को मार कर वाराह जी चले आते हैं तब देवताओं ने मंत्रों से वाराह की पूजा की और नारायण जी प्रसन्न होकर बैंकुठ को चले गये ॥

युधिष्ठर बोले कि महाराज ऋषियों ने समय की गणना कैसे की है, भीष्म जी बोले कि यही प्रश्न व्यास जी से सुखदेव ने किया था व्यास जी ने उत्तर दिया था कि १५ पल की १ काष्ठा, ३० काष्ठा की एक कला, ३० कला की एक मुहूर्त ३० मुहूर्त का एक दिन और रात होता है ३० दिन रात का एक महीना और बारह महीने का एक साल होता है इस में छः मास उत्तरायण और छः मास दक्षिणायण सूर्य रहिता है सूर्य के घूमने से दिन रात होता है दिन कार्य करने के लिये और रात्रि दिन की थकावट दूर करने के लिये, मनुष्यों का एक मास पितरों के एक दिन के तुल्य होता है, अर्थात शुक्ल पक्ष दिन और कृष्णपक्ष रात्रि, मनुष्यों का एक साल देवताओं के एक दिन के समान होता है, अर्थात उत्तरायण दिन और दक्षिणायण रात्रि होती है, सत्युग का समय १७२८००० वर्ष का है चार सौ वर्ष की संध्या होती है सत्युग में धर्म के चार पाद होते हैं दूसरा युग त्रेता है इस में धर्म का एक पाद जाता रहिता है सत्ययुग में कोई मनुष्य दुःखी नहीं होता, कोई रोग बाधा नहीं करते त्रेता में धर्म के तीन पाद हैं इस समय ज्ञान उत्तम समझा गया है द्वापर और कलियुग में दान देना और यज्ञ करना ही उत्तम है चारों युगों के अंत पर ब्रह्मा जी का एक

दिन होता है दिन के आरंभ में वसु भगवान सृष्टि की रचना करते हैं और रात्रि के आरंभ पर प्रलय होजाती है ॥

पांचवां अध्याय

—:०:—

इन्द्र और राजा बलि की कथा ॥

फिर भीष्म ने दान की उच्चता बताइ फिर युधिष्ठर ने गृहस्थाश्रम के गुण पूछे, भीष्म ने कहा कि गृहस्थी को उचित है कि स्त्री पुरुष दोनों मिल कर हवन यज्ञ करें, ब्रह्म भोज करायें, साधुओं को भोजन दें और यथा शक्ति दान दें, गृहस्थीयों को खाने के लिये अन्न इकठा करना चाहिये परिश्रम से जीविका का उपार्जन करना, केवल अपने लिये ही खाना न बनाना चाहिये कम से कम एक और मनुष्य को तृप्ति पूर्वक खिलाना उचित है दिन को सोना ठीक नहीं, न ही सन्ध्या के समय। अधिक खाना भी अच्छा नहीं इस से रोग उत्पन्न होते हैं ॥

व्यास जी सुखदेव से बोले कि एक समय राजा इन्द्र एरावत पर स्वार हो कर भ्रमण कर रहा था कि उसने राजा बलि को देखा जो गधे की योनी में पड़ा हुआ घास चर रहा था, इन्द्र ने पूछा कि हे बलि ! यह क्या बात है, तुम्हारी राज्य लक्ष्मी कहां गई और तुम को यह योनी कैसे प्राप्त हुई, वह तुम्हारे राज्य के ठाठ बाठ क्या हुये और यह घास किस प्रकार खाते हो । धोबी तो मार २ कर तुम्हारा कचूमर बनाता होगा ॥

यह सुन कर बलि बोला कि हे देवेन्द्र ! क्यों वह वृत्तान्त पूछ कर मुझे लज्जित करते हो। जब तक पूर्व जन्म के शुभ कर्म रहे, तब तक राज्य आदि भोग मिलते रहे, परन्तु कर्म वश हो कर गर्दभ योनि में आया हूं। लक्ष्मी का नाम चपला है। यह कभी स्थिर नहीं रहती आज यहां है और कल वहां। रही खाने पीने की बात सो उसका यह तात्पर्य है कि यह हरि घास मुझ को राज्य के भोगों के बिलकुल समान है इस के अतिरिक्त ज्ञानी लोग दुःख में दुःख और सुख में सुख नहीं मानते, दुःख सुख आते जाते रहते है, इस लिये उन पर हर्ष शोक नहीं करते। पहिले मेरा स्वभाव कुच्छ और था और यहां आकर कुच्छ और ही हो गिया है। मेरे विचार में भी यह बात कभी नहीं आई कि मैं पहिले सुखी था और अब दुःखी हूं, मृत्यु से कोई नहीं बचता और लक्ष्मी सदैव किसी के साथ नहीं रहती॥

यह सुनते ही लक्ष्मी स्त्री रूप धारण कर के बलि के शरीर से निकल कर सामने चली आई और खड़ी हो गई। इन्द्र उस को देख कर बड़ा आश्चर्य करने लगा और पूछने लगा कि यह स्त्री कौन है। बलि ने कहा कि मैं इस को नहीं जानता आप स्वयं इस से पूछो। तब इन्द्र ने लक्ष्मी से पूछा कि हे भद्रे ! तुम कौन हो ? लक्ष्मी बोली कि मुझे तुम में से कोई भी नहीं जान्ता, मेरा नाम लक्ष्मी है। यह सुन कर इन्द्र को बहुत हर्ष आया और उस ने पूछा कि आप चिर काल तक राजा बलि के पास रहीं परन्तु अब क्यों उस को छोड़

दिया है। लक्ष्मी बोली कि मैं केवल उन्हीं लोगों के पास वास करती हूं जो दान, व्रत, तप, पराक्रम और धर्म के करने वाले हैं। यह उत्तर सुन कर राजा बलि ने मुंह दूसरी ओर कर लिया॥

लक्ष्मी बोली कि यद्यपि राजा बलि ब्राह्मणों का भक्त, सत्यवादि और इन्द्रियों संयम करने वाला था, परन्तु तो भी वह अंत को ऐसा घमण्डी हुआ कि ब्राह्मणों की निन्दा करने लगा। यहां तक कि लोगों से अपनी पूजा कराने लगा, इस लिये ऐसे मनुष्य के पास मेरा निर्वाह कैसे हो सक्ता है, इस लिये मैं आप के पास आई हूं॥

इन्द्र ने पूछा कि हे लक्ष्मी! क्या कोई मनुष्य तुम को इस प्रकार भी वश में कर सकता है कि तुम सदैव उस के पास रहो, लक्ष्मी ने कहा कि कोई देवता, मनुष्य और गन्धर्व मुझ को रोकने की शक्ती नहीं रखता। इन्द्र ने पूछा कि अच्छा तुम ही कोई उपाय बताओ कि जिस से तुम सदैव यहां ही बनी रहो, लक्ष्मी बोली कि मेरे चार पाओं हैं, उन के रखने का स्थान बताओ तो मैं निश्चल रह सक्ती हूं॥

इन्द्र ने कहा कि मैं तुम्हारे सदैव रहने का उपाय करता हूं। तुम्हारे एक चरण का भार तो पृथ्वी सहार सक्ती है। यह सब चीजों का बोझ उठा सक्ती है॥

लक्ष्मी बोली कि बहुत अच्छा पहिला चरण तो रखा गया पृथ्वी मेरे बोझ को सहारेगी, अब बताओ कि दूसरा चरण कहां रखूं इन्द्र बोला कि पृथ्वी के चारों ओर जल है

जो जल जन्तुओं की पालना करता है इस लिये यही जल तुम्हारे दूसरे चरण का भार सहेगा, लक्ष्मी बोली बहुत अच्छा, अब तीसरे चरण का स्थान बताओ इंद्र बोले कि अग्नि तुम्हारा तीसरा चरण उठावेगा क्योंकि अग्नि के बिना यज्ञ हवन और धर्म कर्म नहीं होसकते ॥

लक्ष्मी बोली कि तीसरा चरण भी रख लिया अब चौथे चरण का स्थान बताओ, इन्द्र बोले कि जो वेद ब्राह्मण और साधुओं के भक्त हैं और जो सदैव सत्य बोलते हैं वही चौथे चरण का भार उठावेंगे, लक्ष्मी बोली कि बहुत ठीक। इन्द्र को हरस हुई कि अब लक्ष्मी सदैव उस के पास रहे गी, इंद्र बोले कि हे लक्ष्मी इस लोक में शुभ कर्मियों के यहां तेरा वास होगया और अधर्मी नाश को प्राप्त होगा ॥

बलि बोला कि हे इंद्र! आने वाले मन्वंतर में मेरा ही राज्य होगा जब यह लक्ष्मी मेरी आधीनता में आवेगी हे इंद्र! मैं तुम को जीत लूंगा और तुम्हारा इंद्रासन छीन लूंगा ॥

इन्द्र बोले कि हे बलि! मैं तुम्हारे अपशब्द सुन कर बहुत दुःखित हूं विचार तो यह है कि अभी वज्र से तुम्हारा नाश करूं परन्तु ब्रह्मा जी की आज्ञा ऐसी नहीं, इसलिये छोड़ देता हूं, ब्रह्माजी ने सूर्य का चक्र स्थापन कर दिया था इस से छः महिने सूर्य उतरायण और छः महीने दक्षिणायण को रहता है, इस के विरुद्ध कभी नहीं हो सक्ता, जब होगा तभी लक्ष्मी तुम्हारे पास आयेगी, अच्छा ऐसी ऐसी बातों से अपने मन को तो प्रसन्न कर लो, तब इन्द्र

उत्तर को मुख कर के चला गया और वलि दक्षिण को ॥

छटा अध्याय

—:०:—

राजा युधिष्ठर का मृत्यु की उत्पत्ति का वृत्तान्त पूछना और भीष्म का उत्तर देना ॥

जब आत्मा शरीर को छोड़ देता है और नये शरीर में प्रवेश करता है तो मानो एक ग्राम से दूसरे में जाना होता है, कौरव पाण्डवों के युद्ध में बहुत से शूरवीर मारे गये । मुझे सन्देह है कि आया उन के शरीर नाश हुये अथवा जीव मारे गये भला यह तो बताईये कि मृत्यू कब हुई और किस प्रकार हुई, तब भीष्म जी नें राजा अनुकम्पक का इतिहास सुनाया और मृत्यु की उत्पत्ति वर्णन की भीष्म जी ने फिर बताया कि जाचली नाम ब्राह्मण ने समुद्र के तट पर घोर तप किया उस से उस में ऐसी शक्ति आगई कि वह पृथ्वी और आकाश के जिस स्थान पर चाहता उड़ कर चला जाता ॥

जाचली इस गुण प्राप्ती के कारण बड़ा घमण्ड करने लगा एक दिन एक निशाचर उस के पास आया ब्राह्मण ने अपने गुणानुवाद गाये और बहुत प्रशंसा की निशाचर बोला कि तुलाधारी बनिया भी ऐसे प्रशंसा के शब्द नहीं बोलता यद्यपि वह तुम से सहस्रों गुण बढ़ कर है, देखो अपने

मुंह से अपनी प्रशंसा करना बड़ा दोष है, तुम ऐसे तपीश्वर होकर इस प्रकार की बातें करते हो ॥

जाचली ने बड़ी उग्र तपस्या की थी यहां तक कि वह देर तक समाधि में रहा और बैठे बैठे उस की जटायें इतनी बढ़ गईं कि चिड़ियां ने उन में घौंसलें बनाये और वहीं उन के अंडे बच्चे बढ़े और खाना पीना सीख कर उड़ गये तत्पश्चात जाचली इधर उधर घूमने लगा और तप का बखान करने लगा देवताओं ने आकर समझाया कि इतना घमंड ठीक नहीं देखो तुलाधार वैश्य गृहस्थाश्रम में ही इतना तपस्वी हुआ है कि तुम उस का सोलहवा भाग भी नही तब जाचली को तुलाधार के देखने की बड़ी अभिलाषा हुई और काशी में उस का खोज लगा कर उस के स्थान पर पहुंचा ॥

तुलाधार ने आदर पूर्वक पुजा की और हाथ जोड़ कर पूछने लगा कि महाराज कहिये क्या आज्ञा है आप का आना कैसे हुआ, जाचली बोला कि महाराज! केवल आप के दर्शन की अभिलाषा थी मैंने आप के तप की महिमा बहुत सुनी है परंतु आप तो तुला और बट्ट लेकर सौदा तोल रहे हैं, आप को तप करने का कौनसा अवसर मिलता होगा ॥

तुलाधार बोला कि मैं क्या तप कर सकता हूं हां आपने अवश्य किया है कि पक्षियों ने आप की जटाओं में भी घौंसले बनाये और आप समाधिस्थ ही रहे आप को इस लिये तप का घमंड है परंतु मुझ को क्या घमंड होसकता है मेरा तप ही क्या है हां मैं जानता हूं कि घमंड से तप का महत्व जाता रहता है ॥

जाचली यह सुन कर आश्चर्य करने लगा और पूछने लगा कि आप को मेरे तप का वृत्तांत क्योंकर विदित हुआ, तुलाधार बोला कि आप की भांति मैंने समाधी नहीं लगाई, केवल सत्य बोलना ही धर्म समझता हुं अपने बाल बच्चों को पालता हुं, माता पिता की सेवा करता हूं, मद्य मांस का त्याग रखता हूं प्रिय वचनों से लोगों के हृदयों को वश में करता हुं, सब मुझ को प्रिय समझते हैं, यथाशक्ति परोपकार भी करता हूं, जो साधु भद्र लोग आजाते हैं यथाशक्ति उन की सेवा करता हूं परमात्मा का प्रकाश सब जीवों में देख कर हिंसा नहीं करता देखो गाय बैल कैसे सुख देते हैं गाय का दूध अमृत से भी बढ़ कर है नहुष ने गौ बैलों को मारा था, सब ब्राह्मण और देवताओं ने उस के हां यज्ञ कराना छोड़ दिया ॥

जाचली बोला कि तुम तो नास्तिकों की सी बातें करते हो क्या यज्ञ करने से भी हत्या दूर नहीं होती ? तुलाधार बोला कि मैं यज्ञ की निंदा नहीं करता न मैं नास्तिक हूं, ब्राह्मण ने वेद पढ़ना छोड़ दिया न स्वयं यज्ञ करते हैं किंतु क्षत्रियों से यज्ञ कराते हैं, यज्ञ में पशु मारे जाते हैं, इस लिये यह यज्ञ सनातन नहीं ब्राह्मणों का चलाया हुआ है हे जाचली ! लोभ और काम से अनुचित कर्म किये जाते हैं ॥

हिंसा आत्मक यज्ञ कराने का पाप कराने वाले पर होता है, उत्तम यज्ञ तीन प्रकार का होता है, एक नमस्कार दूसरा जप और तीसरा देवताओं का भाग निकालना, हिंसा आत्मक यज्ञ वेद में कहीं नहीं लिखा, अग्नि को दी हुई आहुती सूर्य को

पहुंचती है और सूर्य से वर्षा होती है, वर्षा से अन्न होता है और अन्न से जीव उत्पन्न होते हैं जो लोभी होकर यज्ञ करते हैं उन को यज्ञ का फल नहीं होता, न उन को मोक्ष मिलती है इस लिये यज्ञ में पशुओं का मारना श्रेष्ठ नहीं यह वेद की आज्ञा के प्रतिकूल है ॥

जाजली बोला कि हे तुलाधार ! किसी ऋषि मुनि ने बिना बलिदान करने के यज्ञ करना नहीं बताया तुम विचित्र यज्ञ बताते हो गोमेध, अश्वमेध यज्ञ तो ब्राह्मण लोग क्षत्रियों से कराते ही रहे हैं परंतु तुम जो बिना हत्या के यज्ञ बताते हो, ऐसा कभी सुनने में नहीं आया, कृपा पूर्वक यह तो बताओ कि वह यज्ञ क्या है और क्यों ब्राह्मणों ने उस यज्ञ को छुपा रखा है ॥

तुलाधार बोला कि लालची ब्राह्मणों ने अपना स्वार्थ सिद्ध करने के निमित्त ऐसा यज्ञ करना बन्द कर दिया है। यज्ञ में गौ का घी दूध दही होना आवश्यक है जिन से आहुति दी जाती है। वेदोक्तयज्ञ में अन्न को छोड़ कर फल,फूल,वनस्पति, तिल,शक्कर,सुपारी,नारियल, रोटी, तीर्थों का जल होना आवश्यक है गौ की पूंछ पर पितरों का तर्पण करे, सींगो को धोये और पाओं की धूल का तिलक लगावे। इन बातों से पाप दूर होते हैं और स्वर्ग की प्राप्ति होती है ॥

स्त्री के साथ मिल कर यज्ञ करे, उसके बिना कोई यज्ञ नहीं होता यदि स्त्री पास न हो तो यज्ञ की सामग्री प्रस्तुत करके श्रद्धारूप स्त्री को अपने पास बिठाकर यज्ञ करे और सर्वव्या-

एक विष्णु भगवान का पूजन करके हवन करे, पशुओं का वध करना त्याज्य है, अपना जीव जो चंचल है, उसी का वध करना उत्तम है, अर्थात् इन्द्रियों को वश में करना, सत्य रूप नदी में स्नान करना, आत्मा रूप तीर्थ पर ऐसा यज्ञ करने से स्वर्ग प्राप्त होता है। सामर्थ के अनुसार जो यज्ञ किया जावे, वही फल का दाता है। यज्ञ करने से फल की अभिलाषा करना निरर्थक है क्योंकि यज्ञ करने से फल अवश्य मिले होगा॥

तुलाधार की इस प्रकार की बातों से जाजली का मन पवित्र हो गया, दोनो कुच्छ दिन रह कर स्वर्ग को चले गये॥

सातवां अध्याय

—:०:—

इन्द्र और आहल्या का संवाद॥

युधिष्ठर ने पूछा कि हे पितामह! सोच समझ कर काम करना बुद्धि मानो का काम है परंतू कई काम ऐसे होते हैं कि उन में देरी करना हानि कारक होता है इस लिये किस प्रकार काम करना चाहिये॥

भीष्म जी बोले कि अंगिरा ऋषि के वंश में एक चिरकारी ब्राह्मण हुआ है, वह प्रत्येक कार्य सोच समझ कर करता था, इसी कारण उस का नाम चिरकारी था, गौतम का पुत्र चिरकारी बड़ा समझ दार था और सोच विचार वाला था। वह अपनी

माता की पूर्ण रक्षा कर के पिता का हितकारी बना, जब तक वह किसी कार्य का परिणाम सोच न लेता था, तब तक उसे आरम्भ न करता था, लोग उस को आलस्यी और दीर्घ सूत्री कहा करते थे और समझते थे कि वह निर्बुद्धि और मूर्ख है ॥

एक दिन इन्द्र गौतम ऋषि के आश्रम पर गये, गौतम की स्त्री अहल्या बड़ी रूपवति और सुन्दर थी, उस को देख कर इन्द्र काम वश होगये, अहल्या बड़ी धर्म युक्त और पतिव्रता स्त्री थी, इन्द्र ने उस के धर्म को दूषित करना कठिन समझा, इस लिये गौतम का रूप धारण कर के आश्रम में गया और अपनी मनो कामना पूर्ण की, गौतम को इन्द्र की कपटता विदित होगई इस लिये उस ने अपने पुत्र चिरकारी को आज्ञा दी [illegible] अहल्या का शिर तुरन्त काटा जाय यह कह कर गौतम क्रोध में भरा हुआ वनों को चला गया ॥

चिरकारी विचारा अत्यन्त दुःखित था न पिता की आज्ञा को उल्लंघन करना चाहता था, न माँ का मारना ही अपना कर्तव्य समझता था। पिता की आज्ञा मानना भी पुत्र का मुख्य धर्म है, परन्तु स्त्री पर शस्त्र उठाना और तिस पर वार करना भी धर्म के विरुद्ध है। सोचने लगा कि माँ को मारना बड़ा पाप है। यदि बच्चा सौ वर्ष का भी होजाय और माता जीती हो तो वह उस को बच्चा ही कह कर पुकारेगी और उस को बुढ़ापे का कोई दुःख न होगा। व्यभिचारनी स्त्री को मारना धर्म के अनुसार है, परन्तु मेरी माँ व्यभिचारनी नहीं। वह

पतिव्रता और धर्म वाले है, उस का कोई दोष नहीं। यदि इन्द्र ने कपट से उस से कुकर्म किया तो इस में उस का क्या अपराध है। वह मेरे पिता को देवता स्वरू जानती है। इस लिये जो कुछ दण्ड देना चाहिये इन्द्र को देना उचित है क्यों कि उसी ने मेरी माता का धर्म भंग किया है॥

इस प्रकार नंगी तलवार लिये चिरकारी सोच रहा था, कि इतने में गौतम ऋषि को भी पश्चताप लगा कि मैंने यूं ही चिरकारी को अहल्या के मारने की आज्ञा दी। दौड़ा हुआ घर की ओर आया, देखा तो चिरकारी नंगी तलवार लिये माता के सिरहाने खड़ा है और अहल्या शिर नीचा किये रो रही है। झट गौतम ने तलवार हाथ से खींचली और चिरकारी का धन्यवाद किया कि उस के सोच विचार के स्वभाव से अहल्या की जान बच गई और गौतम को निरापराध पतिव्रता स्त्री की मृत्यु का दुःख न उठाना पड़ा॥

आठवां अध्याय

—:०:—

कपिल देव और तोमस्मी ऋषि के प्रश्नोतर अहिंसा रहित यज्ञ का महत्व॥

भीष्मजी बोले कि स्वामी में छः बातें होना अवश्य हैं। ऐश्वर्य, ज्ञान, यश, लक्ष्मी, वैराग्य और धर्म। भागवान वही है जो जीवों का पालन करता है और नाश करता है गृहस्थ

और योग धर्म दोनों कठिन हैं, प्राचीन काल में राजा नहुष हुआ है, उसने यज्ञ में एक गौ बलिदान करना चाहा था, जब कपिल देव को यह पता लगा तो वह लोमरश्मि ऋषि के पास गये और सब वृत्तान्त उसको सुनाया ॥

यह सुन कर लोमरश्मि गौ के शरीर में प्रवेश कर गये और कपिल देव को कहने लगे कि महा शोक है कि लोग वेदों की आज्ञा के विरुद्ध आचरण करने लगे हैं, जो २ बातें वेदों ने निन्दित बताई हैं लोग वही करते हैं, ऋषियों और मुनियों के समय में गौ का वध होना कितने शोक की बात है शोक महा शोक है विद्वानों के वचन को भगवान की वाणी समझ कर भी लोग उस पर नहीं चलते, लोग ईश्वर की आज्ञा नहीं मानते ॥

कपिल जी बोले कि वेदों की निन्दा नहीं करनी चाहिये, मैं धर्म के विरुद्ध कुछ भी करना ठीक नहीं समझता सन्यास, वानप्रस्थ, ब्रह्मचर्य और गृहस्थ भी धर्म हैं, सन्यास से मोक्ष, वानप्रस्थ से ब्रह्मलोक, ब्रह्मचर्य से ऋषि लोक और गृहस्थ से स्वर्ग मिलता है, वेदों की आज्ञा है कि सारे आश्रम अपने २ धर्मों पर चलें ॥

लोमरश्मि बोले कि स्वर्ग की इच्छा करने वाले यज्ञ करते हैं, यज्ञ करने में फल की अभिलाषा करना उचित नहीं जो मनुष्य बिना कामना के यज्ञ करता है वह हिंसा करना उचित नहीं समझता, यज्ञ करने वाला किसी से शत्रुता नहीं रखता सब जगत् से मित्रता करता है, जो अमृत पान की इच्छा से

यज्ञ करता है, वह अवश्य स्वर्ग में जाता है, यज्ञ न करने वाले को न इसलोक में सुख है और न परलोक में ॥

कपिल जी बोले कि वेद के जानने वाले गाय से दूध, दही, घी लेकर यज्ञ करते हैं क्या वह बुद्धिमान नहीं होते, हत्या करना उनके धर्म के विपरीत है, किसी ऋषि मुनि ने गौ का मारना धर्म युक्त नहीं माना, संसारी लोगों की माता गाय है इस लिये ज्ञानी लोग गो का वध उचित नहीं समझते ॥

चौथा भाग

जीव की ब्रह्म को प्राप्ति

पहिला अध्याय

—:0:—

वृत्तासुर का इतिहास। विष्णुजी का महात्म्य इन्द्र और वृत्तासुर का संग्राम। ब्रह्महत्या का दोष और उस से छुटकारा ॥

युधिष्ठिर ने पूछा कि हे पितामह! महाभारत के युद्ध में भारत वर्ष के बड़े २ शूर वीर मारे गये हमारे सब सम्बन्धी मृत्यु

वश हुये मेरे मन से उन का शोच कभी दूर नहीं होता, माता पिता उन के मृतक शरीर मुझ को भूमि पर लौटते दीखते हैं कोई ऐसा उपाय बताओ कि उन के पाप से मेरी मुक्ति हो ॥

भीष्म जी बोले कि हे राजन्! तुम बड़े प्रतापी और धर्मात्मा राजा हो, ऋषियों मुनियों की संगति करते हो, सब काम धर्मानुसार करते हो, तुम को मुक्ति की क्या चिन्ता है हां दुःख सुख सदैव देह के साथ नहीं रहते, तुम बुद्धिमान हो, थोड़े में ही समझ सकते हो, जो जन्मता है वह मरता है उत्पन्न करने वाला और मारने वाला दो नहीं एक ही परमात्मा है फिर तुम्हारा क्या दोष है जगत के काम ब्रह्म का ज्ञान होने नहीं देते परन्तु वह परमात्मा सर्व व्यापक सब जीवों के अंग संग है, जब भ्रम दूर होजाता है तो वह दिखाई देते हैं ॥

तुम्हारे प्रश्न पर वृत्तासुर का इतिहास स्मरण हुआ है। एक समय शुक्र जी वृत्रासुर को कहने लगे कि हे राजन्! तुम क्यों उदास दिखाई देते हो, वृत्रासुर बोले कि तपो बल से मुझ को सब वृत्तान्त प्रतीत है जीवन और मृत्यु साथ है जगत में किसी की स्थिति नहीं, मैं इस तत्व को जानता हूं इसी लिये मुझ को न दुःख है न सुख, न शोक है न हर्ष, पापी लोग नरक में वास करते हैं और पुण्यात्मा स्वर्ग में, मर्यादा को छोड़ने वाले भी आवागमन में फंस कर पशु पक्षी की योनियों में वास करते हैं, मैं ईश्वर का भक्त हूं, उसी की कृपा से मुझ में यह शक्ति है कि मैं आज देवताओं के राजा इन्द्र को विजय करके इन्द्र पुरी में राज्य कर रहा हूं ॥

यह सुन कर शुक्र जी आश्चर्य करने लगे और फिर वृत्रासुर से पूछने लगे कि हे राजन्! आप धर्म अर्थ की सब बातें करते हैं। परन्तु आप का शरीर तामसी है। यह बहुत आश्चर्य है। वृत्रासुर ने उत्तर दिया कि हे महाराज! किसी समय मैंने बहुत तप किया था जिस के समक्ष में देवताओं और ऋषियों मुनियों की भक्ति भी कुछ न दिखाई देती थी। तीनों लोकों में मेरे तप की महिमा होने लगी और सब देवता और ऋषि मुनि मेरे वश में आगये। शनैः २ मेरे तप का बल नष्ट हुआ मैं अपने मन को समझाता रहा कि धन का घमण्ड करना ठीक नहीं, तब मुझे स्वर्ग की कामना हुई और युद्ध का विचार हुआ क्योंकि इसी उपाय से स्वर्ग प्राप्ति हो सक्ती है। इसी के कारण आज श्री विष्णु जी के दर्शन भी हुये, अब मेरा प्रश्न है कि ब्रह्म प्राप्ति के कौनसे उपाय हैं, ज्ञान अथवा अज्ञान अज्ञानी होकर मैंने विष्णु भगवान के दर्शन किये, यदि ज्ञानी होता तो इतनी शीघ्रता से नारायण भगवान कभी दर्शन न देते ॥

शुक्र जी और वृत्रासुर महाराज बातें कर रहे थे कि इतने में सनत्कुमार जी कहीं से आनिकले। दोनों ने प्रतिष्ठा पूर्वक आदर किया और विनती की कि हम को विष्णु भगवान का रहस्य सुनाइये। सनत्कुमार जी ने नारायण का महात्म्य वर्णन किया और कहा कि हे वृत्रासुर महाराज! आपके अज्ञानी होकर नारायण के दर्शन करने में पूर्व जन्म के संस्कार कारण हैं तपोबल ने आप को यह दर्शन कराये हैं परन्तु मुक्ति तभी होगी जब ज्ञान होगा ॥

युधिष्ठर ने पूछा कि हे पितामह ! ऐसा धर्मात्मा राजा वृत्रासुर इन्द्र के वज्र से कैसे मारा गया ? भीष्म जी बोले कि एक समय इन्द्र देवताओं के साथ इन्द्र भ्रमन कर रहे थे कि एक स्थान पर वृत्रासुर को खड़ा पाया, देवता उसकी भयंकर आकृति को देख कर भयभीत हुये और शस्त्र प्रहार करने लगे परन्तु वृत्रासुर ने सब देवताओं को मार कर भगा दिया। इन्द्र भी मारे भय के कांपने लगा। इतने में वसिष्ठ जी आये और कहने लगे कि हे इन्द्र ! मत डरो, शिवजी और विष्णु तुम्हारी सहायता को आते हैं। तब इन्द्र को कुच्छ उत्साह हुआ, विष्णुजी ने इन्द्र के वज्र में प्रवेश किया, बृहस्पति ने इन्द्र की स्तुति की, देवताओं ने सिंह नाद किये, दैव योग से वृत्रासुर ने जामाई ली, उस समय इन्द्र ने वज्र मारा, वृत्रासुर पृथ्वी पर गिरा और गिरते ही मर गया॥

उसी समय वृत्रासुर के मूंह से अग्नि निकली जो स्त्री रूप होकर इन्द्र के पीछे भागी उस का आकार बड़ा विकाल और रूप बड़ा डरावना था लम्बे २ बाल थे और परियों की माला पहिने हूये थी, इन्द्र डर कर भागा और स्वर्ग में जा छिपा ब्रह्महत्या भी वहां पहुंच गई ब्रह्मा जी ने देखा कि इन्द्र ग्रस्त हूये ब्रह्महत्या को कहने लगे कि हे देवी इन्द्र को छोड़ दो और जो आप की इच्छा हो पूरी की जायेगी॥

ब्रह्महत्या बोली कि आप के सुन्दर वचन से मेरा क्रोध जाता रहा मैं स्थान चाहती हूं इस लिये इन्द्र को छोड़ दूंगी। ब्रह्मा जी कुच्छ काल सोचते रहे फिर अग्नि को कहने लगे कि हे अग्नि ! ब्रह्महत्या चार भागों में विभक्त होगी चौथा भाग तुम को

दिया जायगा, अग्नि हाथ जोड़ कर बोली कि हे स्रष्टा ! फिर मेरी मोक्ष कैसे होगी ? ब्रह्मा जी बोले कि मत घबराओ जो लोग पकाकर अग्नि में आहूती न देंगे उन को ब्रह्महत्या बाधा करेगी फिर ब्रह्मा जी ने वनस्पतियों को बुलाया और कहा कि चौथा भाग ब्रह्महत्या का तुम लो, उन्हों ने स्वीकार किया परंतु पूछा कि हमारी मोक्ष कैसे होगी ? शीत उष्णता को सहती हैं यही हमारा तप है, ब्रह्मा जी बोले कि जो मनुष्य फले फूले वृक्ष को काटेगा वही ब्रह्महत्या का भागी होगा, तुम्हारी मोक्ष होगी ॥

फिर स्त्रीयों को बुलाता परन्तु उन्हों ने भी मोक्ष का प्रश्न किया । ब्रह्मा जी बोले कि जो ऋतु के समय स्त्री गमन करेगा वह ब्रह्म हत्या का भागी होगा, फिर जल को बुलाया और कहा कि जो मनुष्य नदी, तालाब और कुएं के पानी को गन्दला करेगा और उस में थूक और मल मूत्र छोड़ेगा वह ब्रह्महत्या का भागी होगा इस प्रकार वर पाकर अग्नि वनस्पति अपसरायें और जल अपने २ स्थानों को गये और इन्द्र अपने इन्द्रासन पर वर्तमान हुये उन्हों ने भी अश्वमेध यज्ञ करके ब्रह्महत्या से मुक्ति पाई ॥

भीष्मजी बोले कि हे युधिष्ठर ! तुम भी अश्वमेध यज्ञ करो उस हत्या का पाप जो तुम ने किया है दूर होगा ॥

दूसरा अध्याय

—:o:—

शुक्राचार्य का देवताओं से विरोध और दैत्यों

से हित का कारण ॥

युधिष्ठर ने पूछा कि हे पितामह! क्या कारण है कि शुक्राचार्य जी इतने बड़े विद्वान होकर भी दैत्यों से प्रेम और देवताओं से विरोध करते रहे ॥

भीष्म जी बोले कि हे पाण्डु पुत्र! राक्षस लोग देवताओं को पीड़ा देकर महर्षि भृगु जी की स्त्री के स्थान पर छुप जाया करते थे, देवता लोग वहां शाप के भय से नहीं जासकते थे, अन्त को देवताओं ने विष्णु जी से प्रार्थना की, विष्णु जी ने भृगु जी की स्त्री का शिर चक्र से काट डाला, राक्षस डर कर भृगु जी के पास आये, शुक्र जी उन के पुत्र और अपनी माता की मृत्यु पर बहुत क्रोधित हुये, इसी कारण दैत्यों से मिल गये और देवताओ से विरोध करने लगे, फिर शुक्र जी कुबेर के शरीर में प्रविष्ट होकर कोश का नाश करने लगे ॥

शैनाः २ योग बल से कुबेर जी को यह बात विदित होगई और बड़े यत्न करने पर भी वह कुबेर जी को अपने शरीर से बाहिर निकालने में कामयाब न हुये अन्त को शिवजी के पास गये और सारा वृत्तान्त उन के प्रति निवेदन किया शिवजी ने क्रोध में आकर त्रिशूल उठाया, शिवजी त्रिशूल की नोक पर बैठ गये, शिवजी दंड देना चाहते थे इस लिये शुक्र को पकड़ने लगे, परन्तु शुक्र ने शिवजी की अंगुलियों पर रींगना आरम्भ किया शिवजी झट शुक्र को निगल गये शुक्र जी तपस्वी तो थे ही अंदर ही अंदर इधर उधर फिरने लगे कुछ काल इस अवस्था में व्यतीत हुआ ॥

फिर शुक्र जी ने विचारा कि यहां से निकलने का कोई उपाय किया जाये ऐसा न हो कि शिवजी समाधि में बैठ जायें तो फिर उनके शरीर से निकलना कठिन हो जाय, यह विचार कर अन्दर से ही शुक्र जी ने शिवजी की स्तुति करनी आरम्भ की, शिवजी को दया आई बोले कि हमारे लिंग से निकल जाओ शुक्रजी तुरन्त लिंग से बाहिर निकले, तब से उनका नाम शुक्र पड़ा ।।

बाहर निकलने पर फिर शिवजी को क्रोध आया चाहा कि इसका शिर काट लें, परन्तु पार्वति जी ने कहा कि यह मेरा पुत्र है इस को क्षमा कीजिये, पार्वति के कहने पर शिवजी का क्रोध शांत हुआ ।।

तीसरा अध्याय

—:o:—

धर्म का महत्व, राजा जनक और सुखदेव का वृत्तान्त ।।

युधिष्ठर ने पूछा कि हे पितामह ! जगत में ऐश्वर्य प्राप्ति के कौन से उपाय हैं ? भीष्मजी बोले कि महा मति पराशर ऋषि ने राजा जनक को कहा है कि इस जगत में धर्म के बिना कुछ नहीं, धर्म से ही मनुष्य को स्वर्ग मिलता है, धर्म ही साथ जाता है, धर्म ही से ईश्वर का प्रेम बढ़ता है । भगवद्भक्ति से पाप दूर हो जाते हैं, ईश्वर किसी के आधीन नहीं, परन्तु भक्त और प्रेम के वश में है ।।

एक समय ब्रह्मा जी हंस रूप धारण करके साधुओं की संगति में चले गये, साधुओं ने उन की पूजा की और प्रार्थना की कि हम को मोक्ष धर्म का उपदेश करें, हंस रूप ब्रह्मा ने मोक्ष धर्म को विस्तार पूर्वक वर्णन किया और बताया कि मोक्ष का साधन तप है, तप से ज्ञान उत्पन्न होता है और ज्ञान के प्रकाश होते ही बाह्य और अन्तरीय इन्द्रियें वश में हो जाती हैं ॥

हे पांडव नन्दन ! मिथिला नगर का एक राजा बड़ा योगी हुआ है तुम उसी की भांति परमात्मा में मन लगा कर संसार को मिथ्या समझो । वेदपाठी मनुष्य जगत के धन्दों से पीड़ित नहीं होता । वह संसार को मिथ्या समझता है । जनक ने सैकड़ों वर्ष याज्ञवल्क ऋषि की सेवा की और फिर ज्ञानी हुआ और विदेह कहलाया । हे राजन ! ब्रह्मज्ञान से बढ़ कर कोई पदार्थ नहीं । सुखदेवजी भी ब्रह्मज्ञानी हुये हैं, उत्पन्न होते ही उन्हों ने वेद पढ़ना आरंभ किया फिर जप तप करने लगे फिर अपने पिता के वचन से राजा जनक के पास ब्रह्मज्ञान और मोक्ष धर्म सुनने के लिये मिथिला नगर में पहुंचे । ब्रह्म विद्या सीखकर अपने पिता के पास आये, उन्हों ने भी मोक्ष धर्म पर बहुत से पराचीन इतिहास सुनाये और कहा कि ज्ञानी पुरुष वही हैं जो श्रद्धा से कर्म धर्म करते हैं । श्रद्ध यज्ञ सब से बढ़ कर है । वेदों का वचन है कि जो कुच्छ श्रद्धा से हो सके करें । किसी के अवगुण को देखना पाप है सुख देव जी में इतनी श्रद्धा थी कि जन्म लेते ही योगी हुये ॥

चौथा अध्याय

—:०:—

सुखदेव जी का तप, नारद और सुखदेव जी का संवाद, सुखदेव जी का स्वर्गारोहन, व्यास जी का शोक और शिवजी का समझान ॥

राजा जनक से ब्रह्म विद्या सीख कर सुखदेव जी पिता के पास आये । व्यास जी उस समय सुमेर पर्वत पर शिवजी के आश्रम में समाधिस्थ थे सुखदेव पिता के पास बैठ गये । जब व्यास जी समाधि से उठे तो अपने पुत्र को देख कर बड़े प्रसन्न हुये । सुखदेव ने सब वृत्तान्त पिता जी को सुनाया ॥

एक दिन नारद जी व्यास जी के दर्शन को आये और कहने लगे कि यह पर्वत वेद मन्त्रों के उच्चारण न होने के कारण सुनसान दिखाई देता है । व्यास जी बोले कि मैं अकेला हूं कोई शिष्य मेरे पास नहीं, अच्छा मैं आप को वेद मन्त्र सुनाऊंगा व्यास जी और सुखदेव जी ईश्वर के ध्यान में मग्न हो, कर वेद मन्त्र पढ़ने लगे । यूहीं उन्हों ने ओ३म" का शब्द उच्चारण किया, तो सारा पर्वत गूंजने लगा, प्रचण्ड वायु चलने लगी यहां तक कि वेद मन्त्रों का पढ़ना कठिन हो गया ॥

सुखदेव जी ने पूछा कि वायु क्या पदार्थ है ? व्यास जी

ने उत्तर दिया कि आकाश पर दो मार्ग हैं, एक पप दवडी वैकुंठ तक गई है, दूसरी नरक को जाती है। वैकुण्ठ का मार्ग राजस है और नरक मार्ग का नाम तामस है। इन्हीं दोनों मार्गों से वायु आता जाता है। यह वायु देवताओं के आने जाने से उत्पन्न होती है। इस का नाम समान है। समान से उदान उदान से व्यान और व्यान से अपान वायु उत्पन्न होता है। उस से प्राण वयु उत्पन्न होता है। इन्ही पांच प्रकार के वायुओं से मनुष्यों और अन्य जीव धारियों का जीवन होता है। प्राण सब से उत्तम है जो शरीर धारियों के देह और जीव की पालना करता है। इसी से सूर्य का तेज अग्नि की ज्वाला और वर्षा ऋतु में बिजली की चमक होती है यही उष्णता से मिल कर बादलों को इकट्ठा करती है, जल बरसाती है उष्ण काल में पानी वाष्प उत्पन्न करके बादल बनाती है। उदान वायु से तारा गण और चन्द्रमा प्रकाश पाते हैं। समुद्र से वाष्प उठते हैं यही वाष्प आकाश में जा कर बादल बन जाते हैं। उदान वायु वाष्पों को आकाश में लेजाती है और जीमूत वायु को सौंप कर वापिस आ जाती है जीमूत से पानी वर्षता है। अपान वायु सदैव भूखी रहती है इस में इतना बल है कि यह बादलों को तितर बितर कर देती है और पर्वतों को फोड़ सकती है॥

पांचवीं वायु का नाम प्राण है, गंगा जी इसी के आश्रय में आकाश में चलती है, चन्द्रमा और सूर्य इसी से प्रकाश पाते हैं जब तुम इस को पहिचान लोगे, धनवान होजाओ

गे, योगीश्वर और मुनीश्वर इसी वायु को पाकर ब्रह्म को प्राप्त होते हैं इस समय जो वायु चली है यह विष्णु भगवान के श्वास से निकली है, इस समय वेद पढ़ना उचित नहीं जब वायु थम गई तो व्यास जी ने कहा कि अब वेद मन्त्र पढ़ो और आ आकाश गंगा को चले गये, शुकदेव जी ने वेद मन्त्र पढ़ना आरम्भ किया, नारद जी उस की मधुर वाणी से अत्यन्त प्रसन्न हुये और कहने लगे कि मुझ से वर मांगो। शुकदेव जी बोले कि जिस में जीवों का उपकार हो वह बात बताईये ॥

तब नारद ने मोक्ष धर्म का वर्णन किया और बताया कि बुद्धि ज्ञान का साधन है ज्ञान से सत्व के विकार जाते रहते हैं मूर्खता दूर होती है वाह्याभ्यन्तरीय इन्द्रियों पर अधिकार होजाता है, जब मन शुद्ध होगया तो फिर परमात्मा का प्रकाश होता है ज्ञान के समान कोई पदार्थ नहीं सत्य के समान कोई तप नहीं लोभ और लालच से जगत की चिन्तायें बढ़ती हैं जो धर्म कर्म पर नियत रहते हैं उन की समानता देवता भी नहीं कर सकते विद्या प्राप्त करो ईश्वर को पहिचानो, विद्या से ज्ञान होता है और ज्ञान से मुक्ति मिल जाती है यह वेद का सिद्धान्त है ॥

नारद जी का उपदेश सुन कर शुकदेव जी पिता के पास आये, व्यास जी बड़े प्रसन्न हुये। शुकदेव बोले कि मेरा मन जगत के धन्दों में फंसना नहीं चाहता। इस लिये मुझे जाने की आज्ञा दीजिये, यह कह कर उठ खड़े हुये और गरुड़

के समान कैलाश पर्वत से उड़े और वैकुण्ठ को चल पड़े। शुकदेव की उड़ान से उस की चोटी दो टुकड़े हो कर गिरी शुकदेव जी वायु में उड़ते हुये चले जाते थे कि मार्ग में ऋषि महर्षि, राक्षस, यक्ष आदि मिले, सब ने पूजा की शुकदेव जी वहां से ऊपर को उड़े, मार्ग में मन्दाकीनी गंगा दिखाई दी, गंगा जी में गन्धर्व और अप्सरायें स्नान कर रही थीं। उन के शरीर बिलकुल नग्न थे परन्तु किसी ने शुकदेव से नग्नत्व ढांपने की चेष्टा न की और आपस में कहने लगी कि देखो यह महायोगी ब्रह्म रूप व्यास जी के पुत्र परम हंस शुक-देव जी हैं। शोक कि ऐसे पुत्र को पिता ने किस प्रकार यहां आने दिया ॥

पुत्र के शोक में व्यास जी भी उड़ते हुये पीछे २ जारहे थे, चोटी के दो टुकड़े देख कर व्यास ने अनुमान किया कि निस्संदेह मेरा पुत्र परम हंस हो गया। तब व्यास जी दूसरे मार्ग से क्षण भर में शुकदेव के पास पहुंचे और पुकार कर कहने लगे कि पुत्र शुकदेव ठहिर मैं भी आता हूं, शुकदेव ने सर्व व्यापक सर्वात्मा और सर्वतो मुख हो कर उत्तर दिया कि हे पिता ! यह शब्द ऐसा प्रबल हुआ कि जल नदी नाले पर्वत ब्यावान सब गूंज उठे यह कह कर शुक-देव जी अन्तर्धान होगये व्यास जी बड़ा शोक करने लगे। मन्दाकिनी में जो अप्सरायें नंगी नहा रही थीं व्यास जी को देख कर झिजकीं, लज्जित होकर अंगों में संकोच करने लगीं किसी ने जल से शरीर ढांका, कोई तड़प कर बाहिर निकली

और वृक्षों की आड़ में छिप गईं, किसी ने झपट कर किनारे से वस्त्र उठाये और पहिन कर सामने खड़ी होगई ॥

व्यास जी इस बात से तो प्रसन्न हुये कि शुकदेव जी ऐसे प'म हंस थे कि इन अप्सराओं ने भी उनका कुच्छ विचार न किया और यथा पूर्वक नंगी नहाती रहीं, परन्तु वृद्ध अवस्था में भी मुझ से शंका की गई, मेरी तपस्या और तप पर यह कहके व्यासजी बहुत लज्जित हुये और उन की आंखों से अश्रु प्रवाह जारी हुआ ॥

इतने में गन्धर्वों के साथ शिवजी आये और समझाने लगे कि तुम ज्ञानी होकर मोह करते हो, तुम्हारे तप के कारण तुम को यह पुत्र दिया था, जिसकी कोई समानता नहीं कर सक्ता, इसने वह गति पाई है जो देवताओं को भी नहीं मिल सक्ती, जब तक सूर्य और चन्द्रमा है तुम्हारे पुत्र का नाम सूर्य के समान प्रकाशत रहेगा, छाया के समान इसका प्रकाश देखा करोगे ॥

हे युधिष्ठर ! शिवजी के वचनों से व्यास जी को कुच्छ आनंद आया और अपने पुत्र की छाया देख कर बहुत आनंदित हुये, हे युधिष्ठर ! यह व्यासजी का अपने मुख से सुनाया हुआ अपने पुत्र का वृत्तांत है ॥

पांचवां अध्याय

—:o—

नारद जी और विष्णु भगवान का संवाद ॥

युधिष्ठर ने पूछा कि हे पितामह ! गृहस्थी, वानप्रस्थी

सन्यासी और ब्रह्मचारियों का किसकी पूजा करनी चाहिये कि वह आवागमन से छूट जाये। भीष्म जी बोले कि हे कुन्ति नन्दन! स्वायम्भुवमन्तर के सत्युग में ब्रह्मस्वरूप नारायणजी नर नारायण, हरिकृष्णचारों नाम से प्रकट हुये। नारदजी नर नारायण के दर्शनों के लिये बदरिकाश्रम में पहुंचे, परन्तु उनके दर्शन न होने से उदास हो गये, सन्ध्या का समय निकट आगया, और सन्ध्योपासन के समय नारायण जी का दर्शन हो गया, नारद जी ने स्तुति की और पूछा कि हे भगवान! आप यहां किसका तप करते हैं॥

श्री भगवान बोले कि हे नारद! हम उसी अविनाशी पूर्ण ब्रह्म परमात्मा की उपासना करते हैं जो तीनों गुणों से रहित है जो निरंकार ज्योति स्वरूप माना गया है वही सब जीवों का उत्पन्न करने वाला है, वेद उस की वाणी है शास्त्र उस के नियम हैं जो ध्यान में आना कठिन है, हे नारद हम उसी की उपासना में मग्न रहिते हैं, भक्ति और प्रेम के कारण हम ने यह उपदेश तुम को दिया और तुम ने भी बड़ी भक्ति से उस उपदेश को सुना॥

फिर नारद जी बोले कि हे भगवान! मैने गुरू पूजन किया किसी के भेद को कभी प्रकट नहीं किया, वेद भी पढ़े, तप भी किया, शत्रु और मित्र दोनों मेरे समान हैं, मैं सदैव नारायण का भजन गाकर मग्न रहता हूं, इस लिये मेरी इच्छा है कि मैं आप की श्वेत द्वीप वाली मूर्ति का दर्शन करूं॥

नारायण ऋषि बोले कि हे महर्षि ब्राह्मण! प्रत्येक

मनुष्य उस मूर्ति को देख नहीं सकता परन्तु आप बड़े आनन्द पूर्वक जावें आप को दर्शन होंगे, नारद जी नर नारायण का पूजन करके बदरिकाश्रम से उड़े और मेरू पर्वत पर जो दक्षिण को स्थित है जा पहुंचे. वहां कुच्छ काल विश्राम किया और फिर पश्चिम कोण को मुंह करके उड़े और श्वेत द्वीप में प्रविष्ट हुये ॥

विद्वान लोग कहते हैं कि यह द्वीप मेरू पर्वत से ३२ सहस्र योजन ऊंचा है, वहां के लोग परमात्मा के ध्यान में रहने वाले हैं इन्द्रियों को वश में रखते हैं, सात्विकी, प्रियवादी, पाप और अधर्म से सर्वथा अनभिज्ञ, धर्म कर्म और ईश्वर उपासना के बिना कोई काम नहीं करते, पापी उन को देख नहीं सकते बड़े बलवान और बुद्धिमान, शरीर पर बड़े २ लोम, परीश्रमी, पराक्रमी और शूर वीर होते हैं, मृत्यु भी उन से भय खाती है, वह अमर और अजर हैं न कोई देवी जानते हैं, न देवता, केवल पूर्ण ब्रह्म परमात्मा का ही सहारा रखते हैं और उस ही की पूजा करते हैं ॥

जब नारद जी श्वेत द्वीप में पहुंचे और चन्द्रमा के समान प्रकाशमान जीव दिखाई दिये, तो नारद जी ने बड़ी भक्ति से पूजा की और उन लोगों ने भी नारद की स्तुति की, इस के पश्चात् वसुरूप वाले और भूरूप वाले ईश्वर ने नारद जी को दर्शन दिया और आकाश वाणी से कहा कि तुम यहां से चले जाओ ऐसा न हो कि इन श्वेत द्वीप वासियों के धर्म कर्म में

किसी प्रकार का विघ्न हो। इस समय यह लोग मेरे भजन में विदेह हो रहे हैं जिन को मेरी इच्छा है वह इंद्रियों के वस होकर दोषों से युक्त नहीं होते मेरा प्रकाश सब पदार्थों में देखते हैं जो मेरे साथ मेल चाहते हैं वह अविनाशी निर्गुण की उपासना करते हैं माया मोह से रहित हैं वाह्य और अभ्यंतरीय चक्षू को खुला रखते हैं वह एक ही रूप से मुझे देखते हैं। जीवात्मा और ब्रह्म में कुच्छ भेद नहीं समझते पांचों तत्वों से शरीर बनता है तब ब्रह्म इस में प्रवेश करता है वह दिखाई नहीं देता, परन्तु सब स्थानों में व्यापक है ॥

महा भूतों के विना देह नहीं और विना जीव के देह में श्वास नहीं यह सब चराचर जगत मुझ से ही उत्पन्न हुये और मुझ में ही मिल जावेंगे जो भक्त हैं वह अपने मन को मुझ में ही प्रवेश करके मुक्त पदवी पाते हैं यह तुम्हारा विचार कि मैं सुगम प्रकार से तुम को दर्शन दूं वृथा है मेरा न कोई विशेष रूप है, न रंग, प्रेम का भूखा हूं मैं अपनी इच्छा से निराकार होजाता हूं और साकार होकर भी दर्शन देता हूं मैं जीवों में आत्मा रूप हूं और उन के नाश होने पर नाश नहीं होता, श्वेत द्वीप वासी इन्द्रियों पर वश रखते हैं प्रेम उन में कूट २ कर भरा हुआ है सतो गुण रूप हैं, रजो गुण और तमो गुण उन के निकट नहीं आते॥

हे नारद जी! जहां कहीं धर्म का नाश होता है मैं अवतार धारण करके अधर्म का नाश करता हूं जब पृथ्वी पापीयों के भार को न उठा सकेगी उस समय मैं ही पृथ्वी का भार

करूंगा मैंने वाराह रूप धारण किया था मैंने हरण्य कश्यप को मार कर पृथ्वी का भार हलका किया, मैंने नृसिंह रूप धारण किया, वामन रूप से बलि को छला, मैं त्रेता युग में परशुराम का अवतार धारण करके भृगु कुल की रक्षा करूंगा मैं रामचन्द्र का अवतार लेकर रावण को मारुंगा मैं श्री कृष्ण का अवतार धारण करके कंस शिशुपाल आदि राक्षसों को मारुंगा, द्वारका पुरी बसाऊंगा, नरकासुर और भौमासुर को मार कर धर्मावलम्बियों की रक्षा करुंगा, कौरव पाण्डवों का संग्राम होगा अर्जुन मेरा सहायक बनेगा, युधिष्ठर को राज तिलक मिलेगा, सब कारवों का नाश होगा मैं ही उस में कारण रूप हुंगा इस यूद्ध में बड़े २ राजा एकत्र होंगे, उन का नाश भी मेरी आज्ञा से ही होगा, फिर मैं सब यादवों को परस्पर लड़ा कर अन्तर्धान होजाऊंगा इस प्रकार सारी पृथ्वी पराक्रमी राजाओं और अधर्मी राक्षसों से पवित्र होकर भार को उतारेगी ॥

हे नारद ! मेरे बहुत से अवतार हो चुके हैं मैं अपना उद्देश पूरा करके फिर ब्रह्म में लीन होजाता हुं हे नारद ! जिस प्रकार मेरे दर्शन आप को हुये ऐसे किसी को भी नहीं हुये मैंने तुम को प्रेम वश जान कर दर्शन दिया है ॥

छटा अध्याय

—०:—

नारद जी का शेष वृत्तान्त और बदरिकाश्रम में तप ॥

भीष्मजी बोले कि नारदजी विष्णु भगवान का इतिहास सुन कर अत्यन्त प्रसन्न हुये, वहां से बदरिकाश्रम में आकर चारों संजुगत पांच रात्र नाम महा उपनिषद् बनाया। फिर नारायण जी से जो कुच्छ सुना था और शास्त्रों में जो कुच्छ लिखा था, उसके अनुसार जगत् में भ्रमन करके संसार में उपदेश करते रहे और लोगों को अपने उपदेश से कृतार्थ किया॥

नारदजी उस परमात्मा अविनाशी के दर्शन करके मेरु पर्वत की गन्धमादन पहाड़ी पर पहुंचे और नर नारायण के दर्शन से अपना जन्म सुफल किया। नर नारायण ऋषियों का वेश किये हुये थे नारदजी ने सोचा कि यह मनोहर मूर्ति उन्हीं की है जिन के दर्शन श्वेत द्वीप में हुये थे यह सुन उन्हों ने नर नारायण की प्रदक्षिणा की और आसन बिछा कर सामने बैठ गये। फिर प्रार्थि की। नर नारायण जी बोले कि हे नारद! तुम धन्य हो जो श्वेत द्वीप में जाकर परमात्मा के दर्शन कर आये। नारदजी ने उत्तर दिया कि वास्तव में वह विश्वरूपधारी अविनाशी हैं। उसी के दर्शन मिल गये अब मैं आप के दर्शनों से जीवन सफल करके विश्वरूप परमात्मा का ध्यान करता हूं। जो गुण उस ब्रह्मरूप में देखे गये हैं, वह सब आप में हैं। आप के समान तीनों लोकों में कोई देवता नहीं, श्वेत द्वीप को देखा है। उसकी प्रशंसा क्या की जाये। ऐसा मनोहर स्थान, जहां न सूर्य ही निकलता है। न चन्द्रमा ही निकलते हैं। वहां के मनुष्यों का क्या वर्णन करूं, उनके तप से वायु भी थकित है, वह भी

चलती हुई दिखाई नहीं देती, वह जगत् का स्वामी आठ अंगल वेदी बना कर पूर्व की ओर मुख किये हुये एक चरण से खड़ा हुआ दिखाई दिया, शिवजी, ब्रह्मा, इन्द्र, वरुण कुंवर, किन्नर, गन्धर्व, राक्षस और अप्सरा, आदिक उसके पास हाथ जोड़े खड़े थे, वेदों की गाथा सुनी जा रही थी उसी की आज्ञा से आज मेरा आना बदरिकाश्रम में हुआ आप की सेवा में मैं आकर तप करूंगा, उसी के ध्यान में आनन्द करूंगा, नर नारायणजी नारद की बातों से प्रसन्न होकर बोले कि हे महात्मन्! तुम कृपा के योग्य हो, तुम्ही को इस स्वरूप का दर्शन हुआ, जिस के दर्शन ब्रह्माजी को भी नहीं हो सके हे देवर्षि! हम दोनों नर और नारायण धर्म देवता के घर जन्म लेकर बदरिकाश्रम में तप करने आये हैं तुम भी इस स्थान में तप करो॥

तब नारद जी ने नर नारायण की बातें सुनकर उसी स्थान में तप आरंभ किया और सहस्र दिव्य वर्षों तक बड़ा भारी तप किया और नरनारायण के दर्शन करते रहे॥

एक दिन देवर्षि नारद देवताओं की पूजा करके पितरों का सेवन कर रहे थे कि नर नारायण जी ने पूछा कि हे महात्मन्! पितृ कर्म और देव कर्म करने के पश्चात् फिर आप क्या करते हैं? नारद जी ने उत्तर दिया कि मैं देव कर्म को सब में मूल समझता हूं मैं उसी देवों के देव का पूजन करता हूं जो सब में रम रहा है। हमारे पिता ब्रह्मा जी उसी से उत्पन्न हुये वेद मन्त्रों से पितर पूजा भी करता हूं पितर पूजा के पश्चात्

उसी निर्गुण परमात्मा में मग्न हो जाता हूं जो सब का स्वामी है। भगवान सब का पिता और माता है सब जुगों में इसी की पुजा होती है। दूसरी देवी सरस्वति भी है कि जिस के पुत्रों ने पितरों की पूजा की। जब वेद की श्रुतियां जाती रही तब लड़कों ने बाप को पढ़ाया, भगवान पुत्र वही है जो माता पिता के नाम पितर कार्य करके ब्राह्मणों को भोजन कराये। देवताओं से तुम को विदित होगा कि पुत्रों ने पितरों के नाम पिंड कराये, पहिले भूमि पर कुशा बिछाई इस पर मंत्रों से पितरों का आवाहन किया और पिता पितामह और प्रपितामह नाम का स्मरण करके पिंड दान किया॥

पूर्व में उन पितरों ने पिंडों का भोजन किया, नर नारायण जी कहने लगे कि जब वाराह अवतार हुआ था, रसातल से पृथ्वी निकाल कर ऊपर लाये, दो पहिर का समय था कि वाराह जी ने अपनी डाढ़ से तीन पिण्ड निकाले, कुशा का आसन बिछाया, उस पर पिण्डों को रखा और अपने आत्मा का आवाहन करके उस पर पिंडों का संकल्प किया अपने शरीर से घी और तिल निकाले, पिंडों पर छिड़क दक्षिण मुख बैठ कर पिंड दान किया और कहा कि जगत के हित के लिये मेरा अवतार हुआ है॥

मेरे ध्यान से पितर कार्य सिद्ध होंगे पिण्ड छक से निकले हैं, दक्षिण की ओर कुशा आसन पर रखे हैं, इस लिये अब यह पितर हैं। उन का कोई आकार नहीं, परन्तु उन के आत्मा मुझ में लीन हो चुके हैं। यह तीनों पिण्ड

पिता, पितामह और प्रपितामह नाम से विख्यात हो चुके हैं इस लिये यह पिण्ड पितरों को पहुंच गये। पितरों की पूजा मेरी ही पूजा है, मेरी पूजा सब से बढ़ कर है मुझ से बढ़ कर और कोई पूजा के योग्य नहीं ॥

तीनों लोकों में मेरा पिता कोई नहीं, मैं ही सब का पिता हूं और सब का पिता हूं। धर्ता मैं ही हूं। यज्ञ रूप भी मेरा ही है, यह कह कर वह वाराह रूप भगवान अपनी आत्मा का दान कर के अन्तर्ध्यान हो गये ॥

सातवां अध्याय

—:०:—

जनमेजय का अश्वमेध यज्ञ और नारायण के हयग्रीव रूप धारन करने का कारण ॥

नारायण जी की आज्ञा पाकर नारद ऋषि एक सहस्र वर्ष तक बद्रिकाश्रम में तप करते रहे, इस के पश्चात् हिमालय पर्वत पर अपने आश्रम को पधारे ॥

भीष्म जी बोले कि हे पाण्डु पुत्र ! वह कौन से मनुष्य हैं जो परमात्मा से विमुख रह कर अपना कल्याण नहीं चाहते ऐसे लोगों के पितर सहस्रों वर्ष तक नरक में वास करते हैं। युद्ध के समय भगवान कृष्ण अर्जुन को उपदेश कर चुके हैं मैंने उस उपदेश का केवल अंशमात्र ही वर्णन किया है। हे राजन् ! कृष्ण द्वैपायन व्यास जी महाराज, विष्णु भगवान का

अवतार हैं ? उन के अतिरिक्त किस को समर्थ थो कि वेदों का भाग अंगों समेत करता और अठारह पुराण और स्मृतियें बनाता ॥

यह कह कर वैशम्पायन जी जन्मेजय से बोले कि तुम्हारा मनोरथ अश्वमेध यज्ञ करने का सफल हो। राजा जन्मेजय यह इतिहास सुन कर अपने भाग की बड़ाई करने लगे और अश्वमेध यज्ञ वेद रीति से पूर्ण किया ॥

शौनक जी ने सूत जी से पूछा कि हे महात्मन्! विष्णु भगवान ने हयग्रीव रूप किस कारण धारण किया, सूत जी ने उत्तर दिया कि हे ऋषियो! ब्रह्माण्ड में जितने जीव हैं सब परमात्मा के आधीन हैं, उन के शरीर पांच भूतों से बने हैं। विष्णु भगवान सब जीवों का आत्मा है। अपनी इच्छा से उन्हों ने कमठ आदि शरीरों को धारण किया ॥

जिस समय सृष्टि की उत्पत्ति हो रही थी, दो बिन्द जल से मधुर आम की भांति आकाश से टपके, एक बिन्दु से तो मधु और दूसरे से कैटभ दानव उत्पन्न हुये यह दोनों राक्षस रजोगण और तमोगुण रूप थे। ब्रह्मा जी तप कर रहे थे और यह दोनों मूंह खोल कर ब्रह्मा जी की ओर दौड़े ब्रह्मा जी वेद मन्त्र पढ़ रहे थे दोनों दानवों ने वेदों को पकड़ लिया और समुद्र में वेद के न होने से ब्रह्मा जी पर मूर्छा आगई, जब प्रज्ञा हुई तो नारायण की स्तुति करने लगे, और कहने लगे कि हे नारायण! किस प्रकार वेद की फिर प्राप्ति हो वेदों के न होने से मैं शक्ति हीन हूं, अब सृष्टि

रखने के असमर्थ हूं और न मुझ कोई उपाय स्मरण होता है, हे नारायण आप ही मेरी सहायता कीजिये ॥

कोई उपाय ऐसा करें कि वेद फिर मिल जावें। हे परमात्मन् हे हरे ! हे जगत के ईश्वर ! आप को नमस्कार है। हे विश्व रूप ! सब जीवों के आत्मा नारायण लोकों को अपनी शक्ति द्वारा उत्पन्न करने वाले, बारम्बार आप को प्रणाम है ॥

आप ही के कारण मेरा नाम पद्मज हुआ, आप तीनों गुणों से पृथक है। सब सृष्टि ने आप के ही कारण उत्पत्ति पाई आप ही के क्रोध में सब भस्म हो जाते हैं ॥

हे कमल नेत्र जगदात्मन प्रभु ! आप का प्रथम पुत्र सतो गुण रूप मैं ही हुं, वेद न होने से मेरी आखें जाती रही हुं सब संसार अन्धकार रुप दिखाई देता है आप मेरे सेव्य हैं और मैं आप का सेवक हुं ॥

ब्रह्मा जी की स्तुति सुन कर विष्णु भगवान ने एक रूप धारण किया, सारा शरीर तो चंद्रमा की भांति प्रकाशमान था और मुंह घोड़े का था आप बिजली के समान चमके और तुरन्त ही समुद्र में प्रवेश कर गये, उद्गीत देवता उत्पन्न हुये उन के सुरीले राग पर शिवजी का मन भी मोहित होजाता था वह उद्गीत गाता हुआ आगे बढ़ा मधू और कैटभ दोनों गाने की मधुर ध्वनी से ऐसे अचेत हुये कि उन को अपने शरीर की चेतना भी न थी, यहां तक कि वेद उन के हाथ से छूट गये और उन को कुछ विचार न आया कि वह कहां हैं ॥

तब हयग्रीव नारायण ने वेदों को रसातल से उठाया और ब्रह्मा जी को ला दिये इतने में उद्गीत भी लोप हो गया, कुच्छ काल के पश्चात् मधु और कैटभ को चेतना आई देखा तो वेद कहीं नहीं, इधर उधर खोजना करने लगे परन्तु कहीं से कुछ न मिला ॥

अन्त को क्षीर सागर में पुहुंचे देखा कि नारायण जी निद्रा युक्त हो कर शेष नाग पर लेट रहे हैं, दोनों अट्टहास करने लगे और कहने लगे कि यही निद्रालु पुरुष वेद उठा लाया है, यह कौन है ? इस का क्या नाम है ॥

यह कह कर उन्हों ने जगाना चाहा नारायण अंतर्यामी थे ताड़ गये कि यह दोनों युद्ध के लिये आये हैं ॥

तब नारायण उठे और दोनों राक्षसों से युद्ध करने लगे मधु और कैटभ ने नारायण के मारने में कोई चेष्टा न छोड़ी हत्यारों और पत्थरों से लड़ते रहे परन्तु नारायण जी का क्या बिगाड़ सकते थे। नारायण जी जिस प्रकार बिल्ली चूहों को खिलाती है उसी प्रकार उन दोनों असुरों से खेलते रहे अंत को दोनों को नरक में भेजा ॥

तब ब्रह्मा जी प्रसन्न वदन हो नारायण जी की इच्छा से फिर जड़चेतन लोकों को उत्पन्न करने लगे। हयग्रीव रूप आखों से ओट हो गिय ॥

आठवां अध्याय

—:०:—

शिवजी और ब्रह्मा जी का संवाद ॥

जनमेजय ने प्रश्न किया कि हे ब्राह्मण ! बहुत से पुरुष हैं कि एक ही पुरुष है, यदि बहुत हैं तो कौन उन में उत्तम है और कौन उत्पत्ति स्थान कहा जाता है ॥

वैशम्पायण ने उत्तर दिया कि हे राजन् ! यूं तो बहुत से पुरुष हैं, परन्तु सांख्य दर्शन के अनुसार एक ही पुरुष है जिस प्रकार एक ही बिम्ब से बहुत से प्रति बिम्ब होते हैं, उसी प्रकार उस एक पुरुष से अनेक पुरुष होते हैं। उसी इस पुरी में निवास करने वाले गुणों से परे नारायण को मैं वर्णन करता हूं ॥

हे राजन् ! क्षीर सागर में वैजयन्त नाम एक प्रसिद्ध पर्वत है, वहां ब्रह्मा जी सदैव विराट भवन के समीप वेदान्त गति को विचारते थे। एक दिन देव योग से ब्रह्मा जी के पुत्र शिवजी वहां आपहुंचे, ब्रह्मा जी ने प्रेम पूर्वक उन को उठाया और गले लगाया और कहा कि हे पुत्र मैं आप को देख कर बड़ा प्रसन्न हुआ हूं। कहो आप का तपो बल कैसा है ॥

शिवजी ने उत्तर दिया कि हे भगवन! मेरे तपो बल की सदैव वृद्धि है, सब जगत में कुशल है, चिरकाल हुआ कि मैंने आप का विराट भवन के समीप देखा था, इसी हेतु से मैं यहां आप के दर्शनों को आया हूं। हे तात! यह भवन कैसा है। क्योंकर

यहां क्षुधा पियासा बाधा नहीं करते। क्योंकर देवता गंधर्व और अप्सरायें इस का सेवन करती हैं, आप किस प्रकार इस उत्तम पर्वत को छोड़ कर इस भवन का सेवन करते हैं॥

ब्रह्मा जी ने उत्तर दिया कि मैं इस उत्तम वैजयन्त पर्वत का इसलिये सेवन करता हूं कि यहां मैं एकाग्रमन से विराट रूप पुरुष का ध्यान करता हूं, शिवजी ने पूछा कि हे पिता! आपने सब पुरुषों को उत्पन्न किया वह विराट रूप अकेला पुरुष कौन है जिस की उपासना आप करते है॥

ब्रह्मा जी ने उत्तर दिया कि हे पुत्र! तत्वों से संधान रूप अनेक पुरुष हैं। इन पुरुषों से बढ़ कर एक पुरुष है, उसके अधिष्ठान को मैं तुम से कहता हूं, जिस प्रकार पुरुषों का उत्पत्ति स्थान एक ही है उसी प्रकार ज्ञानी लोग निर्गुण होकर उस विश्व रूप परम सूत्रात्मा सनातन निर्गुण में प्रवेश करते हैं, यद्यपि वह न्यूनता रहित अविनाशी सनातन पुरुष सब स्थानों में वर्तमान है और देखा जाता है वरन वह पुरुष शम दमादि से रहित पुरुषों के दर्शन के अयोग्य है वह विश्वात्मा केवल ज्ञानियों से ही देखने में आता है सब शरीरों में व्यापक है परंतु शरीरों के कर्म में प्रवृत्त नहीं होता, वही सदैव सब का उत्पत्ति स्थान है, निर्गुण रूप है और सब का अन्तरात्मा है, वही नारायण जानने के योग्य है वह कर्म के बन्धनों से सम्बन्ध नहीं रखता मैं उस से उत्पन्न हुआ तुम मुझ से प्रकट हुये॥

नवां अध्याय

—:०:—

युधिष्ठर का सर्वोत्तम आश्रम का नाम पूछना भीष्म जी का नारद और इन्द्र का इतिहास वर्णन करना और महापद्म नाम नगर के ब्राह्मण का इतिहास ॥

युधिष्ठर ने पूछा कि हे पितामह ! सुख से प्राप्त होने वाला श्रेष्ठ आश्रम कौन है ? और ब्रह्मा जी ने जो शिवजी से मोक्ष धर्म बताया है वह कौन है ? भीष्म जी बोले कि वह धर्म जो मोक्ष देने वाला है वह सर्वोत्तम कहा गया है एक समय नारद जी सब लोकों का भ्रमन करते हुये इंद्र लोक में विराजमान हुये इंद्र ने उन की प्रतिष्ठा की और उत्तम आसन पर बिठा कर पूछा कि हे देवर्षि ! कहिये आप सब जगत् में घूमते हैं आप ने कोई अद्भुत बात देखी है ? अनेक अद्भुत बातें प्रति दिन आप के देखने में आती हैं मेरी बड़ी उत्कंठा है कि आप के मुखारबिंद से मैं किसी अद्भुत बात का श्रवण करूं ॥

यह सुन कर नारद जी ने जो इतिहास वर्णन किया वह आप को सुनाता हूं सुनिये गंगा जी के दक्षिण तट पर महा पद्म नाम नगर है वहां पर एक तपस्वी ब्राह्मण रहा करता था जिस के बहुत से धर्मात्मा कुटम्बी थे और वह आप भी सदैव धर्म वृत्ति था, वह अपने बहुत से पुत्रों को देख कर धर्म चर्या

में प्रवृत्त हुआ वह सदैव इस बात की चिंता में था कि किस प्रकार मैं वह कर्म करूं जिस से मेरा बेड़ा पार हो परंतु यद्यपि यह सदैव दुखित और चिंता ग्रस्त रहिता था तथापि उस को कुच्छ निश्चय नहीं होता था ॥

एक सावधान अतिथि जो धर्म कर्म का ज्ञाता था उसके स्थान पर आया। ब्राह्मण ने भक्ति भाव से उसका शिष्टाचार किया और प्रसन्न करके उससे पुछा कि हे ब्राह्मण! आप मेरे मित्र ह। मैं आप से यह पुछना चाहता हूं कि उत्तम मार्ग कौन सा है। मैं गृहस्थ को अपने पुत्र के आधीन करके आप मोक्ष धर्म में प्रविष्ट होना चाहता हूं। आप वेद पाठी और ज्ञानी हैं आप मुझ को सच्चे मार्ग का उपदेश करें ॥

ब्राह्मण बोला कि हे ब्राह्मणेन्द्र! आप सत्य कहते हैं, मैं भी आप के समान इस बात की चिन्ता में हूं कि किस प्रकार मोक्ष की प्राप्ति करूं परन्तु मेरे गुरु ने उपदेश किया है कि गोमती के तीर पर नैमिषारण्य मे नागाह्वय नाम नगर है वहा पर पद्म नाभ नाग नाम से प्रसिद्ध महा भाग धर्मात्मा सर्प रहिता है यदि वह मिल जाये तो आप को यथार्थ धर्म का उपदेश करे यह सुन कर ब्राह्मण महा पद्म नाभ नाग के स्थ न पर गया, सर्प घर पर न था नागनी ने ब्राह्मण का बहुत सत्कार किया और कहा कि हे ब्राह्मण! मेरा पति सूर्य लोक को गया हुआ है दश दिन के पश्चात् आवेगे इस लिये आप तब तक गोमती के तट पर विश्राम कीजिये ॥

ब्राह्मण गोमती के तट पर ठहिरा और तप करने लगा

पद्म नाभ की स्त्री और बच्चों ने बहुतेरा कहा कि वह उन के पास से भोजन खाये परन्तु ब्राह्मण ने स्वीकार न किया। समय पर नाग भी आया और अपनी स्त्री से ब्राह्मण का वृत्तान्त सुन कर तुरन्त उस के पास दौड़ा गिया और कहने लगा कि हे ब्राह्मण! मेरे पास आने में आप को बहुत दुःख हुआ है। जो आज्ञा हो वर्णन कीजिये॥

ब्राह्मण बोला कि हे नाग जी! आप के दर्शनों की बड़ी उत्कंठा थी आप सूर्य लोक को गये हूये थे आप की प्रतीक्षा में इतने दिन वर्षों के समान बीत रहे हैं बहूत अच्छा हूआ आप आगये, सुनने में आया है कि सूर्य भगवान का रथ आप ही चलाते हैं पद्म नाभ बोला हे ब्राह्मण! मैने सूर्य की रश्मियों में अनेक ऋषियों और मुनियों का आश्रम देखा है। जिस प्रकार वृक्षों की शाखाओं पर पक्षि निवास करते हैं उसी प्रकार सूर्य की किरणो मे तपस्वी लोग वास करते हैं सूर्य के प्रकाश और तेज से वायू चलती है वह वेग युक्त वायु सूर्य से निकल कर फिर सूर्य में मिल जाती है॥

सूर्य ही वर्षा का कारण है सब जीव जन्तु सूर्य से वृद्धि पाते हैं वनस्पतियें सुर्य से बढ़ती और फलती फूलती हैं॥

उस प्रज्वलित अग्नि स्थान में पारब्रह्म का निवास है। उसके समान कोई देवता नहीं। सूर्य्य आठ नौ मास में पृथ्वी की सारी दुर्गंध दूर कर देता है और अन्न आदि पका कर सृष्टि को तृप्त करता है॥

हे ब्राह्मण! यदि सूर्य्य न हो तो पृथ्वी के जीव क्षण भर

न जी सकें। यह परमात्मा रूप है। इन्हीं के कृपा से वनस्पति और सर्व औषधियें उत्पन्न होती हैं। प्रजा का उपकार होता है॥

एक अद्भुत बात देखने में आई है। एक दिन दो पहिर के समय सूर्य के बीच में ऐसा प्रकाश दिखाई दिया जिसको चक्षु सहारने के असमर्थ थे जिस प्रकार हवन से ज्वाला उत्पन्न होती है और बिजुली की भांति उड़ कर आंखों को चुन्ध्या देता है वसी प्रकार सूर्य से प्रदीप्त स्फुलिंग निकल कर एक अन्य सूर्य दिखाई दिया। सूर्य ने उस प्रकाश को अपनी किरणों से खेंच लिया। वह प्रकाश किरणों के साथ मिल कर सूर्य देवता में प्रवेश कर गया॥

यह देख कर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ और मैं विचारने लगा कि वास्तविक सूर्य कौन है। वह प्रकाश भी सूर्य रूप ही दिखाई देता था। अन्त को मैंने सूर्य देवता से पुछा कि यह क्या पदार्थ ? है उसने उत्तर दिया कि यह एक ब्राह्मण तपस्वी की आत्मा है जो शिवजी का भक्त था। उसकी आत्मा प्राणान्त होने पर मुझ में प्रवेश कर गई है, मैंने इस बात को बहुत आश्चर्य माना, हे ब्राह्मण! फिर मैंने सूर्य नारायण को दण्डवत की और चला आया॥

हे ब्राह्मण! यदि कुछ पूछना हो तो कहो, मैं उत्तर दूंगा, इस प्रकार की आश्चर्य युक्त बातें बहुधा देखने में आती! ब्राह्मण बोला कि आप के दर्शनों से बड़ा लाभ हुआ, देवताओं के समान आप की बुद्धि पवित्र और निर्मल है तिस पर

भी आप सूर्य के सभासद हो आप के बचनों से मेरा दुःख जाता रहा है, सर्वव्यापक परमेश्वर आप में और मुझ में रम रहे हैं, जो मनुष्य उस में लिव लगाते हैं वह उत्तम पदवी प्राप्त करके मुक्त हो जाते हैं ॥

भीष्मजी बोले कि हे राजन ! वह ब्राह्मण वहां से चल कर च्यवन ऋषि के पास आया और उस की संगती में रह कर ज्ञानी हो कर स्वर्ग को प्राप्त हुआ हे युधिष्ठर ! यह इतिहास मुझ को इन्द्र ने आप देव समाज के बीच में सुनाया था जब कि परशुराम के साथ मेरा युद्ध हुआ था ॥

वैशम्पायण बोले कि हे राजा जन्मेजय ! जो मनुष्य नारायण के भक्त हैं वह जगत् के दुःखों से पीड़ा नहीं पाते, और मर कर परमात्मा में मिल जाते ॥

॥ शान्ति पर्व समाप्तम् ॥

ॐ

महाभारत भाषा

दानधर्म्म व अनुशासन पर्व

प्रथम अध्याय

—:o:—

गौतमी, लुब्धक, मृत्यु और काल का संवाद वर्णन ॥

महाराज युधिष्ठर बोले कि आप ने शोक संताप के दूर करने वाले विषयों का वर्णन किया इन को सुन कर भी मेरे हृदय में शांति नहीं होती, हे पितामह ! आप का शरीर बाणों से घायल देख मेरा हृदय फटता जा रहा है क्योंकि आप की यह दशा मेरे लिये ही हुई है, दुर्योधन मारा गया है, वह अब आप की इस दशा को

नहीं देखता, आप मुझे ऐसा उपदेश दें जिस से मलोक में हम लोग राग द्वेष से रहित हो जायें॥

भीष्म पितामह जी बोले कि हे कुन्ती नंदन! मैं आप को एक प्राचीन इतिहास कहता हूं सुनो, पूर्व काल में गौतमी के पुत्र को बड़े विषधर सर्प ने काटा और वह तत्काल मर गया यह देख एक फंदक उस सांप को फांसी में बांध कर गौतमी के पास लाया और कहने लगा कि इस दुष्ट सर्प ने आप के पुत्र को डसा है, जैसे आप कहें वैसे मैं इस को मारूं॥

गौतमी ने कहा हे अर्जुनक! तुम इस सर्प को छोड़ दो, पूर्व कर्मों के प्रभाव से ही कोई सुखी और कोई दुखी होता है इस के मारने से मेरा पुत्र जी नहीं उठेगा फिर उसे मार कर कौन घोर पाप को प्राप्त करे। लुब्धक बोला कि हे दया युक्त देवी! इस में संदेह नहीं कि पाप ही से मनुष्य पीड़ित होते हैं परन्तु इस पापी ने महा पाप किया है॥

गौतमी बोली कि जो मनुष्य जन्म लेता है वह अवश्य मरता है इस सर्प का मारना उचित नहीं है॥

लुब्धक बोला कि इस परलोक का अविनाशी लाभ है, तुम इस को छोड़ने से उस लाभ को नहीं पा सकती॥

गौतमी ने कहा कि शत्रु के मार देने से या उस को बंधन में डालने से मुझे क्या लाभ है फिर मैं उसे छोड़ क्यों न दूं॥

लुब्धक बोला कि इस के मारने से सहस्रों जीवों की रक्षा

है, धर्म्मज्ञ पुरुष अपराधी को मारते हैं, तू भी इसे मार ॥

गौतमी ने कहा इस के मरने से न तो मेरा पुत्र जी सकता है और न ही मुझे कुछ पुण्य मिल सकता है, इस लिये तू इसे छोड़ दे ॥

लुब्धक ने कहा कि हे गौतमी ! इन्द्र ने दैत्यों को मारा, शिव जी ने दक्ष का यज्ञ विध्वंस कर अपना भाग पाया फिर आप इसे क्यों नहीं मारते ॥

भीष्म जी बोले कि इस प्रकार अनेक प्रकार से समझाने पर भी गौतमी ने न माना, तब सर्प ने धीमी सी आवाज़ से कहा कि मैंने इस बालक को मृत्यु के कथन से डसा था इस में मेरा कोई अपराध नहीं ॥

लुब्धक बोला कि तुम भी कारण हो इस लिये तुम भी अपराधी हो ॥

सर्प ने उत्तर दिया कि जैसे दंड चक्रादि अपने स्वाधीन नहीं वैसे ही मैं भी हूं इस लिये मेरा कोई अपराध नहीं अपराध यदि है तो प्रारब्ध का है ॥

लुब्धक बोला तेरा सब कथन व्यर्थ है, अरे दुष्ट ! काम तो तू ने किया है प्रेरक ने तो नहीं किया ॥

सर्प बोला कि मैं शस्त्र रूप हूं, शस्त्र अपने आप कुछ नहीं करता, करने वाला शस्त्रधारी होता है ॥

लुब्धक ने कहा कि हे दुष्ट ! अधिक वर्लाप से क्या लाभ है मैं तुम को मारे बिना नहीं छोडूंगा ॥

भीष्म जी बोले कि इतने में मृत्यु भी वहां आपहुंचा और कहने लगा कि हे सर्प ! काल पुरुष की प्रेरणा से मैंने

तुझे आज्ञा दी इस लिये हम दोनों अपराधी नहीं हैं। हे सर्प! जीव मात्र काल के आधीन हैं फिर आप मुझ पर दोष क्यों देते हो, यदि मुझे दोषी समझते हो तो तुम भी मेरे साथ दोष भागी हो ॥

सर्प ने कहा कि मैं तुम को अपराधी नहीं कहता मेरा तो यही कथन है कि मैं स्वतंत्र नहीं आप जिस तरह से बने मुझे निर्दोषी ठहरायें ॥

अर्जुनक ने कहा कि पहिले मैं तुम को ही अपराधी समझता था अब तुम दोनों अपराधी हो, मृत्यु को धिक्कार है! जो ऐसे सत्पुरुषों को मारने वाला है अब मैं तेरे माथा अवश्य लूंगा ॥

मृत्यु ने कहा कि हम दोनों काल भगवान के आधीन हैं उसकी आज्ञा का पालन करते हैं इस लिये आप को हमें अपराधी बनाना उचित नहीं ॥

भीष्म जी बोले कि हे राजन्! इतने में साक्षात् काल भगवान वहां आकर कहने लगे कि हे लुब्धक! हम तीनों दोष भागी नहीं हैं क्योंकि मनुष्य अपने ही किये कर्मों के फलों को पाते हैं वह बालक अपने ही कर्मों के फल से मारा गया है इस में हमारा क्या दोष है ॥

तब गौतमी ने यह सब सुन लुब्धक से कहा कि हे लुब्धक! बालक ने अपने कर्मों के फल से देह को छोड़ा है इस में किसी का दोष नहीं, मैंने भी अपने किये कर्म का फल पाया है तुम सर्प को छोड़ दो यह कह काल मृत्यु अपने २ स्थानों

को पधारे लुब्धक ने सर्प को छोड़ दिया और वह सब चले गये ॥

भीष्म जी बोले कि हे राजन्! तुम भी इन सब को अपने किये कर्म का फल पाने वाले समझो इस में न तुम्हारा दोष है न दुर्योधन का। हे राजन्! यह सुन कर राजा युधिष्ठर को शान्ति हुई और उसने फिर यह प्रश्न किया ॥

दूसरा अध्याय

—:o:—

सुदर्शन की कथा अतिथि सेवा का महात्म्य।

युधिष्ठर ने भीष्म जी से पूछा कि आज तक किस २ ने मृत्यु को विजय किया है वह वर्णन करें ॥

हे राजन्! मनु के पुत्र इक्ष्वाकु के वंश में धर्मात्मा तेजस्वी दुर्योधन हुआ इस के घर नर्बदा के गर्भ से एक परम सुन्दरी कन्या उत्पन्न हुई जिस के लिये अग्नि देवता ने ब्राह्मण का रूप धार राजा से प्रार्थना की, राजा ने उसे दरिद्री समझ कर स्वीकार न किया तब अग्नि देवता उस के यज्ञ में गुप्त होगये यह देख राजा ने ब्राह्मणों से कहा कि मुझ से क्या पाप हुआ है जिस से अग्नि देवता गुप्त होगये हैं ॥

तब ब्राह्मणों की स्तुति से प्रसन्न हो अग्नि देवता बोले कि मैं दुर्योधन की पुत्री को अपने लिये मांगता हूं तब यह समाचार ब्राह्मणों ने राजा से कहा, राजा ने मान लिया और

अपनी कन्या का पाणि ग्रहण अग्नि देवता से कर दिया उन से सुदर्शन नाम राजा उत्पन्न हुआ जिस का विवाह ओघवती से हुआ इस राजा ने प्रतिज्ञा की कि मैं गृहस्थ में ही रह कर मृत्यु को जीतूंगा ॥

तब उस ने ओघवती से कहा कि कदापि अतिथि इस घर से निराश न जाये चाहे तेरा शरीर भी मांगे तुझ का देना होगा, रानी ने कहा कि सत्य वचन ॥

इस बात की परीक्षा के लिये धर्म ने ब्राह्मण का रूप धार राजा के घर में न होते समय वहां आये तब ओघवती ने उन का यथा योग्य पूजन कर प्रार्थना की कि हे ब्राह्मण देवता ! आप क्या चाहते हैं, तब उस ने कहा कि मैं गृहस्थाश्रम का मुख्य धर्म तुझ से चाहता हूं ॥

तब लज्जा युक्त सुदर्शन ने अपने पति के वचनों को याद करके कहा कि जो आप की इच्छा, यह कह कर बैठ गई इतने में बाहिर से राजा भी आगया, राजा ने आकर ओघवती को पुकारा परन्तु उस ने कुछ उत्तर न दिया, ब्राह्मण ने भीतर से कहा कि हे अग्नि पुत्र ! मैं अतिथि हूं मैंने अन्य किसी प्रकार की कामना न कर तेरी स्त्री को मांगा था उस ने स्वीकार किया अब जो दंड तुम इस को देना चाहते हो दे दो यह कह कर मृत्यु देवता ने विचारा कि अब मैं इस भ्रष्ट प्रतिज्ञ को अवश्य मारूंगा ॥

यह सुन क्रोध से रहित बड़ी प्रसन्नता से सुदर्शन ने प्रार्थना की कि हे ब्राह्मण ! आप की कामना पूर्ति में किसी

प्रकार की न्यूनता तो नहीं हुई। हे महाराज! मेरे माया, धन और स्त्री सब अतिथियों के ही हैं॥

तब दशों दिशाओं से शब्द हुआ कि यह सत्य है। यह सत्य है॥

तब वह ब्राह्मण धर्म का रूप धार बोले कि हे राजन्! मैं धर्म हूं मैं ने एक मात्र तेरी परीक्षा के लिये यह कर्म किया था परंतु तुम ने मृत्यु को जीत लिया, आप की इस पतिव्रता साध्वी स्त्री को त्रैलोकी में कोई देख नहीं सकता॥

भीष्म जी बोले कि हे राजन्! गृहस्थियों के लिये अतिथी परम देवता हैं अतिथी की सर्वदा पूजन करनी चाहिये॥

तीसरा अध्याय

—:०:—

युधिष्ठर का विश्वामित्र के ब्राह्मण होने का कारण पूछना और भीष्म जी का कहना॥

महाराज युधिष्ठर ने पूछा तीनों वर्णों को ब्राह्मण वर्ण की प्राप्ति कठिन है तो विश्वामित्र जी ब्राह्मण कैसे बने, इन्हों ने अपने तप के बल से वशिष्ठ जी के १०० पुत्रों को मारा, तप बल से अनेक राक्षस उत्पन्न किये, अपने ५० पुत्रों को बड़े भाई को नमस्कार न करने के अपराध से चाण्डाल होने का शाप दिया, इन के भय से वशिष्ठ जीने अपने शरीर

को बांध कर जल में डबोया और वशिष्ठ जी के शाप से चाण्डाल के घर से कुत्ते की जंघा चुरा कर उसे पकाना आरंभ किया ॥

ऐसे अनेक कर्म करने वाले विश्वामित्र जी ब्राह्मण कैसे बन गये, यह सविस्तार वर्णन कीजिये और ब्राह्मणों में शूद्र से उत्पन्न होने वाले मतंग ने बड़ी २ तपस्या करने पर भी ब्राह्मण वर्ण नहीं पाया, इस का क्या कारण है ॥

भीष्म जी बोले कि पूर्वकाल में बड़ा प्रसिद्ध अजमीढ़ नाम राजा हुआ जिस के वंश में राजा गाधी हुआ राजा गाधी के कोई संतान न थी तब यह संतान के लिये तप करने को वन में चला गया फिर इस के एक कन्या परम सुंदरी हुई जिस के लिये ऋचीक ऋषी ने प्रार्थना की ॥

राजा गाधी ने कहा कि यदि आप कृष्ण वर्ण वायु वेग वाले सुंदर एक हजार घोड़े लाओगे तो आप को कन्या दूंगा ॥

ऋचीक ऋषि ने वरुण देव से पूर्वोक्त गुण सम्पन्न घोड़े भिक्षा मांगे वरुण जी ने कहा कि जहां आप चाहेंगे वहीं गंगा जी से घोड़े निकलेंगे ॥

हे राजन्! ऋषि के ध्यान करते ही गंगा जी से घोड़े निकले जहां से घोड़े निकले थे वह स्थान आज तक अश्वतीर्थ के नाम से प्रसिद्ध कनौज के निकट गंगातट पर है ॥

इन घोड़ों के लाने पर गाधी ने श्रद्धा से अपनी कन्या विवाह दी ॥

इस कन्या ने ऋषि की बड़ी सेवा की जिस से ऋषि ने

प्रसन्न हो वर देने को कहा पति के इस वचन को उस ने अपनी माता से कहा माता ने उत्तर दिया हे पुत्री! तेरा पति बड़ा तेजस्वी है उस से मेरे लिये पुत्र की प्रार्थना करो तब उस कन्या ने यही वर मांगा, ऋषि जी ने कहा कि ऐसा ही होगा वरंच तेरे मां वंश के चलाने वाला पुत्र होगा यह चूरु तुमने खाना और यह माता को देना ॥

उस की माता ने लालच में आकर कहा कि हे पुत्री! यह अपने वाला चरु मुझ को दो और वह तू लेले उसने ऐसा ही किया तब इन दोनों को गर्भाधान हुआ ॥

ऋचीक ऋषि अपनी स्त्री को गर्भवती देख महा दुःखी चित्त होकर कहने लगे कि हे सुन्दरी! मुझे प्रतीत होता है कि तूने चरु बदल कर खाया है तेरे चरु में संपूर्ण ब्रह्मतेज और तेरी माता के चरु में क्षत्रिय बल मन्त्रों द्वारा भरा था अब तेरी माता तो उत्तम ब्राह्मण को उत्पन्न करेगी और तू बली क्षत्री को जनेगी, यह तुम ने अच्छा नहीं किया ॥

पति के यह बचन सुन वह अचेत हो पृथ्वी पर गिर पड़ी और फिर कुछ काल के अनंतर सचेत हो प्रार्थना करने लगी कि हे महाराज! ऐसा कृपा करें कि मेरा पुत्र क्षत्रि न हो ॥

तब प्रसन्न हो तपस्वी ने कहा कि अच्छा ऐसा ही होगा, इस के यहां जमदग्नि और उस की माता के यहां विश्वा मित्र जी उत्पन्न हुये ॥

वही विश्वा मित्र क्षत्रि ब्राह्मण वर्ण को पाकर ब्रह्म वंश

को नियत करने वाला हुआ, उस पुत्र ब्रह्म वंश को बढ़ाने वाले गोत्र कर्ता आश्वलायन, गार्ग्य, जावल, महर्षि कपिल आदि हुए, हे राजन! वास्तव में ऋचीक ऋषि ने जो ब्रह्मतेज डाला था उसी से विश्वा मित्र ब्रह्मर्षि बने थे ॥

चौथा अध्याय

—:०:—

शुक और राजा इन्द्र का संवाद और शस्त्रज्ञ लोग उद्योग और प्रारब्ध में से किस को अच्छा जानते हैं ॥

युधिष्ठर बोले हे महारज! अब मैं हिंसा रहित कर्म और भक्त जनों के गुणों को सुनना चाहता हूं ॥

भीष्म जी ने कहा कि काशीराज के देश में एक लुब्धक था इसने विष युक्त एक बाण एक मृग पर चलाया वह बाण मृग को घायल कर पास के वृक्ष को भी बंधगया, जिस से उस वृक्ष के पत्ते और फल झड़ गये। उस वृक्ष की खोल में एक शुक रहिता था, वृक्ष के जल जाने पर भी उसने अपनी खोल को न छोड़ बैठा २ वह वहीं शुष्क हो गया ॥

यह देख इन्द्र ब्राह्मण के रूप में शुक के पास आकर पूछने लगे कि तुम इस सूके सड़े फल रहित वृक्ष पर क्यों रहते हो तोते ने इन को इन्द्र जान प्रणाम पूर्वक प्रार्थना की कि मैं इसी वृक्ष पर जन्मा, यहीं पला क्या ...

आपत्ति काल में इस को छोड़ देना मेरा धर्म है यह सुन इन्द्र प्रसन्न हो कहने लगे कि वर मांगो, तोता बोला कि हे राजेन्द्र यह वृक्ष पूर्ववत् ही हरा भरा हो जाये, वह वैसा ही हो गया ॥ सार यह है कि भक्त की रक्षा करने से मनुष्य संपूर्ण अभीष्टों को प्राप्त कर सकता है ॥

हे महाराज ! शास्त्रों में शास्त्रज्ञों ने उद्योग और प्रारब्ध में से किस को विशेष माना है, भीष्म जी ने कहा ॥

हे राजन् यही प्रश्न वसिष्ठ जी ने ब्रह्मा जी से किया था ब्रह्मा जी ने उत्तर दिया, कि बिना बीज के कुछ उत्पन्न नहीं होता, बीज ही से फल वरंच बीज भी बीज ही से उत्पन्न होते हैं, इसी प्रकार बिना उद्योग के दैव भी फल को नहीं देता, उद्योग क्षेत्र है और प्रारब्ध बीज है क्षेत्र और बीज के अच्छी प्रकार से योग होने से अन्न उत्पन्न होते हैं ॥

मनुष्य अपने किये अच्छे बुरे कर्मों से सुख दुःख पाता है कर्म करने वाला प्रारब्ध योग से कार्य सिद्धि करता है कर्म के न करने वाला संसार में दुःख पाता है ॥

उद्योग से सब पदार्थों की प्राप्ति होती है संसारिक सुख, स्वर्ग और मोक्ष तक भी उद्योग से मिलते हैं, उद्योग से ही देवता बन जाता है ॥

कर्मों के न करने वाले निज धन ऐश्वर्य और पदार्थों को भी खो बैठते हैं, हे राजन् ! वेद पाठी ब्राह्मण उद्योग से शुद्ध आत्मा बनता है, क्षत्री पराक्रम से, वैश्य यत्न से और शूद्र सेवा से लक्ष्मी को प्राप्त करसकता है, जो पुरुष पुरुषार्थ

कोन कर क प्रारब्ध पर निर्भर रहता है उस का मनोरथ सिद्ध नहीं होता क्योंकि विना उद्यम के प्रारब्ध किसी को कुछ नहीं देसकती ॥

च्यवन सरीखे ऋषि उद्योग से देवताओं की भी अप्रतिष्ठा करते हैं इस लिये दैव से उद्योग विशेष है ॥

आत्मा ही आत्मा का बंधु है, आत्मा ही आत्मा का शत्रु, आत्मा ही अपने पुण्य का साक्षी है ॥

पूर्व काल में पुण्य फल भोग की समाप्ति पर ययाति स्वर्ग से गिराया गया फिर पवित्र कर्म करने वाले उस के दौहित्रों ने उसे फिर स्वर्ग में पहुंचाया इसी प्रकार अन्य भी कई राजा तथा ऋषि अपने ही किये कर्मों से उचांगोचार तथा नीच से नीच गतियों को प्राप्त हुये इस से सिद्ध होता है कि पुरुषार्थ ही प्रारब्ध से विशेष ॥

बड़े पराक्रमी धृतराष्ट्र के पुत्रों ने पाण्डवों का राज्य छीन लिया फिर पाण्डवों ने अपने भुज बल से लौटा लिया, तपो बल से ही मुनि लोग शाप देते हैं वह दैव बल से नहीं देते ॥

हे राजन् ! दैव भी कर्मों के आधीन है जैसे वायु से अग्नि परचंड होती है इसी प्रकार पुरुषार्थ से दैव जाग उठता है। सार यह है कि भोग दैव के आधीन है और भोग के पदार्थ कर्मों के अधीन है ॥

पांचवां अध्याय

—:०:—

शुभ कर्मों के फल का वर्णन ॥

युधिष्ठिर बोले हे भीष्म जी ! अब आप शुभ कर्मों के फल का वर्णन करें ॥

भीष्म जी बोले कि हे राजन् ! मनुष्य जिस २ तरुण युवा और वृद्ध अवस्था में शुभ और अशुभ कर्मों को करता है उसी दशा में भोगता है ॥

इस लोक में पांचों कर्म इन्द्रियों से किया हुआ काम नष्ट नहीं होता ॥

मीठे वचन कहना, अभ्यागत को प्रेम से देखना, दिल से चाहना, पास बैठाना और उस के पीछे चलना यज्ञ के समान है जो मनुष्य श्रद्धा से पूर्व कभी न देखे हुये मार्ग में वर्तमान थके मांदे पथिक को भोजन आदि देता है उस के पुण्य के फल की गणना नहीं हो सकती ॥

जो पुरुष अतिथि को पाद्य, आसन, दीपक, अन्न और स्थान देता है वह पंच दक्षिणा यज्ञ के फल को पाता है, हे राजन् ! मनुष्य दान से धन, मौनता से स्वामीत्व को, श्राद्धादि व्रतों से उप भोगों को और ब्रह्मचर्य से पूर्ण आयु को पाता है, अहिंसा से रूप यौवन और आरोग्यता, फल मूल खाने से राज्य और पत्ते ही खाने से स्वर्ग मिलता है ॥

हे राजन् ! आहारी गौओं के पालक एकाल

सन्ध्या करने वाले और वायु भक्षी सत्य संकल्प को स्वर्ग मिलता है; १२ वर्ष दुग्धपान का व्रत धारण करने वाले को ब्रह्म लोक की प्राप्ति होती है और निर्लोभी मनुष्य सुख भोगता है ॥

हे राजन्! जैसे बहुत सी गौओं में से बछड़ा अपनी माता को पहिचान लेता है वैसे ही किये हुए कर्म अपने कर्ता को चीन्ह लेते हैं ॥

पिता की प्रसन्नता से ब्रह्मा, माता की प्रसन्नता से पृथ्वी और गुरु की प्रसन्नता से ब्रह्म प्रसन्न होता है, जो पुरुष माता, पिता और गुरु को प्रसन्न करता है उसके सब कर्म सफल होते हैं जो इन को अप्रसन्न करता है उस के यज्ञादि सब कर्म निष्फल हो जाते हैं ॥

हे राजन्! व्यर्थ उच्चारण किये मन्त्र से, बिना दक्षिणा के यज्ञ से, बिना मन्त्र के हवन से जो पाप होता है वह सब झूठ बोलने वाले मनुष्य को होते हैं ॥

छटा अध्याय

—:०:—

पूजनीय कौन हैं ?

युधिष्ठर जी बोले कि हे भरतपर्भ! आप किस को पूजनीय और नमस्कार के योग्य मानते हैं और इस लोक तथा

परलोक में हितकारी कौन हैं ॥

भीष्म जी बोले कि मैं वेद विद्या में नवीण, जितेंद्रिय, गुरु पूजनरत, सत्पुरुषों के हितकारी बृ्ाह्मणों का पूजन करता हूं ॥

हे पांडु नंदन! तुम से अधिक इस संसार में और कोई प्यारा नहीं परन्तु ब्राह्मण मुझे तुम से भी प्यारे हैं, मुझे मेरे पिता भी वैसे प्यारे नहीं जैसे मुझे ब्राह्मण प्यारे हैं, हे राजन्! मैं ब्राह्मण भक्त कहिला कर अतीव प्रसन्न होता हूं ॥

हे राजन्! जैसे स्त्री के लिये भर्ता सर्वदा माननीय और पूज्य है वैसे ही क्षत्रि के लिये ब्राह्मण पूजनीय है। और १०० वर्ष के वृद्ध क्षत्रि के लिये १० वर्ष का बृ्ाह्मण भी पूजनीय है और पिता के समान है क्योंकि क्षत्रि के तेज से चाहे कोई बच भी जाये परन्तु ब्राह्मण के तेज से कोई बच नहीं सकता क्षत्रि को सदैव गौ बृ्ाह्मण और वेदों की रक्षा करनी चाहिये ॥

सातवां अध्याय

—:०:—

दान प्रतिज्ञा भंग का फल ॥

युधिष्ठिर महाराज ने पूछा कि महाराज जो दुष्टआत्मा बृ्ाह्मण को दान देने की प्रतिज्ञा करके नहीं देते वह किस योनी में जन्म लेते हैं ॥

भीष्म जी बोले कि दान प्रतिज्ञा कर जो दान नहीं देते उन के जन्म से मरण पर्यन्त के सब शुभ कर्म दान, तप, यज्ञ आदि नष्ट हो जाते हैं इस विषय में मुझे एक इतिहास याद आया है सुनें ॥

दो मित्रों ने मनुष्य देह को त्याग एक ने बंदर की योनि में और दूसरे ने शृगाल की योनि में जन्म पाया और यह इन योनियों में भी मित्र थे एक दिन बंदर ने शृगाल से पूछा कि तुम ने पूर्व जन्म में कौन सा घोर पाप किया था जो इस योनि में पशु जन्म पाया ॥

शृगाल ने कहा कि मैं ने पूर्व जन्म में ब्राह्मण को दान की प्रतिज्ञा कर दिया नहीं था उसी पाप के फल से यह जन्म पाया है तुम ने क्या कार्य किया था जो बंदर बने ॥

बंदर ने उत्तर दिया कि मैं ब्राह्मणों के फल चुरा कर खाता था, भीष्म जी बोले हे राजन् ! ब्राह्मण का धन कभी हरना नहीं चाहिये उस से विवाद नहीं करना चाहिये प्रतिज्ञा कर पीछे नहीं हटना चाहिये. श्रीकृष्ण जी की भी यही सम्मति है कि ब्राह्मण चाहे विद्या देने में कृपण भी हो उस का भी अपमान नहीं करना चाहिये, हे राजन् ! आशा भंग ब्राह्मण, प्रतिज्ञा कर न देने वाले को इस प्रकार भस्म कर देता है जैसे सूखे वन को अग्नि जला कर भस्म कर देती है ॥

———

आठवां अध्याय

—:०:—

नीच को उपदेश करने की हानी ॥

युधिष्ठिर बोले हे महाराज ! जो पुरुष नीच को उपदेश करता है उसे दोष होता है या नहीं ?

भीष्म जी बोले हे राजन् ! इस विषय को जैसे ऋषियों से मैंने सुना है वह कहता हुं आप सुनें ॥

नीच मनुष्य को उपदेश देने से उपदेष्टा को बड़ा दोष होता है हे राजन् ! हिमालय के वृक्ष स्थानाश्रम में जहां कि बड़े २ तपस्वी शुद्ध अंतःकरण वालखिल्य प्रभृति ऋषि निवास करते थे तथा सन्यासी लोग रहते थे वहां पर एक दयावान शूद्र आया वह इन को देख अतीव प्रसन्न चित्त सन्यासाश्रम में प्रवेश करने की दृढ़ प्रतिज्ञा कर मुनियों से प्रार्थना करने लगा कि हे तपोधनों! मैं तप की पूर्ण आशा करके आप के पास आया हुं आप मुझे सन्यासाश्रम में दीक्षित कीजिये, कुल पति ने कहा कि शूद्र को सन्यास का अधिकार नहीं यदि तुम यहां रहना चाहते हो तो सेवा धर्म ग्रहण करो इसी से तुम्हारा कल्याण होगा ॥

तब वह शूद्र अपने आप ही आश्रम से कुछ दूरी पर एक पर्ण कुटिका बना यज्ञ हवन व्रत नियमों को सेवन करने लगा ॥

हे राजन् ! इस प्रकार बहुत काल व्यतीत होजाने पर एक मुनि उस के आश्रम में आने जाने लगा जिस की यह बहुत

या करता था एक दिन शूद्र ने प्रार्थना की कि मैं पितृ यज्ञ करना चाहता हूं आप यदि मुझे करावें तो आप की बड़ी कृपा है, मुनी ने उस का पितृ यज्ञ विधि पूर्वक करा दिया ॥

हे युधिष्ठर ! इसी प्रकार बहुत काल तक यज्ञादि कर वह शूद्र मर कर राजकुल में उत्पन्न हुआ और वह ऋषि भी मर कर उस का पुरोहित बना ॥

वह राजा पुण्याह वाचन और धर्म कार्यों में पुरोहित को देख हंसा करता था ॥

एक दिन एकांत में राजा को प्रसन्न कर पुरोहित ने पूछा कि आप मुझे धर्म कार्यों में प्रवृत्त देख हंसते क्यों हैं ?

तब राजा ने पूर्व जन्म का सब ब्योरा कह कर प्रार्थना की कि आपने मुझे पितृ यज्ञ करा अपने पूर्व कृत तप का नाश किया और अब फिर मेरे पुरोहित बने न जाने अब आप किस अधम योनि में जन्म लेंगे ॥

भीष्म जी बोले कि राजा के इन वचनों को सुन पुरोहित जी उसी आश्रम में जाकर तपस्या करने लगे और बड़े कष्ट से पूर्व शूद्र को यज्ञादि कराने के फल से छूटे ॥

शूद्र को उपदेश करना उचित नहीं धन के लालच से नीचों को उपदेश करने से उपदेश नीच गति को पाता है। उपदेश सदैव पात्र को करना चाहिये कुपात्र को उपदेश करना व्यर्थ होता है ॥

महाराज युधिष्ठर ने पूछा कि विद्या और लक्ष्मी कैसे पुरुष को प्राप्त होती है ॥

भीष्म जी बोले कि हे युधिष्ठिर ! एक समय श्री रुक्मणी जी ने लक्ष्मी से पूछा था कि तुम कैसे मनुष्यों के पास रहती हो लक्ष्मी ने उत्तर दिया कि मैं बुद्धिमान, कर्मकुशल, ईश्वर भक्त, जितेन्द्रिय, और कृतज्ञ पुरुष के पास ऐश्वर्य रूप से सदैव वास करती हूं और क्रियाहीन, नास्तिक, अकृतज्ञ, बड़ों के निंदक और कपटी के पास कभी नहीं रहती ॥

जो मनुष्य दैव के आधीन रह कर पुरुषार्थ नहीं करते, थोड़े से लाभ से संतुष्ट हो जाते हैं उन के पास नहीं रहती, मैं धर्म के अभ्यासी ज्ञाता, वृद्धों की सेवा में रत, जितेन्द्रिय, शुद्धन्तिःकरण, क्षमावान पुरुषों के पास सदा निवास करती हूं। और देवता ब्राह्मणों की पूजा पति की सेवा सत्यस्वभाव सरलता युक्त स्त्रियों के पास रहती हूं, मैं ऐसी स्त्रियों के पास कभी नहीं रहती जो कि पात्रों को एकट्ठा नहीं रखती, बिना विचार कि कर्म करने वाली, अपने पति से विरुद्ध वार्तालाप करने वाली, पर घर में प्रीति करने वाली निर्लज्ज, निर्दय, अपवित्र कलहप्रिय और नींद की अधिकता वाली हैं ॥

मैं वेदपाठी ब्राह्मणों में, धर्म युक्त क्षत्रियों में, कृषी कर्त्ता वैश्यों में और सेवा रत शूद्रों में सदैव निवास करती हूं ॥

नवां अध्याय

—:o:—

स्त्री और पुरुष में अधिक सुख किस को है ॥

युधिष्ठर ने पूछा कि स्त्री और पुरुष के संयोग से विषय सुख किस को अधिक होता है ॥

भीष्म जी ने कहा पूर्वकाल में भगीरथ नाम राजर्षि ने संतान के अर्थ अग्नि ष्टुप नाम यज्ञ किया ॥

यज्ञ के अनंतर राजा एक दिन शिकार के लिये वन को गया वहां पर समय पा इंद्र ने इसे भुला दिया और राजा तृषा से व्याकुल मार्ग भूल वन में घूमने लगा, घूमते हुये राजा ने एक सरोवर देखा वहां पर राजा ने घोड़े को जल पिला बांध आप भी स्नान किया स्नान करते ही राजा स्त्री रूप होगया ।

तब राजा अपनी यह दशा देख बड़ी चिंता करने लगा कि अब मैं पुर में जाकर अपनी स्त्री तथा पुत्रों से क्या कहूंगा पुर वासी मुझे क्या कहेंगे इस प्रकार चिंता करता हुआ घोड़े पर सवार हो नगर में आया इसे स्त्री रूप देख सब चकित हुये पुर वासी भी अत्यंत विस्मय हुये ॥

राजा ने अपना पूरा वृत्तान्त अपने पुत्रों से सुना कर कहा कि मैं अब वन को जाता हूं आप सुख से राज्य करें यह कह कर वह स्त्री रूप राजा वन को चला गया, वहां पर तापसी ब्राह्मण से इस के सौ पुत्र हुये जिन को इस ने अपने नगर में भेज दिया परंतु उन को राजा के पहिले पुत्रों ने लड़ कर मार दिया ॥

उन की मृत्यु को सुन कर तापस को बड़ा क्रोध हुआ तब इंद्र ने ब्राह्मण के रूप में तापस के आश्रम पर आ रोती हुई स्त्री से कहा कि हे स्त्री तू क्यों रोती है तब उस ने पुत्र का बध सब

व्योरा कहा इंद्र ने प्रकट होकर कहा कि तूने अग्नेष्टाम यज्ञ में मेरा भाग नहीं दिया था इस लिये मैंने ही अपनी शत्रुता का बदला लिया है ॥

तब उस स्त्री ने इंद्र की स्तुति कर चरण पकड़ लिये और प्रार्थना की महाराज आप क्षमा करें ॥

तब इंद्र ने प्रसन्न हो कहा कि मैं तेरे सौ पुत्र सजीव करता हुं तू किन पुत्रों को सजीव कराना चाहती है पुरुष रूप पुत्रों को या स्त्री रूप जनित पुत्रों को, स्त्री ने कहा कि आप मेरे स्त्री रूप जनित पुत्रों को सजीव करें ॥

इंद्र ने आश्चर्य हो पुछा कि इस में क्या कारण है कि तू पुरुष रूप जनित पुत्रों को नहीं सजीव कराना चाहती ॥

स्त्री ने कहा कि स्त्री की प्रीति पुरुष की प्रीति से अधिक होती है इस लिये आप उन्हीं को सजीव करें । तब इंद्र ने कहा कि मैं तेरे सब पुत्रों को सजीव करता हुं अब तू यह कह कि तू स्त्री रूप को चाहती है या पुरुष रूप को ॥

स्त्री ने कहा कि मैं स्त्री रूप को चाहती हूं इंद्र ने पूछा कि क्यों, स्त्री ने कहा कि स्त्री पुरुष के संयोग में स्त्री को अधिक आनंद मिलता है इस लिये मैं स्त्री रहना चाहती हूं ॥

दसवां अध्याय

—:०:—

लोक यात्रा वर्णन ॥

युधिष्ठर बोले कि हे महाराज ! लोक यात्रा को सुख पूर्वक

करने वाले मनुष्य को किस प्रकार रहना चाहिये ॥

भीष्म जी बोले कि देह के तीन प्रकार के कर्म हिंसा, चोरी, पर स्त्री गमन को छोड़, वाणी के चार प्रकार के कर्म अर्थात् झूठ अनर्गल भाषण, कठोर वचन, निन्दा और दूसरे को दुखदायक वचन कहना छोड़ देना चाहिये और चित्त से तीन प्रकार के कर्म अर्थात दूसरे के धन आदि की इच्छा, सब जीवों से द्वेष करना, वेदोक्त कर्मों पर न चलना त्याग देना चाहिये, हे राजन! इस प्रकार चलने वाले पुरुष की लोक यात्रा सुख से होगी ॥

ग्यारहवां अध्याय

—:०:—

उपमन्यु का तप, इंद्र रूप में शिवजी का प्रादुर्भाव और उपमन्यु की स्तुति ॥

युधिष्ठिर बोले कि हे पितामह! जप की विधि सृष्टि कर्ता भगवान के नाम और ऐश्वर्य का वर्णन करें ॥

भीष्म जी बोले कि हे राजन! मैं शिवजी के गुण वर्णन करने को सामर्थ नहीं हूं वह देवेश्वर सर्व व्यापक हैं दृष्टि गोचर नहीं होते, विराट रूप ब्रह्मा सूत्रात्मा विष्णु के भी उत्पन्न करने वाले हैं, पिशाच से ब्रह्मापर्यन्त सब देवता अपनी उपाधियों से रहित हो उस को प्राप्त होते हैं, पंचतन्मात्रा से लेकर अव्यक्त पार्यन्त सब प्रकृतियों से वह श्रेष्ठ हैं उन्हीं को तत्वदर्शी ऋषि

लोग पूजन करते हैं उन्हों ने पुरुष रूप माया सबल अव्यक्त को सत स्कृतों से महत्तत्व को उत्पन्न किया नारायण जी के सिवाय उन के गुणों को मुझ सरीखा कोई मनुष्य वर्णन नहीं कर सकता ॥

हे राजन्! दिव्य चक्षु धारी विष्णु जी योग रूप नेत्रों से उन को देख सकते हैं महात्मा श्री कृष्ण जी ने भी शिवजी की हज़ार वर्ष तक तपस्या की, शिवजी के ऐश्वर्य से बढ़ कर मैं किसी के ऐश्वर्य को नहीं देखता हूं, हे राजन्! श्री कृष्ण ही उन के नामों को अर्थ सहित और उन के ऐश्वर्य का वर्णन कर सकते हैं ॥

वैशम्पायन बोले कि हे राजन्! तब भीष्म पितामह जी ने कृष्ण जी से कहा कि आप ही युधिष्ठिर के प्रश्न का उत्तर दें क्योंकि आप विष्णु का रूप हैं शिव और विष्णु की एकता होने से विष्णु जी शिवजी के गुणों को और शिवजी विष्णु जी के गुणों का वर्णन कर सकते हैं आप ब्रह्मा के पुत्र तंडी ऋषि से कथित शिवजी के सहस्र नाम और ऐश्वर्य को वर्णन करें ॥

वासुदेव जी बोले कि ईश्वर के कर्मों की गति यथार्थ रूप से हिरण्य गर्भ से आदि ले इन्द्रादि देवता भी नहीं जान सकते तो फिर मनुष्य किस प्रकार जान सकते हैं ॥

एक बार जामवती ने मुझ से कहा हे माधव जी! आप मुझे भी सकल गुण संपन्न पुत्र दें आप ने शिवजी की अराधना कर रुक्मणी को पुत्र दिये हैं ॥

हे राजन्! जामवती की प्रार्थना को सुन मैंने कहा कि बहुत

अच्छा मैं माता पिता और भ्राता बलदेवजी से आज्ञा लेकर शिवजी की अराधना के लिये वन को जाता हूं ॥

तब मैं हिमालय पर्वत पर उपमन्यु ऋषि के आश्रम पर चला गया क्योंकि यह आश्रम सर्व प्रकार से शांति दाता और ऋषि मुनियों के उपासना के योग्य था, वहां पर मैंने उपमन्यु को यथा योग्य पूणाम की उन ऋषि ने अतीव पूसन्न हो कुशल क्षेम पूछ कर कहा कि आज हमारे भजन, तप और यज्ञ सफल हुए जो २ आप जगत पूज्य के दर्शण हुये और फिर उपास्य देव पूछने पर वह बोले कि आप शिवजी की उपासना करें ॥

हे कृष्णजी ! मैंने भी शिवजी की ही तपस्या से जो सिद्धियें पाई हैं वह मैं आप से कहता हूं आप सुनें एक बार मैं अपने भाई धौम्य के साथ खेलता २ मुनियों के आश्रम पर गया, वहां मैंने अमृत के समान गौ का दूध पिया, तब मैंने माता से कहा कि माता मुझे दूध पिलाओ दूध के अभाव से उस ने पीठी घोल कर दी और कहने लगी कि पुत्र यह दूध है उसका मुझे स्वाद न आया, तब मैंने माता से कहा कि यह दूध नहीं है ॥

माता ने उत्तर दिया कि पुत्र वनवासी सदैव कंद मूल खाते हैं हमारे यहां दूध नहीं है, हे पुत्र ! गौ के बिना यहां दूध कहां से मिल सकता है हे पुत्र ! हम लोगों की परम गति शिवजी हैं, आप उन की शरण लो उन की प्रसन्नता से तुम्हारे संपूर्ण मनोरथ पूर्ण होंगे ॥

तब मैंने माता जी से पूछा कि हे माता ! वह शिवजी कौन हैं और कैसे प्रसन्न होते हैं ? कहां रहते हैं और उन के दर्शन कैसे होते हैं ? तब माता ने प्रेम से मेरा मस्तक चूम कर कहा कि वह दुर्गम्य, दुर्विज्ञेय हैं शास्त्रों से भी उन का जानना कठिन है, ज्ञानी लोग उन के अनेक रूप वर्णन करते हैं, मूल रूप से सब चरित्र कौन कह सकता है, मैंने जैसे पूर्व ऋषियों से उन के जिन रूपों को और गुणों को सुना है वह मैं कहती हूं सुनो ॥

वह उत्पत्ति स्थान ईश्वर ब्रह्मा विष्णु इन्द्र सूर्य आदि अनेक रूपों को धारण करते हैं वरंच भक्तों की रक्षा के लिये सिंह व्याघ्रादि तथा हंस मयूरादि पक्षियों के रूपों को भी धारण करते हैं वह षड़ानन, बहुमुख, त्रिनेत्र, बहुशिर अनेक कटि चरण मुख हाथादि वाला ऋषि गन्धर्व सिद्धादि के रूपों को धारण करने वाला है वह सब जीवों के नाश करने वाला सर्व लोक पूज्य सर्व व्यापी है, वह सब की मनोकामनाओं को जानता है उस की शरण लेनी चाहिये वह माया से रहित आदि रूप अजन्मा है उस हिरण्मय गर्भ के अंत को कौन जान सकता है ? वह महेश्वर अन्नमय, प्राणमय, मनोमय विज्ञानमय, आनन्दमय, योगात्मा शुद्धतम, पदार्थ रूप योगी है वह सूक्ष्म चित्त वृत्ति से प्राप्त करने के योग्य है क्योंकि आत्मा है वह विराट रूप और आनन्द भोगने वाला आत्म रूपी एक मुख द्विमुख, त्रिमुख आदि रखने वाला है ॥

हे पुत्र ! उस में निष्ठा रखने वाला अपने अभीष्ट को पाता है, हे राजन् ! इन वचनों को सुन कर महादेव में मेरी निश्चल

भक्ति उत्पन्न हुई और एक हज़ार वर्ष बायें अंगुष्ठ की नोक पर खड़ा होकर मैंने शिवजी महाराज को प्रसन्न किया ।

उस समय शिवजी महाराज इन्द्र का रूप धार श्वेत गज पर चढ़ कर आये और कहिने लगे कि हे ब्राह्मण ! मैं प्रसन्न हूं वर मांग, मैंने उत्तर दिया कि हे इन्द्र ! मैं शिवजी महाराज के सिवाय किसी देवता से अपना अभिष्ट नहीं चाहता, हे इन्द्र ! जब लग मैं उन महादेव जी को प्रसन्न न कर लुंगा और उन की आप्ति न पालुंगा तब तक मुझे शांति नहीं और न ही मैं तप को त्याग कर सकता हूं ॥

इन्द्र बोले कि उस नाशकर्त्ता से तुम वर चाहते हो तो तुम अज्ञानी हो, उपमन्यु ऋषि ने कहा कि वह सदा व्यक्त है मैं उस से ही मांगना चाहता हूं, वह ध्यान से अगम्य परमात्मा है वह ज्योति रूप परम तप सर्व स्वामि आदि भूत, सर्व व्यापी, तत्व ज्ञानिओं के उपास्य हैं उन्हों ने पहिले आकाश को अपनी सत्ता से व्याप्त कर ब्रह्मांड को बना ब्रह्मा जी को भी बनाया है ॥

हे इंद्र ! तुम को भी मैं उसी महादेव का कृपा पात्र समझता हूं, असुरों से पीड़ित देवता भी उसी की शरण में जाते हैं ब्रह्मा और आप सरीखे इंद्र भी जिस की उपासना करते हैं उन से बढ़ कर कौन है आप पधारिये या ठहरीये जैसी इच्छा हो ॥

इस प्रकार इन्द्र से कह कर मैं फिर चिन्ता में डूब गया कि इस का क्या कारण है जो महादेव मुझ पर दया नहीं

करते। इस प्रकार सोचते थोड़ा ही काल व्यतीत हुआ कि मैं क्या देखता हूं कि वह इन्द्र का गज अतीव सुंदर शुभ वरण सजा धना नंदीगण हो गया, और उस की पीठ पर हज़ार सूर्य्यों के समान प्रकाशमान् उमा महादेव साक्षात् विराज मान हैं ॥

हे राजन्! उस समय पितामह ब्रह्मा जी उनकी दाहनी ओर, शंख चक्र गदा पद्म धारी विष्णु भगवान् बाईं ओर और अग्नि के समान दे दीप्यमान स्कंधजी पार्वती के सन्मुख नियत थे, इसी प्रकार स्वयंभू आदि मनु इन्द्रादि देवता और अनेक रूप धारिणी देवियें भी वहां स्थित थीं ॥

इस प्रकार यह सब देव शिव जी महाराज के निकट वर्ती हो स्तुति करने लगे, ब्रह्मा जी ने सामवेद की रथंतर नाम ऋचा पढ़ कर शिवजी की स्तुति की और इन्द्र ने शतरुद्री का पाठ कर स्तुति की ॥

हे श्री कृष्ण जी ऐसे ऐश्वर्य्य युक्त शिवजी को देख मैंने भी महाराज की बड़ी स्तुति की ॥

बारहवां अध्याय

—:०:—

वासुदेव जी को वर प्राप्ती ॥

श्री कृष्ण जी बोले कि इस के अनन्तर बड़ी नम्रता से

मैंने शिवजी महाराज को प्रणाम कर बड़ी प्रसन्नता से यह वचन कहा कि हे महादेव भोला ! मैं आप के चरणों की भक्ति और दश हज़ार पुत्रों की याचना करता हूं। शिवजी बोले ऐसा ही हो, फिर जगज्जननी पार्वती ने कहा कि मैं भी तुम को ८ अभिष्ट वर देती हूं, तब मैंने बड़ी नम्रता से प्रार्थना की कि ब्राह्मणों पर क्रोध न करने वाले मातृ भक्त शांति चित् बुद्धिमान चतुर सौ पुत्र आप से मांगता हूं। उमा ने कहा ऐसा ही होगा। वरंच मैं धनधान्यादि की बाहुल्यता, ब्राह्मणों की उत्तम प्रीति, शरीर का सौंदर्य्य वरदान दे कहती हूं कि तेरे घर नित्य सात हज़ार अतिथि भोजन करेंगे ॥

इस प्रकार वर दे वह सब अन्तर्ध्यान हो गये ॥

तेरहवां अध्याय

तंडी ऋषि जी की अराधना और शिव जी के दर्शण ॥

उपमन्यु बोले कि हे कृष्ण जी ! सत्युग में तंडी नाम एक ऋषि हुये इन्हों ने समाधि और भक्ति द्वारा शिव जी की अराधना की जिस से महादेव जी के प्रत्यक्ष दर्शण हुये तब उस ने स्तुति की और बड़े हर्ष से बोला कि सांख्य मत वाले और योगी जन जिस परम प्रधान पुरुष अधिष्ठाता ईश्वर का सदैव ध्यान करते हैं और ज्ञानियों ने जिस की उत्पत्ति

तथा देवता ने भी जिस को सर्व श्रेष्ट माना है उस आत्मा आदि अंत से रहित निष्पाप ईश्वर की मैं शरण लेता हूं, ऐसा कह कर उस ऋषि ने रूपांतर रहित तपो मूर्ति अनुपम अचिंत्य सब के आदिकूटस्थ अविनाशी कला रहित कलाधारी निर्गुण सगुण रुप योगीयों का परमानंद मोक्षस्थान यम, इंद्र, अग्नि आदि देवताओं के उत्पत्ति स्थान शिवजी का ध्यान किया इस की अचल भक्ति और प्रेम से शिवजी प्रसन्न हो प्रकट हुये और ऋषि ने बड़े प्रेम से स्तुति की ॥

चौदहवां अध्याय

उपमन्यु कृत शिव सहस्रनाम और शिव सहस्र नाम का महात्म ॥

कृष्ण देव जी बोले कि हे तात! इस के अनंतर उस ब्रह्मर्षि ने हाथ जोड़ कर शिवजी के सहस्र नाम वर्णन किये और कहा कि मैं ब्रह्मा जी और अन्य ऋषियों से कहे हुये वेद वेदाङ्गोक्त नामों से परमेश्वर शिवजी की स्तुति करता हूं, मैं सत्य शुद्ध सर्व मनोरथों के दाता सब के आदि स्वर्ग के दाता सर्व हितकारी शुद्ध चैतन्य रुप सर्व व्यापी सनातन ब्रह्म शिवजी की स्तुति करता हूं ॥

हे यदुनंदन! तुम शिवजी के प्यारे और भक्त हो इस लिये तुम से कहता हूं सुनो ॥

शिवजी की विभूतियों का पूरा २ वर्णन बड़े २ सावधान लोग हज़ारों वर्ष में भी नहीं कर सकते इस का आदि अंत देवताओं ने भी नहीं पाया, हे माधव जी! उस के संपूर्ण गुणों को कोई भी वर्णन नहीं कर सकता फिर भी मैं महाराज की कृपा से यथाशक्य उन के गुणों का वर्णन करता हूं, हे श्री कृष्ण जी! ब्रह्मा जी ने उन के दश हज़ार नाम उच्चारण किये हैं उन में से मैंने यह सहस्र नाम दुग्ध में से माखन की भांति सार रूप निकाले हैं यह सब पापों के दूर करने वाले चारों वेदों से युक्त बड़े यत्न से सावधान बुद्धि वालों को धारण करने योग्य हैं ॥

हे कृष्ण जी! जो उस अविनाशी ईश्वर की निन्दा करता है वह पितरों और संतान सहित नरक गामी होता है इन नामों को श्रद्धा पूर्वक पढ़ने वाला परम गति को पाता है, शिवजी महाराज वेदों के भी वेद सर्वोत्तम मन बुद्धि वाणी से परे हैं नेत्रादि सब तेजों के भी तेज, शान्तों के भी शान्त, मोक्ष रूप हैं और वृत्ति रूप ज्ञानों का भी साक्षी रूप ज्ञान हैं यह देवताओं के भी देवता कल्याणों के भी कल्याण, कारणों के कारण शुद्ध ब्रह्म हैं इन्हीं से जीव उत्पन्न होकर फिर इन्हीं में लय होते हैं ऐसे शिवजी महाराज के एक हजार आठ नामों का वर्णन किया और कहा कि हे पुरुषोत्तम! इन के सुनने से सब मनुष्य अभीष्ट पदार्थों को प्राप्त करेंगे ॥

पंद्रहवां अध्याय

—:o:—

उपमन्यु आदि ऋषियों की शिव भक्ति, स्तुति और मनोकामना प्राप्ति का वर्णन ॥

वैशम्पायन बोले कि हे राजन्! इस के अनंतर महा योगी व्यास मुनि ने कहा कि हे पुत्र! तुम भी इस स्तोत्र का पाठ करो तब मैंने भी शिवजी की अराधना की और इसी के प्रताप से मैंने मनोवांछित फल को पाया ॥

इस के अनंतर सांख्य शास्त्र के रचयता कपिल मुनि जी बोले कि मैंने अनेक जन्मों तक उस सब के उत्पत्ति स्थान परमेश्वर की बड़ी भक्ति से पूजनादि किया जिस से प्रसन्न होकर शिवजी मुझे मिले ॥

इस के अनंतर चारुशीर्ष जी बोले हे राजन्! मैंने भी गौकर्ण तीर्थ में दश हज़ार वर्ष तक शिवजी की तपस्या की थी जिस से मुझे बड़े तेजस्वी पुत्र मिले ॥

फिर भगवान वाल्मीकि ऋषि ने कहा कि मुझे अग्नि होत्रि मुनियों ने शाप दिया था कि तुम ब्रह्म हत्या करने वाले होगे जिस से क्षण भर में मेरा शरीर बुद्धि वैसी होगई तब मैं शिवजी जी की शरण में गया और उन की कृपा से निष्पाप होगया ॥

फिर सूर्य के समान प्रकाशमान परशुराम जी बोले कि मैंने अपने वेद पाठी बड़े महात्मा भाईयों के मर जाने से दुखित

हो शिवजी की शरण ली तो उन्हों ने प्रसन्न होकर मुझे फरसा और दिव्य अस्त्र दिये और कहा कि तुम को कोई पाप नहीं होगा ॥

विश्वामित्र बोले कि मैं क्षत्रि था मैं ने भी ब्राह्मण बनने के लिये शिवजी की अराधना की और कृपा से दुष्प्राप्य ब्राह्मण वर्ण पाया ॥

देवल ऋषि बोले कि जब मेरा धर्म इन्द्र के शाप से नष्ट हो गया तो मैंने भी शिवजी की कृपा से उत्तम धर्म को प्राप्त किया ॥

हे युधिष्ठिर ! इस प्रकार वह शिवजी सर्व रक्षक हैं। मन, वाणी और कर्म्म से अचिंत्य हैं मैंने भी शिवजी की फिर अराधना की तो उन्हों ने वर दिया कि युद्ध में तुम अजेय होगे ॥

जैगोषव्य ऋषि बोले कि मुझ पर भी महाराज थोड़ी सी भक्ति से प्रसन्न हुये थे, फिर गर्ग जी बोले कि मैंने दयालु शिवजी की सरस्वती के तट पर मानसी पूजन की जिस से महाराज ने मुझे चतुषष्ठी अंग युक्त ज्ञान और एक हज़ार मेरे सदृश ब्रह्म वादी पुत्र दिये और मेरी आयु भी एक लाख वर्ष की कर दी ॥

परशुराम जी बोले कि वेद रूप लक्ष्मी का स्थान ब्रह्म ज्ञानी एक पुत्र की प्राप्ती की कामना से मैं ने शिवजी की अराधना की तब महाराज ने प्रसन्न हो कर कहा कि तेरी भक्ति के प्रभव से तेरे गृह में कृष्ण जी नाम का पुत्र होगा

मांडव्य ऋषि बोले कि जब मैं चोरी न करता हुआ भी शूली पर चढ़ाया गया तो मैं ने शिवजी की शरण ली तब शिवजी ने मुझे वर दिया कि तूं शूली से बचेगा और एक अर्बुदवर्ष तक जीता रहेगा और तुम को शारीरिक मानसिक कोई व्याधि नहीं होगी और तुम्हारा अक्षय वास स्वर्ग में होगा ॥

गालव ऋषि बोले कि मैं गुरु विश्वामित्र की आज्ञा से पिता के दर्शण को आया आगे पिता जी का देहांत हो चुका था, माता ने मुझे देख रो कर कहा कि हे पुत्र ! अंत समय में तुम पिता के दर्शण नहीं कर सके इन वचनों को सुनते ही मैं ने शिवजी की अराधना की तो महाराज ने वर दिया कि हे पुत्र ! तुम माता पिता के सहित मृत्यु से रहित होंगे, घर जाओ तुम्हें पिता के दर्शण होंगे यव घर में जा महां पवित्र प्रज्वलित यज्ञ कुंयड में से निकलते अपने पिता को देखा और उन्हों ने मेरी ओर देखा मैं ने उन के चरणों पर प्रणाम की तब उन्हों ने बड़े स्नेह से मुझे गले से लगाया ॥

उपमन्यु ऋषि ने कहा कि हे श्रीकृष्ण ! पापात्मा, तामसी, राजसी प्रकृति वाले मनुष्य शिवजी को प्राप्त नहीं हो सकते, चित्त से शिवजी के ध्यान करने वाले सब पापों से छूट जाते हैं, शिवजी प्रसन्न हो कर त्रैलोकी का राज्य भी देने को समर्थ हैं सब पापों को भस्म कर सकते हैं सब देवता उसी आनंद स्वरूप शिव से बने हुये हैं जिस से आत्मा या विराट का योगी जन ध्यान करते हैं वह भी यही शिव हैं ॥

हे श्री कृष्ण जी ! जो मनुष्य एक मास नित्य श्रद्धा

भक्ति से इस स्तोत्र का पाठ करता है इस की सम्पूर्ण कामनायें पूर्ण होती हैं ॥

सोलहवां अध्याय

—०—

ब्रह्म ज्ञान प्राप्ति के विषय में ॥

युधिष्ठिर जी बोले कि हे भीष्म पितामह ! ब्रह्म को जान कर अब मैं उस के ज्ञान साधन रूप धर्म्म को पूछना चाहता हूं कृपा करके आप यह भी वर्णन करें कि किस २ धर्म्म कार्य्य में स्त्री का संग होना आवश्यक है, भीष्म जी बोले कि इस विषय में अष्टावक्र और दिशाओं का पूर्व इतिहास कहिता हूं सुनो ।

पूर्व काल में अष्टावक्र ऋषि ने महात्मा वदान्य ऋषि से जाकर प्रार्थना की कि आप इस सर्वांग सुन्दरी सकल गुण सपन्न अपनी कन्या सुप्रभा का दान मुझ को दें ॥

तब ऋषि ने अष्टावक्र से कहा कि मैं यह कन्या तुम को दूंगा परन्तु तुम पहिले उत्तर दिशा की यात्रा करो वहां तुम को वृद्धा तपस्विनी दीक्षा में अनुष्ठित देवी के दर्शन होंगे तुम उस के दर्शन कर के लौटोगे तो मैं उस कन्या का विवाह तुम से कर दूंगा ॥

अष्टावक्र ने कहा बहुत अच्छा ॥

हे राजन् ! तब अष्टावक्र जी वहां से चल कर उस पूर्वोक्त

पर्वत पर पहुंच रात्रि काल वहीं विश्राम कर प्रातः होते ही स्नान संध्या और रुद्र जी का ध्यान कर वहीं से कैलाश पर्वत पर जाकर कुवेर जी के सुन्दर द्वार पर पहुंचे, कुवर जी ने इन का बड़ा मान किया और अपने साथ भीतर ले जा इन की पाद्यार्घादि से पूजन की और अपसराओं की नृत्य दिखलाई ॥

तब कुवेर जी ने कहा कि हे विप्रवर! एक दिव्य दिन व्यतीत होगया है यदि इच्छा हो तो यह आनन्द इसी प्रकार होता रहे ॥

अष्टावक्र बोले कि मैं आप से अतीव प्रसन्न हूं जो आपने मेरी इतनी स्वागत की, हे धनाधीश! पिशाच काम बड़ा प्रबल है जो मैं वदान्य ऋषि की कन्या के लिये दिशा के अंत तक जाऊंगा। अब आप आज्ञा दें। वहां से चल कर कैलाश पर्वत पर शिवजी के निवास स्थान पर पहुंचे। फिर उत्तर की ओर चले और मार्ग में सुवर्ण रत्न से शोभित कई स्थानों को जो कि कुवेर के स्थान से भी उत्तम थे देख बड़े प्रसन्न हुये, वहां से चल कर मंदाकिनी के किनारे पर पहुंच गये वहां एक मंदिर को देख कर पुकारे कि इस मंदिर का स्वामी मुझ अतिथि को निवास स्थान दे।

तब भीतर से परम सुन्दरी सात कन्या निकलीं और इन को भीतर ले गईं वहां आगे एक वृद्धा पलंग पर बैठी थी ॥ उस ने उठ कर कहा कि विप्र! आप का कल्याण हो इन्हों ने भी प्रणाम की और कन्याओं से कहा आप सब चली जायें

मैं इसी वृद्धा के पास ठहरूंगा, यह सुन सब कन्यायें अष्टावक्र की परिक्रमा कर बाहर चली गईं, फिर अष्टावक्र जी ने वृद्धा से कहा कि आप भी अब शयन करें रात्री बहुत व्यतीत हो गई है यह सुन कर वह भी एक अन्य शय्या पर सो गई ॥

इस के पीछे शीत के बहाने से कांपती हुई एक स्त्री अष्टावक्र जी की शय्या पर आगई और दोनो भुजाओं से ऋषी को आलिंगन किया, परन्तु ऋषि को काष्ठ पाषाण के सदृश देख महा दुःखी हो ऋषी से बोली कि हे ब्राह्मण ! पुरुष को पाकर स्त्रियों का धैर्य स्वाधीन नहीं रहता, मैं काम से आतुर हो आप के पास आई हूं आप प्रसन्नता से मुझे गले लग कर मेरी इच्छा पूर्ण करो यह मेरा धन ऐश्वर्य और यह शरीर सब आप का है आप के सब मनोरथ पूर्ण करूंगी मैं सदा आप की आज्ञा कारी रहूंगी स्त्री को जैसा पुरुष का संग प्यारा है वैसा और कोई पदार्थ प्यारा नहीं, मैं काम से पीड़ित हूं काम से पीड़ित स्त्रियें जलती आग से पार हो जाती हैं, नदियों को चीर जाती हैं आप मेरी पीड़ा को दूर करें ॥

अष्टावक्र बोले हे कल्याणिनी ! मैं किसी दिशा में भी अन्य की स्त्री के साथ भोग नहीं कर सकता यह महा पाप है तुम इस कामना को छोड़ दो इस में संदेह नहीं कि मैं विवाह की इच्छा रखता हूं परंतु मैं शपथ करके कहता हूं कि मैं विषय भोग की इच्छा से विवाह कराना नहीं चाहता केवल सन्तान उत्पत्ति के लिये मेरा यह विचार है हे कल्याणिनि !

तुम धर्म्म को विचार कर इस कार्य से बचो ॥

स्त्री बोली कि हे ब्राह्मण ! कामातुरा स्त्रियें पाप, पुण्य, माता, पिता, भ्राता, पति आदि को भी नहीं जानतीं, पुरुष संग को चाहने वाली अपनी कुल का नाश कर देती हैं ॥

यह सुन अष्टावक्र जी ने कहा कि अब तुम चुप हो जाओ, प्रीति से इच्छा होती है मैं प्रीति से रहित हूं, तब उस ने कहा कि भगवन् देश काल के अनुसार तुम में प्रीति उत्पन्न होगी आप यहीं ठहिरें तो देखूं कैसे प्रीति को अनुभव तुम नहीं करते, तब अष्टावक्र ने कहा कि जब तक आप कहें मैं ठहिरता हूं ॥

अष्टावक्र जी उसे परम वृद्धावस्था में देख अतीव विस्मय हुये और विचार करने लगे कि यह यहां की देवी है इतने में अरुणोदय हो गया तब स्त्री ने कहा कि आप के लिये क्या २ वस्तु लायें, ऋषि ने कहा कि मेरे स्नान के लिये जल लावें मैं स्नान सन्ध्या करूंगा ॥

सतारहवां अध्याय

—:०:—

अष्टावक्र का स्त्रियों से संवाद ॥

भीष्मजी बोले हे राजन् ! तात्काल उस स्त्री ने दिव्य तेल ऋषि की आज्ञा से उनके शरीर पर मर्दन किया और उत्तम स्नानगार में लेजा सुख दायक उत्तम जल से मल मल कर उन

को स्नान कराया और उत्तम आसन बिछा दिया, अष्टावक्र जी पूजन में बैठ गये ॥

फिर स्त्री ने अमृत के तुल्य अनेक स्वादु भोजन परोस ऋषि के आगे रख दिये जिन का अष्टावक्रजी ने आनंद से भोजन किया ॥

यह दिन यूहीं व्यतीत हुआ और फिर रात्रि आगई तब उस स्त्री ने कहा कि आप सोजायें, हे राजन् ! तब ऋषि और वह स्त्री भिन्न २ शय्याओं पर सो गये ॥

आधी रात्रि के अनंतर फिर वह स्त्री अष्टावक्र के पास आई तब अष्टावक्र ने कहा कि हे कल्याणिनि ! मेरा चित्त दूसरे की स्त्री के लिये कभी चलायमान नहीं होता आप चली जायें। तब वह स्त्री बोली कि मैं किसी की स्त्री नहीं मैं स्वतंत्र हूं, इस लिये मुझे और आप को कोई दोष नहीं, ऋषि ने उत्तर दिया कि स्त्रियें कभी स्वतंत्र नहीं यह ब्रह्माजी का कथन है ॥

फिर वह स्त्री बोली कि हे वेद पाठिन् ! मेरे इतनी प्रीति करने पर भी तुम मेरी प्रार्थना को नहीं मानते आप को पाप होगा। ऋषि बोले कि काम क्रोधादि उसी पुरुष को ग्रसते हैं जो इनकी इच्छा करता है मैं अपने धैर्य्य में दृढ़ हूं तू अपनी शय्या पर जा कर सो रह ॥

स्त्री ने कहा हे वेद पाठिन्! मैं आप को प्रणाम करती हूं आप मुझ पर कृपा करें। मैं अपने शरीर की शपथ करके कहिती हूं कि मैं किसी की स्त्री नहीं मैं स्वतंत्र हूं आप मेरा हाथ पकड़ें और मुझ से विवाह कर लें ॥

अष्टावक्र बोले कि तीनो लोकों में कोई स्त्री स्वतंत्र नहीं, तुम स्वतन्त्र किस प्रकार हो सकती हो बाल्यावस्था में पिता व युवा में पति और वृद्धावस्था में पुत्रों के आधीन स्त्रियें होती हैं ॥

स्त्री ने कहा कि मैं बाल ब्रह्मचारिणी हूं आप मुझे स्वीकार कीजिये मैं अभी कन्या हूं ॥

अष्टावक्र जी सोचने लगे कि जैसे मैं कामातुर हूं वैसे ही यह वृद्धा अपनी सामर्थ से षोड़श वर्ष की परम सुंदरी काम से पीड़ित है यह कहीं उसी ऋषि से ता परीक्षित नहीं हो रहा कुच्छ भी हो मेरे लिये धर्मपथ को त्यागना उचित नहीं॥

अठारहवां अध्याय

—:o:—

अष्टावक्र से उत्तर दिशा देवी का उपदेश ॥

अष्टावक्र बोले कि तुम अपना रूप किस प्रकार बदलती हो वर्णन करो स्त्री बोली कि हे ब्राह्मण ! मैंने तेरी दृढ़ता देखने के लिये यह परीक्षा की है तुम परीक्षा में उत्तीर्ण हुये मैं उत्तर दिशा की भवानी देवी हूं स्त्रियों को वृद्धावस्था में भी काम पीड़ित करता है आप पर इन्द्रादि सब देव प्रसन्न हैं जिस काम के लिये कन्या के पिता ने तुम को भेजा है वह सब उपदेश मैंने तुम को दिया अब तुम आनंद से लौट जाओ तुम उस ऋषि कन्या को पाकर उत्तम सन्तान पाओगे ॥

हे राजन्! तव भवानी को प्रणाम कर अष्टावक्र जी घर में आ इष्ट मित्रों को साथ ले उस ऋषि के पास गये ऋषि ने पूछा कि आपने वहां क्या २ देखा अष्टावक्र ने सब व्योरा कह सुनाया और ऋषि ने कन्या दान कर उस को देदी॥

उन्नीसवां अध्याय

—:०:—

पात्र किसे कहते हैं, दान के पात्र कौन हैं और पात्र को दान देने के फल का वर्णन॥

युधिष्ठर जी बोले हे महाराज! सनातन वेद पाठियों ने पात्र किसे माना है ब्रह्मज्ञानी, ब्रह्मचारी, सन्यासी या ब्राह्मणों को॥

भीष्म जी बोले कि धर्म निष्ठ चाहे ब्रह्मचारी, सन्यासी अथवा गृहस्थी ही क्यों न हो दान देने का पात्र है क्योंकि यह तीनों तपस्वी हैं॥

हे भीष्म जी! देव कर्मों में ब्राह्मण की परीक्षा नहीं करनी चाहिये परन्तु पितृ कर्म में परीक्षा करनी लिखी है इस का क्या कारण है?

भीष्म जी बोले कि ब्राह्मण हव्य को सिद्ध नहीं कर सकते यह देवताओं की कृपा से ही सिद्ध होते हैं हे भरतर्षभ! मार्कंडेय प्रभृति ऋषियों ने श्राद्ध क्रिया में ब्रह्मवादियों को ही ब्राह्मण माना है और कुलीन वेदवित यज्ञाभ्यासी, दयावान, सत्य

वक्ता, सत्य प्रतिज्ञ ब्राह्मण पात्र होता है हे राजन्! इस में एक प्रसंग पृथ्वी, काश्यप ऋषि, अग्नि देवता और मार्कंडेय ऋषि का वर्णन करता हूं सुनो ॥

पृथ्वी बोली कि पठन पाठन और यज्ञ द्वारा निर्वाह करने वाले मनुष्य के संपूर्ण पाप नष्ट होजाते हैं, काश्यप जी बोले छे अंगों सहित सब वेद, सब शास्त्र और पुराण शील रहित ब्राह्मण को पात्र नहीं बना सकते ॥

अग्नि देवता बोले कि दया और कर्म्मों से रहित मनुष्य नष्ट हो जाता है, मार्कंडेय जी बोले कि सहस्रों अश्वमेध यज्ञों की यदि सत्यता से तुलना की जाये तो सत्यता का ही पल्ला भारी होगा ॥

युधिष्ठिर जी बोले कि दान लेने से ब्रह्मचारी का व्रत नष्ट हो जाने से श्राद्धादिक कर्म दूषित होते हैं या नहीं, हे पुत्र! जिन को गुरु जी ने १२ वर्ष ब्रह्मचर्य्य धारण करने की आज्ञा दी है वह वेद पार्ग ब्राह्मण जो भोजन करते हैं उन्हीं का व्रत लोप होता है अन्य का नहीं, हे तात! ज्ञानी लोग धर्म्म की बड़ी प्रशंसा करते हैं उस का वर्णन कीजिये ॥

हे राजन्! हिंसा से रहित सत्यता, अक्रोध, दया, शांति और सरलता यह धर्म्म के चिन्ह हैं, हे राजन्! जो मनुष्य धर्म्म उपदेश करते हैं परन्तु स्वयं उस पर आचरण नहीं करते वह धर्म्म सैंकरेता में संयुक्त होते हैं, और जो ऐसे पाखंडियों को दान देता है वह नरक भोग कर दश वर्ष तक विष्ठा भक्षण

करता है, जो मांसाहारी चर्म्म विक्रेता और निंदक ब्राह्मण को दान देता है वह उस ब्राह्मण सहित नरक गामी हो विष्ठा खाता है ॥

हे राजन्! इस लोक में जो अज्ञानी विश्वेदेव संबंधी और अतिथियों के योग्य भोजनादि को ब्रह्मचारी और सन्यासी को नहीं देते वह अशुभ लोकों में जाते हैं ॥

हे पितामह! कृपा पूर्वक ब्रह्मचारी के धर्म्म और कर्तव्य से बढ़ कर कोई कर्म्म है, हे तात! ब्रह्मचर्य्य से मांस मदिरा का त्याग विषयों से इन्द्रियों को रोकना, मर्य्यादा पालन बढ़ कर हैं ॥

धर्म्म, अर्थ और काम को किस २ समय सेवन करना चाहिये हे पुत्र! दिन के तीन भाग होते हैं १म में अर्थ का सेवन करे २य में धर्म्म और ३य में काम का सेवन करे, सब जीवों से सत्य वर्ताव मृदु भाषण करे और गुरु ब्राह्मण की पूजन करे, हे पुत्र! राजा के लिये मिथ्या भाषण राजाओं से आभ्यन्तरी शत्रुता और गुरु का अप्रिय यह तीनों कर्म्म ब्रह्म हत्या के तुल्य हैं, हे राजन्! राजा पर अस्त्र का चलाना, गौ को मारना, (हवन का न करना) वेदों का अनाभ्यास ब्राह्मण को दान न देना, यह सब कर्म्म ब्रह्महत्या के समान हैं ॥

युधिष्ठर बोले कि हे पितामह! किस प्रकार के वेदपाठी साधु हैं, किन को देना सफल है, और किस प्रकार के मनुष्य का अन्न खाना योग्य है, भीष्म जी बोले क्रोध रहित,

धर्म्मरत, सत्यवक्ता, शान्तचित्त, वेदपाठी ब्राह्मण साधु हैं इन को देना बड़ा पुण्य है, तथा निरहंकारी, क्षमा शील, जितेंद्रिय, सब शुभचिंतक सब के मित्र ब्राह्मण को देना बड़ा शुभ है, निर्लोभ पवित्रात्मा, पंडित, लज्जावान्, निज धर्म्म निष्ठ ब्राह्मण को दान देना सफल है, हे राजन्! सांगोपांग वेदवित् मांस मदिरा से रहित मर्य्यादा से वेदों का पढ़ने पढ़ाने, यज्ञ करने कराने और दान में जो ब्राह्मण प्रवृत्त है वही दान पात्र है ॥

बीसवां अध्याय

--:०:--

धर्म्म, स्वर्ग और नरक वर्णन ॥

हे पितामह! श्राद्ध, देव कर्म्म और पितृ कर्म में ऋषियों ने क्या २ करना लिखा है ॥

भीष्म जी बोले कि शौच दृढ़ आचारी हो मनुष्य दिन के पूर्व भाग में देव कर्म्म करे, तृतीय भाग में पितृ कर्म्म और मध्यान्ह में सब को भोजनादि दे। हे पुत्र! कुसमय को दान, उल्लंघन किया हुआ जूठा बासी और रजस्वला से देखा हुआ अन्न राक्षसों का भोजन होता है देव पितृ कर्म में उच्छिष्ट और अतिथि और बालकादि को न देकर आप ही खाया हुआ अन्न राक्षसी भोजन होता है ॥

पंक्ति बाहर निर्बुद्धि उन्मत, श्वेतकुष्टी, नपुंसक, वैद्य, पुजारी, पाखंडी, रसविक्रेता, रागी, जासूस, बाजा बजाने वाले, नर्तक,

पहिलवान, शूद्रों को यज्ञ कराने वाला, शूद्रा स्त्री का स्वामी ब्राह्मण श्राद्ध के भोजन का पात्र नहीं है । हे राजन् ! श्रौत स्मार्त कर्म से रहित मजूरी लेकर शवों को उठाने वाला और नाते गोदी लिया दोहता, व्याज लेने वाला, पशु विक्रेता, स्त्री के वशीभूत, वेश्या का पति और जो संध्या वन्धन से रहित ब्राह्मण है इस को श्राद्ध और दैव कर्म्म में कभी भोजन नहीं खिलाना चाहिये ॥

हे राजन् ! खेती करने वाला, सावित्री का ज्ञाता, क्रियावान्, गुणवान् और कुलीन ब्राह्मण यद्यपि युद्ध में क्षत्रिय धर्म को पालन कर रहा हो वह निमंत्रण के योग्य है परन्तु वैश्य वृद्धि रखने वाला श्राद्धपात्र नहीं । हे राजन् ! वेद पाठी अग्नि होत्री तीन काल में गायत्री का जप करने वाला भिक्षा व्रति वाला, निर्धनता के कारण दान न करने वाला ब्राह्मण भी श्राद्ध के भोजन का पात्र है ॥

हे राजन् ! जो धन वेद के वेचने से, मीठी २ वातों से और झूठी शपथ से प्राप्त हो वह श्राद्ध में व्यय करना उचित नहीं ॥

अब दाता और दान के गृहीता के धर्म्म वर्णन करता हूं सुनो ॥

किसी वस्तु के लिये झूठ बोलने वाले ब्राह्मण को जितना दोष होता है क्षत्रिय को उस से चौगुणा, वैश्य को आठ गुणा और शूद्र को सोलह गुणा दोष होता है ॥

ब्राह्मण को प्रथम नेवता देने वाले के घर भोजन करना

चाहिये दूसरे के नहीं, जो ब्राह्मण दूसरे के करता है वह पातकी है, जो सूतक पातक रखने वाला ब्राह्मण पर घर में भोजन करता है उसे भोगों की झूठा शपथ करने का पाप होता है ॥

युधिष्ठर जी ने फिर पूछा कि पितृ कृत का भोजन कैसे ब्राह्मणों को खिलाना चाहिये ॥

भीष्म जी बोले कि जिस ब्राह्मण के घर एक ही समय का भोजन हो जो वेदोक्त कर्मों के अनुष्ठान में लगा हो उसे श्राद्ध भोजन कराना उचित है और जो वेदों के पढ़ने और पढ़ाने, यज्ञ करने कराने, क्षुधा से पीड़ित ब्रह्मचारी को देने से बड़ा पुण्य है ॥

हे राजन्! अब नरक और स्वर्ग दोनों को वर्णन करता हूं सुनो ॥

पर स्त्री को हरने वाला, उस से भोग करने कराने वाला, दूसरे के धन को चुराने वाला. नाश करने वाला, पर निन्दा करने वाला, छबील, बावली, तड़ाग को तोड़ने वाला, अनाथ भयभीत और वृद्धों को छल से लूटने वाला उत्तम मर्यादा को तोड़ने वाला, द्यूत खेलने वाला, हिंसा करने वाला, नौकरों से सेवा करा कर फिर तन्खाह न देने वाला, देव, पिता, अतिथि, बालक और वृद्धों को खिलाये बिना खाने वाला और वेद विक्रेता यह सब नरक गामी होते हैं ॥

हे राजन्! सब कार्य्यों मे जो दैव की प्रधानता मानते हैं, ब्राह्मणों की आज्ञा को पालते हैं, दान, तप, सत्यता क्षमावान् पंडित सर्व हिंसा से निवृत्त और जो सब की रक्षा के स्थान हैं वह स्वर्ग गामी हैं ॥

हे राजन् ! दान करने वाले, मार्गों में कूयें बावली और छबीलें लगाने वाले, भूखे को भोजन प्यासे को शीतल जल पिलाने वाले स्वर्ग गामी हैं ॥

इक्कीसवां अध्याय

अहिंसक को ब्रह्महत्या का दोष ॥

युधिष्ठिर जी ने प्रार्थना की कि हे पितामह ! हिंसा न करने वाले को ब्रह्म हत्या का पाप किस कार्य्य से होता है भीष्म जी बोले कि हे राजन् ! यहीं प्रश्न मैंने व्यास जी से किया था, उन्हों ने जो उत्तर दिया था वह मैं तुम को सुनाता हूं, हे राजन् ! व्यास जी ने कहा था कि जो पुरुष ब्राह्मण को नेवता दे भोजन नहीं देता उसे ब्रह्म हत्या का पाप होता है वेद वेदांगावित् ब्राह्मण की उपजीविका के हरने वाला, गौओं के घास और जल का नाश करने वाला, वेद तथा शास्त्रों के आशय को न समझ कर उन पर दोष लगाने वाला ब्रह्मघाती है ॥

जो अपनी कन्या को योग्य वर नहीं देता, अंधे, लंगड़े लूले के धन को चुराता है या आश्रम, वन, ग्राम को अग्नी लगाता है वह भी ब्रह्म घाती होता है ॥

बाईसवां अध्याय

—०—

तीर्थों के वर्णन में ॥

युधिष्ठर ने प्रार्थना की कि हे महाराज ! अब आप कृपा पूर्वक मूल सहित तीर्थों का वर्णन करें ॥

भीष्म जी बोले कि अंगिरा ऋषि और गौतम ऋषि का संवाद वर्णन करता हूं सुनो । गौतम जी ने पुच्छा कि तीर्थों में स्नान करने से क्या फल होता है अंगिरा ऋषि बोले कि निर्मल वितस्ता, चंद्रभागा आदि नदियों में ७ दिन विधि पूर्वक स्नान करने से मनुष्य मुनियों की गति को पाता है, जो नदियें कशमीर सें होती हुई आती हैं उन में और सिंधु नद में स्नान करने से स्वर्ग मिलता है पुष्कर, परभास आदि तीर्थों में और देविका में स्नान कर मनुष्य परम सुख को पाता है । कनखल, हरिद्वार, कुशावर्त, विल्वकेश, नीलपर्वत में स्नान करने से मनुष्य निष्पाप हो स्वर्ग को जाता है. हिंसा से रहित, क्रोध को जीतने वाला, सत्य संकल्प ब्रह्मचारी अपाहृद तीर्थ में स्नान कर अश्वमेध यज्ञ के फल को पाता है ॥

सप्त गंगा, त्रिगंगा और इन्द्र मार्ग में जो पितरों का तर्पण करता है अग्नि होत्रि पवित्र आत्मा महा आश्रम तीर्थ में स्नान कर एक मास तक जो निराहार व्रत करता है वह एक ही मास में सिद्धि को पाता है। बलाका तीर्थ, कन्या, कूप और देवता तीर्थ आदि में तथा विपाशा तीर्थ में स्नान

करने से उत्तम गति को पाता है, नर्मदा, कावेरी, तुगं भद्रा आदि २ तीर्थों में जो विधि पूर्वक व्रत दान और ब्रह्मचर्य्य आदि का सेवन करता है वह पापों से छूट कर स्वर्ग के सुखों को पाता है, तथा अपनी मनोकामनाओं को पूर्ण कर देवताओं के लोकों को जाता है वरंच देवताओं से भी पूजा जाता है ॥

प्रभास क्षेत्र में अमावस्या के दिन समाधि लगाने वाला एक ही रात्रि में सिद्धि को पाकर अविनाशी हो जाता है, हिमालय पर्वत पर वेदान्त का ज्ञाता जो ब्राह्मण शरीर को त्यागता है वह शुद्ध सनातन ब्रह्म लोक को जाता है ॥

हे राजन्! जिन तीर्थों पर पहुंचना कठिन है जो उन का मानसिक ध्यान करके उन में मानसिक स्नान करता है उस को स्नान का फल मिलता है ॥

तेईसवां अध्याय

—:o:—

भीष्म जी के पास अत्रि आदि ऋषियों का आना, पांडवों ने उन का पूजन करना ॥

वैशम्पायन जी बोले, अत्रि, वशिष्ठ, भृगु, पुलस्त्य प्रभृति बहुत से ऋषि भीष्म पितामह जी के दर्शनों के लिये वहां आये, इन को आते देख युधिष्ठिर ने विधि पूर्वक सब का पूजन किया और वह सब भीष्म पितामह जी के निकट सुन्दर आसनों पर बैठ गये ॥

भीष्म जी ने सब को मानसिक दंडवत प्रणाम की, ऋषियों ने नाना प्रकार की कथायें भीष्म जी को सुनाई जिन को श्रवन कर भीष्म जी बड़े प्रसन्न हुये ॥

हे राजन्! इस प्रकार भीष्मजी को कथायें सुना कर सब ऋषि चले गये, फिर युधिष्ठर ने प्रश्न किया कि महाराज! कौन से देश, नगर, पर्वत, आश्रम और नदियें महा पुण्य कारी हैं ॥

भीष्मजी ने उत्तर दिया कि हे राजन्! इस विषय में शिलोञ्छ वृत्ती एक ब्राह्मण और सिद्ध का प्रश्नोत्तर कहता हूं सुनो, एक सिद्ध शिलोञ्छ वृत्ति एक गृहस्थी के घर में आया, तब गृहस्थी ने उससे यही प्रश्न किया था, जो तुम ने मुझ से किया है, सिद्ध ने उत्तर दिया कि नदियों में उत्तम भागीरथी जिन देशों के बीच में होकर जाती है वह देश तथा उस देश के नगर, पर्वत और आश्रम महा फल के देने वाले हैं, गंगाजी के यथार्थ सेवन से जो गति मिलती है वह तप ब्रह्मचर्य्य यज्ञादि से भी नहीं मिलती, गंगा स्नान करने वाले स्वर्ग से फिर नहीं गिरते, गंगा स्नान से पूर्व जन्म जन्मांतर कृत पाप नष्ट हो जाते हैं, जब तक मनुष्य की अस्थियें गंगा जल में रहती हैं वह उतने ही हज़ार वर्ष स्वर्ग में रहता है, जैसे चंद्र विना रात्रि, पुष्पों से रहित वृक्ष, धर्म ज्ञान से रहित सब आश्रम, सूर्य्य से रहित आकाश, पर्वतों से रहित पृथ्वी और वायु से रहित अन्तरिक्ष प्रकाश रहित होता है वैसे ही गंगा जी से रहित देश अप्रकाशित होते हैं ॥

गंगा जल के पान से वह फल मिलता है जो चंद्रायण व्रत करने वाले को होता है गंगा स्नान से पाप भस्म हो जाते हैं ॥

हे ब्राह्मण! नीच प्रकृति नम्रता शून्य पापरत जो मनुष्य हैं उन का उद्धार करने वाली गंगा जी ही हैं, जिस प्रकार सब लोकों में ब्रह्म लोक श्रेष्ठ है वैसे ही सब नदियों में श्रेष्ठ गंगा नदी है ॥

इस लोक में काय वाक् और मन द्वारा किये पाप पतित पावनी गंगा जी के दर्शनों से नष्ट होजाते हैं, गंगा जी में स्नान करने वाले मनुष्य सात पूर्वक और सात परे के पुरुषों को तार कर उन से भी पर पितरों को तारते हैं, जो मनुष्य अपने जन्म को सुफल करना चाहें वह श्री गंगा तट पर देवता और पितरों का तर्पण किया करे, जो मनुष्य समर्थ होकर भी श्री गंगा जी का दर्शन नहीं करते वह इस लोक में मृतक, लंगड़े और जन्म के अंधों के समान हैं ॥

यह महा पवित्र आकाश से गिरने वाली गंगा तीनों लोकों को तारने वाली है, जिस प्रकार पूर्ण चन्द्रमा के देखने से आनन्द होता है उसी प्रकार स्वर्ग पृथ्वी और पाताल में वर्तमान श्री गंगा जी के देखने से जीव धारियों को आनन्द होता है ॥

राजा भस्म के वृहत भूति पुत्रों को स्वर्ग में पहुंचाया इसी से श्री गंगा जी की शुभ कीर्ति लोकों में प्रसिद्ध हुई, श्री गंगा इस लोक में सम्पूर्ण कामनाओं को देने वाली है और स्वर्ग आदि वरंच ब्रह्म लोक के देने हारी है ॥

स्वर्ग से गंगा जी मेरू पर्वत पर उतरी और शिवजी ने

धारण किया हे राजन्! कठिन तपस्या करके भागीरथ राजा गंगा जी को लाये इसी लिये, इस का नाम भागीरथी है ॥

भीष्म जी बोले कि इस प्रकार उपदेश कर वह सिद्ध तो चले गये और उस ब्राह्मण ने भी श्रद्धा और भक्ति से गंगा जी की शरण ली और सिद्धि को पाया, हे राजन्! तुम भी गंगा जी का सेवन करो शुभ गति पाओगे ॥

चौबीसवां अध्याय

—:o:—

युधिष्ठर ने ब्राह्मण बनने के कर्मों को पूछना ॥

युधिष्ठर बोले कि हे भीष्म जी! जिस कर्म से मनुष्य ब्राह्मण बनता है वह आप मुझ से कहें ।

भीष्म जी बोले कि हे राजन्! क्षत्रिय आदि तीनों वर्णों से ब्राह्मण वर्ण पान महा कठिन है क्योंकि सब वर्णों में ब्राह्मण वर्ण सर्व स्रेष्ट है, हे तात्! बड़ी सी योनियों में बारम्बार घूमता हुआ मनुष्य किसी जन्म में आकर ब्राह्मण वर्ण में जन्म लेता है ॥

इस विषय में एक प्राचीन इतिहास मतंग और गर्दभी कहिता हुं सुनो ॥

प्राचीन काल में सर्व गुण संपन्न एक ब्राह्मण का पुत्र मतंग नाम था, एक दिन वह पिता की आज्ञा से ईंटें लाने के लिये गर्दभी रूप खचरों को जोड़ कर गाड़ी पर चढ़ा और उस

ने खच्चर को उस की माता के सन्मुख चाबुकों से घायल किया, गर्दभी अपने पुत्र को पिटता देख उस से बोली कि हे पुत्र ! त शोच न कर चांडाल गाड़ी पर सवार है यदि यह ब्राह्मण होता तो काहे को तुम को मारता ॥

यह अपवाद वचन सुन मतंग ने गाड़ी से उतर गर्दभी से कहा कि हे गर्दभी ! मुझ को तुम ने चांडाल कैसे कहा इस का सब हेतु मुझ से कहो ॥

गर्दभी बोली कि तुम शूद्र नाई से ब्राह्मणी के घर चांडाल उत्पन्न हुये हो, इस लिये तुम ब्राह्मण नहीं हो, यह सुन वह घर को लौट आया उसे आता देख पिता ने कहा कि मैंने तुम को यज्ञ के एक बड़े कार्य्य के लिये भेजा था, तु लौट क्यों आया, क्या तुम अपना नाश चाहते हो ॥

मतंग ने कहा कि जो पुरुष चांडाल जाति का है और जिस की यह माता है उस की भलाई कैसे हो सकती है । हे पिता यह गर्दभी मुझ को शूद्र से उत्पन्न हुआ बतलाती है मैं वन में तपस्या करने को जाऊंगा ॥

हे राजन् ! पिता से यह कह कर मतंग वन में जा घोर तपस्या में लग गया, इस प्रकार घोर तपस्या में प्रवृत्त मतंग को इन्द्र ने आकर कहा कि हे मतंग ! तुम संसार के भोगों को छोड़ कर ऐसी घोर तपस्या में क्यों लगे हो, तुम वर मांगो मैं तुम को वर दूंगा ॥

मतंग ने प्रार्थना की कि मैं ब्राह्मण वर्ण की प्राप्ति के लिये तप कर रहा हूं आप मुझे ब्राह्मण बनादें यह सुन इन्द्र

कहा कि यह कठिन है यह ब्राह्मण वर्ण अशुद्धान्तःकरणों को कदापि नहीं मिल सकता तुम इस कामना को छोड़ दो। क्योंकि ब्राह्मण वर्ण देवता मनुष्य और असुरों में उत्तम कहा जाता है उस को चांडाल योनी में उत्पन्न होने वाला कभी नहीं पासकता ॥

पच्चीसवां अध्याय

—:०:—

इन्द्र का मतंग से ब्राह्मण वर्ण प्राप्ति का वर्णन ॥

भीष्म जी बोले इन्द्र के इन वचनों को सुन सावधान व्रत तपस्वी मतंग सौ वर्ष पर्य्यंत एक चरण से खड़ा रहा तब फिर इंद्र ने उस के पास जाकर कहा कि हे मतंग ब्राह्मण वर्ण अति दुष्प्राप्य है इस हठ को छोड़दे अन्यथा नष्ट होजायगा ॥

पशु पक्षी की योनी से यदि मनुष्य देह मिलती है तो वह चांडाल योनि में जन्म लेता है एक हज़ार वर्ष के अनन्तर शूद्र योनी में आता है तीन हज़ार वर्ष शूद्र योनी में उत्पन्न हो वैश्य बनता है छै हज़ार वर्ष वैश्य योनी में फिर क्षत्री घर में जन्म लेता है इतना काल ही क्षत्री कुल में जन्म धार नाम मात्र का ब्राह्मण बनता है इसी प्रकार कई जन्म धार गायत्री जपने वाले ब्राह्मणों में जन्म लेता है और बहुत कालपर्य्यंत वेद पाठियों के घरों में जन्म धारता है, तो हर्ष शोक इच्छा द्वेषादि

को छोड़ सङ्गता को पाता है, यदि इर्षादि दोष इस को जीत लेते हैं तो फिर गिराया जाता है इस लिये इस हठ को छोड़ दो ॥

छब्बीसवां अध्याय

—०—

मतंग की तपस्या और इन्द्र का संवाद ॥

इन्द्र के वचनों को सुन मतंग फिर हजार वर्ष तक उग्र तप करता रहा तब इन्द्र देवता ने फिर दर्शण दिये और फिर वही वचन कहा तब मतंग ने कहा कि मैं एक हज़ार वर्ष से पूर्ण ब्रह्मचर्य्य धारण कर तप कर रहा हूं क्या अब भी ब्राह्मण नहीं बन सकता ॥

इन्द्र ने कहा चांडाल योनि में उत्पन्न होने वाला पुरुष किसी दशा में भी ब्राह्मण वर्ण को नहीं पासकता ॥

इस लिये तुम कुछ और वर मांगो जिस से तुम्हारा परिश्रम न व्यर्थ हो यह सुन अत्यन्त शोच ग्रसित हो वह मतंग गया जी में जाकर सौ वर्ष तक अंगूठे के बल खड़ा हो ईश्वराराधन में लगा रहा और इस घोर तप से महा दुर्बल हो हड्डियों की माला हो कर पृथ्वी पर गिर पड़ा ॥

हे राजन इसे गिरते देख इन्द्र ने आकर उसे उठा लिया और कहने लगे कि हे मतंग! इस लोक में तेरा ब्राह्मण बनना महा कठिन है ॥

इस लिये तुम इस हठ को छोड़ दो और जो तुम चाहो मैं तुम को वर दे सकता हूं ॥

मतंग बोला कि हे इन्द्र ! आप मुझ दुःखी को क्यों दुःख देते हो मरे हुये को क्यों मारते हो मैं जानता हुं कि ब्राह्मण वर्ण सर्व पूज्य हैं सदैव कठिनता से मिलता है ॥

हे इन्द्र ! ईश्वर आराधना में तत्पर शांत चित्त और अहिंसा धर्म में नियत मैं कैसे ब्राह्मण वर्ण के योग्य नहीं हुं मैं केवल पूर्व जन्म के कर्मों के प्रभाव से माता के दोष से इस दशा में पहुंचा हुं यदि मैं आप की कृपा का पात्र हुं और यह मेरा क्रिया कर्म कुछ शुभ है तो आप मुझे यही वर दें, यह सुन इन्द्र ने कहा वर मांगो ॥

मतंग ने प्रार्थना की कि मैं आकाश में वर्तमान होकर अपनी इच्छा के अनुसार रूप धार स्वेच्छाचारी हो ब्राह्मण क्षत्रियों के अति रुद्र पूजन को प्राप्त करूं और मेरी कीर्ति संसार में फैल जाये ॥

यह सुन इन्द्र ने कहा हे पुत्र ! तू छन्दों देव नाम से प्रसिद्ध तीनों लोकों में पूज्य और यशस्वी होगा यह वर दे इन्द्र चले गये और मतंग ने समयानुसार देह त्याग उत्तम गति को प्राप्त किया ॥

सताईसवां अध्याय

—:०:—

वीतहव्य के ब्राह्मण वर्ण की प्राप्ती के विषय में॥

युधिष्ठर बोले कि हे पितामह! यदि ब्राह्मण वर्ण की प्राप्ती ऐसी कठिन है तो विश्वामित्र जी कैसे ब्राह्मण बने और वीतहव्य कैसे ब्राह्मण बने यह वर्णन कीजिये ॥

भीष्म जी बोले कि हे तात! पूर्वकाल में दिवो दास और हैहय वंश के राजा का युद्ध हुआ दिवोदास पराजित हो भाग कर भरद्वाज के आश्रम पर शरणागत हुआ, भरद्वाज ने दिवो-दास से कहा कि तुम किस लिये यहां आये हो उस ने युद्ध वृत्तान्त कह प्रार्थना की कि अब आप ही मेरे रक्षक हैं मेरा सब परिवार मारा गया है ॥

हे राजन्! तब भरद्वाज ने उस के महा पुत्र उत्पति के लिये यज्ञ किया जिस से प्रतर्दन नाम पुत्र हुआ ॥

तब उस राजा ने वीत हव्य के पुत्रों को मारने के लिये प्रतर्दन को भेजा, इस ने बड़ा घोर संग्राम कर वीत हव्य के पुत्रों को मार दिया तब वीत हव्य भय और क्लेश से दुखी हो भृगु के आश्रम पर गया, प्रतर्दन भी बड़ी सेना ले आश्रम पर उन के दर्शनों के लिये आया तब भृगु जी प्रर्दतन को आता देख बाहिर निकले और पूछने लगे कहो राजन् कैसे आगमन हुआ तब राजा ने सब वृतांत सुना कर कहा कि आप इस को यहां से निकाल दें, तब भृगु जी ने उत्तर दिया कि यहां कोई क्षत्री नहीं सब ब्राह्मण लोग हैं तब ऋषि के चरणों को पकड़ कर प्रतर्दन ने कहा कि मैं इस में भी प्रसन्न हूं जो इस को आपने जाति से बाहिर कर दिया ॥

हे राजन्! इस प्रकार एक मात्र भृगु ऋषि के प्रभाव से

वीत हृव्य ब्राह्मण बन गया और इस की संतान भी ब्राह्मण बन गये ॥

अठाइसवां अध्याय

—:०:—

पूज्य वर्णन, नारद कृष्ण संवाद ॥

युधिष्ठर बोले हे भरतपर्ष ! इस लोक में कौन २ से मनुष्य पुजने के योग्य हैं ॥

भीष्म जी बोले कि इस विषय में नारद कृष्ण संवाद वर्णन करता हुं सुनो। एक घेर नारद जी कृष्ण जी के पास आये श्री कृष्ण जी ने उन से पूछा विप्रवर आप किस २ को नमस्कार करते हैं और पूजते हैं ॥

नारद जी बोले हे शत्रु हन्ता ! मैं वरुण, वायू सूर्यादि देवों को नमस्कार करने वालों को नमस्कार करता हूं, वेद वित तपस्वी की पूजा करता हूं हे देव ! अनात्म श्लाघी संतोषी शांत चित, भोजन करने से पूर्व देव कृत करने वाले, जितेंद्रय, यज्ञ कर्ता, सत्यवादी, धर्मात्मा, अतिथि सेवक, वेदज्ञ ब्रह्मचारी। यज्ञ के करने कराने वाले को मैं नमस्कार करता हूं जो गृहस्थी देव अतिथि का पूजन नित्य करते हैं और शुद्धाचारी हैं तथा जो शास्त्र निर्लोभी हैं और जो नियम संयमादि में प्रवृत्त हैं अग्नि होत्र करते हैं मैं उन को नमस्कार करता हूं, हे निष्पाप, तुम भी उन उपरोक्त तथा ब्राह्मणों

का पूजन किया करो सार यह कि तुम भी सदैव देवता पितृ अतिथि का पूजन किया करो ॥

उनतीसवां अध्याय

—:o:—

शरणागत की रक्षा और वृषदर्भ राजा का इतिहास ॥

हे पितामह ! जो मनुष्य शरण में आने वाले जीवों की रक्षा करते हैं उन को क्या फल होता है ॥

हे पुत्र ! इस का उत्तर आगे कहे इतिहास से पूर्ण समझ में आ जायेगा सुनो । एक बाज से गिराया हुआ कपोत राजा वृषदर्भ के चरणों में गिरा उसे देख राजा ने गोदी में उठा लिया और कहा कि हे कपोत ! अब तू मेरी शरण में आ गया है अब तूं व्याकुलता को छोड़ दे अब कोई जीव तुम को पकड़ नहीं सकता मैं तेरे लिये काशी का राज्य और अपने शरीर को भी त्याग दूंगा ॥

उस के पीछे आये हुये बाज ने कहा कि हे राजन् ! यह मेरा भोजन है मैंने इसे बड़े परिश्रम से पाया है आप इसे छोड़ दें । मुझ को रुधिर की प्यासा और क्षुधा व्याकुल कर रही है ॥

हे राजन् ! इस में संदेह नहीं कि आप अपने देश के जीवों की रक्षा करने वाले हैं परन्तु पक्षियों के आप स्वामी

नहीं हैं। क्षुधातुर से उस का आहार छीन लेने से पाप होता है इस लिये आप इस पाप कर्म को छोड़ दें ॥

राजा ने बाज के इन वचनों को सुन आश्चर्य हो उत्तर दिया कि तेरी क्षुधा की निवृत्ति के लिये वराह, भैंसा आदि जीव जो तूं चाहे मैं देता हूं परन्तु इस शरणागत की रक्षा करना मनुष्य का परम धर्म है ॥

बाज बोला कि मैं वराह महिषादि को नहीं चाहता क्यों कि वह मेरा भोजन नहीं है, विधाता ने हमारे लिये कपोत बनायें हैं, यदि तुम इन की रक्षा चाहते हो तो इस के बराबर तोल कर अपना मांस मुझे दो ॥

यह सुन राजा ने कहा कि आप ने मुझ पर बड़ी कृपा की जो यह उपाय बता दिया राजा ने झट अपना मांस काट २ कर तोलना आरम्भ किया ॥

हे राजन्! यह खबर महल की रानियों ने सुनते ही रोना पीटना आरम्भ किया मंत्रियों ने हाहा कार मचा दी राजा ने तराजू के पलड़े पर अपने सारे शरीर का मांस धीरे २ रख दिया यहां तक कि अस्थी ही शेष रह गई परन्तु कपोत का पलड़ा न उठा, तब राजा ने अपना समस्त शरीर उस पलड़े पर रख दिया ॥

हे राजन्! यह देख इन्द्र आदि सब देवता वहां प्रकट हुये आकाश से पुष्प वर्षा हुई राजा पर अमृत छिड़का गया और माणी जड़ित खंबे वाले विमान में बिठा कर देवता उसे स्वर्ग में ले गये ॥

हे युधिष्ठर ! तुम भी शरणागत की सब प्रकार से रक्षा और उस का पालन पोषण करो क्योंकि भक्तों की मित्रों की और शरणागत की रक्षा और सब जीवों पर दया करने वाला मनुष्य स्वर्ग को जाता है और इस लोक में भी उस के लिये कोई पदार्थ दुष्प्राप्य नहीं होता ॥

तीसवां अध्याय

—:-०-:—

राजा के कर्तव्य वर्णन ॥

युधिष्ठर बोले हे पितामह ! राजा किस कर्म को करके दोनों लोकों को अच्छी तरह से भोगता है, भीष्म जी बोले सुखाभिलाषी राजा वेदज्ञ ब्राह्मणों का ही सदा पूजन करे वरंच पुरवासी देशवासी शास्त्रज्ञ ब्राह्मणों का भी विधि पूर्वक पूजन करे और अपनी प्रजा का पुत्रों के समान पालन करे, सच्चे, पराक्रमी और उग्ररूप ब्राह्मण अनुष्ठान के बल वरंच संकल्प मात्र से सब अभिष्ट दे सकते हैं और क्रोध से सब नाश कर सकते हैं क्योंकि तेजस्वी, कर्म, शिष्ट, ज्ञान प्रवृत ब्राह्मण देवताओं को अदेवता और अदेवताओं को देवता बना सकते हैं ॥

हे राजन ! जो ब्राह्मणों की निंदा करते हैं वह नाश को पाते हैं, ब्राह्मण की कृपा से सर्वैश्वर्य्य अर्थात धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष मिलते हैं, शक, यवन, कांबोज आदि बड़े २ राजा ब्राह्मणों के दर्शण न करने से शूद्र होगये ॥

ब्राह्मणों को कभी मारना नहीं चाहिये, ब्रह्म हत्या से बढ़ कर कोई दोष नहीं,ब्राह्मणों की निन्दा कभी नहीं सुननी चाहिये, हे राजन् ! इस संसार में न कोई मनुष्य ऐसा हुआ न होगा जो ब्राह्मणों से द्वेष कर के सुखी रह सके । ब्राह्मणों को विजय करना ऐसा कठिन है जैसे चंद्रमा को स्पर्श करना, या पृथ्वी को उठाना कठिन है ॥

—— —

इकतीसवां अध्याय

—:०:—

ब्राह्मणों की प्रशंसा और पृथ्वी वासुदेव संवाद ॥

भीष्मजी बोले कि ब्राह्मणों का सदैव अच्छी रीति से पूजन करे क्योंकि वह लोग चन्द्रमा को राजा रखने वाले और सुख दुःखों के स्वामी हैं, इन का पूजन राजा लोगों को पिता के समान करना योग्य है क्योंकि ब्राह्मण लोग पवित्र अग्नि रूप शुद्धाचरण और पवित्र मंत्रों के ज्ञाता हैं । हे राजन् ! धर्मज्ञ, तेज व्रतधारी और कुलीन ब्राह्मण को भोजन देने से देवता और पितर भी तृप्त होते हैं। उन को भोजन कराने वाले दाता लोग परमगति अर्थात् मोक्ष को पाते हैं, उनसे सब यज्ञादिक उत्पन्न होते हैं जिन से सब सृष्टि उत्पन्न होती है । उन की प्रसन्नता से स्वर्ग और क्रोध से नरक मिलती है॥

हे राजन्! ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मण भूत भविष्य को जानते हैं, जो मनुष्य ऐसे ब्राह्मणों के आज्ञावर्ती होते हैं वह कभी पराभव नहीं पाते, प्रताप से तपाने वाले क्षत्रियों के बल और तेज ब्राह्मणों से ही शांति पाते हैं। भूत, भविष्य, स्थूल सूक्ष्म ब्रह्म पर्यन्त सब पदार्थ ब्राह्मणों में ऐसे गुप्त हैं जैसे लकड़ी में अग्नि गुप्त होती है, इस विषय में वासुदेव और पृथ्वी के प्रश्नोत्तर अतीव मनोहर हैं वह आप ध्यान देकर श्रवन करें॥

एक वार वासुदेव जी ने पृथ्वी से पूछा कि हे देवी! गृहस्थी लोग किस कर्म से अपने पापों से छूटते हैं॥

पृथ्वी ने उत्तर दिया कि ब्राह्मणों की सेवा से इन के सब पाप दूर होते हैं उन के पूजन से ऐश्वर्य, यश, कीर्ति और आत्म ज्ञान प्राप्त होता है, नारद जी ने भी मुझे यही कहा था कि ब्राह्मण देवताओं से भी श्रेष्ठ हैं, जो मनुष्य इन से कठोर वचन कहता है वह समुद्र में गिरे हुये ढेले की तरह नष्ट हो जाता है॥

ब्राह्मण की शत्रुता ने चंद्रमा को कलंकित और समुद्र को भी सुखा दिया था इन्हीं के कोप से इन्द्र सहस्रभग हो गया और इन की प्रसन्नता से सहस्र नेत्र हो सर्व पूज्य हो गया।

हे राजन्! यह सुन कर श्री कृष्ण जी ने पृथ्वी की प्रशंसा की और प्रसन्न हुये, इस लिये आप भी सावधानता

से ब्राह्मणों की पूजा किया करें इसी से तुम्हारा कल्याण होगा ॥

बत्तीसवां अध्याय

—०—

ब्राह्मण प्रशंसा ॥

भीष्म जी बोले हे महाभाग ! ब्राह्मण जन्म से ही सब से बड़ा है, ब्राह्मण और अतिथि सब से पहिले भोजन कराने के योग्य हैं, हे तात ! ब्राह्मणों ही की कृपा से धर्मार्थादि सब पदार्थों की प्राप्ति और शत्रुओं का नाश होता है, हे राजन् ! ब्राह्मणों को ईश्वर ने उत्पन्न करके वर दिया है कि तुम इस संसार में सब के रक्षक होगे, इस लिये उन की रक्षा करो, अपना धन उन का धन समझो ॥

ब्राह्मण सिंह आदि के समान बलवान हैं, असुर लोग ब्राह्मणों की प्रतिष्ठा न करने से जल में निवासी हुये और देवता लोग इन्हीं की कृपा से स्वर्ग वासी हुये, हे युधिष्ठिर यदि तुम सागर पर्यन्त पृथ्वी को भोगना चाहते हो तो इन को दान सेवा आदि से सदैव प्रसन्न करो, दान लेने से ब्राह्मण का तेज नष्ट होता है, जो ब्राह्मण दान लेने की इच्छा नहीं करते उन से ही तुम को अपनी कुल की रक्षा करानी चाहिये ॥

तेतीसवां अध्याय

—०—

इन्दू देवता और शंबर दैत्य का प्रश्नोत्तर ॥

भीष्म जी बोले हे राजन्! उक्त विषय में इन्द्र देवता और शंबर दैत्य का प्रश्नोत्तर तुम ो सुनाता हूं सुनो। एक समय भेस बदल कर इन्द्र ने शंबर से पूछा कि तुम किस कर्म से अपनी बरादरी में सब से बड़े बने इस का वर्णन करो॥

शंबर ने कहा मैं ब्राह्मणों के गुणों में कभी दोष नहीं लगाता हूं मैं शास्त्र वेत्ता ब्राह्मणों की बड़े आनन्द से प्रतिष्ठा करता हूं उन के चरण छूता हूं, सब कार्य उन की आज्ञा से करता हूं मैं उन की आज्ञा का भंग और अपमान नहीं करता हूं, वह मुझे आशीर्वाद देते हैं और मुझ को अमृत रूपी विद्या से सींचते हैं, जो मनुष्य पृथ्वी पर ब्राह्मणों के मुख से शास्त्र को सुन कर उस के अनुकूल कर्म करता है उस के सब कर्म सफल होते हैं, मेरे पिता ने भी उन की कृपा से महा इन्द्र पद को पाया, ब्राह्मण के पुत्र को पिता के घर में रह कर पढ़ना नहीं चाहिये, हे राजन्! वेदाध्ययन के लिये ग्राम में निवास करने वाला ब्राह्मण और अल्प बुद्धि मनुष्य का अहंकार लक्ष्मी का नाश करता है॥

चौतीसवां अध्याय

—o—

पात्र को दान देना और देवादि ऋणों से छूटने के विषय में ॥

युधिष्ठिर बोले हे महाराज! पहिले न देखा हुआ, सदा पास रहने वाला और दूर से आया हुआ इन तीनों में कौन सा ब्राह्मण पूज्य होता है ॥

भीष्म जी बोले याज्ञिक, विद्वान, गृहस्थी तथा मौन धारी सन्यासी दान के पात्र हैं, दूर से आये हुये, समीप रहने वाले तथा जिसे पहिले न देखा हो यह तीनों पूजन के योग्य हैं।

भीष्मजी बोले कि शास्त्रज्ञ, ऋत्वज, परोहित, आचार्य गुरु पूजन के योग्य है, हे राजन्! अक्रोधी, सत्यवक्ता, अहिंसक, शांत चित्त, किसी से शत्रुता न करने वाला, लज्जायुक्त, क्षमावान ब्राह्मण पात्र है। वेदों का न मानना, शास्त्रों से विपरीत काम करना, संपूर्ण शुभ कार्यों से मुख मोड़ना, यह सब अवगुण पात्रता को नष्ट करते हैं। जो मनुष्य (ब्राह्मण) अपने को पंडित मानता है परन्तु वेदों का निंदक शास्त्र से विरुद्ध कुतर्की शास्त्रों पर शंका करने वाला, मूर्ख, अज्ञानी है, ऐसे मनुष्य से छूना भी नहीं चाहिये, उन लोगों को महात्माओं ने कुत्ते की उपमा दी है, अर्थात जैसे कुत्ता भौंकने और काटने को त्यार होता है उसी प्रकार वह शास्त्रों पर तर्क करने को त्यार होता है शास्त्रों के अनुकूल कार्य कर्त्ता वृद्धि को पाता है ॥

यज्ञ से देव ऋण, वेद पाठ से ऋषि ऋण, संतान से पितृऋण, दान से ब्राह्मण ऋण और प्रतिष्ठा से अतिथि ऋण उतरता है ॥

पैंतीसवां अध्याय

—:०:—

॥ स्त्री स्वभाव वर्णन और पंच चूडा संवाद ॥

युधिष्ठर ने प्रार्थना की कि हे पितामह! कृपा पूर्वक स्त्रियों के स्वभाव को वर्णन करें क्योंकि स्त्रियें ही पाप का मूल और चित्त को डुलाने वाली हैं ॥

भीष्म जी बोले हे राजन्! इस विषय में पंच चूडा अप्सरा और नारद का संवाद वर्णन करता हूं सुनो, एक समय घूमते २ नारद मुनि ब्रह्म लोक में पहुंचे वहां पर पंच चूडा अप्सरा से कहा कि मैं तुम से स्त्रियों का स्वभाव पूछना चाहता हूं तुम मुझे सुना दो ॥

अप्सरा ने कहा कि मैं स्त्री हूं इस लिये स्त्रियों की निंदा नहीं कर सकती नारद जी ने कहा सत्य वक्ता को दोष नहीं, तब उस ने कहा कि हे नारद जी! सुन्दर स्वरुप गुणवान पति रखने वाली स्त्री भी मर्यादा पर स्थित नहीं रहती, स्त्रियें पापों का मूल हैं, स्त्रियों में यह एक बड़ा भारी दोष है कि जो पुरुष थोड़ी सी सेवा करता है वह उसी को चाहने लग जाती हैं, तरुण अवस्था मे इन का कुच्छ भी भरोसा और

निश्चय नहीं है, पुरुष चाहे रूपवान हो या कुरूप सब को भोगती हैं, स्त्रियों को जाति कुल का विचार नहीं होता, कामी सुन्दर, स्वरूपा भलि भांति से पति द्वारा सुरक्षित होने पर भी कुबेड़े, अंधे, लूले आदि मनुष्यों तक से भोग करती हैं ॥

हे ब्राह्मण ! यदि उन को किसी प्रकार से कोई पुरुष न मिले तो वह आपस में ही भोग करती हैं अर्थात् कोलमालिंग से भोग करती हैं, विधवा होने से धैर्य में नियत नहीं रहतीं ॥

हे मुनि ! जिस प्रकार लकड़ी से अग्नि, नदियों से महा समुद्र, और सब जीवों के मारने से मृत्यु तृप्त नहीं होती इसी प्रकार स्वरूपा स्त्री पुरुषों से तृप्त नहीं होती ॥

हे देवर्षि ! चितरोचक सुन्दर मनुष्य को देख स्त्री की योनि तर हो जाती है । स्त्रियें सर्व सुख दाता पति, बड़े २ भूषणों और महलों को वैसा प्रिय नहीं जानती जैसा भोग को प्रिय जानती हैं ॥

हे नारदजी ? सृष्टी कर्ता भगवान् ने ही इन में यह गुण डाल दिये हैं ॥

छत्तीसवां अध्याय

—:o:—

स्त्रियों को सुरक्षित रखने का उपाय पूछना ॥

युधिष्ठर ने प्रश्न किया कि हे कौरव नदनं स्त्रियें मनुष्यों से

कैसे प्रीति करती है और फिर हटा लेती है वर्णन करें और यह भी वर्णन करें कि वह सुरक्षित किस प्रकार रह सकती हैं इस लोक में स्त्रियें हास विलास से मनुष्यों को ठगती है इन के जाल में फंसा हुआ कोई मनुष्य नहीं निकलता जैसे गौ सदा नये घास को चाहती है वैसे ही स्त्रियें नये नये पुरुष को चाहती हैं दंशम्बर दैत्य, नमुचि असुर और राजा बलि की माया को स्त्रियों ने ही जाना है, स्त्रियें हंसते हुये को हंसाती हैं रोते हुये को रुलाती हैं शुक्र जिस नीति को जानते हैं बृहस्पति जिस शास्त्र के ज्ञाता है स्त्रिये वह सब जानती हैं वह स्त्रियें किस प्रकार पुरुषों से रक्षा की जासकती हैं जो मिथ्या को सत्य और सत्य को मिथ्या कर दिखलाती हैं उन की रक्षा पुरुष कैसे कर सकते हैं ॥

पति से सब प्रकार पूजित स्त्रियें भी मन को फेर लेती हैं; हे भीष्म जी ! आज तक इतनी किसी ने रक्षा की है या नहीं यह सब आप सविस्तार वर्णन करें ॥

अड़तीसवां अध्याय

—:o:—

विपुल का गुरु पत्नी की रक्षा योग बल से ॥ करना ॥

भीष्म जी बोले हे राजन् ? यह सब इसी प्रकार से है

जैसे आपने कहा है विपुल महर्षी की स्त्री की रक्षा और ब्रह्मा जी ने जिस प्रयोजन से स्त्रियों को बनाया वह स. मैं तुम से कहता हूं ॥

हे पुत्र ! स्त्रियों के तुल्य और कोई पापी नहीं ज्वालामत दैत्य की माया, खड्ग की धारा सर्प का विष यह सब मिल कर स्त्री के समान हैं । एक समय देवताओं को भी इन से भय हुआ और वह सब ब्रह्माजी के पास पहुंच अपने मनके भाव को प्रकट कर नीची गर्दन किये उनके पास बैठ गये ॥

ब्रह्माजी ने इनके चित्त की आशा जान कर कृत्या रूप स्त्री उत्पन्न की, हे कुन्तीनन्दन ! इस से पहिले की सब स्त्रियें शुभ कर्म्मी और पतिव्रता थीं, ब्रह्मा की कृत्या नाम स्त्री से दुराचारिणी स्त्रियें उत्पन्न हुई वह स्त्रियें स्नेह और भोग के लोभ से सदैव मनुष्यों को दुःख देती हैं । तब सब जीव काम क्रोध के वश होकर विषय भोग में प्रवृत्त हुये ॥

ब्रह्मा जी ने उन स्त्रियों के लिये शय्या भूषण कठोर वचनों से कलह और भोग यह सब स्त्रियों के काम बनाये इस लिये कोई पुरुष इन की रक्षा नहीं कर सकता, मनुष्य प्यार, मार पीट आदि से भी स्त्रियों की रक्षा नहीं कर सकते ॥

हे राजन् ! पूर्वकाल में देवशर्मा नाम एक प्रसिद्ध ऋषि हुये । उन की रुचि नाम परम सुंदरी भार्या थी इन्द्र भी इस पर आसक्त था ॥

एक वार उस ऋषि ने यज्ञ करने की कामना की और विचारा कि इस स्त्री की कैसे रक्षा की जावे, तब तपस्वी ने रक्षा

का उपाय सोच अपने शिष्य विपुल भार्गव को बुला कर आज्ञा दी कि मैं यज्ञ को जाऊंगा तुम रुचि की योग बल द्वारा इन्द्र से रक्षा करना, वह कोई रूप धार कर आता है, तुम ने सावधानता से इस की रक्षा करनी शिष्य ने कहा बहुत अच्छा और प्रार्थना की कि महाराज ! इन्द्र किस २ रूप को धारण कर सकता है उस का तेज कैसे होता है यह सब बतला दें ॥

तब ऋषि ने सब कुच्छ वर्णन कर दिया, देवला ने सोचा कि किस प्रकार गुरु पत्नी की रक्षा करूं. वह मायावी जिस तरह से रुचि के सातित्व को भंग न कर सके, बहुत काल तक सोच कर उस ने निश्चय किया कि मैं रुची के शरीर में प्रवेश कर लेता हूं हाय यदि मैं प्रवेश भी करता हूं तो इस से मुझे दोष तो न होगा फिर विचारा कि माता के शरीर में पुत्र भी तो प्रवेश करता है ॥

तब उस ने नेत्रों से नेत्र मेल अपने सूक्ष्म शरीर को उस में प्रविष्ट कर दिया परन्तु गुरु पत्नी को कुच्छ प्रतीत न हुआ ॥

अड़तीसवां अध्याय

—:o:—

इन्द्र का दिव्य रूप में रुची के पास आना। विपुल ने गुरु पत्नी की रक्षा करना और इन्द्र

को शाप देना ॥

भीष्म जी बोले इस के अनंतर देवेन्द्र दिव्य रूप धारण कर उस आश्रम में आगया ॥

हे राजन्! उसे आते देख रुची ने आसन देना चाहा परंतु विपुल ने इसे उठने न दिया तब इन्द्र ने कहा कि हे सुंदरी! मैं देवराज इन्द्र तेरे पर मोहित काम से पीड़ित हो तेरे पास आया हूं। इंद्र के इस वचन को विपुल ने सुन रुची को सन्मान के लिये उठने वा च बोलने से भी रोक दिया तब लज्जित होकर इन्द्र ने फिर यही कहा "आओ" यह सुन रुची ने उस को उत्तर देना चाहा परन्तु भार्गव ने उस की जिव्हा को भी रोक दिया ॥

हे राजन्! इस प्रकार इसे विपरीत दशा में देख उस स्त्री में नियत विपुल मुनि को इन्द्र ने साक्ष लिया यह जान कर इन्द्र अतीव भयभीत हुआ कि यह मुनि अब मुझे अवश्य शाप देगा ॥

तब विपुल मुनि ने रुचि के शरीर से निकल इन्द्र से कहा कि हे पापात्मन! तुझ को बहुत काल तक देवता लोग नहीं पूजेंगे तू गौतम ऋषि के उस उपकार को जो तेरे सहस्र भग को उन्हों ने दूर किया था भूल गया मैं गुरु पत्नी की रक्षा के लिये उपस्थित हूं तू अपने लोक को चला जा मैं दया कर के तुझ को निजतेज बल से भस्म नहीं करता, गुरु जी यदि आगये तो वह निज तेज से तुझ को अवश्य भस्म कर देंगे यदि तुम्हें अमर होने का घमंड है तो मुनियों के तेज बल

की ओर देख वह तप से क्या नहीं कर सकते यह सुन कर इन्द्र लज्जातुर हो वहीं अन्तर्ध्यान होगया ॥

इस के अनंतर देव शर्म्मा यज्ञादि से निपट वहां आगये तब भार्गव ने गुरू जी को प्रणाम की और इन्द्र के इस घोर कर्म को और अपने उपाय को गुरू जी से कह सुनाया, तब गुरू जी ने शिष्य की निपुणता को देख अतीव प्रसन्न हो कहा कि हे पुत्र ! तू धन्य है हे पुत्र ! वर मांगो तब विपुल ने धर्म में निष्ठता मांगी, गुरू जी ने यही वर दिया ॥

उनतालीसवां अध्याय

—:०:—

विपुल ऋषि का गुरू आज्ञा से स्वर्ग से पुष्प लाना ॥

भीष्म जी बोले हे राजन् ! इस के अनंतर गुरू आज्ञा से विपुल ने बड़ी तपस्या की और दोनों लोकों को जीत आनन्द से रहने लगा ॥

कुछ काल के अन्तर रुची की बहिन के घर एक वैभव युक्त उत्सव हुआ उसी समय एक सुन्दर अप्सरा ने आकाश से बड़े सुगंधित पुष्प बरसाये जिन्हे लेकर रुची ने अपने शिर के बालों में धारण किया, और अपनी बहिन के घर गई वहां उस की बहिन ने वह फूल देख कर उस से कहा कि

यह फूल मुझे भी मंगवा दे ॥

उत्सव के हो जाने पर रुची ने आकर पति से पुष्पों के लिये प्रार्थना की तब देव शर्म्मा ने विपुल शिष्य को बुलाकर पुष्प लाने की आज्ञा दी ॥

गुरू आज्ञा को शिर धारण कर विपुल वहां पहुंचा जहां से पुष्प गिरे थे, आकाश मार्ग से उस देश में पहुंचा, वहां पर दिन रात्रि के अधिष्ठाती देवता यात्रा के विषय में विवाद कर शपथ की और कहा कि हम में से जिसने झूठी शपथ की है उस की वही दशा हो जो स्वर्ग में विपुल की होगी ॥

वास्तव में झूठी शपथ किसी ने नहीं की थी क्योंकि दिन और रात्रि अपनी २ ही गति से चलते थे यह वचन सुन विपुल को चिंता हुई, कि मुझ से कौन अपराध हुआ है तब सोचते २ यह चित में आया कि मैंने इन्द्र से गुरु पत्नी की रक्षा करते समय अपनी इंद्रियों को गुरू पत्नी की इंद्रियों से मिलाया था और यह गुरु से नहीं कहा निस्संदेह इसी अपराध से परलोक में मेरी यह गति होगी ॥

हे राजन् ! तब उस ने वहां से फूले ले लिये और गुरु के आगे धर विधि पूर्वक उन की पूजा की ॥

चालीसवां अध्याय

—०—

देव शर्म्मा और विपुल का स्वर्ग में जाना

और स्त्रियों की रक्षा के विषय में ॥

इस के अनंतर गुरु जी ने वहां का सब समाचार पूछा, विपुल ने सब कह सुनाया, गुरु ने कहा कि निस्संदेह वह दोनों पुरुष दिन और रात्रि थे ॥

यह मनुष्य के किये कर्मों को जानते हैं मनुष्य चाहे कितना ही गुप्त पाप कर्म्म करे, इन से छिपा नहीं सकता उन्हों ने तेरे उस पाप कर्म्म को जो कि तूने रुची की रक्षा के लिये संयोग रूप किया था और मुझ से छिपा रखा था इसी पाप से परलोक में तेरी जो गति होनी है उसी गति को उन्हों ने तुझ से जितला दिया था, परन्तु इस कर्म के बिना उसकी रक्षा करना असंभव था तुम ने दुराचार नहीं किया इस लिये तुम अवश्य स्वर्ग में जाओगे, यदि मैं तुम को दुराचारी जानता तो तुम को उसी समय शाप देता हे तात ! मैं तुम पर प्रसन्न हूं, तुम प्रसन्नता से स्वर्ग भोगोगे ॥

हे राजन् ! समय पाकर देवशर्म्मा रुची और विपुल स्वर्ग में पधारे और आनंद से वहां रहने लगे ॥

हे राजन् ! इसी प्रकार मार्कंडेय ऋषि ने कहा था कि शुभ चलन पतिव्रता स्त्रियें स्वर्ग में पहुंचाती हैं और दुराचारिणी कुल को नष्ट कर नर्क में ले जाती हैं ॥

हे राजन् ! स्त्रियों को कोई प्यारा नहीं, भोग के समय जो इन को गले लगाता है वही इनका प्यारा है। स्त्रियों के साथ कभी शत्रुता और मित्रता नहीं करनी चाहिये। स्त्री के ऋतु स्नान होने पर उस से भोग करना चाहिये, जो

इस से विपरीत करता है वह अपना नाश करता है ॥

हे राजन् ! इस प्रकार केवल विपुल ने ही एक स्त्री की रक्षा की है ॥

इकतालीसवां अध्याय

—:o:—

ब्राह्मादि विवाह शुल्क विवाह का वर्णन और मोल देकर विवाह करने का निषेध ॥

युधिष्ठिर जी ने कहा कि हे पितामह ! अब आप वाल बंध गृह अतिथी और देवता पितरों का मूल धर्म और कन्या कैसे पुरुष को देनी चाहिये वर्णन करें ॥

भीष्म जी बोले गुरू पूजक, विद्वान, पवित्र कर्मी गुणवान वर को सत्पुरुषों की आज्ञा से कन्या देनी चाहिये, ब्राह्मणों और क्षत्रियों को ब्रह्म विवाह (कन्या को अलंकृत कर कन्या दान करना) दैव विवाह (यज्ञ में कन्या को अलंकृत कर ऋत्वज को दान करना) और आर्ष विवाह (वर से दो गौ लेकर कन्या देना) यह तीन प्रकार के विवाह करने चाहियें ॥

जो मनुष्य इस रीति से विवाह के योग्य कन्या को गुणवान वर को बुला कर धन धान्य दे वस्त्र और आभूषण सहित श्रद्धा पूर्वक दान कर देने को प्राजापत्य विवाह कहते हैं यह उत्तम विवाह है ॥

हे युधिष्ठिर ! जो अपने अनुराग से कन्या को चाहता है

या कन्या जिसे चाहती है उस को कन्या विवाह देना गंधर्व विवाह कहलाता है, बहुत सा धन देकर विवाह कराना आसुरी विवाह है, मार पीट कर बल से रोती हुई कन्या को लेजाना राक्षसी विवाह है, असावधान सोई हुई व उन्मत्त कन्या को चोरी ले जाना पिशाच विवाह कहलाता है ॥

हे राजन्! यद्यपि ब्राह्मण तीनों वर्णों की कन्या से क्षत्रि दो वर्णों की कन्या से विवाह कर सकता है परन्तु अपने २ वर्ण ही की कन्या से विवाह करना अच्छा है जैसा कि "आत्मो वैजायते पुत्र" अर्थात पति ही अपनी भार्या में उत्पन्न होता है इस वेद वचन से सिद्ध है इस लिये ब्राह्मण को ब्राह्मणी, क्षत्रि को क्षत्रायनी, वैश्य को वैश्यनी से ही विवाह करना चाहिये ॥

विवाह पिता माता के गोत को छोड़ कर कराने की मनु जी ने आज्ञा दी है ॥

भीष्म जी बोले हे राजन्! विवाह दो प्रकार का है एक धर्मार्थ दूसरे शुल्क ले कर बिना शुल्क बांधवों की सम्मति से अगोत्र वर से विवाह श्रेष्ठ है ॥

युधिष्ठर जी ने पूछा कि पहिले शुल्क द्वारा कन्या देने का निश्चय हो चुका हो तो फिर धार्मिक प्रबंध होता हो तो करना उचित है या नहीं ॥

भीष्म जी बोले कि उत्तम वर के प्राप्त होने पर कन्या उस को देने में दोष नहीं है कन्या का मोल लेना महा पाप है। मोल ली हुई कन्या कदापि धर्म पत्नी नहीं कहा सकती

मगध, काशी, और कौशल देश निवासियों को जीत कर मैं दो कन्यायें राजा विचित्र वीर्य के लिये लाया था उन में से एक विवाही गई और दूसरी नहीं क्योंकि मेरे पिता के भाई वाल्हीक ने कहा था कि यह पराक्रम से लाई गई है, क्योंकि पराक्रम भी एक प्रकार का शुल्क है और शुल्क से कन्या का मोल लेना और वंचना महापाप है इस लिये ऐसी कन्या से विवाह नहीं करना चाहिये ॥

हे पुत्र! यही प्रश्न एक बार मनुष्यों ने सत्यवान से किया था तो उन्हों ने उत्तर दिया था कि जिस को मन से प्रसन्नता पूर्वक चाहते हो उसी को कन्या देना योग्य है, शुल्क देने वाले तो देवर से विवाह करना मानते हैं जो कि शास्त्र के विपरीत है शास्त्र में तो यह कहा है कि विवाह से पूर्व यदि पति मरजाये तो उस के भाई को योग्य समझ कर कन्या दे देनी चाहिये ॥

बयालीसवां अध्याय

—:-०-:—

विवाह धर्म्म और कन्या मोल लेने का निषेध ॥

युधिष्ठर जी ने पूछा कि यदि शुल्क देने वाला शुल्क दे कर बाहर चला जाय और उस के भय से उस कन्या को कोई न गृहण करे, तो उस कन्या को क्या करना चाहिये, हे

पितामह ! पुत्र वहीन पिता की कन्या पुत्र के समान होने के योग्य है या नहीं ॥

भीष्म जी बोले कि जैसे अपना आत्मा है वैसे ही पुत्र है और कन्या भी पुत्र के समान है और उस आत्मा रूप पुत्री के होते हुये अन्य बन्धू वर्ग धन को कैसे ले सकते हैं । पिता, श्वशुर, पति और सूत कातने आदि से स्वयं संचित तथा माता का दिया हुआ जो धन है वह कुंवारी कन्या का भाग है पुत्र हीन नाना का धन दौहित्र का है क्योंकि धर्म शास्त्र की रीति से पिंड देने के वह भी योग्य है इस लिये पौत्र और दौहित्र में कोई भेद नहीं है वरंच यदि कन्या पुत्र से वहीन हो तो पिता के सब धन के पांच भाग कर ३ भाग कन्या के हैं और दो पुत्र के हैं परंतु शास्त्रों में बड़ी अच्छी तरह से वर्णन है कि मोल ली हुई स्त्रियों से जो पुत्र उत्पन्न होते हैं वह भाग लेने के योग्य नहीं हैं क्योंकि पिता के आसुरी विवाह से उत्पन्न हुये पुत्र दूसरे के गुण में दोष लगाने वाले अधर्मी, छली और दुराचारी होते हैं ॥

हे राजन् ! यमराज ने कहा है कि जो मनुष्य अपनी कन्या को बेच कर धन चाहता है वह काल सूत्र नाम आठवें नरक में जाकर पसीना मूत्र और विष्ठा खाता है ॥

हे पुत्र ! शुल्क में जो दो गौ का लेना पहिले वर्णन किया है महा दोष है, जो पुरुष पराक्रम से आधीन की हुई कन्या से विवाह करते हैं वह भी नरक में जाते हैं ॥

किसी पुरुष को भी बेचना नहीं चाहिये तो फिर संतान का

बेचना कैसे धर्म्म युक्त हो सकता है, कन्या का धन लेने वाले से कोई धर्म्म नहीं हो सकता ॥

तिरतालीसवां अध्याय

—:o:—

स्त्री रक्षा, स्त्री सत्कार और इन से सुख ॥

भीष्मजी बोले प्राचेतस ऋषि ने लिखा है कि कन्या के माता पिता कन्या के लिये उसके श्वशुरों से जो कुछ वस्त्र आभूषणादि मंगवाते हैं वह बेचना नहीं कहलाता किन्तु कुमारी पुजन है कन्या के माता पिता वह सब कन्या को दे दें ॥

स्त्रियें सदैव पुजन के योग्य हैं जिस घर में स्त्रियें पुजी जाती हैं उस घर में देवता क्रीड़ा करते हैं जिस घर में इनका अनादर किया जाता है उस घर के सब काम निष्फल होते हैं और वह कुल नष्ट हो जाता है ॥

मनु जी ने भी इन के दोषों का वर्णन करके कहा है कि यद्यपि यह स्त्रियें इतने दोषों से युक्त हैं फिर भी यह पूजने के योग्य हैं क्योंकि धर्म स्त्रियों का ही कारण समझना है संसारिक सुख, संतानोत्पत्ति और संतान का पोषण इनही के आधीन है ॥

स्त्री स्त्री धर्म के विषय में जनक की पुत्री ने कहा है। स्त्री के लिये कोई यज्ञ, श्राद्ध और व्रत नहीं है उन का केवल

यही धर्म है कि पति की सेवा करें इसी से वह स्वर्ग पासकती हैं बाल्यावस्था में पिता, युवावस्था में पति और वृद्धावस्था में पुत्र इन की रक्षा करें ॥

हे राजन् ! यह स्त्रियें लक्ष्मी रूप हैं ऐश्वर्य चाहने वाले मनुष्य को इन का आदर सत्कार करना चाहिये ॥

चौतालिशवां अध्याय

—:०:—

चारों वर्णों की स्त्रियों के पुत्रों को पिता के धन के भाग का वर्णन॥

हे पितामह ! आप ने ब्राह्मण वर्ण के लिये तीनों वर्णों वरंच शूद्री से भी संतानोत्पत्ति का वर्णन किया है उन स्त्रियों से उत्पन्न हुये पुत्र पिता के धन के किस प्रकार से अधिकारी हैं अर्थात कौन २ कितना २ भाग ले सकता है यह वर्णन करें ॥

भीष्म जी बोले कि ब्राह्मण क्षत्रि और वैश्य यह तीनों वर्ण द्विज कहाते हैं इन का विवाह धर्म्मानुकूल माना है शूद्री से विवाह करना शास्त्रोक्त नहीं है शूद्री को अपनी शय्या पर बैठाने से ब्राह्मण अधोगति को पाता है और वेदोक्त कर्म्म के अयोग्य हो जाता है ॥

पिता के धन में से जो २ मुख्य वस्तु हो उस का अधिकारी ब्राह्मणी का पुत्र है बाकी बचे ब्राह्मण पिता के धन के

१० भाग करने चाहियें उन में से ४ भाग तो ब्राह्मणी के पुत्र के हैं और क्षत्रिय का पुत्र उन में से ३ भाग का अधिकारी है और शेष दो भाग वैश्या का पुत्र लेने का अधिकारी है और शूद्रा से उत्पन्न हुआ पुत्र ब्राह्मण पिता के धन का अधिकारी नहीं परंतु फिर भी दशवां भाग अर्थात कुछ धन उसे भी देना चाहिये। हां जो पुत्र सवर्णा स्त्रियों से होते हैं वह पिता के धन के सम भागी हैं।

ब्राह्मण से तीनों वर्णों की स्त्रियों से उत्पन्न होने वाला पुत्र ब्राह्मण होता है।

धन के भाग से तीन हज़ार से अधिक स्त्री को नहीं देना चाहिये। पति का दिया हुआ वह धन स्त्री उचित रीति से खर्च कर सकती है पति के दिये हुये धन में से उसके पुत्र किसी दशा में भी लौटा नहीं सकते। ब्राह्मण पिता के धन की ब्राह्मण कन्या पुत्र के समान अधिकारी है॥

युधिष्ठर बोले कि हे महाराज! क्षत्रिया और वैश्या में उत्पन्न होने वाला पुत्र भी ब्राह्मण होता है तो फिर उनके भाग में अंतर क्यों रक्खा है॥

हे पुत्र! ब्राह्मणी स्त्री धर्म्म संबंधी संपूर्ण कार्य्यों की करने वाली होती है इस लिये खाने पीने के सब पदार्थ भी ब्राह्मणी के हाथ में होने चाहियें मनुजी की भी यही सम्मति है, क्षत्रिया का पुत्र यद्यपि ब्राह्मण होता है परंतु क्षत्रिया कदापि ब्राह्मणी के तुल्य नहीं हो सकती इस लिये ब्राह्मणी के पुत्र का अधिक भाग कहा है। इसी प्रकार वैश्या कभी

क्षत्रिया के समान नहीं हो सकती क्योंकि क्षत्रिया में लक्ष्मी राज्य आदि नियत दिखाई देते हैं ॥

ब्राह्मणों के धर्म कार्य्यों में क्षत्री सहायक होता है इस लिये क्षत्रिया का पुत्र वैश्या के पुत्र से बहुत बड़ा होता है, इसी लिये पिता के धन से वैश्या पुत्र से उसे अधिक भाग मिलना चाहिये ॥

युधिष्ठर बोले हे पितामह! यह आपने ब्राह्मण के धन के भाग तो कह दिये अब दूसरे वर्णों के भी कहें ॥

भीष्म जी बोले कि क्षत्री की दो भार्य्या होती हैं क्षत्री पिता के धन के ८ भाग का ४ भाग क्षत्रीया पुत्र को पिता के अश्वादि सहित मिलने चाहिये ३ भाग वैश्या पुत्र को और १ भाग शूद्रा जनित पुत्र को देना चाहिये परन्तु वह भी पिता की इच्छा से, वैश्य की एक ही भार्य्या होती है दूसरी शूद्रा परन्तु शास्त्र मर्य्यादानुसार वह उस की भार्या नहीं हो सकती इस लिये वैश्य के धन के ५ भाग किये जावें उन में से ४ भाग तो वैश्य के पुत्र के हैं शूद्रा जनित केवल एक भाग पिता की इच्छा से ले सकता है अन्यथा नहीं ॥

हे राजन्! बहुतों का यह भी मत है कि बड़े पुत्र को उत्तम, मध्यम को मध्यम और कनिष्ठ को अधम भाग देना उचित है हे राजन्! कश्यप ऋषि ने भी इसी प्रकार माना है ॥

पैंतालीसवां अध्याय

—०—

वर्ण संकरों के नाम और उन के काम तथा वर्ण संकर संतानोत्पत्ति का निषेध ॥

युधिष्ठर जी बोले कि हे पितामह ! अब आप वर्ण संकरों के कर्म धर्म भी वर्णन कीजिये ॥

भीष्म जी ने उत्तर दिया ब्राह्मणी और क्षत्रिया के पुत्र ब्राह्मण हैं शूद्र से उत्पन्न को पराशव कहते हैं उस को अपने वर्ण की सेवा करनी ही योग्य है ॥

क्षत्री से तीन पुत्र उत्पन्न होते हैं क्षत्रिया और वैश्या से क्षत्रिय, शूद्रा मे नीच वर्ण उग्र उत्पन्न होते हैं वैश्य को दो स्त्रियें होती हैं वैश्या से वैश्य और शूद्र से शूद्रा ही जानो शूद्र की एक ही स्त्री होती है ॥

शूद्र अपने ब्रह्मणादि गुरु की स्त्री के साथ भोग करने वाला चांडाल होता है क्षत्रिय द्वारा ब्राह्मणी से जनित पुत्र सूत कहाता है वैश्य का ब्राह्मणी से उत्पन्न किया पुत्र संस्कार रहित वैदेहिक कहाता है यह सब नीच कुल कलंकी वर्ण संकर हैं राजा को इन को नगर से बाहिर निकाल देना चाहिये क्षत्रिया में वैश्य के द्वारा जनित पुत्र बंदी मागध कहता है शूद्रा से क्षत्री जात निषाद कहिलाता है दुराचारी शूद्रा से वैश्या जनित पुत्र तन्तावर्धक होता है वह ब्राह्मणों से त्यागने योग्य है ॥

वर्ण शंकर सुवर्ण स्त्रियों से संतान उत्पन्न कर सकते हैं शूद्र यदि ब्राह्मणी से पुत्र उत्पन्न करे तो वह व ध्य होता है, वाह्य की संतान प्रतिलोम कहलाती हैं नीचे से १५ नीच वर्ण उत्पन्न होते हैं जिन के कर्म भी घृणाग, पाहीगीर, फंदक के से नीच होते हैं और यह सब वर्ण शंकर होते हैं, वर्ण शंकर यज्ञादि कर्म्मों को नहीं कर सकते, और न ही वर्णाश्रम धर्म में स्थित रह सकते हैं नीच जाति के पुरुषों से उच्च जाति की स्त्री से उत्पन्न हुये २ पुत्र नीच हैं उन को लोहे के भूषण धार नगर से बाहिर वृक्षों के नीचे रहना चाहिये, करुणा, दया, सत्य शांति पापी लोगों की शुद्धी के साधन हैं ॥

हे युधिष्ठर ! बुद्धिमान् मनुष्य शास्त्रोक्त शिक्षा के अनुसार सवर्णा स्त्री से ही संतान उत्पन्न करे क्योंकि नीच योनि से उत्पन्न हुआ पुत्र कुल को इस प्रकार डुबो देता है जैसे जल में तैरते मनुष्य को पत्थर डबो देता है । सार यह है कि बुद्धिमान मनुष्य कुल कलंकित करने वाली संतान को कभी उत्पन्न न करे वरंच सवर्णा शास्त्रोक्त रीति से विवाहिता स्त्री ही पुत्र उत्पन्न करे ॥

छियालीसवां अध्याय

—:o:—

क्षेत्रज्ञ, व्यूढज्ञ, कृत्रिम आदि संतान का वर्णन और उन के संस्कार ॥

भीष्म जी बोले कि अब हम क्षेत्रज पुत्रों के संस्कार और उन का वर्णन करते हैं।

हे राजन्! जो पुत्र औरस हैं वह अपना वर्ण रखते हैं और जो क्षेत्र के स्वामी की आज्ञा से दूसरे के वीर्य से उत्पन्न होता है इसे परसूरज कहते हैं॥

हे राजन्! दत्तक, क्रीत (मोल लिया हुआ) अपरूढ़ (जिस की माता गर्भवती होकर ब्याही गई हो, उपध्वंस नाम के छः प्रकार के पुत्र और छः प्रकार के अपसद पुत्रों का भी वर्णन है॥

युधिष्ठर ने पूछा कि ६ उपध्वंस और अपसद पुत्र कौन से हैं॥

हे राजन्! तीनों वर्णों की स्त्रियों से ब्राह्मण के जो ३ पुत्र होते हैं अन्य वर्ण की स्त्री से क्षत्रिय के जो पुत्र होते हैं और एक वैश का पुत्र यह ६ उपध्वंस हैं ब्राह्मणी क्षत्रिया और वैश्या से शूद्र जात तीन पुत्र चंडाल वात्य वैद्य कहाने वाले वैश्य के ब्राह्मणी और क्षत्रिय से उत्पन्न मागध, वामक और क्षत्रि का ब्राह्मणी से उत्पन्न किया सूत यह छः अपसद हैं॥

युधिष्ठर जी ने पूछा कि क्षेत्रज माता के वर्ण वाले होते हैं या वीर्य दाता का वर्ण रखते हैं॥

हे राजन्! विवाह से पूर्वक गर्भवती से विवाह कराने वाले ब्याही वह पुत्र कहता है और उसे क्षेत्रज कहते हैं और जिस लड़के को माता पिता ने मार्ग में त्याग कर दिया हो और उसे कोई मनुष्य उठाकर अपना पुत्र बनाले वह कृत्रिम

कहलाता है उस का वर्ण पोषण करने वाले का ही होता है युधिष्ठर ने पूछा कि कुत्रम के संस्कार किस रीति से और विवाह किस की कंया से होना चाहिये ॥

उस के संस्कार पालन वाले पिता के वर्ण रीत्यानुसार होने चाहिये और उसी वर्ण की कन्या से उसका विवाह भी होना चाहिये ॥

सैंतालीसवां अध्याय

—:o:—

महाराज च्यवन का जल में निवास और माहीगीरों के जाल में फसना ॥

युधिष्ठर ने प्रश्न किया कि दूर या समीप रहने में किस प्रकार की शांति होती है यह और गौओं का माहात्म्य कृपा से वर्णन कीजिये ॥

भीष्म जी बोले कि इस विषय में राजा नहुष और च्यवन ऋषि का संवाद तुझे सुनाता हूं ॥

एक समय उग्र तपधारी च्यवन ऋषि गंगा यमुना के संगम स्थान पर तप की इच्छा से वेग प्रवाह में जा बैठे और बहुत काल तक वहीं समाधी स्थित रहे वहां पर देव योग से माही गीर भी आ निकले और उन्हों ने वहीं अपने जालों को तन दिया और बहुत सी मछलियों को पकड़ा उन ही मछलियों में

ही वह तेज व्रतधारी महात्मा भार्गव च्यवन भी फंस गये, माहीगीरों ने इन को देख कर दंडवत प्रणाम के अनन्तर प्रार्थना की कि हे मुनि जी ! आप हमारे इस अपराध को क्षमा करें जो अज्ञानता से हम से हुआ है ॥

च्यवन जी ने कहा कि मेरा जीना और मरना इन्हीं मछलियों के संग है जिन को तुम ने पकड़ा है क्योंकि मैं समीप रहने के कारण इन को त्याग नहीं सकता ॥

यह सुन भयभीत हो धीवरों ने यह सब वृत्तान्त राजा नहुष से आकर कहा ॥

अड़तालीसवां अध्याय

—०—

च्यवनाभिरत्यान और गौओं का महात्म्य ॥

राजा नहुष यह समाचार पाते ही तत्काल मंत्रियों और पुरोहित सहित वहां पहुंचा और हाथ जोड़ प्रार्थना करने लगा कि महाराज ! जो आज्ञा मेरे योग्य हो दीजिये ॥

च्यवन ऋषि ने कहा कि इन धीवरों ने मछलियों और मेरे पकड़ने में बड़ा परिश्रम किया है इन को मेरे मूल्य सहित मछलियों के दाम दीजिये, राजा एक हज़ार रुपे देने लगा ऋषि ने कहा क्या मेरे दाम एक हज़ार हैं ? राजा ने प्रार्थना की कि एक लाख रुपया दे दूं या जो आप आज्ञा करें, ऋषि ने कहा

कि हे राजन्! तुम अपने मंत्रियों से संमत कर मेरे यथार्थ दाम इन को दो, तब राजा ने कहा पुरोहित जी आप करोड़ रुपे इन को देदें, च्यवन जी बोले मैं करोड़ रुपे का हूं तुम अपने ब्राह्मणों की सम्मति लेकर आप दो, नहुष ने कहा कि मैं इन को आधा या सारा राज्य दे देता हूं ऋषि बोले मेरा यह भी मूल्य नहीं तुम ऋषियों से विचार कर मेरे दाम नियत करो ॥

हे राजन्! वहीं एक मुनि भी बैठे थे राजा ने उन से प्रार्थना की हे तपोधन! आप इन को प्रसन्न करें तब ऋषि ने कहा कि राजन् तीनों वर्णों में ब्राह्मण और गौ श्रेष्ठ हैं आप इन के दाम गौ नियत कीजिये ॥

राजा ने प्रसन्न हो मंत्री पुरोहित सहित च्यवन ऋषि को हाथ जोड़ कर प्रार्थना की कि हे तपोधन! उठो २ मैं गौ देकर आप को इन से मोल लेता हूं, यह सुन च्यवन ऋषि प्रसन्न हो बोले कि हे निष्पाप! तुम ने मुझ को उचित दामों से मोल लिया है क्योंकि मैं इस लोक में गौ के समान और किसी धन को नहीं देखता हूं गौ लक्ष्मी का मूल मनुष्यों का अंत और देवताओं की हव्य है गौ यज्ञों का मुख है यह गौ अमृत देने वाली है ॥

निषाद बोले हे समर्थ मुनि! आप अग्नि रूप हैं यह दास हाथ जोड़ कर आप से प्रार्थना करते हैं कि आप इस गौ को स्वीकार करें और हम पर भी अनुग्रह करें ॥

च्यवन जी बोले कि मैं तुम्हारी गौ को लेता हूं और

तुम को वर देता हूं किन्तु इन भर्खार्यो सहित स्वर्ग को जाओगे ॥

उन्चालवां अध्याय

—:०:—

कुशिक राजा का च्यवन ऋषि की सेवा ॥ वर्णन ॥

हे पितामह! कृपा पूर्वक परशुराम जी का पूर्ण इतिहास तथा कौशिक वर्ण क्षत्रियों का पूजनीय बनने का ब्योरा कथन करें ॥

भीष्म जी बोले कि इस विषय में भी प्राचीन इतिहास है जिस में च्यवन ऋषि और कौशिक का प्रश्नोत्तर है सुनो ॥

हे राजन्! भविष्यत काल में अपने वंश में होने वाले दोष को विचार कर तपोधन भार्गवजी कौश वंश को भस्म करने की इच्छा से राजा कुशिक के पास जाकर यह वचन बोले कि हे राजन्! मैं कुछ काल तेरे पास रहना चाहता हूं ॥

राजा ने कहा कि हे भगवन्! आप की परम अनुग्रह है इतना कह कर राजा ने रानि सहित ऋषि का स्वागत कर विधि पूर्वक पाद्य अर्घ आचमन से पूजन किया और प्रार्थना की कि हे भगवन्! हम अनाथ हुए आप जो आज्ञा दें वह मैं करूं हे भगवन्! यदि यह राज्य धन गौ आदि किसी सामग्री की

आवश्यकता हो तो आज्ञा दें और यदि राज्य की अभिलाषा हो तो राज्य सिंहासन आप का है आप के आने से मैं सनाथ हुआ ॥

च्यवन ऋषि ने प्रसन्न हो कर कहा कि मैं राज्य धन गौ आदि से कुछ नहीं चाहता मैं एक व्रत धर्म में प्रयोग करना चाहता हूं उस में तुम दोनों की सेवा चाहता हूं ॥

राजा रानी ने बड़ी प्रसन्नता से स्वीकार किया और एक निवासस्थान में जो सब सामग्री से सजा था ऋषि को उतारा ॥

हे राजन् ! इतने में सायंकाल हो गया ऋषि ने भोजन के लिये कहा राजा ने प्रार्थना की कि आप को किया २ वस्तु प्रिय हैं वही उपस्थित करूं । ऋषि ने कहा जो तय्यार है वही भेज दीजिये, राजा ने बड़ी श्रद्धा से थाल परोस मंगवाया ॥

ऋषि ने भोजन कर कहा कि मुझ निद्रा ने सताया है अब मैं सोना चाहता हूं परन्तु जब मैं सो जाऊं तो मुझे जगाना नहीं और तुम दोनों ने मेरे पाओं को दबाते रहना ॥

राजा ने शयनागार में एक उत्तम पलंग पर उनका शयन कराया और उन दोनों ने बड़ी प्रसन्नता से पाओं दबाने आरंभ किये॥

हे राजन् ! च्यवन महर्षि २१ दिन तक न जागे, राजा स्त्री सहित बड़ी सावधानता से चरणों को दबाता रहा ॥

इक्कीसवें दिन च्यवन महर्षि स्वयं उठे और उठ कर बिना कुछ कहे सुने घर से निकल गये, क्षुधा से व्याकुल वह राजा और रानी भी उनके पीछे २ चल दिये परन्तु उस उत्तम मुनि ने लौट कर उन को न देखा, परंच उन के देखते २ ही वह गुप्त हो गये ॥

पचासवां अध्याय

—:०:—

च्यवन परिचर्य्या और च्यवन कुशिक संवाद ॥

इस प्रकार ऋषि के गुप्त हो जाने पर थकामांदा राजा लज्जा युक्त हो बड़ी चिंता में पड़ा हुआ स्त्री सहित अपने घर को लौटा और घर में आ उसी पलंग पर ऋषि को सोता पाया, यह देख आश्चर्य्य हो राजा रानी उनके चरणों को फिर दबाने लग गये ॥

हे राजन् ! २१ दिन तक फिर ऋषि जी सोये रहे इक्कीसवें दिन जाग कर च्यवन ने राजा को आज्ञा दी कि तेल लाओ मैं तेल मल कर स्नान करूंगा। राजा अपने हाथों से ऋषि को उत्तम सुगंधित तेल श्रद्धा से मलने लगा ॥

तब च्यवन जी स्नानागार में चले गये और वहां स्नान की उत्तम चौंकी पर बैठते ही राजा के सन्मुख गुप्त होगये ॥

यह देख राजा रानी के मन में तनिक भी लोभ नहीं हुआ फिर ऋषि को पूजन के आसन पर उन्हों ने बैठे देखा और नम्रता से उन से प्रार्थना की कि भोजन तयार है ऋषि ने कहा अच्छा लाओ, तब राजा ने नाना प्रकार के भोजन और उत्तमोत्तम फल भेट किये, जिन को ऋषि ने अंगोछे से ढक कर भस्म कर दिया और आप गुप्त होगये ॥

हे युधिष्ठिर च्यवन ऋषि ने इन की सेवा में तनिक भी त्रुटि न देख आज्ञा दी कि मैं बाहर जाना चाहता हूं एक रथ

चाहिये राजा ने हाथ जोड़ प्रार्थना की महाराज रथ क्रीड़ार्थ चाहिये या युद्धार्थ ॥

ऋषि ने कहा कि अपनी युद्ध सामग्री से सुसज्जित रथ लाओ राजा रानी ने इस के आगे आप जुत कर रथ ला खड़ा किया और प्रार्थना की कि भगवन किधर जाने का विचार है ॥

च्यवन जी ने कहा कि धीरे २ रथ को चलाना जिस से मुझे दुख न हो और आगे से किसी पुरुष को हटाया न जावे मैं मार्ग में धन लुटाना चाहता हूं यह सुन राजा ने सेवकों को आज्ञा दी उन्हों ने ऋषि की आज्ञानुसार धनादि प्रस्तुत कर दिया ऋषि रथ पर सवार हुये और राजा रानी जो कि ५०दिन से भूखे थे यन केन रथ को ले चले, राजा रानी के कंधों से रुधिर की धारा बहने लगी जिसे देख नगर निवासी महा शोक ग्रसित दुःख से व्याकुल हुये परन्तु राजा रानी की श्रद्धा और भक्ति में किंचित भेद न हुआ ॥

नगर निवासी शाप के भय से कुछ न बोल सके, किन्तु परस्पर यह कहते थे कि देखो तप का प्रभाव कैसा है फिर ऋषि ने कुबेर के समान धन को लुटाया ॥

हे राजन ! राजा रानी की श्रद्धा भक्ति को देख च्यवन ऋषि प्रसन्न हो रथ से उतर आये हाथों से उन को रथ से खोल कर बोले कि मैं तुम पर प्रसन्न हूं वर मांगो और उन के रुधिर को अपने हाथों से पोंछा राजा रानी ने कहा भगवन! हमें तनिक भी क्लेश नहीं है हम आप के प्रभाव से आनंद युक्त हैं, ऋषि जी अतीव प्रसन्न हुये और बोले कि मैं गंगा

तट पर रहूंगा तुम ने कल प्रातःकाल मुझ से मिलना ॥

इस प्रकार आज्ञा पा कुशिक राजा स्त्री सहित ऋषि को प्रणाम कर नगर को आया उधर च्यवन जी ने एक उत्तम बाग जो कि रत्नों से जड़ित था रच दिया ॥

इक्यावनवां अध्याय

—०—

च्यवन ऋषि का प्रसन्न हो कुशिक को अपना वैभव दिखाना और वर के लिये कहना ॥

प्रातः काल सन्ध्या वंदन से निवृत्त हो राजा रानी सहित च्यवन के पास गया वहां राजा ने एक अद्वितीय रत्न जड़ित बाग देखा जिस में सुन्दर २ महल नाना प्रकार के रत्नों से जड़ित सुवर्ण के पलंग उत्तमोत्तम भोज्य पदार्थ स्थान २ पर धरे थे, ऋषि मुनि अत्यन्त मधुर वाणी से वेद ध्वनि कर रहे थे राजा ने महल के भीतर जा कर एक रत्न जड़ित सुवर्ण के पलंग पर च्यवन जी को बैठे देखा ॥

हे युधिष्ठिर ! इस प्रकार च्यवन जी ने राजा को विमोहित किया, फिर राजा के देखते ही वह उद्यान लुप्त हो गये यह देख कुशिक चकित हो रानी से बोला कि देखा तप का कैसा प्रभाव है, तप के बल से ही च्यवन महर्षि ने यह सब विचित्रता दिखलाई है ब्राह्मणों के ब्राह्मत्व का ही यह प्रताप है, हे

कल्याण ! ब्रह्मशास्त्र बड़ा कठिन है। च्यवन ने कहा मैं तुम्हारी परिचर्या से अतीव प्रसन्न हूं वर मांगो, कुशिक ने हाथ जोड़ प्रार्थना की कि आपने बड़े अनुग्रह से मेरी कुल की रक्षा की यह आप की बड़ी अनुग्रह है हे भगवन् ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मेरे हृदय में एक संदेह है वह आप निवृत्त कीजिये ॥

च्यवन जी ने कहा कि हे राजन् ! पहिले तुम वर लो फिर मैं तुम्हारे संदेह को दूर कर दूंगा ॥

राजा ने प्रार्थना की कि हे तपोधन ! आप पूर्वक मेरे घर में निवास और इस प्रकार के कौतुकों का वर्णन कीजिये ॥

च्यवन जी बोले कि हे राजन् ! देवताओं की सभा में ब्रह्मा जी के इन वचनों को सुना कि ब्राह्मण और क्षत्रियों की शत्रुता से शवणादिकों को संकट होगा इस लिये तेरे नाश और तेरी कुल के नाश के लिये मैं गया था, तूने मेरी इस प्रकार सेवा की जिस से तुम जीते हो अन्यथा अब तक तू नाश हुआ होता, यह संपूर्ण कौतुक तेरे नाश के लिये मैंने किये परन्तु तूने मुझे शापका कोई अवसर नहीं दिया, जिस से मैं तुम पर प्रसन्न हूं अब तेरे मन की अभिलाषा को भी मैंने जान लिया है। तेरी आशा है कि राज्य कर ब्राह्मण वर्ण या तप करूं ॥

हे राजन् ! यह ऐसा ही होगा कुशिक की संतान कौशिक वर्ण के ब्राह्मण होंगे और तेरा पौत्र वेदपाठी तपस्वी होगा ॥

हे राजन् ! अब तूं शीघ्र वर मांग क्योंकि मैं तीर्थों को अब जाऊंगा, राजा ने कहा कि हे भगवन् ! जो आप ने कहा है यह

ऐसा ही हो परंतु आप मुझे यह भी कृपा पूर्वक बतलादें कि मेरी वंश में कौन मेरा बन्धु ब्राह्मण होगा ॥

तेरा पौत्र जमदग्नि प्रतापी राजा का पौत्र विश्वामित्र तेजस्वी तपो मूर्ति होगा और तेरी ही कुल में क्षत्रियों का शत्रु परशुराम होगा ॥

च्यवन ऋषि के इन वचनों को सुन कर राजा बड़ा प्रसन्न हुआ और कहने लगा कि यह ऐसा ही हो तब भगवन च्यवन ने दूसरी वार भी वर मांगने की आज्ञा दी राजा कुशिक ने प्रार्थना की कि हे भगवन् ! मेरी संतान ब्राह्मण होकर मन से धर्म में लगे; च्यवन ऋषि तथास्तु कह राजा से आज्ञा ले तीर्थ यात्रा को चल दिये ॥

बावनवां अध्याय

--:०:--

तप का फल और शुभ कर्म्मों के फल का वर्णन ॥

युधिष्ठिर जी बोले कि हे पितामह ! मैं कौरव वंश के विनाश और मित्रवर्ग के क्षय को देख परम दुःखी हूं अब इस सर्व नाश रूप पाप से नरक प्राप्ती को दूर करने के लिये तप करना चाहता हूं आप मुझे उपदेश दें ॥

भीष्म जी बोले कि हे पुत्र ! तप से स्वर्ग, शुभ कीर्ति, दीर्घायु, भोगों की प्राप्ति, परोक्षापरोक्ष ज्ञान और विज्ञान मनुष्य को प्राप्त होते हैं ॥

दान से सुख, ब्रह्मचर्य्य से दीर्घायु, अहिंसा से रूप और उत्तम कुल में जन्म होता है। गुरु सेवा से विद्या और श्राद्ध करने से संतान मनुष्य को मिलती है॥

वैशम्पायन जी बोले कि भीष्म जी से इस प्रकार शुभ कर्म्मों के शुभ फल तथा तप के स्वर्ग आदि फल को सुन युधिष्ठिर जी अपने भाईयों से बोले कि मैं ने तप की इच्छा से आश्रम निवास की इच्छा छोड़ दी है तुम भी स्वीकार करो तब द्रौपदी सहित सब पाडवों ने स्वीकार किया॥

तिरपनवां अध्याय

तालाब और वृक्ष आदि लगाने का महात्म्य॥

फिर युधिष्ठिर जी ने बाग बागीचे और तड़ागादि लगाने का फल भीष्म पितामह जी से पूछा, भीष्म जी बोले कि हे पुत्र! इस पृथ्वी पर तड़ाग के बनवाने से मनुष्य को धर्म्मार्थ काम की प्राप्ति और इस लोक में सुंदर यश मिलता है क्योंकि तड़ाग पर देव, गधर्व, पितर, मनुष्य और पशु पत्ती आदि आश्रय लेते हैं॥

जिस के तालाब से गौ मनुष्य जल पीते हैं उसे अश्वमेध का फल मिलता है॥

हे राजन्! परलोक में तिलदान, जलदान, दीपदान, जागरण और सजातियों से मेल बड़ी कठिनता से प्राप्त होते हैं इस लिये जलदान का बड़ा भारी महात्म्य है॥

हे नरोत्तम! स्थावर सृष्टि की छः जातियें हैं अत्रादिवृत्त, २ अनारादि गुल्म, ३ अंगूरादिलता, ४ खरबूजादिलता, ५ वांसादित्वकसार और ६ घासादि तृण इन छः जाति के वृक्षों के लगाने से इस लोक में सुख तथा कीर्ति और परलोक में उत्तम गति मिलती है, वृत्त लगाने वाला मनुष्य पिता के भूत और भविष्य संतान को तार देता है क्योंकि वृत्त के पुष्पों से देवताओं को, फलों से पितरों को और छाया से अतिथि लोगों को सुख मिलता है॥

वृत्तों का आश्रय ऋषि मुनि तथा सर्व साधारण मनुष्य और पशु पत्ती भी लेते हैं सार यह है कि तड़ाग और बाग बागीचे लगाने वाले, यज्ञ करने वाले और सत्य वक्ता मनुष्य स्वर्ग में प्रतिष्ठा पाते हैं॥

चव्वनवां अध्याय

—:-०-:—

दान महिमा, दान की विधि और फल॥

युधिष्ठर ने कहा हे कौरवों में श्रेष्ठ! जो दान वेदी से बाहिर किये जाते हैं उन में से उत्तम दान कौनसा है उस का फल किसे मिलता है॥

भीष्म जी बोले कि हे पुत्र! जीवों को निर्भयता दान आपत्ति काल में सहायता और भूखे प्यासे को अन्न और जल देना सब दानों में उत्तम दान है, दान का फल दाता को

मिलता है, गौ दान, पृथ्वी दान और सुवर्ण दान यह भी उत्तम दान हैं यह दान साधु और ब्राह्मणों को देने चाहियें ॥

हे युधिष्ठर ! जो निर्दय अहंकार से याचना करने वाले का तिरस्कार करता है वह बड़ा ही निर्दय है। शत्रु के खड्ग से पीड़ित शरण लेने वाले जीव की रक्षा करनी आवश्यक है हे राजन् ! जो मनुष्य दुर्बल, निर्धन, उपजीवका से दुःखी की सहायता करता है उस के समान कोई मनुष्य नहीं है, कुटंबी को विना मांगे सहायता देनी उचित है। हे युधिष्ठर ! निमंत्रणादि उस ब्राह्मण को स्वीकार करने चाहियें जो गुरू से विद्या पढ़ कर जप, तप, सन्ध्या वंदन को नित्य करता हो अग्नि होत्री ब्राह्मण भी दान के पात्र हैं ॥

हे राजन् ! तुम ने ब्राह्मणों को अवश्य तृप्त करते रहना। जो ब्राह्मणों की सेवा नहीं करते उनका जीना व्यर्थ है। ब्राह्मण सर्व पूज्य हैं, क्षत्रियों की सेवा वैश्य और शूद्रों को करनी उचित है, शूद्रों को वैश्यों की सेवा करनी चाहिये यह वेद की आज्ञा है ॥

हे युधिष्ठर ! जैसे मुझे ब्राह्मण प्यारे हैं वैसे मुझे मेरा पिता भी प्यारा नहीं ॥

हे राजन् ! मैं इस दशा में भी दुःखी नहीं क्योंकि मैंने ब्राह्मणों की सेवा की है ॥

हे पितामह ! यदि दो ब्राह्मण वेद विद्या विशारद एक से हों एक याचक हो और दूसरा अयाचक तो दान किसे देना चाहिये ॥

भीष्मजी बोले कि अयाचक को दान देना चाहिये क्यों

कि धर्यवान् संतोषी ब्राह्मण देवताओं को तृप्त करते हैं, याचक ब्राह्मण याचना से ही अपना तेज नष्ट कर लेते हैं, प्रातःसाय दोनों समय जो अग्निहोत्र का फल होता है वही फल वेद विद्या और व्रत में पूर्ण ब्राह्मण को धन देने से होता है ॥

हे पुत्र ! जिन पुरुषों की स्त्रियें अतिथि सेवा में ऐसे उत्साहित होती हैं जैसे खेती के करने वाले मेघों को चाहते हैं वह शुभ गति पाते हैं ॥

हे तात ! प्रातः स्नान करने के समय तुम अतिथियों के लिये अन्न की आज्ञा दो, त्रिकाल संध्या अवश्य करो हिंसा न करना, शान्ति धैर्य को न त्यागना क्योंकि यह यज्ञ के अवभृथ स्नान के तुल्य होते हैं ॥

पचपनवां अध्याय

—:०:—

युधिष्ठर को धर्मोपदेश और पृथ्वी दान महिमा ॥

युधिष्ठर ने प्रश्न किया कि दान और यज्ञ इन दोनों में से दान किस किस काल में कैसे ब्राह्मण को किस रीति से देना उचित है वेदों में दान देना या श्रद्धा और दया से दान देना उत्तम है ॥

भीष्म जी ने कहा कि क्षत्रि धर्म कर्म करने वाले क्षत्री का श्रेष्ठ कर्म दान ही है महात्मा ब्राह्मण राजा का

दान नहीं लेते इस लिए राजा को यज्ञादि में पूर्ण दक्षिणा उन को देनी चाहिये बड़ कुटंबी ब्राह्मणों का पोषण करना कल्याण दायक है ॥

हे राजन्! अर्थी ब्राह्मण को गुप्त दान देते रहना इस से तुम को अश्वमेघ यज्ञ का फल मिलेगा ॥

हे राजन्! यह सदैव याद रखो कि ब्राह्मणों के दुःखी होने से धर्म का नाश, धर्म्म नाश से जीवों का नाश होता है जब २ राजा प्रजा से धन संगृह करे तब २ एक बड़ा यज्ञ करे वृद्ध बालक अंधे और दुःखियों से राजा को धन नहीं लेना चाहिये । क्योंकि इन से लिया हुआ धन देश और राज लक्ष्मी का नाश करता है । जिस देश में ज्ञानी लोग क्षुधा से पीड़ित रहते हैं उस देश का राजा ब्राह्मण हत्या का भागी होता है जिस की प्रजा दुःखी रहती है उस राजा को धिक्कार है । जिस राजा के देश में स्त्रियें चोरों से सताई जाती हैं वह राजा जीता भी मुरदे के समान है । प्रजा के पाप और पुण्य के फल का भागी राजा भी है इस लिये तुझे प्रजा को सदैव पापों से बचाये रखना चाहिये ॥

युधिष्ठर बोले कि "इदंदेयमिदंदेयम्" अर्थात यह देना चाहिये यह देना चाहिये इस श्रुति को सार्थक करने वाले राजा लोग दान देते हैं सर्व से उत्तम दान क्या है ॥

भीष्म जी बोले हे पुत्र! इस संसार में भूमि दान से बढ़ कर कोई दान नहीं, पृथ्वी दान देने वाला दूसरे जन्म में राजा बनता है इस से पाप नष्ट होते हैं, पृथ्वी दान

वेदज्ञ ब्राह्मणों को ही देनी चाहिए, पृथ्वी दान अश्व मेध के यज्ञ के समान फल दायक है जैसे माता अपने दूध से संतान को पालती है वैसे ही पृथ्वी दान कर्ता को अपने रसों से पोषण करती है, भूमि दान कर्ता के पितर सदैव रहते हैं॥

हे राजन्! पूर्व काल में परशुराम जी ने पृथ्वी के इस वचन को सुन कर कि "मुझ को दान करो दान करो फिर तुम मुझ को पाओगे" इसी से उन्हों ने पृथ्वी का दान किया था॥

राज्याभिषेक के समय राजा को यह उपदेश सुनाया जाता है कि साधुओं की पृथ्वी को न छीनना, सदा धर्म्म में रहना जो राजा धर्म्म में नहीं रहता उस की प्रजा दुःखी रहती है॥

जैसे भूमि में बोये हुये बीज उपजते हैं वैसे ही भूमि दाता के अभीष्ट सिद्ध होते हैं। यह पृथ्वी जगत की माता और पिता रूप है इस के तुल्य जल, अग्नि, वायु, आकाश चारों तत्व नहीं हैं।

हे राजन्! एकबार इन्द्र ने यज्ञ के अनंतर बृहस्पति जी से पूछा था कि सब दानों में से बड़ा दान क्या है, तो बृहस्पति जी ने उत्तर दिया था कि हे देवराज! सुवर्ण, गौ और पृथ्वी दान सब से बड़े दान हैं, क्योंकि युद्ध में मरने वाले और अनेक यज्ञादिकों के करने वाले भी भूमि दान कर्ता की गती को नहीं पा सकते, इन दानों में भी भूमि दान सब से बढ़ कर है क्योंकि भूमिदान से प्रसन्न हुये लोग कभी नाश नहीं होते॥

हे राजन्! भूमिदान कर्ता अपनी दश कुलों को तारता है

और भूमि दान उठाने वाला अपनी दश कुलों को नरक में पहुंचाता है ॥

हे देवराज ! माता के समान कोई गुरू नहीं, सत्य के समान कोई धर्म नहीं, दान के समान कोई खजाना नहीं ॥

यह सुन कर इन्द्र ने धन रत्नों सहित पृथ्वी का दान कर बृहस्पति जी को दिया ॥

युधिष्ठिर ने फिर पूछा गुणवान ब्राह्मण को दान करना क्या २ दे दान का फल इस लोक में क्या होता है और परलोक में क्या होता है ॥

भीष्म जी ने उत्तर दिया हे राजन् ! एक बार नारद जी ने मुझ से कहा था कि देवता आप अन्न दान से प्रसन्न होते हैं क्योंकि शरीर यात्रा इस के बिना नहीं हो सकती अन्न ही बल पराक्रम और प्राणों का आधार है ॥

इस लिये सब को अन्न दान करना उचित है, यह दान चांडाल और कुत्ते तक को भी दिया हुआ व्यर्थ नहीं जाता अन्न दान के लिये यद्यपि पात्र के विचार की आवश्यकता नहीं फिर भी उत्तम पात्र ब्राह्मण आदि को अन्न देने से अधिक फल होता है, हे राजन् ! जिस घर में अतिथि याचक अन्न से तृप्त किये जाते हैं वह घर शीघ्र ही वृद्धि को पाता है और जिस घर से निराश होकर जाते हैं वह घर शीघ्र ही नाश हो जाता है ॥

हे युधिष्ठिर ! अन्न दान की महिमा शास्त्रों में बड़ी की है इस लिये तुम ने भी अन्न दान सदैव करते रहना ॥

छप्पनवां अध्याय

--:o:--

नक्षत्र योग दान महिमा ॥

युधिष्ठरजी बोले कि कृपा पूर्वक नक्षत्र योग दान का वर्णन करें। भीष्म जी ने उत्तर दिया कि यही प्रश्न देवकी जी ने नारद जी से किया था उन्हीं का संवाद कहता हूं सुनो॥

नारद जी बोले कि कृत्तिका नक्षत्र में घृत युक्त क्षीर का भोजन, रोहणी नक्षत्र में घृतयुक्त अन्न का दान, मृगाशिर में सवत्सा गौ का दान, आर्द्रा नक्षत्र में तिल युक्त खिचड़ी का दान, पुनर्वसु नक्षत्र से पूए और खाद्य पदार्थों का दान करने का बड़ा फल है॥

पुष्य नक्षत्र में सुवर्ण दान, श्लेषा नक्षत्र में चांदी और बैल का दान, मघा नक्षत्र में तिल से पूरित घृतका पात्र का दान पूर्वा फाल्गुणी में अन्न दान, उत्तरा फाल्गुणी में घृत दान, हस्त नक्षत्र में ४ गज युक्त रथ का दान, चित्रा नक्षत्र में वृषभदान स्वाती में अभीष्ट धन का दान, विशाखा में गौ, अन्न, अनुराधा नक्षत्र में वस्त्र और उत्तरायन भोजन दान, ज्येष्ठा नक्षत्र में धन का दान, मूला में मूल फल का दान पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में दुग्ध पात्र का दान, उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में चुर्मों का पात्र का मिश्री सहित दान है, अभीजित में मधु घृत संयुक्त दूध का दान. श्रवण में दुशाले और कंबलादि का दान, धनिष्ठा में वस्त्र दान, शतभिषा में अगरचंदनादि का दान। पूर्वाभाद्रपदा

राज माष का दान, उत्तरा भाद्रापदा में पशु का दान, रेवती नक्षत्र में कांस पात्र, रोहणी संयुक्त गोदान, अश्विनी नक्षत्र में घोड़ों सहित रथ का दान, भरणी नक्षत्र में दक्षिणा सहित तिल की गौ का दान करना चाहिये ॥

इस प्रकार दान करता को बहुत ही पुण्य और सुख तथा उत्तम गति मिलती है ॥

सतावनवां अध्याय

—:०:—

सुवर्ण आदि दान महात्म्य तथा जल दान की महिमा ॥

भीष्म जी बोले कि सुवर्ण के दाता सम्पूर्ण अभिष्टों को पाते हैं, सुवर्ण दान से आयु बढ़ती है, पितरों का स्वर्ग अविनाशी होता है मनु जी का सिद्धांत है कि जल दान भी उत्तम दान है ॥

घृत दान से बृहस्पति और अश्वनी कुमार देवता प्रसन्न होते हैं, कार्तिक मास में घृत दान का बड़ा महात्म है, साधु महात्मा तथा यज्ञ के कर्ता ब्राह्मणों को; लकड़ियां भी दान करनी चाहीये, ग्रीष्म और वर्षा ऋतु में छत्र दान का बड़ा फल है ॥

हे राजन्! शाण्डिल्य ऋषि का कथन है कि शकट दान का बड़ा महात्म है, शकट दान कर्त्ता कठिन आपत्तियों से छूट जाता है ॥

युधिष्ठिर ने प्रश्न किया कि बालू से संतप्त पाओं वाले पात्र को जूती देने का क्या फल है ॥

भीष्म जी बोले कि ब्राह्मण को जूते का जोड़ा पहिनाने से पहिनाने वाले के सब संकट दूर होते हैं, शत्रुओं को विजय करता है और शकट दान के फल को पाता है ॥

युधिष्ठिर जी ने पूछा कि तिल, भूमि, गौ और अन्न दान के फल का भी वर्णन कीजिये ॥

ब्रह्मा जी ने तिलों को यज्ञों के लिये निर्माण किया है तिल पितरों को तृप्त करते हैं, माघ के महीने में तिलों के दान का बड़ा महात्म है। हे राजन् आपस्तम शंखादि ऋषियों ने तिलों का दान किया और स्वर्ग में पधारे ॥

हे राजन् पूर्वकाल में देवताओं ने ब्रह्मा जी से प्रार्थना की कि हे देव! आप सब पृथ्वी और स्वर्ग के स्वामी हैं हम यज्ञ के अर्थ आप से आज्ञा मांगते हैं क्योंकि मालिक की आज्ञा बिना पृथ्वी पर यज्ञ निष्फल होता है ॥

ब्रह्मा जी ने हिमालय की तलहटी पर यज्ञ की आज्ञा दी, तब अगस्त्य, कश्यप, भृगु आदि ऋषियों ने वहीं यज्ञ किया ॥

हे राजन्! भूमि दान करने वाला सर्व आपत्तियों से छूट जाता है। शांत चित्त वेद पाठी ब्राह्मण जिस के घर में रहते हैं, वह पुरूष ब्रह्म लोक को भोगता है ॥

हे राजन्! खेती की भूमि के दान से लक्ष्मी, रहने के योग्य भूमि के दान से स्वर्ग मिलता है ॥

हे राजन् ! गौ दान के तुल्य और कोई दान नहीं क्योंकि यह घृत, दूध, माखन गोवरादि को देने वाली अन्न की दाता है, जो मनुष्य गौ दान करता है वह सब आपत्तियों से छूट जाता है, गौ दान करने वाला नरक को नहीं जाता, गौ का दूध अमृत के तुल्य है ॥

गौ के दान करने वाला अमृत दान करता है जो मनुष्य बैल का दान करता है वह स्वर्ग में प्रतिष्ठा पाता है। गौ जीव मात्र की प्राण दाता है इस लिये गौ दान करने वाला प्राणों का दाता है ॥

हे राजन् ! कृषिकर्त्ताओं, गौओं को बेचने वालों और परलोक तथा ईश्वर के न मानने वालों को गौ दान नहीं देना चाहिये, जो मनुष्य इन को गौ दान देता है वह नरक गामी होता है जो गौ उर्मल वंध्या बछड़े से हीन हो उस का दान नहीं करना चाहिये ॥

हे राजन ! अन्न दान भी बड़ा दान है, सुवर्ण और वस्त्र दान का उतना फल नहीं जितना अन्न दान का है क्योंकि अन्न बल, तेज और प्राणों के देने वाला है जो मनुष्य कार्तिक शुक्ल पूर्णमासी को अन्न दान करता है वह सब प्रकार की आपत्तियों से छूट सुखों को पाता है, जो मनुष्य आप न खाकर अतिथियों को खिलाता है वह ब्रह्म लोक को पाता है ॥

अठासठवां अध्याय

—०—

जलदान महिमा ॥

युधिष्ठर जी ने प्रश्न किया कि जल दान का क्या महात्म है वह वर्णन कीजिये ॥

भीष्मजी बोले कि अन्न प्राणों के देने वाला है प्राण दान देने का बड़ा फल है। परन्तु अन्न भी जलों से उत्पन्न होता है, नक्षत्रों का स्वामी चंद्रमा भी जलों से उत्पन्न हुआ है और स्वधा नाम अमृत अन्न, औषधि, वीरुध, भी जल से उपजते हैं, जिन से जीव धारियों के प्राण प्रकट होते हैं देवताओं का अन्न अमृत है, पितरों का अन्न स्वधा है और पशुओं का अन्न वीरुध है, जल भी प्राणों की स्थिति का मुख्य कारण है, जल दान भी बड़ा दान है इस लिये मनुष्य को उचित है कि सदैव जल दान करता रहे ॥

जल का दाता संपूर्ण अभीष्टों को पाता है पापों से छूटता है और मृत्यु के पीछे शुभ गति को पाता है। हे राजन्! मनु जी कहिते हैं कि जल का दाता अविनाशी लोगों को पाता है ॥

युधिष्ठर ने प्रार्थना की कि कृपा करके तिल, दीप और वस्त्र दान का महात्म्य फिर वर्णन कीजिये ॥

भीष्मजी ने कहा कि पर्णशीलग्राम में दो ब्राह्मण वेद पाठी धर्मात्मा रहते थे, यमराज ने दूत को आज्ञादी कि अग-

स्त्य गोत्री शर्मा नाम ब्राह्मण को ले आओ, दूत यमराज की आज्ञानुसार उस ब्राह्मण को जो कि उस के गुणों के समान था, ले गया यमराज जी ने देखते ही कहा कि इसे वहीं छोड़ आओ और दूसरे को लाओ, तब उन वेद पाठी ने धर्म्म राज से कहा कि हे धर्म्मज्ञ! यदि मेरे जीवन के कुछ दिन शेष हैं तो मैं यहीं निवास करूंगा, यमराज ने कहा कि धर्मात्मन्! तुम अभी घर को जाओ यहां पर आयु क्षीण ही रह सकते हैं तुम जो वर मांगो मैं तुम को देता हूं॥

तब ब्राह्मण ने प्रार्थना की कि हे देव! जिस कर्म के करने से बड़ा पुण्य होता है वह कहें क्योंकि आप तीनों लोकों के प्रमाण रूप हैं, यमराज ने कहा हे विप्र! तिल दान संसार में बड़ा दान है विशेष कर श्राद्ध कर्म में और वैशाख शुदि पूर्णमा को तिल दान और जल दान का बड़ा महात्म है॥

इतना कह कर दूतों को आज्ञा दी कि इसे वहीं पहुंचा दो, घर में पहुंच ब्राह्मण उन की शिक्षा के अनुसार जलादि दान करने लगा॥

हे राजन्! इसी प्रकार यज्ञ दान दीप दान की प्रशंसा करते हैं दीप दान से मनुष्य पितरों का उद्धार करता है तप से नेत्र ज्योति मिलती है हे राजन! तुम भी दीप दान करो॥

युधिष्ठर जी बोले कि हे बड़े ज्ञानी! ऐसे दान का वर्णन करें जिसे चारों वर्ण कर सक्त हैं और वेद के भी अनुकूल हो॥

भीष्म जी बोले गौ, पृथ्वी और विद्या वा गायत्री आदि मंत्र यह तीनों बड़े दान हैं वह अभीष्ट फल पाता है जो गौ को नित्य घास डालता है; उस के सब मनोरथ पूर्ण होते हैं ॥

जिस घर में गौ भूखी प्यासी रहती है उस घर का नाश करने वाली होती है ॥

युधिष्ठर जी ने पूछा कि कैसी गौ संकल्प करने के योग्य है और कैसी गौ संकल्प नहीं करनी चाहिये ॥

भीष्म जी बोले कि जो ब्राह्मण बद चलन, पापी, लोभी मिथ्या वादी हो उसे दान देना नहीं चाहिये, दान लेने वाले ब्राह्मण के संपूर्ण शुभ कर्मों के फल का भागी दाता होता है ॥

हे राजन् ! गुरु की सेवा पाप को दूर करती है, अहंकार शुभ कीर्ति का नाश करता है दश गौ स्वर्ग की रुकावटों को दूर करती हैं ॥

उनसठवां अध्याय

—०—

गौ दान महात्म, राजा नृग का इतिहास ॥

हे राजन् ! जब यादव लोग द्वारका में जा बसे तो उन्हों ने एक कूप में एक बड़ा भारी गिरगट देख श्री कृष्ण जी से प्रार्थना की, तब श्री कृष्ण जी ने उसे बाहिर निकाला तो वह

गिरगट शरीर का त्याग यज्ञ कर्ता राजा के रूप (अपने असली रूप) में आ गया और उस ने अपने कर्म को वर्णन किया ॥

श्री कृष्ण जी ने उस से पूछा कि आप तो बड़े शुभ कर्मी थे तो फिर यह शरीर किस विध पाया आप ने लाखों गौएं ब्राह्मणों को दीं ॥

राजा नृग ने कहा कि एक वार मेरी संकल्प की हुई गौ मेरी गौओं में आगई मैंने उसे फिर संकल्प कर दूसरे ब्राह्मण को दे दी जिस से दोनों का विवाद होने लगा मैंने उस के बदले सैंकड़ों गौ देने को कहा परन्तु उस ने न माना जब मेरा शरीर छुटा तो मैं धर्म राज के पास पहुंचा, धर्मराज ने कहा कि अज्ञानता से कुछ पाप किया है उस का फल पहिले भोगना चाहते हो या पीछे तब मैंने कहा कि पहिले मैं पाप फल को भोगूंगा, तब से मैं गिरगट बन यहां पड़ा हूं अब वासुदेव जी ने मेरा उद्धार किया है ॥

भीष्म जी ने कहा कि उद्दालक ऋषि ने अपने पुत्र निचकेता से कहा कि मैं स्नान करते समय नदी पर ईंधन, कुशा और फूलादि भूल आया हूं वह जाकर शीघ्र ले आओ, निचकेता सत्य वचन कह नदी पर पहुंचा आगे नदी के वेग से वह बह गये थे इसने इधर उधर बहुतेरी तलाश की परन्तु कुछ न पाया लौट कर पिता से कहा कि मुझे वहां कुछ नहीं मिला, पिता ने क्रोध में आ शाप दिया कि तुम यम राज को देखो ॥

पिता के इतना कहते ही निचकेत मर गया उसे मरा देख

ऋषि विलाप करने लगा इस प्रकार वह दिन और रात्रि बीत गई ॥

प्रातःकाल होते ही निचकेत दिव्य शरीर धारण किये उठ बैठा पिता ने प्रसन्न हो उसे गले लगाया ॥

यम ने कहा कि तुम पिता के शाप से मेरे दर्शन को आये हो मरे नहीं मैं तुम पर प्रसन्न हूं वर मांगो मैंने प्रार्थना की कि आप मुझ अपने लोक के संपूर्ण स्थान दिखलायें, तब यमराज ने एक उत्तम रथ पर बिठा अपनी समस्तपुरी और महात्माओं के निवास स्थानों को दिखलाया और दूध, मधु, घृत की पवित्र नदियें भी दिखलाईं। मैंने प्रार्थना की कि यह उत्तम नदियें किस पुण्य से मनुष्य को प्राप्त होती हैं यमराज ने कहा कि हे पुत्र! गोरस के दाता और कमाईयां से गौत बेचने वाले को यह नदियें भोगनी मिलती हैं। बैल का दान करने वाला भी स्वर्ग भोगता है ॥

तब मैंने पूछा कि जिस के यहां गौ कोई न हो वह स्वर्ग सुख किस प्रकार भोगते हैं, यमराज जी ने मुझे उत्तर दिया कि हे पुत्र! गौ घृत और तिल दाता को यह दुग्धादि की नदियें प्राप्त होती हैं ॥

हे राजन्! फिर निचकेता ने पिता से कहा कि आप का शाप मेरे लिये वर हुआ है क्योंकि दिव्य दर्शन और उपदेश मिला है ॥

गौ और बैल दोनों के दान से संपूर्ण तीर्थों का फल होता है ॥

हे पुत्र ! जिस ने मनुष्य शरीर धार एक गौ भी दान नहीं की उस का जन्म व्यर्थ है ॥

युधिष्ठर ने प्रार्थना कि हे पितामह ! मैंने यह सब सुना अब आप गोलोक और गौ दान कर्त्ता के निवास स्थान का भी वर्णन कीजिये ॥

हे पुत्र ! यह प्रश्न इन्द्र ने ब्रह्माजी से किया था । इन्द्र ने पूछा हे भगवन् ! गो दान करने वाला स्वर्ग को भी उलंघन कर गोलोक को जाता है, आप उस गोलोक का वर्णन करें किस २ पुण्य के प्रभाव से मनुष्य वहां जाते हैं और यह भी कहें कि थोड़ा दान बहुत दान और बहुत दान थोड़े दान के फल को पाता है गौ दान में दक्षिणा क्या देना चाहिये ॥

ब्रह्मा जी ने कहा कि हे इन्द्र ! अनेक लोक हैं जिन को मैं देखता हूं परन्तु तुम नहीं देख सकते, हां पति व्रता स्त्री, तपस्वी ब्राह्मण, समाधिस्थत योगी राज इन लोकों को देखते हैं अब उन का वर्णन करता हूं सुनो ॥

गोलोक में काल, जरा, रोग, परिश्रम नहीं हैं वहां पर संपूर्ण साधन सुख सदा मौजूद रहते हैं ॥

हे इन्द्र ! इस लोग में उग्र तप करने वाले, क्षमा वान, सब के मित्र, गुरु के सेवक, अहिंसक, मातृ पितृ सेवक, गौ ब्राह्मण गुरु की सेवा करने वाले, सत्य वक्ता आदि भक्त जन उस लोक में जाते हैं । इन से अतिरिक्त इस लोक के दर्शण भी नहीं कर सकते ॥

हे इन्द्र ! जो मनुष्य मोल ले कर दहेज में प्राप्त या दान

ली हुई गौ को सत्याचवेद पाठी अग्नी होता को विधि पूर्वक दान करता है इस के लोक भी अचल और अभिनाशी होते हैं ॥

हे इन्द्र! सत्य धर्म निष्ठ, चतुर्वर्ण मनुष्य की एक गौ भी हजार गौ के समान होती है हे इन्द्र गौ के बीच वेद पठने वाला गौओं का भक्त; गौ दान करने वाला मनुष्य राजसूय यज्ञ के फल को पाता है ॥

हे इन्द्र! एक समय भोजन न कर उस के दाम इकट्ठे कर जो ब्राह्मण क्षत्री या वैश्य उस से गौ मोल लेकर पात्र को दान करता है वह गौ लोक के परम सुखों का भागी होता है ॥

जो मनुष्य गौ के अभाव से तिलकी गौ का दान करता है वह स्वर्ग में दूध की नदी के निकट निवास पाता है, हे इन्द्र! गौ सदा वेद पाठी अग्नि होता यज्ञ कर्ता ऋषिको या कुटंबी सुशील सदाचारी ब्राह्मण को देनी चाहिये ॥

जैसे नदियों में उत्तम गंगा है वैसे ही गौओं में उत्तम कपिला गौ है, गौ के संकल्प करने वाला गौ के रोमों की संख्या के समान वर्ष गौ लोक निवासी होता है हृष्ट पुष्ट भारवाही बैल के दान से दश गौ दान का फल होता है ॥

हे युधिष्ठर! गौओं की रक्षा और पालना करने वाला जहां चाहे वहीं जा सकता है ॥

साठवां अध्याय

गौ चुराने और गो वध के दोषों का वर्णन ॥

इन्द्र ने पूछा हे देवाधिदेव गौ के चुराने वाले व गौ के बेचने वाले की क्या गति होती है ? ब्रह्मा जी ने उत्तर दिया कि जो मनुष्य मांस बेचता है, गौ चुराता है और गौ के वध में सहायक होता है उतने वर्ष नरक में निवास करता है जितने गौ के रोम होते हैं ॥

हे इन्द्र ! गो दान की दक्षिणा सुवर्ण की कही है सुवर्ण दक्षिणा से दान का फल दुगना होजाता है क्योंकि सुवर्ण पवित्र और सब पदार्थों से उत्तम है ॥

भीष्म जी बोले कि यह सब ब्रह्मा जी ने इन्द्र को, इन्द्र ने दशरथ को, दशरथ ने रामचन्द्र जी को, रामचन्द्र जी ने लक्ष्मण को, लक्ष्मण जी ने ऋषियों को उपदेश किया था यह दान धर्म प्राचीन से चला आता है ॥

धिष्ठर जी ने प्रार्थना की कि हे पितामह ! आप व्रत, वेद पढ़ने पढ़ाने की महिमा, ब्रह्मचर्य्य, माता पिता की सेवा आदि कर्मों के फल को वर्णन कीजिये ॥

भीष्मजी बोले हे पुत्र ! विधि पूर्वक व्रत आरंभ कर समाप्त करने वाले को सनातन लोकों की प्राप्ति होती है । वेद पाठी इस लोक और परलोक में आनंद भोगता है और शांत चित्त जितेंद्रिय सर्वदा आनंदित रहता है। जितेंद्रिय जो चाहता

है वही पाता है। दानी क्रोध में आता है परन्तु शांतचित्त जितेंद्रिय क्रोध नहीं करता, क्रोध से दान का फल नष्ट हो जाता है ॥

वेद के पढ़ाने वाला भी अविनाशी फल को पाता है और स्वर्ग को जाता है ॥

जो क्षत्रि वेद पाठ और दानों में प्रवृत्त है और युद्धमें सब का रक्षक है वह भी स्वर्ग को जाता है, कर्म्म रत दान देने वाला वैश्य और सेवा धर्म्म में लगा हुआ शूद्र भी स्वर्ग को जाता है ॥

हे राजन् ! सत्य वक्ता हजार अश्व मेध के फल को पाता है सत्यता से सूर्य प्राणी आदि प्रकाशमान हैं देवता ब्राह्मण और पितर भी इस से तृप्त होते हैं, इस लिये सत्यता सब से बढ़ कर अधिक फल दायक है ॥

जो मनुष्य जन्म से मरण पर्यंत ब्रह्मचारी रहता है उस के लिये कोई लोक ऐसा नहीं जिस की उसे प्राप्ति न हो ब्रह्मचर्य्य से सब पाप नष्ट होते हैं ॥

जो मनुष्य माता पिता भाई गुरु और आचार्य्य की सेवा करता है वह स्वर्ग लोक में प्रशंसनीय उत्तम स्थान को पाता है गुरु की सेवा करने वाला कभी नरक को नहीं देखता ॥

इकासठवां अध्याय

—:o:—

गो दान विधि और उसके फल ॥

युधिष्ठर बोले हे पितामह ! अब गोदान की विधि को सविस्तर वर्णन कीजिये ॥

भीष्मजी बोले इस विषय में मानधाता को जो कहा है वह मैं तुमसे कहता हूं सुनो । व्रत में सावधान मनुष्य ब्राह्मण का सत्कार पूर्वक यह वचन कहे कि मैं कल आप को गोदान दूंगा आइये गोदान कर्त्ता गो से प्रार्थना करे "गौ मेरी माता है बैल मेरा पिता है हे गो तूं इस लोक और परलोक में सुख और परलोक में शुभगति मुझे दे" ॥

रात्रि काल को गोशला में रहे प्रातःकाल सूर्योदय के साथ ही सवत्स गौ का सकला करे और प्रार्थना करे कि हे गौ ! तुम मेरे पापों को दूर करो माता के समान मेरी रक्षा करो और सर्व उपाधियों से रहित उत्तम गति को दो मैं आप को अपने आत्मा का रूप समझ आत्मा का दान करता हूं ॥

हे राजन् ! इस प्रकार गो दान करने वाला और दक्षिणा में सुवर्ण देने वाला सब दुःखों से छूट जाता है गौ का दान करने वाला सूर्य लोक को और बैल का दाता वेदों की प्राप्ती को पाता है ॥

भीष्म जी बोले हे राजन् ! तुम भी बृहस्पति के वचन को मान कर ब्राह्मणों को गो दान दो । राजा ने वैसा ही किया ॥

युधिष्ठर जी बोले हे पितामह ! आप गो दान वर्णन सविस्तर कहैं क्योंकि यह सुन कर मेरी तृप्ती नहीं होती है ॥

भीष्म जी बोले जो मनुष्य बछड़े से प्रीति करने वाली

असील युवा गो येइ पाठा का देता है वह स्वर्ग में जाता है और बूढ़ी रोगी दूर से हाग गौ के दान से दाता नरक में जाता है ॥

भीष्म जी बोले कि अब मैं गौओं की उत्पत्ति का वर्णन करता हूं ॥

ब्रह्मा जी ने प्रजापति को सृष्टि उत्पन्न करने की आज्ञा दी तब प्रजापति ने सब से पहिले जीवों की उपजीविका का प्रबंध किया और सब की प्राण दाता सुरभी को उत्पन्न किया, सुरभी से सुवर्ण सी कपिलवर्ण की गौ को उत्पन्न किया इन गौओं के दूध को बछड़े पान कर रहे थे तो दूध की झाग शिवजी पर गिरी जिस से उन्हों ने क्रोध से अपने तृतीय नेत्र द्वारा उनकी ओर देखा तब कपिलवर्ण गौओं के अनेक वर्ण होगये, और जो गौयें चंद्र लोक में थीं उन का वही वर्ण रहा ॥

ब्रह्मा जी ने शिवजी से कहा कि तुम अमृत से सिंचे गये हो गौओं की उच्छिष्ट नहीं होतो जैसे वायु अग्नि सुवर्ण नदी समुद्र दोष रहित है वैसे ही गौ का दूध भी कभी दूषित नहीं होता, तब प्रजापति जी ने गौओं सहित एक बैल महादेव जी को भेटा किया जिस से प्रसन्न हो शिवजी ने उस बैल को अपना वाहन बनाया बरंच अपनी ध्वजा को भी उसी के चिन्ह से सुशोभित किया जिस से उन का नाम वृषभध्वज प्रसिद्ध हुआ ॥

हे राजन्! इसी लिये कपिला दान का अधिक महात्म है कपिला गौओं के धन से संपूर्ण अभीष्ट सद्गति मिलती है ॥

बासटवां अध्याय

—:o:—

महर्षि वशिष्ट जी ने इक्ष्वाकु वंशी राजा सौदास से गौ की महिमा कहना ॥

एक समय राजा सौदास ने अपने पुरोहित वशिष्ट जी से पूछा कि हे भगवन! तीनों लोकों में कौन सा वस्तु पवित्र है? वशिष्ट जी ने गौओं को प्रणाम कर उस राजा से यह वचन कहा कि गौ ही जीवों का स्थान कल्याण का घर है गौ सत्यता, प्रसन्नता और लक्ष्मी का रूप है गौ जीवों के लिये अन्न और देवताओं के लिये हव्य की दाता है यज्ञ का साधन है जो गौ दान करते हैं वह पापों से मुक्त हो जाते हैं ॥

हे राजन्! दश गौ रखने वाला एक सौ गौ रखने वाला दश और हजार गौ का मालिक १०० गौयें संकल्प करे, इन सब को समान फल मिलता है वस्त्र भूषणों से अलंकृत किया गौ का जो दान करता है वह दोनों लोकों को जीत लेता है जो मनुष्य प्रातः सायं गौ की सेवा करते हैं और इन्हें प्रणाम करते हैं वह आरोग्यता और लक्ष्मी को पाते हैं गौ मूत्र पवित्र है ॥

वशिष्ट बोले कि पूर्व काल में मनुष्य और देवताओं से प्रतिष्ठा की इच्छा से मूत्र और गोबर से स्नान कर मनुष्य पवित्र हों हमारे दान से मनुष्य गौ लोक को पावें एक लाख वर्ष तक तप किया ॥

इस तप के अंत में ब्रह्माजी ने तथास्तु कह कर यह सब वर दिये कपिल वत्सा कपिला गौ के विधि पूर्वक दान से ब्रह्म लोक की प्राप्ति होती है लोहित वर्णा गौ के दान से सूर्य लोक शवला के दान से चंद्र लोक और इंद्र लोक, कृष्णा गौ के दान से अग्निलोक, धुम्रवर्णा के दान से यम लोक में प्रतिष्ठा, श्वेतवर्णा गौ के दान से वरुण लोक, खाकी रंग की गौ के दान से वायुलोक, गंदली के दान से कुबेरलोक, लाल और धुम्रवर्णा के दान से पितृलोक, सवत्सा हृष्ट पुष्टा गौ के दान से विश्वदेवताओं के लोक, गोरी गौ के दान से वसुओं के लोक, पीड, वर्णा के दान से साध्य लोगों को मनुष्य पाता है ॥

वैराट पीठ वाले वृषभ के दान से मरुद्गणों के लोक, तुरुख नील वर्णा बैल के दान से गंधर्व और अप्सराओं के लोगों को गले में कंबल लटकने वाले बैल के दान से पूजा पतियों के लोकों को मनुष्य पाता है ॥

हे राजन्! गौ के दान से इस लोक में लक्ष्मी पुत्र पौत्रादि सुख और मर कर स्वर्ग की प्राप्ति होती है ॥

अठसठवां अध्याय

—:o:—

वशिष्ट महर्षि कथित गौ महिमा वर्णन ॥

वशिष्ठ जी बोले कि हे राजन्! गौ घृत की नदी है गौयें सदैव मेरे घर में रहें, मेरे हृदय में घृत सदैव व्याप्त है गौवे

सर्वदा मेरे चारों ओर व्याप्त हों मैं गौओं के मध्य में रहूं, गौ की महिमा करने वाला और उन के गुणों को गाने वाला पापों से छूट जाता है और गंधर्वादि लोकों को पाता है, हे राजन ! तिल निर्मित गौ के दान का भी बड़ा महात्म है, गौयें सर्व श्रेष्ठ पवित्रात्मा जगत की उत्पत्ति स्थान, देव माता बड़े प्रभाव वाली हैं इन के दान करने वाले को यम का भय नही होता ॥

हे राजन ! गौवों की महिमा का यह एक अंश मात्र मैंने वर्णन किया है इन की पूर्ण महिमा मेरी सामर्थ तो क्या देवताओं की भी सामर्थ नहीं है युधिष्ठर ! यह सुन कर सौदास राजा ने बहुत सी गौओं का दान किया ॥

युधिष्ठर जी ने प्रश्न किया कि हे पितामह ! इस संसार में मोक्ष के देने वाला कौनसा दान है ॥

भीष्म जी बोले कि यही प्रश्न शुकदेव जी ने अपने पिता व्यास देव जी से किया था वह मैं कहिता हूं सुनो ॥

व्यास जी बोले कि हे पुत्र ! पूर्व काल में गौओ ने बड़ी तपस्या की और उस तपस्या के फल में एक फल यह भी चाहा कि हमारे सींग हों उस तपस्या के प्रभाव से इन के नाना प्रकार के सींग उत्पन्न हुये, और वह गौएं देवता और मनुष्यों की पालना करने वाली दिव्य रूपा हं गई इसी लिये इन के दान का बड़ा महात्म है गौओं के दान देने वाले पवित्र लोकों को पाते हैं उनके लिये कोई वस्तु ऐसी नहीं जो प्राप्त न हो ॥

हे राजन ! मनुष्यों को सदैव गौओं की सेवा करनी

चाहिये इन को सुख रखना चाहिये गौओं को पालने वाले घी दूध पीते हुये रोगों से रहित हो हृष्ट पुष्ट होते हैं ॥

हे राजन्! जो मनुष्य गौओं के गोबर से निकले हुये यवों को भोजन करते हैं और एक मास तक इस व्रत को धारण करते हैं उन के ब्रह्म हत्या तक सब पाप नष्ट हो जाते हैं ॥

जो मनुष्य गायत्रि मंत्र का जप गौओं के बीच आसन लगा करता है वह अन्तःकरण से निर्मल हो जाता है। गायत्रि मंत्र के जप से पुत्र पौत्र स्त्री का सुन्दर पति और अन्य सर्व शीघ्र मिलते हैं।

युधिष्ठर ने पूछा कि महाराज! मैंने सुना है कि गौवों का गोबर लक्ष्मी से भी सेवत है क्या यह सत्य है ॥

हे पुत्र! इस विषय में गौओं और लक्ष्मी का संवाद हुआ है सुनो। एक समय दिव्य रूप धारण कर लक्ष्मी गौवों के पास आई गौओं ने उससे पूछा कि दिव्य रूपिणी देवि तुम कौन हो, कहां से आना हुआ कहां जाओगी। उसने उत्तर दिया मैं लक्ष्मी हूं मेरे ही त्याग से दैत्य दुःखी और मेरे ही आदर से देवता लोग एश्वर्य भोग रहे हैं मैं जिस का त्याग करती हूं वह नाश हो जाते हैं हे गौओ! मैं तुम्हारे पास रहिना चाहती हूं गौओं ने कहा कि तुम चपल हो तुम्हारी स्थिति स्थिर नहीं इसलिये हम सब तुम को नहीं चाहतीं तुम जहां जाना चाहती हो चली जाओ ॥

लक्ष्मी ने कहा कि तुम कैसी हो जो मुझ को अंगीकार

नहीं करती निस्सन्देह विना बुलाये जाना अप्रतिष्ठा का मूल है ॥

देवता मनुष्य और गंधर्व भी मेरे लिये बड़े २ कष्ट उठाते हैं मैं तुम्हारे पास अपने आप निवास को आई हूं तुम मानती नहीं ॥

गौओं ने उत्तर दिया बहुत कहने से प्रयोजन क्या है जहां तुम्हारी इच्छा है जाओ हम तुम को नहीं चाहतीं हम आप तेजस्वी शरीर वाली हैं ॥

लक्ष्मी ने कहा कि तुम से धिक्कारी हुई मैं इस लोक में निरादृत हो जाऊंगी मुझ पर कृपा करें। मैं तुम्हारे किसी छोटे से छोटे अंग में रहना चाहती हूं आप मुझ शरणागत की रक्षा करें ॥

तब गौओं ने परस्पर सम्मति कर उत्तर दिया तुम हमारे गोबर और मूत्र में निवास करो लक्ष्मी ने कहा आपने मुझ पर बड़ी कृपा की मुझे यही स्वीकार है ॥

चौसठवां अध्याय

—:o:—

ब्रह्मा जी कथित गौ की महिमा का वर्णन ॥

जो मनुष्य गौओं का दान करते हैं और होम से अवशिष्ट अन्न को पाते हैं उन के नित्य यज्ञ जारी रहते हैं। दही और घृत के बिना कोई यज्ञ नहीं हो सकता, इस लिये यज्ञ का

मूल गौयें हैं। गायें महा पवित्र और उद्धार करने वाली हैं इन का दूध और दही शरीर को पवित्र और पुष्ट करता है इन से बढ़ कर संसार में कोई पवित्र वस्तु नहीं॥

जब इन्द्र ने दैत्यों को विजय किया तो एक बड़ा देव समाज हुआ. उस में विराजमान ब्रह्मा जी से इन्द्र ने प्रश्न किया कि गो लोक सब लोकों से क्यों विशेष माना है और गौओं ने कौन उग्र तप किया है जो यह देवताओं से भी पूजित हैं॥

ब्रह्मा जी ने कहा कि गौयें यज्ञ का अंग हैं इन के दूध दही और घृत से यज्ञ होते हैं मनुष्यों की पालना होती है और इन के पुत्र खेतों का काम देते हैं मुनियों का भी पोषण करती हैं इसी लिये यह देवताओं से भी पूजित हैं॥

हे इन्द्र! एक बार अदिती ने बड़ी तपस्या की तब सुरभी गौ भी तप करने लगी और एक चरण पर खड़ी रही, उस के उग्र तप से मैं और सब देवता वहां पहुंचे, मैंने कहा देवि वर मांगो, उस ने कहा मैंने वर के लिये तपस्या नहीं की मैं एक मात्र आप की प्रसन्नता चाहती हूं। मैंने कहा कि मैं तेरे निष्काम तप से प्रसन्न हूं इसी से तुम को अविनाशिता का वर देता हूं॥

पैंसठवां अध्याय

—:o:—

सुवर्ण और तारका सुर की उत्पत्ति का वर्णन॥

युधिष्ठर बोले कि अब मैं सुवर्ण की उत्पत्ति और इस की पवित्रता का कारण सुनना चाहता हूं हे युधिष्ठर जब मेरे पिता शांतनु जी का देहान्त होगया तो मैं उन का श्राद्ध करने को हरिद्वार पर गया, श्राद्ध में पिंड दान के समय बाजूबंद से भूषित एक भुजा गंगा जी मे निकली जो कि मेरे पिता की थी क्योंकि वेद में पिंडदान कुशा पर रखने का विधान है इस लिये मैं ने पिंड शास्त्रोक्त विध्यनुसार कुशा पर ही रखा तब वह भुजा गुप्त हो गई ॥

हे भरतपर्भ ! स्वप्न में मुझे पितरों न दर्शन दे कहा कि हम तुम्हारे विधि पूर्वक पिंडदान से प्रसन्न हैं, परंतु तुमने भूमि और गौओं की दक्षिणा में सुवर्ण दान नहीं किया, सुवर्ण दान दश कुलों को तारता है, यह सुन मैं जाग उठा और मैं ने सुवर्ण दान किया ॥

हे राजन् ! परशुराम जी ने इकीस वार पृथ्वी के क्षत्रियों को मार पृथ्वी को जीता, अश्व मेध यज्ञ से भी पापों से न छूट ऋषियों से प्रार्थना की कि पापों के दूर करने वाले दान बतलायें ॥

तब वशिष्ठ अगस्त्य और कश्यप जी ने उत्तर दिया कि पूर्व समय में बड़ा पवित्र दिव्य रूप अग्नि का पुत्र इस लोक में प्रकट हो सुवर्ण नाम से प्रसिद्ध हुआ है तुम उस के दान से शुद्ध होगे सुवर्ण दान करने वाले मानो सब देवताओं को देते हैं क्योंकि अग्नि सब देवताओं का रूप है और सुवर्ण अग्नि का रूप है ॥

हे परशु राम जी! जबरुद्र जी का विवाह रुद्राणी जी से हिमालय पर हुआ तो सब देवताओं ने शिव पार्वती जी को प्रणाम कर नम्रता से प्रार्थना की कि हे देव! आप उग्र तेजस्वी हैं और पार्वति भी परम तेज रूपा है आप की संतान निस्संदेह महा पराक्रमी तीनों लोकों में वह कुछ बाकी न छोड़ेगी हम को भी दुःखत करेगी इसलिये आप संतानोत्पत्ति को रोकें ॥

शिवजी ने कहा ऐसा ही होगा यह कह उन्हों ने अपने वीर्य को ऊपर चढ़ा लिया जिस से उन का नाम ऊर्द्धरेतस प्रसिद्ध है॥

तब पार्वती जी ने क्रोध युक्त हो देवताओं को शाप दिया कि तुम भी संतान रहित होगे क्योंकि तुम ने मेरे पति को संतान उत्पत्ति से रोका है, शिवजी का थोड़ा सा वीर्य गिड़ा और अग्नि में जा मिला जिस से तेज में तेज के मिलने से एक महा तेज उत्पन्न होगया जिस से तारकासुर उत्पन्न हुआ और इन्द्रादिक सब देवता भयभीत होगये, तारकासुर ने सब देवताओं के भुवनों को छीन लिया तब सब देवता ब्रह्मा जी की शरण में गये ॥

छियासठवां अध्याय

—:o:—

सुवर्ण दान महिमा और सुवर्ण तथा कार्तिकेय जी की उत्पत्ति का वर्णन ॥

देवताओं ने ब्रह्मा जी से प्रार्थना की कि हे देव! तारकासुर जिस को आपने वर दिया है वह देवताओं और ऋषियों को दुख देता है उस को मार कर हमारी रक्षा करें ॥

ब्रह्मा जी ने कहा हे देवताओ! मैंने पहिले ही उपाय कर रखा है आप संताप को दूर करें ॥

ब्रह्मा जी ने कहा कि पार्वती के शाप के समय अग्नि देव साथ नहीं थे उन का पुत्र अवश्य इसे मारेगा इस लिये तुम उस के पास जाओ ॥

हे राजन्! तब सब देवता अग्निकी तलाश में तीनों लोक घूमे परन्तु जल में लीन अग्नि देवता के होने के कारण उन को कहीं दर्शन न हुए ॥

हे परशुराम जी फिर बड़ी तलाश के अनंतर देवताओं ने अग्नि देव को शमी में देख उस को सब कामों में पवित्र समझा, तब अग्नि देवता परम दुःखी हो देवताओं से बोले कि हे देवताओ! तुम यहां किस लिये आये हो ॥

तब देवताओं और ऋषियों ने कहा कि हम तुम को जिस काम में लगायेंगे वह तुम को अवश्य करना होगा, उस काम के करने से आप को भी बड़ा लाभ होगा, अग्नि ने स्वीकार किया, तब देवताओं ने प्रार्थना की कि ब्रह्मा जी के वर से तारकासुर हम सब को दुःख दे रहा है उस से रक्षा के लिये हम सब आप की शरण में आये हैं आप संतानोत्पन्न कर उस का संहार करें ॥

तब अग्नि देवता गंगा के पास गये, गंगा जी ने गर्भ को

धारण किया परन्तु वह तेजपुंज गर्भ कुछ काल में इतना बढ़ा कि गंगा जी ने अग्नि से कहा कि मैं इस गर्भ को धारण करने को समर्थ नहीं हूं इस में चाहे धर्म्म हो या अधर्म्म मैं इस को त्यागती हूं ॥

अग्नि देव ने गंगा जी से कहा कि धारण करो, धारण करो, यह गर्भ बड़े तेज, गुण और फलों के देने वाला है। हे परशुराम जी! इस प्रकार अग्नि देवता के कहने पर भी गंगा जी ने उस गर्भ को मेरू पर्वत पर फैंक दिया जिस से मेरु पर्वत सुवर्ण रूप हो गया और उसके तेज से पर्वत से स्पर्श करने वाली सब वस्तुयें भी सूर्य्य की किरणों के तुल्य चमकने लगीं ॥

हे परशुराम जी! तब वह सुवर्ण बालक रूप हो गया उस बालक को नंदन वन में रहने वाली कृतका देवी ने अपने स्तन से दूध पिलाया जिस से उस का नाम कार्तिकेय और स्कंद और गुह प्रसिद्ध हुआ, तब ही से यह सुवर्ण सब रत्नों में उत्तम रत्न और भूषणों में श्रेष्ठ भूषण कहा जाता है। सुवर्ण पवित्रों का पवित्र और मंगलों का भी मंगल रूप है और सब देवताओं का रूप है। उस प्रकाशमान बालक के दर्शनों को सब देवता वहां आये ॥

फिर देवताओं ने नाना रूप धारी शिवजी रूप अग्नि के पुत्र सुवर्ण की बड़ी भारी श्लाघा की हे परशुराम जी! सब देवताओं का रूप सुवर्ण है जो सुवर्ण दान करता है वह सब देवताओं का दान करता है ॥

जो मनुष्य सूर्य्य देव के साथ ही सुवर्ण दान करता

हैं उस के सब पाप नष्ट हो जाते हैं मायं काल जो सुवर्ण दान करने वाला ब्रह्म आदि लोकों को पाता है ॥

हे निष्पाप परशुराम जी ! मैंने यह सुवर्ण और कार्तिकेय की उत्पत्ति का वर्णन किया है सुवर्ण दान का बड़ा भारी महात्म है इस लिये तुम भी सुवर्ण दान करो ॥

सतासठवां अध्याय

तारकासुर वध और सुवर्ण दान महात्म ॥

युधिष्ठिर जी बोले कि हे पितामह ! कार्तिकेय जी ने तारक असुर को कैसे मारा अब यह वर्णन करें ॥

भीष्म जी बोले कि हे पुत्र ! जब छओं कृतकाओं ने उस अग्नि पुंज की रक्षा की इस से उस का नाम कार्तिकेय हुआ सो यह प्रकाश थोड़े ही काल में पूर्ण बल युक्त हो गया तब धाता विष्णु प्रभृति से सब देवता उसके दर्शनों को आये। ऋषियों ने उस की स्तुति की और देवताओं ने उस बालक रूप को नाना वस्तुओं से प्रसन्न किया ॥

हे युधिष्ठिर ! इस प्रकार उस को प्रसन्न कर सब देवताओं ने तारकासुर की क्रूता का वर्णन कर उस से युद्ध करने के लिये स्वामी कार्तिक जी को सेनःपति के पद पर अभिषेक किया और इस प्रकार सेनापति बन स्वामी कार्तिक जी ने अपनी शक्ति से तारकासुर वध किया जिस से इन्द्रादि देव

स्वामी कार्तिक जी की स्तुति करते हुये अपने २ पद पर नियत हुये ॥

परशुराम जी ने वशिष्ठ जी से यह सब वृत्तान्त सुन सुवर्ण का दान किया और सब पापों से छुटकारा पाया, हे युधिष्ठर तुम ने भी सुवर्ण दान करते रहना ॥

युधिष्ठर जी ने प्रार्थना की कि हे पितामह ! अब कृपा करके श्राद्ध विधि का वर्णन करें ॥

भीष्मजी बोले कि हे राजन् ! श्राद्ध पितृ यज्ञ के नाम से प्रसिद्ध है इस से धन कीर्ति और संतान मिलती है ॥

पितृ सदैव देवता, असुरों, गन्धर्वों, किन्नरों और मनुष्यों से भी पूज्य है, पहिले अमावस और पीछे प्रतिपदा एक ही दिन में हों तो अमावस में देव यज्ञ और प्रतिपदा में पितृ यज्ञ किया जाता है, पितृ यज्ञ नित्य किया जाता है फिर भी तिथि श्राद्ध के महात्म्य को वर्णन करता हूं। प्रतिपदा में श्राद्ध करने वाला उत्तम संतान उत्पन्न करने वाली स्त्री को पाता है २या के दिन श्राद्ध करने से कन्या, ३या के श्राद्ध से घोड़े की प्राप्ति, ४र्थी के श्राद्ध से बकरी आदि, ५ञ्चमी में बहुपुत्र, षष्ठी में तेज, ७मी में खेतियें और अष्टमी में श्राद्ध करने वाला व्यापार में लाभ उठाता है, ९मी के दिन श्राद्ध करने से घोड़े की प्राप्ति, दशमी में गौओं की वृद्धि, एकादशी में ब्रह्म तेज धारी पुत्रों की प्राप्ती, द्वादशी में स्वर्ण और चांदी त्रयोदशी में सजातीयों में मान, चतुर्दशी के श्राद्ध से पुत्रों की हानी और अमावस्या के दिन श्राद्ध करने से मनुष्य सब मनोरथों को पाता है ॥

युधिष्ठर जी ने पूछा कि कौनसी वस्तु श्राद्ध में अविनाशी होती है कौनसा हव्य चिरकाल तक विजय होता है ॥

भीष्म जी बोले हे पुत्र! तिल, यव, चावल, मापान्न, जल, मूल, फल इन वस्तुओं से श्राद्ध करने से पितर एक मास तक प्रसन्न रहते हैं मनुजी ने तिल युक्त सब प्रकार के भोजनों से श्राद्ध करने से श्राद्ध को अविनाशी कहा है ॥

मछलियों के मांस से दो मास, भेड के मांस से तीन मास, खरगोश के मांस से ४ मास, बकरी के मांस से ५ मास वराह के मांस से ६ मास, पक्षी के मांस से ७ मास, मृग के मांस से ८ मास, रुरु मृग के मांस से ९ मास, गोये के मांस से १० मास, भैंसे के मांस से ग्यारह मास और तस्मै से १ वर्ष तक पितरों की तृप्ति रहती है। श्राद्ध में कचनाल के पुष्पों का बड़ा महात्म्य है ॥

हे राजन्! पूर्वकाल में सनत कुमारों ने कहा कि वह मनुष्य हमारे वंश में उत्पन्न होता है जो दक्षयायन सूर्य मघा नक्षत्र युक्त त्रयोदशी को घृत युक्त तस्मै पितरों के नाम पर खिलाता है ॥

अठासठवां अध्याय

—:o:—

शिशिबिंदु राजा को नक्षत्रों में श्राद्ध करने से राज्य प्राप्ति का वर्णन ॥

भीष्म जी बोले कि शिशिबिन्दु राजा ने नक्षत्रों में

श्राद्ध करने के जो फल कहे हैं उन को मैं कहिता हूं सुनो, कृतका नक्षत्र में श्राद्धादि को सदाम्रित करने से तप के बिना ही पुत्रों की प्राप्ति होती है संतानादाभिलाषी रोहणी में, तेज प्रताप का चाहने वाला मृगशिर में, मनुष्यत्व अभिलाषी आर्द्रा में, धनाकांक्षी पुनर्वसु में, बल को चाहने वाला पुष्प नक्षत्र में, धरित्त्रमावान् पराक्रमी पुत्र चाहने वाला मघा में ऐश्वर्य अभिलाषी फाल्गुणी में, संतान की इच्छा से उ फालगुणी में अभीष्ट सिद्धि के लिये हस्त में सुंदर पुत्र की प्राप्ति स्वाति में व्यापार में लाभ विशाषा में पुत्र, अनुराधा में राज्य, ज्येष्ठा में प्रधानता, मूला मे विरोग्यता पुर्वाषाढ़ा में उत्तम कीर्ति उतरा षाढ़ा शोक नाश, अभिजित में वैद्यक विद्या श्रवण में उत्तम गति, धनिष्टा में राज्य, शतिभषा के लिये चित्रा में स्रष्ट विद्या, प्रभाद्रपदा में बहुत से पशु, उभाद्रपदा में हजारों गोयें, रेवती नक्षत्र में कांशी पीतल की बनी हुई वस्तु, अश्वनी में घोड़ों की प्राप्ति और भरनी नक्षत्र में श्राद्ध करने से मनुष्य दीर्घायु को पाता है ॥

हे युधिष्ठर ! शिशि विन्दु राजाने ने इसी प्रकार श्राद्ध किये और पृथ्वी को विजय कर चिरकाल तक राज्य पाया ॥

युधिष्ठर जी बोले कि श्राद्ध सामग्री कैसे ब्राह्मणों को देनी चाहियें यह भी कृपा पूर्वक वर्णन कीजिये ॥

भीष्म जी बोले कि दान धर्म का ज्ञाता क्षत्री दैव कर्म में ब्राह्मण की परीक्षा न करे परन्तु पितृ कर्म में परीक्षा करनी आवश्यक है पितृ कर्म में ब्राह्मणों की वंश, गुण, स्वभाव,

अवस्था, रूप, विद्या, शुभ कीर्ति आदि गुणों की परीक्षा करनी आवश्यक है ॥

हे राजन् ! द्यूत खेलने वाले, छली, गर्भपाती, बालघाती, राजयक्ष्मा रोगी, पशुपाल वेद पाठ और जप से रहित, ब्याज खाने वाले, गानेवाले, घृतादि रस के बेचने वाले; दूसरे के घर मे अग्नि लगाने वाले, विष देने वाले, झूठी गवाही देने वाले, पिता से विवादी, चोर, शिल्प विद्या से निर्वाह करने वाले, मित्र घाती, पर स्त्री गामी, मिथ्याद्रोही, कुत्तों से शिकार करने वाले, कुष्ठी, गुरुस्त्री गामी, देवल तिथि नक्षत्रादि सूना कर उपजीविका करवाले हैं यह सब श्राद्ध के भोजन के अधिकारी नहीं हैं इन को खिलाने मे राक्षसों की तृप्ति होती है यह ब्रह्मा जी का कथन है, शराब बेचने वाले पुरुष को खिलाने से भोजन विष्ठा के समान, वैद को दिया अन्न रुधिर के समान होता है, मजूरी लेकर देव पूजा करने वाले, ब्याज खाने वाले को दिया अन्न निष्फल जाता है पुनर्विवाह करने वाली स्त्री के पुत्र को खिलाया हुआ अन्न भस्म हो वृथा जाता है आचार भ्रष्ट को दान देने से परलोक में नष्ट होता है ॥

हे राजन् ! काना साठ को, नपुंसक सौ को और कुष्टी जितने मनुष्यों को देखता है सब को दूषित कर देता है तिलों से हीन क्रोध युक्त हव्य को पिशाच लोक नाश करते हैं पंक्ति वहिर्ब्राह्मणों को भोजन देना उचित नहीं, वेद वेदांग का ज्ञाता वेद पढ़ाने वाला, साम वेद का गाने वाला, माता पिता का आज्ञाकारी, स्त्री व्रती, ऋतु स्नाता के पास ही जान

वाला, क्रोध चपलता से रहित, और तपस्वी ब्राह्मण श्राद्ध के पात्र हैं। इन को दिया अन्न अक्षय होता है जो ब्राह्मण गुरु कुल में निवासी होकर सत्य वक्ता हैं सब वेद और वेदार्थों के ज्ञाता पंक्तियों को पवित्र करने वाले हैं और जो ऋत्विजों की आज्ञा से यज्ञ में पात्र बनाये जाते हैं यह सब पंक्ति के ब्राह्मण हैं॥

हे राजन्! इन लक्षणों से हीन ब्राह्मण पितर और देवताओं को पवित्र नहीं करते हैं। मित्र को श्राद्ध भोजन देना उचित नहीं श्राद्ध पात्र मित्र शत्रु से हीन उदासीन ब्राह्मण को हव्य कव्य य भोजन करावे अयोग्य ब्राह्मण को भोजन देने से निष्फल होता है। वेद गायत्री के न जानने वाला, ब्राह्मण तृण की अग्नि के समान नष्ट हो जाता है उस को कभी भोजन न कराना चाहिये॥

हे राजन्! नर्तक, गायक, मिथ्यावादी ब्राह्मण को देने से पितृ लोक नरक में जाते हैं॥

उनहत्तरवा अध्याय

—०—

श्राद्ध पात्र और पंक्ति बाहिर ब्राह्मणों का वर्णन॥

युधिष्ठर ने प्रश्न किया जब केवल अंगिरा और भृगुवंशी ब्राह्मण संसार में थे उन्हों ने किस प्रकार श्राद्ध किया, श्राद्ध

में कौन सा कर्म निषेधित है कौन से मूल फलों का श्राद्ध में विधान है ॥

भीष्म जी बोले हे राजा! स्वयम्भू मनु की वंश में निमि का पुत्र १००० वर्ष तप करके परलोक सिधारा तब उस की क्रिया कर्म कर निमि पुत्र शोक से भर बड़ा दुःखित हुआ शोकातुर महर्षि ने दूसरे दिन सात वेदपाठी ब्राह्मणों को बुला आसनों पर बिठा विधि पूर्वक पिंडदान किया, पिंडदान करने के अनंतर उसे सुध आई कि शास्त्र में पिता को पुत्र का पिंडदान करने की आज्ञा नहीं यह मैं ने शास्त्र विरुद्ध मर्यादा विपरीत क्या कर्म किया, तब उस ने अपने वंश के वृद्ध अत्रि से प्रार्थना की ॥

अत्रि ऋषि ने कहा यह जो तुम ने पितृकर्म किया है इस से तुम को बड़ा लाभ होगा पुत्र का श्राद्ध ब्रह्मा जी ने स्वयं किया है मैंने अपनी आंखों देखा है ॥

हे पुत्र! बल, पृथ्वी, पुष्प, कृष्ण, पावन पाशी सोम दिव्य सानु आदि सनातन विश्वदेव हैं इन का पूजन श्राद्ध में करना उचित है ॥

हे निमि! मसालों में हींग, प्याज, लसन, सुहांजने की कली कचनार की कली, शलगम, गाजर, पेठा काला निमक, बिना छोलया काला जीरा और सिंघाड़े श्राद्ध में वर्जित हैं और फलों में आमन फलों का निषेध है श्राद्ध स्थान के कूकर और चाण्डाल समीप नहीं आने चाहिये वहां उन का दर्शन करना भी उचित नहीं, गेरुए वस्त्र धारी साधु, कुष्ठी, पतित वर्णशंकर

आदि भी समीप तक न आने पावें। हे राजन्! तपोधन अत्रि ऋषि इतना कह कर ब्रह्मा जी की सभा में चले गये॥

हे राजन्! इस प्रकार निमि ऋषि के श्राद्ध करने पर महर्षि लोगों ने भी पितृयज्ञ और तर्पण किये क्योंकि तर्पण से मानो वह अन्न पचता है तथा श्राद्ध में आगे को बलि पहिले देनी चाहिये॥

हे राजन्! प्रथम पिता फिर पितामह और तदनंतर प्रपिता मह को पिंड दिया जाता है यही विद्वान का क्रम है, भोजन का अन्न अपनी ही वंश की स्त्रियें बनावें परन्तु श्राद्ध में रजस्वला और बहरी स्त्री का दर्शन तक न करे प्रत्येक पिंड पर गायत्री मंत्र पढ़े॥

नदी पर पिंड दान अवश्य करे, पितरों का तर्पण भी करे, तर्पण में भी पहिले पिता, पितामह आदि और फिर अन्य संबंधियों का नाम ले अमावस्या का पितृ यज्ञ अवश्य करना चाहिये॥

हे राजन् ब्रह्मा पुलस्ति, वशिष्ठ, पुलह, अंगिरस, क्रतु और कश्यप महर्षि महायोगेश्वर पितृ हैं इन के तर्पण से पितर प्रेत योनी से उद्धार पाते हैं यही पार्वण की विधि श्राद्ध है॥

सत्तरहवां अध्याय

—:०:—

श्राद्ध के अन्न का विधान, मणियों की चोरी

और ऋषियों की शपथें ॥

युधिष्ठर जी ने प्रश्न किया कि श्राद्ध अन्न भेक्ता ब्राह्मण के श्राद्ध का अन्न खाने से क्या फल होता है उन के व्रत तप नष्ट तो नहीं होते ?

भीष्मजी बोले हे युधिष्ठर ! वेदोक्त व्रतों के न करने वाले ब्राह्मण श्राद्ध भोजन करते हैं क्योंकि वेदोक्त व्रत करने वाले का व्रत अवश्य नष्ट होता है ॥

युधिष्ठर ने कहा कि यहां पर उपवास आदि कर्म का व्रत माना है या कोई अन्य व्रत है ॥

भीष्मजी बोले एक मास या पंद्रह दिन न खाने को ही जो व्रत मानता है वह न तपस्वी है न धर्म के जानने वाला है दान कर्म, ब्रह्मचर्य धारण करने को भी तप कहते हैं वेद पाठी ब्राह्मण मुनि कहाता है ॥

गृहस्थी मनुष्य मांस के न खाने वाला सत्य वक्ता विघास अन्न का भोक्ता, अतिथियों की सेवा करे, युधिष्ठर ने पूछा विघसान भोजी किसे कहते हैं भीष्मजी बोले कि जो मनुष्य नित्य मध्याह्न काल और सायंकाल या प्रातः और सायं दो काल भोजन करता है वह उपवास व्रती है। केवल ऋतु काल में स्त्री के पास जाने वाला ब्रह्मचारी है, सत्य वक्ता धर्माभ्यासी होता है, दान करने वाला पवित्र होता है जो मनुष्य गृहस्थी अतिथि आदि को खिला कर पीछे आप खाता है वह अमृत भोजी है। और जो गृहस्थी देवता, पितृ और आश्रित लोगों से बचा हुआ अन्न खाता है वह विघसाशी है ॥

हे पितामह! दान लेने और देने वालों में कौन श्रेष्ठ है? भीष्मजी बोले जो ब्राह्मण साधु यजमान से दान लेते हैं उनको थोड़ा दोष और जो असाधु का दान लेते हैं उनको महा दोष होता है। इस विषय में वृषदर्भ और सप्त ऋषियों का संवाद कहता हूं सुनो॥

कश्यप, अत्रि, वशिष्ठ, भरद्वाज, गौतम, विश्वमित्र, जमदग्नि और साध्वी अरुंधती के सेवा करने वाली एक गंडा नाम स्त्री थी, एक समय घोर काल पड़ गया यहां तक कि ऋत्विज लोग दुःखी हो गये, ऐसी दुःख की अवस्था में ऋत्वजों को वृषदर्भ ने कहा कि दुःख निवृत्ति के लिये दान रूप यह धन आप ग्रहण करें मैं आप को १००० खचरें १००० बैल और १००० गौयें देता हूं, और साथ ही अन्न उत्पन्न करने वाली भूमि भी देता हूं॥

ऋषियों ने कहा कि राजा का दान विष रूप है तुम जान बूझ कर हम को क्यों लुभाते हो राजा का दान ब्राह्मणों के तप को क्षण भर में भस्म कर देता है। यह कह कर वह ऋषि दूसरे मार्ग से चल दिये, राजा ने मंत्रियों को गूलरें जिन में सुवर्ण कंकर भरे थे दे कर ऋषियों के पास भेजा उन गूलरों को देख ऋषियों ने कहा कि इन में सुवर्ण भरा है हम इन को कदापि नहीं लेंगे॥

वशिष्ठ जी ने कहा कि हज़ार व सौ निष्कों का दान लेने वाला मनुष्य पापियों की गति को पाता है, कश्यप जी बोले

धन, अन्न और स्त्री आदि पदार्थों से कदापी तृप्ती नहीं होती तृप्ती एक संतोष मात्र से है ॥

गौतम जी बोले इच्छाओं से मनुष्य की कभी तृप्ती नहीं होती, विश्वामित्र बोले कि एक इच्छा के पूर्ण होने पर दूसरी इच्छा मनुष्य को सताती है जमदग्नि जी ने कहा कि जो जो दान लेने से मन को रोकता है वह अचल तप को धारण करता है ॥

दान लेने से ब्राह्मण का तप नष्ट हो जाता है, अरूंधती बोली धर्म से जो अर्थ इकट्ठा होता है उस में तप का धन बहुत अच्छा है। गंगा बोली कि यह मेरे स्वामी से भय खाते हैं मैं भी उन से डरती हूं ॥

मंत्रियों ने यह सब ब्योरा राजा से कहा जो सुन कर के क्रोधित हुआ और घर में जाकर सोचने लगा कि हम को इन का प्रबंध करना चाहिये और मंत्रों द्वारा आग्नि में एक आहूती डाली, जिस से आग्नि से एक कृत्या निकली, जोकि हाथ जोड़ राजा से आज्ञा मांगने लगी वृषदर्भा ने कहा कि तुम अरुंधती सहित सप्त ऋषियों को नाश करके जहां तुम्हारा चित चाहे चले जाना उस ने कहा ऐसा ही हो, यह कह कर कृत्या उस बन में गई जहां वह ऋषि थे ॥

भीष्म जी बोले कि इस प्रकार घूमते हुये ऋषियों ने एक उत्तम सरोवर में कुमदनी को देखा जिस की रक्षा के लिये कृत्या खड़ी थी यह ऋषि पशु मुख सन्यासी सहित उस कमलिनि की नालि लेने के लिये सरोवर में उतरे और कृत्या को

देख कर बोले कि तू यहां अकेली किस काम के लिये खड़ी है तू कौन है। उस ने कहा कि मैं जो हूं सो हूं, मैं इस कमलिनी की रक्षा के लिये खड़ी हूं ऋषियों ने कहा कि हम क्षुधा से पीड़ित हैं यदि तू आज्ञा दे तो इस सरोवर से हम ले लें ॥

कृत्या ने कहा कि तुम अपने नामों के अर्थ बतला २ कर जितने चाहो ले सकते हो ॥

भीष्म जी बोले कि अत्रि कृत्या को ऋषियों के नाश के लिये खड़ी जान बोले कि पापों से जो रक्षा करता है उसे अराति कहते हैं क्योंकि मैं मृत्यु से रक्षा करता हूं मृत्यु और पाप एक हैं इस लिये मेरा नाम अत्रि है; अथवा धर्म पाप को दूर करता है अतः उसे भी अत्रि कहते हैं ॥

यह सुन कृत्या ने कहा कि मैं तुम को जीत नहीं सकती इस लिये तुम सरोवर में जाओ ॥

वशिष्ठ जी बोले कि वायु पृथ्वी, अंतरिक्ष, स्वर्ग, सूर्य, चन्द्रमा और नक्षत्रादि संसार का विश्वास स्थान हैं आत्मादि ऐश्वर्यों के प्राप्त करने वाले को वसुमान अर्थात वशिष्ट कहते हैं, गृहस्थाश्रम में रहता हुआ मैं सब जीवों का रक्षास्थान हूं इस लिये मुझे वशिष्ठ कहते हैं कृत्या ने कहा कि मैं तुम्हारे नाम के अर्थ को समझ नहीं सकती इस लिये तुम भी सरोवर में चले जाओ ॥

कश्यप जी बोले कि शरीरों को जो रक्षा भोग और नाश करता है और सब शरीरों में प्रवेश करके पोषण करता

है अध्यात्म रूप से वह मैं ही हूं इस भी मेरा पुत्र है सूर्यादि मेरे पुत्र हैं बड़ी आयु होने के कारण मेरे बाल श्वेत हैं इस लिये मेरा ही नाम कश्यप है कृत्य ने कहा कि तुम भी जल में चले जाओ ॥

भरद्वाज बोले प्रजा वाज रूप पक्षी है उस को जो पुरुष करता है उसे भरद्वाज कहिते हैं मैं राक्षस अर्थात शत्रुओं को स्वाधीन करके दया से पोषण करता हूं उदासीन अर्थात जीवों को भी पालता हूं देवताओं और ब्राह्मणों की भी रक्षा करता हूं भार्या पुत्रादि को भी पालता हूं माया से संसार की वृद्धि के लिये प्रकट हुआ हूं इस लिये मेरा नाम भरद्वाज है कृत्या ने कहा मैं आप के नाम के अर्थ को भी नहीं समझ सकती इस लिये तुम भी सरोवर में जाओ ॥

गौतम जी बोले हे यातुधानी ! गो पदार्थ स्वर्ग और पृथ्वी को स्वाधीन करता है उसे गोदम कहिते हैं तात्पर्य्य यह है कि मैं जितेन्द्रता से पृथ्वी और स्वर्ग को भी जीत सकता हूं मैं सूर्य्य के समान अंधकार (पाप) को दूर करने वाला गौतम हूं, अग्निरूप हूं इस लिये तुझ से मैं जीता नहीं जा सकता, कृत्या बोली आप का जीतना भी असंभव है आप भी सरोवर में जाओ ॥

जमदग्नि बोले जाज हव्य का नाम है हव्य के भक्षण करने वाले देवताओं का नाम जाजमद है जिस में देवता पूजे जाते हैं उसे यज्ञ कहिते हैं अग्नियों को प्रकट करने वाले को जीव अर्थात माया कहिते हैं मुझ को यजाह जानो और

और जमदग्नि भी मेरा नाम है, देवता और अग्नि मुझ में निवास करते हैं, कृत्या बोली कि आप का नाम भी समझना कठिन है आप भी सरोवर में जाओ ॥

अरूंधती बोली कि मैं पर्वतों के धारण करने वाली, पृथ्वी और वसु नाम देवताओं के धारण करने वाली, स्वर्ग इन दोनों की स्वामिनी हूं, अपने स्वामी वशिष्ट जी की आज्ञा पालन करती हूं इस लिये मेरा नाम अरूंधती है, कृत्या ने उसे भी आज्ञा दी ॥

गंडा बोली मेरे गले में गंडा है इस को धातु कहिते हैं, इसी लिये मेरा नाम गंडा है, कृत्या ने कहा कि तुम भी सरोवर में जाओ ॥

पशु मुख ने कहा कि मैं सदैव जीवों की रक्षा करता हूं, सब का मित्र हूं इसी लिये मेरा नाम पशु मुख है, कृत्या ने कहा तुम भी सरोवर में जाओ तुम्हारे नाम का अर्थ भी मेरी समझ में नहीं आता ॥

शुनामुख ने कहा कि शुना नाम धर्म का है, धर्म पालने वाले मुनि हैं, मैं उनका मित्र हूं इस लिये मेरा नाम शुनामुख है, यातुधानी ने कहा कि आप अपने नाम का अर्थ स्पष्ट वर्णन करें शुनामुख ने कहा मैं एक बार कह चुका हूं तुम ने समझा नहीं इस हेतु से तुम त्रिदंड से घायल हो भस्म हो जाओ ॥

हे भीष्मजी त्रिदंड के घात से वह पृथ्वी पर गिर पड़ी और भस्म हो गई शुनामुख त्रिदंड को पृथ्वी पर धर आप घास पर बैठ गये ॥

वह सब ऋषि इच्छा पूर्वक मेल कर जल से निकले मृणालों को तट पर धर सन्ध्या तर्पण में लग गये, जब तर्पणादि कर वहां गये तो मृणालों को न पाया। तब सब ने परस्पर संदेह किया और परस्पर शपथ खाने लगे।

अत्रि ने कहा जो मनुष्य मृणालों की चोरी करता है वह गौ को लात मारे, सूर्य की ओर मुख कर मूत्र करे, वेदों को अनध्यायों में पढ़े। वशिष्ठ जी ने कहा कि अनध्यायों में वेद को पढ़े, क्रीड़ा व शकार के लिये कुत्ता और सन्यासी हो कर वेश्या गमन करे, शरणागत को मारे, कन्या के दाम ले निर्वाह करे, नीचों से भीख मांगे जो मृणालों को चुराय। कश्यप जी बोले मृणालों को चुराने वाला गुप्तबात सब से प्रकट करे, झूठी गवाही दे, निरर्थक दान करने वाला हो, यज्ञ किये विना मांस खाये, दिन में स्त्री से भोग करे। भरद्वाज जी ने कहा मृणालों का चोर स्त्री और गौओं में निर्दयी और धर्म्म का त्यागी हो, गुरु का अपमान करे, सूखे तृण की अग्नि में होम करे॥

यमदग्नि ऋषि ने कहा कि जल में मल मूत्र त्यागे, गौ को मारे, उस से शत्रुता करे, ऋतु काल के विना स्त्री का संग करे जिस ने मृणाल चुराये हैं। गौतम ने कहा जो मृणालों की चोरी करता है वह वेदों को पढ़ कर छोड़ दे, तीनों अग्नियों को न पूजे, सोम वल्ली को वेचे, एक कूप वाले गांव में वास करे, पिता गृह रजस्वला कन्या का स्वामी हो।

विश्वा मित्र ने कहा कि मृणाल चुराने वाले के माता, पिता, गुरु, स्त्री दूसरे से पोषण किये जायें, कुटंबी हो कर

निर्धन होवे, वर्षा ऋतु में घूमे, राज परोहित हो, यज्ञ न करने वाले का ऋत्विज हो ॥

अरुंधती ने कहा जो स्त्री मृणालों को चुराती है वह सदैव सास की अपातष्ठा करे, पति से दुष्ट मन हो स्वादिष्ट भोजन करे और वंध्या हो। गंडा ने कहा जो मृणालों की चोरी करती है वह झूठ बोलन वाली हो, बंधूओं स विरोध करे, मोल ले कर कन्या दे. एकाकी भोजन करे, जार से गर्भवती हो मरे॥

पशुमुख ने कहा मृणाल अपहारी निर्धन और देवताओं से परांगमुख हो ॥

शुनामुख ने कहा जो मृणाल चुराता है वह अध्वर्यु ब्राह्मण को कन्या दे, अथवा सामवेदगता को कन्या दे और अथर्व वेद को पढ़ कर समावर्तन स्नान करे ॥

ऋषि बोले कि ऐसी विय शपथें करने वाले तुमने मृणाल लिये हैं ।

शुनामुख ने कहा ठीक है। मैंने ही मैं चुराये हैं आप के वह मृणाल हैं मैंने एक मात्र आप की परीक्षा के लिये यह काम किया है॥

कृत्या तुम को मारना चाहती थी मैंने तुम्हारी रक्षा के लिये यह सब किया है ॥

हे वेद पाठियो! मैं इन्द्र हूं तुम ने संतोष से सब लोक को जीत लिया है ॥

इकहत्रवां अध्याय

--:०:--

ऋषियों की तीर्थ यात्रा, अगस्त्य मुनि के कमल की चोरी, ऋषियों की शपथें और इन्द्र ने कमल को देना ॥

भीष्म जी बोले हे युधिष्ठिर ! शपथ के विषय में एक और उत्तम इतिहास वर्णन करता हूं सुनो। पूर्व काल में प्रभास क्षेत्र में शुक्र, अंगीरस, अगस्त्य प्रभृति ऋषियों ने एकत्र हो तीर्थ यात्रा करते हुये अगस्त्य ह्रद पर बड़े बड़े उत्तम कमल देखे ॥

अगस्त्य ऋषि ने कहा कि मेरे कमल को किस ने लिया है मुझ को तुम पर संदेह है जिस ने मेरे कमल को लिया है देदो तुम में यह कर्म्म देख धर्म का नाश हुआ जान पड़ता है धर्म नाश से सब विपरीत कर्म्म होंगे इस लिये मैं स्वर्ग को जाता हूं ॥

यह सुन सब ऋषियों ने कहा कि हम ने आप के कमल नहीं चुराये आप को हम पर संदेह नहीं करना चाहिये, हम कठिन शपथें करने को तयार हैं ॥

भृगु जी बोले इस लोक में शपथ खाया हुआ भी फिर शपथ खिलाया जाये अश्व के मांस को खाये जिसने तुम्हारा कमल चुराया है ॥

वशिष्ठ जी बोले कमल का चोर वेद पाठ जप न करें

शिकार के लिये कुत्ते को पाल सन्यासी होकर नगर में रहे। कश्यप जी बोले वह मनुष्य अयोग्य वस्तुओं को बेचे, मिथ्या साक्षी दे जिस ने आप का कमल चुराया है ॥

गौतम जी ने कहा कि वह ब्राह्मण काम क्रोधादि से रक्त विपरीत बुद्धि से अहंकारी हो, अंगिरस ने कहा कि वह झूठा वेद रखने वाला ब्रह्म हत्या का प्रायश्चित न करे जिस ने कमल चुराया है ॥

धुन्दमार ने कहा कि वह मित्रों के उपकार को भूल जाये, शूद्र स्त्री से संतान उत्पन्न करे जिस ने आप का कमल चुराया है पुरू ने कहा कमल का चोर चिकित्सा वृत्तिवाला हो, भार्या उस की रक्षक हो और श्वसुर उस की पूजन करे। दिलीप ने कहा जिस ने आप के कमल को चुराया है एक कूप वाले गाम में रहे ॥

शुक्र जी ने कहा कि कमल का चोर मांस भक्षी, दिन में स्त्री संग करता और राजा का आज्ञाकार हो। जमदग्नि ने कहा कि कमल का चोर अनध्यायों में वेद पाठ, श्राद्ध में मित्र को भोजन करावे और शूद्र के श्राद्ध में भोजन करे। शिवि ने कहा कमल का चोर बिना अग्निसपायन किये मृत होजाय, यज्ञों में ब्राह्मणों से वैर करे ॥

नहुष ने कहा कि कमल का चोर अजितेन्द्री हो, स्त्री संग करे, नौकर होकर वेद को पढ़े। अम्बरीष ने कहा कमल का चोर स्त्री बिरादरी और गौओं पर निर्दयता करे ॥

नारद जी ने कहा स्वर रहित वेदपाठ करे, योग्य पुरुषों

का अपमान करे जिस ने आप का कमल चुराया है। नाभाग बोले कमल हरता मिथ्यावादी, सत्पुरुषों का विरोधी और कन्या को बेचे, कविन्मूर्पा ने कहा कि उसे गोवध का दोष हो जिस ने कमल चुराया है, विश्वामित्र बोले जिस ने आप का कमल लिया है वह वैश्यों से धन ले, कृतप वर्षा करे और राजा का परोहित बने, पर्वत ने कहा वह गोप में अधिकारी हो, गधे का सवार बने, भरद्वाज ने कहा मिथ्या भाषण और निर्दयता का उसे पाप हो, गालव ने कहा कि वह दान को अपने मुख से प्रकट करे और पापियों से भी अधिक निंदित हो जिस ने आप का कमल लिया है॥

अरुन्धती ने कहा जिस स्त्री ने कमल चुराया है वह सासु से कटुभाषणी, पति से विरोध करने वाली हो, शुनामुख ने कहा कि कमल का चोर सन्यासी होकर व्यभचारी हो॥

हे युधिष्ठर! इस प्रकार इन के शपथ खाने पर इन्द्र ने कहा कि वह पुरुष जिस ने आप का कमल लिया है सामवेद के गाने वाले ब्रह्मचारी को अपनी कन्या दे, अथर्वणवेद को पढ़ कर अवभृथ स्नान करे, वेदों का वक्ता पुण्याभ्यासी और धर्म्म कर्त्ता हो, अगस्त्य जी बोले कि मेरे चोर आप हैं आप मेरे कमल को देदें, इन्द्र ने हंसकर प्रार्थना की कि मैंने एक मात्र धर्म्म सुनने की लालसा से यह कर्म्म किया है यह आप का कमल है लीजिये और मेरा अपराध क्षमा करें॥

क्रोध युक्त मुनि कमल ले प्रसन्न हो गये और फिर आगे तीर्थ यात्रा को गये॥

बहत्तरवां अध्याय

—:o:—

उपानहत छत्र की उत्पत्ति का वर्णन और जमदग्नि का बाण वर्षा

युधिष्ठर ने प्रश्न किया कि छत्र और उपानहत की उत्पत्ति, इनका प्रभाव, इनके देने की विधि, सब सविस्तार वर्णन करें ॥

भीष्म जी बोले इस विषय में महात्मा जमदग्नि और रेणुका का प्रश्नोत्तर रूप इतिहास तुम से कहता हूं सुनो ॥

पूर्व काल में जमदग्नि महाशय धनुष बाण की क्रीड़ा में प्रवृत्त हुये और जो बाण यह छोड़ते थे पतिव्रता रेणुका उन को उठा २ कर ला देती थी, रोहिणी नक्षत्र में सूर्य के आने पर जमदग्नि जी ने उस की ओर बाण चलाने आरंभ किये और रेणुका से कहा कि यह बाण भी लाओ ॥

रेणुका उन बाणों के लाने को दौड़ी परन्तु तेज संताप से पाओं और शिर के तप जाने से छाया का आश्रय देख कुछ काल ठहर गई, जब बाण ले कर गरमी से सताई हुई रेणुका ने बाण दिये तो ऋषि ने क्रोध से कहा कि विलंब कर के क्यों आई हो ॥

रेणुका ने प्रार्थना की मेरे पाओं और शिर सूर्य के तेज से संतप्त हो गये थे इस लिये वृक्ष की छाया में ठहर गई थी यह सुन कर महर्षि ने कहा कि तुम को संतप्त करने वाले सूर्य्य को मैं अपनी तेजाग्नि से गिराऊंगा ॥

तब सूर्य्य भगवान ने एक ब्राह्मण के रूप में महा ऋषि के निकट आकर प्रार्थना की कि महाराज ! सूर्य ने आप का क्या अपराध किया है वह तो आकाश मार्ग में स्थित अपनी किरणों से संसार को प्रकाशित करता है जिस से दिन रात्रि होते हैं वह अपनी किरणों से रसों के क्षेत्र में मेघों द्वारा वर्षा करता है जिस से पूर्ण संस्कारों और यज्ञों की सामग्रियें, जीव मात्र के पोषण के अन्न, रोग निवृत्ति की औषधियें उत्पन्न होती हैं इस लिये आप सूर्य्य के गिराने की चेष्टा न करें ॥

तिहत्रवां अध्याय

—०—

छत्र और जोड़े देने का फल ॥

हे युधिष्ठर ! यह सुन कर भी उन्हों ने क्रोध को न छोड़ा। तब ब्राह्मण रूप सूर्य्य ने हाथ जोड़ कर यह कहा कि हे वेद पाठी ! सूर्य्य चलायमान है स्थिर नहीं आप उस को कैसे बेध कर गिरायेंगे ॥

जमदग्नी ने कहा कि हे सूर्य्य ! मैं तेरी गति को जानता हूं मध्यान्ह समय अर्द्ध निमेष तुम रहते हो उसी समय मैं तुम को टुकड़े २ कर गिरादूंगा, सूर्य ने कहा भगवान ! आप अवश्य मुझे गिरादेंगे, कृपा नाथ ! मैं अपराधी आप की शरण में आया हूं शरणागत की रक्षा करें ॥

जमदग्नि इस पर बोले कि तुम शरणागत होने में प्रसन्न हूं क्योंकि शरणागत की रक्षा न करने से ब्रह्महत्या दोष होता है इस लिये तुम भय न करो परन्तु अपने तेज से जीवों की रक्षा का उपाय सोचो ॥

हे युधिष्ठिर! तब सूर्य ने पावों के जोड़े और छत्र लाकर आगे रखे और प्रार्थना की कि जो मनुष्य उत्तम छत्र वेद पाठी ब्राह्मणों को देगा वह शुभगति को पायेगा और जो उन को जूते पहिरायेगा वह भी बड़ी वृद्धि को पायेगा ॥

चौहत्तरवां अध्याय

—:०:—

गृहस्थी धर्म वर्णन ॥

युधिष्ठर बोले कि हे कृपानाथ! गृहस्थ धर्म को पूर्ण रूप से वर्णन करें ॥

भीष्म जी ने कहा कि यही प्रश्न वासुदेव जी ने पृथ्वी देवी से किया था उन के प्रश्नोत्तर कहता हूं सुनो ॥

पृथ्वी ने उत्तर दिया कि हे माधवजी! गृहस्थी मनुष्य प्रति दिन देवताओं की पूजन करे, भोजन से पूर्व बलिवैश्वदेव करे भोजन के योग्य अन्न और जल से श्राद्ध करे जल मूल फलादिकों से मित्रों को प्रसन्न करे, सिद्धान्न से अग्नि में वैश्वदेव करे, अग्नि सोम, वैश्वदेव धन्वन्तर, प्रजापति को भिन्न २ आहुति दे, दक्षिण दिशा में यमराज के लिये पश्चिम दिशा में वरुण

के लिये, उत्तर दिशा में चंद्रमा के लिये और मध्य में प्रजापति के लिये, पूर्वोत्तर कोण में धन्वंतर जी के लिये, पूर्व दिशा में इन्द्र के लिये और गृह के द्वार पर मनुष्यों के लिये, गृह के मध्य में मरुद्गण और देवताओं के लिये बलिदे, आकाश में विश्वेदेवाओं के लिये और रात्रि में घूमने वाले राक्षसों के लिये बलिदे, ब्राह्मण को अन्नदे और अतिथी को भोजन खिलाकर आप खाये, खाने से पहिले करे, चांडाल और पक्षियों के लिये भी अन्न रखले ॥

भीष्म जी ने कहा कि हे युधिष्ठर जी ! वासुदेव जी ने वैसे ही कर्म किये तुम भी ऐसा ही करना इस से इस लोक में सुख और परलोक में शुभ कीर्ति को पाओगे ॥

पचहत्तरवां अध्याय

— ० —

पुष्प, धूप, दीप आदि देने के उपाय और उस के फल ॥

हे पितामह ! अब आप दीप दान की विधि इस का समयादि वर्णन कीजिये ॥

भीष्म जी बोले कि इस विषय में सुवर्ण ऋषि और मनु जी का इतिहास कहता हूं सुनीये ॥

एक समय पूर्ण वेदवेत्ता सुवर्ण ऋषि मनु जी से मिले

और मेरू पर्वत की एक सुवर्ण की शिला पर बैठ सुवर्ण ऋषि ने मनु जी से पूछा कि देवताओं पर पुष्प चढ़ाने की प्रथा कब से चली, किसने चलाई और उस का क्या फल है। मनुजी ने कहा इस विषय के उत्तर में राजा बलि और शुक्र का संवाद सुनो॥

राजा बलि ने जब यही प्रश्न किया तो शुक्र जी ने उत्तर दिया कि सब औषधियें अमृत हैं उसी अमृत रूप औषधियों से मन को प्रसन्न करने वाले फूल उत्पन्न हुये, हे प्रभु! जिस २ देवता का नाम लेकर पुष्प चढ़ाये जाते हैं वह सब प्रसन्न होते हैं॥

हे राजन्! पुष्प गंधि प्रिय और अप्रिय भेद से दो प्रकार की है. प्रिय गंधि वाले पुष्प देवताओं के योग्य और अप्रिय गंधि वाले राक्षसों के प्रिय हैं जो पुष्प वन उद्यानादि में उत्पन्न होते हैं उन को विधि पूर्वक देवताओं पर चढ़ाय उस से देवता प्रसन्न हो मनोवांछित फल देते हैं॥

धूप तीन प्रकार के होते हैं १म गुग्गुलादि निर्यास, दूसरे चन्दनादि लकड़ी और तीसरे अहंगधादि कृत्रिम धूप, गुंगलादि सब निर्यास देवताओं को प्रिय हैं अगर वाले धूप यक्ष, राक्षस और सर्पों को प्रिय हैं, सलकी नामनिर्यास दो प्रकार का है राल और माछिकादि के पुष्पों से संयुक्त और देवदारू आदि गंधों से निर्मित इन से मनुष्यों की प्रसन्नता होती है, हे राजन्! अतरादि भी एक प्रकार के धूप हैं जो मनुष्यों को प्रसन्न करते हैं, पुष्पों के दान में जो फल है धूप का भी वैसा ही फल है॥

दीपों का दान अर्थात् तेज के दान से मनुष्यों का तेज बढ़ता है दीप दान से मनुष्य स्वच्छ नेत्र और तेजस्वी होते हैं ॥

हे राजन ! दीप के चुराने और उस के बुझाने का बड़ा पाप है, दीपक का चोर तमोगुणी अंधा होता है, दीप दान करने वाला स्वर्ग में दीप माला के समान प्रकाश पाता है, घृत के दीपक का दान वृद्धि करता है तेल के दीपक का दान करना उचित नहीं ॥

ऐश्वर्याभिलाषी मनुष्य पर्वत, दुर्गमस्थान, घनेवन और चौराहे में दीपक जलायें, देव मंदिर में दीपक जलाने से बड़ा पुण्य होता है ॥

छेहत्तरवां अध्याय

—:०:—

राजा नहुष का देव पूजन से इन्द्र पद की प्राप्ति और अगस्त्य का भृगु से बदला लेने का विचार ॥

युधिष्ठर ने कहा कि आप बलि विधान की विधि और फलादि कहें। भीष्मजी ने उत्तर दिया कि एक समय नहुष राजा ने देव लोक में जा सब देवताओं की पूजन की फिर उसने अपने को इन्द्र जान कर अभिमान किया जिसका फल यह हुआ कि उसकी सब क्रिया नाश हो गई तप के प्रभाव से उसने

अपने रथ के आगे ऋषियों को लगाया जिससे उसका सब बल नष्ट हो गया, वह क्रमशः ऋषियों से रथ खिचवाता था एक दिन अगस्त्य की वारी आई और भृगु जी ने उनसे यह वचन कहा कि तुम इस का अत्याचार कहां तक सहेंगे ॥

अगस्त्य जी ने कहा कि तुम उसका क्या बिगाड़ सकते हो जब कि वर दाता ने उस वर दिया है इस ने यह वर पाया हुआ है कि जो मेरे सामने आये वही मेरे आधीन हो, इस लिये न मैंने न आपने और न किसी और ऋषि ने इसे भस्म किया है। अब आप जो कहें मैं करने को तयार हूं ॥

भृगु जी बोले कि मैं ब्रह्मा जी की आज्ञा से नहुष से बदला लेने को आप के पास आया हूं अब वह दुर्बुद्धि आप को भी रथ के आगे जोड़ कर बाणों से घायल करेगा तब मैं उस को इन्द्र पद से गिरा सर्प बनने का शाप दूंगा और शत क्रतु को देवताओं के राज्य पर आरूढ़ करा दूंगा ॥

हे राजन्! भृगु के यह वचन सुन प्रसन्न चित्त अगस्त्य जी तप से पृथक् हुए ॥

सतहत्तरवां अध्याय

—:o:—

राजा नहुष को भृगु जी का शाप फिर स्वर्ग प्राप्ति और दीप दान का महात्म ॥

युधिष्ठिर ने पूछा कि नहुष राजा स्वर्ग से

से फिर किस प्रकार गिराय गये यह सब वर्णन करे। भीष्म जी बोले कि जो मनुष्य धूप, दीप और बलि दान आदि कर्म करते हैं, और सिद्धान्त का प्रथम भाग अतिथियों को देते हैं उन पर देवता भी प्रसन्न होते हैं वह स्वर्ग में जाते हैं हे राजन्। महात्मा नहुष जी इन सब कार्यों को करता था इसी से उस को इन्द्र पद की प्राप्ति हुई थी ॥

जब उस ने महात्मा अगस्त्य जी को भी रथ में जोड़ने के लिये सरस्वती तट पर बुलाया तब भृगु जी ने अगस्त्य से कहा कि आप थोड़ी देर के लिये आंखे बंद कर लें मैं नहुष को स्वर्ग से गिराने के लिये आप की जटाओं में प्रवेश करता हूं ॥

उधर नहुष का बुलावा आया अगस्त्य जी झट वहीं पहुंचे और बोले कि मुझ को शीघ्र रथ में जोड़ आज्ञा दें कि किधर ले चलूं। नहुष ने उस को रथ में जोड़ा और भृगु जी को जो कि जटा में छिपे थे न देखा ॥

राजा नहुष ने अपने बायें पाओं से अगस्त्य जी के शिर पर प्रहार किया तब भृगु जी ने शाप दिया के हे नीच। तुम ने महात्मा अगस्त्य जी के शिर में लात मारी है इस से तुम सर्प बन पृथ्वी पर गिरो ॥

भीष्म जी बोले हे युधिष्ठिर। इस प्रकार भृगु जी के शाप देने पर वह नहुष सर्प रूप हो पृथ्वी पर गिर पड़ा ॥

इस प्रकार शाप से गिर कर नहुष की आंखें खुलीं तो शाप से छूटने के समय की प्रार्थना की ॥

तब भृगु जी ने कहा कि हे नहुष! तेरी वंश में जब युधिष्ठिर उत्पन्न होगा वह तेरा मुक्ति कर्त्ता होगा यह कह वह दोनों ऋषि अन्तर्ध्यान हो गये॥

हे राजन्! तुम्हारे प्रताप से उसे बूझा फिर इन्द्र बना दिया इस लिये हे राजन्! मनुष्यों को सदैव सायंकाल को दीप दानादि करने चाहियें॥

युधिष्ठिर ने पूछा कि जो लोभ से ब्राह्मणों का धन हर लेते हैं उन की क्या दशा होती है॥

भीष्म जी ने कहा कि पूर्व समय में एक राजा ने ब्राह्मण की गौओं को हर लिया जिस से वह नरक में गया वरंच जिस २ ने उन का दूध दही और घृत खाया था वह भी नरक में गये, वरंच उन की संतान और पशु भी शीघ्र ही मर गये थे एक ऋषी ने गौ सेवा, में लगे हुये चांडाल को देखा और उस से पूछा कि तुम चंडाल कैसे बने उस ने कहा मैंने भी राजा की चुराई हुई गौओं का दूध पिया था इस लिये किसी को ब्राह्मण का धन नहीं चुराना चाहिये सोमवल्ली का रस (शराब) बेचना और मांस खाना बड़ा पाप है॥

युधिष्ठिर ने प्रश्न किया कि शुभकामियों की कैसी गति होती है॥

भीष्म जी ने कहा कि संध्यादि कर्म्म के न करने वाले परलोक और ईश्वर के न मानने वाले पाप बुद्धि यम राज के दंड को पाते हैं। धन से गर्वित बड़ी बहिन, माता और पिता से विद्रोह करने वाले नरक में जाते हैं, अतिथियों के

पूजक, ब्राह्मणों के सेवक, हवन कर्त्ता नंदन वन में निवास करेगा अहिंसा ममता इच्छा के त्याग करने वाले मानापमान निंदा स्तुति को एकसा जानने वाले चन्द्रलोक में जाते हैं ॥

जो दानी किसी प्रकार का दान नहीं लेते और आप से वस्तु याचक को देते हैं अतिथियों की सेवा करने वाले गृहस्थी ऊंचे लोकों को जाते हैं, वेद पाठी, यज्ञों के अभ्यासी, गुरुभक्त सत्यवक्ता वरुण लोक में जाते हैं, चातुरमासिक यज्ञों के कर्ता एक हजार इष्टी यज्ञ करने वाले, श्रद्धावान इन्द्र लोक में जाते हैं वेद पाठी, यज्ञ के करने वाले प्रजापति के लोक में जाते हैं राजसू अश्वमेध यज्ञ के कर्ता गोविन्द लोक को जाते हैं ॥

गौवों के रक्षक और तीर्थ यात्रा करने वाले उत्तम लोकों को प्राप्त होते हैं। सतो गुणी ज्ञानी वेदान्ती, ब्रह्म लोक में जाते हैं ॥

अठहत्तरवां अध्याय

—:o:—

अनुशन व्रत महात्म्य ॥

युधिष्ठर ने कहा कि तपों में महा तप क्या है। भीष्मजी ने कहा कि इस विषय में ब्रह्म और भागिरथ का प्रश्नोत्तर कहिता हूं सुनो जब भागिरथ जी स्वर्ग और गोलोक को उलंघन कर के ब्रह्मलोक को गये तो ब्रह्मा ने पूछा कि तुमने यह लोक कैसे पाया है ॥

भागीरथ ने कहा कि मैंने शुक्रजी के उपदेश से अनशन व्रत से तथा व्रत के अनंतर हज़ार उत्तमोत्तम ब्राह्मणों की प्रसन्नता से यह लोक पाया है यह सुन ब्रह्माजी ने भी भागीरथ का बड़ा आदर किया इस लिये हे युधिष्ठिर! तुम भी अनशन व्रत धारण करो और ब्राह्मणों को प्रसन्न करो॥

युधिष्ठिर बोले कि महाराज! मनुष्यों की आयु सौ वर्ष की लिखी है फिर किस कारण बाल और युवा अवस्था में हीं मरजाते हैं। धन और शुभ कीर्ति किस कर्म्म से मिलती है यह भी वर्णन करें॥

भीष्म जी बोले शुद्ध चार से मनुष्य आयु, लक्ष्मी और शुभ कांति को पाता है, धर्म्मात्मा साधु मनुष्यों का जैसा चलन है वही आचार है॥

हे राजन्! दुष्टाचारी नास्तकों की आयु कम हो जाती है, वर्ण संकर स्त्रियों के भोग से आयु घटती है, आचारवान, श्रद्धावान पुरुषों की आयु १०० वर्ष की होती है, मनुष्य को चाहिये कि ब्रह्म मुहूर्त में उठ शौचादि करे प्रातः सायं संध्या और देव पूजन नित्य करे, ग्रहण को न देखे, पर स्त्री गमन न करे, ब्रह्मचारी रहे अमावस्या पौर्णमासी दोनों पक्षों की चतुर्दशी और अष्टमी को स्त्री संग न करे, मांस भक्षण न करे, कटुभाषण न करे, पुत्र और शिष्य के सिवाय किसी पर दंड न दे इन कर्म्मों से मनुष्यों की आयु कम नहीं होती॥

दीर्घायु अभिलाषी दुग्ध, क्षीर, तस्मै आदि भोजन देवताओं के अर्पण किये बिना भक्षण न करे, सूर्य्योदय होजाने पर निद्रा न

करे, उठते ही माता पिता गुरु को प्रणाम करे, गर्भिणी स्त्री से भोग न करे, पूर्व और दक्षिण की ओर सिर करके न सोये, नग्न हो कर स्नान, रजस्वला से वार्तालाप, जल में मल मूत्र का त्याग कभी न करे, भोजन से पूर्व और पीछे तीन २ आचमन करे, खड़े हो कर मूत्र करना अनुचित है, चलते २ कभी न खाये तिल युक्त अन्न न पावे ॥

अनाध्याय और चलते २ जूंठ मुख से वेद मन्त्रों को न पढ़े, रजस्वला स्त्री का बनाया भोजन कभी न करे क्योंकि इस से आयु घटती है ॥

ऐश्वर्य के चाहने वाला पीपल और बड़ की गोलें सन का साग और गूलर यह कभी न खाये, भोजन के पीछे दूध पिये, पितरों का तर्पण करे, दिन में स्त्री संग न करे, गुप्तवार्ता किसी से प्रकट न करे ॥

निन्दा, सगोत्र विवाह, ईर्षा कदापि न करे, बिना बुलाये, यज्ञ दिये माता पिता और गुरु की आज्ञा में रहे, हे युधिष्ठर! सार यह है कि शुद्धाचार ही ऐश्वर्य और आयु को बढ़ाता है ॥

उनासीवां अध्याय

—:o:—

भाईयों को परस्पर कैसे वर्ताव करना उचित है ॥

युधिष्ठर ने प्रश्न किया कि बड़े भाई को छोटे और छोटे

को बड़े भाई के साथ कैसा वर्ताव करना चाहिये ॥

भीष्मजी ने उत्तर दिया कि बड़े भाई को छोटे भाइयों की पालना करना चाहिये, उनके भागों को अपनी ही संतान के विवाहादि में न खर्च करदे, हां यदि बड़ा भाई विदेश में रह कर धनोपार्जन करे तो उस धन का भाग देना या न देना यह उस के आधीन है। यद्यपि छोटा भाई दुष्ट कर्मी हो तो भी बड़े भाई को उसका अपमान नहीं करना चाहिये। पिता की मृत्यु के पीछे बड़ा भाई ही पिता के समान है, माता, पिता, गुरु, बड़ी बहिन और छोटे भाई को बड़े भाई की स्त्री इन सब की आज्ञा पालन में रहिना चाहिये ॥

युधिष्ठर ने पूछा कि म्लेच्छ भी व्रत कर सकते हैं या नहीं ॥

भीष्मजी ने कहा कि व्रत तीन प्रकार के हैं एक निराहार, फलाहार और एकानक्त यह व्रत तीनों वर्णों को करने उचित हैं तिथियों के व्रतों का भिन्न उत्तम २ फल हैं, हे राजन्! जो मनुष्य एकानक्त व्रत करता है वह स्वर्ग में जाता है, जो १२ वर्ष तक एकानक्त व्रती रहता है वह असंख्य काल तक स्वर्ग के सुखों को भोगता है ॥

हे युधिष्ठिर! एकानक्त से फलाहार और फलाहार से भी उत्तम अनशन व्रत है अनशन व्रत से अनिर्वचनीय सुख और स्वर्ग लोक की प्राप्ति होती है च्यवन, वशिष्ट प्रभृति अनेक ऋषियों ने व्रत ही के प्रभाव से उत्तमोत्तम फल पाये इन व्रतों का धारण करना सब को उचित है ॥

युधिष्ठर ने प्रश्न किया कि यज्ञादि कर्म्म तो केवल धन ही से होसकते हैं निर्धन लोग उस फल को किस प्रकार पासकते हैं? भीष्म जी बोले कि अंगिरा ऋषि कहते हैं कि अहिंसा धर्म में प्रवृत्त हो अग्नि होत्र प्रातः सायं कर जो दो समय ही भोजन छः वर्ष तक करता है वह ब्रह्म लोक में जाता है तीन वर्ष तक इस व्रत के धारण करने वाला अग्नि होत्र यज्ञ के फल को पाता है ॥

इसी प्रकार व्रतों के प्रभाव से सब प्रकार के यज्ञों के फल निर्धन मनुष्य पाते हैं हे राजन्! बारह मास नित्य अग्नि होत्र कर्ता वरुण और इन्द्र लोक को पाता है ॥

हे राजन्! एक दिन दो दिन तीन दिन इसी प्रकार जो ३० दिन तक व्रत धारण करते है उन को बड़े यज्ञों का फल मिलता है और जब लग सूर्य चन्द्रमा है तब तक वह स्वर्ग में निवास करते हैं ॥

एक महीने पीछे भोजन करने की प्रतिज्ञा कर जो १२ वर्ष तक व्रत को पालन करता है वह महर्षि पद को पा इसी देह से स्वर्ग को जाता है ॥

अस्सीवां अध्याय

—:०:—

तीर्थों के विषय में ॥

युधिष्ठर जी ने पूछा कि सब तीर्थों में उत्तम तीर्थ कौनसा है। भीष्म जी ने उत्तर दिया कि ज्ञानियों का तीर्थ मन रूपी

तीर्थ में सत्यता घृत के दन वाला अगाध जल है और अहिंसा, सत्य, दया, जितेन्द्रियता आदि गुण तीर्थ रूप हैं ॥

हे राजन् ! शुद्धाचारी, जितेन्द्री, सतो गुणादि गुणों से युक्त, सर्वज्ञ, समदर्शी स्वयं तीर्थ रूप हैं, अनिच्छा उन की शौच है और ज्ञान ही उन की पवित्रता है ॥

हे राजन् ! ज्ञानी पुरुष मानस तीर्थ में ब्रह्म ज्ञान रूप जल में स्नान करते हैं । यही पिंड के प्रधान तीर्थ हैं इन के स्नान से मुक्ती की प्राप्ती कठिन नहीं होती ॥

ब्रह्मांड के तीर्थों पर भी जो उपरोक्त गुणों का आश्रय ले भ्रमण कर पितों का तर्पण आदि करते हैं वह भी भीतर बाहर से पवित्र हो जाते हैं ॥

युधिष्ठर ने प्रार्थना की कि व्रतों में किस व्रत का विशेष महात्म है ॥

भीष्म जी ने उत्तर दिया कि जो मनुष्य द्वादशी युक्त एकादशी को व्रत कर पुण्डरी कान्त भगवान् का यथा विधि पूजन करता है, वर्ष की किसी एकादशी का त्याग नहीं करता विष्णु का कीट भृङ्गी न्याय के अनुसार ध्यान करता है, वर्ष के अनंतर ब्राह्मण भोजनादि भी करता है और घृत दान करता है वह सब से उत्तम लोक को पाता है इस से बढ़ कर और कोई व्रत नहीं ॥

युधिष्ठर ने पूछा कि अज्ञानियों को सुख किस प्रकार मिल सकता है । भीष्म जी ने उत्तर दिया कि मार्गशिर शुदि प्रति पदा को जब मूला नक्षत्र हो तो चान्द्र व्रत को करे और

नक्षत्रों को अपने अंगों का रूप यथाक्रम माने और आत्मा को चंद्रमा का रूप कल्पना करे हे राजन् ! इस व्रत से अज्ञानी मनुष्य दूसरे जन्म में राजा बनता है ॥

युधिष्ठर ने पुछा कि इस जगत में कौन सा उत्तम कर्म्म है जिस के करने से स्वर्ग मिलता है और जो कर्म्म मरने पर साथ जाता है वह वर्णन कीजिये ॥

युधिष्ठर के इस प्रकार प्रश्न करने पर बृहस्पति जी वहां आ पहुंचे, भीष्म जी ने उनका पूजन कर उक्त प्रश्न के उत्तर की प्रार्थना की। बृहस्पति जी ने कहा कि हे राजन् ! मनुष्य अकेला आता है, अकेला जाता है, अकेला ही सुख दुःख आदि भोगता है, माता पिता आदि कोई बन्धु मरने पर साथ नहीं जाते किन्तु एक धर्म मनुष्य के संग जाता है, उसी का सेवन करना चाहिये ॥

युधिष्ठर ने कहा कि वीर्य्य किस प्रकार उत्पन्न होता है, पंचतत्व पृथ्वी आदि से जात अन्न से वीर्य्य बनता है, वीर्य्य से संतानोत्पत्ति होती है। उत्पन्न होकर जीव शुभ कर्मों के करने वाला धर्म से शुद्धात्मा होकर सुख भोगता है, धर्म्माधर्म्म करता सुख दुःख दोनों को पाता है, अधर्म्मी नरक में जाता है मर कर सूक्ष्म शरीर शुभ कर्मों का यमराज के ब्रह्म लोकादि स्थानों में और अधर्म्मी नरक दुःख रूप स्थानों में जाता है और नाना प्रकार के मंद कर्म करने वाले गधे आदि की योनियों में नरक भोग जन्म लेते हैं ॥

इक्यासीवां अध्याय

—:o:—

अन्न दान सब से श्रेष्ठ दान है॥

युधिष्ठर ने पूछा कि शुभ गति के देने वाले कौन कर्म हैं। बृहस्पति जी ने उत्तर दिया कि मन की विपरीत गति से अधर्म में पड़ मनुष्य पाप कर्म करता है और नरक में जाता है हे राजन्! पाप करके जो पश्चाताप करता है और अपने पाप को छिपाता नहीं वह पाप से छूट जाता है और अन्नादि के दानों से भी पाप नष्ट होते हैं, सदैव धर्म से कमाया अन्न वेद पाठी पात्र ब्राह्मणों को देना चाहिये, अन्न दान सब से उत्तम दान है क्योंकि अन्न ही जीव मात्र के प्राण हैं इस लिये यह सब दानों में उत्तम दान है॥

युधिष्ठर ने पूछा कि अहिंसा, वैदक धर्म, ज्ञान, जितेन्द्रता इन में से कौनसा कर्म उत्तम है, बृहस्पति जी ने कहा कि यह सब कर्म ही अपने २ स्थान अतीव गुण दायक हैं परन्तु मेरी सम्मति में अहिंसा सब से बढ़ कर धर्म है ब्रह्मज्ञान से मुक्ती मिलती है इस से बढ़ कर और कोई कर्म नहीं यह कह कर बृहस्पति जी स्वर्ग में चले गये॥

युधिष्ठर जी ने पूछा कि मनुष्य मन वाणी और काय से हिंसा करके उस से किस प्रकार छूट सकता है। भीष्म जी ने कहा कि हे पुत्र! ब्रह्मज्ञानी लोग हिंसा ४ प्रकार की कहते हैं मन, वाणी, काम और भक्षण, पहिले तीनों प्रकार की हिंसा

के त्याग से चतुर्थ का स्वयं त्याग होजाता है इस लिये हे राजन् ! मांस भक्षण महा पाप है, मांस भक्षण कदापि नहीं करना चाहिये यह सर्व नाश का करने वाला महा दुखों का मूल कारण है ॥

युधिष्ठर ने प्रश्न किया कि हे राजन ! श्राद्ध में मांस पिंड का विधान कहा है हिंस का इतना दोष है तो फिर बिना हिंसा के मांस कैसे मिल सकता है ॥

भीष्म जी ने उत्तर दिया कि हे पुत्र ! हर महीने अश्वमेध यज्ञ कर्ता राजा और मद्य मांस के न खाने वाला एक से हैं मांस भक्षण का निषेध मरीचादि सम्पूर्ण ऋषियों ने किया है इस लिये तुम मांस भक्षण त्याग को उत्तम कर्म समझो, अहिंसा तप है, सत्य है और अहिंसा ही उत्तम धर्म है, स्वयं मार कर खाने वाला या दूसरे से मरवा कर खाने वाला एक से दोष भागी हैं, मांस के त्याग के समान गोदान, पृथ्वी दान आदि कोई फलदायक नहीं जो मांस के लोभी देव पूजन और यज्ञों के बहाने से पशुवध करते हैं वह नरक में जाते हैं ॥

हे राजन ! पितृ श्राद्ध में मांस का विधान है जो कि वेद मन्त्रों द्वारा शुद्ध और प्रोक्षण किया जाता है उस के सिवाय कोई मांस खाना योग्य नहीं, यज्ञ में पशु को खड़ा कर के छोड़ देने ही यज्ञ की बली है सार यह है कि मांस खाने वाला परम दुःख, क्लेश और नरक को भोगता है और इस को त्यागने वाला उत्तम सुख और स्वर्ग धामादि शुभलोकों को पाता है ॥

त्रियासीवां अध्याय

—:०:—

मांस भक्षण दोष और मांस न खाने के फल का वर्णन ॥

युधिष्ठर ने पूछा कि मांस भक्षण के दोष और न खाने के फल का वर्णन करें ॥

भीष्म जी बोले कि मांस स्वादु और बलकर है, भोग सामर्थ्य को बढ़ाता है, परन्तु इस के खाने में बड़ा दोष है वह वीर्य्य से बनता है हिंसा पशुओं के वध की आज्ञा शास्त्रों में है इस लिये क्षत्रियों को शिकार की आज्ञा है या वेद में यज्ञ के लिये पशुवध की आज्ञा है वह भी उस पशु की स्वर्गादि प्राप्ति के लिये इस से अतिरिक्त अपने स्वाद के लिये जो पशुओं का वध करते हैं वह बड़ा अधर्म करते हैं, मांस भक्षी राक्षस होते हैं, कुंभी पाक नरक में जाते हैं हिंसा के तुल्य कोई पाप नहीं, अहिंसा के समान कोई यज्ञ नहीं, तीर्थ नहीं, हिंसा न करने वाला सब जीवों के माता पिता के समान है ॥

युधिष्ठर ने प्रश्न किया कि जो मनुष्य युद्ध में मारे गये हैं वह किस गति को पायेंगे ॥

भीष्म जी बोले कि एक कीट को भयातुर देख व्यास जी ने कहा कि तुम को शब्द, रस, गंध आदि का तो बोध नहीं फिर मनुष्य की मृत्यु का क्या भय है ॥

कीट ने कहा कि यह जीव सब शरीरों में प्रीति करने वाला है मुझे इसी शरीर में आनंद है ॥

पूर्व जन्म में मैं व्याज खाने वाला छली पुरुष था मैंने ही कृपनता से धन संग्रह किया था कभी कोई सुकृत कर्म न किया था वरंच एसा कोई बुरा कर्म न था जो मुझ दुर्बुद्धि ने न किया हो मुझ से केवल इतना सुकृत हुआ है कि मैं ने एक वार एक अतिथी ब्राह्मण को भोजन खिलाया था और माता की सेवा की थी जिस से मुझे पूर्व जन्म का सब वृत्तान्त याद है और आप के दर्शण हुये हैं कृपा कर के आप मेरे मोक्ष का उपाय वर्णन कीजिये ॥

व्यास जी ने कहा कि तुम ने कर्मों के प्रभाव से कीट योनी को पाया है अब मेरी कृपा से वेदपाठी ब्राह्मण बनोंगे ॥

मैं तुम को ब्रह्म ज्ञान का उपदेश करूंगा और जुंहीं तू जाना चाहेगा वहीं मैं तुम को पहुंचा दूंगा, कीट ने कहा ऐसा ही हो, यह कह कर कीट मार्ग में लेट गया और गड्डी के पहिये से चिथड़ कर मर गया और फिर छत्री वंश में उत्पन्न हो राजा बना तब व्यास जी उस से मिले, राजा ने हाथ जोड़ प्रार्थना की कि यह एक मात्र आप की दया का प्रभाव है आप मुझे कुच्छ आज्ञा दें ॥

व्यास जी ने कहा कि अब तू अगले जन्म ब्राह्मण कुमार बनेगा और गुरू पूजन के प्रभाव से स्वर्ग को पावेगा ॥

हे राजन् ! छत्री शरीर त्याग वह ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हो बड़े तप में लगा, व्यास जी ने उसे मिल कर कहा कि

शुभ कर्मों के करने से तुम ने शुभ फलों को पाया; पापें करने वाले नीचयोनियों में जन्म लेते हैं तुम अब शुभ कर्म करो इसी से तुम को मुक्ति मिलेगी, उस ने वैसा ही किया और ब्रह्मलोक में गया. हे राजन्! युद्ध में मरने वालों ने भी पवित्र गति को पाया है तुम शोच मत करो ॥

तिरासीवां अध्याय

—:०:—

शुभाशुभ कर्म वर्णन ॥

हे पितामह! विद्या, तप और दान में से उत्तम क्या है? भीष्म जी ने उत्तर दिया कि देश, काल और पात्र को थोड़ा सा दिया दान भी बड़ा होता है, अशत्रुता दान और सत्य यह भी बड़े उत्तम कर्म हैं, मैत्रेय जी ने तृषा युक्त व्यास जी को जल दिया और भोजन खिलाया तो वह ब्रह्म लोक में गये ॥

हे राजन्! इस लोक में दान, जितेन्द्रियता और वेद पाठ एक से फल देने वाले हैं ॥

हे राजन्! मनुष्यों की प्रकृति तीन प्रकार की है, पुण्य, पाप और तप, पाप दोनों से रहित, यज्ञ दान और तप के अभ्यासी पवित्र और शुभ कर्मी कहलाते हैं। जीवों से शत्रुता करने वाले पापी होते हैं। प्रथम मनुष्य सुख और दूसरे दुःख को पाते हैं ॥

मैत्रेय जी ने व्यास जी से कहा कि आप के दर्शनों से मेरा

जनम सफल हुआ, ब्राह्मणों की प्रसन्नता से देवता पितरादि भी प्रसन्न होते हैं, ब्राह्मण के बिना चारों वर्णों के लोग धर्म से च्युत हो जाते हैं, ब्राह्मण से रहित देश शून्य है यदि दान के लिये उत्तम ब्राह्मण न मिले तो वह धन व्यर्थ है अज्ञानी को दिया दान व्यर्थ होता है। दाता और गृहीता दोनों नष्ट हो जाते हैं ज्ञानी को दान देने से उत्तम गति मिलती है ॥

व्यास जी ने मैत्रेय जी से कहा कि अब जो दान से भी अधिक उत्तमकर्म है, वह मैं तुम से कहता हूं। हे मैत्रेय ! दान से तप अधिक है, घोर पाप कर्त्ता तप से ही पापों को दूर कर उत्तम गति पाते हैं। जो सर्वज्ञ है वही नेत्र वाला है जितेन्द्रिय तपस्वी सर्वज्ञ हो जाता है। शास्त्र रूपी धन रखने वाले ब्राह्मण पूजन के योग्य हैं। दान देने वाले इस लोक में धनी होकर सुख को पाते हैं, अन्न दाता उत्तम लोकों को पाते हैं, हे मैत्रेय जिस घर में स्त्री भर्ता से भर्ता स्त्री से प्रसन्न हैं उस घर में सब प्रकार के कल्याण होते हैं ॥

युधिष्ठिर ने कहा हे भीष्म जी ! अब आप उत्तम स्त्रियों के शुभाचरण का वर्णन करें ॥

भीष्म जी बोले सोमना रानी ने शांडली से पूछा कि तुम किस कर्म के प्रभाव से देव लोक में आई हो ?

सांडली ने उत्तर दिया कि मैं सास ससुर की सेवा करती थी घर से बाहर नहीं ठहरती थी, अकारण हास्य नहीं करती थी, पति के बाहर से आने पर उन की शुश्रुषा करती थी; पति

के विदेश में जाने पर किसी प्रकार का श्रृंगार नहीं करती थी, मैं सत्संग में बैठती थी इस लोक में जो स्त्री इन कर्मों को करती है वह अरुंधती के समान स्वर्ग लोक को पाती है इतना कह कर सांडली देवी अंतर्ध्यान होगई ॥

चौरासिवां अध्याय

—०—

मधुर भाषण और दान में उत्तम क्या है॥

युधिष्ठर ने पूछा कि हे पितामह ! मधुर भाषण और दान इन में विशेष कौन है ? भीष्म जी बोले इस विषय में ब्राह्मण और राक्षस का प्रश्नोतर सुनो, एक ब्राह्मण को क्षुधातुर राक्षस ने पकड़ा तब ब्राह्मण ने उस से मधुर भाषण किया॥

राक्षस ने कहा हे ब्राह्मण ! मैं दुर्बल पांडुरंग क्यों हूं ब्राह्मण ने कहा कि तुम साधुओं के कर्मों का नाश करने से अज्ञानियों का संग करने से पांडू रंग हो यह सुन कर राक्षस ने ब्राह्मण को छोड़ दिया ॥

युधिष्ठर ने पूछा कि मनुष्य देह पाकर दरिद्री मनुष्य को क्या करना योग्य है और गुप्तदान का भी वर्णन करें ॥

भीष्मजी बोले कि पूर्व समय में व्यास जी ने जो कुच्छ मुझे कहा है वह कहता हूं सुनो, दश पशु घातकों के बराबर एक तेली है, दश तेलियों के तुल्य एक मद्यपा है, दश मद्यपाओं के बराबर एक वेश्या है, दश वेश्याओं के तुल्य एक राजा है, यह

शास्त्रों का मत है जो मनुष्य सदैव शास्त्रों का पढ़ते सुनते याद करते है उन को नारायण फल देने हैं जो शस्त्र वेता श्रद्धावान् अंतःकरण से शुद्ध हैं उन में से श्रद्धावान् उत्तम हैं। एक श्रद्धावान् ने इन्द्र से पूछा कि श्राद्ध कर्त्ता और भोक्ता को स्त्री भोग करना चाहिये या नहीं। श्राद्ध में पिंडदान किस २ को दिये जाते हैं। इन्द्र ने कहा कि जो मनुष्य श्राद्ध कर या श्राद्ध का भोजन कर स्त्री से भोग करता है उसके पितर उसी वीर्य्य में एक मास तक निवास करते हैं। १य पिंड को जल में डाल देना चाहिये २य पिण्ड स्त्री को भक्षण करना उचित है और तीसरे पिण्ड को अग्नि में हवन कर देना चाहिये इस प्रकार करने से पितर बड़े सुखी होते हैं। दूत ने कहा कि अब आप इनके प्रयोजन को वर्णन करें, इन्द्र ने कहा कि प्रथम पिण्ड से चन्द्रमा तृप्त होता है, २य पिण्ड स्त्री के भोजन करने से पुत्र की प्राप्ति होती है ३य, पिण्ड के हवन से पितृ लोग प्रसन्न होते हैं॥

श्राद्ध का अन्न खाने वाला ऋत्विज यजमान के पिता का रूप धारण करता है, स्त्री भोग से उसे भी महापाप होता है॥

इन्द्र ने बृहस्पति जी से एक वार पूछा कि जो गुप्त धर्म मनुष्यों को सुख देने वाला है वह भी वर्णन कीजिये, बृहस्पति जी ने कहा कि हे इन्द्र! सूर्य की ओर मुख कर के मल मूत्र त्याग नहीं करना चाहिये वायु को दूषित नहीं करना चाहिये हव्यवाह अग्नियों में होम करना चाहिये, गौओं का अनादर नहीं करना चाहिये, इस से विपरीत आचरण से वंश वृद्धि को

नहीं पाता और जो मनुष्य अमावस के दिन गूलड़ की लकड़ी के पात्र में मधु भर तिलों सहित पितरों के अर्थ दान करते हैं उन के पितर अक्षय तृप्ति को पाते हैं उन की कुल की वृद्धि होती से और आप पितरों के ऋण से छूट जाता है ॥

भीष्म जी बोले कि एक समय हरि जी ने इंद्र से कहा कि इस सृष्टि में ब्राह्मण मेरा रूप है जो उन की पूजन करता है वह मेरा पूजन करता है जो उन से वैर करता है वह मेरा शत्रु है ॥

जो मनुष्य पीपल और गौ की पूजा करता है मैं उस पर प्रसन्न होता हूं इंद्र ने कहा कि आप सब के उत्पत्ति और पालन करता है फिर आप को इन की पूजन से क्या ! हरि जी ने कहा कि मैं सत्पुरुषों की सदैव रक्षा करता हूं वह मेरा सदा प्रिय हैं, ब्रह्मचारी के भोजन कराने से प्रातः काल स्नान सन्ध्या करने से, मैं प्रसन्न होता हूं, वालि वैश्य भिक्षु को भिक्षा देने अर्थदान और तिलोदक के तर्पण से पितर प्रसन्न होते हैं,धर्म बतलाता है कि देवल नर्तक मित्र के शत्रु विद्या हीन ब्राह्मण को श्राद्ध का भोजन नहीं देना चाहिये अतिथी को निरास करने वाले की संतान नष्ट हो जाती है, अतिथी की आशा भंग करने वाले को ब्रह्म हत्यादि पापों का फल मिलता है। अग्नि को चरणों से प्रहार करने वाले को अपकीर्ति होती है ॥

विश्वा मित्र ने कहा माघ व भाद्रों के कृष्ण पक्ष मघा नक्षत्र में श्राद्ध करने से पित्रों को अक्षय तृप्ति होती है ॥

वृहस्पति जी ने कहा कि निर्धन पौष मास शुक्ल पक्ष रोहिणी नक्षत्र में स्नान कर एक वस्त्र पहिर मैदान में बैठे जो चंद्रमा की किरणों को पान करता है उसे सब यज्ञों का फल मिलता है ॥

पचासिवां अध्याय

—:०:—

शुभ कर्म वर्णन ॥

विभाव मुनि ने कहा कि पूर्णमाशी को चंद्रमा को अर्घ देने से बड़ा शुभ फल मिलता है, अमावस्या को वनस्पति के पत्ते तोड़ने से पाप होता है ॥

लक्ष्मी जी ने कहा कि जो घर मैला कुचैला होता है पात्र टूटे फूटे और स्त्रियों को पीटा जाता है मैं उस घर में निवास नहीं करती ॥

गार्गी ने कहा मांस का न खाना, गौ ब्राह्मण को कष्ट न देना, पुष्करादि तीर्थों में स्नान करना अतीव पुण्य दायक है धौम्य मुनि ने कहा कि टूटे पात्र, टूटी शय्या कुक्कुट और कुत्तों का पालना बुरा है ॥

जमदग्नि ऋषि ने कहा कि अपवित्र हृदय के अश्वमेधादि यज्ञ तथा उलटे लटक कर तप करना व्यर्थ है शुद्ध हृदय से एक मुट्ठी सत्तू देने से दाता ब्रह्म लोक में जाता है ॥

वायु जी बोले कि चौमासे में तिल जल के दान का बड़ा फल है ॥

इन महीनों में ब्राह्मण को प्रसन्न करने से बड़े भारी यज्ञ का फल मिलता है जिस की यज्ञ की अग्नि को शूद्र लाता है और जिस के हव्य को स्त्रियें सुधारती हैं वह पुरुष अधर्म का भागी होता है ॥

लोमश जी ने कहा कि पर स्त्री को इच्छा से वंध्या से भोग और ब्राह्मणों का धन हरना यह बड़े पाप हैं ॥

हर महीने की द्वादशी और पुर्णिमा के दिन चावल और घृत के दान का बड़ा महात्म है प्रातःकाल स्नान करके तिल पात्र ब्राह्मणों को जो देता है वह मधु सहित तिल जल पितरों को जो देता है और रात्रि को जो चौराहे में दीपक जलाता है उस के पित्र अतीव प्रसन्न होते हैं ॥

अरूंधती ने कहा कि अतिथि पूजन से यज्ञों और तपों का फल मिलता है, प्रातःकाल गौओं की पूजन और सींगों को जल का छींटा देने से सब तीर्थों के स्नान का फल होता है ॥

ब्रह्मा जी बोले कि किये हुये कर्मों के फल अवश्य भोगने पड़ते हैं बिना भोग कर्म नहीं छोते । दीपदान, कपिला गौ दान, छत्र और जूते का देना बड़ा विशेष है और सर्वदा विधि पूर्वक अग्नि होत्र करना परम आवश्यक है. दीपदान से स्वर्ग प्राप्ति होती है जल दान से स्वर्ग में वास मिलता है ॥

कार्तिक शुदि पुर्णमाशी को पुष्कर में कपिला गौ के दान से सब दुःखों से छूट मनुष्य ब्रह्मलोकादि में जाते हैं ॥

हे राजन ! ब्रह्महत्या करने वाला, गोवध करने वाला, पर स्त्रीगामी, स्त्री से अपना जीवन निर्वाह करने वाला, श्रद्धा से

हीन मनुष्य के बचाओ के कोई कर्म नहीं वह नरक का भागी है ॥

देवताओं ने राक्षसों से कहा कि किन २ कर्म्मों के करने वालों को तुम दुःख देते हो और किन कर्म्मों से तुम उनका वध करते हो ॥

राक्षसों ने कहा जो मनुष्य स्त्री संभोग कर स्नान नहीं करता है, मांस खाता है, जल में मल मूत्र त्याग करता है, जल में थूकता है इन सब कर्म्म करने वालों को हम खा जाते हैं ॥

हे देव ! जिस घर में नित्य हवन होता है, जो मांस को नहीं छूते और जो मनुष्य गो ब्राह्मणादि की सेवा रूप शुभ कर्म्म करते हैं हम उनके समीप जा नहीं सकते ॥

छिआसीवां अध्याय

—:o:—

धर्म्म कर्म्म वर्णन ॥

भीष्म जी बोले कि रेणुका नाम गज ने दिग्गजों से धर्म्म की शिक्षा पाकर देवताओं से प्रार्थना की कि कार्तिक बदि अष्टमी को जब श्लेषा नक्षत्र होता है तब जो मनुष्य गुड़ और भात का दान करता है और वल्मीक पर जाकर नागों की स्तुति कर पीत वस्त्र पर गजेंद्र नाम पुष्प भेट करता है उस पर दिग्गज (धर्म्म) प्रसन्न होते हैं और बलि दाता को बड़ा शुभ फल मिलता है ॥

महेश्वर बोले कि जो एकानक्त व्रत धारी मनुष्य एक महीना नित्य गौ की सेवा करता है अर्थात् उन को घासादि खिलाता है उस को सब उत्तम कर्म्मों का फल इसी से मिलता है ॥

स्कंध जी बोले कि जो मनुष्य काले बैल के सींगों को मृतका मल कर स्नान करता है उस के सब पाप नष्ट होजाते हैं जो मनुष्य पूर्णमाशी के दिन गूलर की लकड़ी के पात्र में पकान और मधु भर कर दान देता है सब देवता उस पर प्रसन्न होते हैं ॥

भीष्म जी बोले कि हे राजन्! यह धर्म व्यास जी ने जो मुझे कहे थे मैने तुम को सुना दिये इन के पढ़ने और सुनने से भी सामान्य पाप दूर होजाते हैं ॥

युधिष्ठर जी ने प्रश्न किया कि ब्राह्मण, क्षत्रि तथा वैश्य के घर में कौन २ भोजन कर सकता है ॥

भीष्म जी बोले कि ब्राह्मण, क्षत्री और वैश्य के घर का भोजन कर लेना उचित है शूद्र के घर का भोजन नहीं करना चाहिये ॥

नित्य हवन करने वाले, चतुर्मास व्रत धारी वैश्य ब्राह्मण के घर भोजन पा सकते हैं जो ब्राह्मण शूद्र के घर का खाता है वह पृथ्वी की मल को भक्षण करता है, वह ब्राह्मण शूद्र के समान है ॥

हे राजन्! वैद्य, वेश्या पति, कोतवाल, परोहित और ज्योतिष से उपजीविका करने वाले के घर का अन्न नहीं खाना चाहिये, शिल्पी धन ले कर पढ़ाने वाले, धोखा देने व

निन्दा करने वाले ब्राह्मण और गा क विद्रोही, मांस भक्षी और मदिरा पाई के घर का जो खाता है वह राक्षस कुल में जन्म लेता है ॥

युधिष्ठर ने पूछा कि हव्य कव्य के भोजन और दान को लेकर ब्राह्मण किस कर्म को करे कि वह इस के भार को उतार सके ॥

भीष्म जी बोले कि घृत और तिल का दान ले ब्राह्मण गायत्री मंत्र से हवन करे, लवण और मधु का दान ले, सूर्य का उपस्थान प्रात.काल करे, सुवर्ण का दान लेकर ब्राह्मण लोहे का दण्ड धारण कर गुरुश्रुति का पाठ करे, अन्न और आदि का दान ले तीन बार स्नान करे, फल फूल जल आदि ले हज़ार गायत्री जपे, श्राद्ध भोजन करके एक दिन रात व्रत करे, पातकी के घर भोजन करने से ब्राह्मण पाप से नहीं छूटता, शूद्र के साथ बैठ कर खाने से पातक दूर नहीं होता, क्षत्री वैश्य की पंक्तियों में बैठ कर भोजन करने से ब्राह्मण को हवन शांति पाठ कर गायत्री जप करने से शुद्धि मिलती है जो अपनी बरादरी की जूठ को खाता है उस को गोराचन हलदी आदि पवित्र वस्तुओं का स्पर्श करना चाहिये इसी से वह पवित्र होजाता है।

सतासीवां अध्याय

—:o:—

दान, यज्ञ और तप के विषय में ॥

युधिष्ठिर न प्रश्न किया कि दान और तप में श्रेष्ठ क्या है? भीष्म जी ने कहा कि राजा लोगों ने जिस दान से उत्तम लोगों को पाया अत्रि ऋषि ने तप के प्रभाव से उन्हीं लोकों को पाया, शिवि प्रतर्दन प्रभृति राजा दान से स्वर्ग को गये, जमदग्नि परशुराम और वशिष्ठ प्रभृति यज्ञों से स्वर्ग में पधारे परन्तु वह सब स्वर्ग के सुख को भोग फिर पृथ्वी पर जन्मधारी हुये। परन्तु श्रद्धा और भक्ति से सामर्थ्यानुसार दान करने वाले गृहस्थी तब तक स्वर्ग में रहेंगे जब तक यह पृथ्वी है इस लिये हे युधिष्ठिर! दान सब से अर्थात् यज्ञ और तप से विशेष है॥

युधिष्ठिर जी ने प्रार्थना की धर्म अर्थ से युक्त सुखदायक कथा का अब वर्णन कीजिये॥

भीष्म जी बोले कि जब महात्मा कृष्ण जी ने १२ वर्ष का तप किया तो व्यास, देवल, कश्यप प्रभृति ऋषि सिद्धों सहित उनके पास आये, कृष्णजी ने सब का सत्कार कर सब को यथा योग्य आसनों पर बिठाया, उस समय तेज रूप अग्नि कृष्णजी के मुख से निकली, उस अग्नि ने हिंसक पशुओं सहित पर्वत को भस्म कर दिया, वह पर्वत विष्णुजी की शरण में गया और विष्णु की कृपा दृष्टि से पूर्ववत हो गया यह आश्चर्य घटना देख सब ऋषि चकित हो चिन्तातुर होगये॥

श्रीकृष्ण जी ने पूछा कि आप चकित क्यों होगये हो!

ऋषियों ने कहा कि हे प्रभो! आपके इस तेज को देख हम चकित हुये हैं आप इस के कारण को वर्णन कीजिये॥

कृष्णजी ने कहा कि मैंने पुत्र की कामना से तप किया

तप के अनंतर मेरा आत्मा अग्नि रूप हो शिवजी के दर्शनों को गया, तब शिवजी ने मेरे अग्नि रूप आत्मा को पुत्र भाव से नियत कर यह कहा कि आधे तेज से तुम्हारा पुत्र होगा तब वही अग्नि मेरे पास आकर शांत हुई इस से आप को चकित नहीं होना चाहिये, आपने जो आश्चर्य देखा या सुना है उसका वर्णन करें ॥

हे राजन्! तब सब ने कृष्णजी की स्तुति की और नारदजी से कहा कि आप ही श्रीकृष्णजी के इस प्रश्न का उत्तर दें ॥

अठासीवां अध्याय

—:o:—

शिवजी की अपूर्व महिमा ॥

नारदजी बोले कि एक बार शिवजी ने हिमालय पर्वत पर तप किया, उस समय वह पर्वत अपूर्व शोभाओं से संयुक्त था, उस समय तपस्वी ऋषि सिद्ध और इन्द्रादि सब देव उस पर्वत की अपूर्व शोभा को देखने के लिये आये इन्हों ने उग्र तपधारी तेज रूप शिवजी को, देख प्रणाम की और यथा योग्य बैठ गये, वहां पर सुवर्ण कलश उठाये पार्वतीजी भी आईं ॥

इन्हों ने मुस्करा कर शिवजी के दोनों नेत्रों को अपने हाथों से बंद कर दिया, तब सब जीव अंधों के समान होगये तब शिवजी के ललाट से एक बड़ी प्रकाशित ज्वाला निकली

शिव से महा को प्रकाश हुआ उस तेज से आकाश पूरित हो गया और क्षण भर में पर्वत भस्म हो गया तब पार्वती हाथ जोड़ शिवजी के सन्मुख खड़ी हो गई ॥

शिवजी ने जूहा प्रसन्न हो पार्वती की ओर देखा तो वह हिमालय पर्वत फिर ज्यों का त्यों हरा भरा होगया तब पार्वती ने प्रार्थना की कि आप की इस अपूर्व महिमा को देख मैं संदेह में पड़ गई हूं आप मेरे संदेह को दूर कीजिये ॥

शिवजी ने कहा कि तुम ने अज्ञानता से मेरे नेत्र बंद किये इसी से ललाट से यह प्रकाश उत्पन्न हुआ और अब तेरी प्रार्थना से मैं ने उसे अपने में लय कर लिया है ॥

पार्वती ने कहा कि अब आप अपने रूप बदलने का कारण भी वर्णन करें ॥

इस प्रकार शिव और श्रीकृष्ण (विष्णु) की एकयता वर्णन कर अब ब्रह्मा की एक्यता को कहिते हैं ॥

भगवान बोले पूर्व काल में मैं ने सब रत्नों के अवयवों से तिलोतमा नाम स्त्री को उत्पन्न किया ॥

उस के सुन्दर स्वरूप को देखने के लिये मैंने चार मुख धारण किये पूर्व का मेरा मुख इन्द्र रूप है उत्तरी मुख से हे राजन्! मैं तेरे साथ कृष्ण नाम, पश्चिमीय मुख से चित्तरोचक लोगों के लिये सुख उत्पन्न करता हूं और दक्षिणी मुख से सब का संहार करता हूं, संसार की वृद्धि के लिये मैं जटलधारी हूं, देवताओं के कार्य सिद्धि के लिये धनुषधारी हूं, मैं दासों के अपराधों को क्षमा करता हूं इसी लिये मैं नीलकंठ हूं,

श्मशान के तुल्य पवित्र स्थान पृथ्वी पर कोई नहीं इस लिये मैं वहीं रहता हूं (यहां श्मशान काशी पुरी का नाम है) ॥

फिर पार्वती जी ने प्रश्न किया कि आप धर्म के लक्षण कहें धर्म से अनभिज्ञ पुरुषों से कैसे धर्म हो सकता है यह भी वर्णन करें॥

शिवजी बोले, अहिंसा, सत्यभाषण, सब पर दया, जितेन्द्र होना और यथाशक्य दान देना यह गृहस्थी के धर्म हैं। पर स्त्री गमन, मद्य भक्षण और चोरी यह सर्वदा त्याज्य हैं ॥

पार्वती ने कहा कि वर्णाश्रम धर्म का भी वर्णन करें। शिवजी बोले ब्राह्मण भूमिदेव हैं इन का धर्म उपवास व्रत करना ब्रह्मचर्य व्रत और यज्ञोपवीत का धारण करना है और वेद का पढ़ना पढ़ाना इन का मुख कर्म है, ब्रह्मचारी को भिक्षा करनी चाहिये। वेद पढ़ने वाले, तप करने वाले को ब्रह्मचारि रहना उचित है, ब्राह्मण को शूद्र के घर का अन्न खाना नहीं चाहिये

गृहस्थों के लिये अतिथि पूजा, अहिंसा, एकानक्त भोजन, हवन करना, बलि वैश्य करना आदि धर्म हैं ॥

क्षत्री के लिये प्रजा पालन, जितेन्द्री होना, वेद पाठ, अग्निहोत्र, दान और यज्ञादि करने धर्म हैं, वैश्य का धर्म गौ आदि का पालना, खेती और व्यापार करना है, अग्नि होत्र, वेदपाठ, दान और यज्ञ भी इन के कर्तव्य हैं और त्रिवर्णों की सेवा शूद्र का धर्म है और अतिथि सेवा इस का कर्तव्य है ॥

पार्वती ने कहा कि अब आप सर्व व्यापी धर्म का

वर्णन करें शिवजी ने कहा कि वेदोक्त, स्मृत्योक्त और तीसरे श्रेष्ठ लोगों का आचरण यह तीनों धर्म सनातन सर्व व्यापी हैं॥

मुक्ति के लिये निवृत्ति मार्ग है सब जीवों पर दया करना, संसार से विरक्त हो याग और ध्यान से अपने आत्मा में ब्रह्म को जानना, निवृत्त मार्ग है इन पर चलना सन्यासीयों का धर्म है, कुटी चक्र बहूदक हंस परमहंस भेद से सन्यासी चार प्रकार के हैं इन में से परमहंस श्रेष्ठ हैं॥

पार्वतीजी ने कहा कि अब आप ऋषियों के धर्म का वर्णन करें शिवजी बोले कि ब्रह्म वंश से संबंध रखने वाले केनम ऋषि हैं, बालखिल्य ऋषि उंच्छी वृत्ति से जीवका करते हैं और दुःख साध्य योग में रत होते हैं। ऋषि तप से पापों को भस्म कर के सब दिशाओं को प्रकाशित करते हैं। चक्रचट ऋषि चन्द्रमा की किरणों से निर्वाह करते हैं उनका कर्तव्य नित्य अग्नि होत्र पितरों का पूजन और यज्ञों का करना है। सोमप और उष्मप भी ऋषि हैं जो अपनी स्त्रियों सहित वनों में रह कर परमात्मा के ध्यान में लगे रहते हैं, काम क्रोधादिक जीतना इन सब का कर्तव्य है, उपभोगों में अप्रीति, गोरसों का भोजन और जितेन्द्रिय होना आदि ह इन के कर्तव्य हैं जो गृहस्थी अतिथि को भोजन कराकर आप भोजन करता है वह मुनि रूप है॥

उनानवेंवां अध्याय

—:०:—

वान प्रस्थी धर्म वर्णन ॥

उमा ने पूछा कि हे महादेव! अब आप वानप्रस्थियों के धर्म का वर्णन करें ॥

शिवजी बोले वान प्रस्थियों को तीनों कालों में स्नान, पितरों का पूजन, अग्नि होत्र और इष्टि हवनादि करने चाहिये, फल मूल का भोजन कर काम क्रोध से रहित हो योगाभ्यास करना इन का कर्तव्य है, शीतोष्ण सहिन का अभ्यास वल्कल और मृग चर्म्म का ओढ़ना वन में रहना इन का कर्म है, वान प्रस्थी स्त्री के साथ रह सकता है परन्तु इन्हें गृहस्थ धर्म से सदैव मुख मोड़े रखना चाहिये ॥

पार्वती ने कहा कि ज्ञान गोष्ठियों में मुनियों के धर्म को वर्णन करें। शिवजी बोले तीनों समयों में मंत्रों से स्नान, गुरू के उपदेश का सेवन, हवन और समाधी में नियत होना और वनवासियों के कर्तव्यों का पालन करना इन का धर्म है इन कर्मों से वह ब्रह्म लोक पाते हैं ॥

पार्वती बोली कि किन कर्मों से मनुष्य वनवासी होते हैं यह भी वर्णन करें ॥

महेश्वर बोले कि उपवास व्रतों से जितेन्द्रिय रहिने, हिंसा न करने और सत्य वादी होने से सिद्ध लोग वनवासी होते हैं जो वान प्रस्थी, वायु, जल, फल और फूल से अपना निर्वाह करता

है शीतोष्ण को सह कर पंचगाने तपता है वह परमगति को पाता है और फिर राज्य पाता है ॥

जो मनुष्य केवल अपने शरीर ही से निर्वाह करता हुआ बारह वर्ष नित्य हवन करता है वह अग्नि लोक में जाता है हे देवी ! जो ब्राह्मण विधि पूर्वक दीक्षित होकर आत्मा को आत्मा में धारण कर धर्म पालन करता है वह देवताओं के साथ सुख से स्वर्ग में विहार करता है, सतोगुण निष्ठ ब्रह्म ज्ञान रत मनुष्य इन्द्र लोक का आनंद भोगता है ॥

नब्बेवां अध्याय

—०—

चतुर्वर्णों का उत्तम अधम वर्णों में जन्म ॥

उमा ने प्रश्न किया हे भगवन ! शूद्र योनी में वैश्य, वैश्य योनि में क्षत्री, क्षत्री योनी में ब्राह्मण किस कर्म से जन्म धारण करते हैं और यह तीनों वर्ण ब्राह्मण वर्ण में किस कर्म से जन्म धारण करते हैं ॥

महेश्वर बोले ब्राह्मण बनना बड़ा कठिन है, चारों वर्ण जन्म से ब्राह्मणादि होवे हैं यह वर्ण बुरे कर्मों के करने से क्रमशः अधः पतित होते हैं और शुभ कर्म करने से क्रमशः वृद्धि को पाते हैं अर्थात ब्राह्मण जिस वर्ण के जो कर्म करता है उसी वर्ण में जन्म धारण करता है जो ब्राह्मण शूद्र के अन्न को खाता है वह यज्ञ हवनादि के करने पर भी शूद्र बन जाता है

महा पापी, ब्रह्म हत्यारा, व्रत भंग, पापी, लोभी, छली, शठ, नीच संगी, शराब बेचने वाला, गुरु स्त्री गामी, गुरु विद्रोही, ब्रह्म यानी से गिर जाता है प्रत्येक स्त्री, जिस ० वर्ण के कर्मों को करता है उसी २ वर्ण में जन्म पाता है ॥

हे देवी ! जिस शूद्र में आत्मज्ञान और शुभ कर्म नियत हैं वह शूद्र भी ब्राह्मण से उत्तम जानना चाहिये । जिस में निर्मल गुण नियत हैं वही ब्राह्मण है ॥

जो ब्राह्मण सन्मार्ग गामी हवन, वेदपाठ करने वाला है वह ब्रह्मभाव को पाता है, ब्राह्मण को अन्य स्त्री के साथ भोग से कुदान लेने से और अन्य संपूर्ण कुकर्मों से बचे रहना चाहिये ॥

इक्यानवां अध्याय

—:o:—

मनुष्य के स्वर्ग प्राप्ति के विषय में ॥

उमा बोली हे देव ! इस संसार म कैसे आचार व्यवहार से मनुष्य स्वर्ग को जाता है ?

महेश्वर बोले जो पुरुष सत्य धर्म में प्रवृत, सत रूप धर्म से प्राप्त हुये अन्न को खाता है वह स्वर्ग को पाता है । जो मनुष्य मन वाणी और कर्म द्वारा किसी प्रकार की हिंसा नहीं करता वह कर्म बंधन से छूट जाता है, विषयों से रहित, दयावान, जितेन्द्रिय, शुद्धाचारी, कर्म बंधनों से छूट स्वर्ग गामी होवे

हैं। चोरी न करने वाले, पर स्त्री को माता, बहिन और पुत्री के समान जानने वाले, संतोषी, स्त्री व्रती, सत्य वादी पुरुष स्वर्ग को जाते हैं, जो मनुष्य न्याय से युक्त देवता, ब्राह्मणों और गौओं की पालना करते हैं वह स्वर्ग गामी होते हैं ॥

उमा बोली हे देव ! जिन कर्मों से मनुष्य की आयु घटती और बढ़ती है वह भी वर्णन कीजिये ॥

शिवजी बोले कि विषयासक्त हो जो मनुष्य कीट पतंगादिक तक को भी मारता है वह बड़ा निर्दयी है वह भी शीघ्र ही मर कर नरक में जाता है, हिंसा करने वाला नरक को जाता है। हिंसा न करने वाला आत्म सदृश सब को जानने वाला स्वर्ग को जाता है और आयू की वृद्धि को पाता है ॥

उमा बोली शुद्धाचारी किस दान और कौन २ से कर्म्म से स्वर्ग को जाते हैं ॥

महेश्वर जी बोले ब्राह्मणों के सत्कार, दीन, दुःखियों, कंगालों को अन्न जल देने से, सराय कूप बावली आदि के बनाने, से याचकों की इच्छाओं को भूमि रत्न आदि तक देकर पूर्ण करने से मनुष्य देव लोक के सुखों को भोगता है। धन के होने पर भी जो कृपण उक्त कार्य्य नहीं करते वह नरक भागी हैं। वरंच नरक भोग यदि फिर कभी वह मनुष्य देह पाते हैं तो कंगाल, रोगी और परम दुःखी रहते हैं ॥

जो मनुष्य धन के मद से पूज्य की यथायोग्य सेवा पूजा नहीं करते, गुरु को प्रणाम तक नहीं करते हैं वह सब नरक

भोग कुत्सित वंश में जन्म धारण करते हैं, जो मनुष्य मधुर भाषी आये हुये की आवभगत करते हैं नम्रता से सब का मान करते हैं वह स्वर्ग भोग कर उत्तम धनी वंश में जन्म धारण करते हैं ॥

जो मनुष्य माता पिता की आज्ञा पालन और उन की सेवा करते हैं किसी के चित को दुखाते नही वह स्वर्ग में नाना प्रकार के सुखों को भोग उत्तम वंश में जन्म धारण करते हैं और परम सुख पाते हैं ॥

उमा बोली हे देव ! मनुष्य किस कर्म से ज्ञानी और किस से निर्बुद्धि होते हैं ? महेश्वर बोले हे देवि ! वेद शास्त्र वेताओं का मान करने वाले, धर्मज्ञ वृद्धों की सेवा पूजन करने वाले मर कर ज्ञानी बनते हैं और दुष्कर्मी रोगों से पीड़ित होते हैं गुरू की स्त्री पर बुरी कामना करने वाले नपुंसक होते हैं ॥

उमा बोली कि कई यज्ञ हवन के करता और कई विपरीत कर्म चारी मनुष्य होते हैं उन की क्या दशा होती है शिवजी बोले कि शास्त्र आज्ञा पर चलने वाले ज्ञानी होते हैं और शास्त्र आज्ञाओं से विरूद्धाचारी नीच वंश मे उत्पन्न हो अज्ञानी बनते हैं ॥

महेश्वर जी बोले हे हिमालय की पुत्री ! तुने ब्रह्मा जी की पति व्रता स्त्री सावित्री, इन्द्र की पत्नी शुची तथा देवताओं की स्त्रियों का भली भांति पूजन किया है इस लिये मैं तुझ से स्त्री धर्म सुनना चाहता हुं ॥

उमा बोली हे देवेश्वर ! यह जो नदियें नित्य आप के

स्नानार्थ यहां आती हैं मैं उन से सम्मति लेकर स्त्री धर्म का वर्णन करूंगी क्योंकि स्त्रियों की मति स्त्रियें होती हैं ॥

हे राजन् ! महेश्वर से आज्ञा पा उमा देवी ने श्री गंगा से जाकर सम्मति की तब मुसकराकर श्री गंगा जी ने कहा कि हे देवी ! तुम स्वयं सब कुछ जानती हो केवल हमारा मान रखने के लिये हम से पूछती हो इस लिये आप ही स्त्री धर्म कहने के योग्य हो ॥

उमा बोली जो पति व्रता स्त्री धर्म को जानने वाली पति को सदैव देवता के समान देखती है, पति की सेवा और आज्ञा पालन में तत्पर रहती है वही स्त्री उत्तम कहाती है, जो स्त्री अन्य में चित्त न लगा कर पति के साथ धर्माचरण करती है और पति के कठोर वचनों को सुन कर भी प्रसन्न चित्त रहती है वह पति व्रता है। जो पुल्लिंग नाम वाले चंद्र, सूर्य्य और वृक्षों को भी नहीं देखती है वह धर्म चारणी है ॥

स्त्री को अपने रोगी, दुःखी निर्धनी पति की भी सेवा प्रीति से करनी चाहिये, स्त्री को पति प्राणों से भी अधिक प्रिय समझना चाहिये, जो स्त्री भोग ऐश्वर्य्य से पति सेवा को अधिक मानती है वह धर्म भगनी है, जो स्त्री प्रातःकाल उठ घर के काम काज कर गृह को शुद्ध रख बाल बच्चों की पालना करती है, हवन में साथ बैठती है और पति की आज्ञा से अतिथि को पूज सब से पीछे बचे हुये अन्न को पाती है वह धर्म से युक्त होती है, सास सुसर और माता, पिता की आज्ञा में रहने वाली लंगड़े, लूले, अंधे, अंगहीन, दीन दुखियों को अन्न देने वाली

पति को अपनी गति, पति को देवता पति ही को ईश्वर मानती हैं वह पतिव्रता है, स्त्री को पति की आज्ञा (चाहे वह धर्म युक्त भी न हो) पालन करनी उचित है ॥

भीष्म जी बोले यह स्त्री धर्म्म सुन महेश्वर प्रसन्न हुये और गंधर्व नदियें आदि महेश्वर को प्रणाम कर सब अपने २ स्थान को चली गई ॥

बानवेका अध्याय

—:०:—

वासु देव महात्म्य ॥

ऋषि बोले हे महादेव ! अब हम वासुदेव जी का महात्म्य सुना चाहते हैं कृपा पूर्वक वह भी वर्णन करें ॥

महेश्वर बोले कि वासुदेव ब्रह्मादिक देवताओं का उत्पत्ति कर्ता, सब का अन्तर्यामी, देवताओं का देव, इन्द्रों का स्वामी महेश्वर है तीनों लोकों में उस से उत्तम कोई नहीं है, विष्णु देवकार्य्य के लिये मनुष्य शरीर में प्रकट होंगे, ब्रह्मा; रुद्र और सब देवता उस के शरीर में आश्रित हैं ॥

वह शंख चक्र धारी, गरुड़ वाहन, जितेन्द्रिय हैं, वह गो ब्राह्मण का प्रति पालक और भगतों का रखवाला है वह वासुदेव गोविन्द जिन की महिमा का पार नहीं मनु की वंश में प्रकट होंगे और जरासिंध आदि अनेक राक्षसों का वध करेंगे

हे ऋषियो ! तुम उन के दर्शन कर उन की ब्रह्मा के तुल्य पूजन करो उन के दर्शन को आप मेरे और ब्रह्मा जी के दर्शन जानो, वह धर्मोपदेष्टा सब के पूज्य, दीन प्रति पालक, शरणागत वत्सल होंगे, वह चित में ध्यान करने से दर्शन देंगे, हे ऋषियो ! मैं भी उस जगत पति सब लोकों के पितामह महावराह रूप को नमस्कार करता हूं ॥

शेष नाग जी बलदेव नाम से विख्यात उन के भाई होंगे उन की ध्वजा में सुवर्ण मय ताल का वृक्ष होगा । वह अविनाशी भगवान हरि अनंत नामों से प्रसिद्ध होंगे । हे ऋषि लोगो ! तुमने उन का विधि पूर्वक पूजन करना ॥

नारदजी बोले इस के पीछे सब ऋषि अपने २ स्थानों को चले गये । तब भीष्म जी बोले दश महीने के अनंतर रुक्मिणी जी से प्रतापी शूर पुत्र उत्पन्न हुआ, सर्व शक्ति सम्पन्न श्री कृष्णजी महाराज युधिष्ठर से मिले, युधिष्ठर ने भाईयों सहित जगत्स्रष्टा नारायण श्री कृष्णजी का विधि पूर्वक आदर सत्कार किया, श्रीकृष्णजी ने कहा कि तुम शत्रुओं का संहार कर सृष्टि का राज्य पाओगे, उसी महाराज की कृपा से युधिष्ठर प्रभृति पाण्डवों ने प्रलय काल की अग्नि के समान दुर्योधन की सब सेना का मार दिया है ॥

हे राजान् ! यह सब मनुष्य युद्ध भूमि में काल के हाथ से मारे गये, हम भी काल ही से मारे गये हैं, काल ही परमेश्वर है, हे युधिष्ठर ! इस लिये तुम को शोच करनी उचित नहीं । हे राजन् ! मैंने नारदादि ऋषियों से वर्णित कृष्ण

हिवा सांख्य का सार कहा है और शिव पार्वती के संवाद का भी सार कहा है श्रीकृष्ण जी ने जो उपदेश आप को किया है उस पर आप को आचरण करना चाहिये। इस से आप को स्वर्ग प्राप्ति होगी। हे राजन्! आप बहु भागी हैं जो श्रीकृष्ण जी आप के मित्र हैं॥

यह सब वृत्तांत सुन युधिष्ठर जी बड़े प्रसन्न हुये और श्री कृष्णजी को प्रेम और भक्ति से इन्हों ने प्रणाम की॥

तिरानवेका अध्याय

—:०:—

विष्णु महिमा॥

वैशंपायन ने राजा जनमेजय से कहा कि राजा युधिष्ठर ने फिर पूछा किया हे भीष्म जी! सब धर्मों में आप कौन से धर्म को उत्तम मानते हैं और कौन सा मनुष्य जन्म मरण के बंधन से छूट जाता है॥

भीष्म जी बोले मनुष्य प्रति दिन अविनाशी, सर्व व्यापक, सर्व निवासी परमात्मा की भक्ति से पूजन, स्तुति, नमस्कार और ध्यान करने से जन्म मरण के बंधन से छूट जाता है वह अंत से रहित सर्व व्यापी सब के स्वामी ब्रह्मादिकों का ईश्वर है स्वयं ब्रह्म सब जीवों की उत्पत्ति का हेतु है, वही सब का उत्पत्ति, पालन और संहार कर्ता है हे युधिष्ठर! उस अविनाशी ब्रह्म के हजार नाम हैं उन्हीं नामों से ऋषि लोग उस के गुण

को वर्णन कर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को पाते हैं उसके नाम 'विश्व' जगत को उत्पन्न कर उस में प्रवेश करने वाला 'विष्णु' देश काल और वस्तु के परिछेद से रहित 'वषट्कार' 'यज्ञरूप' 'भूत भव्य' 'भवत्प्रभुः' भूत भविष और वर्तमान के ऐश्वर्य का स्वामी आदि आदि हैं ॥

जो मनुष्य कृष्ण भगवान को नमस्कार करते हैं उन को कहीं भी भय नहीं होता जो विष्णु जी के सहस्र नाम को श्रद्धा से पढ़ेगा सुनेगा उसे इस लोक और परलोक में किसी प्रकार का भय नहीं होगा इस सहस्र नाम के पाठ से मनुष्य की संपूर्ण कामना पूर्ण होती हैं और अंत में वह मुक्ति का भागी होता है, हे भीष्म जी ! सहस्र नाम का सार एक श्लोक में लिखा है इस के पाठ से भी वही फल होता है जो सहस्र नाम के पाठ से होता है अनन्त नमस्कार सहस्र मूर्ति को नमस्कार, सहस्र पाद भुजा और शिरधारी को हज़ार नाम वाले सनातन पुरुष को नमस्कार और कोटि युगधारी को मेरी नमस्कार हो ॥

शतानीक ने कहा कि हे भगवन ! यदि आप मुझे योग्य समझते हैं तो मनुष्यों के दुःख आदि के फल को नाश करने का उपाय कहें ॥

शौनक बोले कि हे महाराज ! यही प्रश्न युधिष्ठिर ने भीष्म पितामह से पूछा था तो नरायण की बड़ी स्तुति कर के उन्हों ने उत्तर दिया था कि बहुत से मंत्रों और व्रतों से क्या प्रयोजन

है ओं नमो नारायणाय यह मंत्र ही सब मनोरथों के सिद्ध करने वाला है ॥

हे राजन्! यही प्रश्न फिर जनमेजय ने वैशंपायन से किया तो उन्हों ने व्यसादि को नमस्कार कर भीष्मजी कथित श्री कृष्ण जी का प्राचीन इतिहास गजेन्द्र मोक्ष वर्णन किया जिस का सार यह है कि बड़े २ उत्तम फल फूलों से शोभित सौ योजन लंबा १० योजन चौड़ा पांच योजन गहरा एक सरोवर था उस में एक ग्रह रहता था एक दिन उस सरोवर में पिआस से व्याकुल गजेन्द्र अपनी हथनियों सहित वहां जल पीने को आया ज्यूंही वह सरोवर में उतरा तो बड़े पराक्रमी ग्रह के पंजे में पकड़ा गया वह ग्रह गज को भीतर खेंचता था और गज तट की ओर आने का यत्न करता था अन्त में गज हार गया तब उस ने हरि की शरण ली और अपने सूंड से एक उत्तम सुवर्ण के रंग का फूल तोड़ कृष्ण की स्तुति करने लगा वह स्तुति गजेन्द्र मोक्ष नाम से सुप्रसिद्ध है गजेन्द्र बोला मूल प्रकृति किसी से विजय न होने वाले महात्मा रक्षा के स्थान सब की उत्पत्ति के बीज आदि २ नामों वाले भगवान् को मेरी नमस्कार हो ॥

इस स्तुति से प्रसन्न हो गुरुड़ आरूढ़ भगवान् ने उस के बंधनों को काटा और वह गज दिव्य शरीर पाकर परम पद को प्राप्त हुआ। हे राजन्! युधिष्ठर यह सुन कर बड़े प्रसन्न हुये, फिर युधिष्ठर ने प्रश्न किया कि पुरस्थान प्रवेश के समय, देव कर्म और श्राद्धादि में भयध्वंसक, शत्रु नाशक जो जप है वह भी आप कहें ॥

भीष्मजी बोले कि परम सुख दाता सावित्री मन्त्र जपने से निम्नलिखित स्तुति करने से मनुष्य पापों से छूट जाता है इस के सुनने से अभीष्ट पा कर परलोक में भी सुख पाता है ॥

अजैक पाद, अहिर्बुध्न, अपराजित पिनाकी ऋतु पितृरूप आदि २ नामों वाले को नमस्कार हो, धाता, अर्य्यमा, त्वष्टा, पिनाकी आदि २ नामो वाले को नमस्कार हो इत्यादि इस गायत्री मन्त्र को जो जपता है उस को सब सिद्धियें प्राप्त होती हैं। शत्रुओं पर विजय मिलती है यही जप वृद्ध काश्यप, गौतम भृगु आदि ने किया, हे युधिष्ठर ! यह वेद रूप सावित्री तेरे सन्मुख वर्णन की अब और क्या पुछना चाहते हो ॥

चौरानवे का अध्याय

—:०:—

ब्राह्मण पूज्य हैं ॥

युधिष्ठर ने प्रश्न किया कि पुजन और नमस्कार के योग्य कौन है, किस के साथ कैसा वर्ताव करना चाहिये और कौनसा आचार नष्ट नहीं होता ॥

भीष्म जी बोले ब्राह्मण देवताओं से भी पूज्य हैं इन की अप्रतिष्ठा करने वाला नष्ट होजाता है, धन को त्याग भजन और धर्म में लगे हुये ब्राह्मण धर्म के सेतु हैं, ब्राह्मणों का धन विद्या और तप है ब्राह्मण धर्मों के उत्पत्ति स्थान हैं, संशय से रहित, सगुण, निर्गुण ब्रह्म के ज्ञाता, मोक्ष को पाने वाले हैं यह वेद पाठ

जप और तप से अपने शरीरों को सुखाते हैं वह क्रोध युक्त हो देवता को अदेवता और अदेवता को देवता बना सकते हैं, ऐसे ब्राह्मणों का किसी को अपमान नहीं करना चाहिये. ब्राह्मण अज्ञानी भी पूजने के योग्य हैं वह अग्नि रूप हैं अग्नि श्मशान में भी दुखित होती ॥

युधिष्ठर ने पूछा ब्राह्मण के किस कर्म को देख कर पूजते हैं॥

भीष्म जी बोले कि पूर्वकाल में माहिष्मती पुरी में सहस्त्रबाहू बड़ा तेजस्वी राजा हुआ उस ने दत्तात्रेय जी को अपना सब धन भेट किया तब दत्तात्रेय जी ने काम काज सेवा और संग्राम के लिये उस हजार भुजा घर में दो भुजा रखने वाला होने का वर दिया, ऋषि ने कहा ऐसा ही हो यह वर पा राजा को अभिमान हुआ कि मेरे सदृश अब कोई राजा नहीं रहा तब आकाश वाणी हुई कि ब्राह्मण तुम से उत्तम हैं राजा ने कहा कि मैं प्रसन्न हो जीव धारियों को जीव दान और क्रोध से सब का नाश कर सकता हूं मेरे समान ब्राह्मण नहीं हो सकते, ब्राह्मण लोग क्षत्रियों के आश्रित हैं, क्षत्रि उन के आश्रित नहीं, मैं बल से ब्राह्मणों को विजय करूंगा, ब्राह्मण मुझ से स्रेष्ठ नहीं ॥

तब वायु देव जीने कहा कि हे राजन्! तुम इस अभिमान को त्याग दो अन्यथा वह तुम को अवश्य दंड देंगे और तुम को राज्य से भी गिरा देंगे, राजा ने कहा कि तुम कौन हो, वायु ने कहा कि मैं देवताओं का दूत वायु हूं, राजा ने कहा कि तुम इन के गुणों का वर्णन करो ॥

वायु ने कहा हे सहस्रबाहो ! यह पृथ्वी कश्यप से दान की गई इसी से इस का नाम कश्यपी है ॥

अंगिराऋषि की कुल में होने वाले उतथ्य ऋषि की स्त्री चन्द्रमा की पुत्री को वरुण ने हर लिया, नारदजी ने उतथ्य को वरुण राजा के इस बुरे कर्म की सूचना दी तो उतथ्य ने कहा कि आप उसे जाकर कह दो कि मेरी स्त्री को तेरे साथ भेज दे, नारद जी ने वरुण राजा से जाकर कहा परन्तु उसने न माना, नारद को अकेला आते देख उतथ्य ने वरुण को सुखा दिया तब दुःखित हो राजा वरुण उतथ्य की स्त्री को लेकर उतथ्य ऋषि की शरण में आया ॥

हे सहस्रबाहो ! अब विचारो कि ब्राह्मण तुम से श्रेष्ठ हैं या नहीं ॥

वायु ने कहा कि हे राजन् ! जब देवता दानवों से पराजित हो पृथ्वी पर घूम रहे थे तो उनको अगस्त्य जी मिले अगस्त्य जी ने इन से क्षेम कुशल पूछी, देवताओं ने दानवों से पराजित हो पृथ्वी पर घूमने का ब्योरा कह सुनाया तब अगस्त्य जी के कोप से एक ज्वाला उठी जिसने बहुत से दानवों का नाश कर दिया और जो दानव बच रहे वह इन के भय से दक्षिण दिशा को भाग गये । देवताओं ने अपने २ लोकों को पाया, तब देवताओं ने ऋषियों से कहा कि आप पृथ्वी पर के दानवों का भी संहार करें, अगस्त्यजी ने कहा कि इनके नाश करने से मेरे तप का नाश होगा इस लिये मैं इनको मार नहीं सकता ॥

वायु ने कहा हे निर्लज्ज ! यदि कोई क्षत्री ऐसा हुआ है तो तुम कहो तब तो सहस्र बाहु चुप होगया ॥

भीष्म जी बोले फिर वायु देवता ने सहस्र बाहु को देवताओं की विजय सखांलतु नाम दश हजार दैत्यों को भस्म करने का इतिहास वशिष्ठ जी का वर्णन किया और कहा कि हे निर्लज ! अब बताओ वशिष्ठ जैसा कोई क्षत्री भी हुआ है ॥

पचानवें का अध्याय

—:०:—

अत्रि और च्यवन ऋषि के कर्म्म वर्णन ॥

वायु बोला कि जब असुरों ने चंद्र और सूर्य्य को अपने बाणों से ढक दिया तो देवताओं ने दुःखी हो अत्रि ऋषि की शरण में आ प्रार्थना की कि चंद्र सूर्य्य के निस्तेज से हम दुःखित हुये हैं आप हमारी रक्षा करें तब अत्रि जी ने अपने तेज से अंधकार को दूर किया और देवताओं ने उन की सहायता से सुरों का संहार किया ॥

च्यवन ऋषि ने इन्द्र को कहा कि तुम अश्विनी कुमारों का यज्ञ में भाग नियत करो और इनको अपने साथ सोमपा बनाओ, इंद्र ने कहा कि यह दोनों हमारे साथ बैठने के योग्य नहीं यह हम नहीं कर सकते आप और जो कुच्छ कहें मैं करने को तैयार हूं, च्यवन ऋषि ने कहा कि यह तुम को करना होगा इंद्र ने फिर भी इनकार किया ॥

तब च्यवन ऋषि ने हवन करना आरम्भ किया जिस से इन्द्र क्रोध में आ पर्वत और वज्र उठा च्यवन पर दौड़ा, च्यवन जी ने जल के छींटे से उस स्तब्ध कर दिया और एक आहुती अग्नि में दे मद नाम असुर को उत्पन्न किया जिस ने अपने विकराल मुख में इन्द्र सहित सब देवताओं को डाल लिया तब सब देवताओं ने इंद्र को कहा कि आप च्यवन जी के कथन को स्वीकार करें ॥

हे राजन्! तब इंद्र ने अश्विनी कुमारों का यज्ञ भाग स्वीकार किया तब च्यवन जी ने हवन को समाप्त किया, वायु ने कहा हे सहस्रबाहु! क्या तुम इन की बराबरी कर सकते हो ॥

भीष्म बोले कि फिर वायु देवता ने ब्राह्मणों के कर्मों के संहार का वर्णन किया जिन को सुन कर सहस्र बाहु बोला कि हे वायु देव! मैं ने निस्संदेह दत्तात्रेय जी की कृपा से यश प्राक्रम और शुभ कीर्ति प्राप्त की, ब्राह्मण निस्संदेह पूज्य हैं मैं सदैव ब्राह्मणों की पूजा सेवा करूंगा आप की कृपा से मेरा अज्ञान दूर हुआ ॥

वायु ने कहा कि हे सहस्र बाहु! तुम सदैव क्षत्रिय धर्म से ब्राह्मणों और अपनी इंद्रियों को पोषण करो और यह भी याद रक्खो कि भृगु वंशी ब्राह्मणों से तुम को बड़ा कठिन भय होने वाला है और वह भय समय पर अवश्य होगा ॥

छियानवे का अध्याय

—:o:—

कृष्ण महिमा ॥

युधिष्ठर ने पूछा महाराज ब्राह्मणों की पूजा के फल का वर्णन करें ॥

भीष्म जी ने कहा ब्राह्मणों की पूजा के फल को श्री कृष्ण जी वर्णन करेंगे क्योंकि उन्हों ने फल को पाया है सर्व सृष्टि के कर्ता हैं सत्युग में यह सम्पूर्ण धर्म के रूप थे त्रेता ज्ञान रूप, द्वापर में बल रूप, कलयुग में कृष्ण रूप हो कर विराजते हैं जब २ अधर्म की वृद्धि होती है तब २ वही माराज अवतार धारण करते हैं, देवता, गंधर्व, ऋषि, मुनि ब्राह्मण, उन की स्तुति करते हैं हे राजन् ! सूर्य, चंद्र, व यू आदि सब इसी की आज्ञा से चलते हैं वह सर्व ज्ञाता सर्वोत्थमी श्री कृष्ण आप के अन्य संपूर्ण प्रश्नों के उत्तर देंगे क्योंकि मेरा अब समय निकट है ॥

हे राजन् ! मैं उस अविनाशी श्रीकृष्ण चराचर जगत् का स्वामी पृथ्वी की उत्पत्ति का कारण इन्द्र, ब्रह्मा, विष्णु एकादश रुद्र और शिवजी का रूप है मैं उनके गुणों को कहां तक वर्णन करूं उनके पूर्ण ब्रह्म अविनाशी निर्गुण, सगुण रूप कृष्ण जी की महिमा नहीं हो सकती वही तुम को तुम्हारे प्रश्न का उत्तर देंगे ॥

वासुदेव जी बोले हे युधिष्ठिर! महादेव जी को अग्नि, एक नेत्र, द्विनेत्र, त्रिनेत्र, विश्वरूप और शिव कहते हैं, वेदज्ञ ब्राह्मण महादेव के दो शरीर मानते हैं एक घोर और दूसरा शिव अग्नि बिजली और सूर्य घोर रूप हैं, धर्म जल और चन्द्रमा शिव रूप हैं, घोर मूर्तियें जगत को संहार और शिव मूर्तियें जगत का कल्याण और पालन करने वाली हैं हे राजन्! ईश्वर, महेश्वर, महादेव, भवरूप, विश्वरूप पशुपति आदि २ उन के नाम हैं ॥

सदैव ब्रह्मचर्य्य से इस का लिंग नियत है इस का पूजन ऋषि देवता गंधर्व और मनुष्य करते हैं और मनो कामना पाते हैं उस महादेव के सहस्रों स्वरूप हैं जिन को ज्ञानी लोग जानते हैं हे राजन्! यह महादेव त्रैलोकी को उत्पन्न करने वाले पालन करने वाले और संहार करने वाले हैं सूर्य्य चन्द्र और इन्द्रादि सब उन के सहारे से प्रकाशवान हैं ॥

सतानवेका अध्याय

—:०:—

भाग्य और पुरुषार्थ के विषय में ॥

युधिष्ठिर जी बोले कि अत्यन्त पराक्रमी भाग्य के बिना धन नहीं पाता, भाग्यवान् पुरुषार्थ के बिना धन पाते हैं बाणों से घायल आयुमान् नहीं मरते, गतायु तिनका छूने पर मर जाते हैं कई नीति शास्त्र के कठिन अभ्यास से नीतिज्ञ नहीं बनते; कई बिना पढ़े भी नीतिज्ञ होते हैं ॥

भीष्म जी बोले कि पुरुषार्थ कर्ता मनुष्य धनादि के लिये यत्न न करे किन्तु तप के लिये यत्न करे, दान करे। मनुष्य वृद्धों की सेवा से शास्त्रज्ञ अहिंसा से दीर्घायु होता है हे युधिष्ठर! जब उत्पत्ति का कारण रूप कर्म्म कीट पतंग आदि तक के सुख दुख में प्रमाण है इस लिये इन के लिये यत्न को छोड़ स्थिर चित्त हो परलोक का यत्न करो॥

भीष्म जी बोले कि यत्न कर्त्ता मनुष्य परिश्रम करता हुआ फल की कामना को छोड़दे, शुभ कर्मों का सदैव यत्न करे परन्तु यह विचार न रक्खे कि यह मेरा यत्न कर्म को सफल करेगा, क्योंकि काल ही पोषण करता है काल ही दंड देता है, अधर्म्म धर्म को दबा नहीं सकता, धर्म ही संसार में विजय का देने वाला है वही धर्म तीनों लोकों का कारण होता है ज्ञानियों के संग से भी कोई ही मनुष्य धर्म्म प्राप्त कर सकता है हर एक नहीं कर सकता॥

हे राजन्! लौकिक (सकाम) धर्म नाशवान है और अलौकिक धर्म (निष्काम धर्म) अविनाशी होता है यद्यपि सकाम धर्म का दोष नहीं परन्तु निष्काम धर्म परम उत्तम माना गया है॥

वैशम्पायन बोले कि इस के अनंतर युधिष्ठर जी ने वाण शय्या पर लेटे हुये भीष्म जी से पापों का नाश करने वाला उपाय पूछा, भीष्म जी ने कहा कि हे पुत्र! ऋषि वंश सहित देव वंश का जो तीनों संध्याओं मे पाठ करते हैं उन के पाप नष्ट हो जाते हैं मनुष्य जान बूझ कर या विना जाने दिन रात में जो पाप करता है वह इस के पाठ से दूर होजाते हैं जो सामान्यता से

पाठ करता है उसे किसी प्रकार का रोग नहीं होता और सदा प्रसन्न रहता है पशु पक्षी आदि योनी में जन्म नहीं पाता और मरते समय मोह को नहीं पाता है ॥

अठानवेवां अध्याय

—:o:—

महाराज युधिष्ठर का हस्तिना पुर में आगमन।

जनमेजय ने प्रश्न किया कि मेरे पितामह महा युधिष्ठर ने भीष्म जी से सब संशियों को निवृत्त कर फिर क्या कर्म किया यह भी वर्णन कीजिये ॥

वैशम्पायन बोले कि एक महूर्त तक सब चुप चाप बैठे रहे फिर व्यास जी ने भीष्म जी से कहा कि हे भीष्म जी! अब आप युधिष्ठर जी को भाईयों सहित नगर में जाने की आज्ञा दीजिये ॥

यह सुन भीष्म जी बोले कि हे राजन्! अब आप मंत्रियों सहित पुरी में प्रवेश करें हे पुत्र। तेरे चित का संताप दूर होगा सब प्रजा के संताप को तूं दूर करेगा हे राजन्! उत्तरायण सूर्य्य के होने पर मेरे शरीर त्याग के समय तुम ने फिर आजाना इस प्रकार आज्ञा पा महाराज युधिष्ठर गांधारी श्री कृष्ण, भाई और इष्ट मित्रों सहित हस्तिनापुर में आगये ॥

वैशंपायन बोले कि घर में पहुंच महाराज युधिष्ठर ने सब विदेशियों को और उन स्त्रियों को जिन के पति आदि मारे गये थे

बहुत सा धन दे प्रसन्न कर विदा किया और आप राज्य में अभिषिक्त हो पूर्ण प्रबंध से राज्य कार्य आरंभ किये ५० दिन तक हस्तनापुर में रहे और फिर सूर्य्य के उत्तरायण होने पर नाना प्रकार की सामग्री, धन, रत्न ले ब्राह्मणों और बंधु तथा मित्रों सहित भीष्म जी के पास पहुंचे ॥

हे राजन्? इन के साथ ही गांधारी और माता कुन्ती भी गईं वहां पहुंच कर युधिष्ठर ने व्यास,नारद, देवल प्रभृति ऋषि और मरने से बचे अन्य देशों के राजाओं से सुरक्षित भीष्म जी को देखा, सब व्यासादि ऋषियों को प्रणाम कर युधिष्ठर जी भीष्मपितामह से प्रणाम पूर्वक बोले कि हे गांगेय जी! मैं आप का पौत्र युधिष्ठर हूं। महाराज! आप का पुत्र महाराज धृत-राष्ट्र और अन्य सब आप का परिवार तथा श्री कृष्ण जी आप के निकट खड़े हैं मैं ऋत्विजों सहित सब सामग्री ले आया हूं आप आंखें खोलें और कुछ आज्ञा दीजिये ॥

यह सुन कर भीष्म जी ने आंखें खोलीं सब को देखा और युधिष्ठर से बोले कि हे पुत्र! तुम ठीक समय पर पधारे हो आज मुझे तीक्ष्ण शर शय्या पर पड़े अठावन दिन एक सौ वर्ष के समान व्यतीत हुये हैं हे कौरव! अब किसी प्रकार का शोच नहीं करना चाहिये ॥

हे राजा धृतराष्ट्र! यह पवित्रात्मा राजा युधिष्ठर तेरी आज्ञा में रहेगा यह बड़ा पितृभक्त वृद्धों का आज्ञा कारी धर्मात्मा है तुम ने भी इस का तथा अन्य सब पांडवों का पोषण कर दे

रक्षना तेरे पुत्र दुराचारी क्रोधी मोह और ईर्षा से भरे हुये थे मन की चिन्ता तुम को छोड़ देनी चाहिये ॥

फिर भीष्म जी ने श्री कृष्ण की बड़ी भारी स्तुति कर प्रार्थना की कि आप ही मेरी गति हैं आप साक्षात् नारायण मनुष्य रूप में प्रकट हुये हैं आपने इन सब की रक्षा करनी, हे नाथ! अब आप मुझे शरीर त्याग की आज्ञा दीजिये मैं आप की आज्ञा से परम गति को पाऊंगा ॥

श्री कृष्ण जी बोले कि हे भीष्म! मैं तुम को आज्ञा देता हूं कि वसुदेवताओं को पाओ इस लोक में तुम ने कोई पाप नहीं किया, हे राजन्! तुम दूसरे मारकंडेय हो इस लिये मृत्यु देवता हाथ बांधे आप के आधीन है ॥

फिर भीष्मजी धृतराष्ट्रादि इष्ट मित्रों से बोले कि अब मैं प्राणों को त्यागता हूं आप भी मुझे आज्ञा दें तुम ने सदैव शुभकर्म करते रहना, हे युधिष्ठर! ब्राह्मण मुख्य कर के ब्रह्म ज्ञानी आचार्य्य और ऋत्विजों का सदैव तुम को पूजन करना योग्य है ॥

ननावे का अध्याय

—:०:—

भीष्म जी का शरीर त्याग ॥

वैशम्पायन बोले इस के अनंतर भीष्म जी एक

मुहूर्त तक चुप रहे उस समय उन के माथा ऊपर की ओर चले और जिस २ अंग को माथा छोड़ते थे भीष्मजी का वह वह अंग शल्य से विशल्य होता जाता था, क्षण मात्र में वह अव्रण हो गये यह देख सब चकित हुये, फिर भीष्म जी का आत्मा मस्तक को फोड़ कर स्वर्ग को उड़ा आकाश से पुष्प वर्षा हुई दुंदभियें बजीं ॥

इस प्रकार भीष्मजी के शरीर छूटने पर युधिष्ठर जी ने शास्त्रोक्त रीत्यानुसार उनका संस्कार किया और फिर सब ने गंगा तट पर जाकर भीष्मपितामहजी को तिलाजलियें दीं, हे राजन् ! तब श्री गंगाजी स्त्री रूप धार कर विलाप करने लगीं जिस को वेद व्यास और श्रीकृष्ण जी ने आश्वासन किया और कहा कि हे देवी ! वह वसुदेवताओं के लोक में गये हैं तुम को उनके लिये शोक नहीं करना चाहिये ॥

तब श्री गंगाजी शोक को त्याग जल रूप हो गईं और कृष्णादि सब लौट आये ॥

॥ अनुशासन पर्व समाप्तम् ॥

महाभारत

अश्वमेध पर्व

पहिला अध्याय

व्याकुलचित्त महाबाहो युधिष्ठिर उस जल दान आदि क्रिया से निवृत्त हो राजा धृतराष्ट्र को आगे कर के अश्रुपात करता हुआ जल से बाहर निकल कर गंगा के तट पर गिर पड़ा, श्री कृष्ण जी की प्रेरणा से भीमसेन ने झट उन को पकड़ लिया, तब श्री कृष्ण जी ने कहा कि हे महाबाहो! इस प्रकार पीड़ा न करो धर्म पुत्र की, इस दशा को इस समय सब राजा लोग देख रहे थे॥

तब पुत्रों के शोक से पीड़ित धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर से कहा कि हे कुंती के पुत्र! उठो और करने के योग्य कर्मों को करो, तुम ने इस पृथ्वी को क्षत्री धर्म से जीता है अब तुम भाईयों

और सुहृदों सहित इस को भोगो, हे पुत्र! शोक तो मुझे और गंधारी को करना उचित है जिन के सौ पुत्र ऐसे नाश होगये हैं जैसे कि स्वप्न का पाया हुआ धन नाश होजाता है, मैं भी विदुर जी के वचनों को न मान कर इन दुःखों को पारहा हूं यदि मैं विदुर जी के वचनों को मान लेता तो आज मेरी यह दशा न होती ॥

युधिष्ठिर धृतराष्ट्र की इन बातों को सुन कर मौन होगया, तब केशव जी ने उस से कहा हे राजन्! मन से किया हुआ शोक करने वाले के पूर्व मरे हुये पितामहादिकों को दुःख देता है इस कारण तुम शोक को त्याग कर अनेक यज्ञों से पूजन करो, अमृत से देवताओं को तृप्त करके स्वधा से पित्रों को तृप्त करो, खान पान की वस्तुओं से अतिथियों को अकिंचन महात्माओं और अन्य लोगों को अभीष्ट दानों से तृप्त करो ॥

हे राजन्! आपने भीष्म पितामह, व्यास, नारद और विदुर जी से सब राज धर्मों को सुना है इस कारण तुम अज्ञानियों के सदृश शोक मत करो और अपने पूर्वजों के रीत्यानुसार राज धर्म के भार को अपने ऊपर धारण करो ॥

तब युधिष्ठिर ने कहा हे गोविंद जी! मुझमें आप की जो प्रीति है उस को मैं जानता हूं आप सदैव मुझ पर दया करते हो मेरा कल्याण आप के ही करने से हुआ है और होगा, आप अपनी प्रसन्नता से मुझे तपो वन जाने की आज्ञा दें क्योंकि पितामह और कर्ण के मरने से मुझ को अत्यंत अशांति

होरही है, हे जनार्दन जी! जिस कर्म के द्वारा मैं इन पापों से छूट जाऊं वह मुझ को बतलाओ॥

यह सुन कर व्यास जी ने कहा हे तात! इस समय तुम्हारी बुद्धि ठीक नहीं तुम बाल्यावस्था की बुद्धि से मोह में फंसरहे हो और कैसी २ मूर्ति और चेष्टा वाले हम लोग तुम को समझाते हैं परंतु तुम सब धर्मों को जानते हूये भी ऐसा कर रहे हो तुम को ऐसा करना उचित नहीं॥

दूसरा अध्याय

—:o:—

व्यासजी ने कहा हे भरत वंशी! यदि तुम अपने को पाप करने वाला मानते हो तो वह रीति सुनो जिस से तुम पाप से छूट जाओ। हे तात! जो मनुष्य पापों को करते हैं वह तप, यज्ञ और दानों के द्वारा सदैव उन से छूटते हैं। महात्मा, देवता और असुर पुण्य के अर्थ योग्य कर्म करते हैं इस कारण यज्ञ ही रक्षा का स्थान कहा गया है, महात्मा और देवता यज्ञ ही से विजयी हुये और उन्हों ने दानवों को जीता। हे राजन्! तुम राजसूय, अश्वमेध और नरमेध यज्ञ को करो, नाना प्रकार की दक्षिणा रखने वाला बहुत से भोजन की वस्तु और धन से संयुक्त अश्वमेध यज्ञ को उस प्रकार से करो जिस प्रकार दशरथ के पुत्र रामचन्द्रजी और शकुन्तला के पुत्र तेरे पितामह राजा भरत ने किया था॥

युधिष्ठर ने कहा हे तपोधन! निस्सन्देह अश्वमेध यज्ञ

राजाओं को पवित्र करने वाला है परन्तु मेरे चित का जो प्रयोजन है वह आप के श्रवण योग्य है ॥

हे तपोधन ! जाति वालों का यह बड़ा भारी नाश करके मैं थोड़ा दान करने को भी समर्थ नहीं हूं क्योंकि मेरे पास अब धन नहीं है और मैं इन ताड़ित, दुःखित, अनाथ और बालक राजाओं से धन मांगने का उत्साह नहीं कर सकता। मैं इस सम्पूर्ण पृथ्वी के लोगों का नाश करके शोक से पूर्ण हो कर किस प्रकार से यज्ञ के अर्थ राज्य के अंश को प्राप्त कर सकता हूं ? पृथ्वी भर के सब राजा तो नष्ट हो गए, दुर्योधन ने कर लेकर पृथ्वी भर के राज कोशों को खाली कर रखा है और उस का अपना कोश भी खाली पड़ा है, इस यज्ञ में पृथ्वी का दक्षिणा में देना इस की पहिली विधि है यह बुद्धिमानों से देखी हुई है शेष रीति बनाई हुई है मैं बनाई हुई रीति को नहीं करना चाहता आप मुझ को सम्मति दें ॥

व्यास जी ने एक महूर्त विचार पश्चात् कहा हे राजन् ! यह खाली धनागार भी धन से पूर्ण होगा, हिमलय पर्वत में धन वर्तमान है जो महात्मा मरुत् के यज्ञ में ब्राह्मणों से त्याग किया हुआ है हे राजन् ! उस को लाओ वही बहुत होगा ॥

युधिष्ठर ने पूछा हे तपोधन ! वह धन राजा मरुत के यज्ञ में किस प्रकार एकत्र हुआ था और वह राजा किस समय में हुआ है ॥

तीसरा अध्याय

—:o:—

व्यास जी ने कहा हे तात् ! सत्युग में दण्डधारी प्रभु मनु जी हुये उन का पुत्र महाबाहु प्रसंधी नाम से विख्यात हुआ इस का पुत्र क्षुप और क्षुप का इक्ष्वाकू हुआ इस इक्ष्वाकू राजा के सौ पुत्र हुये इस ने उन सब को देशों का राजा किया उन सब में से बड़ा पुत्र विंशनाम बड़े धर्म धारियों का रूप था विंश का पुत्र विविंश हूआ । इस के पंद्रह पुत्र हुये वह सब धनुर्विद्या में निपुण, पराक्रमी, वेद ब्राह्मण के रक्षक, सत्य वक्ता, दान धर्म में प्रवृत, शांति रूप और प्रिय और मधुर भाषी थे इन सब में से बड़ा खनी नेत्र नाम था, इस ने सब भाईयों को पीड़ावान करके अकंटक राज्य को पाया परंतु उस का प्रबंध न कर सका इस के राज्य में पूजा को सुख नहीं हुआ इस कारण राज्य के अधिकारियों ने उस को राज्य से रहित कर के उस के पुत्र सुवर्चन को उस के राज्य पर नियत किया इस राजा ने राज्य का पुरा २ प्रबंध करके पूजा को हर प्रकार का सुख दिया किसी पर कोई कर न लगाया और धर्म कार्यों में बहुत सा धन लगादिया जिस से उस का धनागार धन से रहित होगया उस की यह दशा देख चारों ओर के राजाओं ने उस को पीड़ित किया शत्रुओं ने उस की सारी सेना मार डाली परंतु उस को न मार सके क्योंकि वह बड़ा नेक चलन और सदैव धर्म का करने वाला था ॥

इस प्रकार पीड़ा पाकर इस राजा ने अपनी प्रजा से कर मांगा और कर से सेना को नियत करके शत्रुओं को विजय किया इस से उस राजा का नाम करंधम प्रसिद्ध हो गया, इस करंधम राजा का पुत्र त्रेतायुग के आरम्भ में हुआ जो इन्द्र के समान धनी और देवताओं से भी कठिनता से विजय होने वाला था। यह राजा अपने बल और पराक्रम से सब राजाओं को अपने आधीन कर के आ महाराज बना, यह राजा बड़ा धर्मात्मा, न्यायकारी, तेजस्वी, बुद्धिमान, जितेन्द्री, सत्यवक्ता हुआ इस का पुत्र मरुत हुआ जिस ने इन गुणों में पिता को भी उल्लंघन किया इस राजा ने स्वर्णमयी और रजत मयी हजारों पात्र बनवाये और हिमालय पर्वत के उत्तरीय पक्ष में मेरू पर्वत को पाकर स्वर्ण के बड़े वृक्ष के स्थान पर यज्ञ कर्म प्रारम्भ किया और सम्पूर्ण राजाओं को साथ लेकर विधि पूर्वक यज्ञ किया ॥

युधिष्ठिर ने पूछा कि हे व्यास जी! वह राजा कैसा पराक्रमी हुआ और किस प्रकार धनवान हुआ वह धन अब कहां है और हम को किस प्रकार मिल सकता है, व्यास जी बोले कि दक्ष प्रजापति की संतान में बहुत से देवता और असुर हुये उन्हों ने आपस में ईर्षा की, उसी प्रकार अंगिरा ऋषि के दो पुत्र हुये उन में एक तो बड़े तेजस्वी बृहस्पति जी और दूसरे संवर्त थे, बृहस्पति जी ने संवर्त को बड़ा दुःख दिया जिस से उस ने उदास हो वन में रहना अंगीकार किया, इन्द्र ने भी सब असुरों को विजय कर इन्द्र पदवी को पा बृहस्पति जी को अपना पुरोहित किया ॥

पूर्व काल में राजा करन्धम अंगिरा का यजमान था वह राजा इन्द्र के समान तेज व्रत रखने वाला था। उस राजा ने उईक्षिया अपने गुणों से सब राजाओं को अपने आधीन कर लिया अंत को उसी शरीर सहित स्वर्ग को पधारा। उस का पुत्र नाम बड़ा धर्मज्ञ हुआ उस ने पृथ्वी को अपने आधीन कर लिया उस का पुत्र मरुत नाम हुआ वह सदैव देवराज से ईर्षा रखता था और इन्द्र भी मरुत के साथ ईर्षा करता था राजा मरुत बड़ा पवित्र और गुणवान था जिस को इन्द्र भी न मार सका मारने में असमर्थ हो इन्द्र ने देवताओं सहित बृहस्पति जी को कहा जो तो मेरा प्रिय चाहते हो तो मरुत का श्राद्ध और यज्ञ मत कराओ और इन्द्र ने यह भी कहा कि या तो आप मेरे पुरोहित बनें या मरुत के बने॥

बृहस्पति जी ने कहा कि तुम जीव धारियों के स्वामी हो और सब सृष्टी तुम में नियंत है तुम अकेले ने देवताओं की लक्ष्मी को प्राप्त किया है हे देवेन्द्र तुम निश्चय रक्खो मैं कभी भी मनुष्य के यज्ञ संबंधी स्रुवापात्र को नहीं पकडूंगा चाहे अग्नि शीतल हो जाये परंतु मैं सत्यता से नहीं हट सकता। बृहस्पति जी के इन वचनों को सुन कर और उन की बहुत प्रशंसा कर इन्द्र अपने भवन को चला गया॥

राजा मरुत ने उस नियम को सुन श्रेष्ठ यज्ञ की तैयारी की और बृहस्पति जी के पास जाकर कहा कि हे तपोधन! मैंने पूर्व समय में जो आपसे मिल कर यज्ञ करने की इच्छा की थी मैं उसको अब पूरा करना चाहता हूं मैंने यज्ञ की सब सामग्री

इकट्ठी करली है, हे साधु! मैं आप का यजमान हूं इस लिये आप यज्ञ शाला में चल कर यज्ञ करायें ॥

बृहस्पति जी ने कहा कि मैं तुम को यज्ञ नहीं करा सकता क्योंकि इन्द्र ने मुझे पुरोहित बनाया है और मैंने उस से प्रतिज्ञा करली है, हे मरुत! तुम जाओ मैं तो आप को यज्ञ नहीं कराऊंगा आप जिस को चाहो अपना उपाध्याय बनालो वही आप के यज्ञ को करेगा, बृहस्पति जी के ऐसे २ वचनों को सुन राजा लज्जा युक्त हुआ २ वहां से लौटा, अकस्मात मार्ग में नारद जी को उस ने देखा उन्हें देख हाथ जोड़ कर उन के सन्मुख खड़ा होगया ॥

नारद जी ने कहा कि हे राजर्षि! तू प्रसन्न नहीं है, तू कहां गया था और किस कारण से तुझे यह अप्रसन्नता हुई तू मुझ से सब वृत्तान्त कह मैं तेरे सब दुःख दूर करूंगा, तब राजा मरुत ने सब वृत्तांत बृहस्पति जी के उस को निराश करने का कह सुनाया ॥

तब नारद जी बोले कि हे राजा! अंगिरा ऋषि का धर्मात्मा पुत्र संवर्त बड़ा तेजस्वी काशी पुरी में घूमता है तू उस के पास जा वह तुझ को अच्छी प्रकार यज्ञ करायेगा ॥

मरुत ने कहा हे वक्ताओं में श्रेष्ठ नारद जी! मैं आप के वचनों से सजीव होगया हूं अब आप यह कहें कि मैं उन को किस प्रकार पहिचानना करूं ॥

नारद जी ने कहा हे राजा! काशी के द्वार पर कहीं किसी मृतक शरीर को रख देना उस को देख कर जो लौट जाय

यही संवर्त है फिर जहां वह पराक्रमी जाये तुम भी उस के पीछे २ चले जाना जब उसे एकांत स्थान में देखो तब हाथ जोड़ कर उस की शरण लो यदि वह तुम से पूछे कि किस ने तुम को मुझे बताया है तब तुम मेरा नाम ले देना, कदाचित् वह मेरे पीछे चलने की इच्छा से वार्तालाप में तुम्हें प्रश्न करे तो तुम कह देना कि नारद जी अग्नि में प्रवेश कर गये ॥

तब राजा मरुत ऐसा ही करूंगा कह कर पुरी को गया, वहां पहुंच कर उस ने पुरी के द्वार पर एक मृतक शरीर स्थापित किया उसी समय संवर्त भी वहां आया और मृतक शरीर को देख कर लौटा, राजा मरुत उसे पहिचान कर उस के पीछे चला संवर्त ने राजा को एकांत स्थान में देख धूल, कीच, रेत और थूक से लिप्त कर दिया, संवर्त के इस प्रकार अवज्ञा से दुःखित राजा हाथ जोड़ ऋषि को प्रसन्न करता हुआ पीछे २ चला, फिर वह थका हुआ संवर्त एक बड़े वृक्ष की छाया में बैठ गया ॥

चौथा अध्याय

—:०:—

संवर्त बोला कि मुझे तुम ने किस प्रकार जाना और मेरा पता तुम को किस ने बताया जो तू मेरा प्रिय चाहता है मुझे सब वृत्तांत कह तेरे सब काम पूर्ण होंगे, मरुत ने कहा कि नारद जी ने आप को मुझे बताया है आप मेरे गुरू के पुत्र हो इसी हेतु से आप में मेरी प्रीति है, संवर्त ने पूछा कि अब नारद जी कहां है

राजा ने कहा कि वह मुझ को आप का पता बता कर आप अग्नि में प्रवेश कर गये ॥

संवर्त राजा के इस वचन को सुन कर बहुत प्रसन्न हुआ और बोला कि मैं भी इसी प्रकार इस के करने को समर्थ हूं। हे राजन्! इस के पीछे घुड़क कर संवर्त ने राजा से कहा कि मुझ सरीखे अपने चित्त के अनुसार कर्म करने वाले से कैसे यज्ञ कराना उचित है मेरा भाई बृहस्पति बड़ा कर्म कर्त्ता है तुम उस से अपना यज्ञ कराओ, मेरा यह शरीर बड़े भाई से निन्दित हो पुरोहितताई से छुड़ा दिया गया है हे राजा मैं! अपने भाई की आज्ञा के बिना तुम को यज्ञ नहीं करा सकता। तुम उस के पास जाकर पूछ आओ फिर मैं तुम को यज्ञ कराऊंगा ॥

मरुत ने कहा कि प्रथम मैं बृहस्पति जी के पास गया था परन्तु उन्होंने मुझे निराश किया फिर मरुत ने बृहस्पति का सब वृत्तान्त राजा इन्द्र से मिलने का वह सुनाया ॥

संवर्त्त बोले कि हे राजा! जो तुम मेरे मन की सब इच्छा करोगे तो तुम जैसा करना चाहते हो वह सब निर्विघ्नता से होगा अब मुझे केवल इस बात का विचार है कि क्रोध युक्त बृहस्पति और इंद्र मुझ याजक के द्वारा तुम्हारे विरुद्ध करावेंगे इसी में मेरे चित्त की दृढ़ता न्यून होती है, इस से निश्चय कर के मेरे चित्त की दृढ़ता को तुम करो नहीं तो मैं तुम को बांधवों सहित भस्म कर दूंगा ॥

मरुत ने कहा कि जब तक कि सूर्य प्रकाश को करता है

और पर्वत भी नियत हैं तब तक मैं लोकों को न पाऊं जो मैं अपने मित्र का त्याग करूं ॥

संवर्त बोले कि हे राजा ! सब कर्मों में तेरी शुभ बुद्धि हो इस प्रकार से यज्ञ कराना मेरे हृदय में भी वर्तमान है मैं तेरे उत्तम धन को अविनाशी करूंगा जिस के द्वारा तू गंधर्वों सहित इंद्र को तिरस्कार करेगा, मैं इंद्र के साथ तेरी समानता प्राप्त कराऊंगा ॥

संवर्त्त ने कहा कि हिमालय पर्वत की पृष्ठ पर मुंजवान नाम पर्वत है वहां पर जात रूप सुवर्ण की ऐसी धातु है जैसा कि सूर्य की किरणें होती हैं जिस पर भगवान शिवजी सदैव तपस्या किया करते हैं और वहीं पर सहस्रों देवता भी निवास करते हैं, तू महादेव और चतुर्मुख देवता को दंडवत करके शरणा गत हो जा इस प्रकार उस महादेव को नमस्कार करके उस सुवर्ण को तू पावेगा सुवर्ण लाने वाले तेरे मनुष्य वहां जायें और सुवर्ण लावें, तब मरुत के पुत्र ने संवर्त्त के कहे हुये वचन को वैसे ही किया, उसी से यज्ञ भी सब विधि देवताओं के समान करी वहां उत्तम २ कारीगरों ने सब सुवर्ण के पात्र बनाये ॥

बृहस्पति ने राजा मरुत के उस बहु धन को जो कि देवताओं से भी अधिक था देख कर बड़ा दुःख किया, तब देवराजइन्द्र ने बृहस्पति जी की इस दशा को देख कर अत्यंत दुःख माना और बृहस्पति जी से कहने लगा कि हे बृहस्पति जी ! आप क्यों शोकातुर हो रहे हैं क्या कारण है आप मुझे बताईये ? मैं आप के दुःख देने वाले सब शत्रुओं को मारूंगा ॥

बृहस्पति जी बोले हे इन्द्र ! राजा मरुत बड़े भारी यज्ञ से पूजन करेगा और संवर्त पूजन करावेगा यह मैंने सुना है, अब मेरी यह इच्छा है कि संवर्त उस को पूजन न करावे ॥

इन्द्र ने कहा कि आप सब अभिष्ट मनोरथों के प्राप्त करने वाले हैं अब संवर्त आप का क्या कर सकेगा ॥

बृहस्पति जी ने कहा कि तुम जहां २ जिस २ शत्रु को वृद्धि युक्त होता देखते हो वहां अपने देवताओं सहित तुम उन २ असुरों को पराजय कर के उन के साथियों को भी मारना चाहते हो क्योंकि शत्रु की वृद्धि का होना दुःख रूप है, हे इन्द्र ! मेरा शत्रु वृद्धि को पाता है उसी के सुनने से मेरी यह दशा है अब किसी उपाय से मरुत और संवर्त को विजय करो ॥

इंद्र ने अग्नि को बुला कर कहा कि आप राजा मरुत से जाकर कहदो कि आप अपना ऋत्विज बृहस्पति जी को बनाओ वही आप को यज्ञ करादेंगे और अमर कर देंगे, अग्नि ने कहा बहुत अच्छा मैं दूत बन कर जाता हूं क्योंकि मैं भी बृहस्पति जी से ही पूजन कराना चाहता हूं, व्यास जी बोले कि ऐसा कह कर अग्नि देवता वायु के समान गमन करते हुये चल दिये ॥

मरुत ने कहा कि हे संवर्त जी ! अब मैं अग्नि देवता को यहां आते हुये देखता हूं आप आसन जल, पाद्य, और गौओं को संमुख लाओ, यह बात सुन अग्नि ने मरुत से कहा कि हे निष्पाप ! मैं तेरे इस जल पाद्य आदिक को अंगीकार करूंगा, परंतु

अभी मैं इंद्र का दूत होकर आया हूं, मरुत ने कहा कि हे देवता आप कहें कि उन का क्या संदेशा है, अग्नि देवता ने कहा कि तुम्हारे पास मुझे इस कारण भेजा है कि बृहस्पति जी तुम को यज्ञ करावेंगे और तुम्हें अमर करेंगे ॥

मरुत ने कहा कि यह संवर्त ब्राह्मण मुझ को यज्ञ करावेंगे क्योंकि बृहस्पति जी अब महां इंद्र को यज्ञ कराकर मनुष्य को यज्ञ कराने से शोभा नहीं पावेंगे, अग्नि बोले कि निश्चय कर के यदि बृहस्पति जी तुम को यज्ञ करायेंगे तो तुम कीर्ति से संयुक्त होकर स्वर्ग को विजय करोगे, फिर संवर्त ने कहा हे अग्नि ! इस रीति से फिर आप कभी बृहस्पति जी को मरुत को ऋत्विज बनवाने के लिये न आना नहीं तो मैं तुम को क्रोध रूप नेत्रों से भस्म कर दूंगा, अग्निदेव संवर्त के इस वचन के सुनते ही भस्म होने से भयभीत होकर सब देवताओं के पास गये, महात्मा इंद्र ने अग्नि देव को आते देख कहा कि हे अग्नि जी ! आप हमारे संदेशा का क्या उत्तर लाये, अग्नि देवता बोले कि मरुत आप के वचनों को अंगीकार नहीं करता उस ने बृहस्पति जी के लिये अंजली भेजी है अर्थात् नमस्कार किया है और यह कहा है कि मुझ को संवर्त यज्ञ करावेगा ॥

इन्द्र ने कहा कि तुम फिर जाकर मरुत से मेरे सार्थक वचन कहो यदि वह अब भी न मानेगा तो मैं उस पर अपने वज्र का प्रहार करूंगा, अग्नि ने कहा कि आप अब इन गंधर्व राज को दूत बना कर भेजो क्योंकि मुझे संवर्त ने कहा था कि यदि तुम फिर बृहस्पति जी को ऋत्विज बनाने के लिये

कहने आओगे तो मैं तुम को भयानक नत्रों से भस्म करदूंगा॥

इन्द्र ने कहा कि हे अग्नि! तुम ही तो सब को भस्म करने वाले हो तुम्हारे सिवाये और कौन भस्म करने वाला है यह तुम्हारा कहना ठीक नहीं है, अग्नि ने उत्तर दिया कि हे इन्द्र! तुम अपने बल से स्वर्ग और पृथवी को लपेटो पूर्व समय में तुम ने वृत्रासुर को कैसे विजय कर लिया था, इन्द्र ने कहा कि हे अग्नि! मैं पर्वतों की भी मक्षिका आदि के समान छोटा कर सकता हुं परन्तू शत्रु के अमृत का पान नहीं करूंगा॥

किस मनुष्य की शक्ति है कि मुझ पर प्रहार कर सके मैं चाहूं तो पृथ्वी से असुरों को पृथक करदूं आकाश के शब्द का नाश करदूं। अग्नि ने कहा जिस स्थान पर कि राजा सर्य्याति को यज्ञ कराते हुये अकेले च्यवन ऋषि ने अश्विनी कुमारों के निमित्त अमृत को हाथ में लिया उस समय क्रोध युक्त ऋषि ने प्रथम ही तुम को रोका था हे इन्द्र! सर्य्याति के उस यज्ञ का स्मरण करो, उस समय तुम ने अपने भयानक रूप वज्र को लेकर च्यवन के ऊपर प्रहार करना चाहा परन्तु ऋषि ने अपने तप के प्रभाव से वज्र सहित तुम्हारी भुजाओं को रोका। तब तुम भयभीत होकर ऋषि के शरण में गये ब्राह्मण का बल क्षत्रिय बल के बल से बड़ा है सो हे इन्द्र! मैं ब्रह्म तेज को निश्चय और ठीक जान कर संवर्त्त को विजय करना नहीं चाहता हूं॥

पांचवां अध्याय

—ः०ः—

इद्र ने कहा कि तुम कहते तो ठीक हो कि ब्राह्मण का बल बड़ा है परंतु मैं मरुत के बल पराक्रम को नहीं सह सकता मैं इस पर अवश्य वज्र का प्रहार करूंगा, हे धृतराष्ट्र गंधर्व तुम जाकर संवर्त सहित मरुत से कहो कि तुम बृहस्पति जी को अपना ऋत्विज करो नहीं तो इन्द्र तुम्हारे ऊपर घोर वज्र को फैंकेगा ॥

फिर गन्धर्व ने जाकर राजा मरुत से इन्द्र का वचन कहा और उस ने यह भी कहा कि यदि तुम मेरे वचन को न मानोगे तो मैं तुम पर वज्र को छोडूंगा, मरुत ने कहा कि मैं कभी भी सिवाय संवर्त के किसी और को ऋत्विज न बनाऊंगा, गंधर्व बोला हे राजाओं में श्रेष्ठ! इस समय आकाश में इंद्र के भयकारी शब्द को सुनो वह महेन्द्र अवश्य तुम पर वज्र का प्रहार करेगा अपनी कुशल को विचारो यही समय है ॥

गंधर्व के इन वचनों के पीछे मरुत ने गर्जते हुये इन्द्र के शब्दों को सुन तपस्वी संवर्त से जाकर कहा कि हे वेद पाठी! अब शीघ्र ही मैं अपने इस शरीर को डूबा हुआ मानता हूं इस इन्द्र को इतना मार्ग दूर नहीं है इसलिये अब मैं आप से अपना कल्याण चाहता हूं ॥

संवर्त ने कहा हे राजा! मैं अभी तेरे इस भय को दूर कर दूंगा अर्थात् स्तंभनी विद्या से उस को रोकूंगा तुम भय,

मत करो मैंने सब देवताओं के शस्त्रों को निरर्थक कर दिया है वज्र दिशाओं को सेवन करेगा वायु चलेगी और मेघ जल हो कर वनों में वर्षा करेगा और अंत में जो जल होगा वह निरर्थक हो जायगा, अग्नि देवता सब ओर से तेरी रक्षा करेंगे, इसी प्रकार जलों से रुका हुआ वज्र मारने के लिये नियत रहेगा ॥

मरुत ने कहा कि यह बड़ा भयकारी शब्द सुना जाता है वायु से मिले हुये वज्र का शब्द है मेरा चित्त वारंवार पीड़ा पाता है अभी मेरे चित्त में विश्वास नहीं हुआ है, संवर्त ने कहा कि अब बड़े भयानक वज्र से तेरा भय दूर हो, मैं वायु रूप हो कर उस वज्र को दूर करता हूं अब भय को त्यागो और वर मांगो, मरुत ने कहा हे वेदपाठी यह इन्द्र शीघ्रता से साक्षात् मेरे सन्मुख आवे यज्ञ में हव्य को अंगीकार करे और देवता लोग भी अपने २ स्थानों पर हव्य को अंगीकार करें ॥

संवर्त ने कहा मेरे मंत्र से बुलाया हुआ इन्द्र हरि जाति वाले घोड़ों की सवारी से इस यज्ञ में आता है अब तुम इस को सुस्त शरीर देखोगे ॥

इस के पीछे मरुत के अमृत के पान करने का अभिलाषी देवराज इन्द्र आया, मरुत ने पुरोहित सहित देवराज का पूजन किया और कहा कि हे ज्ञानी ! आप का आना कल्याणकारी हो अब आप मेरे दिये हुये अमृत का पान करो और मुझे अपने कल्याण रूप नेत्रों से देखो अब मेरा जीवन सफल है, बृहस्पति जी का छोटा भाई संवर्त मेरे यज्ञ को करता है ॥

इन्द्र ने कहा कि हे मरुत ! मैं तेरे इस गुरू के बुलाने से आया हुं अब तुझ में मेरी प्रीति है क्रोध नहीं रहा । संवर्त ने कहा कि हे इन्द्र ! यदि तुम प्रसन्न हो तो आप यज्ञ में तैय्यारी कराओ और हे देवताओ ! तुम सब मिल कर भागों का विचार करो और इस सब संसार को इस विषय का प्रयोजन जानो इस के पीछे आप इन्द्र ने देवताओं को आज्ञा दी कि हज़ारों उत्तम २ स्थान तैयार करो तब देवताओं ने वैसा ही किया इस के पीछे हे राजा ! वह यज्ञ वृद्धि युक्त हुआ और सब देवता प्रसन्न हो अपने २ स्थानों को गये ॥

हे युधिष्ठर ! उस धन को लेकर तुम बुद्धि से देवताओं को तृप्त करते हुये उनका पूजन करो, इस के पीछे राजा युधिष्ठर ने प्रसन्न हो उस धन से यज्ञ करने का विचार किया और मंत्रियों से भी सलाह की ॥

छटा अध्याय

—:o:—

वैशम्पायन बोले कि इस प्रकार व्यास देव जी कुछ कहिना ही चाहते थे कि श्री कृष्ण जी ने युधिष्ठर से कहा कि वृद्धों के हज़ारों उपदेश अथवा हज़ारों यज्ञों से भी शोक नहीं हट सकता केवल ब्रह्म ज्ञान से शोक दूर होसकता है, सब प्रकार के कामादिक मृत्यु के स्थान हैं अर्थात संसार में ही प्रवृत्त करने अथवा फंसाने वाले हैं और शमदमादिक सत्य

वासना ब्रह्म पद है तुम ने कर्म का अनुष्ठान नहीं किया, तुम ने शत्रु विजय नहीं किये, तुम अपने शरीर के बसने वाले शत्रु रूप अज्ञान को कैसे नहीं जानते हो, यहां धर्म ज्ञान के अनुसार मैं तुझ से उस प्रकार को कहता हूं जिस प्रकार के काम, क्रोधादिक धर्म वाले जड़ चैतन्य के समूह रूप आहंकार से और अंतर्वर्ती चित्त आत्मा से युद्ध वर्तमान हुआ है राजा! पूर्व काल में स्थूल शरीर रूप वृत्तासुर से व्याप्त हुये सूक्ष्म शरीर को आत्मा रूप से अंगीकृत देख कर और गंध विषय में शरीर के नियत करने से अनात्म रूप विषय अर्थात ब्रह्माण्ड उत्पन्न हुआ ॥

जो कि स्थूल शरीर को आत्मा रूप मानने से अनात्म रूप दुर्गंध था, गंध विषय के प्राप्त करने पर भीतर के चिदात्मा ने क्रोध किया इस के अनंतर महा क्रोधी ने वृत्रासुर के ऊपर आगे के अध्याय के लिखे हुये विवेक रूप वज्र को छोड़ा, बड़े उग्र और तेजस्वी वज्र से घायल वह वृत्रासुर अकस्मात जल रूप दूसरे दिव्य भोग वाले शरीर में प्रवेश कर गया और उसी से विषय को प्राप्त किया फिर अभिमानी दिव्य शरीर होने और रस विषय दिव्य लोक में ममता करने पर क्रोध युक्त इन्द्र ने उस के ऊपर वज्र को छोड़ा ॥

तब वृत्रासुर वज्र से पीड़ित आकाश की ओर दौड़ा परन्तु फिर इन्द्र ने उस पर प्रहार किया वज्र से घायल वृत्रासुर इन्द्र में प्रवेश कर गया, वृत्रासुर के व्याप्त होने से इन्द्र को बड़ा

मोह उत्पन्न हुआ उस के पीछे इन्द्र ने वज्र के द्वारा शरीर में गुप्त होने वाले वृत्तासुर को मारा ॥

सातवां अध्याय

—:o:—

वासुदेव जी ने कहा कि रोग दो प्रकार का होता है एक शारीरक दूसरा मान्सिक यह दोनों एक दुसरे से उत्पन्न होते हैं इस कारण उन की एकता सिद्ध नहीं होसकती अर्थात सतोगुण आदि से उत्पन्न लिंग शरीर है उस के विना स्थूल शरीर नहीं इस शरीर के विना अनुगुणों की प्राप्ति नहीं, शरीर में जो रोग उत्पन्न होता है वह शारीरिक रोग कहाता है और चित में उत्पन्न होने वाले रोग को मान्सिक रोग कहते हैं। वात, पित और कफ नाम गुण शरीर से उत्पन्न हैं जिस के शरीर में यह एक सम हैं वह निरोग कहाता है। शीतता उष्णता से जाती है और उष्णता शीतता से जाती है। सत्व,रज और तम तीनों शरीर के धर्म हैं जिन में इन तीनों की समता है वह सुखी कहाते हैं यदि इन में से एक भी न्यूनाधिक होजाये तो उपाय करना पड़ता है ॥

हे राजन्! शोक प्रसन्नता से हटता है और प्रसन्नता शोक से जाती रहती है कोई तो दुःख में पड़ा हुआ मनुष्य पिछले सुख को और कोई सुख में पड़ा हुआ पिछले दुःखों को याद करता है अर्थात् एक के याद करने से दूसरे का

नाश हो जाता है, हे कुन्ती नन्दन! सो तुम दुःखी नहीं हो दुःख को याद न करो, न सुखी हो कर सुख का स्मर्ण करो किन्तु दुःख की भांति से दूसरा जो वृक्ष है उसी का ध्यान करो ॥

हे राजन्! तुम द्रौपदी के रजस्वला होने की दशा में एक वस्त्र ओढ़े सभा में बुलाये जाने, राज्य हार कर वनों में चले जाने इत्यादि दुःखों को अब भुला दो और चित को स्थिर करके अपने बाप दादों के राज्य पर शासन करो। राज्य आदि को त्याग कर कभी मोक्ष नहीं होती, वरन क्षमादिक धन के त्याग से सिद्धि प्राप्त होती है ॥

वैशम्पायन बोले कि राजा युधिष्ठर को उन मुनियों के वचनों से विश्वास हुआ और ब्राह्मणों का पूजन करके सागराम्बरा पृथ्वी पर राज्य किया और शांत चित हो कर व्यास नारद आदि ऋषियों से कहने लगा कि मुझे आप लोगों ने विश्वास दिलाया है अब मुझे तनिक भी शोक नहीं है, मैंने बड़ा धन पाया है मैं उसी से देवताओं का पूजन करूंगा आप को अग्रगामी करके यज्ञ को प्राप्त करूंगा और आप की रक्षा से हम हिमालय पर्वत पर जायेंगे वह बड़े २ अद्भुत पदार्थों को रखने वाला सुना जाता है और नारद जी से कहने लगे कि बिना प्रारब्ध के कोई पुरुष भी दुःख को पाकर आप जैसे शुभचिंतक साधुओं के अङ्गीकृत गुरुओं को नहीं पाता हैं ॥

राजा युधिष्ठर के इन वचनों को सुन कर वह सब ऋषि श्री कृष्ण आदि के देखते २ उसी स्थान में गुप्त हो गये इस के

पीछे राजा युधिष्ठर उसी स्थान पर बैठ गये ॥

तब भीष्म जी के मरने पर राजा युधिष्ठर ने शौच कर्म कर के वेद पाठी ब्राह्मणों को बहुत सा धन दिया और धृतराष्ट्र को आगे कर के हस्तिना पुर में प्रवेश किया ॥

आठवां अध्याय

—:०:—

राजा जनमेजय ने पूछा पांडवों के विजयी और शान्त चित्त होने पर कृष्णचन्द्र और अर्जुन ने देश में क्या क्या किया ! वैशम्पायन जी ने उत्तर दिया कि वह दोनो अतीव प्रसन्न हुये और इंद्र प्रस्थ में रहने लगे और देवताओं के समान विहार करने लगे हर कथन में युद्ध के वृत्तांत और कष्टों को वर्णन किया करते थे श्री कृष्ण जी ने हजारों सम्बंधियों और पुत्रों के शोक से दुःखी अर्जुन को कथाओं से शान्त किया कथाओं के समाप्त होने पर कृष्ण जी ने अर्जुन से कहा कि हे अर्जुन ! राजा युधिष्ठर ने तेरे भुज बल से ही सब पृथ्वी विजय की और वह भीमसेन, नकुल और सहदेव के प्रभाव से इस शत्रु से रहित पृथ्वी को भोगता है ॥

हे धर्मज्ञ ? युधिष्ठर ने धर्म पूर्वक इस अकंटक राज्य को पाया और राजा सुयोधन युद्ध में धर्म से मारा गया और अधर्म में प्रवृत्त दुर्बुद्धि धृतराष्ट्र के पुत्र अपने सहायकों सहित मारे गये, हे अर्जुन ! मैं तेरे साथ वनों में भी रमता हूं जहां पर

यह सब इष्ट मित्र नातेदार आदिक समेत कुंती हैं वहां मैं कैसे निवास न करूं, हे निष्पाप! मुझ तेरे साथी का बड़ा समय व्यतीत हुआ जो कि मैं वसुदेव जी, बलदेव जी और अन्य वृष्णियों के दर्शनों से रहित हूं सो अब मैं द्वारका पुरी को जाना चाहता हूं तुम मेरा जाना स्वीकार करो राजा युधिष्ठिर को मैंने जहां तहां करके समझा लिया है धर्म पुत्र के चित्त में धर्म की सत्यता और उत्तम बुद्धि सदैव नियत है, हे अर्जुन! जो तुम को स्वीकार है तो उस महात्मा से यह वचन कहो जो हमारे प्रस्थान करने से संबंध रखता है कि मैं प्राण त्याग दशा में भी उस का अप्रिय नहीं करूंगा, हे कौरव! मैं यह सब तेरी प्रीति के अर्थ कहता हूं, अब तुम मेरे साथ चलने के विषय में जाकर पूछो हे अर्जुन! यह शरीर और जो धन मेरे घर में है वह सब मैंने राजा युधिष्ठिर की भेंट किया, इस प्रकार के वचनों को सुन कर अर्जुन ने श्री कृष्ण जी की पूजा कर दुःखी हो कर कहा कि जैसे आप की इच्छा हो ॥

अर्जुन ने निष्कंटक राज्य को पाकर श्री कृष्ण जी से कहा हे महाबाहु! युद्ध के वर्तमान होने पर जो आप ने अपना महात्म्य और ईश्वर रूप मुझ से कहा था वह सब मुझ को विस्मरण हो गया है उन प्रयोजनों में ही मेरी प्रीति उत्पन्न होती है आप थोड़े ही काल के पीछे द्वारका को जाओगे इस लिये मुझे एक वेर फिर उपदेश करें ॥

श्री कृष्ण जी बोले हे अर्जुन! मैंने तुमको गुप्त रहस्य सुनाया, सनातन पुरुष जतलाया, तुमने अपनी निर्बुद्धिता से जो उस को

अपने चित्त में धारण नहीं किया वह मुझे बहुत बुरा मालूम हुआ अब वह मेरी स्मृति वहीं फिर प्रकट होगी, वह परामर्श विद्या संपूर्णता पूर्वक फिर कहना असंभव है अब उसी प्रयोजन में मैं उस प्राचीन इतिहास को वर्णन करूंगा जिस से तुम बुद्धि मान हो श्रेष्ठ गति को पाओगे अब मेरे सब वर्णन को सुनो ॥

एक अजेय ब्राह्मण स्वर्ग लोक से आया उसका हमने पूजन किया हम से मिल कर उस ब्राह्मण ने अपनी दिव्य बुद्धि से जो कहा है उसको तुम सुनो, तप से पूर्ण किसी धर्मज्ञ कश्यप गोत्री ब्राह्मण ने दूसरे किसी ऐसे अन्य गोत्री ब्राह्मण को पाया जो शास्त्रों के गुप्त रहस्यों का जानने वाला था, जन्म मरण के विषय में शास्त्र के अनुमान से उत्पन्न ज्ञान और योग जन्य विज्ञान, जन्म मरण के मूल सिद्धान्तों का ज्ञाता, पाप पुण्य के जानने में पण्डित, इसी प्रकार चक्रधारी सिद्धों के साथ में जाने वाला था। कश्यप ने उन को मूल सहित सुन कर उन सिद्धों समेत असंग ऋषि को दैव योग से पाया और न्याय के अनुसार उस ने उन के चरणों को पकड़ा और उन गुरुरूप को बड़ी से सेवा से प्रसन्न किया ॥

सिद्ध ने कहा हे तात्! इस लोक में मनुष्य नाना प्रकार के कर्म और पवित्र पुण्यों से गति को पाते हैं परंतु सुख स्थिति के लिये कहीं नहीं है। इच्छा, क्रोध और लोभ से मोहित हो कर पाप सेवन से मैंने वारंवार उत्तम स्थान से पतित हो दुःखी रूप गतियों को पाया वारंवार जन्म मरण हुआ कई प्रकार के आहारों का भोजन किया, अनेक प्रकार के माता पिता देखे और

विचित्र सुख दुःख भी देखे, प्यारे लोगों से पृथकता और अप्रिय लोगों के साथ निवास किया। फिर मैं लोक में इस योग मार्ग को जान कर उस में सदैव अभ्यास करने वाला हुआ। उस अनुष्ठान और चित्त की शुद्धि से मैंने यह सिद्धि प्राप्त की मैं अब फिर यहां मोक्ष तक नहीं आऊंगा, मैं संसार के सब जीवों को देखता हूं अर्थात् ब्रह्म ज्ञान के फल से शुद्ध मोक्ष मुझ को प्राप्त है॥

इस प्रकार से यह उत्तम सिद्धि पाई है अब मैं सत्य लोक को जाऊंगा और वहां जाकर केवल मोक्ष को पाऊंगा जो दृष्टि से गुप्त ब्रह्म लोक है उस में तुम को संदेह न करना चाहिये हे परन्तप! फिर मैं इस नर लोक में न आऊंगा। हे ज्ञानी! मैं तुझ पर प्रसन्न हूं अब जो तू कहेगा उस को मैं करूंगा मैं उस प्रयोजन को अच्छी रीति से जानता हूं जिस के निमित्त तू मेरे पास आया है मैं शीघ्र ही जाऊंगा इसी लिये तुझ को प्रेरणा करता हूं मैं तेरी उस बुद्धि को बड़ी मानता हूं और उस की बड़ी प्रशंसा करता हूं जिस के द्वारा तूने मुझे जाना है, हे काश्यप तू बड़ा बुद्धिमान है॥

नौवां अध्याय

—:o:—

इस के पीछे काश्यप ने उन के चरणों को स्पर्श करके बड़े २ कठिन प्रश्नों को पूछा। और सिद्ध ने उन धर्मों का

वर्णन किया। काश्यप ने कहा कि शरीर कैसे गिरता है। कैसे प्राप्त होता है और किस प्रकार दुःख रूप संसार से पृथक् हो चारों ओर से मुक्त होता है॥

सिद्ध बोला कि इस लोक में जिस जन्म के मध्य में आयुर्दा और शुभ कीर्ति उत्पन्न करने वाला जिन कर्मों को करता है उन सब कर्मों का फल समाप्त होने पर आयुर्दा से नाश युक्त शरीर वाला मनुष्य विपरीत कर्म को करता है और नाश के वर्तमान होने पर उस की बुद्धि विपरीत हो जाती है व ब्रह्मज्ञान से रहित अपनी अवस्था, शरीर, बल और समय को जान कर भी बहुत काल तक अपने स्वभाव से विपरीत विषयों को भोगता है॥

जब यह दुःखी कामों को करता है बहुत खाता है और कभी नहीं भी खाता है, दूषित भोजन मांस और पीने की वस्तु परस्पर विरुद्ध भोजन शरीर को भारी करने वाला भोजन और नियत परिणाम से अधिक खाता है और फिर अच्छे पारपक होने पर नहीं खाता है अपने चित से अधिक संभोग करता है और मूल विष्ठा के वेग को लोभ करके सदैव रोकता है फिर कुसमय पर भोजनादि को करने से वह भोजन परिपाक अवस्था में दोष रूप हो कर अर्थात् वात, पित्त और कफ इन तीनों के दोषों को करता है और यह भी होता है कि विरुद्ध रीति से ग्रीवा आदि में फांसी लगा कर मर जाने को निश्चय करता है तब उन सब कारणों से जीवात्मा का शरीर

और ऊपर लिखे हुये जीवन का नाश होता है उस को तुम बुद्धि के अनुसार श्रवन करो ॥

कठिन वायु से चलाय मान वृद्धि युक्त उष्मा शरीर को व्याप्त कर के सब इन्द्रियों को रोकती है, बढ़ी हुई मर्म स्थलों को पीड़ित कर के तोड़ती है उस को तुम मूल सहित समझो मर्म स्थलों के टूटने पर जीवात्मा शीघ्र ही शरीर से जुदा होता है क्योंकि वह पीड़ाओं से पूर्ण शरीर होता है। हे श्रेष्ठ! सदैव जन्म मरण से व्याकुल चित्त सब जीव धारी शरीर को त्यागते हुये दृष्टि में आते हैं फिर गर्भ संक्रमन और पूर्व जन्म के कर्म से संयुक्त होने में मनुष्य उसी प्रकार की पीड़ा को पाता है टूटे जोड़ और हड्डी वाला मनुष्य जलों से वृद्धि को पाता है ॥

दूसरे प्रश्न के उत्तर में ब्राह्मण ने कहा कि इस लोक में शुभाशुभ कर्मों का नाश नहीं है सब जीव शरीरों को बारंबार पाकर फल को पाते हैं जैसे अच्छा सींचा हुआ वृक्ष बहुत से फलों को देता है उसी प्रकार पवित्र मन से किया हुआ कर्म बड़े फल वाला होता है आत्मा इस मन को अग्रवर्ती करके कर्म में प्रवृत्त होता है सार यह है कि मन ही प्रधान है कर्म की प्रधानता नहीं है क्योंकि जैसी चित्त की शुद्धि और मलिनता होगी उसी प्रकार थोड़े पुण्य और पाप से भी बड़ा फल होगा ॥

इच्छा और अज्ञान से घिरा हुआ कर्म में फंसा हुआ जैसी रीति से गर्भ में प्रवेश करता है उस प्रश्न के उत्तर को भी श्रवन करो रुधिर से संयुक्त और स्त्री के गर्भाशय में वत नि

वीर्य कर्म जन्य शरीर को उत्पन्न करता है वह कर्म शुभ और अशुभ जैसा हो, अब शरीर पूरक करने वाले जीवात्मा के मुख्य रूप को कहते हैं ब्रह्मज्ञानी रूप की सूक्ष्मता और अव्यक्त भाव से कहीं और का ओर नहीं होता है उस सनातन ब्रह्म को जान कर मनोभीष्ट को पाकर प्रसंग होता है वह ब्रह्म सब जीवों के प्रकट होने का कारण है उसी से जीवधारी सजीव रहते हैं॥

प्रधान पुरुष को जानने वाला जरा मरण रोगों से पूर्ण मनुष्य सब चैतन्य वान शरीर में एक चैतन्य को देखता है उस एकत्व दृष्टि से सब के लय स्थान रूप ज्योति स्वरूप को निश्चय करता हुआ वैराग्य को पाता है हे ब्राह्मण ! यह सब गुप्त रहस्य मैंने तुझ से कहे अब मैं तुझ से पूछ कर विदा हुआ चाहता हूं हे ब्राह्मण ! तुम सुख पूर्वक जाओ ॥

हे श्री कृष्ण ! जब मैंने इस प्रकार के वचन कहे तब वह मुनि अपनी इच्छा के अनुसार चला गया । वासुदेव जी बोले हे राजा ! तब वह मोक्ष धर्म में अच्छी रीति से आश्रित उत्तम ब्राह्मण मुझ से इस वचन को कह कर उसी स्थान पर गुप्त होगया, हे अर्जुन ! क्या तुम ने चित की एकाग्रता से इसको सुना, रथ पर नियत होकर भी तुम ने इसी ज्ञान को सुना था, हे पाण्डव ! जो बुद्धिमान समर्थ मनुष्य इस लोक के धनादिक सुखों का असार रूप तृण के समान त्याग कर देता है वह इन शम दमादि उपायों से परम गति को पाता है इतना ही कहना उचित है इन से अधिक कुछ नहीं है भाव योग में प्रवृत्त चित्त मनुष्यों का योग छः महीने में पूरा होता है ॥

दसवां अध्याय

—:०:—

कृष्ण जी ने कहा कि मैं वैश्वा नर रूप होकर प्राण अपान को साथ लेकर चार प्रकार के भोजनों को पचाता हूं इस विषय से संबन्ध रखने वाले उस प्राचीन इतिहास को सुनाता हूं जिसमें स्त्री और पुरुष का प्रश्नोत्तर है। एक ब्राह्मणी ने ज्ञान विज्ञान में अपने पतिको एकान्ते बैठे हुये देख कर कहा कि अग्नि होत्रादिक त्याग करने वाले निर्दयी मेरी अनन्य गति से अज्ञान तुम्ह पति के पास शरणागत होने वाली मैं किस लोक में जाऊंगी इस प्रकार के भार्या के वचनों को सुन कर उस शान्तात्मा हंसते हुये ब्राह्मण ने उत्तर दिया कि हे निष्पाप सुनगे ! मैं तेरे इस वचन की निंदा नहीं करता हूं जो यह सत्य कर्म प्रत्यक्ष दृष्टि के आगे नियत दीक्षा व्रतादिक वर्तमान है उस को कर्म धर्ता लोग कर्म अकर्म निश्चय करते हैं॥

ज्ञान से रहित मनुष्य कर्म के द्वारा मोह को पाते हैं इस लोक में एक घड़ी भर भी कर्म के बिना मोक्ष आश्रम सन्यास प्राप्त नहीं होते हैं, जीवधारियों में शुभाशुभ कर्म मन और वाणी से जन्म स्थिति नाश और योनियों के बहुत प्रकार से वर्तमान होते हैं समान रखने वाले सोम यज्ञ आदिक कर्म मार्ग राक्षसों से भ्रष्ट और नाश होने पर उन से प्रीति को हटाकर मैने दोनों भ्रुकुटियों के मध्य में नियत अव्यक्त नाम स्थान को देखा जहां पर वह अद्वैत ब्रह्म है और जहां पर इड़ा पिंगला

नाम नाड़ी है, बुद्धि के पेरणा करने वाला वायु जीवों को धारण करता हुआ सदैव जिस स्थान पर चेष्टा करता है वह घ्राणेंद्रिय से सूंघने के योग्य नहीं जिव्हा से स्वाद लेने के योग्य नहीं स्पर्श इन्द्रिय से छूने में नही आता केवल मन से ही जाना जाता है जो नेत्रों से दृष्टि में नहीं आता बुद्धि से भी दूर है, रूप, रस, गंध स्पर्श और लक्षणों से रहित है ॥

यह सृष्टि जिस से प्रकट होती है और जिस में निवास करती है प्राण अपाण, समान, व्यान, उदान यह पांचों जिस से प्रकट होते हैं और उसी में प्रवेश कर जाते हैं अर्थात् उन का प्रकट होना और कर्म मे प्रवृत्त होना यह तो उत्पत्ति है और उस में प्रवेश होजाना ही प्रलय है, प्राण और अपान यह दोनों समान और व्यान के मध्य में चेष्टा करने वाले हैं ॥

प्राणों के चलाय मान होने को उदान कहते हैं अर्थात जीवात्माओं के उपाधी रूप सब प्राण एक ही उदान में नियत हैं इसी हेतु से ब्रह्मवादी पुरुष प्राणों के विजयी तप को अथवा तप के विचारने को मुझ में ही निष्ठापाने वाला निश्चय करते हैं, मुझ शब्द के अर्थ रूप वैश्वानर नाम अग्नि को दिखाते हैं परस्पर भोजन रूप और शरीर मे भ्रमण करने वाले उन सब प्राणों के मध्य में सात रूप से क्रीड़ा करते हैं, पृथ्वी, आकाश, जल, वायु, अग्नि, मन, बुद्धि यह सातों संघात रूप प्रत्यक्ष स्थान रूप चैतन्य कहे जाते हैं। हव्य रूप से सब विषय उस गंधादिक की ज्ञान रखवाली वृत्ति में प्रवेश करते हैं और जो स्वप्नावस्था में रूपादिक वासना से नियत होते हैं वह जाग्रत अवस्था में

फिर प्रकट होते हैं । इसी मार्ग से प्राचीन ऋषियों ने प्रयादिक इंद्रियों का रुप वेद से जाना है मान अर्थात् परिमाणमेय अर्थात् संख्या करने वाला इन तीनों से पूर्ण जो ब्रह्म है उस के आह्वाणों से अपने ज्योति रुप आत्मा से पूर्ण होते हैं अर्थात् यह सब सृष्टि ब्रह्म दृष्टि से ही प्रकट है ॥

फिर श्री कृष्ण जी ने कहा कि हे अर्जुन ! प्रथम युद्ध के वर्तमान होते समय भी मैंने तुझ से यही ज्ञान कहा था, हे भरतषर्भ अर्जुन ! मैंने बहुत समय से अपने पिता को नहीं देखा है मैं तेरे सम्मत से उन को देखना चाहता हुं ॥

अर्जुन ने उत्तर दिया कि हे श्री कृष्ण जी ! हम सब ही हस्तिना पुर को चलेंगे वहां धर्मात्मा राजा युधिष्ठर से मिल कर आप अपनी पुरी में जाने के योग्य हो ॥

ग्यारहवां अध्याय

—:-o-:—

इस के पीछे कृष्ण जी ने दारुक सारथी को आज्ञा दी कि रथ तैयार करो कहने की देर थी कि रथ तैयार होगया इसी प्रकार अर्जुन ने सेना को कहा कि तैयार हो हम हस्तिन पुर में चलेंगे, इस के पीछे प्रसन्न चित्त कृष्ण जी और अर्जुन रथ में सवार हुये रास्ते में सवार हुये २ अर्जुन ने श्री कृष्ण जी से कहा कि आप ही की कृपा से राजा युधिष्ठर ने यह राज्य पाया है, दुर्योधन के युद्ध में आपने वह कर्म किया जिस

बुद्धि के द्वारा आप के बल से मैंने विजय पाई, आप ने ही क्यों पापी जयद्रथ और भूरिश्रवा के मारने का उपाय बताया, हे योगीश्वर ! आप ने जो मुझ से कहा है वह मैं अवश्य करुंगा इस में किसी बात का विचार भी न करुंगा हे निष्पाप ! मैं महात्मा युधिष्ठर को पाकर आप के द्वारका जाने के विषय में प्रार्थना करुंगा, हे जनार्दन जी ! आप का द्वारका जाना मुझ को स्वीकार है, आप मेरे मामा जी को शीघ्र ही देखेंगे ॥

इस प्रकार की बातें करते हुये वह दोनों रथ में बैठे हुये हस्तिना पुर में पहुंचे रथ से उतर कर वह दोनो पहिले राजा धृतराष्ट्र के महल में गये । महल में जाकर राजा धृतराष्ट्र के पास युधिष्ठर आदि भाईयों और माता गांधारी, कुंती, द्रौपदी सुभद्रा आदिक उन सब भरत वंशियों की स्त्रियें को देखा तदन्तर उन शत्रु विजयी श्री कृष्ण और अर्जुन ने राजा धृतराष्ट्र के पास जाकर अपने नाम कह कर उस के दोनों चरणों को पकड़ा फिर गांधारी, कुंती, धर्मराज युधिष्ठर और भीमसेन के चरणों को स्पर्श किया और विदुर जी से भी मिल कर कुशल क्षेम पूछी फिर वह दोनो उन सब सहित राजा धृतराष्ट्र के पास ही रहे ॥

इस के पीछे रात्रि के समय उन पाण्डव और श्री कृष्ण को निवास स्थान पर जाने को विदा किया राजा की आज्ञा पाकर सब अपने २ स्थानों को गये कृष्ण जी अर्जुन के घर गये वहां न्याय के अनुसार पूजित सब अभिष्ट वस्तुओं से तृप्त

कृष्ण जी अर्जुन सहित सोये, प्रातःकाल संध्या आदिक कर्म कर पोशाक से अलंकृत वह दोनों धर्म राज के भवन में गये जिस में बड़े बली धर्मराज अपने मंत्रियों सहित बैठे थे वह दोनों महात्मा युधिष्ठर की आज्ञा से आसनों पर बैठ गये फिर महाराज युधिष्ठर ने वार्तालाप करनी आरम्भ की बात चीत में अर्जुन ने कहा कि हे राजा ! वसुदेव जी बहुत काल तक यहां स्थित रहे अब आप की आज्ञानुसार द्वारका पुरी को जाना चाहते हैं इस लिये आप आज्ञा दें ॥

युधिष्ठर जी ने उत्तर दिया कि हे कमल लोचन ! आप का कल्याण हो अब आप अपने पिता के देखने को अवश्य जायें, आप का जाना मुझ को स्वीकार है, आप ने मेरे मामा और देवी देवकी को बहुत काल से नहीं देखा आप जा कर उन से मिल कर मेरे वचन से उन का यथोचित पूजन करना और हम सब भाईयों को सदैव स्मरण रखना, हे निष्पाप ! आप ने उन सब को मिल कर फिर मेरे अश्वमेध यज्ञ में आना होगा ! हे मधुसूधन जी ! आप ही की कृपा से यह सब पृथ्वी विजय हुई है ॥

श्रीकृष्णजी ने कहा हे धर्मराज ! अब रत्न, सिद्धि, धन और संपूर्ण पृथ्वी आप ही की है और जो कोई वस्तु अर्थात् धन मेरे घर में है उस सब के स्वामी आप ही हैं । फिर श्रीकृष्ण जी ने विधिपूर्वक अपनी फूफी को प्रणाम किया फूफी से आशीर्वाद पा कर विदुर आदिक सब कौरवों से विदा हो कर और साथ ही अपनी बहिन सुभद्रा को युधिष्ठर और फूफी

की सलाह से रथ में बिठा राज्य के कार्य कर्त्ताओं से घिरे हुये नगर से बाहर निकले, इस के पीछे कृष्ण जी ने उन सब पाण्डव और विदुर को लौटा कर शीघ्र ही दारुक सारथी और सात्यकी से कहा कि घोड़ों को चलायमान करो तब पीछे कृष्ण जी सात्यकी सहित द्वारका पुरी को चले ॥

बारहवां अध्याय

—:o:—

श्रीकृष्णजी ने मार्ग में उतंक ऋषि को देखा, और उस को दण्डवत प्रणाम कर आशीर्वाद लिया और उनसे कुशल क्षेम पूछा कुशल क्षेम पूछने के पश्चात् उतंक ऋषि ने कृष्णजी से कहा कि जो कुच्छ तुम ने कौरवों पाण्डवों के पास जाकर किया वह सब कुच्छ मुझ से कहो। हे केशव! तुझ नाथ के द्वारा कौरवों के शान्त रूप होने पर राजा अपने देशों में सुख को पावेंगे, हे तात्! मेरा जो विचार सदैव तुम पर था वह तुम ने सफल कर दिया ॥

कृष्णजी ने उत्तर दिया कि मैंने पहिले कौरवों की सन्धि में उपाय किया जब उन्हों ने सन्धि न की तो फिर सब के सब मृत्यु के वश में हुये, हे महर्षि! आप को पहिले भी विदित है कि उन्होंने भीष्म, विदुर और मेरे कहने को स्वीकार नहीं किया इस हेतु से वह यमलोक को गये अब पांचों पाण्डव शेष रहे हैं श्रीकृष्णजी के इस वचन के कहने पर अत्यन्त

क्रोध युक्त उत्तंक ने कृष्णजी से कहा कि जिस कारण तुम ने कौरवों की रक्षा नहीं की इस हेतु से मैं तुम को शाप दूंगा। हे लक्ष्मी पति! तुझ छल युक्त कर्म वाले से त्यागे हुये वह कौरव नाश हो गये॥

वासुदेव जी बोले हे भृगुनन्दन! इस वृत्तांत को आप मूल सहित मुझ से सुनिये हे भार्गव! आप तपस्वी हो आप इस ब्रह्मज्ञान को सुन कर शाप को त्याग करोगे, मनुष्य थोड़े तप से मेरे विजय करने को समर्थ नहीं है, हे तपस्वी! तेरा ब्रह्मचर्य मैं लड़कपन से ही जानता हूं इस लिये दुःख से प्राप्त होने वाले तेरे तप का नाश करना नहीं चाहता॥

उत्तंक ने कहा हे दुष्टों के पीड़ा देने वाले! तुम सब वृत्तांत मूल सहित वर्णन करो उस को सुन कर तुझ को आशीर्वाद दूंगा या शाप दूंगा॥

कृष्ण जी बोले! तमोगुण, रजोगुण और सतोगुण इन तीनों का मुझ ही में आश्रय जानों और इसी प्रकार ग्यारह रुद्र और अष्ट वसुओं को भी मुझ से प्रकट जानो सब जीवधारी गन्धर्व, राक्षस और अप्सरयें मुझ में नियत हैं और मैं उन में नियत हूं यह सब सच जानो हे मुनि! आश्रमों में जो चार प्रकार के धर्म जाने गये उन को अथवा सब वेदोक्त कर्मों को मेरा रूप जानो हे ज्ञानी मैं ही सब में प्रवेश करता हूं और मैं ही विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र और उत्पत्ति प्रलय का कारण हूं, मनुष्य शरीर में वर्तमान मुझ से लाचार की सपान प्रार्थना किये गये परन्तु उन अचेतों ने मेरे वचनों को न माना फिर क्रोध युक्त

मैंने बड़ा भय पूछ्ट कर के भी उन को डराया और फिर ऐश्वर्यवान हो कर होनहार से भी वारंवार विदित कियां अधर्म से युक्त और काल धर्म से घिरे हुये वह सब युद्ध में धर्म से मारे गये और स्वर्ग को गये और पाण्डवों ने लोगों में यश और कीर्ति को पाया हे तपस्वी ! जो कुच्छ तुम ने मुझ से पूछा वह सब मैंने आप से कहा ॥

उत्तंक ने कहा हे जनार्दन ! मैं तुम को संसार कर्त्ता जानता हूं निश्चय करके यह आप की कृपा है इस में संदेह नहीं है, मेरा चित अत्यंत प्रसन्न आप के स्वरुप में नियत हुआ, मैं ने इस चित को शाप देने से लौटाया। फिर श्री कृष्ण जी ने उत्तंक को विश्वरूप दिखाया जो अर्जुन को दिखाया था। उत्तंक ने उस रुप को देख कर उन को नमस्कार किया और कहा कि हे देवता ! अब आप इस रुप को अंतर्द्धान करें मैं फिर आप के निजरुप को देखना चाहता हूं। फिर कृष्ण जी से उस ने वर मांगा कि जहां चाहूं वहीं मुझ को जल मिल जाये। कृष्ण जी ने कहा जल की इच्छा होने पर मैं ध्यान के योग्य हूं यह कह कर द्वारका को चले गये ॥

इस के पीछे एक दिन उत्तंक ऋषि तृषित होकर जल की इच्छा से मरुभूमि में घूमने लगे और श्री कृष्ण का ध्यान किया, इतने में मातंग नाम चांडाल को मरुभूमि में देखा जो कि नंगा और मलीन शरीर कुत्तों के समूहों से घिरा हुआ धनुषबाण धारण किये हुये था उत्तंक ने उस के चरणों के नीचे मूल से उत्पन्न जल को देखा हंसते हुये चाण्डाल ने उस

से कहा कि हे भार्गव मुझ से जल लो, उस के वचन सुन कर उतंक ने जल को श्रेष्ठ न मान कर न लिया और कठोर वचनों से कृष्णा की निन्दा करने लगा, मातंग ने वारंवार उस से कहा कि आप जल लेलें परन्तु मुनि ने तृषित होकर भी जल पान नहीं किया तब मातंग उस से डर पाकर कुत्तों समेत उसी स्थान में गुप्त होगया ॥

फिर उसी मार्ग से चक्र गदाधारी बड़े बुद्धिमान कृष्णा जी आपहुंचे उतंक उन से कहा हे प्रभु ! आप को उत्तम ब्राह्मणों के निमित्त मातंग स्रोत से उत्पन्न हुआ जल देना उचित नहीं है।

कृष्णाजी ने कहा कि यहां जैसे रूप से जल का देना उचित है वैसा ही जल तुझ को दिया तुम ने उस को नहीं जाना वज्र हाथ में रखने वाले इन्द्र को मैंने यहां भेजा था कि उतंक को जाकर अमृत दो उस ने मुझ से कहा कि मनुष्य अमर पदवी को नहीं पाता है उस को दूसरा वर दीजिये तब मैंने उसको अमृत देने को ही कहा, उस देवराज ने मुझ को प्रसन्न कर के कहा कि अच्छा यदि आप की यही इच्छा है तो मैं चांडाल के रूप में जाता हुं यदि वह अमृत लेलेगा तो देदूंगा वरन फिर मैं कभी भी न दूंगा वह इन्द्र इस प्रकार से नियम कर तेरे संमुख आया था और अमृत को देता था परन्तु तुम ने निषेध युक्त उत्तर दिया, हे मुनि! अब तुम्हारी जल की इच्छा पूर्ण होगी और जिन दिनों में तुझे जल की इच्छा होगी तब इस मरु भूमि में बादल जल से पूर्ण होंगे और वह बादल तुझे रस युक्त जल देंगे ॥

चौदहवां अध्याय

—:o—

जनमेजय ने पूछा कि हे वैशम्पायन जी! श्री कृष्ण जी ने उतंक को वर देकर फिर क्या किया, वैशम्पायन बोले कि कृष्ण जी उतंक को वर देकर सात्यकी के साथ द्वारका में पहुंचे, कृष्ण जी के पहुंचने पर द्वारका के सब वासी बड़े प्रसन्न हुये और उन सबों ने उन को पीरार्थि के समान घेर लिया फिर कृष्ण जीने उन सब के बीच बैठे हुये महाभारत के युद्ध का सारा वृत्तान्त वर्णन किया ॥

महाभारत के युद्ध का वृत्तान्त वर्णन करते हुये कृष्ण जी ने अभिमन्यु के मरने का वृत्तान्त न किया कि कहीं दौहित्र के मरने के सुन कर वासुदेव जी दुखित न हों, सुभद्रा ने युद्ध में मरने वाले पुत्र को जिस को कृष्ण जी ने नहीं कहा था पुछा कि हे कृष्ण! अभिमन्यु के मरने का भी वर्णन करो और इतना कह कर पृथ्वी पर गिर पड़ी, वासुदेव जी सुभद्रा को पृथ्वी पर गिरा देख आप भी दुखित हो मूर्छा पा पृथ्वी पर गिर पड़े फिर व्याकुल चित वासुदेव जी ने कहा कि हे शत्रुओं के मारने वाले! अब अपने भानजे के मरण का ठीक २ वृत्तांत मुझ से कहो वह युद्ध में कैसे शत्रुओं के हाथ से मारा गया, हे कमल लोचन! वह युद्ध से मुख मोड़ कर तो शत्रुओं के हाथ से नहीं मारा गया, हे गोविंद! वह मेरा दौहित्र सदैव पराक्रमियों में श्रेष्ठ द्रोणाचार्य, भीष्म और कर्ण से ईर्षा करता था ॥

तब अत्यंत दुःखी हो गोविंद जी ने इस प्रकार के अनेक रूपों से विलाप करने वाले अत्यन्त दुखित अपने पिता से अभिमन्यु के मरने का सब वृत्तान्त विस्तार पूर्वक कह सुनाया॥

कृष्णजी ने युद्ध का वृत्तांत सुना कर कहा कि अभिमन्यु अवश्य स्वर्ग को प्राप्त करेगा, वसुदेवजी ने कृष्णजी के इन वचनों को सुन कर शोक को त्याग उस का उत्तम श्राद्ध किया। श्राद्धादि कर्म कराके वसुदेवजी ने बहुत से ब्राह्मणों को भोजन कराये और बहुतसी वस्तुयें दान में दीं तब ब्राह्मणों ने आशीर्वाद दिये ॥

हे राजेंद्र! इसी प्रकार पाण्डवों ने हस्तिनापुर में शांति को नहीं पाया। पति के शोक से पीड़ावान उत्तरा ने बहुत दिन तक भोजन नहीं खाया, वह बड़ा दुःख का स्थान हुआ और उसका गर्भ भी अविदित सा हुआ। इस के पीछे बड़े तेजस्वी व्यासजी दिव्य नेत्रों से जान कर वहां आकर कुंती और उत्तरा से मिल कर कहने लगे तुम को यह शोक दूर करना चाहिये हे यशस्विनी! तेरा पुत्र बड़ा तेजस्वी होगा और पाण्डवों के पीछे संसार की रक्षा करेगा तुम शोक को दूर करो॥

तब धर्मात्मा पिता से इस प्रकार समझाये हुये सब प्रसन्न मुख हुये, उसके पीछे व्यासदेवजी ने अश्वमेध यज्ञ करने के लिये धर्म पुत्र युधिष्ठर को आज्ञा दी और आप वहीं अन्तर्धान हो गये, हे तात! बुद्धिमान युधिष्ठर ने व्यासजी के वचन को सुन कर धन लाने के लिये पर्वत पर जाने की इच्छा की॥

पंदरवां अध्याय

—:o:—

इस के पीछे पाण्डवों ने रविवार के दिन धन लाने की इच्छा से तैयारी की और पीछे राजा धृतराष्ट्र के पास युयुत्सु को छोड़ आप सेना को साथ ले चल पड़े, युधिष्ठिर ने मार्ग में अत्यन्त प्रसन्न चित्त मनुष्यों के विजय के आशीर्वाद लिये ॥

हे राजा! उसी प्रकार जो सेना के लोग राजा के आगे पीछे थे उन के हलहला शब्द से आकाश गूंज उठता था तब युधिष्ठिर सरोवर, नदी वन और उपवनों को व्यतीत कर उस पर्वत पर पहुंचे, वहां पहुंच कर सेना सहित राजा ने धरातल स्थान पर निवास किया, फिर ब्राह्मण लोगों से कहा कि हे उत्तम ब्राह्मण लोगों! इस कर्म के विषय में जैसा आप की बुद्धि में शुभ दिन ठहरे उस में जैसा आप कहें वैसा ही हम करें हे ऋषियों! इस को ऐसा पूर्वक विचार निश्चय करो जिसे बहुत शीघ्र करना योग्य हो ॥

ब्राह्मणों ने उत्तर दिया कि यही पवित्र दिन है आप अपने अत्युत्तम कर्म में उपाय करें, अब यहां केवल जल पान ही करने से निवास करें और आप भी इसी प्रकार से स्थिति करें उन उत्तम ब्राह्मणों के वचन को सुन कर रात्रि को विश्राम किया और प्रातः काल उठ कर युधिष्ठिर को ब्राह्मणों ने कहा हे राजा! प्रथम उन महात्मा शिवजी की भेटें कीजिये भेटें देने के पीछे अपने प्रयोजन में उपाये करें ॥

युधिष्ठर ने उन ब्राह्मणों के कहने से वैसा ही किया और फिर वहां चला, वहां जाकर उस ने मन्त्र से पवित्र पुष्पों को लेकर मोदक, तस्मै और मांसों से बलिप्रदान किया फिर शिवजी की पूजा कर व्यास जी को आगे कर के खजाने के पास गया और प्रसन्न हो कर युधिष्ठर ने उस धन को खुदवा कर संदूकों में भरवाया। वह धन इतना अधिक था कि कई घोड़े, हाथी और ऊटों के ऊपर उस को लदवाया गया। पाण्डव युधिष्ठर इन सब सवारियों पर धन को भर कर और महादेव जी की पूजा कर हस्तिनापुर की ओर चला फिर व्यास जी से आज्ञा लेकर युधिष्ठर प्रति दिन दो कोश चला और धन के भार से वह सेना बड़ी कठिनता से पाण्डवों को प्रसन्न करती हुई राजधानी की ओर चली॥

सोलवां अध्याय

—:o:—

वैशंपायन बोले कि उसी समय वासुदेव जी वृष्णियों सहित हस्तिना पुर में पहुंचे। राजा धृतराष्ट्र और विदुर जी ने उन का अच्छी प्रकार से सत्कार किया, हे जनमेजय वहां श्री कृष्ण जी के निवास करने पर तेरे पिता परीक्षित ने जन्म लिया अश्वत्थामा के छोड़े हुये ब्रह्म अस्त्र से पीड़ा वान वह राजा परीक्षित मृतक और अचेष्ट हो कर प्रसन्नता और शोक को बढ़ाने वाला हुआ वहां प्रसन्न मनुष्यों के सिंहनाद

से उत्पन्न शब्द सब दिशाओं में प्रवेश करके फिर बन्द हो गया ॥

तब इन्द्रिय और मन से व्याकुल कृष्ण जी शीघ्र ही सात्यकी को साथ ले कर स्त्रियों के महल में पहुंचे, वहां वारं वार वासुदेव जी ने पुकारती और दौड़ती हुई अपनी फुफी कुन्ती को देखा और पीछे की ओर से यशवंती द्रौपदी, सुभद्रा और बंधवों की स्त्रियों को करुणा पूर्वक विलाप करते हुये देखा, कुन्ती ने श्रीकृष्ण को पा कर अश्रुपातों से युक्त गद गद वाणी से कहा हे महा बाहु ! तुम से वसुदेव की सुपुत्रवती है, तुम ही हमारी गति और प्रतिष्ठा हो यह वंश तुम्हारे ही आधीन है। हे प्रभु ! जो यह तेरे भानजे का पुत्र है वह अश्वत्थामा के अस्त्र से मृतक उत्पन्न हुआ है, हे केशव ! उस को जीव दान दो ॥

हे प्रभु यदुनन्दन ! तुम ने अश्वत्थामा के अस्त्र फैंकने के समय यह प्रतिज्ञा की थी कि मैं मृतक उत्पन्न होने वाले बालक को सजीव करूंगा। हे पुरुषोत्तम ! सो तुम इस को देखो। हे केशव ! इस समय हम सब की रक्षा करो हे मधुसूदन ! हम सब तुम को प्रणाम करके प्रार्थना करते हैं कि आप इस कुल की रक्षा के निमित्त उत्तम कल्याण करो, बड़े नेत्र वाली कुन्ती श्रीकृष्ण से इस प्रकार की बातें कह कर और दुःख से पीड़ित अन्य २ स्त्रियां भी भुजाओं को उठा कर पृथ्वी पर गिर पड़ीं, अश्रुओं से व्याकुल नेत्र वाली उन स्त्रियों ने कहा कि वासुदेव जी के भानजे का पुत्र मृतक

उत्पन्न हुआ। इस वचन के कहने पर श्रीकृष्णजी ने पृथ्वी पर पड़ी हुई कुंती को उठा कर ढारस दिलाया॥

तब कुंती के उठने पर सुभद्रा भाई को देख कर दुःख से पीड़ावान होकर पुकारी हे पुंडरीकाक्ष, ! तुम बुद्धिमान अर्जुन के पुत्र को देखो जो कि कौरवों के नाश होने पर बिना अवस्था के नाश हो गया। अश्वत्थामा ने एक सींक भीमसेन के निमित्त उठाई वह उत्तरा, अर्जुन और मुझ पर गिरी है केशव ! वही सींक मुझ विदीर्ण चित के हृदय में नियत है जो मैं उस अजेय अभिमन्यु को उस के पुत्र समेत नहीं देखती हूं॥

युधिष्ठर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेव इस अभिमन्यु के मृतक हुये पुत्र को सुन कर क्या कहेंगे॥

हे श्री कृष्ण ! पाण्डवों का अश्वत्थामा ने नाश कर दिया हाय अभिमन्यु पांचों भाईयों को कैसा प्यारा था उस को पांडव लोग अश्वत्थामा के अस्त्र से विजय किया सुन कर क्या कहेंगे हे केशव ! अभिमन्यु के मृतक पुत्र उत्पन्न होने के सिवाय बढ़ कर कौनसा दुःख होगा, हे अजेय वीर ! तुम इस मृतक पुत्र को जो कि तेरे समान नेत्र रखने वाला है ऐसे सजीव करा जैसे इन्द्र वर्षा करके खेती को सजीव करता है, हे मधुसूदन ! तुम चाहो तो इन मरे हूये तीनों लोकों को भी जिला सकते हो फिर अपने भानजे के प्यारे मरे हूये पुत्र को कैसे न जिलाओगे। हे श्री कृष्ण ! मैं तेरे प्रभाव को जानती हूं इस हेतु से मैं प्रार्थना करती हूं कि यह तुम्हारा पाण्डवों के ऊपर

बड़ा अनुग्रह होगा, मैं तेरी छोटी बहिन हूं तेरे पास शरण में आई हूं हे महाबाहू इस को जान कर करुणा कर दया करो ॥

सतारहवां अध्याय

—:o:—

दुःख से मूर्छावान इस प्रकार से कहे हुये श्री कृष्ण ने उन सब स्त्री पुरुषों को प्रसन्न करते हुये बड़े उच्च स्वर से कहा कि ऐसा ही होय, तब उस पुरुषोत्तम ने इस वचन से उन सब को प्रसन्न किया, इस के पीछे शीघ्र ही श्री कृष्ण उत्तरा के उस महल में गये जहां बड़ी २ वृद्ध स्त्रियां सेवा के लिये नियत थीं और चारों ओर रक्खे हुये अग्नि और निर्मल अस्त्रों से रक्षित चारों ओर को बड़े २ विद्वान वैद्य चिकित्सों से व्याप्त थे फिर उस तेजस्वी ने विधि के अनुसार सावधान मनुष्यों से नियत की हुई राक्षसों के नाश करने वाली सब द्रव्यों को भी देखा ॥

वैशम्पायन जी राजा जनमेजय से कहते हैं कि हे कौरवों में श्रेष्ठ ! आप के पिता का जन्म इस प्रकार का देख कर श्री कृष्ण जी प्रसन्न हुये और बहुत श्रेष्ठ है बहुत ही श्रेष्ठ है यह वचन कहा तब अत्यंत प्रसन्न मुख श्री कृष्ण के इस प्रकार कहने पर द्रौपदी ने शीघ्र जाकर उत्तरा से कहा कि हे कल्याणिनी यह प्राचीन ऋषि बुद्धि से परे स्वरूप वाला अजेय श्री कृष्ण तेरा श्वसुर तेरे सन्मुख आता है ॥

देवता के समान श्री कृष्ण जी के दर्शन करने की

अभिलाषा रखने वाली वह देवी नेत्रों में अश्रु भरे होने के कारण गुप्त अर्थ वाले वचन और आंसुओं को रोक कर वस्त्र से अपने शरीर को ढक मृत्य पुत्र को गोद मे रख कर बैठ गई और उन्हे आते देख इस प्रकार विलाप करने लगी, हे दुष्ट संहारी ! तुम इस बालक से रहित अभिमन्यु को और मुझ को सदैव मृतक देखो हे मधूसूदन ! मैं तुम को शिर से प्रणाम पूर्वक प्रसन्न करती हूं अस्त्र से भस्म हूये मेरे इस पुत्र को सजीव करो ॥

हे पुण्डरीकाक्ष जो मैंने धर्मराज, भीमसेन और आप से कोई वचन कहा हो तो हे प्रभु ! यह वज्र मुझ को मार डाले मैं ही मर जाऊं परन्तु यह बालक ऐसी दशा वाला न हो, अश्वत्थामा इस बालक के मारने से क्या फल पावेगा, हे शत्रु हन्ता ! यदि यह बालक न जियेगा तो मैं अपने प्राणों को त्याग दूंगी, इस बालक में मेरे बहुत से मनोरथ थे वह सब अश्वत्थामा ने नाश किये हैं माधव जी ! मेरी सलाह थी कि मरी गोद से तुम को दण्डवत करुंगी हाय ! वह भी विपरीत हुआ, हे मधुसूदन ! निश्चय करके वह चपल नेत्र वाला आप का बड़ा प्यारा था तुम उस के पुत्र को मरा हुआ देखो, हे केशव जी ! युद्ध के मुख पर अभिमन्यु के मरते समय मैंने उस से यह प्रतिज्ञा की थी कि मैं थोड़े ही काल पीच्छे तेरे पास आऊंगी, हे कृष्ण जी ! पुत्र को प्यारा जानने वाली निर्दयी मैं ने उस कर्म को नहीं किया अब वहां जाने वाली मुझ को अभिमन्यु क्या कहेगा ॥

अठारवां अध्याय

—:०:—

वैशम्पायनजी बोले कि वह पुत्र को चाहने वाली उत्तरा इस प्रकार विलाप करती हुई पृथ्वी पर गिर पड़ी। उस को इस प्रकार गिरा देख कुंती आदि सब स्त्रियां पुकारीं फिर दो मुहूर्त तक महल में बड़ा हाहाकार होता रहा, दो घड़ी तक उत्तरा अचेत रही फिर सचेत हो पुत्र को बगल में लेकर कहने लगी हे धर्मज्ञ के पुत्र! तुम अधर्म को नहीं जानते हो जो श्रीकृष्ण को दंडवत नहीं करते हो हे पुत्र! तुम जाकर अपने पिता से यह वचन कहो कि हे वीर! किसी दशा में भी बिना समय के जीवों का मरना असम्भव है जो मैं अब यहां तुझ पुत्र और अपने पति से रहित होकर अकुशलता और निर्दयता को पूर्ण होकर मरने के योग्य होकर भी जीवती हूं अब मैं धर्मराज से आज्ञा लेकर विष को खाऊंगी या अग्नि में प्रवेश करूं गी हे तात! यह मेरा मरना बड़ा ही कठिन है जो मुझ पुत्र और पति से रहित का हृदय खंड २ नहीं होता,हे पुत्र! उठो इस दुःखी पीड़ावान आपत्ति युक्त शोक सागर में डूबी हुई परदादी को देखो और लोकनाथ आनन्द स्वरूप का मुख जो कि कमल दल के समान चपल नेत्र रखने वाला है उस को देखो, इस के पीछे सब स्त्रियों ने विलाप करती हुई उत्तरा को पृथ्वी पर से उठाया॥

फिर राजा विराट की पुत्री उत्तरा ने धैर्य से उठ कर हाथ

जोड़ कर श्री कृष्ण जी को पृथ्वी पर पड़ कर दण्डवत की ॥

कृष्ण जी ने उस के बड़े विलाप को सुन कर आचमन कर उस ब्रह्म अस्त्र को दूर किया और उस के जीवन की प्रतिज्ञा की और सब को सुना कर कहा कि हे उत्तरा! मैं मिथ्या नहीं कहता हूं यह सत्य ही होगा मैं इस को सब जीवों के देखते हुये सजीव करता हूं मैंने जैसे पूर्व स्वतंत्र दशाओं में भी मिथ्या नहीं कहा है और कभी युद्ध से मुख भी नहीं मोड़ा है इसी प्रकार यह सजीव हो जाये, हे भरतर्षभ! वासुदेव जी के इस वचन के कहते ही वह बालक चैतन्य हो कर धीरे २ चेष्टा करने लगा ॥

फिर चारों तरफ से यही शब्द हुआ कि केशव जी धन्य हैं धन्य हैं। तब वह प्रकाश मान अस्त्र भी ब्रह्मा जी के पास गया और वह बालक पराक्रम और प्रसन्नता से चेष्टा करने लगा इस के पीछे वह सब स्त्रियें बड़ी प्रसन्न हुईं और कृष्ण जी की प्रशंसा करने लगीं, फिर प्रसन्न चित्त उत्तरा ने अपने पुत्र सहित उठ कर श्री कृष्ण जी को दण्डवत की तब प्रसन्न हो कृष्ण जी ने उत्तरा को बहुत से रत्न दिये और उस बालक का नाम परीक्षित नियत किया ॥

हे जनमेजय! जब तेरा पिता एक महीने का हुआ तब पांडव बहुत से रत्नों को ले कर आये, सब वृष्णी लोग उन समीप आने वाले पांडवों का आना सुन कर नगर से बाहर निकले हस्तिनापुर को बड़ी अच्छी प्रकार से सजाया गया और हर एक मनुष्य प्रसन्न २ दृष्ट पड़ने लगा ॥

उन्नीसवां अध्याय

—:०:—

कृष्ण जी नाते दारों को साथ ले पाण्डवों को लेने के लिये नगर से बाहिर चले और उन के दर्शन करने की इच्छा से न्याय के अनुसार आगे चल के लेने को गये फिर वह सब मिल कर एक साथ ही हस्तिना पुर में आये और मित्रों सहित धनों को आगे करके अपने पुर में प्रविष्ट हुये और राजा धृतराष्ट्र आदि सब बड़ों से मिले ॥

थोड़े दिनों के पीछे बड़े तेजस्वी व्यास जी वहां आये तब सब पाण्डवों ने वृष्णी और अंधकों समेत उन का पूजन किया फिर युधिष्ठर ने बहुत सी कथाओं को अच्छी रीति से कह कर व्यास जी से कहा कि यह जो रत्न लाये गये हैं सब आप ही की कृपा से हैं, हे मुनि! मैं उन रत्नादिकों को अश्वमेध यज्ञ में व्यय करना चाहता हूं और आप से उस की आज्ञा चाहता हूं ॥

व्यास जी बोले तुम अवश्य यज्ञ करो मैं तुम को आज्ञा देता हूं तुम उस यज्ञ से पूजन करके पापों से छुट जाओगे ॥

व्यास जी के इस वचन को सुन कर युधिष्ठर ने अश्व मेध यज्ञ करने का विचार किया और व्यास जी को जतला कर कृष्ण जी से कहा हे पुरुषोत्तम! जो मैं आप से कहूं इस स्थान पर आप उस कार्य को करो, हे केशव! हम आप के प्रभाव से इकट्ठे भोगों को भोगते हैं, आप ही हमारे परम गुरू हो आप के यज्ञ कराने से मैं पापों से मुक्त होजाऊंगा,

आप ही यज्ञ हो, अविनाशी हो, सर्वज्ञ हो और आप ही सब जीवधारियों के लय स्थान हो यह मेरी दृढ़ बुद्धि है ॥

वासुदेव जी ने कहा हे धर्म राज ! तुम ही ऐसा कहने के योग्य हो. तुम सब जीवों की गति हो यह मेरी दृढ़ बुद्धि है अब तुम कौरवों के धर्म से विराजमान हो। हे राजा ! हम तुम्हारे आज्ञाकारी हैं तुम हमारे राजा और परम गुरु हो, मेरी आज्ञा से तुम पूजन करो यह यज्ञ तुम से प्राप्त होने के योग्य हो, हे भारत वंशी ! आप जहां चाहें तहां हम को कार्य में प्रवृत्त करो हे युधिष्ठर ! मैं तुम से प्रतिज्ञा करता हूं मैं तुम्हारी सब आज्ञाओं को पूरा करूंगा ॥

युधिष्ठर ने श्री कृष्ण जी के इन वचनों को सुन कर कहा कि-जब आप अश्वमेध यज्ञ का समय सिद्धान्त से जानते हो तब मुझ को दीक्षित करो मेरा यज्ञ आप के आधीन है ॥

व्यासजी बोले हे युधिष्ठर ! मैं, पैल और याज्ञवल्क्य तीनों मिल कर इस यज्ञ को करेंगे, जैसी २ विधि कि समय के अनुसार है चैत्र की पूर्णमासी के दिन तेरी दीक्षा होगी हे धर्मराज ! तुम यज्ञ के निमित सब सामग्री इकट्ठी करो। अश्व विद्या के ज्ञाता सूत और उस विद्या के जानने वाले ब्राह्मण भी तेरी यज्ञ सिद्धि के निमित उस पवित्र घोड़े की परीक्षा करेंगे, शास्त्र के अनुसार उस घोड़े को छोड़, फिर वह घोड़ा तेरी प्रकाशमान शुभ कीर्ति को दिखाता सारी पृथ्वी पर घुमेगा फिर युधिष्ठर ने व्यासजी के कथन अनुसार सब सामग्री एकत्र की और उन से प्रार्थना की ॥

व्यासजी बोले हे धर्म पुत्र ! इस समय और योग के अनुसार तेरे दीक्षित करने में तैय्यार हैं खड्ग, लकड़ी, कूर्च अर्थात् आसन के निमित्त पूर्ण कुशा और जो अन्य प्रकार की वस्तु हैं वह भी स्वर्णमयी होनी चाहियें और अब विधि पूर्वक घोड़ा भी पृथ्वी पर छोड़ दो ॥

युधिष्ठर बोले हे तपस्वी ! जिस प्रकार यह छोड़ा हुआ घोड़ा इच्छा अनुसार इस पृथ्वी पर घूमेगा वह तन्तर विधान कीजिये और उस घोड़े की कौन रक्षा करेगा यह सब कहैं ॥

व्यास जी ने कहा कि सब धनुर्धारियों में श्रेष्ठ अर्जुन उस के पीच्छे जायेगा और वही उस की रक्षा करेगा और उसे घुमावेगा और बड़े पराक्रमी भीमसेन और नकुल देश की रक्षा में समर्थ हैं और सहदेव घर के कामों का प्रबंध करेगा इस प्रकार अर्जुन को समझा बुझा कर घोड़े के पीछे भेज दिया ॥

बीसवां अध्याय

—:o:—

इस के पीछे दीक्षा वर्तमान होने के समय उन बड़े ऋत्विजों ने विधि के अनुसार राजा को यज्ञ के निमित्त दीक्षित किया और कंठा रखने वाला दीक्षित धर्मराज देदीप्य अग्नि के समान शोभायमान हुआ ॥

उधर पाण्डवों के तेज से विजय किया हुआ घोड़ा पृथ्वी पर किसी देश में चला। हे जनमेजय! वहां अर्जुन के जो युद्ध हुये उन विचित्र और बड़े युद्धों को तुझ से कहता हूं, प्रथम उत्तर की ओर वह घोड़ा चला और महारथी अर्जुन भी उस के पीछे चला। वहां वह असंख्य क्षत्रिय जिन के बांधव पूर्व युद्ध में मारे गये थे युद्ध करने लगे किरात, यवन आदिक बहुत धनुष धारी और अनेक प्रकार के अन्य २ म्लेच्छ जो कि पूर्व युद्ध में विजय किये गये थे और युद्ध दुर्मद अत्यन्त प्रसन्न चित्त सवारी रखने वाले बहुत से आये राजा लोग भी पाण्डव अर्जुन के सन्मुख आये। हे राजा! इस प्रकार जहां तहां अर्जुन का युद्ध बहुत देश के राजाओं से हुआ॥

वैशम्पायन बोले कि पाण्डवों के हाथ से जो त्रिगर्तदेशी मारे गये थे उन के पुत्र पौत्रों से भी अर्जुन का युद्ध हुआ उन वीरों ने देश की हद पर आने वाले यज्ञ के घोड़े को चारों ओर से रोक लिया। अर्जुन ने उन के कर्म करने की इच्छा को विचार कर मधुर वाणी के साथ उन वीरों को समझाया परन्तु तमोगुण, रजोगुण से आच्छादित बुद्धि वाले उन सब ने उस की शिक्षा को तिरस्कार कर उस को बाणों से घायल किया, तब अर्जुन ने उन को रोका, फिर हंसते हुये अर्जुन ने उन से कहा हे धर्म के न जानने वालो! लौट जाओ जीवन ही अच्छा है क्योंकि मुझे चलते समय धर्मराज ने कहा था कि जिन के बांधव मारे गये हैं उन राजाओं को तू

मत मारियो इसलिये मैं तुम को मारना नहीं चाहता ॥

अर्जुन के इस बचन को सुन कर वह गर्जने लगे फिर अर्जुन अपने बाण जालों के द्वारा त्रिगर्त के सूर्य वर्मा नाम राजा को विजय कर हंसने लगा। फिर वह त्रिगर्त देशी शब्दों को करते हुए अर्जुन के सन्मुख दौड़े, सूर्य वर्मा ने टेढ़े पर्व वाले सौ बाण अर्जुन पर छोड़े फिर अर्जुन ने धनुष की प्रत्यंचा से बहुत से बाणों से उनके बाणों को काटा तब वह पृथ्वी पर गिर पड़े फिर उन का आपस में घोर युद्ध हुआ ॥

इस के पीछे त्रिगर्त देशी शूरवीरों ने उस काल रूप अर्जुन को चारों ओर से घेर लिया और बाणों की वर्षा करने लगे। उस समय अर्जुन ने इन्द्र वज्र के समान बहुत से लोहे के बाणों से उन के अठारह शूरवीरों को बड़ी शीघ्रता से मारा, बाकी अर्जुन के बाणों से पीड़ामान टूटे चित्त वह सब त्रिगर्त-देशी दिशाओं को भागे ॥

तब बहुत से राजे अर्जुन के पास आकर कहने लगे कि हम सब तेरे आज्ञाकारी हैं और तेरी आधीनता में नियत हैं, हे अर्जुन! हम झुके हुये आज्ञाकारीयों को आज्ञा दो हम तेरे सब अभिष्टों को करेंगे, तब अर्जुन ने उन से कहा हे राजा लोगो! तुम अपने जीवन की रक्षा करो और मेरी आज्ञा को मानो ॥

इक्कीसवां अध्याय

—:०:—

इस के पीछे वह घोड़ा प्राग्ज्योतिष देश में पहुंच कर घूमा वहां भगदत्त का पुत्र जोकि युद्ध में बड़ा साहसी था, घोड़े को देख कर युद्ध करने के लिये नगर से बाहर निकल कर घोड़े को पकड़ कर नगर की ओर ले चला, अर्जुन उसे घोड़े को ले जाते देख धनुष को टंकार शीघ्रता से उस के सन्मुख गया, गांडीव धनुष से छूटे हुये बाणों से मोहित वह राजा घोड़े को छोड़ कर अपने नगर में प्रवेश कर कवच को धारण कर हाथी पर चढ़ कर अर्जुन के सन्मुख आया, आते ही उस ने अपने हाथी को अर्जुन के ऊपर पेला वह हाथी बादल की समान बढ़ता हुआ दिखाई पड़ा ॥

अर्जुन ने उस आते हुये हाथी को देख कर उस से युद्ध किया तब क्रोध युक्त वज्रदत्त ने टीड़ियों के समान तोमरों को अर्जुन पर बड़ी शीघ्रता से छोड़ा, तब अर्जुन ने गांडीव से उत्पन्न बाणों से मार्ग में ही उस के बाणों को काट डाला फिर भगदत्त के लड़के ने इस प्रकार कटे हुये उन तोमरों को देख कर शीघ्र ही पार होने वाले बाणों को अर्जुन पर चलाया अर्जुन ने क्रोध युक्त होकर सीधे चलने वाले बाणों को उस पर छोड़ा उन बाणों से घायल हो वज्रदत्त पृथ्वी पर गिर पड़ा परन्तु स्मरण शक्ति और चित्त की सचेतता ने उस को त्याग नहीं किया ॥

इस के पीछे सावधान हो वज्रदत्त ने अपने हाथी को

फिर अर्जुन पर भेजा। अर्जुन ने क्रोध युक्त हो कर विषैले सरपों के समान बाणों को उस पर छोड़ा जिस से वह हाथी रुधिर को गिराता हुआ भाग गया॥

इस प्रकार अर्जुन का वज्रदत्त के साथ तीन दिन तक युद्ध होता रहा। चौथे दिन वज्र दत्त बड़े शब्द से हंसकर अर्जुन से कहने लगा कि अब तु मुझ से जीता नहीं बचेगा मैं तुझ को मार कर अपने पिता का बदला लूंगा, इस प्रकार के बचन कह कर उस ने अपने हाथी को अर्जुन पर पेला, हाथी उछलता हुआ अर्जुन की ओर दौड़ा और सूंड से छोड़े हुये जलकणों से अर्जुन को भिगों दिया पराक्रमी अर्जुन उस आते हुये हाथी को देख कर अपने गांडीव के आश्रित हो कर कम्पायमान नहीं हुआ॥

इस के पीछे क्रोध भरे अर्जुन ने बाण जालों से उस हाथी को रोका, अर्जुन से रोका हुआ वह हाथी बाणों से विदीर्ण अंग हुआ, फिर क्रोध से मूर्छावान राजा वज्र दत्त ने उस रोके हुये हाथी को देख कर अर्जुन पर तीक्षण बाणों को छोड़ा महाबाहु अर्जुन ने भी शत्रुओं के नाश करने वाले बाणों से उन बाणों को हटाया, इस के पीछे क्रोध युक्त वज्र दत्त ने पहाड़ के समान हाथी को भेजा, हाथी को आते देख कर अर्जुन ने अग्नि के समान बाणों से उस को रोका और घायल हो कर वह हाथी पृथ्वी पर गिर पड़ा॥

वज्र दत्त के उस हाथी के गिरने पर अर्जुन ने उस पृथ्वी पर वर्तमान राजा से कहा कि तुम को डरना न चाहिये, युधिष्ठर

ने मुझे चलते समय कहा था कि तुम ने किसी दशा में भी राजा लोगों को न मारना अथवा सब राजाओं को उन के पितृ बांधवों सहित समझाना अब युधिष्ठर का अश्वमेध यज्ञ आप लोगों से सुशोभित होगा। हे वज्र दत्त! भाई के इन वचनों को स्मरण कर तुझ को नहीं मारता हूं उठ तुझ को भय नहीं है कुशल पूर्वक जा चैत्र महीने की पूर्णमासी को युधिष्ठर का यज्ञ होगा उस समय आप लोगों ने अवश्य आना, राजा वज्र दत्त ने कहा कि ऐसा ही होगा ॥

——

बाईसवां अध्याय

—:०:—

वैशम्पायन बोले हे जनमेजय! इस के पीछे अर्जुन का युद्ध उन सिंघ देशीयों के साथ हुआ जोकि मरने से शेष बचे थे यह राजा लोग अर्जुन को देश में आते देख कर उस के सन्मुख गये और उस घोड़े को पकड़ कर ले आये और अर्जुन को चारों ओर से घेर लिया और अपने नाम बता २ कर उन राजाओं ने अर्जुन पर बाण वर्षा की और अच्छे प्रकार से घायल किया फिर हजारों रथों और घोड़ों में घेर कर बड़े प्रसन्न हुये, सिन्धू के राजा जयद्रथ के उस मरने को स्मरण करते उन सब वीरों ने बादल की वर्षा के समान बाणों की वर्षा की ॥

उन बाणों से ढका हुआ अर्जुन ऐसे शोभायमान हुआ जैसे बादलों के मध्य में सूर्य शोभित होता है, फिर अर्जुन के

पीड़ामान होने पर सब त्रिलोकी हाहा कार रूप हुई सूर्य की प्रभा जाती रही इस के अनन्तर रोमांच को खड़ा करने वाला वायु चला और एक ही समय में राहु ने सूर्य और चन्द्रमा को ग्रसा उल्का सूर्य को घायल करके चारों ओर को फैल गई इसी हेतु से कैलाश पर्वत बड़ा कम्पायमान हुआ, भयभीत और दुख शोक से युक्त सप्त ऋषि और देव ऋषियों ने भी अत्यन्त उष्ण श्वासाओं को छोड़ा तदनन्तर उल्का चन्द्र मंडल को चीर कर आकाश से गिरी और दिशा भी विपरीत रूप होगई ॥

हे भरतर्षभ ! उस बाणों की वर्षा से बीर अर्जुन के ढक जाने पर यह आश्चर्य सा हुआ उस बाण जालु से सब ओर को ढक जाने वाले उस अर्जुन के मोह से गांडीव धनुष गिर पड़ा और हाथ से हस्तत्राण भी गिर पड़ा तब सिंधुदेशयों ने उस अचेत महारथी पर बाण जालों को छोड़ा, इस के पीछे चित्त से भयभीत देवता अर्जुन को अचेत जान कर उस की शांति करने वाले हुये फिर सब ऋषियों ने अर्जुन की पुर्ण विजय का जप किया तब अर्जुन युद्ध भूमि में पर्वत के समान खड़ा हुआ और शीघ्र ही अपने धनुष को खैंचा उस का भारी शब्द वारंवार यन्त्र के समान हुआ, फिर अर्जुन ने धनुष से बाणों की वर्षा को शत्रुओं के ऊपर बरसाया जिस से सब लोग पीड़ित हो कर भागे और बहुतों ने शोक भी किया फिर वह पराक्रमी अर्जुन अलातचक्र के समान उन के चारों ओर घूमा और सब को बाणों के जालों से ढक दिया ॥

तेईसवां अध्याय

—:o:—

इस के पीछे अर्जुन युद्ध के लिये फिर नियत हुआ और सिन्धु देशी भी आकर नियत होगये और बड़े क्रोधित होकर बाणों की वर्षा करने लगे, अर्जुन ने हंस कर उन को कहा कि बड़ी सामर्थ्य से युद्ध करो, मुझे विजय करने का उपाय करो, सब कर्मों को करो तुम को बड़ा भय उत्पन्न हुआ है मैं इस बाण बंधन को हटा कर सब से युद्ध करूंगा और तुम्हारे अभिमानों को दूर करूंगा यह बातें कह कर उस को फिर युधिष्ठर के वचन स्मरण हो गये कि तुम किसी राजा को जान से न मारना ॥

ऐसी बातों को सोच कर फिर इस ने सिंधुदेशियों से कहा कि मैं तुम्हारी बुद्धि को कहता हूं मैं तुम सब को नहीं मारूंगा और युद्ध में पराजित हो कर जो पुरुष कहेगा कि मैं तेरा हूं उस को भी नहीं मारूंगा इस मेरे वचन को सुन कर अपनी कुशल विचारो उस के विपरीत कभी होने पर तुम आप चित्त फंस कर मुझ से पीड़ित होंगे यह वचन कह कर अर्जुन क्रोध भरे सिन्धु देशियों के साथ युद्ध करने लगा, तब उन्हों ने टेढ़े पर्व वाले एक लाख बाण अर्जुन पर छोड़े परन्तु अर्जुन ने उन सब को मार्ग में ही निष्फल कर दिया और बाणों से प्रत्येक को छेदने लगा ॥

इस के पीछे सिन्धु देशी राजाओं ने मरे हुवे जयद्रथ को

स्मरण करके फिर प्रास और शक्तियों को अर्जुन पर छोड़ा परन्तु अर्जुन उन को भी काट कर बड़े शब्द से गर्जा उसी प्रकार उन आते हुये शूर वीरों के शिरों को भी टेढ़े पर्व वाले भल्लों से काट गिराया फिर भी उन भागते, सन्मुख दौड़ते और लौटते शूर वीरों के शब्द पूर्ण समुद्र के समान हुये, तब बड़े तेजस्वी अर्जुन से घायल उन लोगों ने पराक्रम और प्रसन्नता के समान अर्जुन से युद्ध किया और बहुत लोग युद्ध भूमि में अर्जुन के बाणों से मारे गये ॥

तब धृतराष्ट्र की दुःशला नाम पुत्री उन सब को परिश्रम से पीड़ावान जानकर अपने पौत्र सुरत के पुत्र वीर बालक को ले कर रथ की सवारी से चली और सब जीवों की शांति के अर्थ पांडव अर्जुन के पास जाकर बड़े शब्द से रोने लगी प्रभु अर्जुन भी उस को देख कर धनुष को रख कर विधि पूर्वक अपनी बहिन से मिला और कहने लगा कि क्या करूं ॥

दुःशला बोली हे अर्जुन ! तेरे भानजे का पुत्र बालक तुझ को नमस्कार करता है तुम इस को देखो ॥

इस प्रकार कहे हुये अर्जुन ने उस के पिता का वृत्तान्त पूछा कि वह कहां है । दुःशला ने कहा कि पिता के शोक से दुखी और अचेतता से पीड़ावान इस का पिता वीर जैसे मृत्यु वश हुआ उस को तुम मुझ से सुनो, प्रथम युद्ध में तेरे हाथ से मरा हुआ अपने पिता को सुन कर और तुझ को यज्ञ के घोड़े के पीछे आया हुआ सुन कर पिता के शोक रूपी रोग से पीड़ित होकर उस ने अपने प्राणों को त्याग दिया ॥

दुशला ने इस प्रकार के वचनों को कह कर पीड़ित शब्दों को किया और महा दुखी ने उस नीचा शिर करने वाले अर्जुन से कहा हे धर्मज्ञ ! अपनी बहिन और भानजे के पुत्र को देखो और क्षमा करो, उस दुर्योधन और अभागे जयद्रथ को विस्मरण करके दया करो, जैसे कि अभिमन्यु का पुत्र शत्रुओं के वीरों का नाश करने वाला परीक्षित उत्पन्न हुआ है उसी प्रकार सुरथ से यह मेरा पौत्र वीर उत्पन्न हुआ है ॥

हे नरोत्तम ! मैं उस को लेकर सब शूरवीरों की शान्ति के लिये तेरे पास आई हूं, हे महाबाहु ! उस अभागे का यह पौत्र आया है, इस हेतु से तुम इस बालक पर कृपा करने के योग्य हो यह बालक शिर से प्रसन्न कर के तुम से प्रार्थना करता है अब तुम शान्ति को प्राप्त हो जाओ, इस मृतक बांधव वाले अज्ञान बालक के ऊपर कृपा करो क्रोध के वशीभूत मत हो इस प्रकार दुःशला के करुणा विलाप करने पर दुःख शोक से पीड़ावान् क्षत्रिय धर्म की निंदा करते हुये राजा धृतराष्ट्र और देवी गांधारी को स्मरण कर के कहा कि मैंने जिस क्षत्रिय धर्म के कारण से सब बांधव यमलोक में पहुंचाये उस को धिक्कार हो, इस प्रकार के अनेक विश्वासित वचन कह कर अर्जुन ने कृपा की और बहुत प्रसन्नता से उस से मिल कर उस को घर में भेज दिया ॥

फिर दुःशला भी उन शूरवीरों को युद्ध से हटा कर और अच्छी रीति से पूज कर घर को गई और अर्जुन उन

सिंधु देशी, वीरों को विजय कर उस घोड़े के पीछे पीछे चला और घूमता २ राजा मणीपुर के देश में आया ॥

चौबीसवां अध्याय

—:०:—

बभ्रुवाहन आये हुये पिता को सुन कर बड़ी नम्रता पूर्वक नगर से निकला जिस के अग्रवर्ती ब्राह्मण लोग और धन था क्षत्रिय धर्म को स्मरण करते उस बुद्धिमान अर्जुन ने इस प्रकार से आये हुये राजा बभ्रुवाहन का प्रसन्न नहीं किया, इस क्रोध युक्त अर्जुन ने कहा कि यह तेरा कर्म योग्य नहीं है परन्तु क्षत्रिय धर्म से रहित है, हे पुत्र ! युधिष्ठर के अश्वमेध यज्ञ के रक्षा करने वाले और देश की सीमा पर मुझ आने वाले से युद्ध क्यों नहीं किया, तुझ दुर्बुद्धि क्षत्रिय धर्म से रहित को धिक्कार है जो युद्ध के निमित्त सन्नद्ध मुझ आने वाले को साम धर्म से ही लिया ॥

हे दुर्बुद्धि ! यदि शास्त्र से रहित मैं तुझ से मिलता तो यह तेरा कर्म योग्य था ॥

पति से कहे हुये उस वचन को जान कर सर्प की पुत्री उलूपी उस वचन को न सहती पृथ्वी को चीर कर वन के पास आई और नीचा शिर किये हुये विचार करते हुये अपने पुत्र को युद्धाभिलाषी अपने पिता से बारंबार धिक्कार युक्त देखा इस के पीछे उलूपी ने अपने पुत्र से कहा कि हे पुत्र ! तुम मुझे अपनी माता जानो और पिता का कहना करो इस में तुम्हारा

बड़ा धर्म होगा तुम अब अर्जुन से युद्ध करो यह तब तुम पर प्रसन्न होगा ॥

इस प्रकार माता के कहने पर महा तेजस्वी बभ्रुवाहन ने युद्ध के निमित्त विचार किया सुवर्ण का कवच और सूर्य की समान प्रकाशमान शिरस्त्राण को शरीर में शोभित करके सैंकड़ों उत्तम तूणीरों से युक्त रथ पर चढ़ा और अर्जुन को शत्रु मान कर यात्रा करने वाला हुआ, इस के पीछे उस वीर ने समीप आकर अर्जुन से रक्षित उस यज्ञ के घोड़े को उन मनुष्यों से पकड़वाया जो अश्व शिक्षा में कुशल थे उस प्रसन्न चित्त पृथ्वी पर नियत अर्जुन ने पकड़े हुये घोड़े को देख कर युद्ध में रथारूढ़ अपने पुत्र को रोका ॥

फिर बभ्रुवाहन ने विषैले सर्प के समान बाणों के समूहों से अर्जुन को पीड़ित किया दोनों पिता पुत्रों का बड़ा घोर युद्ध हुआ, बभ्रुवाहन ने अर्जुन को टेढ़े पर्व वाले बाण से जत्रु स्थान पर घायल किया वह बाण पुंग सहित उस के जत्रु स्थान में ऐसे समा गया जैसे बामी मे सर्प समा जाता है वह अर्जुन को घायल कर पृथ्वी में प्रवेश कर गया, उस के बाण से अत्यन्त पीड़ामान अर्जुन धनुष का सहारा लेकर हार्दाकाश निवासी ईश्वर में प्रवेश होकर मृतक के समान होगया ॥

फिर अर्जुन सचेतता को पा पुत्र की प्रशंसा करके कहने लगा हे चित्रांगदा के पुत्र! धन्य है ! धन्य है! तेरे कुल के समान कर्म को देख कर मैं प्रसन्न हूं अब मैं तुम पर बाण छोड़ता हूं युद्ध में नियत हो जाओ इस प्रकार कह कर अर्जुन

अपेन प्यारे पुत्र पर बाणों की वर्षा करनें लगा उस ने बज्र के समान छोड़े हुये सब नाराचों को अपने भल्लों से टुकड़े २ कर दिया। अर्जुन ने दिव्य बाणों से उस की ध्वजा को काट कर रथ से गिरा दिया और हंसते हुये उस के घोड़ों को भी निर्जीव कर दिया ॥

उस अत्यंत क्रोध युक्त राजा ने रथ से उतर कर पदाती हो कर अपेन पिता अर्जुन से युद्ध किया फिर अर्जुन ने अपन पुत्र को अत्यंत पीड़ावान किया पिता को विमुख मानते हुये उस पराक्रमी बभ्रुवाहन ने विषैले सर्प की समान बाणों से पिता को फिर पीड़ित किया, इस के पीछे उस ने बालकपन से सुन्दर पुंग वाले तीक्ष्ण बाणों के द्वारा अर्जुन को हृदय पर कठिन घायल किया, हे जनमेजय ! वह अत्यन्त पीड़ा उत्पन्न करने वाला बाण मर्म स्थल को काट कर अर्जुन के शरीर में प्रवेश कर गया उस पुत्र पर अत्यन्त क्रोध युक्त अर्जुन मोह से पीड़ावान अचेत होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा अर्जुन के गिरने पर चित्रांगदा के पुत्र ने भी अचेतता को पाया अर्थात् वह युद्ध में परिश्रम करके और पिता को मृतक हुआ देख कर पृथ्वी का सहारा लेकर गिर पड़ा, पति को मृतक और पुत्र को पृथ्वी पर गिरा देख बड़ी शीघ्रता से चित्रांगदा युद्ध भूमि में आई और मृतक पति को देखने लगी ॥

पचीसवां अध्याय

—:०:—

इस के अनन्तर वह कमल लोचना भी बहुत प्रकार का विलाप करके पृथ्वी पर गिर पड़ी उस दिव्य रूप रखने वाली देवी ने सचेतता को पा कर सर्प की पुत्री उलूपी से कहा तेरे कारण मेरे पुत्र के बाण से युद्ध में मृतक शयन करने वाले मेरे पति को देख निश्चय करके तू धर्मज्ञों में श्रेष्ठ हो कर पति व्रता है जो तेरे कारण से युद्ध में मरा हुआ यह तेरा पति पृथ्वी पर गिरा है अब जो तेरी बुद्धि से यह यद्यपी अपराधी भी है तो भी इस को क्षमा कर और इस को सजीव कर निश्चय करके तुम धर्म की जानने वाली और तीनों लोकों में प्रसिद्ध हो जो पुत्र के हाथ से पति को मरवा कर शोच नहीं करती हो ॥

हे सर्प नन्दनी ! मैं अपने मरे हुये पुत्र को नहीं शोचती हूं जिस का कि यह अतिथी किया गया है तब उस यशवन्ती ने सर्प की पुत्री से इस प्रकार कह कर और पति के पास जाकर यह कहा कि प्यारे ! उठो तुम युधिष्ठर के और मेरे प्रिय हो हे महाबाहु ! यह तेरा घोड़ा मैंने छोड़ दिया है निश्चय करके तुम को धर्मराज के यज्ञ के घोड़े के पीछे चलना उचित है तुम इस पृथ्वी पर क्यों सोते हो, हे कौरव नन्दन ! मेरे और कौरवों के प्राण तेरे आधीन हैं दूसरे के प्राण दाता हो कर तुम ने किस हेतु अपने प्राणों को त्याग दिया ॥

फिर चित्रांगदा ने उलूपी से कहा कि हे उलूपी ! इस पृथ्वी पर पड़े हुये पति को देखो इस पुत्र को उत्साह देकर और पति को मरवा कर शोच नहीं करती हो चाहे मृत्यु वश होकर यह बालक पृथ्वी पर शयन करे परन्तु विजयी अर्जुन जी उठे ॥

हे सौभाग्यवती ! मनुष्यों की बहुत सी स्त्रियों का होना पाप नहीं है परन्तु यह दोष स्त्रियों का होता है तेरी बुद्धि ऐसी मत होय ईश्वर ने इस मित्रता को प्रवीन और अविनाशी किया है तुम मित्रता को अच्छे प्रकार से जानो । यदि तूं अब मेरे पति को पुत्र से मरवा कर जीवता नहीं करेगी तो मैं अपने जीवन का त्याग करुंगी ॥

उलूपी को इस प्रकार की बातें कह कर चित्रांगदा शरीर त्यागने की इच्छा से आसन पर विराजमान हो कर मौन होगई कुछ चिर के पीछे बभ्रुवाहन ने सचेत हो युद्ध भूमि में अपनी माता को देख कर कहा कि इस से अधिक दुःख और क्या होगा जो सुख से बुद्धिमान मेरी माता पृथ्वी पर गिरे हुये मृतक पति के पास शयन करती है और युद्ध से मेरे हाथ से मृतक इस शस्त्र धारियों में श्रेष्ठ अर्जुन को देखती है हाय ! मरना बड़ा कठिन है आश्चर्य की बात है कि इस मरे हुये अपने पति को देखने वाली का हृदय नहीं फटता है । जिस स्थान पर कि मेरी माता और मैं जीवन से पृथक नहीं होते हाय ! हाय ! इस मरे हुये कौरव वीर अर्जुन के स्वर्णमयी

कवच को धिक्कार है कि मुझ पुत्र के हाथ से मरा हुआ दीख पड़ता है ॥

हाय ! ऐ ब्राह्मण लोगो ! उपदेश करो अब यहां मुझ निर्दय पापी और युद्ध भूमि में पिता के मारने वाले का क्या प्रायश्चित है हे द्विजवर्यो ! अर्जुन के और घोड़े के पीछे चलने वाले जो लोग मरने से बच रहे हैं वह युद्धेच्छा की शांति हैं जो युद्ध में मेरे हाथ से मारा गया, अब पिता को मार कर इस अपने पिता का शिर कपाल धारण करने वाले और उस चर्म से युक्त शरीर मुझ निर्दयी के बारह वर्ष कठिनता से कटने वाले हैं क्योंकि अपने पिता को मार हत्यारे पने के सिवाय अब मेरा दूसरा कोई प्रायश्चित नहीं है हे सर्पराज की पुत्री ! मेरे हाथ से मरे अपने पति को देखो अब मैंने युद्ध में अर्जुन को मार कर तेरा अभिष्ट किया है सो मैं अब पितृलोक को जाऊंगा ॥

हे मंगल रूप ! मैं आत्मा से आत्मा के धारण करने को समर्थ नहीं हूं अब यदि मेरा पिता अर्जुन नहीं उठेगा तो मैं इसी युद्ध भूमि में अपने शरीर को सुखाऊंगा ॥

पिता को मार कर मेरा किसी प्रकार से प्रायश्चित नहीं हो सकता निश्चय करके गुरु के मारने से पीड़ावान मैं शरीर को त्याग करूंगा । यह मेरा पिता पाण्डव अर्जुन अनुपम महा तेजस्वी और धर्मात्मा है मुझ अपराधी का प्रायश्चित कैसे हो सकता है हे जनमेजय ! अर्जुन का वह बड़ा पुत्र राजा बभ्रुवाहन इस प्रकार कह कर आचमन करके मौन हुआ और शरीर त्याग पर्यंत के लिये खान पान छोड़ बैठा ॥

तब पुत्रत्व भाव के शोक से पूर्ण उलूपी ने सजीवन मणि को स्मरण किया तब सर्पों के जीवन का हेतु वह मणि वर्त्तमान हुई, सर्प राज की पुत्री उसी उलूपी ने उस मणि को ले कर सेना के लोगों के चित्तों को प्रसन्न करने वाला यह वचन कहा। हे पुत्र ! उठ, शोच मत कर यह अर्जुन तुम ने विजय नहीं किया यह मनुष्य तो क्या इन्द्रादिक देवताओं से भी अजेय है अब मैं ने तेरे यशवान पुरुषोत्तम पिता के प्रिय करने के निमित्त यह मोहिनी नाम माया दिखलाई है। हे राजा ! युद्ध भूमि में युद्ध करने वाला तुझ पुत्र की परीक्षा लेना चाहता यह शत्रुओं का मर्दन करने वाला वीर कौरव अर्जुन यहां आया है ॥

हे पुत्र ! इस लिये मैंने तुझ को युद्ध के लिये प्रेरणा की थी हे समर्थ पुत्र ! तु अपने थोड़े से पाप का मत ध्यान कर यह महात्मा ऋषि प्राचीन होकर सदैव नियत और अविनाशी है, मैंने यह दिव्य मणि मंगाई है जोकि सदैव मरे हुये सर्प राजों को सजीव करती है तुम इस को अपने पिता की छाती पर रखो तब तुम अपने पिता को जीवित देखोगे ॥

इस प्रकार आज्ञप्त हुये राजा ने पिता की छाती पर उस मणि को नियत किया उस मणि के रखने से सजीव होने वाला वह स्वच्छ रक्त नेत्र रखने वाला अर्जुन उठ बैठा फिर बभ्रु वाहन ने अपने पिता को दंडवत की और आकाश से पुष्पों की वर्षा हुई दुन्दुभियां बजने लगीं और आकाश में बहुत भारी धन्य २ का शब्द हुआ अर्जुन ने उठ कर अपने पुत्र को

मस्तक चूमा और कुछ दूर पर उस की माता को शोक के भंजे में फंसी हुई उलूपी के साथ देखा ॥

फिर अर्जुन ने पूछा कि हे पुत्र ! यह युद्ध भूमि आनन्द शोक और आश्चर्य युक्त होने वाली दिखाई देती है यह क्या बात है यदि तुम जानते हो तो मुझ से वर्णन करो, तेरी माता किस कारण इस युद्ध में आई और सर्प राज की पुत्री उलूपी यहां क्यों आई मैं जानता हूं कि तुम ने मेरे कहने से यह युद्ध किया है, मैं स्त्रियों के आने का कारण जानना चाहता हूं तब इस प्रकार की अर्जुन की बातें सुन कर बभ्रु वाहन ने शिर से प्रसन्न करके अर्जुन से कहा कि इस बात को उलूपी से पूछिये ॥

छब्बीसवां अध्याय

—:०:—

फिर अर्जुन ने उलूपी से कहा कि तेरे और चित्रांगदा का युद्ध में आने का क्या कारण है ? क्या मैंने या बभ्रु वाहन ने या इस की माता चित्रांगदा ने तेरा कोई अपराध तो नहीं किया है ॥

हंसती हुई सर्प राज की कन्या ने उत्तर दिया कि न तो तुम ने मेरा अपराध किया है और न बभ्रुवाहन मेरा कोई अपराध करता है और न ही इस की माता मेरा कोई अपराध करती है अब जिस लिये मैंने यह कार्य किया था उस को

सुनो परंतु तुम्हें मुझ पर क्रोध न करना चाहिये क्योंकि मैंने आप के अभिष्ट यह सब कर्म किया था अब जो मूल हेतु है उस को सुनो ॥

हे स्वामी ! तुम ने महाभारत के युद्ध में भीष्म पितामह को अधर्म से मारा, सन्मुख होकर नहीं मारा अर्थात शिखंडी के पक्ष में होकर उसे मारा है यदि तुम इस का प्रायश्चित किये विना जीवन का त्याग करोगे तो इस पाप कर्म से अवश्य नरक में गिरोगे इस लिये यह प्रायश्चित किया है जिस को कि तुम ने अपने पुत्र से प्राप्त किया है ॥

हे अर्जुन ! पूर्व समय में गंगा जी के तट पर वसुओं ने तुम को शाप दिया था कि संमुख युद्ध न करता भीष्म अर्जुन के हाथ से मारा गया है इस कारण हम अर्जुन को शाप देते हैं तब गंगा देवी ने कहा कि ऐसा ही होय, मैं उस शाप को सुन कर बड़ी व्याकुल हुई और अपने पिता से जाकर कहा जिस को सुन कर वह भी बहुत दुःखी हुये, फिर मेरे पिता ने वसुओं के पास तेरे निमित्त वारंवार प्रसन्न कर के उन से प्रार्थना की, तब उन्हों ने कहा कि हे महाभाग ! वह जो अर्जुन का तरुण पुत्र मणि पुर का राजा है वह युद्ध भूमि में बाणों से इस को पृथ्वी पर गिरावेगा ऐसा होने से वह शाप से छूटेगा ॥

फिर मेरे पिता ने उन से विदा हो कर मेरे पास आकर सब वृत्तांत मुझ से कहा अब मैंने उस शाप से तुझे निवृत्त किया है हे प्रभु ! इस में मेरा दोष नहीं है ॥

यह बात सुन कर अर्जुन बड़ा प्रसन्न हुआ और कहने

लगा कि हे देवी! यह कार्य जो तुम ने किया है सब मेरे ही हित के लिये किया है, फिर अर्जुन ने बभ्रुवाहन से कहा हे पुत्र! चैत्र महीने की पूर्णमासी को युधिष्ठर का अश्वमेध यज्ञ होना है तुम अपनी दोनों माताओं और मंत्रियों सहित वहां आजाना ॥

अर्जुन की इस आज्ञा को सुन नेत्रों में जल भर कर बभ्रुवाहन ने पिता से कहा हे पिता! आप मेरे अनुग्रह के लिये अपनी दोनों भार्याओं समेत अपने नगर में प्रवेश करें और एक रात्रि निवास कर फिर घोड़े की अनुगामिता करने के लिये जायें ॥

पुत्र के इस प्रकार के वचन सुन कर मुसकराते हुये अर्जुन ने बभ्रुवाहन से कहा हे पुत्र! तुम्हें विदित है कि मैं यज्ञ के निमित्त दीक्षित किया गया हूं इस लिये मैं तेरे ग्राम में प्रवेश नहीं कर सकता। हे नरोत्तम यह यज्ञ का घोड़ा अपनी इच्छा के अनुसार चलता है इतना कह कर अर्जुन तीनों से प्रसन्नता पूर्वक मिल कर विदा हुआ ॥

सताईसवां अध्याय

—:०:—

इस के पीछे वह घोड़ा समुद्र पर्यंत इस पृथ्वी पर घूम उस ओर को लौटा जिधर हस्तिनापुर था, तब ईश्वर की इच्छा से राजगृह नामी नगर को पाया जिस का राजा सहदेव

का पुत्र था वह अर्जुन को आता देख कर युद्ध करने के लिये उस के सन्मुख गिया और अर्जुन से कहने लगा कि हे भार्त वंशी यह स्त्रियों के मध्य में नियत करके क्या घुमाया जाता है अब मैं इस घोड़े को पकड़ूंगा तुम इस के छुड़ाने का उपाय करो जो तुम युद्ध में मेरे बृद्धों से शिक्षा पाने वाले नहीं हुये तो मैं तुम्हारा आतिथ्य करूंगा तुम प्रहार करो और मैं भी प्रहार करता हूं ॥

इस प्रकार के वचन सुन कर हंसते हुये अर्जुन ने उस का उत्तर दिया कि विघ्न कर्ता लोग मुझ से हटाने के योग्य होते हैं मेरा यह नियत व्रत है फिर मगध के राजा ने अर्जुन पर बड़े प्रहार किये परन्तु अर्जुन ने गांडीव धनुष से उस के सब प्रहारों को निष्फल कर दिया और अपने सर्प के समान बाणों को छोड़ा, ध्वजा पताका, मंत्र, घोड़े और अन्य २ रथ के अंगों पर बाणों को छोड़ा परन्तु राजा मगध और उस के सारथी पर बाण नहीं छोड़े उधर से राजा मगध ने भी बाणों को छोड़ा जिस से अर्जुन घायल हुआ ॥

अर्जुन घायल हो कर अत्यंत क्रोध युक्त हुआ और धनुष को खैंच कर मगध के राजा के घोड़े को निर्जीव कर कर उस के सारथी के शिर को भी काट डाला और उस के धनुष को भी काट डाला, सारथी और घोड़े से रहित व्याकुल चित्त तीव्रता से वह राजा गदा को ले कर अर्जुन पर दौड़ा अर्जुन ने उस शीघ्रता से आने वाले राजा की स्वर्ण मयी गदा को बाणों से खंड २ कर दिया, फिर अर्जुन ने मगध देश के

राजा से कहा हे पुत्र ! जाओ युद्ध में तुझ बालक को यही कर्म बहुत है मुझे युधिष्ठर की आज्ञा है कि किसी राजा को न मारना इसी हेतु से अपराधी हो कर भी तुम इस बड़े युद्ध में जीते हो ॥

तब राजा मगध अपने को निषध जान कर हाथ जोड़ और अर्जुन के पास आकर कहने लगा कि आप का कहना सत्य है मैं आप से पराजित हूं अब मैं आप से लड़ने का उत्साह नहीं रखता अब आप की जो आज्ञा हो वह करूं ॥

अर्जुन ने उस को विश्वास देकर कहा कि चैत की पूर्णमासी को हमारे राजा के यज्ञ में आप को आना चाहिये इस प्रकार आज्ञा पाकर सहदेव के पुत्र ने बहुत अच्छा कह कर अंगीकार किया और घोड़े सहित अर्जुन का विधि पूर्वक पूजन किया, इस के पीछे वह घोड़ा फिर अपनी इच्छा के अनुसार चला फिर वह समुद्र के किनारे पर वंग, पौंड्र और कौशल देशों में गया, अर्जुन ने जहां तहां गांडीव धनुष से म्लेच्छों की बहुत सी सेनाओं को विजय किया ॥

फिर वह घोड़ा चन्देरी देश को गया वहां शिशुपाल के पुत्र के साथ अर्जुन का युद्ध हुआ वहां से काशी, अंग, कौशल, किरात और तंगणदेशों में होता हुआ दशार्न देश में गया वहां के राजा चित्रांगद नाम के साथ बड़ा भयकारी युद्ध हुआ पुरुषोत्तम अर्जुन उस को भी आधीन कर निषादों के राजा एकलव्य नाम राजा के देशों में गया वहां भी रोमहर्षण करने वाला युद्ध हुआ और निषाद के पुत्र को भी विजय कर उस से

पूजित हो दक्षिणी समुद्र को गया वहां के राजाओं को विजय कर सुराष्ट्र देशों के सन्मुख गया वहां से द्वारका को गया वहीं पर यादवों के बालक घोड़े को पकड़ कर ले गये। तब राजा उग्रसेन ने उन को निषेध किया और अर्जुन के मामा वसुदेव जी समेतपुर से बाहर निकल कर दोनों विधि पूर्वक अर्जुन से मिल कर उस के सन्मुख नियत हुये फिर वह उन से भी विदा हो कर पश्चिम देशों को चला फिर पंजाब देश में गया तब वह घोड़ा वहां से भी चल कर गांधार देश को गया जिस का राजा शकुनी का पुत्र था उस के साथ अर्जुन का बड़ा भयंकर युद्ध हुआ ॥

अठाईसवां अध्याय

—:o:—

वैशम्पायण जी ने कहा हे जनमेजय! शकुनी का पुत्र अपने पिता के मरण को स्मरण कर अपनी सेना को लेकर अर्जुन के सन्मुख गया उन को आते देख अर्जुन ने उन को बड़ी मधुर वाणी से युधिष्ठर के वचन कहे परन्तु उन्हों ने उस के वचन को स्वीकार नहीं किया और घोड़े को घेर कर ले चले इन के इस प्रकार करने से अर्जुन को बड़ा क्रोध आया और उस ने उन पर बाणों की वर्षा आरंभ करदी जिस से घायल हो कर घोड़े को छोड़ कर वह भी लौट और बड़ा घोर युद्ध करने लगे ॥

फिर अर्जुन ने शकुनी के पुत्र को कहा कि राजा युधिष्ठर की आज्ञा से मैं किसी राजा को नहीं मारना चाहता, हे वीर! तुम युद्ध को त्यागो अब तेरी पराजय न हो। तब इस प्रकार शिक्षित होकर भी अज्ञानता से कर्म करने वाले उस राजा ने उस वचन को तिरस्कार करके अर्जुन को बाणों से ढक दिया। फिर अर्जुन ने अर्द्ध चन्द्र नाम बाण से उस के शिर स्त्रान को गिरा दिया॥

उन सब गंधारियों ने उस कर्म को देख कर आश्चर्य किया और यह जाना कि अर्जुन ने राजा को नहीं मारा, फिर शकुनी का पुत्र सेना समेत भयभीत होकर चल दिया परंतु अर्जुन ने टेढे पर्व वाले बाणों से कितने ही मनुष्यों के शिरों को काटा और बहुत सी सेना को मार कर भगा दिया, इस के पीछे गंधार के राजा की माता जिस के अग्रगामी वृद्ध मंत्री थे उत्तम अर्घ को आगे कर के नगर के बाहर निकली उस ने सावधान और युद्ध में दुर्मद पुत्र को रोका और अर्जुन को प्रसन्न कर के कहने लगी। हे महाबाहु! मेरा अभिष्ठ नहीं था जो तुम ने सन्मुख लड़ने का विचार किया है हे अर्जुन तुम मेरे भाई हो॥

अर्जुन बोला कि मैंने तो पहिले ही राजा को समझाया था परन्तु उस ने न माना अब तुम अपने चित्त से शत्रुता को दूर करो चैत्र महीने की पूर्णमासी को हमारे राजा के अश्वमेध यज्ञ में आन॥

फिर अर्जुन घोड़े के पीछे चला घोड़ा हस्तिनापुर में लौटा, युधिष्ठर ने दूत के द्वारा अर्जुन के आने का समाचार

सुना वह उसे कुशल मंगल पूर्वक सुन कर प्रसन्न हुआ अर्जुन ने आ।र सब वृत्तांत राजाओं से लड़ने का कह सुनाया ॥

युधिष्ठर ने माघ के शुक्ल पक्ष की द्वादशी ;और पुष्य नक्षत्र को भीमसेन, नकुल, सहदेव इन सब भाईयों को बुलाया और भीमसेन को कहा कि यह तेरा छोटा भाई अर्जुन घोड़े के साथ आगया है। हे भीमसेन! यह माघ की पौर्ण मासी है आज से यज्ञ करने में एक महीना शेष रहा है इस लिये वेद में पूर्ण ज्ञानी ब्राह्मण जायें और अश्वमेध की सिद्धि के लिये यज्ञ करने के योग्य देश को देखें ॥

युधिष्ठिर की आज्ञा को सुन कर भीमसेन ने वैसे ही किया और अर्जुन का आना सुन कर बहुत प्रसन्न हुआ। इस के पीछे भीम सेन ने बुद्धिमान कारीगरों को साथ ले कर भूमि को नपवाया जो कि बहुत से स्थानों से युक्त और शोभायमान थी जिस में बाजार के मार्ग भी वर्त्तमान थे उस भूमि को सैकड़ों मन्दिरों से युक्त उत्तम मणियों से जड़ित सुवर्ण और मणियों से अलंकृत करवाया और यज्ञ के स्थानों पर शुद्ध स्वर्ण को जड़वा कर राजाओं के निवास के लिये स्थानों को जहां तहां बनवाया फिर राजा युधिष्ठर की आज्ञा से दूतों को समर्थ राजाओं के पास भेजा ॥

हे जनमेजय! दूतों के पहुंचते ही वह राजा लोग युधिष्ठर की प्रसन्नता के अर्थ उस के अभिष्ट रत्न; स्त्री, घोड़े और धनुष आदिक शस्त्रों को लेकर आये और उन सुन्दर निवास स्थानों में प्रवेश किया जो पहिले ही उन के लिये बनवाये गये थे॥

राजा युधिष्ठर ने दूतों को उन आये हुए राजाओं के लिये खाने पीने की वस्तुयें और शया आदिक दिव्य पदार्थों की आज्ञा दी और घोड़े आदि के लिये नाना प्रकार की शालाओं को जो धान, तृण और गो रस से युक्त थीं बतलाई इसी प्रकार धर्मराज के यज्ञ में बहुत से ब्रह्मवादी मुनि लोगों के समूह आये, युधिष्ठर ने उन को बड़े आदर सत्कार के साथ अभ्युत्थान पूर्वक प्रीति के साथ लिया और आप निवास स्थानों तक उन के साथ गया ॥

इस के पीछे कारीगर और जो अन्य २ प्रकार के शिल्प विद्या के लोग वहां वर्त्तमान थे उन्हों ने सब यज्ञ विधि को बना कर धर्म राज से निवेदन किया। राजा युधिष्ठर उस सब को तैय्यार सुन कर भाइयों सहित बड़ा प्रसन्न हुआ ॥

वैशम्पायन बोले कि उस यज्ञ के जारी होने पर ब्राह्मणों ने अर्थात न्याय शास्त्र वालों ने बहुत से हेतु वादों को वर्णन किया। सब राजाओं ने भीमसेन की रची हुई उस उत्तम यज्ञ विधि को देखा जो देवेन्द्र के यज्ञ के समान थी। राजाओं ने घट, पात्र, कढ़ाव, कलश, इत्यादि किसी सामान को भी बिना सुवर्ण के नहीं देखा। गौ, भैंस, वृद्ध स्त्रियां, जल, जीव, पशु, पक्षी अर्थात पृथ्वी से उत्पन्न औषिधी पर्वत और अनूप देशों में उत्पन्न होने वाले जीवों को भी देखा ॥

इस प्रकार राजा लोग पशु, गो, धन और धान्य से सम्पन्न, सब यज्ञ शाला को देख कर बड़े आश्चर्य हुये, ब्राह्मणों के और वैश्यों के वह निवास स्थान, बहुत स्वच्छ खाने पीने

की वस्तु और धनों से पूर्ण थे, वहां भोजन करने वाले वेद पाठी ब्राह्मणों की एक लक्ष संख्या पूर्ण होने पर बादल के समान शोभायमान दुन्दुभियां बजाई गई धर्मराज का यह यज्ञ इस प्रकार जारी और वर्तमान हुआ कि जहां तहां मनुष्यों की हजारों जातियों के लोग बहुत से पात्रों को लेकर एकत्र हूये २ थे ॥

उनतीसवां अध्याय

—:०:—

राजा युधिष्ठर ने भीम सेन को बुला कर आज्ञा दी कि जो राजा लोग यहां आये हैं उन सब की पूजा करो, भीमसेन ने वैसे ही किया। इस के पीछे गोविंद जी बलदेव जी को आगे करके सात्यकी, प्रद्युम्न, कृतवर्मा इत्यादिक सब वृष्णियों समेत युधिष्ठर के पास आये भीम सेन ने उन की भी उत्तम पूजा को फिर वह सब अपने अपने निवास स्थानों को गये ॥

मधु सूदन कृष्ण जी ने कथा के अन्त पर बहुत से संग्रामों से होना अर्जुन का कथित वर्णन किया। हे राजा! एक द्वारका वासी बड़ा विश्वस्थ मनुष्य आया था जिस ने कि बहुत युद्धों से कष्टित उस अर्जुन को देखा था इस ने महा बाहु अर्जुन को समीप ही आने वाला मुझ से कहा है। इस से हे युधिष्ठर! अश्व मेध की सिद्धि के लिये करने के योग्य कर्म करो ॥

इस प्रकार के वचन सुन कर धर्म राज ने उत्तर दिया कि हे लक्ष्मी पति ! वह अर्जुन प्रारब्ध से कुशल पूर्वक आता है और अर्जुन ने जो समाचार आप के पास भेजे हैं वह मैं आप से जानना चाहता हूं ॥

कृष्ण जी ने युधिष्ठर से कहा कि मुझे जो कुच्छ उस मनुष्य ने कहा है वह सुनो, हे धर्म राज ! सब राजा लोग आयेंगे उन की बड़ी अच्छी प्रकार पूजा करनी और कोई नाश उत्पन्न करने वाला कर्म न हो जो राजसूय यज्ञ में राजाओं के के मध्य पूजन में हुआ था, यह प्रजा लोग राजाओं की विरुद्धता और शत्रुता को न देखें और दूसरा वचन यह कहा है कि मेरा प्यारा पुत्र बड़ा तेजस्वी वभ्रुवाहन नाम मणि पुर का राजा हमारे यज्ञ में आवेगा आप उस का मेरे अभिष्ठ और प्रिय के लिये विधि पूर्वक पूजन करें ॥

युधिष्ठर ने कहा हे कृष्ण जी ! मैंने यह प्रिय वचन सुना जिस को आपने कहा निश्चय करके अर्जुन के बहुत से युद्ध जहां तहां राजाओं के साथ हुये और मैने भी उन को सुना है, क्या कारण है जो वह अत्यन्त विजयी अर्जुन सुख से रहित है यह बात मेरे मन को खेदित करती है, हे जनार्दन ! मैं उस विजय के अभ्यासी अर्जुन को एकान्त में शोचता हुं यह पांडु नन्दन वारंवार दुःखों को पाता है उस के शरीर में कौन सा चिन्ह अप्रिय है, हे श्री कृष्ण जी ! मैं अर्जुन के अंगों में कोई दोष का चिन्ह नहीं देखता हुं फिर क्या कारण है कि वह इतने दुःख उठाता है यदि यह बात मेरे सुनने के योग्य हो तो कहें ॥

कृष्ण जी ने उत्तर दिया कि हे राजा ! मैं इस पुरुषोत्तम के किसी अंग को छिपा हुआ अप्रकट नहीं देखता हुं सिवाय इस के कि इस निरोत्तम के दोनों पिंडिक नियत संख्या से अधिक हैं वह इन दोनों अंगों के कारण सदैव देशों की यात्रा करता है इस के सिवाय और किसी बात को नहीं देखता हुं जो यह दुखों का भागी हो ॥

वहां पर भीमसेन आदिक पाण्डव और ब्राह्मण लोग अर्जुन की उस विचित्र और शुभ कथा को सुन कर प्रसन्न हुये, कथा के समाप्त होने पर महात्मा अर्जुन का दूत आया और समीप आकर उस ने युधिष्ठर को नमस्कार कर के पास आने वाले नरोत्तम अर्जुन को वर्णन किया, तब उस को सुन कर प्रसन्नता के अश्रुओं से व्याकुल युधिष्ठर ने इस शुभ वृत्तान्त के बदले में उस को बहुत सा धन दिया ॥

फिर दूसरे दिन कौरवों के धुरन्धर नरोत्तम के आने पर बड़ा वृद्धिकारी शब्द हुआ और समीप आने वाले अर्जुन के घोड़े की धूली उठी वहां अर्जुन ने मनुष्यों के आनन्द दायक वचनों को सुना कि अर्जुन प्रारब्ध से कुशल पूर्वक है राजा युधिष्ठर प्रारब्धी है अर्जुन के सिवाय कौन सा वीर राजाओं को विजय कर सम्पूर्ण पृथ्वी को जीत कर इस घोड़े को घुमा कर फिर लौट कर आसकता है जो सगर आदिक महात्मा पूर्व समय में हुये थे हम ने उन का भी ऐसा कर्म नहीं सुना आगे भविष्यत काल में दूसरे राजा लोग इस कर्म को नहीं करेंगे जिस को हे कौरव कुल भूषण ! तुम ने किया है ॥

अर्जुन इस प्रकार के वचनों को जो कि कानों को सुख देने वाले थे सुनता हुआ यज्ञ शाला में पहुंचा, तब मंत्रियों सहित राजा युधिष्ठर और श्रीकृष्णजी धृतराष्ट्र को आगे कर के अगमानी लेने को गये, फिर अर्जुन वहां आकर पिता के और धर्मराज के चरणों को दण्डवत करके और भीमसेन आदिक भाईयों को अच्छी रीति से पूज कर केशव जी से मिला उन सब से मिल कर और उन से पूजित हो कर उन को विधि पूर्वक पूज कर विश्राम किया। उसी समय वह बुद्धिमान राजा बभ्रुवाहन दोनों माताओं समेत कौरवों के पास आया, वहां उस महा बाहु ने वृद्ध कौरवों को और अन्य राजाओं को विधि पूर्वक नमस्कार कर उन से आशिर्वाद ले कर अपनी दादी कुन्ती के महल में गया ॥

तीसवां अध्याय

—:o:—

राजा बभ्रुवाहन ने महल में पहुंच कर अपनी दादी कुन्ती को दण्डवत की, इस के पीछे देवी चित्रांगदा और उलूपी दोनों नम्रता पूर्वक कुन्ती और द्रौपदी के पास गईं, सुभद्रा आदिक जो दूसरी कौरवी स्त्रियां थीं उन के पास आ बैठीं और उन्हों ने उन दोनों को नाना प्रकार के रत्न दिये ॥

इस के पीछे बभ्रुवाहन ने विधि के अनुसार राजा धृतराष्ट्र के सन्मुख जाकर उस को नमस्कार किया फिर उसने राजा

युधिष्ठिर और भीमसेनादिक पाण्डवों के पास जाकर नम्रता से दण्डवत की वह उस से प्रेम पूर्वक मिले और उन्हों ने उस को बहुत साधन दिया उसी प्रकार राजा बभ्रुवाहन नम्रता के साथ श्रीकृष्ण जी के सन्मुख गया, श्रीकृष्ण जी ने उस को एक ऐसा रथ दिया जो कि बहुमूल्य अथवा वृद्धों के योग्य बड़ा पूजित सुवर्ण के सामानों से अलंकृत और दिव्य घोड़ों से युक्त था ॥

इस के अनंतर व्यास मुनि ने तीसरे दिन युधिष्ठिर से मिल कर कहा कि अब से लेकर पूजन करो तुम्हारे यज्ञ के समय का मुहूर्त वर्त्तमान हुआ, याजक ब्राह्मण आज्ञा करते हैं कि बहुत से सोम यज्ञों का समूह यह तेरा यज्ञ रचना को प्राप्त हो जोकि सुवर्ण की अधिकता से सुसुवर्ण के नाम से विख्यात होय हे राजन ! यहां तुम बहुत दक्षिणा वाले तीन अश्वमेधों को अच्छी रीति से करके बिरादरी के मारने के पापों को दूर करोगे ॥

व्यास जी से आज्ञापाकर वह धर्मात्मा युधिष्ठिर अश्वमेध की प्राप्ति के निमित्त दीक्षित हुआ फिर राजा ने उस महा यज्ञ अश्वमेध को बहुत भोजन की वस्तु समेत बड़ी दक्षिणा रखने वाला और सब अभिष्ठ गुणों से संयुक्त किया, हे जनमेजय ! वहां सर्वज्ञ वेद पाठी चारों ओर घूमने वाले याजक ब्राह्मणों ने वेदोक्त कर्मों को विधि के अनुसार किया, उन का वह कर्म जिस को कि गुरु और साधुओं से सीखा था कुच्छ भी

नाशवान और वेद के विपरीत नहीं हुआ। बड़े उत्तम ब्राह्मणों ने बड़ी विधि से योग्य कर्म किया ॥

हे राजा ! सोमपान करने वालों में श्रेष्ठ और शास्त्र के अनुसार कर्म करने वाले उन ब्राह्मणों ने सोम वल्लि का रस निकाल कर फिर क्रम पूर्वक प्रातस्सवनादिक कर्म किया। वहां कोई भी मनुष्य दुःखी दरिद्री और निर्बल न था, शत्रुओं के नाश कर्त्ता बड़े तेजस्वी भीमसेन ने राजा की आज्ञा से सदैव याचक लोगों को भोजन दिया। यहां उस बुद्धिमान का कोई सदस्य ऐसा नहीं हुआ जोकि छओं अंगों का ज्ञाता और वार्तालाप में सावधान न हो और जिसका गुरु भी न होय ॥

हे भरतर्षभ ! इस के पीछे स्तंभ खड़े होने के समय पर बिल्व काष्ठ के छः स्तंभ खदिर काष्ठ के छः स्तंभ और उतने ही यूप पलाश के। देव दारु के दो स्तंभ और श्लेष्मान्तक का एक स्तंभ यह सब युधिष्ठर के यज्ञ में खड़े किये। भीमसेन ने धर्मराज की आज्ञा से दूसरे स्वर्ण स्तंभों को शोभा के अर्थ खड़ा करवाया, चयन के अर्थ सुवर्ण की ईंटें भी तैय्यार की थीं, उस का वह यज्ञ स्थान चार वेदी रखने वाला था और अठारह हाथ विस्तृत त्रिकोण गरुड़ रूप स्वर्ण मयी पक्ष रखने वाला था ॥

इस के पीछे ब्राह्मणों ने उस २ देवता का नाम ले कर शास्त्र की विधि से विचार किये हुये पशु पक्षी भेंट किये, महात्मा युधिष्ठर के यज्ञ में स्तंभों के समीप तीन सौ पशु जिन

थे प्रथम रत्न घोड़ा था विचारे हुये साक्षात देव ऋषियों से पूर्ण गंधर्वों के गीत अप्सरा गणों के नृत्यों से युक्त किं पुरुषों समेत किन्नरों से शोभित और सिद्ध ब्राह्मणों के निवास स्थानों से चारों ओर को घिरा हुआ वह युधिष्ठर का यज्ञ शोभायमान हुआ, उस यज्ञ शाला में व्यास जी के शिष्य सर्व शास्त्र दर्शी यज्ञ रचना में कुशल श्रेष्ठ ब्राह्मण सदैव नियत थे उन्हों ने यज्ञ कर्मों के अवकाशों के समय में सब को प्रसन्न किया ॥

इकतीसवां अध्याय

—:०:—

वैशम्पायन जी ने कहा कि उत्तम ब्राह्मणों ने विधि के अनुसार दूसरे पशुओं को पका कर शास्त्र के अनुसार उस घोड़े का घात किया और विधि पूर्वक उस को तीन कलाओं से युक्त उस स्वच्छ चित्त वाली द्रौपदी को वहां बैठाया। फिर ब्राह्मणों ने उस घोड़े की चर्बी को शास्त्र के अनुसार पकाया ॥

तब धर्मराज ने अपने सब छोटे भाईयों समेत चर्बी के उस धुएँ की सुगंधी सूंघी जो सब पापों को दूर करने वाली थी उस घोड़े के शेष बचे हूये जो अंग थे उन सब अंगों को ऋत्विजों ने शास्त्र की विधि से अग्नि में होमा, राजा युधिष्ठर के उस यज्ञ को इस रीति से नियत कर शिष्यों समेत व्यास जी ने राजा युधिष्ठर को आशीर्वाद किया ॥

फिर युधिष्ठर ने ब्राह्मणों को ६ हज़ार कोटि दिये और व्यास जी को पृथ्वी दी व्यास जी ने पृथ्वी को ले कर युधिष्ठर से कहा हे धर्मात्मा ! यह पृथ्वी आप की हाथ मैं ने त्याग की मुझ को इस का मूल्य दीजिये क्योंकि ब्राह्मण धन के अभिलाषी हैं। युधिष्ठर ने कहा कि अश्व मेध यज्ञ में पृथ्वी की दक्षिणा कही है यह पृथ्वी मैंने ऋत्विजों को दान की है हे वेद पाठियो ! मैं वन में प्रवेश करूंगा तुम इस पृथ्वी को विभाग करो मैं ब्राह्मणों का धन लेना नहीं चाहता मेरा और मेरे भाइयों का यह सदैव चित्त है॥

उस के इस प्रकार कहने पर सब भाईयों ने और द्रौपदी ने भी यही कहा फिर पृथ्वी और आकाश में धन्य २ का शब्द हुआ, तब व्यास जी ने युधिष्ठर को कहा कि आप ने यह पृथ्वी मुझ को दी और मैं इस को लौटा कर तुम को देता हूं तुम इन ब्राह्मणों के लिये स्वर्ण दो॥

फिर कृष्ण जी ने युधिष्ठर से कहा कि व्यास जी ने जैसा कहा है तुम वैसा ही करो, फिर युधिष्ठर ने वैसा ही किया, व्यास मुनि ने रत्नों को लेकर ऋत्विजों को दिया और उन्हों ने उन के चार विभाग किये जो कुछ स्वर्ण की वस्तु यज्ञ में थीं उन सब को भी ब्राह्मणों को दान में दे दिया, इस के पीछे बाकी सब जातियों को भी धन दिया गया। व्यास जी ने अपना भाग कुन्ती को दिया॥

प्रसन्न चित्त कुन्ती ने श्वसुर से उस प्रीति के भाग को लेकर उस धन से बहुत बड़े २ पुण्य के काम किये। हे

जनमेजय ! पाण्डव लोग राजाओं से घिरे हुये बड़े शोभायमान हुये फिर राजाओं के निमित्त भी नाना प्रकार के रत्न, हाथी घोड़े, भूषण और सुवर्ण किये गये ॥

तब उसी प्रकार राजा बभ्रुवाहन को बुला कर बहुत सा धन देकर घर जाने को विदा किया, फिर युधिष्ठर ने बहिन की प्रीति से दुःशला के पौत्र बालक को उस के राज्य पर नियत किया और बाकी सब राजाओं को भी विदा किया ॥

हे महाराज ! उस शत्रु विजयी ने भाईयों समेत उन महात्मा गोविंद जी बलदेव जी और सब वृष्णी वीरों को विधि के अनुसार पूज कर विदा किया, बुद्धिमान धर्मराज का वह यज्ञ इस प्रकार के धन रत्नों के ढेर और भोजनों के बड़े २ पर्वता-कार ढेरों का रखने वाला था जिस मे सुरा और मैरेय नाम आशवों के सागर थे हे जनमेजय ! जिस यज्ञ में घृत का कीच रखने वाला ह्रद और भोजन की वस्तुओं के पर्वत थे और जिस में रसों की कीच होय ऐसी नदियां थी, मनुष्यों ने खाडव रागादिक भोजन की वस्तुओं का तैयार होना और घात होते हुये पशुओं का अन्त न जाना, तब आशवों के मद से उन्मत्त रूप स्त्री पुरुषों की रखने वाली वह यज्ञ शाला मृदंग और शंखों की ध्वनियों से चित्त रोचक हुई दान करो और दिन रात विना रोक टोक श्रेष्ठ अन्नों को भोजन करो इस शब्द से युक्त प्रसन्न चित्त हृष्ट पुष्ट मनुष्यों से पूर्ण बड़े उत्सव रूप उस जिवनार स्थान को नाना प्रकार के देश वासी मनुष्यों ने कीर्तन किया

तब वह भरत वंशियों में श्रेष्ठ युधिष्ठर अभिष्ठ रत्न और अन्य धन की धाराओं से वर्षा करने वाला होकर पाप से रहित मनोरथों को सिद्ध करके नगर में प्रवेश करने वाला हुआ ॥

बत्तीसवां अध्याय

—:०:—

जनमेजय ने पूछा कि मेरे पितामह धर्मराज के यज्ञ में जो कुछ अपूर्व और अद्भुत वृत्तान्त हुआ उस को आप मुझ से वर्णन करें ॥

वैशम्पायन बोले हे प्रभु! उस बड़े अपूर्व वृत्तान्त को सुनो जो वहां के यज्ञ के अन्त में हुआ है तब ऋषि जाति वाले भाई बंधु दुखी और दारिद्रियों के तृप्त होने और सब दिशाओं में बड़े भारी दान की विख्यात कीर्ति होने पर युधिष्ठर के शिर पर पुष्पों की वर्षा हुई। उसी समय एक नौलेने वज्र और बिजली के समान एक शब्द किया और मनुष्य वाणी में कहा हे राजाओं! यह तुम्हारा यज्ञ उस ब्राह्मण के एक प्रस्थ परिमाण सक्तुदान के समान नहीं है जो कुरुक्षेत्र निवासी उंछ वृत्ति होकर दान का अभ्यासी था ॥

उस नौले के उस वचन को सुन कर ब्राह्मणों को बड़ा आश्चर्य हुआ और उस नौले के समीप जाकर उन्हों ने पूछा कि जिस यज्ञ में साधु लोगों का मिलाप होता है उस यज्ञ में तू कहां से आया है तेरा पराक्रम क्या है कौन शास्त्र पढ़ा है

और किस शास्त्र का तुम को ज्ञान है, कौन इष्ट देव है तुम को हम कैसे जाने जो हमारे यज्ञ की निन्दा करते हो यहां पर सब शास्त्रों को लोप न कर के नाना प्रकार की यज्ञ विधियों से कर्म किया है जो शास्त्र और न्याय के अनुसार करना योग्य था उस को उसी प्रकार से किया गया है इस यज्ञ में शास्त्र की परीक्षा के अनुसार पूजन के योग्यों का पूजन किया गया और मंत्र की आहुतियों से अग्नि में हवन किया और ईर्षा न करके देने के योग्य दान किया, क्षत्रिय लोगों को उत्तम युद्धों से और पितामह आदिकों को श्रेष्ठ श्रद्धो से तृप्त किया। वैश्य लोग पालन करने से और स्त्रियां अपने अभिष्ठ पदार्थों के मिलने से प्रसन्न हुईं इसी प्रकार शूद्र लोग कृपा और परितोषकों से और साधारण मनुष्य देने के योग्य शेष बची हुई अभिष्ट वस्तुओं से तृप्त हुये, हमारे राजा की पवित्रता से बिरादरी वाले और नातेदार भी प्रसन्न हुये, यहां जो तुम ने जैसा २ देखा और सुना है उस को सब के सामने सत्य २ वर्णन करो तुम श्रद्धा के अनुसार वचन करने वाले और बुद्धिमान हो ॥

ब्राह्मणों के वचनों को सुन कर और उन के वारंवार पूछने पर हंसते हुये नौले ने उत्तर दिया, हे ब्राह्मण लोगो! मैंने अभिमान से यह वचन नहीं कहा है मैंने जो कुछ भी कहा है यथार्थ कहा है कि यह तुम्हारा यज्ञ उस ब्राह्मण के एक प्रस्थ सतु दान के समान नहीं है, अब मुझ को यह बात आप लोगों से अवश्य ही कहना उचित है तुम एकाग्र चित्त उस वचन को मुझ से श्रवण करो, मैंने कुरुक्षेत्र निवासी उंछ वृत्ती

दान के अभ्यार्थी ब्राह्मण का जो अपूर्व और उत्तम वृत्तान्त देखा और समझा और कर्म से उस ब्राह्मण ने स्त्री, पुत्र और पुत्र की वधु सहित स्वर्ग को पाया और जिस प्रकार से यह मेरा आधा शरीर सुवर्ण का होगया अब मैं उस ब्राह्मण के उत्तम फलों को वर्णन करता हूं ॥

एक समय बहुत से धर्मज्ञ लोगों से कुरुक्षेत्र में कोई उंछ वृत्ति ब्राह्मण कापोती वृत्ति रखने वाला हूआ, वह धर्मात्मा अपनी स्त्री, पुत्र और पुत्र वधु समेत तपस्या में नियत था वह ब्राह्मण उन सब को साथ लेकर छटवें दिन सदैव भोजन किया करता था परन्तु कभी २ छटवे दिन भी उस को भोजन नहीं प्राप्त होता था, तब वह ब्राह्मण दूसरे छठवें दिन भोजन करता था, हे जन्मेजय ! एक समय बड़ा दुर्भिक्ष होने पर उस धर्मात्मा को उस नियत समय पर भी भोजन नहीं मिला तब औषधियों से रहित आश्रम होने पर वह ब्राह्मण खाली हाथ होगया ॥

अब किसी समय भी उस को भोजन नहीं मिलता था, इस लिये वह क्षुधा से पीड़ित होकर वहां से चल दिये, तब तपस्य में युक्त वह ब्राह्मण शुक्ल पक्ष में मध्यहन के समय अनाज के दानों को इकट्ठा करता हुआ क्षुधा से पीड़ावान हुआ और उसने अपनी उंछ को नहीं पाया, अपने बाल बच्चों समेत क्षुधा से महा दुःखी माया उस ब्राह्मण ने उस समय को व्यतीत किया फिर छठवें दिन के नियत समय पर एक प्रस्थ भर यव उस को प्राप्त हुये उन तपस्वियों ने उसी एक प्रस्थयव

का सत्तू बनाया फिर जपादिक नित्य कर्म करने वाले उन सब ने विधि पूर्वक अग्नि में हवन कर एक २ ग्रास आपस में विभाग किया ॥

उसी समय भोजन की इच्छा करने वाला कोई अतिथी ब्राह्मण उन तपस्वियों के पास आया। वह उस आये हुये अतिथी को देख कर प्रसन्न हुये और उन सब ने अतिथी को नमस्कार पूर्वक कुशल क्षेम पूछ कर अत्यंत पवित्र चित्त श्रद्धा और शांति से युक्त अहंकार और ममता के विना उन उत्तम ब्राह्मणों ने अपने गोत्र को ब्रह्मचर्य समेत उस से वर्णन करके उस अतिथी को अपनी कुटी में बुला लिया और कहा कि हे निष्पाप! तेरा भला हो यह अर्घ पाद्य है और यह आप का कुशासन है और यह नियम से प्राप्त हुये पवित्र सत्तू हैं आप इन को अंगीकार करो ॥

इस प्रकार से कहे हुये उस ब्राह्मण ने एक कुडव सत्तू के कर खाया परन्तु वह इतने सत्तु से तृप्त नहीं हुआ, उञ्छवृती ब्राह्मण ने उस क्षुधा युक्त ब्राह्मण को आहार का विचारांश किया कि यह ब्राह्मण किस रीति से तृप्त हो सकता है। तब उस की स्त्री ने कहा कि मेरा भाग भी इसी ब्राह्मण को दे दीजिये जिस से यह ब्राह्मण तृप्त हो जाय ॥

स्त्री के इस प्रकार के वचन सुन कर ब्राह्मण आश्चर्य युक्त हुआ परन्तु उस ने अपनी स्त्री को क्षुधा युक्त जान कर उस का भाग देना अंगीकार नहीं किया और उस को यह

वचन कहा कि हे सुन्दरी ! कीट, पतंग, और मृगों की भी स्त्रिया रक्षा और पोषण के योग्य हैं तुम इस प्रकार कहने के योग्य नहीं हो स्त्री पर पुरुष को सदैव दया करनी चाहिये वह स्त्री उस पुरुष से रक्षित और पोषित होती है। धर्म कार्य, काम अर्थ वृद्धों की सेवा संतान, कुल और अपना व पित्रों का धर्म स्त्रियों के आधीन है, जो पुरुष रक्षा में समर्थ नहीं है वह कर्म से भार्या को नहीं जानता है और बड़ी अपकीर्ति को प्राप्त करता है अथवा अपनी प्रकाशित शुभ कीर्ति को नाश करने वाला है और उत्तम लोकों को नहीं पाता है ॥

इस प्रकार की बातें सुन कर स्त्री ने उत्तर दिया कि हे ब्राह्मण ! हम दोनों के धर्म अर्थ समान हैं मुझ पर प्रसन्न हो कर और एक प्रस्थ सत्तू के इस चतुर्थांश को ग्रहण करो हे ब्राह्मणों में श्रेष्ठ ! सत्य प्रीति धर्म और पति व्रत नाम गुण से विजय होने वाला स्वर्ग और पतिक विश्वास यह सब स्त्रियों का अभिष्ट है, माता के रुधिर और पिता के वीर्य से उत्पन्न पति बड़ा देवता है। स्त्रियों को पति की प्रसन्नता से सुख और प्रीति पूर्वक स्नेह से पुत्र फल प्राप्त होता है। तुम पोषण करने से मेरे भर्ता हो और रक्षा करने से पति हो और पुत्र देने से वर दाता हो इस हेतु से तेरे सत्तू को लीजिये जब कि तुम भी वृद्ध निर्बल, क्षुधा से पीड़ा वान हो ॥

अपनी स्त्री के इस प्रकार के वचनों को सुन कर ब्रह्म ऋषि ने सत्तू लेकर अतिथी से कहा कि हे बड़े साधु ! तुम इन

सत्तुओं को लो। ब्राह्मण ने उन को ले कर और खा कर फिर भी तृप्ति को नहीं पाया। वह इच्छी ब्राह्मण उस को देख कर शोच में पड़ गया॥

फिर पुत्र बोला हे साधू! आप इन सत्तुओं को लेकर अतिथि ब्राह्मण को दें मैं इस को शुभ कर्म मानता हूं इस लिये ऐसा कहता हूं मुझ को सदैव पूर्ण उपायों से आप की सेवा करना उचित है क्योंकि वृद्ध पिता का पालन करना साधुओं का अभिष्ट है वृद्ध अवस्था में जो पिता का पालन करता है वही पुत्रत्व भाव के फल को पाता है यह सनातन श्रुति तीनों लोकों में प्रसिद्ध है, केवल प्राणों की रक्षा से ही तुम से तप करना संभव है, प्राण ही परम धर्म हैं जोकि जीव धारियों के शरीर में नियत है॥

पिता ने उत्तर दिया कि हे पुत्र! तू हज़ार वर्ष का भी होकर मेरी दृष्टि में बालक ही माना जायगा, पिता पुत्र को उत्पन्न करके उस पुत्र के द्वारा कृत कृत्य होजाता है, हे समर्थ बेटा! मैं यह जानता हूं कि बालकों की क्षुधा बड़ी प्रबल है मैं वृद्ध हूं इससे क्षुधा को सह सकता हूं और हे पुत्र! तुम बलवान हो, वृद्धावस्था और क्षुधा मुझ को पीड़ा नहीं देती मैंने बहुत काल तक तप किया है इस से मुझ को मरने का भी भय नहीं है॥

पुत्र ने कहा मैं आप का बेटा हूं बेटा बाप की रक्षा करने से ही पुत्र कहाता है इस लिये आप अपने ही आत्मा से रक्षा करो॥

पिता ने कहा हे पुत्र ! तुम रूप, स्वभाव और जितेन्द्रिय पने से मेरे समान हो क्योंकि मैंने तुम्हारी परीक्षा करली है इस से अब तेरे सत्तु लेता हूं। तब उस प्रसन्न चित्त हंसते हुये ब्राह्मण ने यह कह कर उन सत्तुओं को लेकर उस ब्राह्मण को दिया परन्तु वह उन सत्तुओं को खाकर भी तृप्त नहीं हुआ तब वह उंछ वृत्ति ब्राह्मण बड़ा लज्जित हुआ ॥

फिर पुत्र वधू ने ब्राह्मण के प्रिय करने की इच्छा अपने सत्तु लेकर अपने श्वसुर से कहा कि हे वेद पाठी ! आप की संतान से मेरी संतान होगी आप मेरे सत्तुओं को लेकर इस ब्राह्मण को दें निश्चय करके आप की कृपा से वह मेरे अविनाशी लोक वर्तमान हुये जिन को कि पौत्र के द्वारा पाता है और जिन में जाकर फिर मनुष्य नहीं करता है पुत्र अपने वृद्ध पितरों को अस्थाग करता है यह हम सुनते हैं निश्चय करके पुत्र और पौत्र के द्वारा साधु उत्तम लोकों को भोगता है ॥

श्वसुर ने कहा हे सुन्दर व्रत आचार वाली ! मैं तुझ को वायु और धूप से शुष्काङ्ग रूपान्तर निर्बल और क्षुधा से व्याकुल चित्त देख कर किस प्रकार से धर्म का नाश करके सत्तु को ले सकता हूं हे नेक चलन ! तुम को ऐसा करना योग्य नहीं है मैं तुझ व्रत करने वाली बाह्याभ्यन्तरीय पवित्रता से युक्त सुंदर स्वभाव वाली और तप से संयुक्त और दुख से निर्वाह करने वाली को किस प्रकार छठवें दिन पर भी निराहार देखूंगा क्योंकि मुझे तुम्हारी सदैव रक्षा करनी चाहिये तुम बांधवों को प्रसन्न करने वाली और व्रत खिन्न चित्त हो ॥

वधु बोली तुम मेरे गुरु के भी गुरु हो हे प्रभु ! इस हेतु से तुम मेरे सत्तु को लो। यह शरीर माया और धर्म गुरु की सेवा के अर्थ हैं। तुम आप की कृपा से शुभ लोकों को भी पावेंगे। तुम ने यह विचार करके कि यह पालन के योग्य दृढ़ भक्ति रखने वाली और परीक्षा के योग्य है परीक्षा लेने के लिये ऐसा कहा है तुम सत्तु लेने के योग्य हो॥

ससुर बोला तुम पतिव्रता होकर सदैव इस श्रेष्ठ स्वभाव और चलने से शोभा पाती हो जो धर्म व्रत से संयुक्त तुम गुरु वृत्ती को ही विचारती हो इस हेतु से तुम्हारे भी सत्तु लूंगा तुम समझ कर छल करने के योग्य नहीं हो यह कह कर उस के सत्तु लेकर ब्राह्मण को दिया॥

उन के इस कर्म से वह अतिथी ब्राह्मण बड़ा प्रसन्न हुआ और उस ब्राह्मण से कहने लगा हे ब्राह्मणों में श्रेष्ठ ! न्याय से इकट्ठे किये हुये और धर्म से समर्थ के अनुसार तेरे दिये हुये सिद्ध दान से मैं बहु प्रसन्न हूं आश्चर्य है कि स्वर्ग में स्वर्ग वासियों को तेरे दान की प्रसिद्धी विख्यात की जाती है। आकाश से गिरी हुई इस पुष्पों की वृष्टि को देखो देवता गंधर्व और जो देवताओं के अग्र वर्ती हैं और देव दूत तेरी प्रशंसा करते हुये नियत हो कर दान से आश्चर्य युक्त हैं, और जो ब्रह्म ऋषि विमानों में बैठे हुये ब्रह्म लोक चारी हैं वह सब तेरे दर्शन के अभिलाषी हैं। हे उत्तम ब्राह्मण ! स्वर्ग लोक को जाओ पितृ लोक में वर्त्तमान सब पितरों को तुम ने उद्धार किया है हे तपस्वी ! इसी हेतु से देवता भी तेरे दूना

से प्रसन्न हुये जिस कारण से कि तुम ने दुःख के समय पर भी शुद्ध चित्तपने से यह सब दान किया उस कर्म से तुम ने स्वर्ग को विजय किया यह क्षुधा बुद्धि का नाश करती है और धर्म विधि को दूर हटाती है, क्षुधा से युक्त ज्ञान भी धैर्य को त्याग कर देता है, जो मनुष्य इस को जीत लेता है वह अवश्य स्वर्ग को विजय करता है जब दान में प्रीतिमान होता है तब धर्म पीड़ा नहीं पाता है, तुम ने अपने पुत्र और स्त्री की प्रीति को न विचार कर धर्म ही को बड़ा उत्तम जान कर अपनी क्षुधा का ध्यान नहीं किया, मनुष्यों की धन प्राप्ति बड़ी कठिन है, पात्र को दान देना उस से बढ़ कर है ॥

हे ब्राह्मण ! पात्र को दान देना सब से बढ़ कर है, दान से उत्तम काल है उस से बढ़ कर श्रद्धा है और स्वर्ग का द्वार अत्यन्त सूक्ष्म है वह मनुष्यों को मोह के कारण दिखाई नहीं पड़ता है और स्वर्ग के द्वार की जो अर्गला है उस का उत्पत्ति स्थान लोभ है वह अर्गला इन्द्रियों के विषयों की प्रीति से रक्षित और दुष्प्राप्य है उस को वह मनुष्य देखते हैं जोकि क्रोध और इन्द्रियों के जीतने वाले ब्रह्म ज्ञानी और समर्थ के अनुसार दान करने वाले हैं हज़ार देने की समर्थ रखने वाला सौ दो सौ की समर्थ रखने वाला दश देवे और जो अपनी सामर्थ्य के अनुसार जल दान करे वह सब एक से ही फल कहे जाते हैं ॥

हे वेद पाठी ! कुछ पास न रखने वाले रान्ति देव ने पवित्र चित्त से जल दान किया था इस हेतु से वह स्वर्ग को गया

कि न्याय से प्राप्त श्रद्धा से पवित्र सूत्म दोनों से वह धर्म पूर्ण होता है राजा नृग ने हजारों गो दान ब्राह्मणों को दिये वह एक परखाऊ साधारण गौ का दान करके नरक को गया सुंदर व्रत वाला उसी नरक का पुत्र राजा शैव्य अपने शरीर के मांस के दान से शुभ कर्मियों के लोकों को पाकर स्वर्ग में आनन्द करता है ॥

सत्पुरुषों की सामर्थ से अच्छा इकट्ठा किया हुआ-धन धर्म की वृद्धि का कारण है, मनुष्यों का ऐश्वर्य कारण नहीं है क्यों कि जैसा न्याय पूर्वक इकट्ठे किये हुये धन के द्वारा फल मिलता है वैसा नाना प्रकार के यज्ञों से भी नहीं मिलता है क्रोध दान के फल का नाश करता है लोभ से कोई भी स्वर्ग को नहीं जाता है ॥

न्याय रूप अजीविका रखने वाला, दान का जानने वाला मनुष्य तप के द्वारा स्वर्ग को भोगता है यह तेरा कर्म फल बड़ी दक्षिणा वाले बहुत राजसूर्य और अश्वमेध यज्ञों के समान नहीं है किन्तु उन से भी बड़ा है। तुम ने प्रस्थ भर सत्तु के दान से वह अविनाशी ब्रह्मलोक विजय किया है जो कि रजोगुण से रहित है, तुम सुख पूर्वक ब्रह्मलोक को जाओ तुम सब के लिये श्रेष्ठ और दिव्य विमान सन्मुख वर्तमान हैं, हे ब्राह्मण! मैं धर्म हूं मुझ को देखो और इच्छा के अनुसार विमानों पर चढ़ो तुम ने अपने शरीर का उद्धार किया तेरी शुभ कीर्ति लोक में नियत है अब तुम स्त्री पुत्र और पुत्र वधु समेत स्वर्ग को जाओ ॥

धर्म के इस प्रकार के वचन कहने से वह ब्राह्मण सब कुटुम्ब समेत विमानों पर चढ़ कर स्वर्ग को गया, नौला बोला तब मैं अपने बिल से बाहर निकला और सत्तु की सुगन्धी, जल की तरी, पुष्पों के मर्दन और साधुओं के उन सत्तुओं के कणकों से और उस ब्राह्मण के तप से मेरा शिर सुवर्ण का हुआ। हे ब्राह्मणों! उस सत्य संकल्प ब्राह्मण के सत्तु दान से मेरा आधा शरीर सुवर्ण का हो गया। उस बुद्धिमान के तप से इस बड़े फल को देखो हे ब्राह्मण लोगो प्रसन्न चित्त हो कर यह इच्छा कर के कि यह शेष बचा हुआ आधा अंग भी सुवर्ण का हो जाय वारंवार तपोवन और यज्ञों में जाता हूं। उसी प्रकार मैं इस बुद्धिमान युधिष्ठर के इस यज्ञ को सुन कर बड़ी आशा से यहां आया परन्तु मेरा शेष आधा अंग सुवर्ण का नहीं हुआ। इस हेतु से मैंने हंस कर यह वचन नहीं कहा है॥

यह यज्ञ किसी दशा में भी उस एक प्रस्थ भर सत्तु दान के समान नहीं है क्योंकि उस समय उन प्रस्थ भर सत्तू के गुणों से मेरा आधा शरीर सुवर्ण का हुआ, इस से मेरे मत से यह बड़ा यज्ञ उस सत्तू दान के समान नहीं है, यह नौला उन सबों से ऐसे २ वचन कह कर उन की दृष्टियों से गुप्त होगया और वह ब्राह्मण अपने २ घरों को गये॥

वैशंपायन बोले कि हे राजा जनमेजय! उस महा अश्वमेध यज्ञ में जो अद्भुत वृत्तांत हुआ वह मैं ने तुम से कहा। तुम को यज्ञ में किसी प्रकार से भी आश्चर्य न करना चाहिये यह हजारो कोटि ऋषि हैं जो तप के द्वारा स्वर्ग को गये।

सब जीव मात्रों से शत्रुता न करना, संतोष, सुस्व भाव, सत्य कथन, तप इन्द्रियों का जीतना, सत्यता और दान यह सब समान है ॥

तेतीसवां अध्याय

—:०:—

जनमेजय ने प्रश्न किया कि हे भगवन् ! जो धर्म से प्राप्त होने वाले धाम से ही स्वर्ग है तो इस सब को आप मुझ से वर्णन करें और यह भी कहें कि सब यज्ञों में पूर्ण निश्चय कैसे होता है ॥

वैशम्पायन जी ने उत्तर दिया कि हे शत्रु विजयी ! पूर्व समय में महा तेजस्वी अगस्त्य ऋषि बारह वर्ष की दीक्षा में स्थित हुये, वह सब धर्म वाले क्रोध और इन्द्रियों के जीतने वाले थे अगस्त्य जी ने खाने की वस्तुओं को रीति के अनुसार इकट्ठा किया और जो योग्य रीति थी वही उस समय उस महात्मा के यज्ञ में हुई, उसी प्रकार बहुत से मुनियों ने बड़े २ यज्ञ किये, अगस्त्य जी का यज्ञ होने पर इन्द्र ने वर्षा नहीं की ॥

इस हेतु से महात्मा अगस्त्य के यज्ञ में मुनियों की यह वार्त्तालाप हुई, मत्सरता से रहित अगस्त्य अन्न को देते हैं और मेघ वर्षा को नहीं करता है फिर अन्न कैसे होगा, हे ब्राह्मणों ! यह यज्ञ बारह वर्ष का है, देवता इन १२ वर्षों में वर्षा नहीं करेगा आप इस को विचार कर इस बुद्धिमान अगस्त्य के ऊपर अनुग्रह करने के योग्य हो ॥

इस प्रकार के वचन कहने पर अगस्त ने शिर से मुनियों को प्रसन्न करके कहा कि यदि इन्द्र बारह वर्ष तक वर्षा नहीं करेगा तो मैं बड़े व्रत वाले दूसरे यज्ञों को ध्येय द्रव्य से ही करूंगा यह बीज मैंने बहुत वर्षों के लिये जारी किया है। यह मेरा यज्ञ किसी दशा में भी निष्फल नहीं हो सकता। यदि देवता कैतो भी वर्षा नहीं करेगा तो वह भी नहीं रहेगा यदि इन्द्र अपनी इच्छा से मेरी प्रार्थना को नहीं करेगा तब मैं आप इन्द्र हो कर सब सृष्टी का जीवन करूंगा, और जो कुच्छ वस्तुयें मैं चाहूंगा अपने आप वह यहां चली आयेंगी अर्थात् उन के कहने से ऐसा ही हुआ॥

तब मुनि ऋषि की ऐसी उत्पन्न सृष्टि को देख कर बड़े आश्चर्य हूये और कहने लगे हे प्रभु! हम आप से प्रसन्न हैं अगस्त्य के इस तपोबल को देख कर देवराज ने वर्षा की और ऋषि को प्रसन्न किया॥

॥ अश्वमेधपर्व समाप्तम्॥

महाभारत

आश्रमवासपर्व

प्रथम अध्याय

—:०:—

सब पांडवों ने धृतराष्ट्र की और पांडवों की स्त्रियों ने गन्धारी की सेवा करना ॥

श्री नारायण पुरुषोत्तम भगवान तथा विद्या की अधिष्ठाता सरस्वती को नमस्कार कर जय नाम इतिहास को वर्णन करता हूं ॥

सांगोपाङ्ग वेदाध्ययन करके विषय वासनाओं का त्याग शम दम आदिक से जीव को ईश्वर के भेद का बोध होता है

जैसेकि धृतराष्ट्र ने किया यह वर्णन करते हैं ॥

जनमेजय ने पूछा कि मेरे पितामह पाण्डवों ने विजय द्वारा राज्य पा कर धृतराष्ट्र से किस प्रकार वर्ताव किया, वंश से हीन धृतराष्ट्र और गंधारी की क्या दशा हुई और मेरे पितामह पाण्डवों ने कितना समय राज्य किया आप यह सब कुच्छ मुझे बतलायें ॥

वैशंपायन बोले कि राज्य को पाकर पाण्डवों ने धृतराष्ट्र को अनवर्त करके पृथ्वी का पालन पोष्ण किया, हे राजन्! संजय, युयुत्सु और दासी पुत्र विदुर धृतराष्ट्र की सेवा में नियुक्त हुए, पाण्डवों ने १५ वर्ष धृतराष्ट्र की आज्ञानुसार राज्य कार्य किये धर्मराज युधिष्ठिर की आज्ञा से सब वीरों ने सदैव धृतराष्ट्र को दंडवत करके राजा का नित्य मान किया और मस्तक पर सूंघे हुए पाण्डवों ने राज्य कार्य किये ॥

कुंति, द्रौपदी, सुभद्रा और पाण्डवों की अन्यं स्त्रियों ने गंधारी की सेवा विधि पूर्वक की और सास श्वसुर के संग अच्छा वर्ताव किया ॥

युधिष्ठर ने नाना प्रकार के वस्त्र भूष्ण और उत्तमोत्तम भक्ष्य भोज महाराज धृतराष्ट्र को भेट किये उसी प्रकार कुन्ती ने भी गांधारी को गुरुवृत्ति से वर्ताव किया ॥

विदुर, संजय, युयुत्सु और कृपाचार्य जी धृतराष्ट्र से प्रीति मान हुए। व्यास जी नित्य उनको पुराणों की कथा सुनाते रहे धृतराष्ट्र की आज्ञानुसार विदुरजी ने धर्म व्यवहार कर्मों को कराया। राजा धृतराष्ट्र ने बहुत से कैदियों को

और वधदंडवाले मनुष्यों को कारागार से छोड़ा परन्तु राजा युधिष्ठर ने कभी कुच्छ नहीं कहा, राजा की रसोई का पूर्ण प्रबन्ध पहिले से भी अधिक कर दिया, फूल मालादि उत्तम २ पहिरने योग्य नित्य राजा को पहुंचाई, और जो राजा लोग युधिष्ठर को प्रणाम के लिए आते वह सब से पहिले महाराज धृतराष्ट्र की हाज़री भरते थे ॥

कुन्ति, द्रौपदी, सुभद्रा, नाग कन्या आदि बहुत सी स्त्रियें गन्धारी की सेवा में प्रवृत हुईं और इन्हों ने गंधारी की इस प्रकार सेवा की कि वह पुत्र वियोग को भूल गईं ॥

महाराज युधिष्ठर ने इस प्रकार का प्रबंध कर दिया कि वह किसी प्रकार का भी क्लेश न पावे, अर्जुन, नकुल और सहदेव ने राजा की पूर्ण आज्ञा को पाला परन्तु भीमसेन के हृदय से वह बात दूर नहीं होती थी जो कि धृतराष्ट्र की दुर्मति से द्यूत के द्वारा उत्पन्न हुई थी ॥

दूसरा अध्याय

धृतराष्ट्र और गन्धारी का पुत्रों के श्राद्धों में अनेक प्रकार के दान देना और पांडवों का आज्ञा पालन करना ॥

वैशंपायन बोले कि हे राजन्! महाराज धृतराष्ट्र ने पांडवों

के आज्ञाकारी होने और ऋषियों की संमति से पूर्ववत ही सुख पाया और अनेक दान दिये ॥

राजा धृतराष्ट्र ने अपनी इच्छा प्रकट की कि मैं श्रद्धादि कर्म किया चहता हूं, महाराज धृतराष्ट्र की यह इच्छा जान युधिष्ठर ने अपने सब भाईयों और मंत्री वर्ग को आज्ञा की कि महाराज की कामना पूर्ति में किसी प्रकार की न्युनता न रहे, जो कोई इनकी आज्ञा भंग करेगा वह मेरा शत्रु है और दंडके योग्य है जो इनकी आज्ञा पालन में रहेगा वही मेरा मित्र और पारितोषक का अधिकारी है ॥

राजा धृतराष्ट्र ने अपनी इच्छा अनुसार सहस्रों प्रकार के दान दिये और श्राद्ध शास्त्र अनुसार किये । सब जन इनकी आज्ञा पालन में तत्पर रहे । इनके इस प्रकार गुरु भावना से सेवा देख धृतराष्ट्र इसपर गुरु के समान प्रीत पूर्वक वर्ताव करने लगा. माता गंधारी ने भी पुत्रों के ना होने पर वेद पाठी ब्राह्मणों को दान दिये ॥

वैशंपायन बोले कि राजा धृतराष्ठर पांडू नन्दन युधिष्ठर में किसी प्रकार सेवा और आज्ञा पालन में अप्रिय न देख सदा प्रसन्न रहते माता गंधारी भी इनकी सेवा से ऐसी प्रसन्न हो गई कि वह अपने पुत्रों की मृत्यु को भी भूलगई जो कुच्छ छोटा बड़ा काम राजा कहते युधिष्ठर तनिक विलम्ब न होने देते, दुर्योधन की कठोरता स्मरण कर पश्चताप करते और नित्य स्नान संध्या नित्य आशीर्वाद देते कि युद्धों में इनकी विजय हो ॥

राजा युधिष्ठर चारों वर्णों से एकसा प्यार करता, राजा धृतराष्ट्र और गंधारी युधिष्ठर आदि सवपर प्रसन्न थे परन्तु भीमसेन पर इतने अधिक प्रसन्न नहीं थे क्योंकि वह भी इ.को देख कर चित दुखी होताथा और राजा युधिष्टर की आज्ञानुसार कर्म करने लगे ॥

तीसरा अध्याय

—:o:—

महाराज धृतराष्ट्र का यम नियम पालन और वान प्रस्थान के लिये युधिष्ठर से पूछना ॥

वैशंपायन बोले संपूर्ण राज्य में सब मनुष्यों ने धृतराष्ट्र और युधिष्ठर में तनिक भी अंतर नहीं देखा। जब कभी राजा धृतराष्ट्र को अपना दुर्बुद्धि पुत्र याद पड़ता तो हृदय में भीमसेन को गालियें देता इसी प्रकार भीमसेन ने भी कभी शुद्ध चिंतन नहीं किया था

एक दिन भीमसेन के मुख से निकले शब्द राजा ने अपने कानों सुने "कि इस अंधे राजा के सब पुत्रों को मैंने ही मारा है इत्यादि" इसी प्रकार गांधारी ने भी कई बार भीमसेन के मुख से परोक्ष में निन्दा के वचन सुने, हे राजन्! इस प्रकार भीमसेन के कठोर वचनों को सुन धृतराष्ट्र को वैराग्य हो गया ॥

यह समाचार युधिष्ठरादि भाईयों ने सुना। राजा धृतराष्ट्र ने अपने सब संबंधियों को एकत्र करके कहा कि हे

मित्रवर्ग आप को विदित है कि मेरे ही अपराध से कौरवों का नाश हुआ क्योंकि मैंने ही बरादरी के भय को बढ़ाने वाले दुर्योधन को राज्याभिषेक किया और विदुर और व्यास तथा श्रीकृष्ण जी आदि अनेक बुद्धिमानों के समझान पर भी मैं न माना और पांडवों के राज्य का भाग उन्हें न दिया। यह पाप कर्म मेरे मन में हर समय दुःख को उत्पन्न करता है। इसलिये अब मेरी आशा है कि मैं बानप्रस्थ आश्रम धारण कर तप करूं ॥

आजकल भी मैं कभी चौथे दिन कभी आठवें दिन केवल शरीर की रक्षार्थ अल्प अहार करता हूं और मृगचर्म्म के आसन पर सोता हूं मेरे इस व्रत धारण की युधिष्ठर को खबर तक नहीं यदि उसे खबर हो तो वह बड़ा दुखी हो तब यशस्वनी गंधारी ने भी यही प्रण किया है ॥

फिर महाराज युधिष्ठर से कहा कि हे पुत्र! मैं ने तेरी सेवा से परम सुख पाया, बड़े२ दान धर्म्म किये, द्रौपदी के अप्रिय करने वाले दुर्योधनादि अपने कर्मों का फल पागये गंधारी भी आप पर अतीव प्रसन्न है। अब मैं गंधारी सहित बानप्रस्थ आश्रम ग्रहन करना चहता हूं आप आज्ञा दें क्योंकि इस कुल की यह मर्यादा है कि वृद्धावस्था में बन में निवास कर बड़े २ तपों से इस जन्म को सुफल करें इस लिये आप मुझे गंधारी सहित बन में जाने की आज्ञा दें। वहां मैं गंधारी सहित निराहारादि व्रत धारण कर तप करूंगा।

जिस का फल तुम को भी प्राप्त होगा ॥

यह सुन कर महाराज युधिष्ठर ने कहा कि हे राजन्! मुझे धिक्कार है कि आप ने इस प्रकार निराहारादि व्रत भूमि शयन किया जिस की मुझे तनिक भी सूचना नहीं हुई ॥

हाय मेरे जीते जी आप इस प्रकार के क्लेश सहन कर रहे हैं मुझे धिक्कार है। हे पिता! मुझे इस राज्य, यज्ञ, तप और सुख से क्या है जो आप जैसे पूज्य पाद इस प्रकार दुःख पा रहे हैं, हे महाराज! आप ही मेरे माता पिता और गुरु हैं मैं आप के विना किस प्रकार रह सकता हूं, हे राजन्! आप का और सपुत्र युयुत्सु है उस को या और जिसे आप चाहें यह राज्य दें मैं वन को जाऊंगा आर सुख पूर्वक यहीं निवास करें, महाराज! आप ही राजा हैं मैं आप से सनाथ हूं फिर मैं कैसे आज्ञा दे सकता हूं ॥

हे राजन्! मैं कुन्ति और गंधारी में तनिक भेद नहीं जानता यदि आप मुझे छोड़ कर जायेंगे तो मैं शपथ से कहता हूं कि मैं भी आप के पीछे २ चलूंगा। कृपा पूर्वक आप अपने मन की पीड़ा को दूर करें ॥

राजा धृतराष्ट्र जी ने कहा कि हे पुत्र! तुम ने मेरी बड़ी सेवा की मैं तुझ पर अतीव प्रसन्न हूं परन्तु! अब मैं कुल मर्यादा के पालन के लिये वन में तप करने को जाना चाहता हूं आप आज्ञा दें ॥

फिर राजा ने कृपाचार्य्य और संजय से कहा कि आप भी राजा युधिष्ठर को समझायें इतना कह कर उस राजा ने निर्जीव के समान हो गंधारी का सहारा लिया ॥

यह देख राजा युधिष्ठर बोल उठा कि हाय ! मुझे धिक्कार है कि यह महाराज लोहे के भीमसेन को हाथों में कुड़कने वाले आज इतने निर्बल होगये हैं कि स्त्री का सहारा लें और मुझे इन की इतनी निर्बलता की खबर तक न हो मुझ पापी का अनेक वार धिक्कार है धिक्कार ॥

यदि इन्हों ने इस प्रकार निराहार व्रत धारण किये हैं तो अब मैं भी निराहार व्रत को धारण करूंगा, यह कह कर राजा ने उन के मुख में जल डाला और पंखे से वायु की और धीरे २ अपने हाथों से उन के अंगों को दवाने लगा ॥

इस प्रकार राजा सचेत हो कहने लगा कि हे पुत्र ! आप के स्पर्श से मैं सचेत हूआं हुं मैं आप के मुख को चूमनी और आपको गले लगाना चाहता हुं इस में मेरा बड़ा आनन्द है ॥

वैशंपायन बोले कि तब महाराज युधिष्ठर ने पुत्रभाव से सब अंगों को स्पर्श किया और राजा ने पिता भाव से शिर को सूंघा ॥

उस समय पास बैठे हुये विदुर आदिक अत्यंत दुःख से रो पड़े परन्तु युधिष्ठर से कुछ न कह सके और कुन्ती आदिक सब स्त्रियों की भी आंसू चल निकली ॥

राजा धृतराष्ट्र ने फिर कहा कि हे पुत्र ! आज्ञा दीजिये तो हम वन की यात्रा करें ताऊ जी के इन वचनों को फिर

सुन युधिष्ठिर ने कहा कि हे पिता ! मैं राज्य और अपने सुख को नहीं इतना चाहता जितना कि आप का प्रिय चाहता हूं यदि आप मुझ को प्यारा समझते हैं तो पहिले आप भोजन करें और फिर बात करें ॥

चौथा अध्याय

व्यास ऋषि का महाराज युधिष्ठर को समझाना ॥

व्यास जी बोले हे धर्म पुत्र युधिष्ठर ! महा तेजस्वी धृतराष्ट्र जैसे कहते हैं आप उस को मान लें, मेरी सम्मति में यह वृद्ध महाराज अपने पुत्रों की मृत्यु के दुःखों को सहार नहीं सकता और गंधारी भी बड़ी कठिनता से पुत्र वियोग को सहन कर रही है यदि तुम ने इन को आज्ञा न दी तो इन के माया व्यर्थ निकल जावेंगे, यह महात्मा प्राचीन राज ऋषियों की सी उत्तम गति प्राप्त करना चाहता है क्योंकि क्षत्री या तो युद्ध में मर कर अच्छी गति पाता है या तप से परम गति प्राप्त कर सकता है, तुम इसे बाधा न करो ॥

यह सुन कर युधिष्ठर ने प्रार्थना की कि हे देव ! आप ही पिता, माता और गुरु हैं आप ही इस कुल के शुभ चिंतक और मेरे कल्याण दाता हैं, मैं आप की आज्ञा भंग नहीं कर सकता,

व्यास जी ने कहा कि यह सब सत्य है यह राजा वृद्धावस्था पा उपनिषदों की विचार में लगा है ।

आप का पिता पांडू भी गुरुओं के समान इन की शुश्रुषा करता था आपने भी रत्नों के पहाड़ों से शोभायमान दक्षिणा वाले यज्ञों से पूजन किया, पृथ्वी को भोगा और प्रजा की पालना की । आप के वन में जाने पर १३ वर्ष पर्य्यन्त अपने पुत्र की स्वाधीनता में नियत हो राज्य किया और दान दिये । अब आपने भी गंधरी सहित धृतराष्ट्र की सेवकों सदृश आज्ञा पालन में त्रुटि नहीं की अब आप ताऊ जी को तप करने की आज्ञा दें क्योंकि इन का अब यही अभिप्राय है ॥

वैशंपायन बोले कि व्यास देव जी राजा से यह कहला कर कि "ऐसा ही होगा" वन को चले गये । राजा युधिष्ठिर ने झुक कर हाथ जोड़ ताया जी से प्रार्थना की कि मुझ को व्यास, कृपाचार्य्य और विदुर जी ने भी कहा है और मैं आप की आज्ञा पालन करना अपना धर्म समझता हूं हे राजन् ! मैं हाथ जोड़ प्रार्थना करता हूं कि जब तक आप आश्रम को न जायें तब तक आप को आहार पानादि करना चाहिये ॥

पांचवां अध्याय

—:o:—

राजा धृतराष्ट्र का महाराज युधिष्ठर को राज्य सम्बन्ध शिक्षा देना ॥

वैशंपायन बोले कि इस प्रकार युधिष्ठर के कहने पर महाराज धृतराष्ट्र गंधारी, विदुर, संजय और कृपाचार्य सहित महल में गये और वहां पर प्रातः सन्ध्यादि कर ब्राह्मणों को भोजन करा राजा ने आप भी भोजन किया ॥

फिर गंधारी ने कुंति आदि राज स्त्रियों सहित भोजन पाया, विदुर आदि भी भोजन से निवृत्त हो धृतराष्ट्र के पास फिर आ बैठे ॥

तब महाराज धृतराष्ट्र ने युधिष्ठर की पीठ पर हाथ फेरा और कहा हे राजर्षभ कौरव नंदन ! आठ अंग युक्त अर्थात् स्वामी आमात्यादिक में सावधानी से तुझे राज्य करना चाहिये ॥

हे राजन् ! तुम सदैव उन की उपासना करो जो विद्या से वृद्ध हैं जो वह कहें उसे बिना विचारे ही करो नित्य प्रातः काल विधी पूर्वक उनका पुजन कर नित्य कर्म आज्ञा से कार्य आरंभ करो इस से तुम्हारे सब कार्य सफल होंगे ॥

सब इन्द्रियों की घोड़े के समान रक्षा करो, शिक्षक बुद्धिमान् मंत्रियों को सब अधिकारों पर नियुक्त करो । निज

देश निवासी परीक्षित दूतों से शत्रुओं का गुप्त भेद पाओ। तेरा नग्र सब प्रकार से रक्षित हो, कुल और स्वभाव से परीक्षा किये हुए मनोरथों से तेरे राज्य कार्य शोभा को पावें॥

हे राजन्! भोजन और रंग वास से भी तू सदैव रक्षित रहे॥

हे युधिष्ठर! तुम सुंदर स्वभाव युक्त ज्ञानी कुलीन ब्राह्मणों को मंत्री बनाओ और उन्हीं से सम्मति लो बहुत मनुष्यों से सलाह मत करो यह भी याद रखना कि सम्मति एकांत स्थान में करो रात्रि काल को सलाह कभी न करना सम्मति स्थान में बन्दर, पक्षी, कुटिल कपटी मनुष्य आने न पावें क्योंकि राजाओं के मंत्र भेद में जो दोष होता है वह किसी प्रकार दूर नहीं हो सकता॥

हे राजन्! तुम ने मुकद्दमों के फैसले के लिये विश्वासित, धर्मज्ञ, नीति वेत्ता और रिश्वत न लेने वाले पुरुषों का नियत करना॥

हे राजन्! प्रातःकाल स्नान सन्ध्यादि से निपट तेरा पहिले यह काम होना चाहिये कि जिन पुरुषों को कोश में अधिपति बनाया है उन से रिपोर्ट लो, कोश को देखो और फिर पीछे भोजन करो, ब्राह्मणों से सदैव सायंकाल मिलना, कार्य्यार्थ का निर्णय रात्रि के चौथे पाहर में किया करना॥

हे राजन! नित्य नियत समय पर राजा के योग्य वस्त्र भूषणादि तथा उचित अस्त्र धार कर राज्य सिंहासन पर बैठना, खजाने के बढ़ाने का उपाय सदैव सोचते रहना॥

हे राजन ! यह बड़ी सावधानता से देखते रहना कि जो मनुष्य तुम्हारे छिद्र चाहने वाले और शत्रु हैं उन को विश्वासित मनुष्यों से तत्काल मरवाते रहना ॥

हे राजन ! सेना पति बनाने में तुझे विशेष ध्यान रखना चाहिये सेना पति सदैव दृढ़ दृष्टि शूर दुःखों के सहने वाले शुभ चिंतक और राज्य युक्त होना चाहिये ॥

हे राजन ! ज्ञानी राजा को गुणी मनुष्यों के गुण की कदर करना उचित है पर्वत के समान अपने २ कर्म पर उन ही लोगों को तुम ने सदैव नियत करते रहना ॥

छटा अध्याय

—:o:—

राजा धृतराष्ट्र का युधिष्ठर को युद्ध विधि और शत्रु से वर्त्ताव की नीति का वर्णन करना ॥

धृतराष्ट्र बोले कि हे पुत्र ! शत्रुओं के सब मंडलों (राजाओं के विरोधादि बारह मंत्रियों में प्रधान गुण बहतर) अच्छी प्रकार से जानने के लिये सदैव भली भान्ति यत्न करते रहना । शत्रु के मित्रों को भी जानो, अपने मित्र और मित्र के मित्रों को भी जानना आवश्यक है ॥

हे राजन ! जब अपना पक्ष प्रबल हो तो शत्रुओं से संधी कभी न करना और यदि निर्बल पक्ष हो तो संधी

करना ही उचित है । संधी करते समय युद्ध व्यय, मित्र हाथी घोड़ों का बदला ले संधी के विश्वास के लिये राज कुमार को अपने पास ठहराये ॥

अपनी प्रजा में जो अपाहज, अंधे और लंगड़े हैं उन की सदा रक्षा करता रहे, वृद्धि के चाहने वाले राजा को आश्रितों की सदा रक्षा करते रहना चाहिये ॥

हे राजन् ! तुम मंत्रियों द्वारा सदैव शत्रुओं में विरोध और उन के खजाने में हानी करते रहना, निर्बल शत्रु से भी असावधान न रहना, हे पुत्र ! सदैव वैर वृत्ति को धारण करना यदि बलवान् से पल्ला पड़े तो झुक कर नम्रता से टाल देना और यदि निर्बल हो तो उस को डाट कर नाश कर देन ॥

सातवां अध्याय

—:-०-:—

राजा धृतराष्ट्र का शत्रु पर चढ़ाई आदि करने के नियम तथा अन्य शिक्षा का उपदेश ॥

धृतराष्ट्र बोले हे राजन् ! संधी और विग्रह का भी ध्यान रखना इस के उत्पत्ति स्थान दो हैं शत्रु की प्रबलता और निर्बलता ॥

सदा पहिले अपना बलाबल विचार कर अर्थात जब सेना प्रसन्न हो तो विजय के उपायों को विचारना शत्रु के समीप

वर्तमान होते समय विप्रीत कर्म किया जाता है इस लिये दुर्ग रह कर ही शत्रुओं के दुःख, विरोध भय दिखाना अपनी ओर आकर्षण और युद्ध में शत्रु सेना का विनाश ॥

शत्रु पर चढ़ाई करते समय शास्त्र वेता शत्रु की तीन प्रकार की समर्थ का पाहिले विचार करे अर्थात उसके उत्साह, प्रभुशक्ति और मंत्र शक्ति को देख ले ॥

चढ़ाई करते समय अपने साथ धन, मित्र, आटवी, भृत श्रेणी बल साथ रखे, राजा पर कई प्रकार की आपत्तियों का पड़ना सम्भव है, हे राजन्! इस लिएं इन से बचने के लिये सदा सावधान रहना योग्य है, सदा शरद ऋतु में शत्रु पर चढ़ाई करना ॥

राजन् चढ़ाई में तुम ने सदैव तृण (हाथी घोड़े और मनुष्यों के भोज्य पदार्थ) हाथी, रथ, ध्वजा, अश्व, और पदाति तथा शकट, बज्र (शास्त्रास्त्र प्रभृति) सदैव अपने साथ रखना ॥

शुक्रजी ने अपनी नीति में लिखा है कि दूत के द्वारा शत्रु की सेना को जान कर युद्ध करे और समय तुस्तर शम दमादि उपायों को करे और सब से बढ़ कर अपने शरीर की रक्षा का प्रबंध करे ॥

हे पुत्र! तुम ने सदैव प्रजा की वृद्धि कारक कर्म करना चाहिये ॥

हे अपु सूदन् ? भीष्म, श्रीकृष्ण और विदुर जीने तुम को पाहिले ही समझाया है पितृ भाव से मुझे भी समझाना उचित था हे राजन् ! हजार अशवमेध करने से वह फल नहीं मिलेगा जैसे धर्मानुसार मिलता है ॥

आठवां अध्याय

—:०:—

महाराज युधिष्ठर ने आज्ञा पालन का प्रण करना, राजा का भवन में जाना और अन्य राजाओं का आना ॥

युधिष्ठर बोले कि हे राजन् ! जैसा आप ने कहा मैं सदैव इस प्रकार करूंगा फिर भी आप मुझे शिक्षा देते रहना क्यों कि भीष्म जी तो स्वर्ग में पधार गये और विदुर तथा श्रीकृष्ण जीके जाने पर मुझे कौन शिक्षा देगा ॥

धृतराष्ट्र ने कहा कि हे पुत्र ! अब आप विश्राम करो मैं भी थक गया हूं यह कह कर महाराज गंधारी के भवन में चल दिये।

जब यह आनन्द से आसन पर बैठ गये तो गंधारी ने प्रार्थना की कि महाराज व्यास जी ने जो वनवास की समति दी है सो युधिष्ठर से आज्ञा ले कब तक वन को चलेंगे ॥

धृतराष्ट्र जी ने उत्तर दिया कि थोड़े समय तक चलूंगा, अब मैं मृतक पुत्रों का श्राद्ध किया चाहता हूं। यह कह

राजा ने सेवकों का सम्पूर्ण श्राद्ध साम्ग्री एकत्र करने के आज्ञा दी और युधिष्ठर को भी कहला भेजा ॥

राजा युधिष्ठर ने सब सामान तत्काल प्रस्तुत कर दिया॥

इस के अनन्तर कुरु जङ्गल देश के बहुत से राजा आये जिन के साथ बड़े २ शास्त्र तथा वेद वक्ता उत्तम २ बहुत से ब्राह्मण भी थे, उन को राजा ने कहा कि आप की जैसे मेरे साथ प्रीति है युधिष्ठर से मैंने आज्ञा पाली है आप भी मुझे जाने की आज्ञा दें। मैंने युधिष्ठर के राज्य होने पर अच्छी तरह से जान लिया है कि दुर्योधन के राज्य से अधिक सुख है। हे राजन्! फिर भी मैं वन को जाना चाहता हूं। यह सुन कर वह ढायें मार मार कर रोने लगा तब इस प्रकार उन को रोता देख कर महाराज धृतराष्ट्र ने यह कहा ॥

नवां अध्याय

—:-०-:—

राजा धृतराष्ट्र का अन्य देशीय राजाओं और पुरवासियों से वन में जाने की आज्ञा मांगनी और युधिष्ठर की सुर्पुदगी करना ॥

धृतराष्ट्र जी बोले कि पहिले शांतनु ने इस पृथ्वी पर राज्य किया, फिर भीष्म जी से रक्षित राजा विचित्रवीर्य्य ने तुम्हारा पोषण किया और यह भी आप को विदित है कि

मेरा भाई पाडूं भी तुम सब का प्यारा था और फिर मैंने भी आप लोगों की सेवा की या न की आप लोग मेरी न्यूनता को क्षमा करें, मेरे से पछि दुर्बुद्धि अभागा दुर्योधन इस सिंहासन पर बैठा उसने भी आप का कोई अपराध नहीं किया उस दुर्मत्ति के अपराध तथा राजाओं के अपमान करने से यह घोर सग्राम हुआ ॥

मेरी शुभ अशुभ कर्मों की ओर आप को ध्यान नहीं करना चाहिये, मैं वृद्ध, पुत्र हीन, अन्ध और दुःखी हाथ जोड़ कर प्रार्थना करता हूं कि आप मुझे राजा का पुत्र जान कर आज्ञा दें ॥

पुत्र शोक से दुःखित गांधारी भी हाथ जोड़ कर आप से यही आज्ञा मांगती है हम दोनों को पुत्र विहीन और वृद्ध जान कर आप आज्ञा दें, तुम्हारा भला हो हम तुम्हारी शरण हैं ॥

हम दोनों यह भी प्रार्थना करते हैं कि युधिष्ठर आप की शरण है अपने सुख दुःख और आपात्ति में इस को सहायता देनी. इस की पीठ पर हाथ रखना, इस के बड़े बुद्धिमान चतुर पराक्रमी चारों भाई मंत्री हैं और जिस प्रकार ब्रह्मा जी सब का पालन पोषण करते हैं वैसे आपत्तियों से रहित युधिष्ठर आप का पालण पोषण करेगा, मैं फिर भी आप से प्रार्थना करता हूं कि मैंने युधिष्ठर को आप के सपुर्द किया है आशा है कि आप इसे निभाहेंगे ॥

मेरे पुत्रों ने जो कुच्छ आप का अपराध किया है आप कृपा पूर्वक क्षमा करें और हम दोनों को वान प्रस्थ की आज्ञा दें ॥

महाराज धृतराष्ट्र के इन वचनों को सुन वह सब एक दूसरे के मुख को देखन और रोने लगे ॥

दसवां अध्याय

—:o:—

पुरवासियों का सब ब्राह्मण द्वारा सहमत होना, युधिष्ठर के सदा यक्त रहना और वंश की तथा कौरव धृतराष्ट्र की बड़ाई करना ॥

वैशंपायन बोले कि करुणा युक्त महाराजा के वचनों को सुन कर वह सब मूर्छागत हो मूर्तिमान होगये इस प्रकार रुदन करने वालों से राजा धृतराष्ट्र ने फिर हाथ बांध कर कहा कि मने ब्य सदैव जी तथा युधिष्ठर से आज्ञा लेनी है आप भी हम दोनों को आज्ञा दें ॥

फिर तो वह सब लोग अत्यन्त विलाप कर रुके कंठ से धीरे २ सब ने अपनी सम्मति प्रकट कर एक मत हो एक ब्राह्मण शंब नाम वेदवक्ता द्वारा राजा के करण गोचर की ॥

शंब ने कहा कि हे राजन ! जो आपने कहा सब सत्य है, इस वंश में क्या कोई राजा ऐसा नहीं हुआ जिस ने प्रजा को

दुःख दिया हो आपने हमारी माता पिता और भाई के समान पालना की दुर्योधन ने भी हमारा अप्रिय नहीं किया, हे महाराज! जिस प्रकार व्यास जी कह गये हैं आप वैसा ही करें, सकल गुण संपन्न आप से जुदा होकर सैंकड़ों वर्ष तक हम आप को नहीं भूलेंगे आप के पूर्वज राजाओं ने माता पिता के समान सदैव हमारा हित किया, आप के प्रजा पालन के गुणों से हम लोग सब अतीव कृतज्ञ हैं, दुर्योधन ने भी हम सब पर बड़ी कृपा की और अब धर्मात्मा युधिष्ठर भी हमारी पुत्रों के समान करेंगे, हम सब भी राज्य भक्ति दिखाने में त्रुटि नहीं करेंगे ॥

हे महाराज! आप जो इस युद्ध में अपना या अपने पुत्र तथा शकुनि आदि का दोष बताते हैं, इस में किसी का भी दोष नहीं यह सब प्रारब्ध के फल का कारण है। हे राजन्! भावी बड़ी प्रबल है वह लाख उपाय करने पर भी टल नहीं सकती, हे राजन्! आठारह अक्षौणी सेना, भीष्म, कर्ण, कृपाचार्य्य, द्रोणाचार्य्य, नकुल और सहदेव सरीखे वीरों से सुशिक्षित भावी के ही वश से नष्ट हुई ॥

हे राजन्! आप के पुत्र ने क्षत्री धर्म को पाला है वह अवश्य स्वर्ग में वास करता है, आप धर्म में स्थित हो शुभ गति पावेंगे ॥

पांडव लोग स्वर्ग की भी रक्षा कर सकते हैं। पृथ्वी की रक्षा उन के लिये किया कठिन है सब प्रजा पांडवों के सुख दुःख में साथी होगी क्योंकि वह सुंदर स्वभाव वाले हैं।

महाराज युधिष्ठर जितेन्द्रिय, कुलीन और कुबेर केसमान हो कर राज करेगा यह बड़ा दयावान सभ्य, पुत्रों के समान हमारी पालना करने वाला है, भीम और अर्जुन आदि भी उस के संग से मनुष्यों के अप्रिय नहीं करेंगे ॥

कुंति द्रौपदी अखुण रानियें भी हमारी पुत्रों के समान रक्षा करेंगे आप ने जो पूण हित हम लोगों से किया युधिष्ठर उसें बढ़ायेगा ॥

हे राजन् ! आप युधिष्ठर की ओर से निश्चिन्त हो धर्म कार्य्य को करो हे पुरुषोत्तम तुम को नमस्कार है ।

यह सुन कर राजा धृतराष्ट्र बड़े प्रसन्न हुये और सब का आदर सत्कार कर सब को धीरे २ विदा किया और आप भी राज्य भवन में चले गये ॥

ग्यारवां अध्याय

—:o:—

विदुर जी का धृतराष्टर से श्राद्ध करने के लिये आज्ञा मांगना, युधिष्ठर, अर्जुन का मानना और भीमसेन का न मानना ॥

वैशंपायन बोले कि प्रातः काल होते ही धृतराष्ट्र जी ने विदुर जी को युधिष्ठर के पास भेजा उन्हों ने जाकर राजा का संदेशा दिया कि महाराज धृतराष्ट्र बनवास के लिये

दीक्षित राजा युधिष्ठर इस कार्तिकी पूर्णमाशी को वन की यात्रा करेंगे और यह चाहते हैं कि जाने से पहिले भीष्म, द्रोणाचार्य्य, सोमदत्त, बाल्हीक और अपने सब पुत्रों का श्राद्ध करें और यदि आप कहें जयद्रथ का और अन्य जो सम्बंधी मारे गये हैं उन का भी श्राद्ध करना चाहते हैं। यह सुन कर युधिष्ठर और अर्जुन ने प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार किया परन्तु भीमसेन सहमत न हुये ॥

यह देख अर्जुन जी ने भीमसेन से कहा कि हे तेजस्वी भीमसेन! आप वन में जाने के लिये दीक्षित ताऊ जी की आज्ञा को स्वीकार करें क्योंकि इस कारण यदि आप इनकार करते हैं तो इस में हमारी निन्दा होगी आप देने के योग्य हैं, लेने के नहीं आप यह तो विचारें कि यह वही ताऊ जी हैं जिन से हम प्रार्थना करते थे, आज वह आप से मांग रहे हैं आप को धन में संकोच नहीं करना चाहिये युधिष्ठर ने भी अर्जुन के कथन की पुष्टी की तब भीमसेन बोला ॥

हे राजन! हम भीष्म जी का श्राद्ध करेंगे, राजा सोम दत्त, भूरी श्रवा, बाल्हीक, द्रोणाचार्य और अन्य नातदारोंका श्राद्ध करेंगे, कुंति कर्ण का श्राद्ध करेगी, राजा धृतराष्ट्र श्राद्ध न करें ॥

मेरी यह सम्मति है कि वह कुल कलंकी दुर्योधन जिस की दुर्मति से कौरवों और अन्य राजाओं का विनाश हुआ वह प्रसन्न न हो, हे महाराज! जब उस ने द्रौपदी को और

हम सब से अत्याचार किये थे तब धृतराष्ट्र की मति कहा थी क्या आप १३ वर्ष चोरों के समान गुप्त रह कर वन के फल फूलों पर निर्वाह किया था क्या उस समय राजा धृतराष्ट्र को पितृस्नेह उत्पन्न नहीं होसकता था और अब आप भी उस कुल कलंक की सब बात भूल गये हैं ॥]

भीमसेन को यह कहते हुए युधिष्ठर जी ने सुन कर उसे घुरक कर कहा कि बस अब तुम्हें चुप होना चाहिये ॥

बाहरवां अध्याय

—:o:—

महाराज युधिष्ठर ने इच्छानुसार खर्च करने की प्रार्थना करनी और अपने खजाने से धन के लिये प्रार्थना ॥

अर्जुन जी बोले कि हे भीमसेन, आप मेरे बड़े यदि गुरु के समान हो इस लिये मैं दूसरी बात कहने का साहस नहीं करता हूँ सदैव धृतराष्ट्र के अपकारों को याद नहीं करना चाहिये वरंच उन की आज्ञा पालन करना ही अपना धर्म रखना चाहिये ॥

महाराज युधिष्ठर ने विदुर जी से कहा कि आप पूज्य पाद महाराज से मेरी ओर से प्रार्थना करें कि आप को जितने धन की आवश्यकता है मेरे कोश से लेवें और विदुर

जी से यह भी कहा कि भीमसेन ने बन में अनेक प्रकार की गर्मी सरदी भूख प्यास आदि २ दुःख सहे हैं इस लिये क्रोध युक्त दृष्टि करता है आप राजाजी से कहें कि इस पर क्रोध न करें ॥

आप मेरी ओर से हाथ जोड़ कर प्रार्थना करें कि वह अपने चित्त की इच्छानुसार खर्च करें किसी प्रकार का संकोच न करें और यह भी कहदें कि धन क्या वस्तु है यदि वह मेरा शरीर भी चाहें तो मैं हाजर हूं ॥

तेरहवां अध्याय

—:-o-:—

विदुर जी का धृतराष्ट्र को राजा युधिष्टर का संदेशा देना ॥

विदुर जी ने आकर कहा कि हे राजन् ! मैंने आद्योपांत आपका संदशा महाराज युधिष्टर, अर्जुन और भीमसेन को दिया, महाराज युधिष्टर बड़ी प्रसन्नता से स्वीकार करते हैं वरंच यह भी कहते हैं कि आप ताऊ जी से प्रार्थना करें कि यह राज्य सब आप का है यदि आप हमारा शरीर भी मांगे तो हम देने के लिये उद्यत हैं ॥

भीमसेन आपके पुत्रों के अपकारों को स्मर्ण करता हुआ सहमत नहीं परन्तु पीछे उस को भी समझा बुझा कर सहमत

करालिया है राजा युधिष्टर ने यह भी प्रार्थना की थी कि भीम सेन पूर्व क्लेशों को जोकि उसने वन में सहे थे भूला नहीं इस लिये वह सहमत नहीं हुआ था आप कृपा करके इस बात को मन में न लावें क्योंकि आप क्षमा करने के योग्य हैं ॥

फिर विदुर जी ने कहा कि आप दास, दासी, गौ, भेड़, बकरी और रत्नों से ब्राह्मणों का पूजन करें दीन दुःखियों अपाहजों को वस्त्र व भोजन दें पूर्ण सभा (गरीबखाने) और छब्बीलें जहां तहां बनवाय और खुले दिल से देव पूजन में धन व्यय करों ॥

यह सुनकर पांडवों को अशीर्वाद देते हुए महाराज धृतराष्ट्र ने कार्तिक शुदी पुर्णमा को श्राद्ध दिन नियत किया॥

चौदवां अध्याय

—:०:—

महाराज धृतराष्ट्र का श्राद्ध करना ॥

वैशंपायन बोले कि तब धृतराष्ट्र की इच्छानुसार महाराज युधिष्ठर ने श्राद्ध पात्र हज़ारों ब्राह्म भोज्य पदार्थ, सवारी पोशाकें, सुवर्ण मणि, दासी, दास, पट, वस्त्र, हाथी, घोड़े आदि सब द्रव्य एकत्र किये ॥

महाराज युधिष्ठर ने द्रोणाचार्य्य, भीष्म, अन्य ना०दारों और अपने एक २ पुत्र का नाम लेकर विधि पूर्वक श्राद्ध किया

और बड़ी २ दक्षिणायें देकर सब ब्राह्मणों को प्रसन्न किया ॥

फिर महाराज धृतराष्ट्र ने सब वर्णों को नाना प्रकार के भोजन पदार्थ से तृप्त किया ॥

इस प्रकार पुत्र, पौत्र और पितरों का श्राद्ध कर महाराज धृतराष्ट्र ने अपना और गंधारी का भी श्राद्ध किया ॥

हे राजन्! इस प्रकार निरंतर दश दिन तक महाराज युधिष्ठर की इच्छानुसार धृतराष्ट्र जी दान यज्ञादि कर अपने पितरों के ऋण से अऋण हो गये ॥

पन्द्रवां अध्याय

—:०:—

राजा धृतराष्ट्र का पाण्डवों को आशीर्वाद दे वल्कलादि धारण कर वनवास के लिये घर से निकलना ॥

वैशंपायन बोले कि यह सब यज्ञ श्राद्धादि कर दूसरे दिन प्रातः काल महाराज धृतराष्ट्र गांधारी सहित वनवासी, वानप्रस्थियों के से वल्कलादि वस्त्र पहिर पाण्डवों को बुला उन्हें आशीर्वाद दे राज्य भवन से निकले ॥

घर से निकल पांडव और कौरवों की स्त्रियों का मान किया; अन्य सेवकों को बहुत कुच्छ पारितोषक दे कर उन को विदा किया और आप चल पड़े। इन को जाते देख महाराज युधिष्ठर ने हाथ बान्ध कर उच्च स्वर से कहा कि आप कहां जाते हैं यह कह कर पृथ्वी पर गिर पड़ा। दुःखित हृदय अर्जुन ने बड़ी श्वास ले कर कहा आप क्या करते हैं यह कह कर उन्हें उठाया ॥

धृतराष्ट्र के साथ २ भीमसेन, नकुल, सहदेव तथा अन्य संबंधी और ब्राह्मण लोग चल पड़े। आंख बांध गांधारी कुन्ती का सहारा ले साथ २ चली तथा इन के साथ द्रौपदी आदि स्त्रियें धृतराष्ट्र के पीछे गांधारी के साथ २ चल पड़ीं। इन सब के रोने के शब्द कुरीनाम पक्षी के समान हुये, इन के पीछे ब्राह्मण, क्षत्रि, वैश्यों की स्त्रियें दौड़ीं, जिन स्त्रियों ने कभी चन्द्र सूर्य को भी नहीं देखा था वह भी राजा धृतराष्ट्र के मार्ग में आखड़ी हुईं, हस्तिनापुर निवासी लोग ऐसे दुःखी हुये जैसे पाण्डवों के बनवास जाते समय हुए थे ॥

सोलहवां अध्याय

—:o:—

राजा युधिष्ठरादि का धृतराष्ट्र को विदा करना कुंति ने साथ जाने का हठ करना और पांडवों का उसे रोकना ॥

वैशंपायन बोले हे राजन ! इस के पीछे महलों की अटारियों पर और मार्ग में स्त्री पुरुषों के बड़े शब्द हुये और कंपायमान राजा धृतराष्ट्र हस्तिना पुर के बुद्धिमान नामक द्वार से बार निकले राजा ने इन को बारं बार विदा किया, विदुर और संजय जी ने राजा के साथ जाने की इच्छा की, राजा धृतराष्ट्र ने कृपाचार्य्य और युयुत्सु को युधिष्ठर के सपुर्द करके लौटाया, सब लोगों क लौटने पर युधिष्ठर ने कुंति को कहा कि आप रानियों को साथ लेकर नगर को जायें मैं राजा जी के साथ जाऊंगा ॥

कुंति जी गंधारी को पकड़ कर उस के साथ चली गईं परन्तु लौटना स्वीकार न किया और कहने लगीं राजन् ! आप ने सहदेव की भालि भान्ति पालना करनी और कर्ण जो कि अपनी भूल से रण में मारा गया है उसे भी न भूलन और भीमसेन, अर्जुन और नकुल को भी प्रिय से रखना, मैं अपनी सास श्वसुर की सेवा करती हुई वन में वास करूंगी, यह सुन कर महाराज युधिष्ठर चकित से होकर कहने लगे कि आपने यह क्या विचारा है आप को यह योग्य नहीं, हे माता ! आप हमें शत्रु की सम्मति के लिये उत्साह दिलाने वाली हो आप की आज्ञानुसार हम ने शत्रुओं को विजय किया है, आप इन पुत्र वधुओं को छोड़ वन में किस प्रकार वास करोगी, अब मुझ पर कृपा करें और इस विचार को छोड़ दें, यह सुन कर भी कुंति रोती हुई चली गई ॥

तब भीमसेन ने कहा कि हे माता! आप पुत्रों से विजय-राज्य को भोग, यदि आपने यह करना था तो हम लोगों को युद्ध में क्यों प्रेरणा की थी हे माता! सबको छोड़ और वन के जाने की इच्छा छोड़ दो॥

यह और बहुत सी कुंती आदि से पुत्रों के कहने का तनिक भी विचार न किया॥

फिर द्रौपदी और सुभद्रा रोती हुई तब के पीछे दौड़ी इन्होंने भी उनका बहुत प्रयत्न किया परन्तु कुंती ने किसी का भी कहना न माना, तब पाण्डव स्त्रियों सहित रोते हुए सेवकों सहित इसके पीछे चले। तब कुंती ने नेत्रों से जल रोक कर कहा॥

सत्रहवां अध्याय

=:०:=

कुंती का भी वास के लिये जाना और पांडवों को उनके प्रश्नों का उत्तर॥

कुन्ती बोली कि हे पुत्रो! जिसलिये मैंने तुम को उत्साह दिलाया तुम घर में सब राज्य पाट हर जाने से दुःखित न हो, दश हजार हाथी के बल वाला भीम, इन्द्र सरीखा अर्जुन, नकुल और सहदेव भूखे न रहें यह सोच कर मैंने तुम को उत्साह दिलाया, हे राजन्! जिस दिन रजस्वला द्रौपदी को उन्होंने

अपूछ्रता की उसी दिन मैंने निश्चय कर लिया था कि कौरवों का नाश होना है. हे पुत्र ! जब दुःशासन ने द्रौपदी को चोटी से पकड़ा और यह मूर्छित होगई थी तब मैंने इस का बदला लेने के लिये तुम को उत्साह दिलाया था ॥

हे पुत्र ! मैंने अपने स्वामी के राज्य में बहुत व्रत, नियम और दान किये जिस का फल यह हुआ कि कृष्ण जी ने आप की पूर्ण सहायता की और यह कर्म मैं ने केवल वंश की रक्षा के लिये किये, हे पुत्रो ! अब मैं राज्य ऐश्वर्य त्याग वन में निवास कर अपने वृद्ध श्वसुर और सास की सेवा कर तप से शरीर को सुकाना चाहती हुं, हे पुत्र ! तुम भाइयों सहित लौट जाओ तुम्हारा भला हो ॥

अठाहरवां अध्याय

—:०:—

पाण्डवों का लौटना, धृतराष्ट्र और गंधारी का कुंति को समझाना परंतु कुंति का न मानना ॥

वैशंपायन जी बोले हे राजंन ! तब पाण्डव लज्जित हो परम दुखित द्रोपदी को साथ ले राजा की परिक्रमा कर लौट आये. कुंति को बनवास में जाती देख सब स्त्रियों ने बड़ा रुदन किया ॥

महाराज धृतराष्ट्र ने गंधारी और विदुर को खड़ा करके कुंति से यह वचन कहा कि तुम को युधिष्ठिर की इच्छानुसार राज्य ऐश्वर्य के भोगने के लिये घर को चले जाना चाहिये तुम अज्ञानियों के समान हठ न करो हे गंधारी, तुम भी इसे समझाओ कि यह हठ न करे ॥

तब गंधारी ने बहुत तरह समझाया परंतु उस दृढ़ प्रतिज्ञ रानी को लौटाने की सामर्थ न हुई तब इस को वनवास जाते देख कौरव स्त्रियों ने बड़ा विलाप किया ॥

पाण्डवों के नगर में पहुंचने पर नगर निवासी बाल वृद्ध उत्साह हीन परम दुखी हुये, पाण्डव भी कुंति के जाने से परम दुखित हुये ॥

महाराज धृतराष्ट्र ने उस रात्रि को तपो वन में पहुंच सायं सन्ध्या हवन किया विदुर और संजय ने कुशा की शैया तैयार की, हे राजन ! धृतराष्ट्र रात्रिकाल यहीं निवास कर प्रातःकाल को सन्ध्या और हवनादि करके सब को साथ ले उत्तर की ओर चले, उन की यह प्रीति बढ़ाने वाली रीत्रि दुख से व्यतीत हुई ॥

उनीसवां अध्याय

—:०:—

राजा धृतराष्ट्र का कुरुक्षेत्र में आदीक्षित हो तप

करना ॥

वैशंपायन बोले फिर राजा धृतराष्ट्र ने विदुर जी की सम्मति से एक पवित्र स्थान में गंगा के तट पर निवास स्थान नियत किया ॥

यहां पर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, वानप्रस्थी, इनके पास आये इन को व्यास जी ने कथा सुना और राजा ने आदर सत्कार कर विदा किया, फिर महाराज गंधारी को कुंती गंगा तट पर लेगई वहां पर राजा जीने स्नान संध्या हवनादि किये और विदुर आदि ने भी भिन्न २ तीर्थ पर स्नान किया ॥

वहां से चलकर धृतराष्ट्र साथियों सहित कुरुक्षेत्र में पहुंचे और शतयूप नायक ऋषि से मिले इस महात्मा ने राजा को विधि पूर्वक उपदेश किया और व्यास जी की सम्मति से वानप्रस्थ धर्म की शिक्षा दी ॥

इस प्रकार शिक्षा पा राजा ने वहीं निवास किया और ऋषि की बताई हुई विधि के अनुसार साथियों सहित तप करना आरंभ किया, संपूर्ण वासनाओं का रोक गंधारी सहित तप में प्रवृत हुए और तप से अपने शरीर को रुधर मांस रहीन अस्थिमात्र करदिया, विदुर प्रभृति ने भी तप के द्वारा शरीर को कृश कर राजा की सेवा भक्तिभाव से की ॥

—:o:—

बीसवां अध्याय

नारद आदि ऋषियों का धृतराष्ट्र के पास आना और राजा को उपदेश देना ॥

वैशंपायन बोले कि फिर मुनियों में श्रेष्ठ नारद, पर्वत, देवल और प्रभृति ऋषि राजा को देखने के लिये आये, कुंती ने इन की यथा योग्य सेवा और पूजन की उन्हों ने अनेक प्रकार के उपदेश कथा रूप में सुनाये और नारद जी ने कहा हे राजन ! केकय देश का सहस्राचित्य नाम राजा, शतयूप का पितामह भी राज्य पाट अपने धर्मज्ञ पुत्र को दे वानप्रस्थी हुआ, इसी प्रकार भगदत्त का पितामह तप से महेन्द्र भवन में पहुंचा और राजा प्रसध मांधाता का पुत्र पुरुकुत्स और राजा इन सब राजाओं ने इसी वन में तप कर उत्तम २ लोकों को पाया हे राजन ! तुम भी अवश्यमेव महात्माओं की गति को पाओगे ॥

महाराज पांडु भी स्वर्ग में आप को बड़ा याद करता है, यह महारानी कुंती भी गांधारी की सेवा से पति के लोक को पावेगी, हे राजन् मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि विदुर महात्मा युधिष्ठिर के रूप में और संजय उस के ध्यान से स्वर्ग को जायेगा

राजा नारद जी के इन वचनों को सुन रानी सहित

बड़ा प्रसन्न हुआ और नारद जी की पूजा की, ब्राह्मणों ने भी नारद जी का पूजन किया जिस से वह बड़े प्रसन्न हुए ॥

राजा शतयूप ने नारद जी से प्रार्थना की कि हे राज ऋषि! आप ज्ञान नेत्रों से सब का हाल जानते हैं जैसा कि आपने वर्णन किया परन्तु आपने इन राजा लोकों का वर्णन नहीं किया कृपया यह कहें ॥

नारद जी ने कहा कि मैंने दैव इच्छा से स्वर्ग में पहुंच वहां पर इन्द्र और पांडू को देखा, वहां पर मैंने इन्द्र के मुख से सुना कि इस राजा के स्वर्ग निवास के तीन वर्ष शेष हैं फिर यह राजा धृतराष्ट्र गांधारी सहित कुवेर के लोक को जायगा वहां से कुवर द्वारा मान सत्कार पा विमान पर बैठ देवता गंधर्व और राक्षसों के लोकों में घूमेगा। यह सुन राजा धृतराष्ट्र और ब्राह्मण, अतीव प्रसन्न हुए। इस प्रकार नराद ऋषि राजा को विश्वास करा अपनी इच्छानुसार चल दिये ॥

इक्कीसवां अध्याय

—:०:—

पांडवों का कुन्ती और धृतराष्ट्र के वनवास से वैराग्य पाना ॥

वैशंपायन बोले कि पांडव राजा धृतराष्ट्र और कुन्ती के वन में चले जाने से परम दुःखी हुये, सब पुरवासी भी शोच

करने लगे कि राजा रानियें वन में किस प्रकार निर्वाह करती होगी ॥

पुत्रों से रहित अंधा राजा किस प्रकार गुल्हर वन में घूमता होगा, राज्य ऐश्वर्य्य और पुत्रों को छोड़ कर महारानी कुंती किस प्रकार निर्वाह करती होगी माता के बन निवास करने पर बहुत थोड़े दिनें पांडव नगर में रहे, हे राजन्! जिस प्रकार इन को माता की चिंता थी वैसे ही ताया जी तथा विदुर की चिंता थी, बांधवों के नाश माता के बनवास ने इन के मन में तीव्र वैराग्य उत्पन्न कर दिया राज्य ऐश्वर्य्य से मन को हटा लिया पांडवों के पुत्रों के शोक तथा अभिमन्यु, कर्ण, पृष्टचि की मृत्यु ने इन को और भी दुःखित किया, हे राजन! केवल आप के पुत्र परीक्षत को देख प्राणों को उन्हों ने धारण किया ॥

बाइसवां अध्याय

—:o:—

महाराज युधिष्ठर का माता के दर्शनों के लिये वन में जाने की तयारी करना ॥

वैशंपायन बोले, कि मातृ भक्त पांडव माता के वियोग से परम दुःखित हुये सदैव इस बात की चिंता में चिता तुर रहते कि कुशांगी कुंती किस प्रकार से वहां सास सुसर

[illegible] होने से वह राजा [illegible] स्त्री सहित श्वापदों [illegible] वन में किस विध रहते होंगे इसी चिन्ता में [illegible] रहते और राज्य कार्य्य से उपराम हो गये और यह भी चिन्ता करते कि गंधारी की क्या दशा होगी ॥

इन की सुख के लिये उन्हों ने वन में जाने का विचार किया, तब सहदेव ने कहा हे राजन्! मेरी भी यही इच्छा थी कि जिस को आप से आप के भय से कह नहीं सकता था कृपानाथ मैं वृद्ध गंधारी आदि तपस्विनि कुंति को देखने के लिये जाना चाहता, आप मुझे भी अवश्य वन को दर्शन की आज्ञा दें ॥

! [illegible] ने [illegible] मैं भी [illegible] देवी को देखने की इच्छा [illegible] हे महाराज [illegible] मेरी भी यह अभिलाषा पूर्ण करें ॥

तब राजा ने सेना पतियों को बुला कर आज्ञा दी कि आप सेना को [illegible] में [illegible] देखने जाऊंगा फिर घर के सेवकों को वन यात्रा की तयारी के लिये आज्ञा दी और रथ सवारी आदि की तैयारी, धन, पदार्थ आदि के ले जाने के लिये सब को आज्ञा दी [illegible] प्रस्तुत [illegible] तक [illegible] जिस से कि अन्य लोग भी तैयार हो लें ॥

तेईसवां अध्याय

---:०:---

महाराज युधिष्ठर का भाईयों और द्रौपदी आदि रानियों सहित सेना को साथ ले कुंति और महाराज धृतराष्ट्र को मिलने जाना ॥

इस के अनंतर महाराज की आज्ञा से सब लोग बड़े २ उत्तम रथों और उतम २ घोड़ों पर और कई अन्य राजादि स्वारियों पर सवार हो गये । सब से आगे सेना पति गौतम कृपाचार्य सेना सहित आगे चले इन के पीच्छे रथ सेना सहित महाराज युधिष्ठर सेना पर आज्ञा करता हुआ इन के पीच्छे भीमसेन, इन के पीच्छे घोड़ों पर स्वार नकुल और सहदेव हुये और महाराज अर्जुन रथ की स्वारी पर चले ॥

अंतः पुर के सेवक लोगों से सुरक्षित द्रोपदी आदि अंतः पुर की रानियें पालकियों में बैठ गईं इस प्रकार से बड़ी सज धज के साथ इन्हों ने यात्रा की ॥

नगर की रक्षा के लिये महा तेजस्वी युयुत्सु और धौम्य पुरोहित को महाराज नियुक्त कर गये ॥

यमुना नदि से पार उतर श्री महाराज कुरुक्षेत्र में पहुंचे, वहां पर श्री महाराज ने दुर से ही शतयूप और महाराज धृतराष्ट्र के आश्रम को देखा तब वहां पर सब लोग बड़ी नम्रता से प्रविष्ट हुये ॥

चौबीसवां अध्याय

—:०:—

पांडवों का राजा धृतराष्ट्र और कुंती से मिलना ॥

वैशंपायन बोले कि आश्रम से बाहर ही वह सब युधिष्ठर आदि पांडव द्रौपदी आदि रानीयें अपनी सवारी से उतर पैदल हो लिये और धृतराष्ट्र के आश्रम में जो कि मनुष्यों से रहित मृगादि से सेवित तथा कदली फलों से पूरि। था जा पहुंचे और वहां तपो वृत्ति ऋषियों से महाराज ने पूछा कि मेरे पूज्य पाद पिता जी कहां हैं ?

उन ऋषियों ने कहा कि वह यमुना जी को स्नान और पुष्प सहित जल के कलश भरने गये हैं, यह सुन उन से मार्ग पूछ कर सब पांडव उधर को चल दिये, थोड़ी दूर आगे आते हुये जल कलश उठाये धृतराष्ट्र, गंधारी और कुंती को आते देख युधिष्ठरादी पृथ्वी पर गिर पड़े ॥

शीघ्रता से उठ कर सहदेव रोता हुआ माता कुंति के चरणों पर जा गिरा उस ने भी अश्रु पूरित नेत्रों की परम दृष्टि से उसे देखा और नकुल, भीम, अर्जुन तथा युधिष्ठर को देख कर कुंति शीघ्रता से उन की ओर गई, राजा धृतराष्ट्र और गांधारी भी इस के साथ ही थे, राजा धृतराष्ट्र ने शब्द और स्पर्श से उन को पहिचान उन की तसल्ली तब यह सब उन के चरणों पर गिर पड़े और दंडवत प्रणाम की ॥

तब पाण्डवों ने उन के हाथों से जल कलश आप ले लिये फिर अन्य आये हुये पुर के नर नारियों ने राजा धृतराष्ट्र को प्रणाम किया और युधिष्ठिर जी इन के नाम बताते गये। राजा धृतराष्ट्र ने सब का मान किया उस समय वह अपने आप को ऐसा जानने लगे कि मानो हम घर में बैठे हुये हैं, द्रौपदी आदि रानियों से पूजित वह तीनों अतीव प्रसन्न हुये। हे राजन्! इस प्रकार मिल कर वह सब आश्रमों को पधारे॥

पच्चीसवां अध्याय

—:o:—

धृतराष्ट्र के आश्रम पर आये हुये मुनियों ने पांडवों का हाल पूछना उन का जाना और धृतराष्ट्र ने सब से क्षेम कुशल पूछना॥

वैशंपायन बोले कि तब सब उस आश्रम में आ कर यथो स्थान पर बैठ गये, आश्रम में महाराज युधिष्ठरादि के आगमन को सुन कर आस पास के ऋषि मुनि सब पहिले ही वहां आ बैठे थे, इन मुनियों ने राजा धृतराष्ट्र से प्रार्थना की कि हम लोग इन राजा रानियों के नाम, गुण और कर्म पूछना चाहते हैं, कृपा कर के हम को सूचित करायें॥

तब संजय ने वर्णन करना आरंभ किया॥

हे ऋषियो! यह जो गौर वर्ण महासिंह के समान पराक्रमी है युधिष्ठर है, यह मतवाले गजेंद्र के समान चलने वाली लम्बी

भुजाओं वाला भीमसेन है। इस के पास वह जो श्याम वर्ण बड़ा धनुषधारी है अर्जुन है। कुंती के निकट वर्ती विष्णु रूप महा इन्द्र के समान पराक्रमी नकुल और सहदेव हैं। हे तपो धन स्वरूप पराक्रम और धर्म्म पालन में इन के समान और कोई नहीं है। यह लक्ष्मी के समान तेजस्विनी द्रौपदी है। इस के पास चद्रमा की किरणों के समान रूप वाली श्री कृष्ण महाराज की बहिन है। यह सर्पराज की कन्या उलूपी अर्जुन की भार्य्या है और यह मधुप पुष्प के समान शरीर रखने वाली चित्रांगदा भी अर्जुन की भार्य्या है यह बड़े नीले कमल के समान रूप रखने वाली भीमसेन की पटरानी है, यह चम्पक पुष्पवत मगधदेश के राजा जरासंध की पुत्री और सहदेव की पत्नी है और यह श्याम वर्ण सुंदर स्वरूप नकुल की स्त्री है, यह राजा विराट की पुत्री युद्ध में द्रोणाचार्यादि महारथियों के हाथ से मरने वाले अभिमन्यु की विधवा है और वह श्वेत ओढ़नी धारण करने वाली धृतराष्ट्र की पुत्र बधु है, इस के पुत्र और पति भी वीरों के हाथों से रण में मारे गये हैं। हे महाऋषियो यह सब स्त्रियें कौरवादि राजाओं की अंगना हैं॥

यह सुन प्रसन्नता पूर्वक वह सब ऋषि मुनि चले गये तब राजा ने सब से यथा योग्य क्षेम कुशल पूछी॥

छब्बीसवां अध्याय

—:०:—

महाराज धृतराष्ट्र का सब की क्षेम कुशल पूछना, विदुर जी से युधिष्ठिर का मिलाप तथा फल फूल राजाओं को खाने के लिये देने ॥

धृतराष्ट्र बोले कि हे महाबाहु! तुम सब भाई कुशलता से हो तेरे आश्रय में रहने वाले मंत्री और सब लोक तथा गुरु जी अच्छी तरह से हैं आप की प्रजा निरोगता से निर्भय हो कर कुशल पूर्वक है क्या तुम ऋषि प्रोक्त धर्मानुसार व्यवहार करते हो, तुम्हारा कोश न्यायोपार्जित धन से भरपुर है, क्या तुम ब्राह्मणों की नित्य पूजा करते हो और वह तुम्हारे पूजन से बहुत प्रसन्न हैं, हे राजन्! क्या तुम देवता और पितरों का यथा योग्य पूजन करते हो, आप की प्रजा की स्त्रियें अपने २ वर्ण धर्म की यथा योग्य सेवन कर रही हैं, क्या आपके महल में बहु, बेटी, बहिन अर्थात् सब स्त्रियें पूजित हैं? हे राजन्! क्या तुम्हारी किसी प्रकार से अपकीर्ति तो नहीं होती? ॥

तब राजा युधिष्ठर ने बड़ी नम्रता से प्रार्थना की कि हे महाराज! क्या आप का तप वृद्धि को पाता है और आप को बाह्या भ्यंतर से जितेन्द्रपन प्राप्त है, क्या सेवा करने वाली यह मेरी माता थकावट से रहित है? इस का वनवास सफल होगा और यह मेरी माता स्वरूप ताई तपस्विनी अपने

पुत्रों की मृत्यु से क्लेशित तो नहीं होती और हम पापियों को श्राप तो नहीं देती, हे राजन् ! वह विदुर जी कहां हैं, वह संजय भी तप में प्रवृत्त हैं, मैं इन के दर्शन भी करना चाहताहुं ॥

महाराज धृतराष्ट्र ने उत्तर दिया कि विदुर कुशल से घोर तप में नियत है, वह वायू भक्षी निराहार हड्डी मात्र शरीर वाला कभी इस वन में किसी ब्राह्मण को मिलता है ॥

उन के ऐसा कहिते ही दुर्बल शरीर कृशांग धूली से मलीन शरीर विदुर दूर से दिखाई पड़ा । तब सब नें कहा कि महाराज वह विदुर जी जा रहे हैं ॥

यह सुन अकेला राजा युधिष्ठर उन के पीछे भागा विदुर जी कभी दिखाई देते और कभी फिर गुप्त हो जाते वहां पहुंच कर राजा ने कहा कि हे विदुर जी ! मैं वही आप का प्यारा युधिष्ठर हूं आप मुझे दर्शन क्यों नहीं देते ॥

विदुर जी उसी वन में एक वृक्ष के टेक बैठ गये तब महाराज युधिष्ठर ने विदुर जी के कान में यह कहा कि मैं युधिष्ठर हूं और प्रणाम करके सन्मुख बैठ गये । तब विदुर जी ने आंख खोल अपने अंगों को राजा के अंगों में, प्राणों को प्राणों में और इन्द्रियों को इन्द्रियों में प्रवेश कर दिया जिस से राजा को आगे से भी अधिक अपर्बल अपने में भासने लगा ॥

हे राजन् ! फिर वह विदुर जी का शरीर मिट्टी सा भासने लगा यह देख राजा ने उस शरीर का दाह कर देना चाहा, तब अकाश वाणी हुई कि राजन्, यह मत करो इस को इसी प्रकार यहीं पड़े रहने दो यही सनातन धर्म है यह संन्यासी है ॥

हे राजन् ! तब महाराज धिष्ठर लौट कर आश्रम में पहुंचे और यह सब वृत्तांत महाराज धृतराष्ट्र से कह सुनाया तब सब लोग चकित हुये ॥

राजा धृतराष्ट्र ने फिर सब से कहा कि यह फल फूल आप भक्षण कीजिये क्योंकि मनुष्य जो कुच्छ खाता है उसी से अतिथी सत्कार करता है तब महाराज युधिष्ठर ने भाईयों सहित उनको भक्षण किया ॥

हे राजन् ! यह सब उस दिन वहीं रहे और रात्रि को शयन भी वहीं किया ॥

सत्ताईसवां अध्याय

—:-०-:—

राजा युधिष्ठर का आश्रम को अवलोकन करना मुनियों को दान देना और व्यास जी के दर्शन पाना

वैशंपायन बोले यह रात्री बड़े २ उत्तम पदार्थों पर शयन करने वाले पांडवों ने माता के चरणों में कुशासनों पर व्यतीत कीं, प्रातः काल नित्य कर्म करके राजा युधिष्ठर ने आश्रम मंडल को देखा, धृतराष्ट्र की आज्ञा ले महाराज युधिष्ठर ने अपने साथ रानियों भाईयों और सेवकों को ले लिया ।

इस आश्रम में प्रदप्ति कुंड अभिषेक और हवन करने वाले मुनियों को देखा उन वेदियों में वानप्रस्थों के ढेर लगे हुये थे, घृत की आहुतियों से अग्नि दीप्तमान हो रही थी, यहां पर वेद वक्ता मुनियों के वेद मन्त्र तथा विधी उच्चारण हो रहे थे, कहीं वन के पत्ती चह चहा रहे थे ॥

यहां पर राजा ने इन ऋषियों को नाना प्रकार के अनेक सुवर्णादि धातुओं से निर्मित कुमंडलादि यज्ञ पात्र जो जिस को प्रिय थे दान किये इस प्रकार आश्रम को देख आश्रम निवासियों को प्रसन्न कर युधिष्ठर ताया जी के पास आये सब ने राजा को प्रणाम किया और सब यथा योग्य आसनों पर बैठ गये ॥

इन के यहां बैठते ही राजर्षि शतयूप और ब्रह्मर्षि व्यास जी शिष्य मंडलीयों सहित वहां आ पधारे इन को आते देख धृतराष्ट्र, युधिष्ठर और भीमसेन जी स्वागत के लिये आगे उठ खड़े हुये और सब ने दंडवत प्रणाम की, शतयूप ने कहा कि राजा धृतराष्ट्र ! आप बैठजायें तब व्यास जी मृगचर्म आसन पर बैठ गये और शिष्य मंडली व्यास जी की आज्ञा से विस्तरों पर बैठ गई ॥

अठाईसवां अध्याय

—:o:—

व्यास जी का धृतराष्ट्र से प्रश्न और विदुर जी का युधिष्ठर में लीन होने का कारण वर्णन करना ॥

वैशंपायन बोले कि सब प्रकार से आनन्द पूर्वक पाण्डवों के बैठ जाने पर व्यास जी ने धृतराष्ट्र से कहा हे राजन् ! क्या तेरा मन तप और वनवास में प्रसन्न होता है पुत्रों की मृत्यु का शोक तो तुम को नहीं सताता, तेरे सब ज्ञान शुद्ध हैं गांधारी वधु तो शोक से पूर्ण नहीं होती, यह कुंति जोकि अपने पुत्रों की ममता को छोड़ कर तुम्हारे साथ सेवा तो अच्छी तरह से करती है ॥

युधिष्ठर अर्जुन प्रभृत्ति पांडव अच्छी तरह से हैं, हे राजन् ! शत्रुता न करना सत्यता और क्रोध न करना यह तीन बातें सब जीवों में श्रेष्ठ हैं, हे राजन् ! फल फूल तो अच्छी तरह से मिल जाते हैं. हे राजन ! क्या आप ने विदुर जी का लीन होजाना भी सुना है योगी राज मांडव्य ऋषि के शाप से धर्म ने विदुर शरीर को पाया था, विदुर बृहस्पति और शुक्र से भी अधिक बुद्धिमान था ॥

तब बहुत काल से इकट्ठा किया हुआ सनातन धर्म तपो बल को व्यय करके पराजय हुआ, पूर्व काल में ब्रह्मा जी की

आज्ञा से निजे बल से राजा वचित्र वीर्य के क्षेत्र में मुझ से उत्पन्न हुआ, हे राजन्! वह तेरा भाई था, उसी धर्म के योग बल से यह युधिष्ठर उत्पन हुआ, यह भी साक्षात् धर्म ही है ॥

हे राजन्! जिस प्रकार जल पृथ्वी आकाश सर्वत्र हैं वैसे ही धर्म भी इस लोक और परलोक में नियत है, वह धर्म निष्पाप सिद्धों को ही दीख पड़ते हैं जो धर्म है वह विदुर है जो विदुर है वह युधिष्ठर है जोकि आप के सामने सेवकों के समान खड़ा है, वह बुद्धिमान विदुर तेरा भाई युधिष्ठर में योग्य बल से प्रवेश कर गया है, हे भारतर्षभ, तुम को भी थोड़े ही काल में कल्याण युक्त करूंगा, आप जो कुच्छ अभी देखना सुनना चाहते हैं या प्राप्त करना चाहते हैं आप प्राप्त करें मैं सब कुच्छ दूंगा और बताऊंगा ॥

उनतीसवां अध्याय

—:०:—

व्यास जी का राजा धृतराष्ट्र से दुःख निवारण के लिये कहना, गांधारी की प्रार्थना और कुंती से प्रश्न ॥

जनमेजय ने पुछा कि व्यास देव जी ने जो यह कहा था कि मैं अपूर्व कर्म करूंगा वह पांडवों का आश्रम निवास काल तथा उन के भोजन के प्रबंध को वर्णन करें ॥

वैशंपायन बोले, हे राजन् ! वह पांडव सेना सहित धृतराष्ट्र की आज्ञा से नाना प्रकार की वस्तुओं का सेवन करते हुये इस आश्रम पर १ मास तक रहे ॥

इन के वहां निवास करते हुये व्यास जी आये और व्यास जी का आगमन सुन नारद, देवल, प्रभृति अन्य ऋषि भी आये जिन का धृतराष्ट्र की आज्ञा से महाराज युधिष्ठिर ने विधि पूर्वक पूजन किया और वह सब सुशोभित आसनों पर बैठ गये । तब धृतराष्ट्र पांडवों सहित और गांधारी कुंती प्रभृति स्त्रियों सहित बैठ गये ॥

व्यास जी ने इन को बहुत से प्राचीन इतिहास सुनाये और धृतराष्ट्र से बोले कि मैं आप के गांधारी आदि सब तपस्विनयों की अभिलाषा को जानता हूं मैं यहां पर आप के उन दुखों के निवारणार्थ ही आया हूं आप फिर भी अपने २ मन के क्लेशों का वर्णन करें, मैं तुम्हारी कामनाओं को पूर्ण करूंगा ॥

यह सुन महाराज धृतराष्ट्र महूर्त भर कर विचार बोले, मैं धन्य हुं, कृत कृत्य हुं, जो आपने मुझ पर इतनी कृपा की मेरा जन्म सफल होगया हं, आप के दर्शनों से मैं पवित्र होगया हुं श्रीमन ! परन्तु मेरा मन उस दुर्बुद्धि अभागे दुर्योधन के अन्यायों से दुखित रहता है आप कृपा पूर्वक वर्णन करें कि युद्ध में मरने वाले महारथियों तथा मेरे पुत्रों की क्या गति होगी इस के अपराध से कर्णादि की मृत्यु मेरे मन को सदैव क्लेशित रखती है मुझे शान्ति नहीं आती ॥

धृतराष्ट्र के इस प्रकार विलाप को सुन गांधारी का दुख फिर जाग उठा कुंति, द्रौपदी और सुभद्रादि भी फिर अतयन्त दुखी हुई फिर हाथ जोड़ कर गांधारी ने प्रार्थना की कि महाराज ! मृतक पुत्रों को शोचते हुए महाराज को १६ वर्ष व्यतीत होगये हैं, परन्तु आज तक इन को न शान्ति होती है और न ही इन को निद्रा पड़ती है, आप तपोबल से सब कुच्छ करन के योग्य हैं, मृतक पुत्रों के दर्शनं कराने आप के लिय कठिन नहीं, इसी प्रकार द्रौपदी पुत्रों की मृत्यु और सुभद्रा अभिमन्यु की मृत्यु से अत्यत व्याकुल रहती हैं तथा भूरी श्रवा की धम पत्नी पति की मृत्यु से महाराज के क्लेश को दुगना कर रही है ॥

हे महाराज ! आप सब पर ऐसी कृपा करें कि यह सब दुःख निवृत हों हम सब एक बार उन के दर्शण करें और राजा को शांति हो ॥

तब मन ही मन में कुंती महारानी कर्ण की मृत्यु को शोच दुःखित हो रही थी । त्रैकालज्ञ व्यास जी ने उस के भाव को जान करे कहा कि हे कुंती ! तुम ने जो कुच्छ पूछना है पूछलो । तब कुंती ने लज्जा युक्त हो प्रार्थना की ॥

तीसवां अध्याय

—:-०-:—

कुन्ती का कर्ण की उत्पत्ती का वर्णन तथा उसके दर्शन के लिये व्यास जी से प्रार्थना ॥

कुन्ती बोली कि हे महाराज! आप मेरे श्वसुर हैं मैं आपसे प्रार्थना करती हूं कि एक समय दुर्वासा ऋषि मेरे पिता के ग्रह में आये मैंने स्वभावानुसार उनकी सेवा की जिस से वह मुझे वर देने के लिये उद्यत हुये और कहिने लगे तुझको अवश्य वर लेना चाहिये तब मैंने शाप के भय से कहा जैसे आपकी इच्छा हो तैसाही करें फिर उन्हों ने कहा कि तु धर्म की माता होगी और जिस २ देवता की अराधना करेगी वह २ तेरे आधीन हों गे, यह वर दे ऋषि चलेगये ॥

हे महाराज कुच्छ काल के अनंतर मैंने एक दिन अटारी पर चढ़ बालपन से ऋषिके वचन को यादकर सूर्य की अराधना की सूर्य भगवान् ने दो रूप धार एक से लोकों को प्रकाशित किया दुसरे रूप में मेरे सन्मुख उपस्थि हुये और कहिने लगे वरमांगो, मैंने प्रणाम करके कहा कि जाईये ॥

सूर्य भगवान् ने कहा कि मेरा आना व्यर्थ नहीं यदि तू वर न मांगेगी तो मैंतुझे और उस ब्राह्मण को शापसे भस्म कर दूंगा, श्रीमान् मैंने शापके भयसे प्रार्थना की कि मेरा पुत्र आप

के समान हो तब वह मूर्ति तेजसे मुझ में प्रवेशकर कहने लगे कि तेरा पुत्र वैसा होगा यह कहकर स्वर्ग को पधारे ॥

फिर मैंने महलों में पिता से गुप्त रह कर उस गुप्त जन्म पुत्र को नदी में बहा दिया और फिर मैं उस देवता की कृपा से कन्या हो गई, हे भगवन ! यह पाप है या नहीं मैंने आप के आगे प्रकट कर दिया है अब आप उस को दिखलाने की कृपा करें, आप महाराज की कामना को जानते हैं यह भी पूर्ण करें ॥

व्यास जी ने कहा कि अच्छा वह ऐसा ही होगा, हे पुत्री तेरा इस में अपराध नहीं देवता संकल्प इसी वाणी और भोग से संतानोपत्ति करते हैं तुझे चिंता नहीं करनी चाहिये ॥

इकत्तीसवां अध्याय

—:o:—

व्यास जी का पांडवों को देवता, दानव, ऋषियों का अवतार कहिना और गंगातऽपर उन को लेजाना ॥

व्यास जी बोले कि हे गांधारी तू पिता पुत्र भाई बांधवों को, कुंती कर्ण, को सुभद्रा अभिमन्यु को द्रौपदी पांचो पुत्रों पिता और भाईयों को देखे गी, वह निष्पाप सद्गति प्राप्त

चुके हैं उन के अर्थ तुम्हें शोक करना उचित नहीं यह होनहार ऐसे ही होनी थी ॥

हे रानी ! देवताओं के सब अंशों ने पृथ्वी पर अवतार लिया था. हे देवी ! धृतराष्ट्र नामक गंधर्व राज धृतराष्ट्र तेरा पति, पांडु मरुद्गण, विदुर और युधिष्ठर धर्म्म के अंश. भीम को वायु, दुर्योधन कलियुग, शकुनी को द्वापर, दुश्शासन आदि को राक्षस, अर्जुन नररूप ऋषि श्री कृष्ण को नारायण, नकुल सहदेव को अश्विनी कुमार, कर्ण को सूर्य्य, अभिमन्यू को चंद्रमा, धृष्टद्युम्न को अग्नि. शिखंडी को राक्षस, द्रोणाचार्य्य को बृहस्पति, अश्वत्थामा को रुद्र और भीष्म को वसुदेव को अंश अवतार समझो ॥

इस प्रकार यह देवता मनुष्य शरीरों को धारण कर के कार्य्य को समाप्त कर स्वर्ग धाम को गये, इन के लिये आप को चिंता करना उचित नहीं अब मैं आप को इन के दर्शन भी कराऊंगा आप सब लोग गंगा तट पर चलें ॥

इस प्रकार महाराज धृतराष्ट्र साथियों संगियों सहित गंगा तट पर पहुंच कर रात्री काल की प्रतीक्षा करने लगे क्योंकि व्यासदेव जी ने इन को रात्रि में ही संबन्धियों के दर्शन कराने थे। तब सूर्य्य अस्त होने पर उन सब ने नियमानुसार संध्या की ॥

बत्तीसवां अध्याय

—:०:—

धृतराष्ट्र सब पांडवों तथा गांधारी प्रभृति रानियों को उन के सम्बन्धियों के दर्शन होना ॥

वैशंपायन बोले हे राजन् ! सायं संध्या से निवृत्त राजा धृतराष्ट्र सब रानियों सहित व्यास जी के पास गये तब श्रीमान् व्यास जी ने गंगा में प्रवेश कर उन सब को आवाह्न किया, इन के आवाह्न करते ही ऐसा शब्द सुनाई दिया जैसे पूर्वकाल युद्ध में सुना गया था ॥

फिर पाण्डवों के ५ पुत्र धृतराष्ट्र के शत पुत्र, कर्ण, भीष्म द्रोणादि सब महारथी अपनी २ सवारियों पर आरोहित ध्वजाओं से युक्त अपनी सेनाओं सहित जल के ऊपर आये ।

यह सब उत्तमोत्तम वस्त्रों से सुशोभित विमानों में आरूढ़ अप्सराओं तथा गंधर्वों से स्तूयमान थे ॥

हे राजन् ! व्यास जी ने तपोबल से महाराज को दिव्य नेत्र दिये तथा ज्ञान बल से सब ने युद्ध में मृतक पुत्र, पौत्र, पति आदि तथा सब लोगों को जो कि युद्ध में शूरता से मरे थे देखा और फिर सब आपस में मिले ॥

फिर तो सब लोग राजा सहित अतीव प्रसन्न हुये ॥

तेतीसवां अध्याय

—:o:—

धृतराष्ट्रादि सब का अपने मृतक बन्धुओं से मिलना ॥

वैशंपायन बोले हे राजन्! इस प्रकार श्री व्यास जी की कृपा से धृतराष्ट्र ने अपने सब पुत्रों को मंत्रियों सहित, द्रौपदी ने अपने तथा पांडवों ने अपने मृतक पुत्र पौत्रों को तथा प्रत्येक ने जो जिस को मिलना चाहता था वह सब उन को मिले ॥

उस समय इन के मन में परस्पर क्रोध वैर भावादि का नाम तक न रहा प्रीति प्रेम से एक दूसरे ने परस्पर आलिंगन किया और ऐसे प्रसन्न हुये जैसे चातक स्वाति वर्षा को पाकर प्रसन्न होते हैं, यह समय उन के लिये स्वर्ग धाम बन गया ॥

उन सब स्त्रियों ने भी पिता पुत्र पति आदि से मिल परम आनंद को पाया ॥

इस प्रकार वह व्यास जी से बुलाये हुये सब से मिले जिस २ स्थान से जो आया था उसी २ स्थान को अपनी २ सवारियों पर चढ़ ध्वजाओं को गंगा जी में प्रवेश करते २ एक क्षण में अन्तर्धान होगये अर्थात् कोई देव लोक कोई ब्रह्म कोई

इन्द्र और कोई कुबेर लोक को चल दिये कोई राक्षस पिशाचादि के लोकों में जा पहुंचे ॥

इस प्रकार इन के जाने पर व्यास जी ने इन सब से कहा कि जो स्त्रियें अपने २ पति के लोकों को चाहती हैं वह शीघ्र ही गंगा जी में प्रवेश करें, यह सुन कर बहुत सी स्त्रियें श्वसुर से पूछ कर गंगा जी में कूद पड़ीं और तत्काल ही वह अपने शरीरों का त्याग अपने २ स्वामी लोग को जा पहुंचीं ॥

इस के अनंतर वर दाता व्यास जी ने हर एक की मनो वांछित कामनाओं को पूर्ण किया नाना देशों के लोग भी इन के मिलाप को सुन अतीव प्रसन्न हुये ॥

व्यास जी ने कहा कि जो मनुष्य श्रद्धा पूर्वक इस पांडव कौरव मिलाप रूप को सुनेंगे वह भी पापों से रहित हो उत्तम गति को प्राप्त होंगे ॥

चौतीसवां अध्याय

—:o:—

वैशंपायन का राजा जनमेजय को ज्ञानोपदेश देना ॥

जनमेजय अपने पूर्व पुरुषाओं के मिलाप को सुन

अतीव प्रसन्न हुआ और कहने लगा कि यदि दूसरी वार कोई उन से मिलना चाहे तो यह कैसे हो सकता है ॥

वैशंपायन जी ने उत्तर दिया, कि हे राजन् ! बिना भोग के मनुष्यादिक जीवों के कर्म्मों का नाश नहीं होता, ईश्वर की शरणता से हार्दाकाश में नियत पुत्र पितादिक अविनाशी होते हैं उन अविनाशी शरीरों का संग विनाशवान् शरीरों से संसार दशा में होता है जो निवृत्ति मार्ग के सत्य और श्रेष्ठ कर्म्म हैं उन से ऊपरोक्त फल को पाता है और प्रवृत्ति मार्ग के कर्म्मों द्वारा आत्मा सुख दुःखादि को भोगता है । हे राजन् ! जिस प्रकार शीशे में मनुष्य अपने प्रतिविम्ब को देखता है और शीशे पर छाई आने पर दुष्टों का नाश नहीं होता इसी प्रकार क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ की दशा है जब तक शरीर अपने कर्म्म फल को भोग नहीं लेता तब तक उस में आत्मा का अभ्यास है जो कर्म्म फल भोग को समाप्त कर लेता है, वह आत्मा रूप होता है ॥

जो योगी जन अनात्म रूप इन्द्रियादिक को आत्मा से भिन्न जान लेते हैं वह आत्म रूप होने से अविनाशी होते हैं, हे राजन् ! क्योंकि ज्ञान में तेरा अधिकार नहीं इस लिये तुम को उपासना में प्रवृत्त हो देवयान मार्ग में तेरे लिये आश्रम लेना योग्य है । यज्ञ से देवता प्रसन्न होते हैं और यज्ञ करने वाले जीवन्मुक्ति को प्राप्त होते हैं ॥

जो मनुष्य इस पंच भूतात्मक देववर्ग और आत्मा के अविनाशी होने पर इस जीवात्मा के बहुत से रूपांतरों को देखता है वह निरर्थक बुद्धि वाला है और पुत्रादि के नाश से जो शोकातुर होता है वह अज्ञानी है। क्योंकि असंग आत्मा में आत्मा का योग नहीं इस लिये प्रिय बंधु वियोग में दोष देखने वाला उन के संयोग का त्याग करें॥

जो ज्ञान के प्राप्त न होने पर भी केवल उपासना द्वारा शरीर के अभिमान से पृथक है वह योगी सगुण ब्रह्म हो कर और बुद्धि से निर्विशेष ज्ञान को पा कर मिथ्या ज्ञान से छूट जाता है॥

अब उस मुक्ती का लक्षण कहते हैं जो दृष्टि से गुप्त शुद्ध चैतन्य ब्रह्म है उसी से प्रकट हुआ और उसी में लय हुआ इसी लिये मैं उन को नहीं जानता हूं। वह बुद्धि इन्द्री और मन से भी परे है और यह मुझ को नहीं जानता क्यों कि वह कारण रूप नहीं है वैराग्य के बिना इस की प्राप्ती नहीं और वैराग्य ही मोक्ष का साधन है यह अस्वतंत्र जीवात्मा जिस २ शरीर से जो २ कर्म करता है उस २ शरीर से अवश्य उस के फल को पाता है तात्पर्य यह है कि शरीर वाणी और चित्त की चंचलता को त्याग प्राणों का विरोध करें॥

पैंतालीसवां अध्याय

—:o:—

राजा जनमेजय का अपने मृत पिता के दर्शन पाना ॥

वैशंपायन बोले, कि हे राजन्! प्रज्ञा चित्त धृतराष्ट्र ने ज्ञान चक्षु द्वारा व्यास जी की कृपा से अपने पुत्रों के रूप यौवन को देखा और राज धर्म ब्रह्म उपनिषद और निश्चयात्मक बुद्धि को भी प्राप्त किया, विदुर जी भी तप के बल से सिद्ध हो गये ॥

जनमेजय ने कहा कि यदि अब कृपा से व्यास जी मेरे पिता के दर्शन करायें तो मुझे यह पूर्ण विश्वास आसकता है ॥

इस की ऐसी वासना देख व्यास जी ने उसके पिता परीक्षित को आवाहन किया तो राजा ने अपने पिता शमीक ऋषि और उसके पुत्र शृङ्गी ऋषि को भी देखा, इस के अनन्तर हे राजन्! पक्ष के अवसान में भी राजा ने पिता के दर्शन पाये और फिर स्नान किया। तब, राजा ने हवन द्वारा तक्षक सर्प के सिवा अन्य सब सर्पों का विनाश किया ॥

सूत पुत्र ने कहा कि हे राजन्! जनमेजय ने यह उत्तम इतिहास सुन कर उस ऋषि को पूजन किया और शेष वृत्तान्त फिर पूछा ॥

———

छत्तीसवां अध्याय

—:०:—

पाण्डवों का हस्तनपुर वापस जाने के लिये व्यास जी की प्रेरणा ॥

जनमेजय ने पूछा कि राजा धृतराष्ट्र ने पुत्र पौत्र आदि को मिलकर फिर क्या किया ॥

वैशंपायन बोले कि हे राजन् ! उनके दर्शण पाकर दुःखों से छूट राजा धृतराष्ट्र अपने आश्रम को आये और अन्य सब भी अपने २ स्थान को चले गये ॥

व्यास जी ने कहा कि हे राजन् ! तुम ने नारद जी से भी देवताओं के गुप्त वृत्तांत सुने, अन्य भी अनेक ऋषियों से कथायें सुनीं, होनहार पर दुःख करना व्यर्थ है, तुमने अपने संपूर्ण संबंधियों को भी सुख पूर्वक देखा अब आप इन दूरसे आयें हुये युधिष्ठरादि को अपने स्थान पर जाने की आज्ञा दें इन्हे आये एक मास से भी अधिक समय हो गया है ॥

व्यास जी के इस प्रकार समझाने पर राजा धृतराष्ट्र ने युधिष्ठर को बुलवाकर कहा कि हे पुत्र ! तेरा कल्याण हो अब मेरे समस्त दुःख शोक दूर होगये हैं अब आप सब भाईयों सहित हस्तिनापुर को पधारो, मैंने तुझ से ही पुत्र भाव के फलको पाया है मेरा तुझ से परम प्रेम है आप के यहां रहने से मेरे तप में

विघ्न होता है अब मैं और भी कठिन तप में प्रवृत्त होना चाहता हुं इस लिये आप मेरी आज्ञा मान कर पधारें और मुझे आज्ञा दें, इसी प्रकार यह दोनों तेरी मातायें भी तप में प्रवृत्त होंगी और बहुत काल तक नहीं जीवेंगी हे समर्थ ! तुम ने बहुत नीती की बातें सुनीं अब मैं अधिक सुनाना व्यर्थ समझता हु अब आप अभी पधारें या कल प्रातः काल ही यात्रा करदें ॥

युधिष्ठर ने प्रार्थना की कि हे राजन ! चाहे तो मेरे सब भाई सेना सहित चले जायें मैं तो आप की सेवा में उपस्थित रहुंगा ॥

गांधारी ने कहा कि हे पुत्र ! ऐसा न कर यह कौरव कुल और हमारा पिंड दान एक तुम पर निर्भर है अब आप को पिता की आज्ञा का पालन करना चाहिये ॥

तब राजा युधिष्ठर ने कुंति माता से कहा कि हे तपस्विनी यह ताया और ताई जी मुझे जाने के लिये कहते हैं मैं आप को छोड़ कर जाना नहीं चाहता, मैं आप के तप में विघ्न नहीं करना चाहता, क्योंकि इस से बढ़ कर कोई उत्तम कार्य्य नहीं है तप मोक्ष की दाता है मेरा चित्त भी तप में प्रवृत्त है, अब मेरा चित संपूर्ण संबंधियों के मारे जाने से राज्य करने को नहीं चाहता, केवल यादव वंश शेष है, महाराज धृतराष्ट्र उत्तम तप में लगेंगे उन की सेवा आप से नहीं होसकेगी मैं उन की सेवा भी करूंगा ॥

इस के अनंतर सहदेव ने कहा कि मैं माताओं की सेवा करूंगा क्योंकि मैं इन को छोड़ कर जाना नहीं चाहता ॥

यव कुन्ती ने कहा कि हे पुत्र! यदि आप मेरा हित चाहते हैं तो मेरी आज्ञा मान कर आप राजधानी को चले जायं आप के यहां रहने पर हमारे तप में बहुत भारी विघ्न होग, हमारी आयु भी अब थोड़ी ही शेष है ॥

तव सब सुन कर युधिष्ठर और सहदेव का मन स्थिर हुआ और माताओं सहित राजा धृतराष्ट्र को दंडवत कर प्रदक्षिणा की उन्हों ने बड़ी प्रसन्नता पूर्वक अशीर्वाद दी और आज्ञा दी, फिर द्रौपदी आदि सब रानियों ने ससुर और दोनों सासों की प्रदक्षिणा की, उन्हों ने प्रेम से उन को गले लगाया और आज्ञा दी ॥

तव सब अपने २ रथों सवारियों और पालकियों पर चढ़ कर सेना सहित हस्तिनापुर में आगये ॥

सैंतीसवां अध्याय

—:o:—

नारद मुनि का आगमन, धृतराष्ट्र आदि की मृत्यु का वर्णन ॥

हे राजन्! हस्तिनापुर में रहिते दो वर्ष व्यतीत हुये तो एक दिन नारद मुनि वहां आ पहुंचे, इनको आते देख महाराज

युधिष्ठर ने विधि पूर्वक पूजनादि कर प्रार्थना की कि महाराज आप का कल्याण हो आप ने बड़े दिनों के पीछे मुझे याद किया है किस, २ स्थान से होकर आये हैं कृपा पूर्वक मेरे ताऊ जी और ताई जी तथा कुंति का कुच्छ समाचार तो बताईये ॥

हे राजन् ! मैं बहुत दिनों के पीछे अब तपो वन से आया हुं, मने वहां पर जो वृत्तान्त तुम्हारे ताऊ जी के विषय में सुना तथा देखा है वर्णन करता हुं तुम सुनो ॥

हे राजन् ! आप के आने के पीछे राजा धृतराष्ट्र आदि कुरुक्षेत्र से गंगा जी पर आगये और वहां पहुंच कर मुख में वीड़ा रख कर वायु मे भी अपि बन और छे मास निरंतर व्रत धारे व्यतीत होगये गंधारी केवल जल का आहार करने लगी और तुम्हारी माता कुंति मास में एक बार भोजन करने का व्रत धारण करने वाली हुई, संजय ने छटे दिन भोजन करने का व्रत धारण किया ॥

हे प्रभु ! ब्राह्मणों ने विधि पूर्वक हवन किया उन दिनों में राजा धृतराष्ट्र आश्रम में त्याग बन सेवी हो गया और साथ ही रानियें और संजय भी हो लिये एक दिन स्नान कर गंगा जी से राजा बन को जा रहे थे कि एका एक वायु वहने लगी दावा नल प्रचंडाग्नि से दीप्त मान होगई जिस से वह वन मणि भूत होगया इसी वन में वर्तमान आप के ताऊ जी और दोनो मातायें थीं वह कृशांग दुर्बल अवस्था से भाग कर निकलने के सामर्थ न हुये अग्नि

को निकट वर्ती देख राजा ने संजय से कहा हे संजय ! तुम शीघ्र भाग कर निकल जाओ हम सब इसी अग्नि में भस्म हो परम गति पायेंगे ॥

महा व्याकुल संजय ने कहा कि वृथा अग्नि से भस्म हो आप की मृत्यु अप्रिय होगी हाय ! यहां से बचने का भी कोई उपाय नहीं यह सुन राजा ने कहा ॥

यह मृत्यु अनुपकारी नहीं है जल अग्नि वायु और अनशन व्रत यह तपस्वी लोगों के प्रशंसनीय होते हैं, हे संजय ! देर न करो निकल जाओ ॥

यह कह कर वह राजा रानियों सहित पूर्वाभिमुख हो समाधिस्थ हो कर बैठ गये, तब संजय ने प्रदक्षिणा कर प्रार्थना की कि आत्मा को परमात्मा में लीन करलें, तब राजा ने वैसा ही किया तब यह तीनों उसी दावानल अग्नि में भस्म हो गये और संजय वहां से निकल गया, मैंने संजय को गंगा तट पर स्वयं देखा है, वहां से संजय हिमालय पर्वत को गया ॥

हे राजन् ! आप को शोच नहीं करनी चाहिये क्योंकि उन्हों ने अपने आप ही अग्नि के संयोग को पाया ॥

वैशंपायन बोला कि हे राजन् ! इन की मृत्यु को सुन कर पाण्डवों को बड़ा क्लेश हुआ, इस समाचार के फैलने पर नगर निवासी नर नारियों में हाहाकार मच गया राजा युधिष्ठिर " हाय धिक्कार है हम को " यह कह कर

रुदन करने लगा, वसे ही भीमसेनादि सब भाई और द्रौपदी आदि सब रानियें भी विलाप करने लगीं; हस्तिनापुर शोक का स्थान होगया ॥

अठतीसवां अध्याय

—:o:—

युधिष्ठर का विलाप

युधिष्ठर बोला ! ऐसे तप करने वाले, सौ पुत्रों के पिता साठ हज़ार हाथी के तुल्य बल रखने वाले महाराज घृतराष्ट्र को ऐसी मृत्यू, हाय काल तू बड़ा बलवान है, पूर्वकाल में जिस की स्त्रियें तालवृत नामक पंखे से वायु करती थीं उस राजा को गद पक्षियों ने वायु की, हाय वह राजा बड़े २ रत्न जड़ित पार्य्यं के ऊपर सोने वाला आज मुझ पापी के कर्म्मों से पृथ्वी पर लेटा पड़ा है ॥

हे दैव ! आज कुंती माता वीर पुत्रों के होते हुये, मुझ पापी के अपराध से इस प्रकार अग्नि से भस्म हुई, ऐसे राज्य ऐश्वर्य्य और संतान को धिक्कार है ॥

खांडव वन में अर्जुन से इस प्रकार प्रसन्न की हुई अग्नि भी कैसी कृतघ्न है कि उसे तनिक दया न आई । हे नारद जी काल की बड़ी गति है। हे नारदजी ! मुझे यह बात दग्ध कर रही है कि ऐसे पवित्र आत्मा तपस्वी की इस प्रकार

अपमृत्यु हुई। हाय दग्ध होते समय कुंती ने यह अवश्य कहा होगा कि हे पुत्र धर्म राज! वीर भीमसेन मेरी रक्षा करो, सहदेव को तो उसने अवश्य याद किया होगा, वह उसका परम प्रिय पुत्र था। यह सुन कर पांचों भाई हाथें मार मार कर रोने लगे, हे राजन्! इनके रुदन और स्त्रियों के विलाप से आकाश और भूमि गूंज उठी ॥

उनतीसवां अध्याय

—:-०-:—

राजा युधिष्ठर का ब्राह्मणों द्वारा राजा की तथा माता की अस्थियें गंगाजी पर पहुंचाना और उनका क्रिया कर्म करना ॥

नारद जी बोले कि हे राजन्! धृतराष्ट्र कुन्ती गांधरी की अपमृत्यु नहीं हुई, क्योंकि इष्टी यज्ञ करके राजा ने अग्नियों को भेजा, याचक उस अग्नि को वन में छोड़ चले गये उसी अग्नि से वन में आग लग गई, जिस में वह स्वयं प्रवेश हुये, इस प्रकार वह राजा अपनी ही अग्नियों में प्रवेश हुआ है तुम उन की शोच न करो, अब तुम को उन की क्रिया कर्म करना चाहिये तेरी माता ने श्वसुर की बड़ी सेवा और तप किया है इस लिये उसने उत्तम गति पाई है आप शोच न करें ॥

तब राजा युधिष्ठर अपने भाई और रानियों सहित गंगा तट पर गये राज भक्त पुरवासी भी पीछे २ हो लिये, वहां पर राजा जी ने राजा तथा माता और ताई जी को भिन्न २ तिलोजलियें दीं, और नगर से बाहर ही निवास किया, बारहवें दिन विधि पूर्वक श्राद्ध किया और सब के नाम भिन्न २ बहुत बड़ा दान किया, दान में राजा ने हाथी, घोड़े, दासियां, सुवर्ण चांदी रत्नादि दिये और सब प्रजा को प्रसन्न किया ॥

वह ब्राह्मण भी जिन को युधिष्ठर ने अस्थियों के लिये कहा था अस्थियें लेकर गंगा जी पर आये, अस्थियों का इन्होंने शास्त्रोक्त रीतियों से पूजन कर पुष्प मालादि पहिरा गंगाजी में प्रवाह दिया ॥

हे राजन्! नारद मुनि जी राजा को बहुत तरह से तसल्ली दे चले गये, हे राजन्! इस प्रकार महाराज युधिष्ठर के बारह वर्ष राज्य में और तीन वर्ष बनवास में १५ वर्ष व्यतीत हुये ॥

आश्रम वास पर्व समाप्तम्

ॐ

मौसल पर्व

पहिला अध्याय

—:o:—

ऋषियों के विनाश के लिये मूसल की उत्पत्ति मूसल का बरोदा कर समुद्र में डलवाना ॥

आद के पर्वों में जो धर्म, अर्थ काम और मोक्ष वर्णन किये उनमें से सभा पर्व, और वनपर्व में यज्ञ. सत्यता. धैर्य, गुरु सेवन, तीर्थ सेवन वर्णन किये विराट आदि पर्वों में सेवा और नीतियों का वर्णन किया, तथा हिंसा, असत्य और कुल के नाश से जो दुःख होते हैं उनका वर्णन किया, बारहवें तेरहवें और चौदहवें पर्वों में मोक्ष के हेतु रूप दान विद्या वनवासादि का वर्णन करके

पन्द्रहवें पर्व में वनवास का फल वर्णन किया, अब सोलहवें पर्व में संसार के सुखों में प्रवृत्त हो मद्यादि पान कर नाश का वर्णन है, सत्रहवें पर्व में अनिच्छा धर्म के फल और गृहत्याग का वर्णन करेंगे और अठारहवें पर्व में परिणाम फल स्वर्ग प्राप्ति का वर्णन करेंगे ॥

वैशम्पायन बोले कि इस प्रकार ३६ वें वर्ष के व्यतीत होने पर युधिष्ठर नें विपरीत शकुनों को देखा, कंकर बहाने वाली वायु चली, नदियें उलटी चलने लगीं, अकाश से उल्का पृथ्वी पर गिरीं इसी प्रकार के अनेक अपशकुन हुये। इन अपशकुनो के होने से कुच्छ काल पीछे मूसल से उत्पन्न यादवों का नाश राजा ने सुन लिया और यह भी सुना कि वसुदेव और बलदेव जी के सिवा सब की मृत्यु हुई, तब सब भाइयों को बुला कर राजा ने कहा कि अब क्या करना चाहिये ॥

यह सुन सब परम दुःखीं हुये, परन्तु वासुदेव जी की मृत्यु पर किसी ने विश्वास न किया ॥

जनमेजय ने पुछा कि हे महाराज! अन्धक और भोजवंशी राजाओं का नाश कैसे हुआ ॥

हे राजन्! छतीसवें वर्ष वृष्णियों नेबड़ी अनीति की, काल से प्रेरित वह लोग मूसलों से परस्पर मोरगये ॥

जनमेजय ने पुछा कि किसके शाप से इन की यह गति हुई आप सविस्तर वर्णन करो ॥

वैशंपायन बोले कि सारण आदिक वीरोंने द्वारका में आने वाले तपोधन विश्वामित्र कराव और नारदजी से उपहास किया सांब को स्त्रियों के वस्त्र पहिरा उनसे कहा कि इस के गर्भ से क्या उतपन्न होगा ॥

इस प्रकार छल से निरादर किये हुये उन मुनियों ने कहा कि यह वृश्णी तुम सब के नाश करने वाले एक मूसल को उत्पन्न करेगा। इसी मूसल से कृष्ण और बलदेव के सिवा तुम सब का नाश होगा, बलदेव जी शरीर को त्याग समुद्र को जायेंगे और श्रीकृष्ण जी जरा नामी फंदक के बाण से बैठे हूये वैकुंठ को पधारेंगे। इस प्रकार शापदे उन मुनियों ने चित में श्रीकृष्ण जी से यह प्रार्थना की कि हम ने शाप दिया है आप क्षमा करें।

श्री कृष्ण जी ने यह ब्योरा सुन कर कहा कि यह ऐसे ही होना था, फिर समय पाकर कृष्ण ने मूसल को उत्पन्न किया तब व्याकुल हो राजा उग्रसेन ने उस मूसल को बरोदा करवा समुद्र में रुढ़ा दिया और नगर में ढंडोरा फिरा दिया कि आज से कोई वृष्णीवंशी और अंधक मद्य पान न करे जो कोई मद्य पान करेगा वह सब परिवार सहित सूली पर चढ़ा दिया जावेगा! सब लोगों ने बलदेव जी की आज्ञा जान राज्य के भय से नियम किया ॥

दूसरा अध्याय

—:o:—

वृष्णी वंश में अपसगुणों का होना ॥

वैशंपायन बोले कि इस प्रकार नाना प्रकार के उपाय करने वाले वृष्णियों के घरों से कराल काल पुरुष सदैव भ्रमण करने लगा और कहीं दिखलाई दिया कहीं नहीं उस ने इस के मारने के बहुतेरे उपाय किये परन्तु कुच्छ वस न चला ॥

इन देशों में अंधेरियें आने लगीं, जहां तहां उल्का पात होने लगे, इन को खोटे दर्शन होने लगे प्रकृति नियम विपरीत होने लगे। फिर भी वृष्णी लोगों ने पाप कर्म्मों से मुख न मोड़ा, यह ब्राह्मण जाति और देवताओं के विरुद्ध हुये, स्त्रियों ने पतियों के और पतियों ने स्त्रियों के विपरीत कर्म्म दिखलाये जिस से नाना प्रकार के अमंगल सूचक लक्षण प्रकट होने लगे ॥

इन लक्षणों के होने पर श्री कृष्ण जी ने विचारा कि छत्तीसवें वर्ष का आरंभ हो गया है, गांधारी के शाप का समय आगया है यह सोच कर श्री कृष्ण जी ने तीर्थ यात्रा के लिये आज्ञा दी और यह घोषणा की कि समुद्र के तट पर तीर्थ यात्रा करनी चाहिये ॥

तीसरा अध्याय

मूसल से वृष्णि और अन्धकों का युद्ध ॥

—:-०-:—

वृष्णियों की स्त्रियों को सौभाग्य मंगल सूत्रों को हरती हुई कालिका स्वप्न में दिखाई देने लगी, पुरुषों को स्वप्न में यज्ञ शालाओं तथा निवास स्थानों में घूमती हुई गिद्धों ने घायल किया, भूषण छत्र ध्वजा आदि राक्षसों से लुटे हुये दिखाई देने लगे श्री कृष्ण जी का वज्र आकाश में उड़ता दीख पड़ा श्री कृष्ण बलदेव जी की ध्वजा अप्सराओं ने ऊपर से ही हर ली दिखाई देने लगी ॥

तब सब वृष्णी और अंधक वंश के राजाओं ने सपरिवार तीर्थ यात्रा की तैयारी की और नाना प्रकार के भक्ष भोजन मांस मद्य एकत्रित किए और रथ घोड़ों आदि पर सवार हो घरों से निकले, इन सब को प्रभास क्षेत्र में पहुंचा वहीं निवास की आज्ञा दे श्री उद्धव जी चल पड़े ॥

उस प्रभास क्षेत्र में यादवों ने मद्यपान करना आरम्भ किया, श्री कृष्ण जी के संमुख सात्यकी, गद, बभ्रु आदि ने कृतवर्म्मा के साथ मद्य पान किया ॥

मदोन्मत्त सात्यकी ने सबके बीच में कृत वर्मा को हंसकर अपमान से कहा कि तुमने सोते हुये वीरों को मारा, इसबात को यादव लोग सहार नहीं सकते, प्रद्युम्न ने भी इसके कथन की पुष्टी की तब क्रोध में कृतवर्मा ने कहा भूरिश्रवा को तुमने कैसे माराथा,यह सुन श्रीकृष्ण जीने तिरच्छी नज़र से उनकी

ओर देखा तब सात्यकी ने स्यमन्तकमणि और सत्राजित की कथा कृष्ण जी को याद दिलाई जिसको सुन सत्यभामा के शरीर में आग लग गई परम क्रोध से रोती हुई श्रीकृष्ण जी के पास आई ॥

फिर क्रोध युक्त सात्यकि ने शपथ करके कहा कि मैं उस दुर्बुद्धी अश्वत्थामा के सहायक कृत वर्मा को मार कर ही अपना क्रोध शांत करूंगा यह कहते ही खड्ग सूत उठकर कृत वर्मा का शिर काट दिया, और अन्य लोगों के मारने को भी दौड़ा, श्रीकृष्णजीने इसको बहुतेरा कहा परन्तु समय की विपरीतता से भोजे और अंधक वंशियों ने उस चारों ओर से घेर लिया, उधर से मत्त यादव भी भागे और जूठे बरतनों से सात्यकी को उन्हों ने घायल किया, इनको छुड़ाने के लिये प्रद्युम्न बीच में कूदा परन्तु शत्रुओं की अधिकता से वह दानों मारे गये ॥

केशव जी ने सात्यकि और अपने पुत्र को मरा देखा सब एकत्रित मनुष्यों का घोर युद्ध आरंभ हुआ पटेल हाथ में ले आपस में घायल करने लगे और वह पटेल बज्र का सा काम देने लगे वहां के तृण भी घोर मूसल के समान हो गये, पिता ने पुत्र को और पुत्रों ने पिता को मारा इन मदोन्मतों ने चारों ओर से दौड़ कर महा घोर युद्ध किया ॥

प्रद्युम्न अनिरुद्धादि को मरा देख श्री कृष्ण जी को क्रोध आया और गद को भी पृथ्वी पर लेटा देख श्रीकृष्ण

जी ने सब का नाश कर दिया तब बभ्रु ने कहा कि महाराज ! आप ने बहुत से पुरुषों को मारा अब चलो बलदेव जी की खोज करें ॥

चौथा अध्याय

—:-०-:—

वृष्णियों का नाश, बलदेव जी का गमन और श्री कृष्ण जी की देवलोक प्राप्ति ॥

वैशंपायन जी बोले कि दारुक बभ्रु और केशव जी ने बलदेव जी को एकान्त में एक वृक्ष के नीचे ध्यान करते हुए देखा, उन को देख श्री कृष्ण जी ने दारुक को आज्ञा दी कि तुम कौरवों के पास जाकर यादवों के विनाश की खबर दो, अर्जुन शीघ्र ही यहां आवेगा, दारुक के चले जाने पर श्री कृष्ण जी ने बभ्रु से कहा कि तुम शीघ्र ही स्त्रियों की रक्षा के लिए जाओ चोर कहीं धन के लालच से उन को न मारें, वहां से चलते ही लुब्धक ने मूसल से अकस्मात् केशव जी के सन्मुख मार दिया ॥

इस को मरा देख कर श्री कृष्ण जी ने बलदेव जी से कहा कि मैं जब तक स्त्रियां को अपनी बरादरी के सपुर्द न कर आऊं तब तक तुम मेरी बाट देखते रहना ॥

फिर जनार्दन जी ने द्वारका में जा अपने पिता से कहा कि आप अर्जुन के आने तक हमारी स्त्रियों की रक्षा करें, मैं बलदेव के पास जाता हूं वह वन में मेरी बाट देख रहे हैं मैंने पहिले कौरवों का और अब यादवों का नाश देखा है, इस लिए अब मैं यादव पुरी में रहना नहीं चाहता, मैं बलदेव जी सहित वन में रह कर तप करूंगा, यह कह कर केशव जी पिता को प्रणाम कर चल दिये ॥

इन को जाते देख स्त्रियों ने बड़ा विलाप किया इन के विलाप सुन श्रीकृष्णजी ने कहा कि अर्जुन जी तुम्हारी रक्षा के लिये आ रहे हैं तुम विलाप न करो। यह कह श्रीकृष्णजी बलदेवजी के पास पहुंचे और जा कर देखा कि बलदेवजी के मुख से एक सर्प निकला है जो कि तत्काल शेशनाग का रूप धार समुद्र को चल दिया और वरूणादि से पूजित हो समुद्र में समा गया ॥

इस प्रकार भाई के गमन को देख चिन्तातुर हो श्रीकृष्ण जी एक वृक्ष के नीचे बैठ गये इन्होंने अपने वैकुंठ धाम को जाने का समय आया विचारा और योग बल से समाधिस्थित हो कर सो गये ॥

इस प्रकार इन के लेटने पर जरा नाम लुब्धक वहां पर आया और मृग की शंका से इनके चरण में बाण का घात किया और उसके पकड़ने के लिये दौड़ कर वहां आया आकर चतुर्भुज मूर्ति भगवान् को देख भयभीत हुआ और इस ने अपना अपराध जान कर उन के चरणों को पकड़ लिया ॥

श्रीकृष्णजी ने इस को वर दिया और आप देवलोक में गमन किया, हे राजन्! वहां पर इन्द्रादि देवों और ऋषियों ने इनकी पूजन की

पांचवां अध्याय

—:०:—

अर्जुन का द्वारका में जाना और सब को दुःखी देख आप भी दुःखी हो विलाप करना ॥

वैशम्पायन बोले कि दारुक ने पांडवों से यादव वंश के का वृत्तान्त कहा, यह सुन पांडवों ने बड़ा शोक किया अर्जुन शीघ्रता से मामा जी के दर्शनों को चल पड़े, और द्वारका में पहुंच मामा को परम दुखी क्लेशयुक्त देखा, द्वारका को आनन्द हीन देखा, स्त्रियों के घोर विलाप को सुन अर्जुन जी बड़े क्लेश से दुखित होकर मूर्छापा पृथ्वी पर गिर पड़े, तब सत्यभामा और रुक्मणी जी इस के पास आ विलाप करने लगी, फिर वह पांडव अर्जुन गोविंद जी की स्तुति कर स्त्रियों की तसल्ली कर मामा जी के पास पहुंचे ॥

छटा अध्याय

—:०:—

वसुदेव का विलाप, अर्जुन का कृष्ण जी को

संदेशा और वसुदेव की मृत्यु की निश्चय ॥

वैशंपायन बोले कि अर्जुन ने रोते हुये वसुदेव जी को दुःख से व्याकुल शयन करते हुये देख उन के चरणों को पकड़ा ॥

वसुदेव जी ने भानजे का सिर चूमना चाहा परन्तु असमर्थता से सूंघ न सके भुजाओं से गले लगा पुत्र पौत्रादि संबंधियों को याद कर खूब रोये और कहने लगे कि हे! अर्जुन! पुत्र पौत्रादि प्रद्युम्न सात्यकि के अन्याय से सब वृष्णियों का विनाश हुआ और सब वीर भी मारे गए, हे अर्जुन! मैं किसी की निंदा नहीं करता, क्योंकि इस में केवल ब्रह्म शाप ही मुख्य कारण था. पूर्व पश्चिम दक्षिणोत्तरी सब राजा मारे गए ॥

होनहार की भावि प्रबल देख श्री कृष्ण जी ने भी यादव कुमारों के अपराधों का विचार नहीं किया, या उन्हों ने गन्धारी और ऋषियों के शाप को मिथ्या करना नहीं चाहा, वरंच सब के नाश होजाने के अनंतर मुझे सूचना दी कि अब इस कुल के नाश का समय आगया है और कहा कि यादवों के नाश को सुन कर अर्जुन अवश्य आवेगा क्योंकि मुझ में और उस में कोई भेद नहीं जैसे वह वैसे ही तुम ने करना, वह तुम्हारा क्रिया कर्म करेगा और उसके चले जाने पर यह नगरी समुद्र रुड़ा देगा, मैं किसी पवित्र देश में जाकर नियम में प्रवृत्त हो देह त्याग करुंगा, हे अर्जुन! इतना कह कर वह किसी देश को चले गये ॥

हे अर्जुन ! अब मैंने खाना पीना छोड़ दिया है अब तुम आगये हो श्रीकृष्ण जी ने जो कुछ कहा है आप करें और यह धन पदार्थ सब आपका है मैं अब प्राणों को त्याग दूंगा ॥

सातवां अध्याय

युधिष्ठर का आना, गोपीयों का मार्ग में लुट जाना, युधिष्ठर ने वसुदवे जी का दर्शन करना ॥

यह सुन परम दुःखी अर्जुन ने वसुदेव जी से कहा कि हे मामा जी ! मैं और मेरे भाई इस नगर को श्री कृष्ण और बांधवों से हीन देख नहीं सकते, आप निश्चय समझें कि अब महाराज युधिष्ठर के राज्य त्यागने का भी समय समीप है, मैं वृष्णियों की स्त्री, बच्चों और वृद्धों को इन्द्र प्रस्थ में पहुंचाऊंगा ॥

अर्जुन ने दारुक से कहा कि मैं ऋषियों मुनियों को देखना चाहता हूं, तब सुधर्म्मा सभा में पहुंचा उन्हों ने बड़े मान से इन को बठलाया, तब अर्जुन जी ने इन से कहा कि मैं आप वृष्णियों और अंधकों के बाल बच्चों को इन्द्र प्रस्थ में ले जाता हूं आप भी रत्नादि ले कर शीघ्र मेरे साथ चलें क्योंकि समुद्र शीघ्र ही द्वारका को डबो देगा, यह वज्र नाम इन्द्र प्रस्थ में

आप लोगों का राजा होगा, आप अब शीघ्रता करें देरी न लगावें, इन सब ने शीघ्र ही तय्यारी करनी आरम्भ करदी ॥

दूसरे दिन प्रातःकाल ही वसुदेव जी ने आत्मा को परात्मा में लीन कर देह त्याग दी, तब हार शंगार उतार राज महल की स्त्रियों ने महा विलाप करना आरम्भ किया ॥

अर्जुन ने बड़ी सज धज से इनका विमान बनाया सहस्रों मनुष्यों और स्त्रियों की भीड़ बाजों के साथ इन को मरघट में लेगए, हे राजन् ! देवकी, भद्रा रोहिणी मादिरा यह चारों राणियें चिन्ता में बैठ राजा वसुदेव के साथ ही पति लोक को पधारीं ॥

इनका इस प्रकार संसकार कर अर्जुन वहां पर गये जहां सब वृष्णी मारे गए थे ॥

वहां पहुंच बलदेव, श्री कृष्ण की देहों को ढूंढ विधि पूर्वक उन का संसकार किया और उन की क्रिया कर्म कर शीघ्रता से वहां से बाल बच्चों को ले रथ पर चढ़ चल दिए और साथ ही द्वारका निवासी और वज्र नाम सहित १६ हज़ार रानियें भी चल पड़ीं ॥

इन के द्वारका से निकलते ही समुद्र ने द्वारका को रुड़ा दिया, वहां से चल कर पंचनद देश में पहुंच अर्जुन ने यहीं निवास किया ॥

इस प्रकार स्त्रियों को अकेले लाते हुए अर्जुन को देख चोर भीलों ने विचारा कि अकेला अर्जुन हम को जीत नहीं

सकेगा आओ इन को लूट लें यह विचार वह भील लूट मार करने के लिए लाठीयें हाथों में ले साहमने आडटे ॥

राजा अर्जुन ने उस से कहा कि अए लुब्धका यदि जीने की इच्छा रखते हो तो लौट जाओ अन्यथा मेरे इस बाण से मारे जाओगे, महाराज के इस प्रकार ललकारने पर भी उन्हों ने कच्छ परवाह न की तब महाराज ने धनुष को चढ़ाना आरम्भ किया और अन्य शस्त्रों को भी स्मरण किया परन्तु उन का भी स्मरण न कर सका, तब अर्जुन लज्जया युक्त हुआ और वृष्णियों के शूर वीर हतसाहस हुए, अर्जुन जी ने बहुतेरा यत्न किया परंतु कुच्छ पेश न गई चोर उन स्त्रियों को खेंचने लगे और कई स्त्रियें इच्छावान होकर उन के संग होगईं तब वृष्णियों के सेवकों की सहायता से अर्जुन ने बाण चलाए परंतु वह तत्काल ही समाप्त होगए । चोरों ने बहुत सी स्त्रियों को लूटा और संग लेकर चले गए तब अर्जुन इस प्रकार अपनी निर्बलता देख अति व्याकुल हुआ] और भावी ही को प्रबल जान कर बची खुची लुटी हुई स्त्रियों को संग ले कुरुक्षेत्र आपहुंचा ॥

यहीं पर इन स्त्रियों को जहां थां बसाया और कृतवर्मा के पुत्र को मार्त्तीकावत नगर का राजा बनाया और शेष बची हुई भोज राजा की स्त्रियों को उस के सपुर्द किया, फिर अर्जुन ने बची खुची स्त्रियों को लाकर इन्द्रप्रस्थ में बसाया, सात्यकि के प्रिय पुत्र को सरस्वती के तट पर बासया ॥

रूक्मणी, गंधारी, शैव्यादि रानियें यहीं सती हो गई फिर बज्र को इन्द्र प्रस्थ का राजा बनाया ॥

परन्तु सत्यभामादि स्त्रियें तपस्या के लिये वन में चली गई और तत्पर तथा हिमालय की प्रदक्षिणा कर कलाप ग्राम में जा पहुंचीं ॥

अर्जुन महाराज ने उन को यथा क्रम बज्र के आधीन किया, इस प्रकार यह सब काम छोलिये तो द्वैपायन व्यास जी को आश्रम में बैठा हुआ देखा ॥

आठवां अध्याय

—:o:—

अर्जुन का व्यास जी से मिलना उन से मन की व्यथा को कहना और व्यास जी का उपदेश ॥

अर्जुन ने व्यास जी को देख इन्हें परणाम कर कहा कि मैं अर्जुन हूं । व्यास जी ने कहा तेरा कल्याण हो, राजन् यह क्या बात है तुझ से क्या पाप कर्म हुआ है क्या तू ने रजस्वला स्त्री से भोग क्या है, ब्राह्मण को मारा है या शत्रुओं से जीता गया है कि जिस से तेरा सब तेज नष्ट हो गया है ॥

अर्जुन ने कहा कि श्रीमान कृष्ण शंख चक्र धारी मेरे परम मित्र बलदेव जी सहित वैकुंठ को पधार गये हैं ब्रह्म शाप उत्पन्न मुसल पैदा हुये पटेल से परस्पर घायल हो

कर रण में गर्जने वाले वडे २ शस्त्र अस्त्रों के धनी वृष्णि अंधक सब मारे गये हैं इस होनहार को देखो वह पांच लाख ही मारे गये हैं ॥

अब मैं शारंग धनुष धारी श्री कृष्ण जी के बिना किसी प्रकार भी जीवत रह नहीं सकता हूं। इस के साथ मुझे एक और दुख है जिस से मेरा हृदय विदीर्ण हो रहा है वह भी सुन, पंचमनद देश निवासी भीलों ने मेरे देखते ही वृष्णियों को स्त्रियों सहित हर लिया है उस समय मैं ने धनुष चढ़ा सका हूं और न ही किसी अन्य शस्त्र से काम लेसका हूं। मेरे बाण भी सब तत्काल नाश वान हो गये। अब मैं श्रीकृष्ण जी के बिना जीना नहीं चाहता हूं, हे महाराज! आप मुझे कल्याण कारी उपदेश करने के योग्य हैं ॥

व्यास जी बोले यह इसी प्रकार होना था क्योंकि भवतव्यता को प्रबल जानकर भी श्रीकृष्ण जी ने जो कि शाप को दुर कर सकते थे शाप को दूर नहीं किया तुमको उन के लिये शोक करना उचित नहीं है। हे राजन्! श्रीकृष्ण जी भी पृथ्वी का भार हर करके अपने परम धाम को पधारे तुम पांचो भाइयों ने भी देवताओं का बड़ा काम किया, मैं तुम को भी कृत कृत्य और बड़ा सिध मानता हूं परन्तु अब तुम्हारा भी इस संसार को त्यागना कल्याण कारी है। हे राजन्! ऐश्वर्य के समय में मनुष्यों की बुद्धि तीक्ष्ण होती है और विनाश काल में बुद्धी नाश हो जाती है, काल भगवान् समय पर

पांचतत्वों को अपने में लै करता है, काल ही विजय पराजय का देने वाला होता है, हे अर्जुन ! अब अपका भी समय अगया है, मैं तुम्हारा इसी में कल्याण देखता हूं ॥

यह सुन कर अर्जुन जी हस्तना पुर को आगये और युधिष्टर से वृष्णि और अंधक वंश के नाश को पुरण रूप से वर्णन किया ॥

॥ मौसल पर्व समाप्तः ॥

ॐ

महाभारत

प्रस्थानिकपर्व

पहिला अध्याय

पाराडवों का वन यात्रा करना, गांडिव धनुष का समुद्र में फैकना और पृथ्वी की परिक्रमा करने का विचार ॥

श्री नरोत्तम भगवान् वाग्देवी सरस्वती को प्रणाम कर इसपर्व महा असह्य दुःखों में फंसे हुए पुरुषों को महा प्रस्थानादि उपायों से स्वर्ग प्राप्त और मोक्ष्य साधन के उपायों और इन में बाधा डालने वाले कारणों का हम वर्णन करेंगे ॥

जनमेजय बोले कि इस प्रकार वृष्णी और अंधकों के नाश होने पर पाण्डवों ने क्या किया यह सब आप वर्णन करें ॥

युधिष्ठर महाराज ने यह सुन अर्जुन को कहा कि यह सब काल के आधीन हैं इस में तुम को भी शोच नहीं करना चाहिये। अब हम को भी स्वर्ग प्राप्ति के लिये घर से निकलना चाहिये ॥

महाराज के इन वचनों को सुन कर अर्जुन, भीमसेन, नकुल और सहदेव भी इसी में सहमत हुए ॥

इस के अनन्तर महाराज युधिष्ठर ने युयुत्सु को बुला कर राज्य पाट उसके सुपर्द किया और परीचित को राज्याभिषेक कर सुभद्रा से यह वचन कहा कि यह आप का पौत्र कौरव राज होगा, और वज्र नाम यादवों को राज्य गद्दी पर बठलाया गया है हस्तिनापुर में राजा परीचित और इन्द्र प्रस्थ में वज्र नाम रहेंगे आपने इनकी रक्षा करनी। और इनको अधर्म से सदैव बचाये रखना ॥

फिर महाराज युधिष्ठर ने वासुदेव, बलदेव और वृद्धमामा जी को तिलांजली दी और विधि पूर्वक श्राद्ध किया। इस श्राद्ध में हरि के नाम से व्यास, नारद, मार्कण्डेय, भरद्वाज और याज्ञवल्क्य को नाना प्रकार के भोजन कराये और नाना प्रकार के रत्न, वस्त्र, ग्राम और घोड़े आदि दान दिये। और हज़ारों दास दासीयें भी ब्राह्मणों को दान दीं। फिर कृपाचार्य की यथा योग्य पूजन कर उनके शिष्य परीचित को उनके सुपुर्द किया फिर महाराज ने पुरवासी प्रजा को बुला कर अपना भाव प्रकट किया ॥

पुरवासी लोग यह सुन कर परम दुःखी हुये और कहने लगे कि आप को इस प्रकार करना उचित नहीं ॥

महाराज युधिष्ठर ने इन को समझा बुझा कर सहमत कर लिया और भाईयों सहित उत्तम वस्त्र भूषण त्याग वल्कल पहिर इष्टि यज्ञ किया सब अग्नियों को जल में छोड़ा और चल दिये ॥

द्रौपदी सहित इन को इस प्रकार चलता देख सब स्त्रियें परम दुःखी हुईं और रुदन करने लगीं। यह द्रौपदी सहित पांचो भाई और एक कुत्ता इन के साथ हस्तिनापुर से बाहर निकले इस समय नगर और देश के बहुत से नर नारियें इन के पीछे रोते २ बाहर आये। राजा ने इन सब से प्रेम पूर्वक मिलाप कर इन को लौटा दिया ॥

कृपाचार्य्यादि युयुत्सु के निकट वर्ती हुये, उलूपी गंगा में प्रवेश कर गई, चित्रांगदा मणि पुर को चली गई और सब बची हुई माताओं ने परीक्षित के पास निवास किया ॥

हे राजन्! सब से आगे युधिष्ठर फिर अर्जुन, भीमसेन नकुल, सहदेव, द्रौपदी क्रमशः एक दूसरे के पीछे यथाक्रम पूर्व की ओर चले, इन के पीछे वह कुत्ता भी साथ २ ही चला, यह सब अनेक तीर्थों पर होते हुये उपवास व्रत धारी सन्यास आश्रम की प्राप्ती के लिये लोहिती सागर को गये ॥

हे राजन्! रत्नो के लालच से महाराज अर्जुन ने अपने गांडीव धनुष को नहीं त्यागा, तब आगे अग्नि देवता को पर्वत

के समान मार्ग रोके हुये पुरुष रूप से देखा, पुरुष रूप अग्नि ने कहा कि हे पांडवो ! मैं अग्नि हूं मैंने अर्जुन और नारायण के बल से खांडव वन को भस्म किया, मैंने ही यह गांडीव धनुष वरुण से लेकर अर्जुन को दिया था अब आप मुझे यह देदें मैं वरुण को पहुंच दूंगा, तब भाईयों की प्रेरणा से अर्जुन ने वह गांडीव धनुष और दोनो अक्षय तूणियों जल में डाल दिया ॥

यह देख अग्नि देव वहां ही अन्तर्द्धान होगये और पांडव दक्षिण की ओर चल दिये और घूमते हुये डूबी हुई द्वारका के निकट पहुंचे, फिर पृथ्वी की परिक्रमा की आशा से वह सब उत्तर दिशा की ओर चल दिये ॥

दूसरा अध्याय

पांडवों की उत्तर यात्रा और भीम अर्जुन नकुल सहदेव द्रौपदी का गिरना ॥

—:०:—

वैशंपायन बोले कि फिर वह सब पांडव उत्तर की ओर चलते हुये हिमालय पर्वत से पार हो वालुके समुद्र को देख फिर मेरू पर्वत पर पहुंचे, वहां पर तपों से क्षीण द्रौपदी गिर पड़ी ॥

इसको इस प्रकार गिरा देख भीमसेन ने युधिष्ठर से कहा कि इस पत्नी से कभी कोई अधर्म कार्य नहीं हुआ फिर

यह किस विधि पर पृथ्वी पर गिर पड़ी है, युधिष्ठिर ने उत्तर दिया कि इसकी अधिक प्रीति अर्जुन से थी इसी लिये गिर पड़ी है, यह कहकर उसको न देखकर चित्त को समाधी में लगा आगे चल दिये ॥

आगे चल कर सहदेव गिर पड़ा, फिर भीमसेन ने राजा से कहा कि यह अहंकार से रहित सेवा करने वाला क्यों गिर पड़ा है, राजा ने उत्तर दिया कि यह अपने समान किसी को बुद्धि मान नहीं समझता था इस कारण से गिरा है ॥

फिर वह भाईयों सहित राजा आगे चल दिया आगे नकुल गिर पड़ा, भीमसेन के पूछने पर इस के सवरूपवान होने के अहंकार की फल कह राजा आगे बढ़ा फिर अर्जुन गिर पड़ा, ॥

तब भीमसेन ने पुछा कि यह निर्वचनीय धर्म पुत्र किन कर्मों के फल से गिरो है युधिष्ठर ने कहा कि इस ने कहा था कि मैं एक ही वार शत्रुओं का नाश कर दूंगा वह इस ने नहीं किया इस लिए यह गिरा है आगे बढ़ कर भीमसेन भी गिरा इस ने गिरते २ कहा कि मैं आप का प्यारा किस कर्म से गिरा हुं, युधिष्ठिर ने कहा कि तुम नियत परिमाण से अधिक भोजन करते थे और तुम अपने बल की अधिक प्रशंसा करते थे इस के फल से तू गिरा है, फिर महाराज युधिष्ठर उसे भी न देख आगे चल पड़ा और कुत्ता भी उस के पीछे चला ॥

तीसरा अध्याय

—:०:—

महाराज युधिष्ठर का सदेह स्वर्ग गमन और अपने भाईयों और द्रौपदी के साथ रहने का हठ करना ॥

वैशपायन बोले, इस के अनंतर इन्द्र देवता आप रथ ले कर युधिष्ठर के पास आकर बोले कि हे राजन्! यह रथ आप के लिए मैं लाया हुं आप इस पर सवार हो कर स्वर्ग में चलें ॥

युधिष्ठर ने कहा कि हे देवराज! मेरे भाई भी गारे पड़े हैं मैं उन के लिये स्वर्ग में जाना नहीं चाहता वरंच मेरी यह इच्छा है कि राज पुत्री द्रौपदी भी मेरे साथ चले ॥

इन्द्र ने कहा कि हे राजन्! वह सब आपके भाई द्रौपदी सहित आप से पहिले पहुंचे हुए हैं वह शरीर को त्याग कर स्वर्ग में पहुंचे हैं आप सदेह स्वर्ग को पधारेंगे ॥

युधिष्ठर ने कहा कि हे देवादिदेव! यह कुत्ता सदैव मेरे साथ रहा है, इस को भी साथ ले जाने की आज्ञा दीजिये ॥

इन्द्र ने कहा कि हे राजन्! अब आप मेरे समान अमर पदवी, लक्ष्मी, सिद्धि और स्वर्ग के सुख को पाओगे अब कुत्ते का त्याग करो इस में निर्दयता नहीं है ॥

युधिष्ठर बोले कि श्रेष्ठ पुरुष से नीच कर्म होना असंभव है मुझे ऐसी लक्ष्मी की इच्छा नहीं जिस से भक्त जनों का

त्याग हो, इन्द्र ने उत्तर दिया कि स्वर्ग में कुत्ते पालने वालों के लिये स्थान नहीं इस लिये आप इस को त्याग दो। युधिष्ठर ने कहा हे महाराज! मैं प्राणों के नाश हो जाने पर भी, भयभीत भक्त, शरणागत, पीड़ा वान, घायल, प्राणों की रक्षा चाहने वालों का त्याग नहीं करूंगा॥

इन्द्र बोले कि कुत्ते से देखे हुए दान, यज्ञ और हवन नष्ट हो जाते हैं। आपने धर्म के पीछे अपने सगे भाईयों और प्रिय स्त्री द्रौपदी का भी त्याग किया फिर कुत्ते का त्याग क्यों नहीं करते, धर्म के पीछे आपने सर्वस्य त्याग दिया अब कुत्ते के लिये इनता मोह क्यों करते हो॥

युधिष्ठर बोले कि यह जगत प्रसिद्ध है कि मृतक जीवों से वैर और प्रेम नहीं करना चाहिये इन सब ने प्राणत्याग दिये थे मैं इन को सजीव किसी प्रकार नहीं करसकता था इसलिये उन को त्याग दिया। हे देव! शरणागत को भयभीत करना, स्त्री को मारना, ब्राह्मणों का धन हर लेना, मित्र से शत्रुता करना और जगत का त्याग करना यह सब समान पाप हैं॥

यह सुन कर बड़े प्रसन्न हो इन्द्र ने कहा कि हे राजेन्द्र! तुम्हारी मव वंश ही कुलीन है मैं ने पहिले तुम्हारी परीक्षा की थी तब तुम ने भीमसेन अर्जुन को छोड़ कर नकुल जीवन करना चाहा था, आज फिर तुम्हारी परीक्षा की है जो कि तुम ने एक कुत्ते के पीछे तुम्हारे भाईयों को मार कर

स्वर्ग को लात मारी है हे राजेन्द्र! तेरे समान स्वर्ग में कोई नहीं है।

वैशंपायन बोले कि तब धर्म मरुद्गणादि देवताओं से सुसज्जित विमान में महाराज युधिष्ठर को चढ़ा कर ऊपर की ओर उठे॥

इस प्रकार युधिष्ठर के जाने पर नारद ऋषि बोले कि आज तक जितने राजा स्वर्ग में पधारे हैं उन सब से बढ़ कर यह राजा उत्तम गती को पागया है॥

यह वचन सुन कर युधिष्ठर ने सब देवताओं को साक्षी कर के कहा कि जहां मेरे भाई हैं चाहे वह उत्तम लोक में हों या न हों मैं वहीं जाऊंगा॥

यह सुन कर इन्द्र महाराज ने कहा कि हे राजन्! तुम अब भी मनुष्य भाव की भांति को काम में लाते हो, हे राजन्द्र! तुम ने उस गति को पाया है जो आज तक किसी को प्राप्त नहीं हुई और जिसको आप के भाई नहीं पासके॥

राजा जी बोले हे दैत्य संहारी चाहे कुछ ही हो मैं भाईयों के बिना रहना नहीं चाहता जहां मेरे भाई और द्रौपदी गई हैं मैं वहीं जाऊंगा॥

॥ पुस्थानिकपर्व समाप्तः॥

ॐ

महाभारत
स्वर्गारोहणपर्व

प्रथम अध्याय

—:o:—

स्वर्ग में दुर्योधन को महाराज युधिष्ठर ने देखना ॥

जनमेजय बोले कि मेरे पितामह स्वर्ग में पहुंच किस २ सथान में निवासित हुए ॥

वैशंपायन ने कहा कि महाराज युधिष्ठर ने स्वर्ग लक्ष्मी से सेवित देवता और सिद्धों के बीच आसन पर बैठे दुर्योधन को देखा, इस को देख युधिष्ठर अशान्त चित्त अकस्मात्

लौटा, सार यह है कि संस्कार बड़े प्रबल होते हैं वहां भी राजा को क्रोध आया कि मैं इस लोभी के पास रहना नहीं चाहता मैं अपने भाईयों के संग निवास करूंगा, यह सुन कर नारद मुनि हंस कर बोले कि हे युधिष्टर ! यह स्वर्ग है. यहां पर वैर भाव नष्ट कर देना चाहिए यद्यपि इस दुर्योधन ने तुम को बड़े कष्ट दिये, पतिव्रता धर्म शीला द्रौपदी को भी इस ने सताया परंतु क्षत्रिय धर्म से युद्ध कर मृत्यु को पा अब यह स्वर्ग में ही है अब आप को शत्रुता त्याग इस से प्रेम पूर्वक मिलना चाहिए ॥

यह सब सुन महाराज युधिष्ठर ने नारद से पूछा कि मेरे भाई तथा धृतराष्ट्र सात्यकि आदि कहां हैं मैं उन को यहां नहीं देखता, कृपया उनके निवासस्थान शीघ्र बतायें मैं उन से मिलना चाहता हुं ॥

दूसरा अध्याय

—:o:—

युधिष्ठर ने दुर्योधन को स्वर्ग में और कर्ण तथा अर्जुनादि अपने भाईयों को द्रौपदी सहित नर्क में देख कर दुःखी होना ॥

युधिष्ठर बोले कि हे देवता लोगो ! कर्ण आदि महारथी तथा अन्य राजकुमार जिन्हों ने युद्ध यज्ञ में अपने शरीरों का हवन किया वह कहां हैं, मैं उन के पास जाना चाहता हुं

यदि उन लोगों ने इस अविनाशी सुख रूप स्वर्ग को नहीं पाया तो मैं भी यहां नहीं निवास करूंगा आप कृपा करके मुझे मेरे भाई और उन वीरों के लोकों में ही पहुंचादे, मैं कुन्ती के चरणों को देख कर उस के पास नहीं गया क्योंकि यदि वह हमारी सहायता में रहता तो साक्षात् इंद्र भी हम लोगों को जीत न सकते, मैं सूर्य के पुत्र को देखना चाहता हूं जिस को मैं पहिले नहीं जानता था, मैं अपने भाइयों और महरानी द्रौपदी के पास रहना चाहता हूं यही मेरा दृढ़ निश्चय है, वही मेरे लिये स्वर्ग है मैं इस स्वर्ग को स्वर्ग नहीं मानता ॥

देवताओं ने कहा कि हे राजन् यदि आप की यही इच्छा है तो हम आप को वहां पहुंचा देते हैं तब देवताओं ने देव दूत को आज्ञा दी ॥

देव दूत राजा के आगे २ हो लिये और उस मार्ग से चले जो अंधकार और भय से पूर्ण था और पापों की गंधियों से युक्त मुरदों की दुर्गंधी, मच्छरादि से व्याप्त अस्थि केशों से युक्त कृमि कीटों से पूर्ण, सूची मुख प्रेतों से युक्त रुधिर मज्जा से पुरित, उष्ण जल से पूर्ण तीक्षणधार छुरों से संयुक्त असीपत्रवाले वृक्षों से आच्छादित खौलते हुए तेल के कढ़ाओं से भयानक, ऐसे २ अनेक दुखदायक दुर्गम्य मार्ग को देख महाराज युधिष्ठर ने कहा कि यह मार्ग अभी कितनी दूर तक है और मेरे भाई कहां हैं यह देवताओं का कौनसा देश है यह मुझ से कथन करें ॥

देवदूत यह सुन लौटा और कहने लगा कि आप ने यहीं तक जाना था अब लौट आईये, तब राजा उस के पीछे २ लौट आया ॥

हे राजन्! इस प्रकार इनके लौटने पर उस मार्ग (नरक) निवासी जीवों ने प्रार्थना की कि हे धर्म पुत्र दयालु! आप एक महूर्त मात्र तो यहां ठहरें क्योंकि आप के ठहरने से बड़ी सुगंधित शीतल वायु बहती है जिससे हम को परम आनन्द मिल रहा है ॥

इस प्रकार उन दुःखियों की दुःखरूप वार्त्ताओं को सुन महाराज युधिष्ठर वहां खड़ा हो गया और कहने लगा कि आप कौन हैं और यहां पर किस लिये आये हैं।

तब वह सब एक साथ बोल उठे कि मैं कर्ण हूं, मैं भीमसेन हूं, मैं अर्जुन हूं, मैं नकुल हूं, मैं सहदेव हूं, मैं धृष्टद्युम्न हूं मैं द्रौपदी हूं, हम द्रौपदी के पुत्र हैं ॥

हे राजन्! तब महाराज अतीव चकित हो विचारने लगे कि इन से कौन सा पाप कर्म हुआ है जिससे इन्होंने यह गति पाई है, हे दैव! तेरी गति अपरम्पार है। घोर पाप कर्मी दुर्योधन तो इन्द्र के समान स्वर्ग में ऐश्वर्य्य भोगे और सुकृतकर्म्म कारी ऐसे नरक में वास करें! हाय! क्या मैं स्वप्न में हूं या जागता हूं। ऐसे विचार परम दुःखी हो राजा ने धर्म और देवताओं की निंदा की और देव दूत से कहा कि तुम जिस के सेवक हो वहीं जाओ, मेरे यहां रहने से यह मेरे भाई सुखी हैं मैं यहीं हूंगा।

यह सुन दूत इन्द्र महाराज के पास गया और सब व्योरा उन से कह सुनाया ॥

तीसरा अध्याय

—:०:—

राजा के निकट इन्द्रादि दवताओं का आना अर्जुन आदि का नरक से स्वर्ग में जाना, धर्मराज ने इन का कारण वर्णन करना ॥

वैशम्पायन बोले कि दूत के वचन को सुन सब देवता महाराज इन्द्र के पास पहुंचे और जाकर कहा कि हे राजन् ! आओ आओ स्वर्ग को चलें, इन के आने पर वह सब नरक धाम स्वर्ग बन गया शीतल सुगंधित वायु बहने लगी देवताओं ने युधिष्ठर से कहा कि यहां का यह नियम है कि जिन को सदैव स्वर्ग में रहना होता है उन्हें पहिले नरक दिखलाये जाते हैं और जिन का नरक में वास होना होता है उन्हें पहिले स्वर्ग दिखलाया जाता है आप ने अश्वत्थामा के विषय में द्रोणाचार्य से छल युक्त वार्ता की जिस से आप को नरक देखना पड़ा और आप के भाईयों को भी। आओ अब आप के भाई भी पापों से छूटकर स्वर्ग में पहुंच गये हैं। कर्ण ने भी बड़ी सिद्धि पा ली है जिस के लिये आप इतने दुःखी थे। उस युद्ध में मरने वाले सब वीरों को अपने २ स्थान पर देखो जिससे आप के

चित्त का क्लेश दूर हो। हे राजन्! अब तुम ने दुष्कर्मों के फलों को पा लिया है अब सुकृत कर्मों के प्रभाव से मेरे साथ विहार करते हुए आनंद से चिरकाल तक निवास करो। हे राजन्! अब आप आकाश गंगा में स्नान करो इस से तुम्हारा मनुष्यत्व दूर होगा और वैर शत्रुतादि सब दोषों से रहित हो जाओगे॥

फिर धर्म ने कहा कि हे पुत्र! मैं तेरे कर्तव्य कर्म से अतीव प्रसन्न हूं, मैंने यह तेरी तीसरी परीक्षा ली है तुम कदापि धर्म मार्ग से नहीं गिरे। हे पुत्र! तुम अत्यंत निष्पाप हो तेरे भाई नरक के भागी नहीं हैं देवराज इन्द्र ने यह सब माया से रचना रची है आओ अब आकाश गंगा में स्नान करो॥

यह सुन कर युधिष्ठर जी वहां से उनके साथ २ चल पड़े और गंगा स्नान कर मनुष्य शरीर का त्याग किया, अपने पिता धर्म राज के संग उस स्थान में पहुंचे जहां पर पांडव और महाराज धृतराष्ट्र के पुत्र और द्रौपदी विराजते थे॥

चौथा अध्याय

—:-०-:—

युधिष्ठर का श्रीकृष्ण, कर्ण तथा अपने भाईयों और द्रौपदी आदि से मिलाप॥

वैशंपायन बोले कि फिर महाराज युधिष्ठर वहीं पर

पहुंचाये गये जहां पर कौरव थे वहां पर उन्हों ने देवताओं से पुजित ऋषियों से स्तूयमान श्रीकृष्ण जी को उसी रूप में देखा जैसे पंहिले देखते थे इन के पास ही अर्जुन को भी देखा। उन दोनो ने युधिष्ठर को देख इन की विध पूर्वक पूजन की और आनन्द से मिले ॥

फिर कौरव नन्दन ने कर्ण को देखा आगे बढ़ कर वायु देवता की गोदी में आनंद युक्त बैठे भीमसेन को देखा फिर अश्वनी कुमारों के स्थान पर नकुल सहदेव को पाया, इसी प्रकार द्रौपदी को भी जो कि सूर्य के समान तेजस्वनी थी देखा ॥

तब महाराज ने सब वृत्तान्तों को पूछना चाहा ॥

महाराज देवताओं के राजा ने इसी प्रकार वर्णन किया हे राजन् ! द्रौपदी स्वर्ग की लक्ष्मी है, इस ने तेरे लिये मनुष्य देह धारण किया था, यह आप के और द्रौपदी के पुत्र पांचों तेजस्वी गंधर्व हैं, वह गंधर्वों का राजा धृतराष्ट्र है, यह सौम्य कुन्ती का पुत्र कर्ण राधेय है, हे राजेन्द्र ! यह साध्य गण विश्वादेवा मरुत नाम पराक्रमी सात्यकी और भोज वृष्णी अंधक वंश के राजा हैं। अभिमन्यु को चंद्रमा के साथ देखो, कुन्ती और माद्री के सहित यह तेरा पिता पांडू सदैव रथ पर चढ़ मेरे पास आता है, भीष्म पितामह को वसुओं के साथ, द्रोणाचार्य्य बृहस्पति के संनिकट वर्ती हैं यह, अन्य राजा तेरे पक्ष वाले गंधर्वों के साथ विमान की

सिवारियों में जाते हैं और कितने ही राजा गुह्यकों की गतियों को प्राप्त हुये हैं ॥

पांचवां अध्याय

—:-०-:—

धृतराष्ट्र आदि की गति का वर्णन, भारत का सार और उस का फल

राजा ने कहा कि आप ने वर्णन किया है कि जो जिस देवता के अंश से आये थे वह उसी देवता के समीप गये ; अब यह संदेह है कि वह उन पृथक् रहे या सारूप्य हो गये । शरीर कर्म से उत्पन्न उस का नाश ब्रह्म ज्ञान के बिना नहीं है इस से जो उन को पृथक् रूप में रहना चाहिये, हां भीष्म द्रोणाचार्य, राजा धृतराष्ट्र आदि की क्या दशा हुई यह भी बताईये और जिन का आप ने वर्णन कीया वह कितने काल पर्य्यन्त स्वर्ग में रहे, और उन्हों ने मुक्ति पाई या जन्म धारण किये यह भी वर्णन करें ॥

वैशंपायन बोले स्वर्ग भोग समय व्यतीत हो जाने पर सब का मूल में लय हो जाना संभव नहीं इस प्रकार होने से संसार की यह गति कैसे रह सकती है हां कोई लय होता है और जन्म बहुत धारण करते हैं, भीष्म पितामह वसुओं में लय होगये द्रोणाचार्य जी बृहस्पति जी में कृतवर्मा मरुद्गणों में, धृष्टद्युम्न

सनत्कुमार जी में लय हुये माहाराज धृतराष्ट्र कुवेर के लोक में पहुंचे, गंधारी भी उनके साथ गई दोनों स्त्रियों सहित पांडू महेंद्र लोक को गये अभिमन्यु चंद्रमाके पुत्र तर्चा में प्रविष्ठ हुआ, कर्ण स्वर्ग भोगने के अनंतर सूर्यमें लय होगये, बलदेव रसातल में चले गये, वसुदेव की रानियें सरस्वती में शरीर त्याग स्वर्ग में पधारीं और अप्सरां हो कर वसुदेव के निकट वर्त्ती हुईं और शेष राजा लोग भी कुवेर वरुण आदि लोकों में यथा क्रम प्राप्त हुये ॥

हे राजन्! सार यह है कि पांडव कौरव उत्तम गतियों को पा अंत में ब्रह्मा जी के साथ मुक्त हुये और अन्य सबने स्वर्ग भोगने के पीछे जन्म धारण किया ॥

राजा जनमेजय यज्ञ में यह सब इतिहास सुन बड़ा प्रसन्न हुआ यज्ञ समाप्ति में याचक लोगों को बहुत दान दे ब्राह्मणों को प्रसन्न कर तक्षक शिला स्थान से हस्तिनापुर को आगया ॥

यह इतिहास व्यास जी का बनाया हुआ मैंने आपको सुना दिया है, हे राजन्! आगामी काल में जो इस इतिहास को सुनेगा वह पापों से रहित हो स्वर्ग प्राप्ति करेगा सुनने वाला भी परम गति को पाता है श्राद्धों में इसका चतुर्थांश सुनने से वह दिया हुआ अन्न पितरों के लिये अक्षय हो जाता है ॥

इस में धर्म अर्थ काम और मोक्ष का विषय है पुराण सब इसी की आशा लेकर बने हैं बाल, वृद्ध, स्त्री, पुरुषों को इसे अवश्य सुनना चाहिये जो जिस कामना से इसे सुनेगा, उसकी सब कामनायें पूरी होंगी ॥

यह महाभारत बहुत बड़ा है इस लिये लोकों के उपकार अर्थ समस्त भारत का सार चार श्लोकों में वर्णन करता हूं इस के पाठ से भी वही फल होता है ॥

इस संसार में जन्म जीवों के लिये शोक और भय के स्थान अज्ञानियों को हुआ करते हैं मैं पुकार २ कर कहता हूं कि अर्थ और धर्म्म काम से उत्पन्न होते हैं मनुष्यों को चाहिये कि इच्छा, भय और लोभ से धर्म्म को न छोड़ें वरंच जीवन के लिये भी धर्म को न छोड़ें, धर्म्म अविनाशी है और सुख दुख आदि नाशवान। जीवात्मा अविनाशी है और उन का हेतु अर्थात अविद्या नाशवान है ॥

छटा अध्याय

—:o:—

संजय ने वैशंपायन से महाभारत श्रवण की पूर्ण विधि पूछी, वैशंपायन जी ने कहा कि हे राजन्! मैं इस की विधि फल सहित वर्णन करता हूं, सुनो ॥

इस भारत में सब देवताओं ने रूपान्तर में आगमन किया उन के गुण कर्म्म सुनने से पाप नष्ट होते हैं ॥

यथाशक्त इस के सुनाने वाले ब्राह्मण को भक्ति श्रद्धा से सब प्रकार के रत्नादि देने चाहिये, श्रोता को एकाग्र मन हो निश्चित हो कथा सुनते समय बैठना चाहिये, वक्ता को भी मन की चंचलता छोड़ ईश्वर परमात्मा का ध्यान कर

व्यास जी का ध्यान करके कथा कहनी आरंभ करनी चाहिये, हे राजन् ! महाभारत के परायण का फल बहुत है इस के परायण पाठ से इन्द्र, कुबेर, ब्रह्म लोक तक प्राप्त होता है, कथा के अंत में वक्ता को भोजन अन्न आदि देकर प्रसन्न करे, वरंच प्रत्येक पर्व की समाप्ती पर भी ब्राह्मणों का नाना प्रकार के अन्न वस्त्रों से प्रसन्न करे ॥

हे राजन् ! रामायण और महाभारत इन दोनों ग्रंथों में हरि के गुण कीर्तन किए गए हैं इस लिए परमपद अभिलाषी को इन्हे अवश्य पढ़ना चाहिए ॥

हे राजन ! इस की परायण कथा समाप्ति पर इस का विशेश हवन भी करना चाहिये ॥

स्वर्गारोहण पर्व समाप्तः ॥